श्रीरत्नकरंडश्रावकाचार

वचनिका

गांधी हरीभाई देवकरण जैनग्रंथमाला ।

९

स्वर्गीय विद्वद्वर्य सदासुखजी काशलीवाल-द्वारा विरचित

श्रीरत्नकरंडश्रावकाचार वचनिका ।

जिसको

भारतीय जैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्थाके महामंत्री

पन्नालाल बाकलीवालने

शोलापुर-वासी गांधी हरीभाई देवकरण एण्ड सन्सकी प्रदत्त द्रव्यसे

अपने जैनसिद्धांतप्रकाशक पवित्र प्रेस

१ विश्वकोष लेन, बाघबाजार, कलकत्तामें

छपाकर प्रकाशित किया।

श्रुतपंचमी, वी०नि०सं० २४५१]

[न्योछावर ५॥) रुपया

प्रकाशक—

पन्नालाल बाकलीवाल

महामंत्री—भारतीयजैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्था

१ विश्वकोष लेन, बाघबाजार, कलकत्ता।

मुद्रक—

श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ,

जैनसिद्धांतप्रकाशक पवित्र प्रेस

१ विश्वकोष लेन, बाघबाजार, कलकत्ता।

ॐ

स्वर्गीय पंडित सदासुखजीकृत देशभाषामयवचनिकासहित

श्रीरत्नकरंडश्रावकाचार ।

इहां इस ग्रंथकी आदिमें स्याद्वादविद्याके परमेश्वर परमनिर्ग्रंथ वीतरागी श्रीसमंतभद्रस्वामी जगतके भव्यनिके परमोपकारकेअर्थि रत्नत्रयका रक्षणको उपायरूप श्रीरत्नकरंड नाम श्रावकाचारकूं प्रगट करनेके इच्छक विघ्नरहित शास्त्रकी समाप्तिरूप फलकूं इच्छाकरता इष्ट विशिष्ट देवताकूं नमस्कार करता सूत्र कहै हैं—

सूत्र—

नमः श्रीवर्द्धमानाय निर्धूतकलिलात्मने । सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते ॥ १ ॥

अर्थ—श्रीवर्धमान तीर्थंकरकेअर्थि हमारा नमस्कार होहु । श्रीकहिये अंतरंगस्वाधीन जो अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखरूप आविनाशीक लक्ष्मी अर बाहिरंग इंद्रादिक देवनिकरि वंदनीक जो समवसरणादिक लक्ष्मी तिसकरि वृद्धिकूं प्राप्त होय सो श्रीवर्द्धमान कहिये है। अथवा अव—समंतात् कहिये समस्त प्रकारकरि ऋद्ध कहिये परमअतिशयकूं प्राप्त भया है केवलज्ञानादिक मान कहिये प्रमाण जाका सो वर्द्धमान कहिये । इहां "अवाप्योरल्लोपः" इस व्याकरण शास्त्रके सूत्रकरि अकारका लोप भया है । कैसाक है श्रीवर्द्धमान निर्धूतकलिल है आत्मा जाका, निर्धूत कहिये नष्ट किया है आत्मातैं कलिल कहिये ज्ञानावरणादि पापमल जानें ऐसा है । बहुरि जाकी केवलज्ञानविद्या अलोकसहित समस्त तीनलोककूं दर्पणवत् आचरण करै है ।

भावार्थ—जाके केवलज्ञानविद्यारूप दर्पणविषै अलोकाकाशसहित षद्द्रव्यनिका समुदायरूप समस्त लोक अपना भूत भविष्यत् वर्तमान समस्त अनंतानंत पर्यायनिकरि सहित प्रतिबिंबित होय रहे हैं ऐसा अर जाका आत्मा समस्त कर्ममलरहित भया ऐसा श्रीवर्द्धमान देवाधिदेव अंतिमतीर्थंकर ताकूं अपने आवरणकषायादिमलरहित सम्यग्ज्ञानप्रकाशके अर्थि नमस्कार किया। अब आगैं धर्मके स्वरूपकूं कहनेकी प्रतिज्ञारूप सूत्र कहैं हैं:—

देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिवर्हणं। संसारदुःखतः सत्त्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे ॥ २ ॥

अर्थ—मैं जो ग्रंथकर्ता हूं सो इस ग्रंथविषै तिस धर्मकूं उपदेश करूं हूं जो प्राणीनिनै पंचपरिवर्तनरूप संसारके दुःखतैं निकाल स्वर्गमुक्तिके बाधारहित उत्तमसुखनिमैं धारण करै। बहुरि कैसक धर्मकूं कहूं हूं जो समीचीन कहिये जामैं वादीप्रतिवादीकरि तथा प्रत्यक्ष अनुमानादिककरि बाधा नहीं आवै, अर जो कर्मबंधनकूं नष्ट करनेवाला है तिस धर्मकूं कहूं हूं।

भावार्थ—संसारमैं धर्म ऐसा नाम तो समस्त लोक कहैं हैं परन्तु शब्दका अर्थ तो ऐसा जो नरकतिर्यंचादिक गतिमैं परिभ्रमणरूप दुःखतैं आत्माकूं छुडाय उत्तम आत्मीक अविनाशी अतींद्रिय मोक्षसुखमैं धारण करै सो धर्म है। सो ऐसा धर्म मोल नहीं आवै जो धन खरचि दानसन्मानादिकतैं ग्रहण करिये तथा किसीका दिया नहीं आवै, जो सेवा उपासनातैं राजी कर लिया जाय। तथा मंदिर, पर्वत, जल, अग्नि, देवमूर्ति, तीर्थादिकनमैं नहीं धरया है जो वहां जाय ल्याइये। तथा उपवास व्रत कायक्लेशादि तपमैं हू शरीरादि कृश करनेतैं हू नहीं मिलै। तथा देवाधिदेवके मंदिरनिमैं उपकरणदान मंडल पूजनादिकरि तथा गृह छोड वन श्मशानमें बसनेकरि तथा परमेश्वरके नामजाप्यादिककरि नहीं पाईये है। धर्म तो आत्माका स्वभाव है जो परमैं आत्मबुद्धि छोड अपना ज्ञाता दृष्टारूप स्वभावका श्रद्धान अनुभव तथा ज्ञायकस्वभावमैं ही प्रवर्तनरूप जो आचरण सो धर्म है। तथा उत्तमक्षमादि दशलक्षणरूप

अपना आत्माका परिणमन तथा रत्नत्रयरूप तथा जीवनकी दयारूप आत्माकी परणति होय तादि आत्मा आप ही धर्मरूप होयगा। परद्रव्यक्षेत्रकादिक तौ निमित्तमात्र हैं । जिसकाल यह आत्मा रागादिरूप परणति छोड वीतरागरूप हुवा देखे है तादि मंदिर, प्रतिमा, तीर्थ, दान, तप, जप, समस्तही धर्मरूप है। अर अपना आत्मा उत्तम क्षमादि वीतरागरूप सम्यग्ज्ञानरूप नहीं होय तो वहां कहीं हू धर्म नहीं होय। शुभराग होय जदि पुन्यबंध होय है अर अशुभ राग द्वेष मोह होय तहां पापबंध होय है। जहां शुभश्रद्धानज्ञानस्वरूपाचरण धर्म है तहां बंधका अभाव है। बंधका अभाव भये ही उत्तम सुख होय है। अब ऐसा सुखका कारण जो आत्माका स्वरूप धर्म ताकूं प्रगट करनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

सद्दृष्टिज्ञानवृत्तानि धर्मं धर्मेश्वरा विदुः। यदीयप्रत्यनीकानि भवन्ति भवपद्धतिः ॥ ३ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र इन तीनोंको धर्मके ईश्वर भगवान तीर्थंकर परमदेव धर्म कहैं हैं अर इनतैं प्रतिकूल जे मिथ्यादर्शन मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र हैं ते संसारपरिभ्रमणकी परिपाटी होय हैं ।

भावार्थ—जो आपका अर अन्य द्रव्यनिका सत्यार्थ श्रद्धान ज्ञान आचरण सो तो संसारपरिभ्रमणतैं छुडाय उत्तम सुखमैं धारण करनेवाला धर्म है । अर आपका अर अन्य द्रव्यनिका असत्यार्थ श्रद्धान ज्ञान आचरण संसारके घोर अनंतदुःखनिमैं डबोवनेवाले हैं ऐसें भगवान वीतराग कहैं हैं। हम हमारी रुचिविरचित नहीं कहैं हैं। अब प्रथम ही सम्यग्दर्शनका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

श्रद्धानं परमार्थानामाप्तागमतपोभृताम्। त्रिमूढापोढमष्टाङ्गं सम्यग्दर्शनमस्मयम् ॥ ४ ॥

अर्थ—सत्यार्थ जे आप्त आगम तपोभृत तिनका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन होय है। आप्त तो समस्त पदार्थनिकूं जान तिनका स्वरूपकूं सत्यार्थ प्रगट करनेहारा है अर आगम आप्तका कह्या पदार्थनिकी शब्दद्वारकरि रचनारूप शास्त्र है अर आप्तका प्ररूप्या शास्त्रके अनुसार आचरणकूं आचरनेवाला तपो-

भूत कहिए गुरु है। इहां जो सांचा आप्त सांचा शास्त्र सांचा गुरुका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन है। अर असत्य आप्तआगमगुरुका श्रद्धान सो सम्यग्दर्शन नहीं है। सो सम्यग्दर्शन तीन मूढताकरि रहित है अर अपने अष्टअंगनिकरि सहित है अर अष्टमद जामैं नहीं हैं। भावार्थ–सत्यार्थ आप्त आगम गुरुका तीन मूढतारहित निःशंकितादि अष्टअंगसहित अष्टमदरहित श्रद्धान होय सो सम्यग्दर्शन है।

इहां कोऊ कहै जो सप्ततत्त्व नवपदार्थनिका श्रद्धानकूं आगममें सम्यग्दर्शन कह्या है सो इहां कैसैं नहीं कह्या? ताका समाधान,–जातैं निर्दोष बाधारहित आगमका उपदेश विना सप्ततत्वनिका श्रद्धान कैसे होय। अर निर्दोष आप्त विना सत्यार्थ आगम कैसैं प्रगट होय है तातैं तत्त्वनिका श्रद्धानकाहू मूल कारण सत्यार्थ आप्त ही है। अब सत्यार्थ आप्तहीका लक्षणकूं प्रगट करै हैं,–

आप्तेनोच्छिन्नदोषेण सर्वज्ञेनागमेशिना। भवितव्यं नियोगेन नान्यथा ह्याप्तता भवेत्॥ ५॥

अर्थ–धर्मका मूल भगवान आप्त है ताके तीन गुण हैं निर्दोषपणा, सर्वज्ञपणा, परमहितोपदेशकपणा तिनिमैं जाकै क्षुधा, तृषादिक दोष नष्ट होय गये, तातैं निर्दोष, अर त्रिकालवर्ती समस्त गुण पर्यायनिकरि सहित समस्त जीव पुद्गल धर्म अधर्म काल आकाशनिकी अनंत परणति तिनकूं युगपत् प्रत्यक्ष जाणै तातैं सर्वज्ञ, अर परमहितोपदेशकपणाकरि आगम जो द्वादशांग ताका मूलकर्ता तातैं आगमका स्वामी ऐसैं यह कहे जे तीनगुण तिनकरि संयुक्त होय सो निश्चयकरि आप्त होय है याहीकूं देव कहिये है। अन्य प्रकार इन तीन गुणनि विना आप्तपणा नहीं होय है जातैं जो आप ही दोषनिकरि सहित है सो अन्य जीवनिकूं निराकुल सुखित निर्दोष कैसे करैगा। जो क्षुधाकी बाधा तृषाकी बाधा कामक्रोधादिक दोष-सहित होय सो तो महादुःखित है, ताकैं ईश्वरपणा कैसैं होय। अर जो निरंतर भयवान भया शस्त्र आदिक ग्रहण कर्‍या रहै ताकै वेरी विद्यमान है सो निराकुल कैसैं होय। अर जाकै द्वेष चिंता खेदादिक निरंतर वर्तैं सो सुखित नहीं होय। अर जो कामी रागी होय सो तो निरंतर परके वश है वाकै

स्वाधीनता नाहीं, पराधीनतातैं सत्यार्थवक्तापणा बणैं नहीं। अर मदके वशीभूत निद्राके वशीभूत होय ताकै सत्यार्थवक्तापणा नहीं होय सकै है। अर जो जन्ममरणसहित है ताकै संसारपरिभ्रमणका अभाव नहीं संसारी ही है ताकै आप्तपणा नहीं बणै। जातैं निर्दोष होय ताहीके सत्यार्थपणाकरि आप्त नाम बणै है। रागी द्वेषी तो आपका अर परका रागद्वेष पुष्ट करनेरूप ही कहै यथार्थवक्तापणा तो वीतरागके ही संभवै है। बहुरि सर्वज्ञ नहीं होय तो इंद्रियानिके आधीन ज्ञानवाला पूर्वे भये जे राम रावणादिक तिनकूं कैसैं जानैं? अर दूरवर्ती जे मेरु कुलाचल स्वर्ग नरक परलोकादिकनकूं कैसैं जानै? अर सूक्ष्म-परमाणू इत्यादिकानिकूं कैसैं जानैं? इंद्रियजनित ज्ञान तो स्थूल विद्यमान अपने सन्मुखहीकूं स्पष्ट नहीं जानै है। इस संसारमैं पदार्थ तो जीव पुद्गल कालादिक अनंत हैं अर एककालमैं अपनी भिन्न भिन्न परणतिरूप परिणमैं हैं यातैं एकसमयवर्ती अनंत पदार्थोंकी भिन्नभिन्न अनंत ही परणति हैं। अर इंद्रिय-जनितज्ञान क्रमवर्ती स्थूल पुद्गलकी अनेक समयमें भई जे एक स्थूल पर्याय ताकूं जाननेवाला है। अनेकपदार्थनिकी अनेकपर्याय हैं। जो एक समयवर्ती ही जाननेकूं समर्थ नहीं तो अनंतकाल गया अर अनंतकाल आवैगा तिनकी अनंतानंत परणतिकूं इंद्रियजनित ज्ञान कैसैं जानैं। तातैं सर्व त्रिकालवर्ती समस्तद्रव्यनिकी परणतिकूं युगपत् जाननेकूं समर्थ ऐसा सर्वज्ञहीके आप्तपणा संभवै है। अर जो परम हितोपदेशक है सोई आप्त है ए तीन गुण जामैं होय सो ही देव है। यद्यपि अरहंतदेव मनुष्यपर्यायकूं धारण करता मनुष्य है तो हू ज्ञानावरणादि चारिघातिया कर्मनिके नाशतैं प्रगट भया जो अनंतज्ञान, अनंतदर्शन, अनंतवीर्य, अनंतसुखरूप निजस्वभाव तिसमैं रमनेतैं तथा कर्मनिके विजयतैं अप्रमाण शरीरकी कांति प्रगट होनेतैं अनंत आनंदसुखमैं मग्न होनेतैं तथा इंद्रादिक समस्त देवनिकरि स्तुति-योग्य होनेतैं तथा अनंतज्ञानदर्शनस्वभावकरि समस्त लोकालोकमें व्याप्त होनेतैं अनन्त शक्ति प्रगट होनेतैं अन्यदेव मनुष्यनितैं असाधारण आत्मरूपकरि दिपै है। तातैं मनुष्य पर्यायहीमैं अपने अनंत ज्ञानवीर्यसुखादि गुणनितैं याकूं देवाधिदेव कहिये है।

इहां कोऊ प्रश्न करै जो आप्तका लक्षण तीन काहेतैं कह्या ? एक निर्दोष कहनेतैं ही समस्त गुण लक्षण आवता ? ताकूं कहिये है,—निर्दोषपणा तो आकाश धर्म अधर्म पुद्गल कालादिकके हू है इनके हू अचेतनपणातैं क्षुधातृषा रागद्वेषादिक नहीं हैं यातैं निर्दोषपणातैं आप्तपणाका प्रसंग आवता तातैं निर्दोष होय अर सर्वज्ञ होय सोई आप्त है। अर निर्दोष सर्वज्ञ दोय ही गुण कहैं तो भगवान सिद्धनिके आप्तपणाका प्रसंग आवता तब सत्यार्थ उपदेशका अभाव आवता तातैं निर्दोष सर्वज्ञ परमहितोपदेशकता इन तीन गुणनिकरिसहित देवाधिदेव परम औदारिक शरीरमैं तिष्ठता भगवान सर्वज्ञ वीतराग अरहंतहीके आप्तपणा है ऐसें निश्चय करना योग्य है॥ अब अरहंतदेव जिन दोषनिकूं नष्टकरि आप्त भये तिन दोषनिके नाम कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

क्षुत्पिपासाजरातंकजन्मान्तकभयस्मयाः । न रागद्वेषमोहाश्च यस्याप्तः स प्रकीर्त्यते ॥ ६ ॥

अर्थ—क्षुत् कहिये क्षुधा १ पिपासा कहिये तृषा २ जरा कहिये वृद्धपणा ३ आतंक कहिये शरीरसंबंधी व्याधि ४ जन्म कहिये कर्मके वशतैं चतुर्गतिमैं उत्पत्ति ५ अंतक कहिये मृत्यु ६ भय कहिये इस लोकका भय परलोकका भय मरनभय वेदनाभय अनरक्षाभय अगुप्तिभय अकस्मात्भय ऐसें सप्त प्रकारका भय ७ स्मय कहिये गर्व मद ८ राग ९ द्वेष १० मोह ११ च शब्दतैं ग्रहण किये चिंता १२ रति १३ निद्रा १४ विस्मय कहिये आश्चर्य १५ विषाद १६ स्वेद कहिये पसेव १७ खेद व्याकुलता १८ ए अष्टादशदोष जाके नहीं सो आप्त कहिये।

अब यहां कोऊ श्वेताम्बरमतकाधारक प्रश्न करै है,—भो दिगम्बरधर्मधारक हो! जो केवली भगवानके क्षुधा तृषाका अभाव है तो आहारादिकनिमैं प्रवृत्तिका अभाव होतैं केवली देहकी स्थिति नहीं रही चाहिये अर देहकी स्थिति तुम्हारे मान्य ही है तातैं केवलीके आहार करनेकी सिद्धि भई। जैसें आहार किये बिना अपनें देहकी स्थिति नहीं रहै तैसें केवलीकै भी आहार विना देह नहीं रहै अर देहकी स्थिति

है तो अवश्य आहार करै ही है। तिसकूं उत्तर करैं हैं,—केवलीके आहारमात्र साधिये है कि कवलाहार साधिये है ? जो आहारमात्रहीकी सिद्धि चाहो तदि तो सयोगकेवलीपर्यन्त समस्त जीव आहारक ही हैं। ऐसा परमागमका वाक्य है क्योंकि समस्त ही एकेंद्रियकूं आदि लेय सयोगीपर्यन्त जीव समय समयमैं सिद्ध राशिके अनंतवें भाग अर अभव्यराशितैं अनंतगुणा कर्मपरमाणु अर नोकर्मपरमाणूंनिकूं निरंतर ग्रहण करै हैं। अर जो तुम या कहो हम तो केवलीके कवलाहार कहिये ग्रासग्रास मुखमैं ले अन्नजलादिक अपना भक्षण करनेकी ज्यों आहार करना कहैं हैं ? कवलाहार जो ग्रासरूप आहार तिस बिना केवलीके देहकी स्थिति नहीं रहै। जैसैं अपना देह कवलाहार विना नहीं रहै। ताकूं कहैं हैं—देवनिका देह कवलाहार विना सागरांपर्यन्त कैसैं तिष्ठै है ? समस्त देवनिकै कवलाहार कदाचित् नहीं है अर देहकी स्थिति है ही, तातैं तुम्हारा हेतु व्यभिचारी भया। अर जो या कहो देवनिके देहकी स्थिति तो मानसीक आहारतैं है जो मनमैं आहारकी इच्छा उपजते ही कंठमैं अमृत झरै है तातैं तृप्ति होय है सो मानसीक आहार है सो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी कल्पवासी चतुरनिकायके देवनिकै कवलाहार विना मानसीक आहारतैं ही देहकी स्थिति है तो तैसैं ही केवली भगवानके कर्मनोकर्मवर्गणाके आहारतैं देहकी स्थिति है। अर जो या कहो केवलीकी तो मनुष्य देहमैं स्थिति है यातैं अपने देहकी तुल्य कवलाहारतैं ही देहकी स्थिति मानिये है तो अपना देहज्यों पसेव, खेद, उपसर्ग, परीषहादिक भी मानना चाहिये। अर जो या कहोगे केवलीके आतिशय प्रभावतैं नहीं होय है तो भोजनका अभावरूप भी अतिशय कैसैं नहीं मानो हो। बहुरि अपने देहमैं देखिये तैसैं केवलीकै हू मानो हो तो जैसैं अपने इंद्रियजनित ज्ञान है तैसैं केवलीके हू ज्ञान इंद्रियजनित मानो। देखना, श्रवण करना, आस्वादना, चिन्तवना, इंद्रियनितैं भया तदि केवलज्ञानरूप अतीन्द्रियज्ञानको जलांजलि दीनी, सर्वज्ञपणाका अभाव आया। अर जो या कहोगे ज्ञानकरि समान होते हू केवलीकै अतीन्द्रियज्ञान ही है तो देहमैं स्थिति समान होते हू कवलाहार अभाव

केसैं नहीं मानो हो ? अर जो या कहोगे केवलीके वेदनीयकर्मका सद्भाव है यातैं भोजनकी इच्छा उपजे है यातैं कवलाहारमैं प्रवृत्ति होय है। सो ऐसैं कहना हू उचित नहीं, जातैं मोहनीयकर्मके सहायसहित ही वेदनीयकर्मकै भोजनकी इच्छा उपजावनेमें समर्थपणा है क्योंकि भोजनकी इच्छा सो बुभुक्षा है। इच्छा है सो मोहनीयकर्मका कार्य है यातैं नष्ट हुवा मोहनीयकर्मजाके ऐसे भगवान केवलीके भोजन करनेकी इच्छा काहेतैं उपजै ? अर मोहनीय विना हू इच्छा उपजै है तो मनोहरस्त्रीकूं भोगनेकी इच्छा हू उपजनेका प्रसंग आया तथा सुंदर शय्यामें शयन, आभरण, वस्त्रादि भोगोपभोगकी इच्छाका प्रसंग आया तदि वीतरागताका अभाव भया जहां इच्छा तहां वीतरागता नहीं।

बहुरि तुम्हारे केवली आहार करैं हैं सो एक दिनमें एक बार करैं हैं कि अनेकबार करैं हैं कि एक दिनके अन्तर कि दोय दिन, पांच दिन, पक्ष मासादि केता अन्तर करि भोजन करैं हैं ? जेता अंतर कहोगे तितना प्रमाण ही शक्ति रही, शक्ति घटे भोजन करैं हैं भोजनके आश्रय बल भया तदि अनंतवीर्य भगवान केवलीकै कहना असत्य भया। केवलीकै आहारकै आधीन ही बल रह्या। बहुरि केवली बुभुक्षाका उपशम करनेके अर्थि भोजनका आस्वादन करै है सो केवलज्ञानतैं भोजनका स्वाद ले हैं कि रसना इंद्रियतैं आस्वादै हैं ? जो केवलज्ञानतैं आस्वादै हैं तो दूर क्षेत्रमें तिष्ठता हू भोजनका आस्वादन कर लें तदि कवलाहारकरि कहा प्रयोजन रह्या ? अर जो रसनाइंद्रियतैं स्वाद ले हैं तो मतिज्ञानका प्रसंग आया क्योंकि इंद्रियनिकरि देखना, स्वादना, श्रवण करना, स्पर्शना, चिन्तवन करना सो तो मतिज्ञान है। बहुरि जो तुम यह कहो कि सर्वज्ञपणाकै अर कवलाहारकै वीरोध नहीं। जैसैं इहां आहार करि मनुष्यनिकै ज्ञानकी हीनता नहीं देखिये है तैसैं भोजन करते हू केवलज्ञानकी हीनता नहीं होय है। ताकूं कहिये है—जो हम पूछैं हैं द्रव्य, आभरण, वस्त्र, वाहन, काम, विषय भोगनेमें हूं सर्वज्ञपणाका विरोध नाहीं। अर जो तुम या कहो सर्वज्ञकै मोहके उदयका अभाव है यातैं द्रव्य, आभरण, काम, विषयभोगा-

दिक ग्रहण करनेकी इच्छा नहीं है अर असातावेदनीयका उदय विद्यमान है तातैं आहार ग्रहण करैं हैं क्योंकि कर्मनिकी शक्ति भिन्न भिन्न है कर्मनिकी शक्ति एकसी होय तो कर्मनिमें जुदा जुदा भेद नहीं होय। मोहके उदयका अभाव भया तातैं द्रव्यादिक नहीं ग्रहण करै है । ताकूं कहै हैं–जो मोहका अभाव भया तदि ग्रास उठाय मुखमैं देना चावना, निगलना, यह इच्छा काहेतैं भई ? जो या कहो कि–अन्तरायकर्मका अभाव भया तातैं इच्छा बिना ही मुखमैं ग्रास क्षेपै है तो अन्तरायकर्मका अभाव भोगोपभोगकामसेव-नादिकका हू ग्रहण क्यों नहीं करावे ? जो यह कहोगे कि–द्रव्य आभरण काम विषयादिक ग्रहण करनेतैं व्रत भंग हो जाय दीक्षाका भंग हो जाय साधूपणा नष्ट हो जाय है अर आहार करनेतैं व्रतका तथा दीक्षाका भंग नहीं होय है कवलाहार करनेतैं तो साधूकै धर्मका कारण देहकी स्थिति रहै । ताका उत्तर करै हैं,–तुम्हारे श्वेताम्बरमतमैं व्रतधारणतैं अर दीक्षाग्रहण करनेतैं ही केवलज्ञान उपजनेका नियम नाहीं है। मल्लीकुमारीके गृहस्थ अवस्थाहीमैं केवलज्ञानकी उत्पत्ति कहो हो तथा भरतचक्रवर्तीके समस्त छह खंडका राज भोगतेसते हू आरीसाका महलमें केवलज्ञान उपज्या कहो हो तथा मरुदेवी हाथीचढी पुत्रके अर्थि रुदन करतीके केवलज्ञान कहो हो। बांस चढ्या नटके केवलज्ञान कहो हो। उपासरामैं बुहारी देती दासीके केवलज्ञान कहो हो तथा गृहस्तीके वा स्त्रीके तथा अन्यधर्मी कोऊ भेषधारी होहु दंडी त्रिदंडी संन्यासी कपाली फकीर जटाधारी मुंडनकरनेवाला मृगछाला बाघम्बर ओढनेवाला समस्त कुलिंगीनिके मोक्ष कहो हो। समस्त नाई धोबी खटीक चांडालादि समस्तकै मोक्ष कहो हो। हृषिकेश चांडालकै केवल ज्ञान अर मोक्ष कहो हो। तुम्हारे व्रततैं दीक्षातैं ही प्रयोजन नहीं तुम्हारे केवलज्ञान तो पहिले गृहस्थके उपजि आवै अर दीक्षा पाछैं होय यतीपणा पाछैं होय ऐसे कहो हो। सर्वज्ञपणा पहले हो जाय अर दीक्षा पाछैं होय तदि दीक्षातैं कौन प्रयोजन सध्या ? अर गृहस्थके मोक्ष होय अर अन्य कुलिंगीनके हू मोक्ष हो जाय तदि तुम्हारा दीक्षाग्रहण मुंहपट्टीबंधन दंडग्रहण बोधा पात्रांका ग्रहण निरर्थक रह्या। इत्यादिक

तुम्हारे हजारां दोष आवैं हैं। अर जो तुम कहो असातावेदनीय उदयतैं केवलीके क्षुधा तृषा रोग मल मूत्रादिक होय सो नहीं है इसका उत्तर सुनहु—क्षुधा तो असातावेदनीयकर्मकी उदीरणातैं होय है सो असाताकी उदीरणाकी छट्ठे गुणस्थानमैं व्युच्छित्ति है तदि सप्तम गुणस्थानादिकनिमैं क्षुधादि वेदनाका अभाव है। बहुरि और सुनहु,—जिस काल मुनि श्रेणी चढैं तदि सातिशय अप्रमत्तगुणस्थानमैं अधःकरणके प्रारंभमैं च्यार आवश्यक होय हैं एक तो प्रतिसमय अनंतगुणी विशुद्धि १ अर दूजा स्थितिबंधका अपसरण कहिये घटना २ अर सातावेदनीयादिक पुण्यप्रकृतनिमैं अनंतगुणकाररूप रसका वर्द्धित होना ३ अर असातादिक अशुभ प्रकृतनिका रस अनंतगुणा घट निंबकांजीररूप दोय स्थानरूप रहै है विष हलाहलरूप शक्ति घट जाय है ४ पाछैं अपूर्वकरणमैं गुणश्रेणी निर्जरा १ गुणसंक्रमण २ स्थितिखंडन ३ अनुभागखंडन ४ ये च्यार आवश्यक होय हैं। तातैं तिन करणपरिणामनिके प्रभावतैं असातादिक अप्रशस्त प्रकृतिके रसके असंख्यात बार अनंतका भाग लाग घटनेतैं ऐसी मंद शक्ति रही सो सर्वज्ञके असातावेदनीयपरीषह उपजायवेकूं समर्थ नहीं। अर घातिया कर्मका सहाय रह्या नाहीं तातैं परीषह देनेमैं समर्थ नहीं है। बहुरि उक्तं च गोमट्टसारे,—

"समयट्ठिदिगो बंधो सादस्सुदयप्पगो जदो तस्स। तेणासादस्सुदओ सादसरूवेण परिणमदि ॥ १ ॥
एदेण कारणेण हु सादस्से बहुणिरंतरो उदओ। तेणासादणिमित्ता परीसहा जिणवरे णत्थि ॥ २॥
णट्ठा य रायदोसा इंदियणाणं च केवलम्हि जदो। तेण हु सादासादज सुहदुक्खं णत्थि इंदियजं" ॥ ३ ॥

अर्थ—पूर्वली बांधी जो असातावेदनीय ताका असंख्यातबार अनंतका भाग लागि रस घटि अति मंद रह गया। अर नवीन असाताका बंध होय नहीं। जातैं सप्तम गुणस्थानतैं एक सातावेदनीयका ही बंध नवीन होय है अर असाताका बंध होय नहीं। अर केवलीके साताकर्म बंधै सो भी एक समयकी स्थितिरूप बंधै सो उदय होता हुवा ही होय है तातैं असाताका उदय भी सातारूप ही परिणमै है।

भावार्थ—साताका उदय तो नवीन निरंतर अनंतगुणा रसरूप सर्वज्ञके उदयमें आवे अर असातावेदनीयका रस अनंतवें भाग, सो जैसें अमृतके समुद्रकूं एक विषकी कणिका विषरूप करनेकूं समर्थ नहीं होय तैसें सर्वज्ञके अतितीव्र अनंतगुणा साताकर्मके रसका उदयमें अनंतभागरूप अतिमंद असाताका उदय कैसें क्षुधाकी वेदना उपजावे ? या कारणतैं भगवान सर्वज्ञके निरंतर साताकर्मका ही उदय है, यामें किंचित् असाताका उदय हू सातारूप ही परिणमे है ता कारण असाताका उदयजनित परीषह जिनेंद्रके नहीं है। जातैं भगवान केवलीके राग द्वेष नष्ट भया तथा इंद्रियजनित ज्ञानका अभाव भया तातैं साता असातातैं उपज्या इंद्रियजनित सुख दुःख हू केवलीके नहीं है। अर और हू कहैं हैं,—अतिमंद उदयरूप असाता अपना कार्य करनेमें समर्थ नहीं है। जैसें मंदउदयरूप संज्वलनकषाय अप्रमत्तादि गुणस्थाननिमें प्रमाद नहीं उपजाय सकै तथा जैसें अतितीव्र वेदके उदयतैं उपजी मैथुनसंज्ञा सो मंदवेदका उदयरूप नवमे गुणस्थानमें नहीं है तथा निद्रा प्रचलाका उदय तो बारवें गुणस्थानमें द्विचरम समय पर्यंत है परंतु उदीरणा विना निद्राकू नहीं कर सकै है तातैं जागृत अवस्था विना आत्मानुभवनरूप ध्यान नहीं बन सकै; तैसें असाताका उदीरणा विना असाता कर्म क्षुधा तृषादिक नहीं उपजाय सकै है। अर और भी समझो कि—अप्रमत्त हू साधू आहारकी इच्छामात्रतैं प्रमत्तपणानैं प्राप्त होय है तो भोजन करता हू केवली प्रमत्त नहीं होय सो बडा आश्चर्य है। बहुरि केवली भगवान त्रैलोक्यके मध्य मारण ताडन छेदन ज्वालन मद्य मांसादि अशुचि द्रव्यनिकूं प्रत्यक्ष देखता कैसें भोजन करै है ? अल्प शक्तिका धारक गृहस्थ हू अयोग्य वस्तु निंद्य कर्म देख अन्तराय करै है अर केवली अन्तराय नहीं करै तो केवलीकै गृहस्थनितैं हू अधिक भोजनमें लम्पटता रही अर शक्तिकी हीनता रही तदि अनंतशक्ति कहां रही ? अर जाके क्षुधा वेदना होय ताके अनंतसुख कहां रह्या ? क्षुधा समान वेदना जगतमें अन्य नाहीं है। यातैं क्षुधा वेदना सर्वज्ञके होतैं अनन्तवीर्य अनंतसुख नहीं ठहरै। तथा ऋद्धिजनित अतिशयवान मुनिविषै अन्य

मनुष्यनिमैं नहीं पाइये ऐसा काय करनेका सामर्थ्य पाइये है तो अनंतवीर्यका धारक केवली भगवानके आहार विना देहकी स्थिति रहना कहा नहीं संभवै है। अर जो सर्वज्ञकै हू अन्य मनुष्यनिकी ज्यों आहार, निहार, निद्रा, रोग, स्वेद, खेद, मल, मूत्र विद्यमान होय तो सामान्य आत्मामैं अर परमात्मामैं कहा भेद रह्या? बहुरि जीवना कवलाहारतैं ही नहीं है आयुकर्मके उदयतैं है। उक्तं च गाथा—

"णोकम्मकम्महारो कवलाहारो य लेपमाहारो। उज्जमणो वि य कमसो आहारो छव्विहो भणिओ ॥४॥
णोकम्मं तित्थयरे कम्मं णिरये माणसो अमरे। कवलाहारो णरपसु उज्जो पक्खी य इगि लेपो" ॥५॥

अर्थ—आहार छहप्रकार है—कर्मआहार १ नोकर्मआहार २ कवलाहार ३ लेपआहार ४ ओजआहार ५ मानसीकआहार ६ ऐसैं छह प्रकार है। भगवान अरहंतके तो अन्य जीवनिके असंभव ऐसे शुभ सूक्ष्म नोकर्मवर्गणाका ग्रहण सो ही आहार है। अर नारकीनके कर्मका भोगना सो ही आहार है। अर चारप्रकारके देवनिके मानसीक आहार है, मनमैं वांछा होतैं ही कण्ठमैंतैं अमृत झरे है ताकरि तृप्तता होय है। मनुष्य अर पशुवानिकै कवलाहार है। अर पक्षीनके अंडेमैं तिष्ठतोनिके माताकी उदरकी ऊष्मारूप ओजाहार है। अर एकेंद्रिय पृथिव्यादिकनके लेप आहार है अर्थात् पृथिव्यादिकनका स्पर्श ही आहार है। बहुरि भोगभूमिके औदारिक देहके धारक मनुष्यनिका शरीर तीनकोस प्रमाण अर भोजन आंवला प्रमाण तीन दिनके अन्तर गये लेहैं यातैं कवलाहार ही देहकी स्थितिका कारण नहीं है। अर जो आहारकपनातैं कवलाहारकी ही कल्पना करो हो तो सयोगीपनातैं मनके माननेका अर प्राण माननेतैं पंच इन्द्रियनिका अर शुक्ललेश्यातैं कषायका हू प्रसंग आवेगा। अर एकादश परीषह जिनके हैं ऐसे कहना तो उपचारमात्र है। वेदनीयकर्म विद्यमान है यातैं कह्या है। परंतु जैसैं मंत्र औषधि आदिकके प्रभावकरि जाकी विषशक्ति नष्ट भई ऐसा विष मारनेकूं समर्थ नहीं तैसैं शक्तिरहित असातावेदनीय क्षुधा उपजावनेकूं समर्थ नहीं है। माणि मंत्र औषधि विद्या ऋद्ध्यादिकनिका आर्चिंत्य प्रभाव है।

श्वेताम्बरनिके कल्पित सूत्र हैं तिनमैं अनेक कल्पित असंभव रचना रची है। कोऊ एक गोसाला नाम गारोख्या महावीरस्वामीके निकट दीक्षित होय विद्याका मदकरि महावीर स्वामिसूं विवाद करनेकूं समोसरणमैं जाय विवाद किया तो विवादमैं हार गयो तदि क्रोधकरि भगवान उपरि तेजोलेश्या कोऊ ऋद्धि अग्निमय प्रज्वलित चलाई। तिसकरि समोसरणमैं दोय मुनि सिंहासनं नीचैं दग्ध भए। अर उस तैजस ऋद्धितैं उपजी आग्निमयज्वाला भगवानके ऊपर भी जाय पहुंची, भगवानकूं उपसर्ग भारी भया। तिस अग्निकी गरम बाधातैं भगवानके आंबरुधिरका पेचस (अतीसार) भया। सो छह महीना रह्या। पाछैं केवलज्ञानतैं जानकरि शिष्यकूं कहि सेठका घरतैं मुपक्षी जीवका पका मांसकूं मँगाय भक्षण करि व्याधि मेटी। अर कहीं मैं ऐसे कुपात्रकूं बिना समझ्यां दीक्षा दीनी ऐसा अवर्णवाद लिखैं है। तथा तीन ज्ञान लिये उपजे वीर जिनेंद्रका चटशालामें पढना कहैं हैं। तथा तीर्थंकर तो पहले दीक्षित नग्न होय हैं। पीछै इंद्र स्कंध ऊपरि वस्त्र धरि देवै तब वस्त्रकूं (ग्रहण कर) लेहैं। तथा वीरजिनकी वाणी गणधर बिना निष्फल खिरी कोऊ भी मानी नहीं। तथा आदिनाथकूं जुगलिया कहैं हैं। अर कोउ एक अन्य जुगलियो मर गयो ताकी स्त्री विधवा भई। तिस विधवा स्त्रीको ऋषभदेव अंगीकार करी तदि दूजी सुनंदा रानी नाताकी भई। इन ढुंढ्यादिक श्वेतांबरिनिके ऐसे अनर्थरूप वचन कहनेका भय नहीं है। तथा ऐसा विरुद्ध कहैं हैं कि— वीर जिन पहिली देवनंदा नाम ब्रह्मणीके गर्भमें अवतार लेय अस्सी दिन पर्यंत रह्या, ता पीछैं इन्द्रने विचारी के ऐसे नीच घरमें इनका जन्म योग्य नहीं तातैं हरिणगवेषी देवनैं आज्ञा करी, तदि देव जाय देवनंदा नाम ब्राह्मणीके गर्भमैंतैं निकालि राजा सिद्धार्थकी रानी त्रिसला ताके गर्भमैं धऱ्या। विचारो कि जीव अपने बांधे कर्मनिकरि कुलादिकमें उपजैं हैं देवनिकरि जन्म कैसैं फिरै ? परंतु मिथ्यादर्शनके प्रभावकरि कहनेका ठिकाना नहीं। तथा तीर्थंकर केवलीकूं सामान्य केवली नमस्कार करे है। बाहुबलीने ऋषभदेवकूं नमस्कार किया कहैं हैं। सप्तम गुणस्थानतैं ही वंद्यवंदक भाव

नहीं। जहां आत्मस्वभावका अनुभव तहां विभाव कैसैं कहै हैं। कृतकृत्य भगवान सर्वज्ञदेव तिनके नमस्कारकरि कहा साध्य है। बंदनेयोग्य परमेष्ठी अर मैं बंदना करनेवाला ऐसा भाव तो प्रमत्त नाम छट्ठा गुणस्थानपर्यंत ही है। तथा ऐसैं कहै हैं एक स्कंधक नाम त्रिदंडी कुलिंगी भेषीकूं अपने निकट आवता जान वीरजिन गौतमगणधरकूं कही कि—यह स्कंधक संन्यासी आवै है यह जवर है थारे इनके मैळ है सामे जाय याकूं ल्यावो। तदि गौतम गणधर बडी भक्तिसूं सन्मुख जाय ल्यायो। बडा अनर्थ है अव्रतसम्यग्दृष्टी भी कुलिंगीका सन्मान नहीं करै तो महाव्रती गणधर कैसे भक्तिपूर्वक सन्मान करै ?। स्त्रीके पंचमगुणस्थान सिवाय गुणस्थान ही नहीं, आदिके तीन संहनन नहीं, अहमिंद्रलोक नहीं, अर सप्तम नरकमें गमन नहीं, ता स्त्रीके मुक्ति कैसैं कहै हैं ? तथा मल्लिजिनकूं नारी कहै हैं ताकी प्रतिमा पुरुषरूप बनाय पूजैं हैं ऐसे महा असत्यवादी हैं। तथा कोऊ एक हरिक्षेत्रका निवासी मनुष्य जाका दोयकोस ऊंचा काय तिसकूं कोऊ पूर्वजन्मका वैरी देव हर ल्याया अर दोय कोसके देहको छोटा करिकैं भरतक्षेत्रमें ल्याय मथुरा नगरका राज देय अर मांस भक्षण कराय पापी करि नरक पहुंचाया। तासूं हरिवंशकी उत्पत्ति कहै हैं। तिन मूर्खनिकी मिथ्या कल्पनाका कुछ ठिकाना नहीं। दोय कोसकी काय ताकूं कैसे छोटी बनाई ? ऊपरसे छेद्या कि नीचेंमें कि बीचमेंसैं छेद्या, ताका कछु उत्तर नहीं। अर भोगभूमिके तो समस्त मनुष्य तिर्यंच देवगतिगामी हैं तथा भोगभूमिमें तो पुरुष स्त्री प्रमाणिक हैं। माता पिता मरै तिनकी एवज पहिले उपजैं हैं। जो अनंत काल गये भी एक एक घटै तो समस्त भोगभूमि रीति हो जाय। परंतु मिथ्यादृष्टीनिके कुछ कुबुद्धिका ओर (अंत) नहीं है। तथा छह द्रव्य कहना अर मुख्य कालद्रव्यका अभाव कहना समयादिक विनाशीककूं ही काल जानना।

तथा और कहै हैं कि—साधुके निंदकके मारनेका पाप नहीं। जो देव गुरु धर्मका द्रोही चक्री हू होय तो चक्रवर्तीका कटककूं हू विध्वंस करता साधुके पाप नहीं। जो आपके ऋद्धयादिक करि उपजी

शक्ति होते हू नहीं मारै तो वह साधु अनंतसंसारी है ऐसे पापी साधुके कहां साम्यभाव? कहां वीतरागता रही? तथा पापिष्ठ महान शीलवंतीनिकै हू दोष लगाय निर्दोष कहैं हैं। भरत नामा चक्रवर्ती तो ब्राह्मी नामा बहनकूं परणि लीनी कहै हैं। अर द्रोपदीकूं पंचभर्तारी कहैं हैं अर पंचभर्तारी हीकूं सती कहैं हैं। अर कोऊ पूछे तुम सती कहो हो तो पंचभर्तारी मति कहो अर पंचभर्तारी कहो हो तो सती मत कहो। ताकूं ये कहै हैं कोऊ राजादिक सो स्त्रीका नियम राखै ताकै शीलवानपणा ही है, तैसे स्त्रीहू कितनेक पुरुषनिका प्रमाण करै तातैं सिवाय ग्रहण नहीं ताकै शीलवतीपणा ही है। तथा देवनिकै अर मनुष्यनिकै कामभोग सेवन कहै है सो वैक्रियिकदेहधारीकै अर सप्तधातुमय मलीन देहकै संगम कदाचित् नहीं होय है। बहुरि कोऊ साधुकै उपवास होय अर अन्य साधुकै आहार उबरि जाय तो उपवासीक साधु भक्षण कर ले है गुरुकी आज्ञातैं व्रत भंग नहीं है। तथा उपवासमैं औषधि भक्षण करै तो दोष नहीं लागै। तथा समोसरणमैं भगवान नग्न बैठैं है अर वस्त्रसहित दीखता कहै हैं। तथा साधु यतिकै लाठी पात्र वस्त्रादिक चौदह उपकरण रखना ही धर्म है। तथा चांडालादिकनिकै मुक्ति कहैं हैं तथा वीरजिनका समोसरणमैं चंद्रमा सूर्य विमानसहित आये कहैं हैं। सरस्वती गतिकी मर्यादाका भंग कहै है। तथा साधुका मन चल जाय तो श्रावक अपनी स्त्रीकूं देय कामवेदना मिटाय मन थिर करै। तथा गंगादेवीसे पचपन हजार वर्षपर्यंत भरत चक्रीने कामभोग किया कहैं हैं तथा भोगभूमिके युगल मलमूत्र धारण करैं हैं अर मर जाय तदि तीनकोसके मुरदेके शरीरकूं देवता उठाय भैरूंडादिक पक्षीनको खुवाय देय हैं। जादव आदिक समस्त क्षत्रियनकूं मांसभक्षी कहैं हैं। तथा गौतम नाम गणधर आनंद नाम श्रावकके घर शरीरकी कुशल पूछने गया तदि झूंठ बोल्या, गणधर भी चूक कर झूंठ बोलैं हैं। तथा जन्मके समयमैं वीरजिन मेरुकूं कंपायमान किया कहैं हैं। चर्मका नीर घृतादिक निर्दोष कहैं हैं। इत्यादि हजारां अनर्थरूप कथन करि काल्पितसूत्र बनाये हैं तिनकी विशेष कथा कहांतक कहिये?

इनही श्वेतांबरीनमैं महाभ्रष्ट ढूंढिया भए हैं ते प्रतिमाके वंदनकों अमान्य कहैं हैं। अर भोले लोगनिकूं कहैं हैं ए प्रतिमा एकेंद्रिय पाषाण तिनके आगैं पंचेंद्रिय होय कैसैं नाचो हो कैसैं वंदन करो हो? तुमकूं क्योंकर शुभगति देयगी तातैं साधु ढूंढियानिकी वंदना दर्शन करो तिनकूं कहिये है कि—तुम्हारा चर्ममय मलीन चामकर ढक्या मलमूत्रादि करि भऱ्या कफ लालाकरि लिप्त देह ताका दर्शन करनैतैं कहा साध्य? तुम आत्मज्ञानकरि रहित समस्त जगतके अभक्ष वस्तुनिकूं भक्षणकरनेहारे तुम्हारा दर्शन तो बंधहीका कारण है। अर तुम्हारा कल्पितसूत्रका श्रवण सम्यक्त्वका विध्वंस करनेहारा बंधका कारण है। अर जिनेंद्रका धातु पाषाणका प्रतिबिंब, तिनका दर्शनमात्रसे परम वीतराग सर्वज्ञका ध्यान प्रगट होय जाय परमशांतता शुभोपयोग प्राप्त होय जाय अर तुम्हारे पापमय देहके दर्शनतैं पापका बंध होय जाय। कैसे हो तुम महाविद्रूप विकारी रागद्वेष कषायादि पापमलसहित अयोग्य अभक्ष आहारके लंपटी हिंसादिक पापनिमैं प्रवृत्ति करनेवारे अन्य जीवनिकूं मिथ्यामार्गमैं प्रवर्तावनेहारे तुम्हारे देखनेकरि घोर पापबंध होय। सराहनेवालेके सत्तर कोडाकोडी सागरकी स्थिति लिये मोहनीयकर्मका बंध होय है। इस कलिकालमैं जैनधर्मका सत्यार्थ मार्गकूं श्वेताम्बरोंने बिगाड्या है। यातैं इनका स्वरूप जाननेके अर्थि ऐसे प्रकरण पाय श्वेताम्बरनिके मतका स्वरूप दिखाया। इनके सत्यार्थ आप्तता कैसैं होय? और हू मतवाले जे देव प्रत्यक्ष भयभीत तथा असमर्थ होय चक्र त्रिशूल खड्ग ग्रहण करि राखे हैं और कामी होय स्त्रीनिके आधीन होय रहे हैं अरु क्षुधा, तृषा, काम, राग, द्वेष, निद्रा, नीहार, वैर, विरोध प्रगट जाके प्रसिद्ध है तिनके निर्दोषपना कैसैं होय। अरु जे इंद्रियज्ञानसहित ज्ञानी तिनके सर्वज्ञपना आप्तपना कहांसैं होय? तातैं सर्वज्ञ वीतराग परमहितोपदेशकहीके आप्तपना बने है। अब पूर्वापरविरोधादि दोषनिकरि रहित सत्यार्थ पदार्थनिका उपदेश देनेवाला जो शास्ता ताका नाम प्रगट करता सूत्र कहैं हैं,—

परमेष्ठी परंज्योतिर्विरागो विमलः कृती । सर्वज्ञोऽनादिमध्यान्तः सार्वः शास्तोपलाल्यते ॥ ७ ॥

अर्थ—जो अर्थसहित अष्ट नामनिकूं धारण करै है सो शास्ता कहिये है । परमेष्ठी, परंज्योतिः, विरागः, विमलः, कृती, सर्वज्ञः, अनादिमध्यान्तः, सार्वः, एते सार्थक नाम जाके हैं सो शास्ता है याहीकूं आप्त कहिये है ॥ ७ ॥ परमेष्ठी कहिये परम इष्ट जो इंद्रादिकनिकरि वंद्य जो परमात्मा स्वरूपमें तिष्ठै सो परमेष्ठी है । कैसा है परमेष्ठी अंतरंग तो घातियकर्मनिके नाशतैं प्रगट भया अनंतज्ञानदर्शनसुखवीर्य-स्वरूप अपना निर्विकारअविनाशी परमात्मस्वरूप तिसमें तिष्ठै है । अर बाह्यमें इंद्रादिक असंख्यातदेव-निकरि वंद्यमान समवसरण नाम सभाके मध्य तीन पीठके ऊपरि दिव्यसिंहासनमें चार अंगुल अंतरीक्ष (अधर) चौसठ चमरनिकरि युक्त विराजमान छत्रत्रयादिक दिव्य संपदाकरि विभूषित इंद्रादिक देव तथा मनुष्यादिक निकट भव्यनिकों धर्मोपदेशरूप अमृतपान कराय जन्मजरामरनका संतापकूं निरा-करण करता तिष्ठै है यातैं भगवान आप्तकूं परमेष्ठी कहिये है । अर जो कर्मनिकी आधीनतातैं इंद्रियनिके कामभोगादिविषयनिमें तथा विनाशीक सम्पदारूप राज्यसंपदामें लीनभये स्त्रीनिके आधीन भये विष-यांकी आताप सहित तिष्ठैं तिनिके परमेष्ठीपणा नहीं संभवै है । बहुरि जो परंज्योति है जाका परं कहिये आवरणरहित ज्योतिः कहिये अतीन्द्रियअनंतज्ञानमें लोक अलोकवर्ती समस्त पदार्थ अपने त्रिकाल-वर्ती अनंत गुणपर्यायनिकरि सहित युगपति प्रतिबिंबित होय रहे हैं, सो भगवान परंज्योतिस्वरूप आप्त है । अन्य जे इंद्रियजनित ज्ञानकरि सहित अल्पक्षेत्रवर्ती वर्तमान स्थूल पदार्थनिकूं अनुक्रमकरि जानै ताकूं परंज्योति कैसैं कह्या जाय ? बहुरि जाके मोहनीयकर्मके नाशतैं समस्त परवस्तुमें रागद्वेषका अभावतैं वांछारहित परमवीतरागता प्रगट भई वस्तुका सत्यार्थस्वरूप जानै तदि कौनमें राग करै ? कौनमें द्वेष करै ? जैसा वस्तुका स्वभाव है तैसा रागद्वेषरहित जानैं ऐसा विराग नामसहित अर्हंत ही आप्त है । जो कामी विषयनिमें आसक्त गीत नृत्य वादित्रनिमें आसक्त जगत्की स्त्रीनिकूं राजी करनेमें बैरीनकूं मार

लोकानिमें अपणा शूरपणा प्रगट करनेमें बांछासहित होय तिसके विरागपणा नहीं संभवे है। बहुरि जाके काम क्रोध मान माया लोभादिक भावमल नष्ट भया अर ज्ञानावरणादिक कर्ममल नष्ट भया अर मूत्र, पुरीष, पसेव, वात पित्तादिक शरीरमल नष्ट होय निगोदरहित परम औदारिक छायारहित कांतियुक्त क्षुधा, तृषा, रोग, निद्रा, भय विस्मयादिक रहित शरीरमें तिष्ठै सो आप्त भगवान अरहंत ही विमल हैं। अन्य जे काम क्रोधादि मलसहित ते विमल नहीं है। बहुरि जिनके कछु करना नहीं रह्या जो शुद्ध अनंत ज्ञानादिमय अपना स्वरूपकूं प्राप्त होय कृतकृत्य व्याधिउपाधिरहित भया सो भगवान आप्त ही कृती हैं। अन्य जे जन्ममरणादिसहित चक्र त्रिशूल गदादिक आयुध अर कनककामिनीमें आसक्त भोजन-पान कामभोगादिककी लालसासहित शत्रुनिके मारनेकी आकुलता सहित हैं ते कृती नहीं हैं। बहुरि जो इंद्रियादिक परकी सहायरहित युगपत् समस्त द्रव्यगुणपर्यायनिकूं क्रमरहित प्रत्यक्ष जानैं सो भगवान आप्त ही सर्वज्ञ हैं। अन्य इन्द्रियाधीन ज्ञानकरि सहित सो सर्वज्ञ नहीं है। बहुरि जाका जीव द्रव्यकी अपेक्षा तथा ज्ञान दर्शन सुख वीर्यकी अपेक्षा आदि मध्य अंत नहीं तातैं अनादिमध्यान्त है अथवा भगवान आप्त अनादि कालतैं हैं अर अन्तको प्राप्त नहीं होयगा तातैं अनादिमध्यान्त है अर जिनके मतमैं आप्तके जन्म मरण तथा जीवका नवीन प्रगट होना तथा जीवके ज्ञानादि गुण नवीन प्रगट होना मानैं हैं तिनके अनादिमध्यान्तपणा नहीं बनै है। बहुरि जिनके वचनकी अर कायकी प्रवृत्ति समस्त जीवनिके हितके अर्थि ही है सो भगवान आप्त सार्व कहिये है। अन्य जे काम क्रोध संग्रामादिक हिंसा-प्रधान समस्त पापनिकरि अपना परका अहितमैं प्रवर्तन करै हैं करावै हैं तिनके सार्व ऐसा नाम हू नहीं है। ऐसैं अष्ट विशेषणसहित सार्थक नामनिकरि शास्ता जो आप्त, ताका असाधारणस्वरूप कह्या। 'शास्तीति शास्ता' इस निरुक्तिका ऐसा अर्थ है जो शिष्य जे निकटभव्य तिनकूं हितरूप शास्ति कहिये शिक्षा करै सो शास्ता कहिये। अब कहैं हैं जो शास्ता कहिये आप्त है सो सत्पुरुषनिकूं स्वर्गमुक्तिके

प्राप्तकरनवाली शिक्षा करता आपके कुछ विख्यातता तथा लाभ तथा पूजादिक फलकूं वांछा नाहीं करे है, ऐसा दिखावैं हैं.—

अनात्मार्थं विना रागैः शास्ता शास्ति सतो हितं। ध्वनन् शिल्पिकरस्पर्शान्मुरजः किमपेक्षते ॥ ८ ॥

अर्थ—शास्ता जो धर्मोपदेशरूप करनेवाला अरहंत आप्त सो अनात्मार्थं कहिये अपना ख्याति लाभ पूजादिक प्रयोजन बिना तथा शिष्यनिमैं रागभाव बिना सत्पुरुष जो निकट भव्य तिननैं हितरूप शिक्षा करै है जैसैं शिल्पी जो वादित्र बजानेवाला ताका हस्तका स्पर्शमात्रतैं नाना शब्द करता जो मृदंग, सो किंचित् अपेक्षा नहीं करै है ॥ ८ ॥ भावार्थ—संसारी जन लोकमैं जितना कार्य करै हैं तितना अपना अभिमान लोभ जस प्रशंसादिकके अर्थि करै हैं अर भगवान अरिहंत आप्त अपना प्रयोजन विना इच्छा विना ही जगतके जीवानिकूं हितरूप शिक्षा करैं हैं जैसैं मेघ प्रयोजन विना ही लोकनिका पुण्य उदयका निमित्ततैं पुण्यदेशनिमैं गमन करै अर गर्जना करै अर प्रचुर जलकी वरषा करै है। तैसैं भगवान आप्त हू लोकनिके पुण्यके निमित्ततैं पुण्य देशनिमैं विहार करै अर धर्मरूप अमृतकी वरषा करता उपदेश करै है जातैं सत्पुरुषनिकी चेष्टा जो आचरण सो परका उपकारके अर्थि है। तथा जैसैं कल्पवृक्षादिक वृक्ष तथा धान्यादिक तथा आम्रादिक वृक्ष परजीवनिका उपकारके अर्थ ही फलै हैं। पर्वतादिक सुवर्ण रत्नादिकानिनै तथा प्रचुर जलनै अनेक वृक्षादिकानिनै इच्छा विना ही जगतका उपकारके अर्थ धारण करै हैं तथा समुद्र हू रत्नादिकानिने तथा गौ दुग्धनै परके अर्थि ही धारण करै है तथा दातार परके उपकार निमित्त धनकूं धारण करै है तैसैं ही सत्पुरुष वचनेन परोपकारके अर्थि ही इच्छा विना धारण करै हैं। बहुत कहनेकरि कहा? जेते उपकारक पदार्थ हैं तितने इच्छा बिना ही लोकनिके पुण्यके प्रभावतैं प्रगटैं हैं तैसैं ही भगवान आप्त इच्छा बिना ही लोकानिका परमोपकारके निमित्त धर्मरूप हितोपदेश करैं हैं। ऐसैं आप्तका स्वरूप तो च्यार श्लोकनिमैं कह्या अब एक श्लोकमैं सत्यार्थ आगमका लक्षण कहै हैं,—

आप्तोपज्ञमनुल्लंघ्यमदृष्टेष्टविरोधकं। तत्त्वोपदेशकृत् सार्वं शास्त्रं कापथघट्टनं ॥ ९ ॥

अर्थ—शास्त्र ताकूं कहिये है जो सर्वज्ञ वीतरागका कह्या होय अर किसी वादी प्रतिवादी करिउलंघन नहीं किया जाय अर दृष्ट जो प्रत्यक्ष अर इष्ट जो अनुमान तिनकरि जामैं विरोध नहीं आवै अर तत्त्व कहिये जैसा वस्तुका स्वरूप होय तैसा उपदेश करनेवाला होय अर सर्व जीवनिका हितरूप होय अर कुमार्ग जो मिथ्यामार्ग ताकूं निराकरण करै ऐसैं छह विशेषण सहित शास्त्रका स्वरूप वर्णन किया ॥९॥

इहां ऐसा भाव जानना—जो कालके निमित्तकरि मिथ्यामार्गी बहुत पैदा भये हैं तिनने अपना अभिमान विषय कषाय पुष्ट करनेकूं अनेक खोटे शास्त्र रचि जगतकूं सत्यार्थ धर्मतैं भ्रष्ट किए हैं। जेते मत संसारमें प्रवर्तैं हैं तितने समस्त शास्त्रनितैं ही प्रवर्तैं हैं। शास्त्र विना कोऊ मत है ही नहीं। ब्राह्मणादिक तो वेद स्मृति पुराण तिनमैं हिंसाकी प्रधानताकरि अश्वमेध नरमेधादिक यज्ञ अर जीवनिका शिकार समस्त जलचारी थलचारीनिकी हिंसा करनेमैं धर्म कहै हैं। तथा देवतानिके अर पित्र्य व्यंतरादिकनिकूं तृप्तताके अर्थि मांसपिंडका देना ही धर्म बतावैं हैं। अर भवानी भैरवादिक देव भैंसा बकरा इत्यादिकनिकूं मार चढावै अर भक्षण किए ही प्रसन्न होय हैं। तथा देवता मांसाहारी ही हैं। राजनिका धर्म शिकार ही है इत्यादिक शास्त्रनिके वचनतैं ही प्रवर्तैं हैं तथा हरिहर ब्रह्मादिक भगवान हैं परमेश्वर हैं ऐसे कह करिके हरीकूं तो निरंतर ग्वालनिकी स्त्रीनिमैं आसक्त होय बांसुरी बजावना नाचना तथा गोवर्द्धन अहीरकूं मार स्त्रीका हरना अनेक न्याय अन्याय लीला करना सो सब शास्त्रनिमैं लिखी ही जगत मानै है। तथा हर जो शिव ताके अर्द्धअंगमैं नारीका धसना, अर भस्म लगावना, अनेक हत्या तथा सरापने प्राप्ति होना त्रिशूलादिक आयुध रखना फिर लोकका संहार करना ए समस्त शास्त्रनिमैं लिखनेतैं ही जगतके लोक निश्चय करै हैं। तथा शिवका लिंग पार्वतीकी योनिमैं तिष्ठतेकूं निरंतर जल सींचना आक धतूरा चढावना इत्यादिक समस्त शास्त्रनिमैं लिखनेतैं ही जगतमैं अनेक मनुष्य ऐसी प्रवृत्तिकूं ही धर्म जानि सेवन

करैं हैं। तथा ब्रह्माकूं समस्त सृष्टिका कर्ता अर पितामह कहैं हैं तिस ब्रह्माकूं आतिकामी होय अपनी पुत्रीसूं विषय करि भ्रष्ट हुआ कहैं हैं। उर्वसी नाम अपछरामैं मोहित होय अपने चार हजार वर्षके तपके फलतैं चार मुख धारण करि उर्वसीकूं अवलोकन करि तपतैं भ्रष्ट भया अर उर्वसीका सरापकूं प्राप्त भया सो समस्त उनके शास्त्रनिमैं ही लिखा है। तथा जगतकी रचना करनेवाला अर पालन करनेवाला भगवान नारायण कच्छ मच्छ सूर सिंहादिक अनेक अवतार धारण करि दानवांका संहार करना तथा हनूमानकूं बांदरा गणेशकूं हस्तीरूप अर मूमापरि चढ्या अर मोदक (लाडू)के भक्षणमैं अतिरागी सो समस्त शास्त्र हीमैं लिखे हैं। तथा जीव मारनेमैं जीव मारि देवतानिकूं तृप्ति करनेमैं तलाव कूप वा बावडी खुदावनेमैं बडा धर्म होना शास्त्रहीमैं लिखा है। तथा श्वेतांबर अनेक कल्पित सूत्र रचे हैं तिनका भ्रष्टाचार समस्त शास्त्रनितैं ही प्रवर्तैं है। तथा कलिकालके भेषधारी कुलदेव्यांकी पूजा क्षेत्रपालादिव्यंतरांकी आराधना तथा पदमावती चक्रेश्वरी इत्यादिक देवीनिकी पूजा तथा अनेक मिथ्या प्ररूपणा तर्पणादिक लिख दिये हैं। तथा अन्य भील म्लेच्छ मुसलमानादिक समस्तके शास्त्र हैं। शास्त्रां विना मिथ्या कल्पना कैसैं प्रवर्तैं? तातैं जगतमैं शास्त्र बहुत हैं शास्त्रनिके बलतैं ही अनेक पाखंड, भेष, मिथ्या धर्म प्रवर्तैं हैं तातैं परीक्षा प्रधानी होय परीक्षा करि शास्त्रकूं ग्रहण करना। पूर्वोक्त छह विशेषणकरि सहित ही आगम है। प्रथम तो सर्वज्ञ वीतरागका कह्या होय जो सर्वज्ञ विना इंद्रियजनित ज्ञानकरि जीव अजीव अतींद्रिय अमूर्तीक पदार्थनिकूं नहीं प्रगट कर सकेगा। तथा पाप पुण्यादिक अदृष्ट पदार्थनिकूं तथा परमाणु इत्यादिक सूक्ष्म पदार्थनिकूं कैसैं प्ररूपण करैगा। तथा स्वर्ग नरककी पर्यायनिकूं अर स्वर्ग नरकमैं उपजे सुखदुःखके कारण अनेक संबंधनिकूं कैसैं जानैगा। तथा मेरु कुलाचलादिकनिका प्ररूपण कैसैं करैगा। तथा जीवादिक द्रव्यनिके अनंत पर्याय होय गया अर अनंत होयगा अर अनंत वस्तुके अनंत गुण अर अनंतपर्यायनिका एक समयमैं युगपत् परिणमन तिनको क्रमवर्ती इंद्रियजनित ज्ञानका धारी कैसैं प्ररूपण करैगा।

तातैं सर्वज्ञ विना इंद्रियजनितज्ञानिकै आगमका कहना यथार्थ नहीं बनै है । तातैं सत्यार्थ आगमका कहना सर्वज्ञके ही बनै है अर रागद्वेषका धारक अपना अभिमान पुष्ट करनेका इच्छुक अपनी विख्यातता करनेका इच्छुक तथा विषयांका लोभी होयगा सो सत्यार्थ नहीं कहैगा । तातैं सर्वज्ञ वीतरागका कह्या हुआ ही आगमकै प्रमाणता है । बहुरि जिस आगममैं वादी प्रतिवादी करि दिखाया अनेक दोष आजाय सो आगम प्रमाण नहीं जातैं वादी प्रतिवादी जाकूं उलंघन नहीं कर सकै बाधा नहीं दे सकै ऐसा अनुल्लंघ्य ही आगम है । बहुरि जिस आगममैं प्रत्यक्ष अनुमानकरि बाधा नहीं आवै सो आगम है । जिसमैं प्रत्यक्ष प्रमाणतैं तथा अनुमान प्रमाणतैं बाधा आय जाय सो आगम प्रमाण नहीं है । बहुरि जिस आगममैं आपका अर परका निर्णय नहीं तथा हेय उपादेय कृत्य अकृत्य देव कुदेव धर्म अधर्म हित अहित ग्राह्य अग्राह्य भक्ष अभक्षका निर्णय करि सत्यार्थ वस्तुका स्वरूप नहीं वृथा शब्दोंका आडंबररूप लोकरंजन असत्य कथा तथा देशकथा राजकथा स्त्रीकथा कामकथा इत्यादिकथा अनेक विकथा संसारमैं उरझानेवाला है, अर आत्माका संसारतैं उद्धार करनेका उपायरूप कथन नहीं कहै सो मिथ्या आगम है । यातैं तत्त्वभूत जीवके हितका उपदेशरूप जामैं कथन होय सो तत्त्वोपदेशकृत् ही आगम है । बहुरि जो सर्व प्राणीनिका हितरूप उपदेश करनेवाला होय सो ही सार्वविशेषण सहित आगम है । जामैं प्राणीनिकी हिंसाप्ररूपण करी तथा मांसभक्षण तथा जलथलआकाशगामी जीवानिके मारनेके उपाय तथा महा आरंभके तथा मारण उच्चाटन करनेका परधन हरनेका संग्राम करनेका सैन्याके विध्वंस करनेका नग्र ग्राम विध्वंस करनेका परिग्रह परस्त्रीमैं रुचनेका उपाय वर्णन किया सो आगम सार्व कहिये समस्त प्राणीनिका हितरूप नाहीं । बहुरि जो कुमार्गका निराकरण करि स्वर्ग मोक्षके मार्गका उपदेश करनेवाला होय सो कापथघट्टनविशेषण सहित आगम है अर जो शृंगार वीर रसादिकका वर्णनकरि कुमार्गमैं प्रवर्तावनेवाला तथा जुवा मांसभक्षणादिक खोटे विसनिरूप मार्गमैं तथा संसारमैं डबोवनेके कारण जो रागी, द्वेषी,

विषयी, कषायी देव तिनकी सेवा तथा पाषंडी भेषीनिकी उपासना मिथ्या धर्मरूप कुमार्ग तिनमें प्रवर्तिरूप कथनी जामें होय सो खोटा आगम है। जो विशेष नहीं समझैं तिनकूं भी इतना समझना चाहिये जो वीतरागका आगम होयगा तामें रागादिक विषय कषायका अभाव अर समस्त जीवनिकी दया ये होय तो प्रधान होय ही। ऐसें एक श्लोकमें आगमका लक्षण कह्या। अब तपस्वी जो सत्यार्थगुरु ताका स्वरूप कहैं हैं,–

विषयाशावशातीतो निरारम्भोऽपरिग्रहः। ज्ञानध्यानतपोरक्तस्तपस्वी स प्रशस्यते ॥ १० ॥

अर्थ—जो पांच इंद्रियनिकी विषयानकी जो आशा कहिये वांछा ताकरि रहित होय, छह कायके जीवनिका घात करनेवाला आरंभ करि रहित होय अर अंतरंग बहिरंग समस्त परिग्रहकरि रहित होय अर ज्ञान ध्यान तपमें आसक्त होय ऐसें चारि विशेषण सहित जो तपस्वी कहिये गुरु सो प्रशंसा करिये है ॥ १० ॥

जो रसना इंद्रियका लंपटी होय, नाना रसनिके स्वादकी आशाके वशीभूत होय रह्या होय तथा कर्ण इंद्रियका वशीभूत होय, अपना यश प्रशंसा सुनवाका इच्छुक होय, अभिमानी होय तथा नेत्रादिककरि रूप महल मंदिर बन बाग ग्राम आभरण वस्त्रादिक देखनेका इच्छुक तथा कोमल शय्या कोमल ऊंचा आसन ऊपरि सोवने बैठनेका इच्छुक, सुगंधादिक ग्रहण करनेका इच्छुक, विषयोंका लंपटी होय सो औरनिकूं विषयनितैं छुडाय वीतराग मार्गमें नहीं प्रवर्तावै, सराग मार्गमें लगाय संसार समुद्रमें डबोय देय है। तातैं विषयनिकी आशाके वश नहीं होय सो ही गुरु आराधन करने वंदने योग्य है। जातैं विषयनिमें जाके अनुराग होय सो तो आत्मज्ञानरहित बहिरात्मा है गुरु कैसें होय बहुरि जाके त्रसस्थावर जीवनिका घातका आरंभ होय ताकै पापका भय नहीं पापिष्ठकै गुरुपना कैसें संभवै। बहुरि जो चौदहप्रकार अंतरंगपरिग्रह अर दसप्रकार बहिरंगपरिग्रहसहित होय? सो गुरु कैसें होय परिग्रही तो आप ही

संसारमैं फंसरह्या है सो अन्यका उद्धारक गुरु कैसैं होय । इहां मिथ्यात्व १ वेद जो स्त्री पुरुष नपुंसक २ राग ३ द्वेष ४ हास्य ५ रति ६ अरति ७ शोक ८ भय ९ जुगुप्सा १० क्रोध ११ मान १२ माया १३ लोभ १४ ऐसैं चौदहप्रकार अंतरंग परिग्रह हैं । इनका स्वरूप कहिये है,—यद्यपि मनुष्यादि पर्याय अर शरीर अर शरीरका नाम शरीरका रूप तथा शरीरके आधार जाति, कुल, पदस्थ, राज्य, धन, कुटुंब, जस अपजस, ऊंच नीचपना, निर्धनपना, मान्यता अमान्यता, ब्रह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्रादिक वर्ण, स्वामी सेवक, जती गृहस्थपना इत्यादिक बहुत प्रकार हैं ते पुद्‌गलनिकी रचनामय कर्मनिके कियेहुये प्रत्यक्ष देखे है, सुने है, अनुभवे है जो ये विनाशीक हैं पुद्गलमय हैं मेरा स्वरूप नहीं है ऐसैं आछीतरह वारंवार निर्णय करि राख्या है तो हू अनादिकालतैं मिथ्यात्वकर्मका उदयकरि ऐसा संस्कार दृढ होय रह्या है जो इनका नाशतैं आपका नाश माने है । इनके घटनेतैं अपना घटना, बढनेतैं अपना बधजाना ऊंचापना नीचापना मानि समस्त देहादिकमय होय रहें हैं । यद्यपि अपने वचनकरि इन समस्तकूं पररूप कहैं हैं हमारा नहीं, पराधीन विनाशीक है तथापि अभ्यंतर इनका संयोग वियोगमैं रागद्वेषसुखदुःखरूप अपने आत्माका होना सो मिथ्यत्वनाम परिग्रह है ॥ १ ॥ बहुरि स्त्री पुरुष नपुंसकादिकमैं कामसेवनेरूप राग अंतरंगमैं होना सो वेद नामका परिग्रह है ॥ २ ॥ परद्रव्य जो देह धन स्त्री पुत्रादिकनिमैं रंजायमान होना सो रागपरिग्रह है ॥ ३ ॥ परका ऐश्वर्य यौवन धन संपदा यश राज्य विभवादिकतैं वैर रखना सो द्वेषपरिग्रह है ॥ ४ ॥ हास्यके परिणाम सो हास्यपरिग्रह है ॥ ५ ॥ अपना मरण होनेतैं वियोग वेदनादि होनेतैं डरपना सो भयपरिग्रह है ॥ ६ ॥ आपके रागकरनेवाला पदार्थमैं आसक्ततातैं लीन होना सो रतिपरिग्रह है ॥ ७ ॥ आपकूं अनिष्ट लागे तिसमैं परिणाम नहीं लगना सो अरतिपरिग्रह है ॥ ८ ॥ इष्टका वियोग होतैं क्लेशरूप परिणाम होना सो शोकपरिग्रह है ॥ ९ ॥ घृणावान वस्तुको देख श्रवण स्पर्शन चिंतवनादिक करि परिणाममैं ग्लानि उपजना सो जुगुप्सापरिग्रह है अथवा परका उदय

देख सुहावै नहीं सो जुगुप्सापरिग्रह है ॥ १० ॥ रोषके परिणाम सो क्रोधपरिग्रह है ॥ ११ ॥ ऊंच जाति कुल तप रूप ज्ञान विज्ञान ऐश्वर्य बल इत्यादिका मद करनेकरि आपकूं ऊंचा अर परकूं नीचा समझि कठोर परिणाम होना सो मानपरिग्रह है ॥ १२ ॥ कपटालिये वक्रपरिणाम सो मायापरिग्रह है ॥ १३ ॥ परद्रव्यनिमें चाहरूप परिणाम सो लोभपरिग्रह है ॥ १४ ॥ ऐसें संसारका मूल आत्माका घातक तीव्रबंधके कारण चतुर्दशप्रकार अभ्यंतरपरिग्रह हैं। अर क्षेत्र १ वास्तु २ हिरण्य ३ सुवर्ण ४ धन ५ धान्य ६ दासी ७ दास ८ कुप्य ९ भांड १० ऐसें दशभेदरूप बाह्यपरिग्रह है। ऐसें अंतरंग बहिरंग चौवीसप्रकारके परिग्रहरहित निर्ग्रंथ मुनिकैं ही गुरुपना निश्चय करना। संयमधारण करके भी अंतरंग बहिरंग परिग्रहकरि जिनका मन मलीन है तिनके गुरुपना नहीं बनै है। बहुरि जे निरंतर दिवस रात्रिविषै चालते हालते बैठते भोजन करते हू ज्ञानाभ्यासमें धर्मध्यानमें इच्छानिरोध नाम तपमें आसक्त हैं ते गुरु प्रशंसायोग्य मान्य हैं पूज्य हैं वंद्य हैं इन गुणानि बिना अन्यकूं सम्यग्दृष्टि वंदनादिक नाहीं करै है। अथवा "ज्ञानध्यानतपोरत्नः" ऐसा हू पाठ है याका अर्थ ऐसा है ज्ञान ध्यान तप ही हैं रत्न जाकै ऐसा गुरु होय है। ऐसा गुरुका स्वरूप कह्या। ऐसें देव गुरु आगमका श्रद्धान है लक्षण जाका ऐसा सम्यग्दर्शन ताका निःशंकित नाम गुण कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

इदमेवेदृशमेव तत्त्वं नान्यन्न चान्यथा। इत्यकम्पायसाम्भोवत्सन्मार्गेऽसंशया रुचिः ॥ ११ ॥

अर्थ—इदं कहिए यह आप्त आगम गुरुका लक्षण कह्या सो ही तत्त्वभूत सत्यार्थ स्वरूप है। ईदृशं कहिये इसप्रकार ही है अन्यप्रकार नाहीं। ऐसें अकंप जो खड्गको जल तिसकी ज्यों सन्मार्गमें संशयरहित जो रुचि कहिये श्रद्धान सो निःशंकित गुण है ॥ ११ ॥ भावार्थ—संसारमें जब अनेक प्रकारके गदा चक्र त्रिशूलादिक आयुध अर स्त्रीनिमें अति आसक्त क्रोधी मानी मायाचारी लोभी अपना कर्तव्य दिखावनेके इच्छकानिकूं देव कहैं हैं अर हिंसा तथा काम क्रोधादिकनिमें धर्मका प्ररूपक आगमकूं आगम

कहैं हैं, अनेक पाखंडी लोभी कामी अभिमानीनिकूं गुरु कहैं हैं सो कदाचित् नहीं है । ऐसा जाके दृढ श्रद्धान है मूढनिकी खोटी युक्तिकरि जाका चित्त चलायमान नहीं होय तथा खोटे देवतानिके विकार करनेकरि मंत्र तंत्रादिककरि परिणाम विकारी नहीं होय है। जैसैं खड्गका जल पवनकरि चलायमान नहीं होय तैसैं परिणाम सत्यार्थ देव गुरु धर्मके स्वरूपतैं मिथ्यादृष्टीनिके वचनरूप पवनकरि संशयकूं नहीं प्राप्त होय तिसके निःशंकितगुण होय है। इहां और हू विशेष कहिये हैं,–

जो आत्मतत्त्वका स्वरूप निर्दोष आगममैं कह्या ताकूं स्वानुभवकरि आपकूं आप जाण्या अर पर पुद्गलनिके संबंधकूं पररूप जाण्या सो सम्यग्दृष्टि सप्तभयकरिरहित होय निःशंकितगुणकूं प्राप्त होय है। सो सप्तभयके नाम कहैं हैं–इसलोकका भय १ परलोकका भय २ मरणका भय ३ वेदनाभय ४ अनरक्षक भय ५ अगुप्तिभय ६ अकस्मात्‌भय ७ । तिनिमैं अपना परिग्रह कुटुंबादिक तथा आजीविकादिक विगडि जानेका भय सो इसलोकका भय है सो समस्त संसारी जीवनिकै है । बहुरि जो परलोकमैं कौन गति क्षेत्रकूं प्राप्त हूंगा ऐसा परलोकका भय है । बहुरि मरण होनेका बडा भय जो मेरा नाश होयगा, नहीं जानिये कैसा दुःख होयगा मेरा अभाव होयगा ऐसा मरणभय है। बहुरि रोगादिक कष्ट आवनेका भय सो वेदना भय है। बहुरि अपना कोऊ रक्षक नहीं ऐसा जानि भय करना सो अनरक्षक भय जानना। बहुरि अपनी वस्तुका चोरनेका भय सो अगुप्ति भय है । बहुरि अकस्मात् अचानक दुःख उपजनेका भय सो अकस्मात् भय है । अपना अर परका स्वरूपकूं सम्यक् जाननेवाला सम्यग्दृष्टिकै ये सप्त भय नाहीं होय हैं। इस देहमैं पगके नखतैं लगाय मस्तकपर्यंत जो ज्ञान है चैतन्य है सो हमारा धन है इस ज्ञानभावतैं अन्य एक परमाणूं मात्र हू हमारा नाहीं है । देह अर देहके संबंधी जे स्त्री पुत्र धन धान्य राज्य विभवादिक हैं ते मोतैं भिन्न परद्रव्य हैं संयोगतैं उपजैं हैं हमारा इनका कहा संबंध ? संसारमैं ऐसे संबंध अनंतानंत होय वियोग भये हैं । जिनका संयोग भया है तिनका वियोग निश्चयतैं होयहीगा।

जो उपजा है सो विनसैगा। मैं ज्ञानस्वरूप आत्मा उपज्या नाहीं, विनसूंगा नाहीं, ऐसा जाके दृढ निश्चय है तिसकै देह छूटनेका अर दसप्रकार परिग्रहका वियोग होनेका भय नहीं तदि इसलोकके भयरहित सम्यग्दृष्टि निःशंक है। बहुरि सम्यग्दृष्टिकै परलोकका भय हू नहीं है। जिसमैं समस्त वस्तु अवलोकन करिये सो लोक है। जातैं हमारा लोक तो हमारा ज्ञानदर्शन है जिसमैं समस्त प्रतिबिंबित होय रहे हैं।

भावार्थ—जो समस्त वस्तु झलकैं हैं सो हमारा ज्ञानस्वभावमैं अवलोकन करूं हूं हमारे ज्ञानके बाह्य किसी वस्तुकूं मैं नहीं देखू हूं, नहीं जाणूं हूं। जो कदाचित् हमारा ज्ञान है सो निद्राकरि मुद्रित होय जाय तथा रोगादिक करि मूर्छाकरि मुद्रित होय जाय तो समस्त लोक विद्यमान है तो हू अभावरूपसा ही भया यातैं हमारा लोक तो हमारा ज्ञान ही है। हमारा ज्ञान बाह्य किसी वस्तुकूं देखने जाननेमैं आवै नहीं है अर हमारे ज्ञानतैं बाह्य जो लोक है जिसमैं नानाप्रकार नरकस्वर्ग सर्वज्ञके प्रत्यक्ष है सो सब मेरा स्वभावतैं अन्य है। पुण्यका उदय है सो देवादिक शुभगतिका देनेवाला है। अर पापका उदय है सो नरकादिक अशुभगतिका देनेवाला है यातैं पाप पुण्य दोऊ ही विनाशीक हैं अर स्वर्गनरकादिक पुण्य पापका फल हू विनाशीक है। अर मैं आत्मा ज्ञानदर्शनसुखवीर्यका अविनाशपणानै धारण करता अखंड हूं अविनाशी हूं मोक्षका नायक हूं मेरा लोक मेरे मांहीं ही है। तिसहीमैं समस्त वस्तूकूं अवलोकन करता बसूं हूं। ऐसैं परलोकका भयकूं नहीं प्राप्त होता सम्यग्दृष्टि निश्शंक है। बहुरि स्पर्शन रसना घ्राण नेत्र कर्ण ये पंच इंद्रिय अर मनवचनकायका बल अर आयु अर श्वासोश्वास ये कर्मनिकरि रचे बाह्यप्राण हैं पुद्गलमय हैं इन प्राणनिका नाशकूं जगतमैं मरण कहैं हैं अर आत्माका ज्ञान दर्शन सुख सत्तारूप भावप्राण हैं तिनका नाश कोऊ कालमैं हू नाहीं है। यातैं जो उपजैगा सो मरैगा सो पुद्गल परमाणु संचयकूं प्राप्त होय इंद्रियादिक प्राणस्वरूपकरि उपजैं हैं ये ही विनसैं हैं मेरा स्वभावरूप ज्ञान दर्शन सुख सत्ता कदाचित तीन कालमैं हू विनाशीक नाहीं है। इंद्रियादिक प्राण पर्यायकी लार उपजैं हैं विनसैं हैं

मैं तो चैतन्य अविनाशी हूं ऐसा निश्चयका धारक सम्यग्दृष्टिके मरणके भयकी शंका नाहीं है। बहुरि वेदना भयकूं जीत निःशंक है। वेदना नाम जाननेका है सो जाननेवाला मैं जीव हूं सो अपना एक अचलज्ञानका ही अनुभव करूं हूं सो तो वेदना अविनाशीक है। सो ज्ञानका अनुभव वेदना तो शरीरविषै नाहीं है अर वेदनीयकर्मजनित सुखदुःखरूप वेदना है सो मोहकी महिमातैं आपमैं ही दीखै है परन्तु मेरा रूप नाहीं है शरीरमैं है। मैं इसतैं भिन्न ज्ञाता हूं ऐसैं ज्ञानवेदनातैं देहकी वेदनाकूं भिन्न जानता सम्यग्दृष्टि निःशंक है। बहुरि अनरक्षकभय हू सम्यग्दृष्टिकै नाहीं होय है जातैं जगतविषै जो सत्तारूप वस्तु है ताका त्रिकालहूमैं नाश नाहीं है ऐसा हमारे दृढ निश्चय है तातैं मेरा ज्ञानस्वरूप आत्मा हू स्वयं किसीकी सहाय विना ही सत् है। यातैं याका कोऊ रक्षा करनेवाला हू नाहीं अर कोऊ याका विनाश करनेवाला भी नाहीं है। जाका कोऊ विनाश करनेवाला होय ताका रक्षक हू कहूं देख्या चाहिये तातैं सम्यग्दृष्टि अविनाशी स्वरूपकूं अनुभव करता अनरक्षाभयरहित निःशंक है। बहुरि अगुप्तिभय जो कपाटादिककी रक्षाबिना हमारा धन नष्ट होय जासी ऐसा चोरको भय सो हू नहीं है जो वस्तुका स्वरूप निजरूप अपने स्वरूपके मांहीं ही है अपना रूप आपतैं बाहर नाहीं है यातैं चैतन्यस्वरूप जो मैं आत्मा ताका चैतन्यरूप हमारे मांही ही है यामैं परका प्रवेश नाहीं। यो अनंत ज्ञान दर्शन हमारा रूप सो ही हमारा अप्रमाण अविनाशी धन है यामैं चोरका प्रवेश नाहीं चोर हर सकै नहीं तातैं सम्यग्दृष्टि अगुप्तिभयरहित निःशंक है। बहुरि सम्यग्दृष्टिकै अकस्मात्भय हू नाहीं है जातैं मेरा आत्मा तो सदा काल शुद्ध है दृष्टा है अचल है अनादि है अनंत है स्वभावतैं सिद्ध है अलक्ष है चैतन्य प्रकाशरूप सुखका स्थानक है इसमैं अचानक कछु हू होना नाहीं है ऐसैं दृढभावयुक्त सम्यग्दृष्टि निःशंक है। जाकै सम्यग्दर्शन है ताके परिणाममैं सप्त भय नहीं है सत्यार्थ अपना स्वरूप जानै विना सप्तभयरहित अपना आत्मा नहीं होय है। बहुरि सम्यग्दृष्टि अहिंसाकूं ही धर्म निश्चयरूप जानैं है जाकै ऐसी शंका नाहीं

उपजे है जो यज्ञ होमादिक जीव घातके आरम्भ इनमैं हू धर्म कछु तो होयगा ऐसी शंकाका अभाव सो निःशंकित अंग है। अब एक श्लोक करि दूजे निःकांक्षितगुणकूं कहैं हैं—

कर्मपरवशे सांते दुःखैरन्तरितोदये। पापबीजे सुखेऽनास्था श्रद्धानाकाङ्क्षणा स्मृता ॥ १२ ॥

अर्थ—जो इंद्रियजनित सुखमैं सुखपनाकी आस्थारहित श्रद्धानभाव सो अनाकांक्षणा नामा सम्यक्त्वका गुण भगवान कह्या है। कैसाक है इंद्रियजनित सुख, कर्मनिके परवश है स्वाधीन नहीं है पुण्यकर्मके उदयके आधीन है। पुण्यकर्मका उदयके सहाय बिना कोट्यां उपाय महान पुरुषार्थ करते हू सुखकी प्राप्ति नहीं होय है इष्टका लाभ नहीं होय है बहुत अनिष्टको प्राप्त होय है अर कदाचित् पुण्यके उदयकरि सुखकूं प्राप्त भी होय तो सो सुख अन्तकरि सहित है पराधीन कितने काल भोगैगा? जातैं इंद्रियजनितसुख है सो अपने इष्ट विषयके आधीन है अर इष्टको समागम है सो विनाशीक है। इंद्रधनुषवत् विजुरीका चमत्कारवत् क्षणभंगुर है तथा पराधीन है शरीरकी नीरोगताके आधीन तथा धनके आधीन स्त्राके आधीन पुत्रके आधीन आयुके आधीन जीविकाके आधीन तथा क्षेत्रके आधीन कालके आधीन इंद्रियनिके आधीन इंद्रियनिके विषयके आधीन इत्यादिक हजारां पराधीनताकरि सहित अर पतनके सम्मुख केतक काल भोगनेमें आवै है तातैं इंद्रियजनित सुख है सो अवश्य अंतकरि सहित ही है। अर अन्तकरि सहित है तो हू अखंड धारा प्रवाहरूप नहीं है बीचि बीचिमैं अनेक दुःखनिके उदय सहित है। कदे तो रोग आय जाय है, कदे स्त्री पुत्र मित्रको वियोग होना, कदे अपमानको होना, कदे धनकी हानि होना, कदे अनिष्टको संयोग होना, ऐसैं अन्तरित अनेक दुःखनिसहित है। बहुरि पापका बीज है इंद्रियजनित सुखनिमैं लीन होते अपना स्वरूप भूलै ही अर महाघोर आरम्भमैं तो प्रवर्तै ही अन्यायके विषयसेवन करै ही यातैं पापबंध होय ही तातैं इंद्रियजनित सुख नरक तिर्यंचादिक गतिमैं परिभ्रमण करावनेवाला पापबंधका बीज है। ऐसा पराधीन अंतसहित दुःखनिकरि व्याप्त जे इंद्रियजनित

सुख हैं ते सम्यग्दृष्टिकूं सुख नहीं दीखें हैं तदि सुखमें आस्थारूप श्रद्धान कैसें होय ? जब श्रद्धान ही नहीं तदि वांछा कैसें करै ? भाव ऐसा जानना जो सम्यग्दृष्टि है ताकै आत्माका अनुभव होय ही अर आत्माका अनुभव भया तब आत्माका स्वभाव जो अतींद्रिय अनंतज्ञान अर निराकुलतालक्षण अविनाशीक सुख तिसका अनुभव होय है। जातैं संसारीनिकै जो इंद्रियनिके आधीन सुख है सो तो सुखाभास है, सुख नाहीं है, वेदनाका इलाज है जाकै क्षुधाकी तीव्र वेदना उपजैगी सो भोजन करि सुख मानैगा। तृषा उपजैगी सो शीतलजल पीया चाहैगा। शीतकी वेदना व्यापैगी सो रुईका वस्त्र तथा रोमादिकका वस्त्र ओढ्या चाहैगा। गरमीकी वेदना उपजैगी सो शीतल पवन चाहैगा जातैं वेदना विना इलाज कौन चाहै ? नेत्ररोग विना खपऱ्यो नेत्रानिमें कौन क्षेपै ? कर्णरोग बिना बकराका मूत्र तथा तैलादिक कर्णमें कौन क्षेपै ? तथा शीतज्वरकी वेदना विना अग्निका ताप तथा सूर्यका आताप आदरतैं कौन सेवन करै ? तथा वातरोग विना दुर्गंध तैलादिकका मर्दनादिक कौन आदरै ? तातैं इन संसारीक पांचू इंद्रियनिके विषयनिकी तीव्र चाहरूप आताप उपजै है तदि विषयनिके भोगनेकी इच्छा उपजै है। तातैं विषय भोगना तो उपजी हुई वेदनाकूं थोरे काल शांति करै है फिर अधिक अधिक वेदना उपजावै है यातैं इंद्रियनिके विषयनिके भोगनेतैं उपज्या सुख है सो तो दुःख ही है। बाह्यशरीर इंद्रियादिककूं ही आत्मा जाननेवाला बहिरात्मा है सो विषयनिकी वेदनापूर्वक इलाजकूं सुख मानै है। सो मानना मोहकर्मजनित भ्रम है सुख तो वेदना ही नाहीं उपजै ऐसा निराकुलतालक्षणरूप है। विषयनिके आधीन सुख मानना मिथ्या श्रद्धान है, यातैं सम्यग्दृष्टिकूं अहमिंद्रलोकका हू सुख पराधीन आकुलतारूप विनाशीक केवल दुःखरूप ही दीखै है। तातैं सम्यग्दृष्टिकै इंद्रियजनित सुखमें वांछा कदाचित् नहीं होय है। इस जन्ममें तो धन सम्पदा विभवादिक नाहीं चाहै है अर परलोकमें इंद्रपना चक्रीपना इत्यादिक कदाचित् हू नाहीं चाहै है ए इंद्रियनिके विषय तो अल्पकाल हैं अर आगैं इनका फल

असंख्यातकाल नरकका दुःख तथा अनंतकाल असंख्यातकाल तिर्यंचादिक गतिनिमें तथा महादरिद्री महारोगी नीच कुलके धारक कुमानुषनिमें अनेक जन्म धारणकरि दुःख भोगवे है। इस जगतमें आशा अर शंका दोऊ मोहके उदयकरि जीवके निरंतर वर्ते हैं। सो आशा किये कुछ प्राप्ति होय नाहीं है। समस्त जीव अपने नित्य ही धनकी प्राप्ति नीरोगता कुटुम्बकी वृद्धि इंद्रियनिका बल अपनी उच्चता चाहैं हैं परंतु चाह किये कुछ होय नहीं है समस्त जीव चाहकरि निरंतर पापका बंध अर अंतरायका तीव्र बंध करैं हैं। अर केतक भोगाभिलाषी होय दान तप व्रत शील संयम धारण करैं हैं परंतु वांछा करि पुण्यका घात होय है। पुण्यबंध तो निर्वांछकके होय है। तथा शुभ अशुभ कर्मके दिये विषयनिमें संतोषी होय निराकुल होय विषयनिमें वांछा नहीं करै तिसके पुण्यका बंध होय है। बहुरि समस्त जीव नित उठ यह चाहैं हैं मेरे वियोग मरण हानि अपमान धनका नाश रोग वेदना मत होहु। निरंतर इनकी शंका करैं हैं बहुत भय करैं हैं तोहू वियोग होय ही मरण होय ही तथा धनहानि बलहानि अपमान रोग वेदना पूर्वकर्मबंध किये तिनके अनुकूल होय ही। तिनकूं टालनेकू इंद्र जिनेंद्र मंत्र तंत्रादिक कोऊ समर्थ नहीं क्योंकि मरण होय है सो आयुकर्मका नाशतैं होय है। अलाभादिक अंतरायकर्मके उदयतैं होय रोग वेदनादिक असाता कर्मके उदयतैं होय है। अर कर्मकूं हरनेमैं अर देनेमैं अर पलटनेमैं कोऊ देव दानव इंद्र जिनेंद्रादिक समर्थ हैं नहीं। अपने भावनिकरि बंध किये कर्मनितैं अपने किये संतोष क्षमा तपश्चरणादिक भावनिकरि छुडावनेकूं आप ही समर्थ है अन्य नहीं। ऐसें दृढनिश्चयका धारक निःशंक निर्वांछक सम्यग्दृष्टि ही होय है।

इहां कोऊ प्रश्न करै है,—जो सकल परिग्रहके त्यागी जे मुनीश्वर साधु तिनके तथा त्यागी गृहस्थनिके तो शंकारहितपना तथा वांछाका अभावपना होय सकै है परन्तु व्रतरहित गृहस्थोंनिकै निःशंकित निकांक्षित कैसें संभवै। अव्रतसम्यग्दृष्टि गृहस्थींके भोगनिकी इच्छा देखिये है। वणिज व्यवहारमैं सेवा

करनेमें लाभ चाहे ही है अपने कुटुम्बकी वृद्धि धनकी वृद्धि वांछे ही है तथा रोगकी शंका कुटुम्बके वियोगकी शंका जीविकाके बिगडि जानेकी धनके नाश होनेकी शंका निरंतर वर्ते है। तदि निःशंकपना निर्वांछकपना कैसें होय ? अर निःकांक्षितभाव विना सम्यक्त्व कैसें होय, तातें अव्रती गृहस्थीके सम्यक्त्व होना कैसें संभवे ? तिसका उत्तर ऐसा जानना–

जो सम्यक्त्व होय है सो मिथ्यात्व अर अनंतानुबंधी कषायके अभावतें होय है यातें अव्रतसम्यग्दृष्टि गृहस्थके मिथ्यात्वका अभाव भया अर अनंतानुबंधी कषायका हू अभाव भया तातें मिथ्यात्वके अभावतें तो सत्यार्थ आत्मतत्त्वका अर परतत्वका श्रद्धान प्रगट होय है। अर अनंतानुबंधी कषायके अभावतें विपरीत रागभावका अभाव भया तदि ज्ञान श्रद्धानकी विपरीतताका अभावतें इसलोक परलोक मरणभय आदिक सप्त भय अव्रतसम्यग्दृष्टिकै नहीं है याहीतें अपने आत्माकूं अविनाशी टंकोत्कीर्ण ज्ञान दर्शन स्वभाव श्रद्धान करै है। अर विपरीत जो पर वस्तुमैं वांछा ताका अभावतें समस्त इंद्रियनिके विषयनिमैं वांछा-रहित है। स्वर्गलोकमैं उपजे इंद्र अहमिंद्रनिके हू विषयभोगनिकूं विष समान दाह दुःखके उपजावने-वाले जानि कदाचित् स्वप्नमैं हू वांछा नहीं करै है। अपना आत्माधीन निराकुलतालक्षणरूप अविनाशी ज्ञानानंदहीकूं सुख मानै है अर अपने देहकूं धन सम्पदादिकनिकूं कर्मजनित पराधीन विनाशीक दुःख-रूप जानि ये हमारा है ऐसा विपरीत झूठा संकल्प हू नाहीं करै है । यातें अनंतानुबंधी कषायके उदय-जनित विपरीत झूठा भय शंका परवस्तुमैं वांछा अव्रतम्यग्दृष्टिके कदाचित् नाहीं है। परंतु अप्रत्याख्या-नावरण कषाय प्रत्याख्यानावरण कषाय संज्वलन कषाय तथा हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा स्त्रीवेद पुरुषवेद नपुंसक वेद इन इकवीस कषायके तीव्र उदयतें उपज्या रागभावका प्रभावकरि इंद्रिय-निका आतापका मारया त्यागतें परिणाम काँपे हैं । यद्यपि विषयनिकूं दुःखरूप जाने है तथापि वर्त-मानकालकी वेदना सहनेकूं समर्थ नाहीं। जैसें रोगी कवडी औषधिकूं कदाचित् पीवना भला नहीं जाने

है तथापि वेदनका मारया कडवी औषधिकूं बडा आदरतैं पीवै है परंतु अंतरंगमैं औषधि पीवना महा बुरा जानै जो ऐसा दिन कब आवैगा जिस दिन औषधिका नाम भी ग्रहण नहीं करूंगा तैसैं अव्रत सम्यग्दृष्टि हू भोगनिकूं भला कदाचित् नहीं जानै है परंतु तिन विना निर्वाह होता दीखै नाहीं परिणामनिकी दृढता दीखै नाहीं । कषायनिका प्रबल धका लागि रह्या है इंद्रियनिका आताप सह्या जाय नहीं यातैं वेदनाका मारया वांछै है। संहनन कचा, कोऊ सहाई दीखै नहीं, कषायनिका उदयकरि शक्ति नष्ट हो रही है, परवासि पड्या है तथा जैसैं बन्दीगृहमैं पड्या पुरुष बन्दीगृहमैं अति विरक्त है तथापि पराधीन पड्या महादुःखका देनेवाला बन्दीगृहकूं ही लीपै है धोवै है भूवारै है। तैसैं सम्यग्दृष्टि हू बंदीगृह समान देहकूं जानता क्षुधा तृषादिक वेदना सहनेकूं असमर्थ हुआ देहकूं अपना नाहीं जानै है। वर्तमानकालकी वेदनाका ही याकै भय है। अर वेदना मेटने मात्रही अव्रतसम्यग्दृष्टिकै वांछा है। कर्मके उदयके जालमैं फँसा है। निकल्या चाहै है। तथापि राग द्वेष अभिमान अप्रत्याख्यानका संबंधही ऐसा है सो त्याग व्रतादिक चाहै है तो हू नाहीं होने देहै। उदयकी दशा बडी बलवान है संसारी जीव अनादितैं कर्मके उदयके जालमैंतैं निकल नाहीं सकैं हैं। देहका संयोग बनि रह्या तितने देहका निर्वाहकेअर्थि जीविका भोजन वस्त्रकूं वांछैही है। तथा अप्रत्याख्यान कषायका उदयकरि लोकमैं अपनी नीची प्रवृत्तिका अभावरूप उच्चप्रवृत्ति चाहै ही है। धन संपदा जीविका बिगड जानेका भय करै ही है तिरस्कार होनेका भय करै ही है। इंद्रियनिका संताप सहनेकी असमर्थपनातैं विषयनिकूं वांछै है जातैं कषाय घटी नाहीं, राग घट्या नाहीं तातैं आगामी बहुत दुःख उपजतो दीखै ताकूं टाल्या चाहै ही है तथापि राज्यभोगसंपदानिकूं सुखकारी जानि वांछा नाहीं करै है। ऐसैं निःकांक्षित अंगका लक्षण कह्या। अब निर्विचिकित्सा नामा तीसरा अंगका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहै हैं,—

स्वभावतोऽशुचौ काये रत्नत्रयपवित्रिते। निर्जुगुप्सागुणप्रीतिर्मता निर्विचिकित्सिता ॥ १३ ॥

अर्थ—यो मनुष्य पर्यायका काय है सो स्वभावहीतैं अशुचि है यामैं कोऊ उत्तम मनुष्यके रत्नत्रय प्रकट होजाय तो अशुचि भी काय पवित्र है । यातैं व्रतीनिका देह रोगादिकतैं मलिन हू देख इसमैं जुगुप्सा जो ग्लानि ताका अभाव अर रत्नत्रयमैं प्रीति सो निर्विचिकित्सित नाम अंग है॥ १३ ॥

भावार्थ—यो देह तो सप्तधातुमय तथा मलमूत्रादिकमय है । स्वभावहीतैं अशुचि है । यो देह तो रत्नत्रयस्वरूप प्रगट होनेतैं पवित्र है यातैं रोगसहित तथा वृद्धता तथा तपश्चरणकरि क्षीणता मलीनता देख ग्लानि जाके नाहीं होय अर गुणनिमैं प्रीति होय ताकै निर्विचिकित्सा नाम अंग है । यहां ऐसा विशेष जानना । जो सम्यग्दृष्टि है सो वस्तुका सत्यार्थ स्वरूप जानै है । यातैं पुद्गलके नानास्वभाव जानि मलमूत्र रुधिर मांस राध सहित तथा दरिद्र रोगादिक सहित मनुष्य तिर्यंचनिका शरीरादिककी मलीनता दुर्गंधतादिक देखि करि तथा श्रवण करि ग्लानि नाहीं करै है। जो कर्मनिके उदय करि अनेक क्षुधा तृषा रोग दारिद्रादिककरि दुःखित होना तथा पराधीन बंदीगृहादिकमैं पडना नीच कुलादिकमैं उत्पन्न होना तथा नीचकर्मकरि मलीन भोजन करना महामलीन वस्त्र धारना खोटा रूप अंग उपांगादिकनिका पावना होय है । सम्यग्दृष्टि यामैं ग्लानि करि अपने मनकूं नाहीं बिगाडै है । तथा कषायांके आधीन होय निंद्य आचरण करते देख अपने परिणाम नाहीं बिगाडै है ताकै निर्विचिकित्सा अंग होय है । तथा मलीन क्षेत्र मलीन ग्राम तथा गृहादिकनिमैं मलीनता दरिद्रता देख ग्लानि नाहीं करै । तथा अंधकार वर्षा ग्रीष्म शीत वेदना ताकरि सहित कालकूं देख ग्लानि नाहीं करै बहुरि आपकै दरिद्रता तथा रोग आवता तथा वियोग होता तथा अशुभकर्मके उदयकूं आवता परिणामकूं मलीन नाहीं करै । जो मैं कर्मबंध किया ताके फलकूं मैं ही भोगूंगा अशुभ कर्मका फल तो ऐसा ही होय है ऐसैं जानि अपना परिणामकूं मलीन नाहीं करै । तिस पुरुषकै निर्विचिकित्सा अंग होय है । जिसकै निर्विचिकित्सा अंग है तिसहीकै दया है, तिसहीकै वैयावृत्य होय, तिसहीकै वात्सल्य स्थितिकरणादिक गुण प्रगट होय हैं।

ऐसें सम्यक्त्वका निर्विचिकित्सा नामा तीसरा अंग कह्या। अब अमूढदृष्टिनामा सम्यक्त्वका चौथा अंग कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

कापथे पथि दुःखानां कापथस्थेऽप्यसंमतिः। असंपृक्तिरनुत्कीर्तिरमूढा दृष्टिरुच्यते ॥ १४ ॥

अर्थ—नरक तिर्यंच कुमानुषादि गतिनिका घोर दुःखनिका मार्ग ऐसा जो मिथ्यामार्ग तिसविषैं अर कुमार्गी जो मिथ्यामार्गमें तिष्ठनेवाले पुरुषनिविषैं जाके मनकरि प्रशंसा नाहीं वचनकरि स्तवन नाहीं तथा कायकरि प्रशंसा जो अंगुलिनिके नखादिकनिका मिलाप नाहीं सराहनां नाहीं सो अमूढदृष्टि है ॥१४॥

इहां संसारी जीव मिथ्यात्वके प्रभावतैं रागद्वेषीदेवनिका पूजन प्रभावना देखि प्रशंसा करैं हैं देवीनिकै जीवनिकी विराधनाकी प्रशंसा करैं हैं तथा दशप्रकारके कुदानकूं भला जानैं हैं तथा यज्ञ होमादिककूं तथा खोटे मंत्र तंत्र मारण उच्चाटनादिक कर्मनिकी प्रशंसा करैं हैं तथा कुआ बावडी तालाब खुदावनेकी प्रशंसा करैं हैं तथा कंदमूल शाक पत्रादिक भक्षण करनेवालेनिकूं उच्च जानि प्रशंसा करैं हैं तथा पंचाग्निकरि तपनेवाले बाघंबर ओढनेवाले भस्म लगावनेवाले ऊर्ध्वबाहु रहनेवालेनिकूं महान उच्च जानैं हैं तथा गेरुकरि रंगे वस्त्र तथा रक्तवस्त्र तथा श्वेतवस्त्रादिकानिकूं धारण करते कुलिंगीनके मार्गनिकी प्रशंसा करैं हैं तथा खोटे तीर्थनिकी अर खोटे रागद्वेषी मोही वक्रपरिणामी शस्त्रधारी देवानिकूं पूज्य जानैं हैं तथा जोगिनी यक्षिणी क्षेत्रपालादिकानिकूं धनके दातार मानैं हैं तथा रोगादिक मेटनेवाले मानैं हैं यक्ष क्षेत्रपाल पद्मावती चक्रेश्वरी इत्यादिकनिकूं जिनशासनके रक्षक मानि पूजैं हैं तथा देवतानिके कवलाहार मानि तेल लापसी पूवा बडा अतर पुष्पमाला इत्यादिककरि देवतानिकूं राजी करना मानैं हैं तथा देवतानिकूं रिसवत देनाकरि विचारैं हैं जो मेरा अमुक कार्य सिद्ध होजाय तो तेरे छत्र चढाऊं तेरे मंदिर बनवाऊं तेरे रुपया चढाऊं तथा जीव मारि चढाऊं सवामणका चूरमा करि चढाऊं तथा बालकनिके जीवनेके अर्थि चोटी जडूला उतराऊं इत्यादिक अनेक बोली बोलना सो समस्त तीव्रमिथ्यात्वका

उदयका प्रभाव है। जहां जीवनिकी हिंसा तहां महा घोर पाप है जातैं देवतानिके निमित्त गुरुनिके निमित्त हिंसा संसार समुद्रमें डबोवनेवाली है। कोऊ देवादिकानिके भयतैं तथा लोभतैं तथा लज्जातैं हिंसाके आरंभमैं कदाचित् मत प्रवर्तो। दयावानकी तो देव रक्षा ही करै है जो किसीका अपराध नाहीं करै ताकी विराधना देव हू नाहीं कर सकैं हैं। रागी द्वेषी शस्त्रधारी देव हैं ते तो आप ही दुःखी हैं भयभीत हैं असमर्थ हैं। समर्थ होय अर भयरहित होय सो शस्त्र कैसें धारण करै। अर क्षुधावान होय सो ही भोजनादिक करि पूजा चाहै तातैं खोटे मार्ग जे संसारमैं पतनके कारण ऐसे मिथ्यादृष्टीनिके त्याग व्रत तप उपवास भक्ति दानादिक अर इनके धारण करनेवालेनिकी मनवचनकायकरि प्रशंसा नाहीं करै सो अमूढदृष्टिनामा सम्यक्त्वका अंग है। जातैं जाकै देव कुदेवका तथा धर्मकुधर्मका तथा गुरुकुगुरुका तथा पापपुण्यका तथा भक्ष्यअभक्ष्यका तथा त्याज्यअत्याज्यका आराध्यअनाराध्यका तथा कार्यअकार्यका तथा शास्त्रकुशास्त्रका दानकुदानका पात्रअपात्रका तथा देनेयोग्य नाहीं देनेयोग्यका तथा युक्तिकुयुक्तिका तथा कहनेयोग्य नाहीं कहनेयोग्यका ग्रहण करनेयोग्य नाहीं ग्रहण करनेयोग्यका अनेकांतरूप सर्वज्ञ वीतरागका परमागमतैं आछीतरह जानि निर्णय करि मूढतारहित होय पक्षपात छोड करकैं व्यवहार परमार्थमैं विरोधरहित होय तैसें श्रद्धान करना सो अमूढदृष्टिनामा चौथा अंग है। अब उपगूहन नामा सम्यक्त्वका पांचमा अंग प्ररूपण करनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

स्वयंशुद्धस्य मार्गस्य बालाशक्तजनाश्रयां। वाच्यतां यत्प्रमार्जन्ति तद्वदन्त्युपगूहनं ॥ १५ ॥

अर्थ—यो जिनेंद्रभगवानको उपदेश्यो हुवो रत्नत्रयरूप मार्ग है सो स्वयमेव शुद्ध है निर्दोष है इस रत्नत्रयमार्गके कोऊ अज्ञानीजनका आश्रय तथा कोऊ अशक्तजनकरि निंद्यता प्रगट भई होय ताहि जो दूर करैं शुद्ध निर्दोष करैं तानै उपगूहन कहिये हैं ॥ १५ ॥

इहां ऐसा जानना जो यो जिनेंद्र भगवानका उपदेश्या हुवा दशलक्षणरूपधर्म तथा रत्नत्रयधर्म

है सो अनादिनिधन है जगतके जीवनिका उपकार करनेवाला है। समस्तप्रकार निर्दोष है कोऊका हू यातैं अकल्याण नाहीं होय है अर कोऊकरि बाधा नाहीं दी जाय है ऐसा धर्मविषै कोऊ अज्ञानीके चूकनके निमित्ततैं तथा कोऊ शक्तिहीनके निमित्ततैं जो धर्मकी निन्दा होती होय ताकूं दूर करै आच्छादन करै सो उपगूहननामा अंग है। भावार्थ—अन्य मिथ्यादृष्टि लोक सुनैंगे तो धर्मकी निंदा करैंगे तथा एक अज्ञानीकी चूक सुनि समस्त धर्मात्मानिकूं दूषण लगावैंगे। कहैंगे—इस जिनधर्ममैं तो जेते ये ज्ञानी तपस्वी त्यागी व्रती हैं ते पाखण्डी हैं गैरमार्गी हैं। एकका दोष देखि समस्त धर्म अर समस्त धर्मात्मा दूषित होय जांयगे तातैं धर्मात्मापुरुष होय सो धर्मात्मामैं कोऊ दोष हू लगि जाय तो धर्मसूं प्रीतिकरि धर्ममैं परके निमित्ततैं आगया दोषकूं ढांकै है। जैसैं माताकी पुत्रमैं ऐसी प्रीति है जो पुत्र कदाचित् अन्याय खोट हू करै तो ताके खोटकूं आच्छादन करै ही तैसैं धर्मात्मापुरुषकी साधर्मीतैं तथा धर्मतैं ऐसी प्रीति है जो कर्मके प्रबलउदयकरि कोऊ साधर्मीके अज्ञानतातैं तथा अशक्ततातैं व्रतमैं संयममैं शीलमैं दोष आजाय बिगडि जाय तो आपका सामर्थ्यप्रमाण तो आच्छादन ही करै। इहां विशेष ऐसा और हू जानना जो सम्यग्दृष्टिका स्वभाव ही ऐसा है जो कोऊ ही जीवका दोष प्रगट नाहीं करै अर अपना उच्चकर्तव्य प्रकाश नाहीं करै अपनी प्रशंसा परकी निंदा नाहीं करै है। सम्यग्दृष्टिकै परजीवनिके दोष हू देखि ऐसा विचार उपजै है जो इस संसारमैं जीवनिके अनादि कालका कर्मनिके वशीभूतपना है यातैं जहां मोहनीयका उदय तथा ज्ञानावरण दर्शनावरणका उदय प्रवर्तै है तहां दोषमैं प्रवर्तनेका अर चूकनेका कहा आश्चर्य है। जीवनिकूं काम क्रोध लोभादिक निरंतर मारैं हैं भुलावैं हैं भ्रष्ट करै हैं। हम हू संसारमैं रागद्वेष मोहके वशीभूत होय कौन २ अनर्थ नाहीं किये हैं अब कोऊ जिनेंद्रका परमागमका शरणका प्रसादतैं किंचित् दोषकी अर गुणकी पाहिचाण भई है तो हू अनादिकालका कषायनिका संस्कारकरि अनेक दोषनिमैं प्राप्त होय रहा हूं तातैं अन्यजीवनिके कर्मके उदयकी पराधीनतातैं भये दोषनिकूं देखि

करुणा ही करना। संसारी जीव विषयनिके अर कषायनिके वशीभूत होय पराधीन हैं। ए कषाय अर विषय ज्ञानकूं बिगाडि नानाप्रकार नाच नचावैं हैं अर आपा भुलावैं हैं। तातैं अज्ञानी जनकृत दोषकूं देखि आप संक्लेश नाहीं करै है। क्षेत्रपालादिकके निमित्ततैं, जो भावी है, ताहि टालनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं है। ऐसैं उपगूहन नामा सम्यक्त्वका पंचम अंग कह्या। अब स्थितिकरणनामा सम्यक्त्वका छठा अंग कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,–

दर्शनाच्चरणाद्वापि चलतां धर्मवत्सलैः। प्रत्यवस्थापनं प्राज्ञैः स्थितीकरणमुच्यते ॥ १६ ॥

अर्थ–कोऊ पुरुष सम्यग्दर्शनकरि सहित श्रद्धानी था तथा चारित्रधारक व्रत संयमसहित था फिर कोऊ प्रबल कषायके उदयकरि तथा खोटीसंगतिकरि तथा रोगकी तीव्र वेदनाकरि तथा दरिद्रताकरि तथा मिथ्याउपदेशकरि तथा मिथ्यादृष्टीनिके मंत्र तंत्रादिकचमत्कार देखि सत्यार्थ श्रद्धान आचरणतैं चलायमान होता होय तिनिकूं चलते जानि जिनकी धर्ममैं वात्सल्यता है ऐसे धर्मात्मा प्रवीण पुरुष ताकूं उपदेशादिककरि फिर सत्यार्थ श्रद्धानमैं चारित्रमैं स्थापन करै सो स्थितिकरण कहिये॥ १६ ॥

इहां ऐसा जानना कोऊ धर्मात्मा अव्रतसम्यग्दृष्टि तथा व्रती पुरुषका परिणाम रोगकी वेदनाकरि तथा दारिद्रताकरि वियोगकरि धर्मतैं चिग जाय तो धर्ममैं प्रीतिके धारक प्रवीण पुरुष ताकूं धर्मतैं छूटता जानि ताकूं उपदेशकरि धर्ममैं स्थिर करै ताकै स्थितिकरण अंग है। भो धर्मके इच्छुक! धर्मानुरागी होय मनुष्यभव अर यामैं उत्तम कुल इंद्रियनिकी शक्ति धर्मका लाभ ये बहुत दुर्लभ मिल्या है अर छूटे पाछे इनका पावना अनंतकालमैं हू कठिन है तातैं कर्मका उदयकरि प्राप्त भया रोग वियोग दारिद्रादिक दुःख तिनकरि कायर होय आर्त्तपरिणामी होना योग्य नाहीं। दुःखित भये कर्मका अधिक बंध होयगा कायर होय भोगोगे तो कर्म नाहीं छाडेगा। अर धीरवीरपनाकरि भोगोगे तो हू नाहीं छाडेगा। तातैं दुर्गतिका कारण जो कायरता ताकूं धिक्कार होऊ। अब साहस धारण करो। मनुष्य जन्मका फल तो

धीरता तथा संतोषव्रतसहित धर्मका सेवन करि आत्माका उद्धार करना है। अर जो मनुष्यका देह है सो रोगनिका घर है इसमें रोग उपजनेका कहा आश्चर्य है। यामें तो धर्म ही शरण है । अर रोग तो उपजैहीगा अर संयोग है सो वियोगकरि सहित ही है। कौन कौन पुरुषनिपै दुःख नाहीं आये ? तातैं अपना साहस धारण करि एक धर्मका ही अवलम्बन करो । बहुरि जे जे वस्तु उपजे हैं ते ते समस्त विनाशसहित हैं जो देहहीका वियोग होयगा तो अन्य अपने कर्मके आधीन उपजैं मरैं तिनिका हर्ष विषाद करना वृथा, बन्धका कारण है।

बहुरि इस दुःषमकालके मनुष्य हैं ते अल्पआयु अल्पबुद्धि लिये ही उपजैं हैं इस कालमैं कषायकी आधीनता अर विषयनिकी गृद्धिता बुद्धिकी मंदता रोगकी अधिकता ईर्षाकी बहुलयता दरिद्रतालेये ही बहुधा उपजे हैं तातैं सम्यग्ज्ञानकूं प्राप्त होय कर्मके जीतनेकू उद्यम करना योग्य है कायर मति होहु। ऐसैं उपदेश देय परिणामकूं स्थिर करै। रोगी होय तो औषधि भोजन पथ्यादिक करि उपचार करै। द्वादशभावनाका स्मरण करावे शरीरकी टहल मलमूत्रादिक विकृतिको दूर करनेकरि जैसैं तैसैं परिणामनिकूं धर्मविषै दृढ करना सो स्थितिकरण है। तथा कोऊके रोगकी अधिकताकरि ज्ञान चलायमान हो जाय, व्रत भंग करने लागि जाय, अकालमैं भोजन पानादिक जाचवा लागि जाय, त्याग करी वस्तुकूं चाहिवा लागि जाय, ताकूं दयालु होय ऐसा मधुर उपदेशादिक करै जाकरि फिर सचेत होजाय वाकी अवज्ञा नहीं करै। कर्म बलवान है वातपित्तादिककरि ज्ञानका बिगडनेका कहा प्रमाण है। सो यहां बहुत उपदेश लिखनेकरि ग्रंथ बधि जाय तातैं थोरा ही करि बहुत समझना। तथा दारिद्रादिकरि पीडित ताकूं अपनी शक्तिप्रमाण उपदेश तथा आहार पान वस्त्र जीविका रहनेका मकान तथा पात्र तथा जैसैं स्थंभन होय जाय तैसैं दान सन्मान उपाय करि स्थिर करना सो स्थितिकरण नामा सम्यक्त्वका छठा अंग है। जो अपना आत्मा हू नीतिमार्ग छोडता होय तथा काम मद लोभके वश होय अन्यायका विषय अन्याय

धनकी चाहरूप हो जाय तथा अयोग्य वचनमैं प्रवृत्ति करने लग जाय, तथा अभक्ष्यभक्षणमैं प्रवृत्ति होय जाय, अभिमानके वशी होय जाय, संतोषतैं चिगि जाय, अनेक परिग्रहोंमैं लालसा बधि जाय, कुटुंबमैं अतिराग बधि जाय, तथा रोगमैं कायर होय जाय, आर्तध्यानी हो जाय वियोगमैं शोकसहित होय जाय, तथा दरिद्रतातैं दीन होय जाय, उत्साहरहित आकुलतारूप हो जाय, ताकूं हू अध्यात्मशास्त्रका स्वाध्याय कराय भावनाको शरण ग्रहण कराय अपना आत्माका स्वभाव अजर अमर अविनाशी एकाकी अन्य परद्रव्यका स्वभावरहित चिंतवनकराय धर्मतैं नहीं छूटने देना। तथा असातादिक कर्म अंतराय-कर्म तथा अन्य हू कर्मका उदयकूं आपतैं भिन्न मानि कर्मका उदयतैं अपना स्वभावकूं नहीं चलने देना सो स्थितिकरण नामा छठा अंग है। अब वात्सल्यनामा सम्यक्त्वका सप्तम अंगके कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

स्वयूथ्यान् प्रति सद्भावसनाथापेतकैतवा। प्रतिपत्तिर्यथायोग्यं वात्सल्यमभिलप्यते ॥ १७ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्ररूप धर्मके धारकनिका जो यूथ (समूह) सो धर्मात्माके अपना यूथ है। रत्नत्रयके धारकनिका यूथमैं भये ऐसे मुनि आर्यिका श्रावक श्राविका तथा अव्रत सम्यग्दृष्टि तिनतैं सत्यार्थभावसहित अर कपटरहित यथायोग्य प्रतिपत्ति कहिये उठि खडा होना सन्मुख जाना वंदना करना गुणनिका स्तवन करना अंजुलि करना आज्ञा धारण करना पूजा प्रशंसा करना उच्चस्थान बैठाय आप नीचे बैठना तथा जैसैं कोऊ दरिद्रीकै महा निधानका लाभतैं हर्ष होय तैसैं धारना महान् प्रीतिका उपजाना अर यथाअवसरमैं आहार पान वस्तिका उपकरणादिक करि वैयावृत्य करि आनन्द मानना सो वात्सल्यनामा अंग कहिये है ॥ १७ ॥

बहुरि यहां और विशेष जानना। जाकै अहिंसा धर्ममैं प्रीति होय जे हिंसारहित कार्य होंय तिनकूं प्रीतिसहित करै अर हिंसाके कारणनिकूं दूरहीतैं टाल्या चाहै तथा सत्यवचनमैं सत्यवचनके धारकनिमैं अर सत्यार्थधर्मकी प्ररूपणामैं प्रीति होय तथा परका धन परकी स्त्रीनिके त्यागमैं राग होय परधन पर-

स्रीका त्यागीनिमैं जाके प्रीति होय, तिसहीके वात्सल्यअंग होय है । तथा दशलक्षणधर्ममैं अर धर्मके धारक साधर्मीनिमैं जाके अनुराग होय ताके वात्सल्यअंग होय है । बहुरि जाके धर्ममैं अनुरागकरि त्यागी संजमीनिमैं महान् आदरपूर्वक प्रिय वचनकरि प्रवर्तन होय ताके वात्सल्य अंग होय है । यद्यपि सम्यग्दृष्टिके अंतरंग तो अपना शुद्ध ज्ञानदर्शनमैं अनुराग है अर बाह्य उत्तम क्षमादिधर्मके धारकानिमैं तथा धर्मके आयतनमैं अनुराग है तथापि अन्य मिथ्याधर्मीनितैं द्वेष नाहीं करै है । जातैं प्रवचनसार सिद्धांतमैं ऐसैं कह्या है जो राग द्वेष मोह ये बंधके कारण हैं तिनिमैं मोह जो मिथ्यात्व अर द्वेष ये दोऊ तो अशुभभाव ही हैं एकांतकरके संसारपरिभ्रमणका कारण पापकर्मका ही बंध करै। अर राग भाव है सो शुभ अर अशुभ दोय प्रकार है तिनिमैं अरहंतादिक पंचपरमेष्ठिनमैं तथा दशलक्षणधर्ममैं तथा स्याद्वादरूप जिनेंद्रका आगममैं तथा वीतरागका प्रतिबिंब, वीतरागप्रतिबिंबके आयतनमैं अनुरागरूप शुभ राग है सो स्वर्गादिकका साधक पुण्यबंधका करनेवाला तथा परंपरायकरि मोक्षका कारण है। अर विषयनिमैं अनुराग तथा कषायनिमैं अनुराग तथा मिथ्याधर्ममैं मिथ्यादृष्टिनिमैं परिग्रहादि पंच पापनिमैं अनुराग है सो अर मोहभाव अर द्वेषभाव है ते नरकनिगोदादिकनिमैं अनंतकाल परिभ्रमणके कारण हैं। यातैं सम्यग्दृष्टि है सो अन्य अज्ञानी मिथ्यादृष्टि पातकीनिमैं हू द्वेषभाव नाहीं करै है। जातैं समस्त जीव मिथ्यात्वकर्मके तथा ज्ञानावरणादिकर्मके वशीभूत होय आपा भूल रहे हैं अज्ञान हैं इनमें वैर करि कहा साध्य है? इनकूं तो इनकी विपरीतबुद्धि ही मारि राखे है यातैं सम्यग्दृष्टि दयाभाव ही करै है रागद्वेष रहित मध्यस्थ रहै है । जातैं सम्यग्दृष्टि है सो तो वस्तुका स्वभावनै सत्यार्थ जानि एक-इंद्रियादिक जीवनिमैं करुणाभावरूप प्रीति ही करै है तथा समस्त मनुष्यनिमैं वैररहित होय किसी जीवकी विराधना अपमान हानि नाहीं वांछै है तथा मिथ्यादृष्टिनिकरि किये जे देवनिके मंदिर स्थान मठ तिनतैं वैर करि बिगाडना नाहीं चाहै है तथा सरागदेवनिकी मूर्ति तथा देवीनिकी क्रूरमूर्ति तथा योगिनी यक्ष भैरवा-

दिक व्यंतरनिकी स्थापनास्थान इनसूं कदाचित् वैर नाहीं करै जातैं ये देवनिकी मूर्ति अर इनके स्थान तो अनेक जीवनिके अभिप्रायके आधीन पूजनेकूं आराधनेकूं बनाये हैं। अन्यका अभिप्रायकूं अन्य-प्रकार करनेकूं कौन समर्थ है ? समस्त ही मनुष्य अपना अपना धर्म मानि देवतानिका स्थापन करै हैं। जाकूं जैसा सम्यक् तथा मिथ्या उपदेश मिल्या तैसें प्रवर्त्तन करै हैं। तातैं वस्तुका यथावत् स्वरूपकूं जानता समस्तमैं साम्यभाव करता सम्यग्दृष्टि किसी मनुष्य हीकूं रैकागे तूकारो नाहीं देहै तो अन्यके धर्म अन्यके देवनिकूं अन्यके मंदिरनिकूं गाली अवज्ञाके वचन कैसें कहै, नाहीं कहै। समस्त जीवनिमैं मैत्रीभाव धारता सम्यग्दृष्टि है सो अचेतन जे स्थान पाषाण गृहादिक अन्यके विश्रामस्थानतैं स्वप्नामें हू वैर नाहीं करै है। अर अन्य जे दुष्ट बलवान होयकरि अपना धन धरती आजीविका तथा कुटुंबका घात अर आपका मरण करै तिसमें हू वैर नाहीं करै। ऐसा विचार करै जो हमारा पूर्वोपार्जित कर्मके उदय करि मोतैं वैर विचारि बलवान शत्रु उपज्या है। सो अब मैं जेता सामर्थ्य है तिस प्रमाण साम जो प्रियवचन, दाम जो धन देना तथा अपना बल प्रमाण दंड देना इनमैं परस्पर भेद करना इत्यादिक उपायनितैं रोकि अपनी रक्षा करूं अर जो नाहीं रुके तो आप विचारै जो मेरे पूर्व उपजाये कर्मनिका उदय आया सो याकूं बलवान उपजाया। मोकूं निर्बल उपजाय मोकूं दंड दिया है सो मैं कौनसूं वैर करूं ? मेरा वैरी कर्म निर्जर जाय तैसैं साम्यभाव धारणकरि कर्मका विजय करूं। अन्यसूं वैर करि वृथा कर्म-बंध नाहीं करूं। सम्यग्दृष्टिके वात्सल्य समस्तमैं है कोऊमे वैर नाहीं करै है। बहुरि कोऊ दुष्ट जीव धर्मसूं वैर करि मंदिर प्रतिमाका विघ्न कर्‍या चाहै तो ताकूं आपका सामर्थ्यसूं रोक्या जाय तो रोकै अर प्रबल होय तो विचार करै जो कालनिमित्तसूं धर्मका घातक प्रगट होय अपना वैर साधै है सो प्रबल कैसें रुकै ? हमारे उत्तम क्षमादिक तथा सम्यग्ज्ञान श्रद्धानादिक कोऊ घातनेकूं समर्थ नाहीं है अर मंदिरा-दिक दुष्ट बिगाडैं ही हैं अर धर्मात्मा फिर करावैं ही हैं। कालके निमित्तसूं अनेक दुष्ट उपजैं हैं उनके

रोकनेकों कौन समर्थ है। भावी बलवान है। आछी होनी होय तो दुष्ट मिथ्यादृष्टि प्रबल बलके धारक नाहीं उपजते तातैं वीतरागता ही हमारे परम शरण होहू। ऐसैं वात्सल्यनामा सम्यक्त्वका सप्तम अंग वर्णन किया। अब प्रभावना नामा सम्यक्त्वका अष्टम अङ्ग कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

अज्ञानतिमिरव्याप्तिमपाकृत्य यथायथं। जिनशासनमाहात्म्यप्रकाशः स्यात्प्रभावना ॥ १८ ॥

अर्थ—संसारी जीवनिके हृदयविषै अज्ञानरूप अंधकारकी व्याप्ति होय रही है। ताहि सत्यार्थ स्वरूपके प्रकाशतैं दूरिकरिकैं जिनेंद्रके शासनका माहात्म्यका प्रकाश करना सो प्रभावना नामा सम्यक्त्वका आठवां अंग है ॥ १८ ॥

इहां ऐसा विशेष है अनादिकालका संसारी जीव सर्वज्ञ वीतरागका प्रकाश्या धर्मकूं नाहीं जानै है याहीतैं ऐसा हू ज्ञान नाहीं है जो मैं कौन हूं, मेरा स्वरूप कैसा है, मैं यहां जन्म नाहीं लिया तादि कैसा था, कौन था, इहां मोकूं कौन उपजाया, अब रात्रि दिन व्यतीत होय आयु विनसै है मेरे कहा करनेयोग्य है, मेरा हित कहा है, आराधने योग्य कौन है, जीवनिके नानाप्रकार, नानाजीवनिके सुख दुःख कैसैं है तथा देवका गुरुका धर्मका स्वरूप कैसा है तथा मरणका जीवनका कहा स्वरूप है तथा भक्ष्य अभक्ष्यका स्वरूप कहा है, इस पर्यायमें मेरे कौन कार्य करनेयोग्य है, मेरा कौन है, मैं कौन हूं इत्यादि विचाररहित मोहकर्मकृत अंधकारकरि आच्छादित होय रहे हैं। तिनिका अज्ञानरूप अंधकारकूं स्याद्वादरूप परमागमका प्रकाशतैं दूरकरि स्वरूप पररूपका प्रकाश करना सो प्रभावना नामा अंग है। बहुरि सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र करि आतमाका प्रभाव प्रगट करना सो प्रभावना है तथा दानकरि तपकरि शील संयम निर्लोभता विनय प्रियवचन जिनेंद्रपूजन गुणप्रकाशनकरि जिनधर्मका प्रभाव प्रगट करना सो प्रभावना है। जिनका उत्तम परिणामकरि उत्तमदानकूं तथा घोर तप निर्वांछकताकूं देखिकरि मिथ्यादृष्टि हू प्रशंसा करे। अहो जैनीनके वात्सल्यतासहित बडा दान है यह निर्वांछक ऐसा तप जैनी-

नतैं ही बनै अहो जैनीनका बडा व्रत है जो प्राण जाते हू व्रतभंग जिनके नाहीं । अहो जैनीनके बडा आहिंसाव्रत जो प्राण जाते हू अपने संकल्पतैं जीवहिंसा नाहीं करैं हैं तथा जिनके असत्यका त्याग तथा चोरीका त्याग परस्त्रीका त्याग परिग्रहका परिमाण करि समस्त अनीतितैं पराङ्मुख है अर भक्ष्य नाहीं खावना प्रमाणसहित दिवसमैं देखि सोधि भोजन करना इन जिनधर्मीनिका बडा धर्म है जिनके महा विनयवंतपना है अर प्रियहित मधुरवचन ही करि समस्तकै आनंद उपजावै हैं । तथा अतिशयकारी जिनकै बडी क्षमा है । अपना इष्ट देवमैं अतिशयकारी भक्ति है । आगमकी आज्ञाका बडा दृढ श्रद्धानी जिनकै बडी प्रबल विद्या, जिनकै महान् उज्वल आचरण है । वैरभावरहित हुआ समस्त जीवनिमैं जिनकै मैत्रीभाव है । ऐसा आश्चर्यरूप धर्म इनतैं ही बनै ऐसी प्रशंसा जिनधर्मकी जिनके निमित्तैं मिथ्याधर्मीनिमैं हू प्रगट होय तिनकरि प्रभावना होय है । जो अनीतिका धन कदाचित् नाहीं वांछै है अर अन्याय विषय भोग स्वप्नामैं हू अंगीकार नाहीं करैं है जो हमारा निमित्तसूं जिनधर्मकी निन्दा होय जाय तो हमारा जन्म दोऊलोकका नष्ट करनेवाला भया तातैं सम्यग्दृष्टि अपना तथा कुलका तथा धर्मका तथा साधर्मीनिका तथा दानशीलतपव्रतका अपवाद नाहीं होय तैसैं प्रवर्तन करै है । धर्मके दूषण लगवा बडा भय करै है । धर्मकी प्रशंसा उच्चता उज्वलता ही प्रगट होय तैसैं प्रवर्तन करै, तिसकै प्रभावना नामा अष्टम अंग होय है । ऐसैं सम्यक्त्वके अष्टअंगनिका संक्षेपतैं वर्णन किया। इन अष्ट अंगनिका समुदाय सो ही सम्यग्दर्शन है । अंगनितैं अंगी भिन्न नाहीं अंगनिका समूहकी एकता सो ही अंगी है । तैसैं ही निःशंकितादिक गुणानिके समुदाय सो ही सम्यग्दर्शन होय है । अर इन अंगनिका प्रतिपक्षी जे शंका कांक्षा ग्लानि मूढता अनुपगूहन अस्थितिकरण अवात्सल्य अप्रभावना इत्यादिककरि धर्मकूं दूषित नाहीं करै है । अब निःशंकितादिक अंगनिका पालनमैं जे आगममैं प्रसिद्ध भये तिनका नाम दोय श्लोकनिमैं कहैं है,—

तावदञ्जनचौरोऽङ्गे ततोऽनंतमतिः स्मृता । उद्दायनस्तृतीयेऽपि तुरीये रेवती मता ॥ १९ ॥

ततो जिनेंद्रभक्तोऽन्यो वारिषेणस्ततः परः । विष्णुश्च वज्रनामा च शेषयोर्लक्षतां गतौ ॥ २० ॥

अर्थ,—तावत् अंगे कहिये प्रथम अंग जो निःशंकित अंग तिसविषै अंजनचोर आगम विषै कह्या है द्वितीय अंगविषै अनंतमतीनामा सेठकी पुत्री कही । तृतीय अंगविषै उद्दायननामा राजा अर चतुर्थ-अंगविषै रेवती नामा राणी कही। पंचम अंगविषैं जिनेंद्रभक्त नामा श्रेष्ठी हुआ । छठा अंगविषै वारिषेण नामा राजपुत्र हुआ । बहुरि शेष जे सप्तम अर अष्टम अंगविषै विष्णुकुमार मुनि अर वज्रकुमार मुनि दृष्टान्तपनानैं प्राप्त होते भये । ऐसैं सम्यक्त्वके अष्टअंगनिमैं प्रसिद्ध भये तिनकी कथा प्रथमानुयोगके आगममैं प्रसिद्ध है, तहांतैं जाननी । अब अंगहीन सम्यक्त्वके संसारपरिपाटीके छेदनेमैं असमर्थता दिखावनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

नांगहीनमलं छेत्तुं दर्शनं जन्मसन्तर्तिं । न हि मन्त्रोऽक्षरन्यूनो निहन्ति विषवेदनां ॥ २१ ॥

अर्थ,—अंगकरिहीन जो सम्यग्दर्शन सो संसारकी परिपाटीके छेदनेकूं समर्थ नाहीं होय है । जैसैं अक्षर करि हीन जो मंत्र सो विषकी वेदनाकूं नाहीं हनै है ॥ २१ ॥ जातैं जाके परिणाममैं निःशंकितादिक अंग प्रगट होय हैं सो ही सम्यग्दृष्टि संसारपरिभ्रमणकूं हनै है अर जाके एक भी अंग नाहीं भया होय ताके संसारका अभाव नाहीं होय है । अक्षरकरि हीन मंत्र जैसैं सर्पादिकनिका विष दूर नाहीं करै। अब तीन प्रकार मूढता है ते सम्यक्त्वके घातक हैं यातैं तीन प्रकार मूढताका स्वरूप जानि सम्यग्दर्शनको शुद्ध करना योग्य है सो तिनमैंतैं लोकमूढताके स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

आपगासागरस्नानमुच्चयः सिकताश्मनां । गिरिपातोऽग्निपातश्च लोकमूढं निगद्यते ॥ २२ ॥

अर्थ—जो लौकिक जे मिथ्याधर्मी जन तिनकी रीति देख जे नदीस्नानमैं धर्म मानैं हैं समुद्रके स्नानमैं धर्म मानैं हैं वालू रेतका पुंज करै हैं तथा पाषाणका ढेर करनेमैं धर्म मानै हैं धर्म मानि पर्वततैं

पडना अग्निविषै पडना ताहि लोकमूढता कहिये है सो लोकमूढताकरिरहित सम्यग्दर्शन होय है ॥२२॥

इहां मिथ्यात्वके उदयतैं देशकालके भेदतैं लौकिक अज्ञानी परमार्थरहित जन अनेकप्रकारकी प्रवृत्तिकरि अपने धर्म होना पवित्रता होना लाभ होना वियोग नाहीं होना दीर्घ जीवना मानै हैं सो लोकमूढताकूं प्रगट अज्ञानता जानि याका त्याग करि सम्यक्त्वभावकी विशुद्धता करो । इहां केते एकांती जन हैं ते स्नान करि आपकूं पवित्र मानै हैं सो ज्ञानीनिकूं आगमज्ञानपूर्वक विचार करना जो आत्मा है सो तो अमूर्तीक है तिसपर्यंत तो स्नान पहुँचै नाहीं अर काय है सो महा अपवित्र है जाका संगमतैं पवित्र हू चंदन गंगाजल पुष्पादिक स्पर्शने योग्य नाहीं रहै अर जो हाड मांस रुधिर चाम इत्यादिक अशुचि सामग्रीकरि रच्या अर जो दुर्गंध विष्ठा मूत्रादिक अशुचि द्रव्यनिकरि भर्‍या अर जाके मुखके द्वार होय तो महा अशुचि कफ अर लाल अर दंतमल जिह्वामल निरंतर बहै है अर नेत्रनिमैं सचिक्कण दुर्गंध गीड स्रवै है अर कर्णनितैं कर्णमल स्रवै है अर नासिकातैं निरंतर दुर्गंध घृणां योग्य सिणक बहै है अर अधोद्वार मल मूत्र दुर्गंध आंव कृमिनिकूं निरंतर बहै है अर समस्त शरीरके रोमतैं महा दुर्गंध मलीन पसेव स्रवै है ऐसैं जाके नवद्वार निरंतर मल स्रवै है ऐसा शरीर जलका स्नानतैं कैसैं शुद्ध मानिये ? जैसैं मलकरि बनाया घडा अर मलकरि भर्‍या अर समस्त तरफ मलहीकूं बहै सो जल करिकै धोवनेतैं कैसैं शुद्ध होय ? इस लोकमैं जो कोऊ वस्तु तथा भूम्यादिक क्षेत्र अशुचि अपवित्र कहिये हैं ते समस्त इस शरीरके संगमतैं ही अपवित्र होय हैं । कोऊ चाम पडनेतैं कोऊ केश पडनेतैं कोऊ उच्छिष्ट (ओठि) पडनेतैं तथा रुधिर मांस हाड वसा (चरबी) राध मल मूत्र थूक लाल कफ नासिकामल इनका स्पर्श होनेतैं ही तथा स्नानके जलके छांटेनिके कुरलेनिके स्पर्शतैं ही अपवित्र (अशुचि) देखिये हैं सुनिये हैं यातैं अछीतरह विचारो जो देहका संग बिना कोऊ अशुचि है ही नाहीं । ऐसा देह जलके स्नानतैं कैसैं शुद्ध होय अर जो जलके स्नानादिकतैं शुद्ध होय गया तो फिर कोऊके स्नानका छांटा लागे

जायगा तो अपवित्र हुआ ही मानैगा। तथा गंगा पुष्करादिकमें हजारबार स्नान कुरला करि फिर कोऊ वस्तु ऊपर कुरला करैगा तो महा अपवित्रता मानैगा। जल करि तो देहके ऊपर मैल लाग्या होय तथा वस्त्रादिक मालिन होय तो धोवनेतैं उज्वल होय है अर देहकूं उज्वल पवित्र नाहीं करै है। जैसैं—कोयलाकूं ज्यों धोवो त्यों कालिमा ही निकलै है। तैसैं ज्यों ज्यों देहकूं धोइये त्यों त्यों महा मलिनता प्रगट होय है। स्नानतैं पवित्र होना मानना सो तीव्रमिथ्यात्व है। अर और हू विचारो जगतमैं जल बराबर कोऊ अपवित्र ही नाहीं है। जामैं निरंतर मींडका, काछवा, सर्प, ऊंदरा, विसमरा, मांखी मांछरादिक अनेक जीव नित्य मरै हैं अर जामैं चर्म हाड समस्त गालि जाय हैं अर अनेक त्रसनिका घात जामैं होय है ऐसा महा निंद्य अपवित्र जल तिसके स्पर्श होनेतैं कैसैं पवित्र होय? अर गंगादिक नदीनमें कोट्यां मनुष्यनिके मल मूत्र रुधिर मांस कर्दम तथा मनुष्यनिके तिर्यंचनिके मृतक कलेवर घुल रहैं तिस गंगाका जल कैसैं पवित्र करै? जलका सूतक कदैं ही मिटै नाहीं यातैं बाहिर लाग्या मैल दूर हो जाय यातैं मनकी ग्लानि मिट जाय अर यातैं पवित्र होना तथा स्नानमैं धर्म मानना सो तो मिथ्यादर्शन है जो गंगाका जलतैं ही पवित्र हो जाय वा स्नानकरि धर्म होजाय वा स्नानकरि मुक्ति होय जाय तो कीर धीवरानिके पवित्रता ठहरै वा मुक्ति होय। अन्य दान पूजादिक समस्त निष्फल हुवा। मिथ्यात्वका प्रभावतैं सब विपरीत श्रद्धानी होय रहे हैं। जे अष्ट प्रकार लौकिक शुचि कही हैं ते व्यवहार आचार कुलाचारके उज्वल करनेकूं तो समर्थ हैं परंतु देहकूं पवित्र नाहीं करै हैं। ए तो मनमैं ग्लानि आप मानि राखी है सो संकल्पतैं दूरि करलै है जो मैं स्नान कर लिया है। सो ही श्रीराजवार्तिकजीमैं अशुचिभावनामैं कह्या है।

शुचिपना है सो दोयप्रकार है—एक लौकिक एक लोकोत्तर, ताहि अलौकिक हू कहिये है। तहां जिसके कर्ममल कलंक दूर भया ऐसा आत्माका अपने स्वभावविषै स्थित रहना सो लोकोत्तरशुचिपना है अर तिसका साधन सम्यग्दर्शनादिक हैं, अर सम्यग्दर्शनादिकका धारक साधु है अर तिनिका आधार

निर्वाणभूम्यादिक हू सम्यग्दर्शनादिकका उपाय है तातैं शुचिनामके योग्य है। अर लौकिक शौचपना है सो अष्टप्रकार है—कालशौच १ अग्निशौच २ भस्मशौच ३ मृत्तिकाशौच ४ गोमयशौच ५ जलशौच ६ पवनशौच ७ ज्ञानशौच ८ ए आठ शौच शरीरके पवित्र करनेकूं समर्थ नाहीं हैं लौकिकजनोंके व्यवहार छोडे बडा अनर्थ होय जाय, हीन आचारकी ग्लानि जाती रहै तो समस्त एक होय जांय तदि परमार्थ हू नष्ट होय जाय यातैं अनादिकालतैं बाह्यशुचिताकी मानता देखि मनकी ग्लानि मेट लेहैं। जातैं केती वस्तु तो जगतमैं कालव्यतीत भये शुद्ध मानिये हैं जैसैं रजस्वला स्त्री तीन रात्रि गये शुद्ध मानिये हैं परंतु शरीर तो कोऊ काल हू शुद्ध नाहीं होय है। बहुरि केतेक उच्छिष्ट धातुके पात्र भस्मकरि मांजनेतैं शुद्ध मानिये हैं परंतु शरीर तो भस्मकरि शुद्ध नाहीं होय है। बहुरि केतेक शूद्रादिक स्पर्श किये हुये धातुमय पात्र अग्निके संस्कारकरि शुद्ध मानिये है परंतु शरीर तो अग्निका संसर्ग करे हू शुद्ध नाहीं होय है। बहुरि मलमूत्रादिकका स्पर्श मृत्तिकातैं धोय शुद्ध मानिये हैं परंतु शरीर तो मृत्तिकातैं शुद्ध नाहीं होय है। बहुरि गोमयकरि भूम्यादिककूं लीप शुद्ध माने हैं परंतु गोमयतैं शरीर तो शुद्ध नाहीं होय है। बहुरि कर्दमादिक लगनेतैं तथा अस्पृश्यका स्पर्श होनेतैं जलकरि धोवनेतैं तथा जलकरि स्नान करनेतैं शौच मानिये है परंतु शरीर तो स्नानतैं शुद्ध नाहीं होय है स्नान किये पीछे हू चंदन पुष्पादिक पवित्र वस्तु हू शरीरके स्पर्शमात्रतैं मलीन होय जाय है। बहुरि केतेक भूमि पाषाण कपाट काष्ठादिक पवनकरिही शुद्ध मानिये है परंतु शरीर तो पवनकरि शुचि नाहीं होय है। बहुरि केतेक वस्तु अपने ज्ञानमैं जाका अशुद्धताका संकल्प नाहीं होनेतैं शुद्ध मानिये है परंतु शरीरमैं तो शुद्धपनाका संकल्प हू नाहीं उपजे है तातैं शरीर तो अष्टप्रकारका लौकिक शौचकरि शुद्ध नाहीं होय है लौकिकशौच परिणामनिकी ग्लानि मेटै है। व्यवहारमैं उज्ज्वलता जानि कुलकी उच्चता जनावे है परंतु शरीरकूं तो शुचि नाहीं करे है। देह तो सर्वप्रकार अशुचि ही है। यामैं जो आत्मा परका धन अर परकी स्त्रीमैं अभिलाष-

रहित होय अर जीवमात्रका विराधनारहित होजाय तो हाडमांसका मलीन देह हू देवनकरि पूज्य महा पवित्र होय जाय। इस देहकूं पवित्र करनेका और कारण ही नाहीं है सो ही श्रीपद्मनंदी नाम दिगम्बर वीतराग मुनि कह्या है सो जानहु। जिसकी निकटतातैं सुगंध पुष्पमालाचंदनादिपवित्र द्रव्य हू अस्पर्श्यताकूं प्राप्त होय है अर विष्टा मूत्रादिककरि भर्‌या रुधिर रस हाड चामादिककरि रच्या अर महासूगला अर महा दुर्गंध महामलीन समस्तअशुचिका रहनेका एक संकेतगृह ऐसा मनुष्यका शरीर जलकरि स्नान करनेतैं कैसैं शुद्ध होय। आत्मा तो अपने स्वभावतैं ही अत्यंत पवित्र है अर अमूर्तिक है ताकूं जल पहुंचै ही नाहीं ऐसा पवित्रमैं स्नान वृथा है अर यो काय है सो अशुचि ही है सो स्नानकरि कदाचित् शुचिताकूं प्राप्त नाहीं होय है यातैं स्नानके दोऊ प्रकारकरि विफलता भई। अर जे फिर हू स्नान करैं हैं तिनके पृथ्वीकाय जलकायादिक अर अनेक त्रसनिका घात होनेतैं पापबंधके अर्थि अर रागभावके अर्थि ही है। भावार्थ–गृहस्थके स्नान बिना सरै नाहीं परंतु अज्ञानी गृहस्थ स्नानमैं धर्म मानै है अर स्नानतैं पवित्रता मानै है ऐसी मिथ्याबुद्धि लग रही है सो याका स्वरूपकूं समझै तो याकूं धर्म तो नाहीं मानै अर यातैं पवित्रपना नाहीं मानै। यद्यपि गृहस्थके स्नान विना व्यवहार समस्त दूषित होय जाय अर व्यवहार दूषित होय जाय तादि परमार्थकी शुद्धता नाहीं करसकै परंतु याकूं राग बधावनेतैं अर हिंसा होनेतैं पापरूप तो श्रद्धान करै। बहुरि और हू शिक्षा जाननी,–चित्तकेविषै पूर्वकालका कोटिनभवकरि संचय किया कर्मरूप रज ताका संबंध करि उपज्या जो मिथ्यात्वादिक मल ताका नाश करनेवाला जो आपापरका भेद जाननेरूप विवेक सो ही सत्पुरुषनिकै मुख्य स्नान है। सत्पुरुषनिकै तो मिथ्यात्वमलका नाश करनेवाला एक विवेक ही स्नान है अर अन्य जो जलकरि स्नान है सो तो जीवनिका समूहका घात करनेतैं पापका करनेवाला है यातैं धर्म नाहीं होय है। ताहीकारणतैं स्वभावहीतैं अशुचि जो काय तिसविषै पवित्रता नाहीं है। बहुरि कहै हैं भो ज्ञानीजन हो! आपकी शुद्धताके अर्थि

परमात्मा नामा तीर्थमें सदा काल स्नान करो। वृथा खेदकरि व्याकुल भये गंगादिक तीर्थनप्रति क्यों दौडो हो? कैसाक है परमात्मानामा तीर्थ? सम्यग्ज्ञानरूप ही जामें निर्मल जल है अर देदीप्यमान सम्यग्दर्शनरूप जामें लहरि है अर अविनाशी अनंतसुख करि शीतल है अर समस्त पापानिके नाश करनेवाला है ऐसा परमात्मस्वरूप तीर्थमें लीन होहु। बहुरि जगतके पापिष्ठ मिथ्यादृष्टि जननिनै निर्मल तत्त्वानिका निश्चयरूप द्रह नाहीं देख्या है अर कहै हू ज्ञानरूप रत्नाकर समुद्र हू नाहीं देख्या। अर समता नामा अतिशुद्ध नदी हू नाहीं देखी, तिसकारण करि पापके हरनेवाले सत्य तीर्थनिकूं छांडि करि मूर्ख लोक हैं ते तीर्थ जिनकूं कहै हैं ते संसारके तारनेवाले नाहीं ऐसे गंगादिक नदीनिमें डूबकरि हर्षित होय हैं। भावार्थ—जिनमूर्खनिनै तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रहकूं नाहीं देख्या अर ज्ञानरूप समुद्र नाहीं देख्या अर समता नाम नदी नाहीं देखी ते गंगादिक तीर्थाभासनिमें दौडता फिरे हैं जो तत्त्वनिका निश्चयरूप द्रहकूं देखता अर ज्ञानरूप समुद्रकूं देखता अर समतानामा नदीकूं देखता तो इनमें गरक होय मिथ्यात्वकषायरूप मलकरि रहित होय आपकूं उज्वल कर लेता। बहुरि इस भुवनमें ऐसा कोऊ तीर्थ नाहीं है तथा ऐसा जल हू नाहीं तथा और हू कोऊ द्रव्य नाहीं है जिसकरि यो समस्त अशुचि मनुष्यका शरीर साक्षात् शुद्ध होजाय अर यह शरीर कैसाक है—आधिव्याधि जरा मरणादिक करि निरंतर व्याप्त अर निरंतर तापकरनेवाला ऐसा है जातैं सत्पुरुषनिके याका नाम हू सहनेयोग्य नाहीं है। बहुरि समस्त तीर्थनिके जलनैं नित्य स्नान करिये अर चंदनकपूरादिकका विलेपन करिये तो हू यह शुद्ध नाहीं होय सुगन्ध नाहीं होय रक्षा करते हू विनाशके मार्गमें ही तिष्ठै है। जो नदीमें स्नानतैं ही शुद्ध होजाय तो कोट्यां मच्छी मच्छ काछिवा कीर धीवरादिक शुद्ध होजांय तातैं यह लोकमूढता त्यागने योग्य है।

अब इहां इतना विशेष और जानना जो स्नान करनेतैं पवित्र नाहीं होय अर धर्म हू नाहीं होय परंतु

गृहस्थाचारमैं मुनीश्वरनिकी ज्यौं स्नानका त्याग योग्य नाहीं। क्योंकि जो पापिष्ठ जीवनसूं स्पर्श होजाय अर स्नान नाहीं करै तो अपना मनमैं पापकी ग्लानि जाती रहै। तदि तिनकी संगति स्पर्शन खान पान यथेच्छ करने लगि जाय तब व्यवहारधर्मका लोप होजाय यातैं जिनधर्मीनिका आचार हैं ते व्यवहारके विरोधी नाहीं। जो अतिपापतैं आजीविकाके करनेवाला चांडाल कषाई चमार शिकार भील धीवरादिक अतिपापिष्ठ तथा मुसलमान म्लेच्छनिकी शरीर ऊपर छाया पडते हू महामलीनता मानिये है तो इनका स्पर्श होनेतैं स्नान कैसैं नाहीं करै? स्नान हू करै अर परमात्माका स्मरण हू करै। अर याके नजीक बैठनेतैं बुद्धि मलीन होय है अर जो मुसलमान वेश्यादिकनिसूं कान लगाय मुखके सनमुख अपना मुख करि बचनालाप करै हैं तिनकी बुद्धि उत्तम धर्मादिक कार्यतैं विमुख होय विपरीत प्रवर्त्तन करै है तथा जीवनिके घातक कूकरा मार्जारादिक पशु अर पक्षी इत्यादिक दुष्ट तिर्यंचनिका भोजनके स्थाननिमैं आगमन होजाय तथा भोजनका स्पर्शन होजाय तो त्याग करना उचित है तो इनका स्पर्शन होतैं स्नान विना भोजन स्वाध्यायादिक करनेमैं हीनाचारपना होय है पापतैं ग्लानि जाती रहै कुलका भेद नाहीं ठहरै। अर स्त्रीकरि सहित संगम करै तहां अनेक जीवनकी हिंसा अर महा अशुचि अंगनिका संघट्टन अर रुधिर वीर्यादिकनिका बाह्य स्पर्शनादिक अर महा निंद्य रागका उपजना है याका त्याग नाहीं बन सकै तो इस पापकी ग्लानि करि आपको अशुद्धि मानि स्नान तो करै जो मैं निंद्यकर्म किया है तातैं बाह्यशुद्धिता वास्तै स्नान किये बिना पुस्तकनिका तथा जिनमंदिरके उपकर्णनिका उत्तम वस्तुका कैसैं स्पर्शन करूं। यद्यपि देहमैं रुधिरमांस हाड चाम केश मल मूत्र भरे हैं परन्तु रुधिर राध चाम हाड मांस मल मूत्रादिकनिका बाह्यस्पर्श होजाय तो अवश्य धोवना उचित है जातैं केश चामादिक शरीरतैं दूर हुआ पाछै स्पर्शनेयोग्य नाहीं है। अर इनका हस्तादिककरि स्पर्श होजाय तो शीघ्र ही हस्त धोवना उचित है। इनकी ग्लानि नाहीं करै तो नीच चमार चाण्डाल कसायीनितैं एकता होनेतैं आचरणमैं भेद नाहीं

है तदि समस्त जाति व्यवहारके लोप होनेतैं उत्तम कुलका अर नीचकुलका आचार समान होजाय तदि व्यवहार आचारके बिगडनेतैं धर्मका मार्ग भ्रष्ट होजाय। निंद्यकर्म करनेकी लज्जा छूटि जाय तदि कुलके मार्ग बिगाडनेतैं महापापका बन्ध होय है। परमार्थशौच तो व्यवहारकी शौचता करि ही शुद्ध होय है। जाका भोजनमैं, पानमैं, स्पर्शनमैं, संगतिमैं, प्रवृत्तिमैं मलीनता होजाय तदि परमार्थ धर्म मलीन हो ही जाय। जिनधर्मी हैं सो चांडाल भील म्लेच्छ मुसलमानादिककी शरीरकी छायाहीतैं मलीनता मानै हैं अर धोबी कलाल लुहार खाती सुनार भडभूजा इत्यादिकनिका स्पर्शनकूं हिंसाकर्म करनेतैं दूर ही छाडिये हैं। मुनीश्वर तो नीच जातिके मनुष्यका स्पर्श होतैं दंड स्नान करैं अर तिस दिन उपवास करैं। अर नाहीं जाननेतैं नीच कुलके गृहनिमैं प्रवेश होजाय तो भोजनका अंतराय करै हैं। अर मदिरा मांस अर शरीरतैं चार अंगुल बहता रुधिर राधि अर पंचेंद्रिय जीव मृतकका कलेवर भोजन करते देखैं तो भोजनका अन्तराय करै हैं। तो जिनधर्मी गृहस्थ हाड कौडी चाम केश ऊन इनके स्पर्शनतैं भोजन कैसैं नाहीं छांडे याहीतैं गृहस्थ है सो हस्तपाद प्रक्षालनकरि शुद्धभूमिमैं शुद्ध भोजन करै हैं। अधम जातिका स्पर्श्या भोजन नाहीं करैं। बहुरि जिनेंद्रका पूजन वास्तैं स्नान करना योग्य ही है क्योंकि स्नानकरि देवका स्पर्शन पूजन करना यह बडा विनय है। यद्यपि स्नानतैं शुद्धता नाहीं, तो हू, देवके उपकरणनिकूं स्नानकरि स्पर्शना धोया हुआ द्रव्य चढावना सो देवविनय ही है। विनय है सो ही आराधना है। जातैं जिनमन्दिरके उपकरणका हू विनय करिये है तो जिनेंद्रके आगमकी वाणीका पूजनके द्रव्यका हू स्नानकरि स्पर्शना हस्त धोय लगावना मन्दिरमैं हस्त पाद प्रक्षालनकरि प्रवेश करना सो हू विनय ही है। यद्यपि पापमलकी शुद्धता करना प्रधान है तो हू भगवान जिनेंद्रका आगममैं अष्टप्रकार लौकिकशुद्धि कही है लौकिकशौचके विना परमार्थधर्मतैं भ्रष्ट होजाय है। मुनीश्वरका देह रत्नत्रयका प्रभावतैं महापवित्र है तो हू बाह्यशौचके निमित्त कमण्डलु राखैं हैं हस्तपाद धोय स्वाध्याय करैं हैं अत्यंत मंद

जलतैं पादप्रक्षालन कराय भोजन करै हैं तातैं व्यवहार आचारकूं नाहीं छांडैं है। यो भगवान जिनेंद्रका धर्म अनेकांतरूप है अर निश्चयव्यवहारका विरोधरहित ही धर्म है। सर्वथा एकांतरूप जिनेंद्रधर्म नाहीं है। लौकिकशुचितारहित होय तो धर्मकी निंदा करावै कुलकी निंदा करावै तादि अपना आत्मा मलीन होय ही है। बहुरि मैथुनसेवन किया होय अर मृतककूं दग्ध करि आया होय अर केश क्षौर कराया होय अर चांडाल म्लेच्छादिकनिका स्पर्श भया होय मृतक पंचेन्द्रीका स्पर्श भया होय रजस्वलादि अशुचिका स्पर्श भया होय इत्यादिक और कारण होय तहां अवश्य स्नान करना अर अन्य कारण-निमैं जहां मल मूत्र हाड चामादिकका जिस अंगसों स्पर्श भया होय तिसकूं धोवना शीघ्र ही उचित है। अष्टप्रकार शौच लौकिकमैं अनादिका प्रवर्तै हैं। यातैं आगमकी आज्ञा मानना अपना हित है। बहुरि जगतमैं प्रगट देखिये है कर्णके मलतैं नेत्र मलकूं, अर यातैं नासिका मलकूं, यातैं कफ लालादिक मुखके मलकूं, यातैं मूत्रकूं, यातैं विष्ठाकूं, अधिक अशुचि मानिये है। अर जो समस्त मलकूं समानही मानिये तो समस्त आचार उपद्रिन होय विपरीत होय जाय। यद्यपि द्रव्यार्थिकनयतैं समस्त एक पुद्गल जाति हैं तथापि बहुत भेद हैं। यद्यपि हाड मांस रुधिर मल मूत्रादिक समस्त पृथ्वीरूप जलादिरूप होजाय है अर पृथ्वी जलादिकनिका मांस रुधिर मलादिकरूप होजाय है तथापि पर्यायनिमैं बडा भेद है। द्रव्यके अर पर्यायके सर्वथा एकता माननेतैं समस्त व्यवहार परमार्थका लोप होय तातैं द्रव्यके पर्यायके कथंचित् एकपना कथंचित् अनेकपना मानना ही श्रेष्ठ है। बहुरि बालूके पिंड करनेमैं तथा पर्वततैं पडनेमैं अग्निमैं दग्ध होनेमैं हिमालय गलनेमैं पंचाग्नि तपनेमैं धर्म मानै हैं सो लोकमूढता है। तथा ग्रहणमैं सूतक मानना, स्नान करना चांडालादिककूं दान देना, संक्रांति मानि दान देना, कुवा पूजना, पीपल पूजना, गायकूं पूजना, रुपया मोहरकूं पूजना, लक्ष्मीकूं पूजना, मृतक पितरकूं पूजना छींक पूजना, मृतकानिके तृप्ति करनेकूं तर्पण करना, श्राद्ध करना, देवतानिका रतजगा करना, गंगा-

जलकूं शुद्ध मानना, तिर्यंचानेके रूपकूं देव मानना, कुवा बावडी वापिका तलाव खुदावनेमैं धर्म मानना बाग लगावनेमैं धर्म मानना, मृत्युंजय आदिके जप करावनेतैं अपनी मृत्युका टलजाना मानना, ग्रहांका दान देनेतैं अपने दुःख दूर होना मानना, सो समस्त लोकमूढता है। बहुत कहनेकरि कहा जो योग्य अयोग्य, सत्य असत्य, हित अहितका, आराध्य अनाराध्यका विचाररहित लौकिक जनकी प्रवृत्ति देख जैसैं अज्ञानी अनादिके मिथ्यादृष्टि प्रवर्तैं तैसी प्रवृत्तिकूं सत्य मानना, विचाररहित लौकिकजननिकी प्रवृत्ति देख प्रवर्त्तन करना सो लोकमूढता है। अर केतेक जिनधर्मी कहाय करके हू आत्मज्ञानकररहित परमागमकी आज्ञाकूं नहीं जानते भेषधारीनिके कल्पे हुए अनेक क्रियाकांड तथा तीर्थंकरादिकनिका तर्पण कराना अपना पिता पितामहका तर्पण कराना तथा यक्षादिकनिके अर्थि होम यज्ञादिकनिमैं अपना कल्याण होना मानैं हैं। शकलीकरणादिक विधान कराना सो लोकमूढता है। तथा केतेक स्नान करि रसोई करनेमैं तथा स्नानकरि जीमनेमैं तथा आला वस्त्र पहिर जीमनेमैं अपनी पवित्रता शुद्धता मानै हैं परम धर्म मानै हैं अर अभक्ष्यभक्षण अर हिंसादिकका विचार नाहीं करै हैं सो समस्त मिथ्यात्वके उदयतैं लोकमूढता है॥ अब देवमूढता कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

वरोपलिप्सयाशावान् रागद्वेषमलीमसाः। देवता यदुपासीत देवतामूढमुच्यते ॥ २३ ॥

अर्थ—अपने वांछित होय ताकूं वर कहिये वरकी वांछा करके आशावान् हुवा संता जो रागद्वेष करि मलीन देवताकूं सेवन करै सो देवतामूढ कहिये है ॥ २३ ॥

संसारी जीव हैं ते इस लोकमें राज्यसंपदा स्त्री पुत्र आभरण वस्त्र वाहन धन ऐश्वर्यनिकी वांछा सहित निरंतर वर्तैं हैं। इनकी प्राप्तिके अर्थि रागी द्वेषी मोही देवनिका सेवन करैं सो देवमूढता है। जातैं राज्यसुखसंपदादिक तो सातावेदनीयका उदयतैं होय है सो सातावेदनीयकर्मकूं कोऊ देनेकूं समर्थ है नाहीं तथा लाभ है सो लाभांतरायका क्षयोपशमतैं होय है अर भोग सामग्री उपभोग सामग्रीका प्राप्त

होना सो भोगोपभोग नाम अंतरायकर्मका क्षयोपशमतैं होय है अर अपने भावनिकरि बांधे कर्मनिकूं कोऊ देव देवता देनेकूं तथा हरनेकूं समर्थ है नाहीं। बहुरि कुलकी वृद्धिके अर्थि कुलदेवीकूं पूजिये है अर पूजते पूजते हू कुलका विध्वंश देखिये हैं अर लक्ष्मीके अर्थी लक्ष्मीदेवीकूं तथा रुपया मोहरानिकूं पूजते हू दरिद्र होते देखिये हैं। तथा शीतलाका स्तवन पूजन करते हू संतानका मरण होते देखिये हैं। पितरानिकूं मानते हू रोगादिक बधै है तथा व्यंतर क्षेत्रपालादिकानिकूं अपना सहायी मानै है सो मिथ्यात्वका उदयका प्रभाव है। बहुरि केतेक कहै हैं जो चक्रेश्वरी पद्मावती देवी ये शस्त्रधारण किये जिनशासनकी रक्षक हैं तथा सेवकनिकी रक्षा करनेवाली एक एक तीर्थंकरनिकी एक एक देवी है। एक एक यक्ष है इनका आराधन करने पूजनेतैं धर्मकी रक्षा होय है ये धर्मात्माकी रक्षा करैं हैं तातैं इन देवीनिका और यक्षनिका स्तवन करना पूजन करना योग्य है। देवी समस्त कार्यके साधनेवाली तीर्थंकरनिकी भक्त हैं इस विना धर्मकी रक्षा कौन करै याहीतैं मन्दिरनिके मध्य पद्मावतीका रूप जाके चार भुजा तथा बत्तीस भुजा अर नाना आयुधनिकरि युक्त अर तिनके मस्तक ऊपर पार्श्वनाथस्वामीका प्रतिबिंब अर ऊपर अनेक फणनिका धारक सर्पका रूपकरि बहुत अनुरागकरि पूजैं हैं सो सब परमागमतैं जानि निर्णय करो। मूढलोकनिका कहिबो योग्य नाहीं। प्रथम तो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी इन तीनप्रकारके देवनिमैं मिथ्यादृष्टि ही उपजै है। सम्यग्दृष्टिका भवनत्रिकदेवनिमैं उत्पाद ही नाहीं अर स्त्रीपना पावै ही नाहीं सो पद्मावती चक्रेश्वरी तो भवनवासिनी अर स्त्रीपर्यायमैं अर क्षेत्रपालादिक यक्ष ये व्यंतर इनमैं सम्यग्दृष्टिका उत्पाद कैसैं होय? इनमैं तो नियमतैं मिथ्यादृष्टि ही उपजै हैं ऐसा हजारांबार परमागम कहै हैं। बहुरि जो इनके जिनधर्मसूं प्रीति है तो जिनधर्मके धारीनितैं अपनी पूजा वन्दना नाहीं चाहै जैनी होय सो आपकूं अव्रती जानता सम्यग्दृष्टिसे वंदना पूजा कैसैं करावै? साधर्मीनिका उपकार बिना कहे ही करै। बहुरि भगवानका प्रतिबिंब तो अपने मस्तक ऊपरि है अर भगवानके भक्तनितैं अपनी

पूजा करावै ऐसा अविनय धर्मात्मा होय कैसैं करै ? बहुरि अनेक आयुध धारण करि अपनी वीतराग धर्ममैं प्रवृत्तिकूं बिगाडै हैं। अर अपना असमर्थपना प्रगट दिखावै हैं तथा जिनशासनके रक्षक एक २ यक्ष यक्षणी ही कैसैं कहो हो ? भगवानके शासनके तौ सौधर्म इन्द्रकूं आदि लेय असंख्यात देव देवी समस्त सेवक हैं अर जिनका हृदयमैं सत्यार्थ धर्मतैं पूर्वकृत अशुभकर्म निर्जर गया होय ताकै समस्त पुद्गल राशि अचेतन है सो हू देवतारूप होय उपकार करैं हैं देव मनुष्य उपकार करैं सो कहा आश्चर्य है। अर शासनमैं हू ऐसी कैई कथा हैं जो शीलवान तथा ध्यानी तपस्वीनिके धर्मके प्रसादतैं देवनिके आसन कम्पायमान भये अर देव जाय उपसर्ग टाले अर नाना रत्ननि करि पूजा करी ऐसी कथा तो शासनमें बहुत हैं अर ऐसी तो कहूं कथा भी नाहीं जो धर्मात्मा पुरुष देवनिकूं पूजै अर पद्मावती चक्रेश्वरीकी भी कैई कथा हैं जो शीलवंती व्रतवंतिनीकी देव देवियोंने पूजा करी अर शीलवंती व्रतवंती तो जाय कोऊ देव देवीकी पूजा करी नाहीं लिखी है। तथा कार्तिकेय स्वामी कही है,—

गाथा,—ण य का वि देदि लच्छी ण को वि जीवस्स कुणइ उवयारं।
उवयारं अवयारं कम्मं पि सुहासुहं कुणदि ॥ ३१९ ॥
भत्तीए पुज्जमाणो विंतरदेवो वि देदि जदि लच्छी।
तो किं धम्मं कीरदि एवं चिंतेहि सद्दिट्ठी ॥ ३२० ॥

अर्थ—इस जीवकूं कोऊ लक्ष्मी नाहीं देवै है अर जीवका कोऊ उपकार अपकार हू नाहीं करै है जो जगतमैं उपकार अपकार करता देखिये है सो अपना किया शुभ अशुभकर्म करि करै है। बहुरि जो भक्तिकरि पूजे व्यंतरदेव ही लच्छी देवैं तो दान पूजा शील संयम ध्यान अध्ययन तप रूप समस्त धर्म काहेकूं करिये ? बहुरि जो भक्तिकरि पूजे वंदे कुदेव ही संसारके कार्य सिद्ध करैंगे तो कर्म कछु बात ही नाहीं ठहरैं ? व्यंतर ही समस्त सुखका दायक रहे धर्मका आचरण निष्फल रह्या। भावार्थ—जगतविषै इस

जीवका जो देव दानव देवी मनुष्य स्वामी माता पिता बांधवमित्र स्त्री पुत्र तथा तिर्यंच तथा औषधादिक जो उपकार तथा अपकार करै हैं सो समस्त अपने किये पुण्यकर्म पापकर्म तिनके उदयके आधीन करैं हैं। ये तो समस्त बाह्यनिमित्त मात्र हैं। देखिये हैं—भला कर्या चाहै है उपकार किया चाहै है अर अपकार होय जाय है अर अपकार किया चाहै है अर उपकार होजाय है। यातैं प्रधान कारण पुण्यपापरूप कर्म है। बहुरि शास्त्रनिमैं कह्या है चांडालके अहिंसाव्रतका प्रभावतैं देवता सिंहासनादि रचे अर नीलीका शीलके प्रभावतैं देवता सहायी भये अर सीताके शीलका प्रभावतैं अग्नीकुंड जलरूप होय गया अर सेठ सुदर्शनका देव आय उपसर्ग टाल्या अर और हू केतकानिके सहायी देवता भये उपसर्ग टाले अर देवांका आसन कंपायमान भये अर देव आय सहायी भये ऐसा हजारां कथा प्रसिद्ध हैं। अर भगवान आदीश्वरकै छह महीना अंतराय भोजनका भया तदि कोऊ देव आय काहूकूं आहार देनेकी विधि नाहीं जनाई पहली तो गर्भमैं आनेके छहमास पहली इन्द्रादिक समस्त देव भगवानकी सेवामैं तथा स्वर्गलोकतैं आहार वस्त्र वाहनादिक लावनेमैं सावधान भये हाजिर रहते थे। ते सब देव कैसैं भूल गये। तथा भरतादिक सौ पुत्रनिकूं अर ब्राह्मी सुन्दरी पुत्रनिकूं मुनि श्रावकका समस्त धर्म पढाया ते हू विचार नाहीं किया जो भगवान हू मुनि होय आहारके अर्थि चर्या करैं हैं सो अंतराय कर्मका मंद हुआ विना कौन सहायी होय? तथा युधिष्ठिर भीम अर्जुन नकुल सहदेव ये महा वीतरागी होय वनमैं ध्यान करते थे तिनकूं दुष्ट बैरी आय आभरण अग्निमैं लाल करि पहराय दीये अर जिनका चाम मांसादिक भस्म होते हू कोऊ भी देव सहायी नाहीं भया तथा सुकुमाल महामुनि तिनकूं तीन दिन पर्यंत श्यालिनी अपने बच्चानिसहित भक्षण करतो किया तहां कोऊ देव सहायी नाहीं भये। अर जाकी माताका इतना ममत्व था जो शोकरुदनादिक संतापहीमैं लगी रही अर पुत्र कहां गया ऐसी खबर भी नाहीं मँगाई। तथा पांचसै मुनिनिकूं घानीमैं पेल दिया तहां कोऊ देव सहायी नाहीं भया। तथा पद्म नाम बलभद्र अर कृष्ण

नाम नारायण जिनकी पूर्वें हजारां देव सवा करैं थे जब हीनकर्म उदय आया अर पुण्य क्षीण भया तादि कोऊ देव पानी प्यायबेवाला एक मनुष्य हू नाहीं रह्या तथा जो सुदर्शनचक्रसूं नाहीं मरचा अर भीलका एक बाणतैं प्राणरहित होय गया ऐसैं अनेक ध्यानी तपस्वी व्रती संयमी घोर उपसर्ग भोगे तिनका तो देव सहायी कोऊ नाहीं भये अर हरेकनिके सहायी भये तातैं ऐसा निश्चय है जो अशुभकर्मका उपशम हुआ बिना अर शुभकर्मका उदय बिना कोऊ देवादिक सहायी नाहीं होय है। अपना देह ही बैरी हो जाय है तथा खरदूषणका पुत्र शंबुकुमार महापुरुषार्थकरि द्वादशवर्षपर्यंत बाँसका बीडामैं सूर्यहास खड्ग सिद्ध किया अर लक्ष्मण सहज ही लिया अर उसही खड्गसूं खरदूषणका पुत्र संबुकुमारका मस्तक छेद्या गया। अपना हितके अर्थि साधन करी विद्या आपहीका घात किया तातैं पूर्वकर्मका उदयकरि अनेक उपकार अपकार प्रवर्तैं हैं। कोऊ देवादिक आराधन किये हुये धन आजीविका स्त्रीपुत्रादिक देनेमैं समर्थ नाहीं हैं। बहुरि यहां प्रत्यक्ष ही देखो नगरका राजा समस्त देव देवी पीर पैगम्बर स्वामी फकीर समस्त मतका भेषी अर समस्त देव पुराणके पाठी नित्य यज्ञ होम पाठ करनेवाले ब्राह्मणनिको बहुत आजीविका देवैं हैं अर बडा सत्कार अर लक्षां रुपयाका दान देहैं। अर बडा पूजा वलिदान सबकै पहुंचै है तो हू संयोग वियोग हानि वृद्धि जीत हारके टालनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं है। तातैं ऐसा निश्चय जानहु जो श्रद्धान नाहीं करकैं भी अनेक देवदेवीनिकूं आराधैं हैं पूजैं हैं सो सब देवमूढता है बहुरि जो मंत्रसाधन विद्याराधन देवआराधन समस्त पाप पुण्यके अनुकूल फलैं हैं तातैं जो सुखका अर्थी हैं ते दया क्षमा संतोष निर्वांछकता मंदकषायता वीतरागता करि एक धर्महीका आराधन करो अन्य प्रकार वांछा करि पापबंध मत करो अर जो देवनिका समागममैं ही प्रीति करो हो तो उत्तम सम्यग्दृष्टि सौधर्म इंद्र तथा शची इंद्राणी तथा लौकांतिकदेवनिका संगममैं बुद्धि करो। अन्य अधम देवनिका सेवन करि कहा साध्य है? बहुरि मिथ्याबुद्धिकरि स्थापन करे हैं और नित्य पूजन करे हैं तादि प्रथम तो क्षेत्रपालका

पूजन करै हैं अर क्षेत्रपालका पूजन किया पाछैं जिनेन्द्रका पूजन करै हैं अर ऐसी कहै हैं जैसैं पहली द्वारपालका सन्मान करके पीछैं राजाका सन्मान करना द्वारपाल बिना राजासौं कौन मिलावै तैसैं क्षेत्रपाल विना भगवानका मिलाप कौन करावै ? जिन मूढनिके ऐसा विचार नाहीं जो भगवान तो मोक्षमैं हैं भगवान परमात्माका स्वरूपकूं यो मिथ्यादृष्टि अज्ञानी कैसैं जानैगा अर कैसैं मिलावैगा ? अर विघ्नकूं कैसैं विनाशैगा ? आपका विघ्न ही नाश करनेकूं समर्थ नाहीं सो विचाररहित मिथ्यादृष्टि लोक क्षेत्रपालका महाविपरीत रूप बनाय वीतरागके मन्दिरमैं प्रथम स्थान करै हैं जाका हस्तमैं मनुष्यका कटा मूंड अर गदा खड्‌ग अर कूकरा वाहन करि सहित स्थापन करि तैल गुड़का भक्षणतैं क्षेत्रपाल प्रसन्न होय है ऐसैं लोकनिकूं बहकाय पूजै हैं अर इनका पहिली दर्शन पूजन स्तवन करै हैं सो मिथ्या-दर्शन अर कुज्ञानका प्रभाव जान हु। बहुरि पार्श्वजिनेंद्रकी प्रतिमाके मस्तक ऊपरि फण बिना बनावैं ही नाहीं अर भगवान पार्श्व अरिहंतके समवसरणमैं धरणेंद्रका फण मस्तक ऊपर कैसैं संभवै ? धरणेन्द्र तो भगवानके तपके अवसरमैं फणामण्डप किया था सो फेर फणामंडपका प्रयोजन नाहीं अर पार्श्वजि-नेंद्र अरहंत भये अर इंद्रकी आज्ञातैं कुबेर समोसरण रच्यो तहां भगवान फणसहित नाहीं विराजे हुते चारनिकायके देव मनुष्य तिर्यंच धर्मश्रवण स्तवन वंदना करते ही तिष्ठे यातैं स्थापनाविषै अर्हंतकी प्रति-बिंबानिके फण कैसैं संभवै ? वीतरागमुद्रा तो ऐसे सम्भवै नाहीं परंतु कालके प्रभावतैं धरणेंद्रकी प्रभा-वना प्रगट करनेकूं लोक विपरीत कल्पना करने लागि गये सो कौन दूर करि सकै। जैसैं पाषाणमय भग-वानका प्रतिबिंब महा अंगोपांग सुन्दरताके कर्णनिकूं मस्तककी रक्षाके अर्थि लम्बा करि स्कंधसौं जोड देहैं तिनकौं देखि समस्त धातुके प्रतिबिंबनके भी कर्ण स्कंधसौं जोड देहैं सो देखादेखी चल गई । तैसैं ही अर्हंत प्रतिबिंबानिके ऊपरि फणका आकार करते लोकानिकूं देखि तत्त्वकूं समझे बिना फण करनेकी प्रवृत्ति चल गई सो फणके करदेनेतैं प्रतिमा तो अपूज्य होय नाहीं क्योंकि चार प्रकारके समस्त ही देव

सर्व तरफतैं सदैव ही भगवानका सेवन करै हैं। अर जो फणामंडप करनेतैं ही धरणेंद्रकूं पूज्य मानै सो देवमूढता है। ऐसैं अनेक प्रकारकरि देवमूढता है तथा गणेश हनुमान योनि लिंग चतुर्मुख षट्मुखका रूप देवत्वरहित प्रगट असंभव तिर्यंचरूपकूं देव मानना बड पीपलादि वृक्षानिकूं, नदीकूं, जलकूं, आग्निकूं, पवनकूं, अन्नकूं, देव मानना सो समस्त देवमूढता है बहुत कहा लिखिये। अब आगे गुरुमूढताका वर्णन करनेकूं सूत्र कहै हैं—

सग्रन्थारम्भहिंसानां संसारावर्तवर्तिनां। पाखण्डिनां पुरस्कारो ज्ञेयं पाखण्डिमोहनम् ॥ २४ ॥

अर्थ—परिग्रह आरम्भ अर हिंसाकरि ज सहित अर संसाररूप भंवरनिमैं प्रवर्तन करते ऐसे पाखंडीनिकी जो प्रधानता उनके वचनमैं आदर करि प्रवर्तन करना सो पाखंडमूढता है॥ २४॥ भावार्थ—जिनेंद्रधर्मका श्रद्धान ज्ञानकरि रहित होय जो नाना प्रकारका भेष धारण करिकै आपकूं ऊंचा मानि जगतके जीवनितैं पूजा बंदना सत्कार चाहता जो परिग्रह राखैं हैं अर अनेक आरम्भ करै हैं हिंसाके कार्यनिमैं प्रवर्तन करै हैं इंद्रियनिके विषयनिका रागी संसारी असंयमी अज्ञानीनितैं गोष्ठी करता अभिमानी होय आपकूं आचार्य पूज्य धर्मात्मा कहावता रागी द्वेषी हुआ प्रवर्तै हैं अर युद्धशास्त्र शृंगारके शास्त्र हिंसाके कारण आरम्भके शास्त्र रागके बधावनेवाले शास्त्रनिकूं आप महंत भये उपदेश करै हैं ते पाखण्डी हैं, जिनके नाना प्रकारके रसनि करि सहित भोजनमैं तत्परता याहीतैं कामादिककी कथामैं लीन होय रहे अर परिग्रहके बधावनेके अर्थि दुर्ध्यानी होरहे हैं। बहुरि जे मुनि साधु आचार्य महंत पूज्य नाम कहावैं अर लोकनितैं नमस्कार कराया चाहैं अर विकथा करनेमैं, विषयनिमैं मंत्र, यंत्र, तंत्र, जप, होम, मारण, उच्चाटन, वशीकरणादिक निंद्य आचरण करै हैं तैं पाखण्डी हैं। तिन पाखण्डीनिका वचनकूं प्रमाण करना अर सत्कार करना धर्मकार्यमैं प्रधान मानना सो पाखंडमूढता है। अब सम्यक्त्वकूं नष्ट करनेवाले अष्ट मद हैं तिनके नाम कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

ज्ञानं पूजां कुलं जातिं बलमृद्धिं तपो वपुः । अष्टावाश्रित्य मानित्वं स्मयमाहुर्गतस्मयाः ॥ २५ ॥

अर्थ—नष्ट भये हैं मद जिनके ऐसे गणधर देव हैं ते ऐसें स्मय कहिये मद ताहि कहे हैं जो ज्ञानने पूजाने कुलनै जातिनै बलनै ऋद्धिनै तपनै शरीरके रूपादिक इन अष्टकूं आश्रयकरि जो मानीपना सो स्मय कहिये हैं ॥ २५ ॥ भावार्थ—ज्ञानका मद १ पूजाका मद २ कुलका मद ३ जातिका मद ४ बलका मद ५ ऋद्धिका मद ६ तपका मद ७ शरीरका मद ८ सम्यग्दृष्टिके नाहीं होय है। जिनके एक हू मद होय सो सम्यक्त्वी कैसें होय ? सम्यग्दृष्टिके सत्यार्थ चिंतवन है सो बिचारे है—हे आत्मन् ? जो तू इन्द्रियनि करि उपज्या ज्ञान पाया है सो याका गर्व कैसें करे है ? यह ज्ञान तो ज्ञानावरणकर्मके क्षयोपशमके आधीन है विनाशिक है इंद्रियनिके आधीन है वातापित्तकफादिकके आधीन है याके विनशनेका प्रमाण मत जानो। याका गर्व कहा करो हो इंद्रियांकूं नष्ट होते ही ज्ञान हू नष्ट होजाय है तथा वातपित्तादिककी घटत बधत होते क्षणमात्रमें ज्ञान विपरीत होजाय बावला होजाय। अर इंद्रियजनित ज्ञान पर्यायका लार ही विनसैगा अर केई बार एकेंद्रिय भया तहां चार इंद्रिय ही नाहीं पाई एकेंद्रियानिमें जडरूप पाषाण धूल पृथ्वीरूप होय असंख्यात काल अज्ञानी भया अर केई बार विकलत्रयमें हित अहितकी शिक्षारहित भया। तथा केई बार कूकर शूकर व्याघ्र सर्पादिकविषै विपरीत ज्ञानी होय भ्रम्या। अर निगोदमें अक्षर के अनंतवें भाग ज्ञानरहित भया। अर व्यंतरादिक अधम देवनिमें हू मिथ्यात्वके प्रभावतें आपापरकूं नाहीं जानता नष्ट होय एकेन्द्रियमें उपजि अनंतकाल परिभ्रमण किया। अर मनुष्यनिमें हू कोऊ विरले मनुष्यनिके ज्ञानावरणके क्षयोपशमकी अधिकतातें तीक्ष्ण ज्ञान होय जाय तो कोई मनुष्य तो नीच कर्मनिमें प्रवीण होय अनेक जलके जीव तथा थलके जीव तथा आकाशचारी जीवनिके मारनेमें पकड-नेमें बांधनेमें अनेक यंत्र पींजरा जाल फांसी बनावनेमें प्रवीण होय हैं केई नानाप्रकारके खड्ग बंदूक तोप बाण जहर विष आदिक विद्यामें प्रवीणता पाय अपना चातुर्यका मद करि उन्मत्त भये ग्रामके देशके

विध्वंश करनेमें प्रवीण होय हैं । केई सिंह व्याघ्र बराहादिक जीवनकी शिकारमें प्रवीण होय हैं । केई ज्ञान पाय अनेक जीवनिके धन हरनेमें लूटनेमें मार्गमें गमन करतेनिका धन हरनेमें प्राण हरनेमें प्रवीण होय हैं । केई ज्ञानकी तीक्ष्णता पाय भोले प्राणीनिका तिरस्कार करनेमें तथा झूठेनिकूं सांचे कर देनेमें अर सांचेनिकूं झूठे कर देनेमें धन अर प्राण दोऊनिके हरनेमें प्रवीण होय हैं । केतेक अपने ज्ञानकी तीक्ष्णता करिकैं अन्य मनुष्यनिकी चुगली करनेमें लुटाय देनेमें धन धरती आजीविकादिक विनष्ट करा देनेमें राजादिकनिकरि दंड करा देनेमें मरण कराय देनेमें प्रवीण होय हैं । केतेक मनुष्यनिके काष्ठ पाषाण धातु रत्ननिके अनेक वस्तु बनावनेमें केतकनिके चित्र कर्मादिक अनेक आभरण वस्त्र महलादिक अनेक रचना बनाय देनेमें प्रवीणता पाय गर्वके वश भये नष्ट होय हैं । अर केतेक मनुष्य ज्ञानकी प्रबलता पाय अनेक शृंगारशास्त्र युद्धशास्त्र वैद्यक शास्त्रादिक बनाय राजानिकूं रिझावै हैं । अनेक छंद अलंकार विद्या एकांतरूप न्यायविद्या वेद पुराण क्रियाकांडादिककी प्ररूपणा करि गर्विष्ठ भये आत्मज्ञानरहित होय संसार परिभ्रमण करै हैं । अर केई वीतराग धर्मकूं पाय करकैं हू मिथ्यात्वका तीव्र उदयतैं सत्यार्थज्ञान-श्रद्धानकूं नाहीं प्राप्त होय अपना अभिमान वचन पक्ष पुष्ट करनेकूं सूत्रविरुद्ध मार्गकूं प्रवर्तन कराय आपकूं कृतार्थ मानै हैं । ऐसें ज्ञानकी अधिकता पाय करके हू मिथ्यात्वके प्रभावतैं अधिक अधिक बंध करि नष्ट ही भया । अर तातैं अब वीतरागी सम्यग्ज्ञानी गुरुनिका उपदेश पाय ज्ञानका गर्व मत करो । भो आत्मन् ! तेरा स्वभाव तो सकल लोकालोकका जाननेवाला केवलज्ञानरूप है । अब कर्मके क्षयोपशमतैं उपज्या इंद्रियांके आधीन शास्त्रनिका किंचित् ज्ञान ताका कहा गर्व करो हो ? जैसें कोऊ प्रबल अपना वैरी मंडलेश्वर राजाकूं बांध बंदीखाने मेलि किंचित् कुत्सित भोजन देय नाना त्रास देता राखै अर किसी कालमें कोऊ किंचित् मिष्ट भोजन हू देवै तो तिस भोजनिकूं पाय मंडलेश्वर राजा कैसें गर्व करै ? तैसें तुम्हारा अनंतज्ञान स्वरूप केवलज्ञानकूं इन कर्मनिनै लूट देहरूप बंदीगृहमें पराधीन करि इंद्रियद्वारे

किंचित् ज्ञान दिया ताकूं पाय कहा गर्व करो हो यो ज्ञान विनाशीक पराधीन है पर्यायकी लार तो अवश्य नष्ट होयहीगा। अर इस पर्यायमें हू रोगतें वृद्धपनातें इंद्रियनिकी विकलनातें दुष्टनिकी संगतितें कषाय विषयनिकी अधिकतातें क्षणमात्रमें विनाश होनेका भरोसा नाहीं। तातें विनाशीक ज्ञान पाय मद करोगे तो समस्त गुण नष्ट होय ज्ञानरहित एकेन्द्रियादिकानिमें जाय उपजोगे। अर इस कालमें तुम कोऊ कविता छंद चरचा समाझिकें तथा नवीन काव्य श्लोक शास्त्र छंद युक्ति बनाय करिके तथा जिनमतके सिद्धांतनिका किंचित् ज्ञान पाय मदकूं प्राप्त होय रहे हो सो मदकूं प्राप्त होना योग्य नाहीं। पूर्वकालमें भये ज्ञानी वीतरागीनिके रचे ग्रंथनिके वाक्यानिकूं देख हू जो अकलंकदेवकारि रची लघुत्रयी वृहत्त्रयी चूलिका ये सात ग्रंथ तिनिमें प्रवेशके अर्थि माणिक्यनंदी नामा मुनीश्वरां परीक्षामुख रच्या तिसकी बडी टीका प्रमेयकमलमार्तंड बारह हजार प्रभाचंद्रजी रची अर लघुत्रयी ऊपरि न्यायकुमुदचंद्रोदय सोलह हजार श्लोकनिमें प्रभाचंद्रजी रच्या तथा तत्त्वार्थसूत्रनिकी भाष्य तो चौरासी हजार श्लोकनिमें रची सो इस अवसरमें प्रसिद्ध नाहीं है तो हू तिसका मंगलाचरण जो देवागमनामा स्तोत्रके ऊपरि विद्यानंदीस्वामी आप्तमीमांसा नामा अष्टसहस्री रची तथा अकलंकदेवजी राजवार्तिक रच्या तथा विद्यानंदस्वामी अठारह हजार श्लोकनिमें श्लोकवार्तिकजी रच्या तथा आप्तपरीक्षा रची तिनिका निर्बाध वचनके प्रभावकूं देखते बडे बडे वादीनिके गर्व गलजांय तथा नाटकत्रय सारत्रय इत्यादिक अनेकांतरूप निर्बाध युक्ति वचनकूं जानि करि कैसें ज्ञानका मद करो हो। कदाचित् श्रुतज्ञानावरणका क्षयोपशमतें किंचित् ज्ञान पाया है तो बडा दुर्लभ लाभ याका जानि आत्माकूं विषयनितें तथा अभिमानादिक कषायनितें छुडाय परम समता धारणकरि संसारपरिभ्रमणका अभावमें यत्न करो। ज्ञानका मदकरि आत्माकूं अनंतसंसारी मत करहु। ऐसें ज्ञानके मदका अभावका उपदेश किया॥ १॥

अब दूजा पूज्यपनाका मद ऐश्वर्यका मद सम्यग्दृष्टि नाहीं करै है जातें यो राज्य ऐश्वर्य आत्माका

स्वभाव नाहीं, कर्मका किया है विनाशीक है पराधीन है दुर्गतिका कारण है मेरा ऐश्वर्य तो अनंत चतुष्टयमय अक्षय अविनाशी अखंड सुखमय है तथा अनंतज्ञानदर्शनमय है अनंतशक्तिरूप है । तातैं ये कर्मकृत महाउपाधिरूप आत्माकूं क्लेशितकरि दुर्गति पहुंचानेवाले स्वरूपको भुलवानेवाले ऐश्वर्य आत्माका स्वरूप नाहीं। कलहका मूल वैरका कारण क्षणभंगुर परमात्मस्वरूपकूं भुलवानेवाले महादाहके उपजानेवाले दुःखस्वरूप हैं। अनेक जीवनिके घातक हैं। महाआरंभ महापरिग्रहमैं अंधकरि नरक पहुंचानेवाले हैं। इस ऐश्वर्यकरि मैं केते दिन पूज्य रहूंगा। क्षणमैं विध्वंस होय रंक होजाऊंगा। जगतमैं धनके लोभी तथा अज्ञानी लोक मोकूं ऊंचा मानै हैं सत्कार करैं है सो राज्यसंपदादिकानिका मेरे कै दिनका स्वामीपना है ? मृत्युका दिन नजीक आवै है मुझसारिखे अनंतानंत जीव संपदाकूं अपनी मानते नष्ट हो गये परमाणुमात्र हू परद्रव्य मेरा नाहीं है अन्य द्रव्य अन्यका कैसैं होय ? इस पर्यायमैं कर्मकृत परका संयोगरूप ऐश्वर्य है सो दान सन्मान शील सयंम परजीवनिका उपकारकरि प्रशंसा योग्य है। ऐश्वर्य पाय गर्वरहित वांछारहित समतासहित विनयवंतपना ही शुभगतिका कारण है। अन्यप्रकार मिथ्यादर्शनजनित मिथ्याभाव जीवकूं आपा भुलाय ऐश्वर्यमैं उलझाय नरक पहुंचावै है ऐसैं दृढ श्रद्धान करता सम्यग्दृष्टि पूज्यपनाका मद ऐश्वर्यका मद नाहीं करै । अर अन्य जीवनिकूं अशुभके उदयवशतैं दारिद्रकरि पीडित अशुभ सामग्री सहित देखि अवज्ञा तिरस्कार नाहीं करै है करुणा ही करै है ॥ २ ॥ अब सम्यग्दृष्टिके कुलका मद नाहीं होय ऐसा दिखावै हैं,—जगतमैं पिताके वंशकूं कुल कहै हैं। सम्यग्दृष्टि विचारै है मेरा आत्मा कोऊ करि उपजाया नाहीं है तातैं ज्ञानस्वरूप जो मैं, ताकै कुल ही नाहीं है । ज्ञाता दृष्टा स्वभाव ही मेरा कुल है अर जो अनादिकालका कर्मकरि पराधीन मैं इस पर्यायमैं जो उत्तम कुल पाया तो इसका गर्व करना महा अनर्थ है। पूर्व भवनिमैं मैं अनंतवार नारकी भया। अनंतवार सिंह व्याघ्र सर्पनिके उपज्या अनंतवार सूकर, गीदड़, गधा, ऊंट, मीढा, भैंसा इत्यादिकानिके कुलमैं उपज्या। अनेक

वार म्लेच्छनिके भीलनिके चांडाल चमारनिके धीवरनिक कषायीनिके कुलमें उपज्या । अर अनेकवार नाई, धोबी, तेली, खाती, लुहार, भडभूजा, चारन, भाट, डूम, भांडानिके कुलमें उपज्या हूं अर अनेक बार दरिद्रीनिके कुलमें उपज्या हूं । कदाचित् कोऊ शुभ कर्मका उदयतें ब्राह्मण क्षत्री वैश्यनिके कुलमें आय उपज्या तो अब कर्मका किया कुलमें आय गर्व करना सो बडा अज्ञान है । इस कुलमें मेरा केता दिन बास ? अर अनादिसूं इस कुल जातिमें मेरा वास था नाहीं, नवीन उपज्या हूं अर विनाशिकरि अन्यकुलमें पुण्यपापके आधीन उपजना होयगा । तातैं उत्तम कुल पावनेका फल तो ये है जो मोक्षमार्ग का साधक रत्नत्रयमें प्रवर्तन करना तथा अधम आचरणका त्याग करना । बहुरि ऐसा विचार करो जो मैं पुण्यका प्रभावकरि उत्तम कुल पाया है सो मोकूं नीच कुलके मनुष्य ज्यों अभक्ष्य भक्षण करना योग्य नाहीं । तथा कलह विसंवाद मारण ताडन गाली भण्डवचन बोलना योग्य नाहीं तथा जुवाकी क्रीडा वेश्यासेवन परधनहरणादिक करना योग्य नाहीं तथा निंद्यकर्मकरि आजीविका करना अयोग्य है । तथा हास्यवचन असत्यवचन छल कपटकरना योग्य नाहीं । अर उत्तम कुलकूं पायकरिकै हू जो निंद्य-कर्म करूंगा तो इस लोकमें धिक्कारयोग्य होय दुर्गतिका पात्र होऊंगा । ऐसैं कुलका मद सम्यग्दृष्टि नाहीं करै हैं ॥ ३ ॥ बहुरि माताकी पक्ष जाति है सो सम्यग्दृष्टि जीव जातिका गर्व नाहीं करै है । जातैं अनेकवार नीच जातिमें उपज्या बहुरि एकबार उच्च जातिमें उपज्या । अनंतवार नीच जातिमें अर एक बार उच्च जातिमें उपज्या ऐसैं नीच जाति अनंतबार पाई अर उच्च जाति हू अनंतवार पाई है । अब उच्च जातिके पायेका कहा गर्व करो हो । अनेकबार निगोदमें उपज्या तथा कूकरी सूकरी चांडाली भीलनी चमारी दासी वेश्यानिके गर्भमें अनेकबार जन्मधारण किया । अब नीच जातिमें उपज्या पुरुषका तिरस्कार तो कैसैं करो हो अर उच्चजातिकी माताके जन्म लेय मदोन्मत्त कैसैं भये हो ? या जाति तो पुण्यपापकर्मका फल है । सो रस देय निर्जरैगा जाति कुलमें ठहरना के दिनका है । तातैं जातिकुलको विना-

शीक अर कर्मके आधीन जानि उत्तम शील पालनेमैं क्षमा धारणमैं स्वाध्यायमैं परोपकारमैं दानमैं विनयमैं प्रवर्तन करि जातिका उच्चपणा सफल करो। जातिका मदकरि संसारमैं नष्ट मत होहु ॥ ४ ॥

अब बलका मद हू सम्यग्दृष्टिके नाहीं होय है—सम्यग्दृष्टि विचारै है—मैं आत्मा अनंत बलका धारक हूं सो कर्मरूप मेरा प्रबल वैरी मेरा बलकूं नष्टकरि बलरहित एकेंद्रिय विकलत्रयादिकमें समस्त बल आच्छादनकरि मेरी बलरहित ऐसी दशा करी जो जगतकी ठोकरांतैं कुचल्या गया चींथ्या गया। अब कोऊ वीर्यांतरायनामकर्मका किंचित क्षयोपशमतैं मनुष्य शरीरमैं आहारके आश्रयतैं किंचित् बलका उघाड हुआ है अब जो इस देहके आधार पराधीन बलतैं जो मैं तपश्चरणकरि कर्मनिका नाश करूं तो बल पावना सफल है। तथा इस बलके लाभतैं मैं व्रत उपवास शील संयम स्वाध्याय कायोत्सर्ग करूं तथा कर्मके प्रबल उदय होतैं आये हुए उपसर्ग परीसहनितैं चलायमान नाहीं होऊ। रोगदारिद्रादिक कर्मनिके प्रहारतैं कायर नाहीं होऊं, दीनताकूं प्राप्त नाहीं होऊं तो मेरा बल पावना सफल है। तथा दीन दरिद्री असमर्थनिके दुर्वचन श्रवण करके हू क्षमा ग्रहण करूं तो मेरी आत्माकी विशुद्धताका प्रभावतैं दुर्जय कर्मनिकूं मारि क्रम क्रम करि अनंतवीर्यकूं प्राप्त होय अविनाशी पद पाऊं। अर जो बलवान होय निर्बलनिका घात करूं अर असमर्थनिकी धन धरती स्त्रीनिकूं हरण करूं तथा अपमान तिरस्कार करूं तो सिंह व्याघ्र सर्पादिक दुष्ट तिर्यंचनिकी ज्यों परजीवनिके घातके अर्थ ही मेरे बल पावना रह्या, ताका फल दीर्घकाल नरकनिके दुःख तिर्यंचनिके दुःख भोग निगोदमैं अनंतानंत काल परिभ्रमण करूंगा। तातैं बलका मद समान मेरी आत्माका घातक अन्य नाहीं है ॥५॥ बहुरि ऋद्धि जो धन सम्पदा पावनेका ज्ञानीके गर्व नाहीं होय है सम्यग्दृष्टि तो धनादिकके परिग्रहका महाभार मानै है। ऐसा दिन कदि आवेगा जो समस्त परिग्रहका भारकूं छांडिकरि मेरी आत्मीक धनकी संभाल करूं। यो धन परिग्रहको भार महा बंधन है अर राग द्वेष भय संताप शोक क्लेश वैरं हानिकूं कारण है। मद उपजावनेवाला है। महा आरं-

भादिकका कारण है। दुःखरूप दुर्गतिका बीज है। परंतु करिये कहा? जैसें कफमें पडी माक्षिका आपकूं छुडावनेकूं समर्थ नाहीं अर कर्दमके समूहमें फंस्या वृद्ध अशक्त बलद निकलनेकूं समर्थ नाहीं अर कर्दमके द्रहमें पड्या हस्ती आपकूं निकासनेकूं समर्थ नाहीं होय है तैसें मैं हू इस घन कुटुंबादिकके फंदमैंसूं निकस्या चाहूं हूं तो हू आसक्तपनातैं तथा रागादिकका प्रबल उदयतैं तथा निर्वाहहोनेकी कठिनताके देखनेतैं कंपायमान हूं ऐसें अपमान भयादिकका करनेवाला परिग्रहतैं निकसनेका इच्छुक सम्यग्दृष्टि पराधीन विनाशीक दुःखरूप संपदाका गर्व नाहीं करै। याका संगमकी बडी लज्जा है जो मैं मेरी स्वाधीन अविनाशी आत्मीक लक्ष्मीकूं छांडि ज्ञानी होय करके भी इस खाक समान लक्ष्मीकूं नाहीं छांडूं हूं इस समान मेरी निर्लज्जता और कहा होयगी और हीनता कहा होयगी ॥ ६ ॥ अब सम्यग्दृष्टिकै तपका मद नाहीं होय है मद तो तपका नाश करनेवाला है अर जे तपके प्रभावकरि अष्टकर्मरूप वैरीनिकूं नष्ट करि परमात्मापनाकूं प्राप्त भये ते धन्य हैं। मैं संसारी आसक्त हुआ इंद्रियनिकूं भी विषयनितैं रोकनेकूं समर्थ नाहीं। कामका विजय किया नाहीं। निद्रा, आलस्य, प्रमादकूं हू जीता नाहीं। इच्छा रोकनेमें समर्थ नाहीं। पर्यायमें लालसा घटी नाहीं। जीवनेकी बांछा मिटी नाहीं। मरनेका भय दूर हुवा नाहीं। स्तवनमें, निंदामें, लाभमें, अलाभमें, समभाव हुवा नाहीं तितने हमारे काहेका तप? तप तो वह है जातैं कर्म वैरीनिके उदयकूं जीत शुद्धात्मदशामें लीन होय जाय। धन्य हैं जिनके वीतरागता प्रगट हुई है। ऐसा विचार करि संयुक्त सम्यग्दृष्टिकै तपका मद कैसें होय ॥ ७ ॥ बहुरि सम्यग्दृष्टिकै शरीरके रूपका गर्व नाहीं है। जातैं सम्यग्दृष्टि तो अपना रूपकूं ज्ञानमय देखै है। जिसमैं समस्त वस्तुकूं यथावत् अवलोकन करिये और यो चामडामय शरीरको रूप हमारो रूप नाहीं है। यो देहका रूप क्षण क्षणमैं विनाशीक है। एक दिन आहार पान नाहीं करै तो महाविरूप दीखै है। इस देहका रूप समय समय विनाशीक है अर जरा आजाय तदि महा सूगला भयंकर दीखने लगि जाय है अर रोग तथा दरिद्रता आजाय तदि कोऊके देखनेयोग्य स्पर्शने

योग्य नाहीं रहे। इस रूपका गर्व कौन ज्ञानी करै ? एक क्षणमैं अंध होजाय एक क्षणमैं काणा, कूबडा, लूला, टूटा, वक्रमुख, वक्रग्रीव, लंब-उदरादिक विड्रूप होजाय। इहां रूपका गर्व करना बडा अनर्थ है। सुन्दर रूप पाय शीलकूं मलीन मत करो। दरिद्री दुःखी रोगी अंगहीन कुरूप मलीन देखि तिनका तिरस्कार मत करो ग्लानि मत करो संसारमैं महा कुरूप मनुष्य तिर्यंचनिमैं महासूगला भयंकररूप अनेकवार पाया है तातैं रूपका गर्व मत करो ॥ ८ ॥ ऐसैं सम्यग्दर्शनका नाश करनेवाला अष्टमदनिका स्वप्नमैं भी जैसैं संसर्ग नाहीं होय तैसैं निरंतर करना योग्य है। अब जो पुरुष मदोन्मत्त होय अन्य धर्मात्माजनका तिरस्कार करै है तिसके दोषका उपजना दिखावता संता सूत्र कहै हैं—

स्मयेन योऽन्यानत्येति धर्मस्थान् गर्विताशयः। सोऽत्येति धर्ममात्मीयं न धर्मो धार्मिकैर्विना ॥ २६ ॥

अर्थ—गर्वरूप है अभिप्राय जाका ऐसा जो कोऊ पुरुष गर्वकरि धर्मके धारक अन्य धर्मात्मा पुरुषानिनै तिरस्कार करै है सो आपका धर्मका तिरस्कार करै है जातैं धर्मात्मा पुरुष विना धर्म नाहीं पाइये है। तातैं जो धन ऐश्वर्य रूपादिकका मद करिकैं धर्मात्माकूं तिरस्कार करै सो आपका धर्महीका तिरस्कार किया। क्योंकि धर्म तो कोऊ पुरुषके आधार है पुरुष विना है नाहीं ॥ २६ ॥

भावार्थ—संसारमैं धन ऐश्वर्य आज्ञाका बडा मद है मदकरि गर्विष्ठ होय जाय तादि देवगुरुधर्मका हू विनय भूलै है। ऐसा विचार करै है जो मन्दिर कहा वस्तु है, मैं अन्य नवीन बनाय लूंगा वा हमारा ही बनाया है अर जो ये तपस्वी त्यागी हैं सो हू हमारे ही आधीन भोजन वस्त्रकरि जीवै हैं अर यो धर्म हू धन खरचनेतैं ही होय है धन खरच्यांसूं ही ठाकुरजीकी पूजा प्रभावना होय है ऐसैं अवज्ञा करै है। तथा अनेक पापाचरण करतो हू कोऊ अभिमानके वश होय दान पूजा प्रभावनामैं पांच रुपया लगाय आपकूं धन्य मानै है तथा धन आज्ञा ऐश्वर्यका मदकरि अन्ध होय ऐसा मानै है जो जगतमैं धन ही बडा है जो धनवानके घर बडे बडे ज्ञानी शास्त्रनिके पारगामी काव्य श्लोकनिके बनावनेवाले नित्य आवै हैं बडे २

ज्ञानी शास्त्रनिके अर्थि धनवानानिकूं घरमें आप श्रवण कराता फिरे है। तथा अनेक कला चतुराईवाला धनवानके घर नित्य आवे हैं। तथा पूजन करनेवाला प्रभावना करनेवाला तथा भजनकरनेवाला अनेक धनवानका आश्रय लेय धनवानकूं श्रवण करावता फिरै है तथा उपवास व्रत बेला तेला करनेवाला त्यागी तपस्वी धनवाननिके ही घर भोजनकूं आवे हैं तथा मंत्र जापादिक हू धनवंत पुरुषनिके भले होनेकूं करै हैं। तातैं समस्त धर्म और समस्त गुण हमारे धनके आधीन है ऐसें धन ऐश्वर्यकरि अपना आत्माकूं ऊंचा मानता कृतकृत्य भये धर्मात्मानिकी अवज्ञा करै हैं जातैं आत्मज्ञानी परमार्थी परम संतोषीनिकूं तो देखे नाहीं जिनको चक्रीकी सम्पदा अर इंद्रलोककी सम्पदा हू दुःखरूप दीखे है वे पुरुष धनवन्तनिका समागम स्वप्नहूमें नाहीं चाहै हैं। अर जगतके अल्पपुण्यवाले निर्धन लोक गृहकुटुम्बके पालनेकी आशा करि संतप्त भये अपना अभिमान छांड धनवानके घर आये दयावान उपकारी जानिकरिकै तथा धर्मसूं प्रीति अर पावनेका फललेनेवाला जानि धनवानके द्वारे आवे हैं परंतु धनका मदकरि अन्ध होय ताके तो दान नाहीं होय है उपकार नाहीं करै है दयारहित निर्दयी होय है। केवल हमारा मान मत छीजो मत बिगाडो ऐसें मानता मरण करि बहुत ममता कृपणताका प्रभावकरि नरक तिर्यंचगतिमें बहुतकाल परिभ्रमण करै हैं। बहुरि जे धन सम्पदा पाय करिके मदरहित हैं तिनके ऐसा विचार है जो या धनसम्पदा हमारा रूप नाहीं हमारी नाहीं, कोऊ पूर्वकृत पुण्य फला है सो विनाशीक है अब इससंपदा करि किसीका उपकार करूं, दरिद्री लोगनिका संताप दूर करूं, करुणाकरि दुःखित जीवनिका उपकार करूं, तथा जिनधर्मके श्रद्धानी ज्ञानी तिनका दारिद्रादिक संताप मेटि निराकुल करूं। समस्त जन धनवानकी आशा करै हैं मैं दरिद्री होता तो मोतैं कौन उपकार चाहता तातैं मेरे शुभकर्म फल्या है तो आश्रितनिका भरण पोषण करूं बालक वृद्ध रोगी अनाथ विधवा अशक्तनिका उपकार करेहीं मेरा धन पावना सफल है तथा ऐसा कार्यमें लगाऊं जातैं जिनधर्मकी परिपाटी बहुतकाल प्रवर्तै, ज्ञानाभ्या-

सकी परंपरा चली जाय, नित्य पूजन ध्यान अध्ययन तप शील करि संसारके उद्धार करनेवाला कार्यका प्रवर्त्तन करै, ये धन पायेका फल है लाभ है जो पर उपकारमैं धन नाहीं लागैगा तो अवश्य विनाश होसी ही। किसीकी लार सम्पदा परलोक गई नाहीं। दान विना केवल पाप दुर्ध्यान कराय यह संपदा संसारमैं डबोय देगी। इस संपदा पाइबेका तो दान करना ही फल है। कोट्यां मनुष्य पूर्वे दान नाहीं दिया ते घर घर द्वारै अन्न मांगता फिरै है उदर भर भोजन नाहीं मिलै है। शरीर ऊपरी कपडा नाहीं मिलै है। दरिद्री दान हुवा परकी उच्छिष्टादिकनिमैं आशा करता फिरै है सो दानरहितताका तथा कृपणताका फल है। मनुष्यनिका पशुवनिका दासपना करता हू उदर नाहीं भर सकै है दान विना मोकूं आगामी कालमैं संपदा नाहीं प्राप्त होयगी दानमैं धर्मके स्थाननिमैं जो लगाऊंगा तो पावना सफल है मरण हुवा परलोक साथि जायगी नाहीं जहां धरी है तहां ही धरी रहैगी तातैं कोऊ जीवनिके उपकारमैं खरच होय तो सुफल है वाही संपदा हमारी है ऐसा विचारसहित सम्यग्दृष्टि है सो परोपकारके कार्यनिमैं लगावनेमैं उद्यमी रहै है। यद्यपि धर्मात्मा पुरुषनिके तो या संपदा ग्रहण करने योग्य ही नाहीं मोहकरि अंध करनेवाली है, आत्माकूं भुलावनेवाली है यामैं सम्यग्दृष्टि अपनापन ही नाहीं करै तथापि चारित्र मोहके उदयतैं राग नाहीं घटै तो परजीवनिके उपकारमैं तो अवश्य लगावना बहुत कष्टतैं उपजाई ताकूं उत्तम कार्यमैं लगावना छांडिकरि मरजानेमैं अपना कहा भला होयगा? या विचारि जे पापरहित जन हैं ते निर्धन रोगी दुःखित जननिकूं देखि अवज्ञा नाहीं करै हैं धन देय दुःख मेटै हैं। धर्ममैं प्रवर्त्तावनेवाले शुभ कार्यमैं खरचि करावनेवालेनिकूं देखि बडा आनंद मानै हैं। धर्म साधन करनेवालेनिके सामिल होय धनके भोगनेमैं आनन्द मानै हैं ते संपदा पावनेका फल लिया है अर आगैं परलोकमैं देवनिकी संपदा चक्रीनिकी संपदाकूं दानी ही प्राप्त होय हैं। अर आगैं जे संपदामैं रागी हैं तिनकूं संपदाका स्वरूप दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

यदि पापनिरोधोऽन्यसंपदा किं प्रयोजनं । अथ पापास्रवोऽस्त्यन्यसंपदा किं प्रयोजनं ॥ २७ ॥

अर्थ—सम्यग्दृष्टि विचारै है जो ज्ञानावरणादि, अशुभ पापप्रकृतिनिका आस्रव होना मेरै रुक गया तो इसतैं अन्य संपदाकरि मेरे कहा प्रयोजन है? अर जो हमारे पापका आस्रव होय है अर संपदा आवै है तो इस संपदा करि कहा प्रयोजन है ॥ २७ ॥

भावार्थ—इस जीवके जो त्यागरूप संयमरूप प्रवृत्तिकरि पापका आस्रव होना रुक गया तो अन्य जो इंद्रियनिके विषयनिकी संपदा राज्य ऐश्वर्य संपदा नाहीं भई तो इस संपदातैं कहा प्रयोजन है। आस्रव रुकनेतैं तो निर्वाणसंपदा अहमिंद्रलोककी स्वर्गलोककी संपदा प्राप्त होय है। या खाक धूलि समान क्लेशकी भरी क्षणभंगुर संपदाकरि कहा प्रयोजन है अर जो इस जीवकै त्यागरूप संयमरूप प्रवृत्तिकरि पापका आस्रव नाहीं है सो निर्बंध नाम संपदा बडी विभूति महालक्ष्मी है अर जो अन्याय अनीति कपट छल चोरी इत्यादिककरि मेरे पापका आस्रव निरंतर होय है अर धन संपदा प्राप्त हो गई तो इस करि कहा प्रयोजन है। शीघ्र ही मरणकरि अंतर्मुहूर्तमैं नरकका नारकी जाय उपजैगा । तातैं सम्यग्दृष्टिके तो पाप कर्मके आस्रव आवनेका बडा भय है अर पापका आस्रव रुक जानेकूं ही महासंपदाका लाभ मानै है। अर इस संसारकी संपदाकूं तो पराधीन दुःखकी देनेवाली जानि यामैं लालसा नाहीं करै हैं अर कदाचित् लाभांतराय भोगांतराय कर्मका क्षयोपशमतैं प्राप्त होय ताकूं पराधीन विनाशीक बंध करनेवाली जानि इस संपदामैं लिप्त नाहीं होय है। वर्तमानकी किंचित् वेदनाकूं मेटनेवाली मानि उदासीन भया कडवी औषधि ज्यों ग्रहण करै है संपदाकूं अपना हित जानि वांछा नाहीं करै है।

अब छह अनायतनका ऐसा स्वरूप जानना—कुदेव कुगुरु कुशास्त्र अर कुदेवका श्रद्धान वा सेवन करनेवाला अर कुगुरुकी सेवा करनेवाला अर कुशास्त्रका पढनेवाला ऐसैं छहप्रकार ये धर्मके आयतन कहिये स्थान नाहीं। इनतैं कदाचित् अपना भला होना नाहीं यातैं छहूं अनायतन हैं । इनका संक्षेप

स्वरूप ऐसा जानना—जामैं सर्वज्ञपना नाहीं वीतरागपना नाहीं जाकूं कामी क्रोधी तथा चोरनिका अर जारनिका शिरोमणि कहिये तथा जाकूं भोजनका इच्छुक मांसका भक्षक क्रोधी लोभी अपनी पूजा करावनेका इच्छुक जीवनिका संघारकरनेवाला अपने भक्तनिका उपकारक अभक्तनिका विनाशक कहैं जिनको बहुत मूढ लोग देवबुद्धिकरि पूजै हैं अर देवपनाका आयतन नाहीं उसमैं देवबुद्धि करना मिथ्या है। वे देवपनाका आयतन नाहीं हैं। बहुरि जो व्रतसंयमरहित अनेक पाखंड भेषका धारक तिनिमैं व्रत त्याग विद्याध्ययनादिक परिग्रहत्याग देखि करकैं तथा मंत्रजंत्रतंत्रविद्या ज्योतिष वैद्यक तथा शकुन-विद्या तथा इंद्रजालादिक विद्यानिकरि अनेक मूढ लोगनिकै मान्य पूज्य देख करि पाखंडी जिनआज्ञा-बाह्य भेषीनिमैं पूज्य गुरुपना नाहीं जानना। बहुरि खोटे मिथ्याशास्त्र हिंसाके पोषक तिनिमैं आत्महित नाहीं सो शास्त्र सम्यग्ज्ञानका आयतन नाहीं है। अर कुदेव कुगुरु कुशास्त्रनिके सेवन करनेवाले इनकी उपासनातैं अपना कल्याण माननेवालेनिकूं सम्यग्दृष्टि प्रशंसा नाहीं करै है। ऐसैं सम्यग्दर्शनके घात करनेवाले तीन मूढता अष्ट मद अष्ट शंकादिक दोष छह अनायतन इन पचीस दोषनिका परिहार करि व्यवहार सम्यग्दर्शनक धारणतैं निश्चयसम्यग्दर्शनकूं प्राप्त होहू। अर जाकै पचीस दोषरहित आत्माका श्रद्धानभाव है ताहीकै निश्चय सम्यग्दर्शन होनेका नियम है। जाकै बाह्यदोष ही दूर नाहीं होय ताकै अंतरंग हू सम्यग्दर्शन शुद्ध नाहीं होय है। अब सम्यक्त्वके भेद अर उत्पत्ति कैसे होय है सो कहै हैं,—

सम्यक्त्व तीन प्रकार है। उपशमसम्यक्त्व १ क्षयोपशमसम्यक्त्व २ क्षायिकसम्यक्त्व ३। संसारी जीवकै अनादिकालतैं अष्टकर्मनिका बंधन है तिनमैं मोहनीयकर्मका भेद जो दर्शनमोहनी ताका तीन भेद है। मिथ्यात्व १ सम्यग्मिथ्यात्व २ सम्यक्त्वप्रकृतिमिथ्यात्व ३ अर चारित्रमोहनीका भेद जो अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ ऐसैं सात प्रकृति सम्यक्त्वका घात करनेवाली हैं। इन सप्त प्रकृतिनिका उपशमतैं उपशमसम्यक्त्व होय है। अर इन सप्त प्रकृतिनिका क्षयतैं क्षायिकसम्यक्त्व होय है। इन ही सप्त

प्रकृतिनिका क्षयोपशमतैं क्षायोपशमिक सम्यक्त्व होय है याहीकूं वेदकसम्यक्त्व हू कहिये है । तहां अनादिमिथ्यादृष्टि जीवके पहली उपशमसम्यक्त्व ही होय है अर मिथ्यादृष्टिके मिथ्यात्व छूटि सम्यक्त्व होय ताकूं प्रथमोपशमसम्यक्त्व कहिये है । अर जो उपशमश्रेणीकी आदिमैं क्षयोपशमसम्यक्त्वतैं उपशमसम्यक्त्व होय सो द्वितीयोपशमसम्यक्त्व है । अब मिथ्यादृष्टिके मिथ्यात्वगुणस्थानतैं उपशमसम्यक्त्व कैसैं होय ताकूं श्रीलब्धिसारजीके अनुसार किंचित् लिखिये है,—

सम्यग्दर्शन उपजे है सो चारों गतिहीमैं अनादिमिथ्यादृष्टि वा सादिमिथ्यादृष्टिके उपजे है परंतु संज्ञीके ही उपजे है असंज्ञीके नाहीं उपजे । पर्याप्तके ही उपजे अपर्याप्तके नाहीं उपजे । मंद कषायीहीके उपजे तीव्रकषायीके नाहीं उपजे भव्यहीके उपजे अभव्यके नाहीं उपजे गुण दोषनका विचार सहित साकारोपयोग ज्ञानोपयोगयुक्तहीके उपजे दर्शनोपयोगीके नाहीं उपजे । जाग्रतअवस्थाहीमैं उपजे निद्राकरि अचेतके नाहीं उपजे सम्मूर्छनके नाहीं उपजे अर पांचमी करणलब्धिमैं उत्कृष्ट जो अनिवृत्तिकरण तिसका अंत समयमैं प्रथमोपशमसम्यक्त्व प्रगट होय है । अब पंचलब्धिके नाम ऐसे हैं—क्षयोपशमलब्धि १ विशुद्धिलब्धि २ देशनालब्धि ३ प्रायोग्यलब्धि ४ करणलब्धि ५ इन पांच लब्धि विना सम्यक्त्व नाहीं उपजे । तिनमैं चार लब्धि तो कदाचित् संसारी भव्य तथा अभव्यके भी होय जाय है परंतु करणलब्धि तो जाके सम्यक्त्व तथा चारित्रकूं अवश्य प्राप्त होना होय तिसहीके होय है । अब क्षयोपशमलब्धिकूं आगममैं ऐसैं कहैं हैं—जिस कालमैं ऐसा योग आ मिलै जो अष्ट कर्मनिमैं ज्ञानावरणादिक समस्त अप्रशस्त प्रकृतीनकी शक्ति जो अनुभाग सो समय समय प्रति अनंतगुणा घटता अनुक्रमकरि उदय आवै तिसकालमैं क्षयोपशमलब्धि होय है । जातैं उत्कृष्ट अनुभागका अनंतवां भाग परिणाम जे देशघातिस्पर्द्धक तिनका उदय होते हू उत्कृष्ट अनुभागका अनंत बहुभाग मात्र जे सर्वघातिस्पर्द्धक तिनकी सत्तामैं अवस्थिति सो उपशम ऐसा संयोगकी प्राप्ति जिस कालमैं होय सो क्षयोपशमलब्धि जाननी । प्रथम भई जो

क्षयोपशमलब्धि तिसके प्रभावतैं उपज्या जो जीवकै सातावेदनीय आदि शुभ प्रकृतिके बंधकूं कारण धर्मानुरागरूप शुभ परिणामनिकी प्राप्ति होय सो विशुद्धिलब्धि है। सो ठीक ही है जातैं अशुभकर्मनिका रस देय घटि जाय तदि जीवके संक्लेशपरिणामकी हानि होजाय तदि विशुद्धपरिणामनिकी वृद्धि होनी युक्त ही है। ऐसैं दूजी विशुद्धिलब्धि कही। अब देशनालब्धिका ऐसा स्वरूप जानना,—छहद्रव्य नवपदार्थनिके उपदेश करनेवाला आचार्यादिकनिका लाभ अर तिनिका उपदेशकी प्राप्ति अर तिनकरि उपदेश्या पदार्थनिका धारण करनेकी प्राप्ति सो देशनालब्धि है। नरकादिकनिमैं उपदेशदाता जहां नाहीं हैं तहां पूर्व जन्ममैं धारथा जो तत्त्वार्थ तिसके संस्कारका बलतैं सम्यग्दर्शन होय है। अब चौथी प्रायोग्यलब्धिका स्वरूप आगममैं जैसा है सो कहे हैं.—ए कही जे तीन लब्धिकरि संयुक्त जे जीव समय समय विशुद्धताकी वृद्धिकरि आयुकर्म विना सात कर्मनिकी अंतःकोटाकोटिसागरमात्र स्थिति अवशेष राखै तिसकालविषै जो पूर्वै स्थिति थी ताको एक कांडक घात करि छेदि, तिस कांडकके द्रव्यको अवशेष रही स्थिति विषै निक्षेपण करै है अर घातिकर्मनिका जो अनुभाग कहिए रस सो तो दारू अर लतारूप अवशेष रहै है। अर शैलास्थितिरूप नाहीं रहै है अरु अघातियानिका अनुभाग निंब कांजीर रूप रहै। विष अर हलाहलरूप नाहीं रहै है। पूर्वै जो अनुभाग था ताके अनंतका भाग दीए बहुभाग मात्र अनुभागकूं छेदि अवशेष रह्या अनुभागविषै प्राप्ति करै है। तिस कार्य करनेकी योग्यताकी प्राप्ति सो प्रायोग्यलब्धि है सो भव्यके वा अभव्यके भी समान होय है। बहुरि संक्लेशपरिणामी संज्ञी पंचेंद्रिय पर्याप्तके जो संभवै ऐसा उत्कृष्टस्थितिबंध अर उत्कृष्टास्थिति अनुभाग प्रदेशका सत्व होतैं जीवकै प्रथमोपशमसम्यक्त्व नाहीं ग्रहण होय है अर विशुद्ध क्षपकश्रेणीविषै संभवता ऐसा जघन्यस्थितिबंध अर जघन्यस्थितिअनुभागप्रदेशका सत्त्व होतहू प्रथमोपशमसम्यक्त्वकी प्राप्ति नाहीं होय है। प्रथमोपशमसम्यक्त्वके सन्मुख भया जो मिथ्यादृष्टि जीव सो विशुद्धताकी वृद्धिकरि बधता संता प्रायोग्यलब्धिका प्रथम समयतैं लगाय

पूर्वस्थितिके संख्यातवें भागमात्र अंतःकोटाकोटिसागरप्रमाण आयु विना सातकर्मनिका स्थितिबंध करै है। तिस अंतःकोटाकोटिसागरस्थितिबंधतैं पल्यका संख्यातवां भागमात्र घटता स्थितिबंध अंतर्मुहूर्तपर्यंत समानतालिए करै है। बहुरि तातैं पल्यका संख्यातवां भागमात्र घटता स्थितिबंध अंतर्मुहूर्तपर्यंत समानतालिये करै। ऐसैं क्रमतैं संख्यात स्थितिबंधापसरणानिकरि पृथक्त्व सौ सागर घटे पहला प्रकृतिबंधापसरणस्थान होय। बहुरि इसही क्रमतैं तिसतैं हू पृथक्त्व सौ सागर घटे दूजा प्रकृतिबंधापसरणस्थान होय। ऐसैं ही क्रमतैं इतना स्थितिबंध घटे एक एक स्थान होय ऐसैं प्रकृतिबंधापसरणके चौतीस स्थान होय हैं। यहां पृथक्त्व नाम सात-आठका है तातैं यहां पृथक्त्वसौसागर कहनेतैं सातसै वा आठसै सागर जानना। अब यहां कैसी कैसी प्रकृतीनिका बंधमैंतैं व्युच्छेद होय है(?) यहांतैं लगाय प्रथमोपशमसम्यक्त्वपर्यंत बंध नाहीं होय ऐसैं बंधापसरण हैं (?) तिन चौतीस बंधापसरणका वर्णन किए कथनी बहुत होजाय जो विशेष जान्या चाहे सो श्रीलब्धिसारग्रंथतैं जानहु। अर और हू विशेष प्रायोग्यलब्धिमैं जानना। अब पंचमी करणलब्धि सो भव्यहीकै होय अभव्यकै नाहीं होय है। अधःकरण १ अपूर्वकरण २ अनिवृत्तिकरण ३ ऐसैं तीन करण हैं। इहां करण नाम कषायनिकी मंदतातैं विशुद्धरूप आत्मपरिणामनिका है। तिनमैं अल्पअंतर्मुहूर्तप्रमाण काल तो अनिवृत्तकरणका है। यातैं संख्यातगुणा अपूर्वकरणका काल है। यातैं संख्यातगुणा अधःप्रवृत्तिकरणका काल है। सो हू अंतर्मुहूर्तप्रमाण ही है। जातैं इस अंतर्मुहूर्तके असंख्यात भेद हैं। इस अधःप्रवृत्तिकरणकालके विषै अतीत अनागत वर्तमान त्रिकालवर्ती नानाजीवसंबंधी इस करणके विशुद्धतारूप परिणाम असंख्यातलोकप्रमाण हैं, ते परिणाम अधःप्रवृत्तिकरणके जेते समय हैं तितनेमैं समान वृद्धि लिए समय २ वृद्धि लिए हैं। जातैं इस करणके नीचले समयके परिणामनिकी संख्या अर विशुद्धता ऊपरले समयवर्ती किसी जीवके परिणामनितैं मिले है। तातैं याका नाम अधःप्रवृत्तिकरण नाम है। याका परिणामनिकी संख्या शुद्धताके लौकिक दृष्टांत अलौकिक संदृष्टि गोमट्टसा-

रमें तथा लब्धिसारमें हैं तहांतैं विशेष जानना। इहां एता बडा विस्तार कैसें लिखा जाय ग्रंथ बहुत बडा होजाय। बहुरि अधःप्रवृत्तिकरणके परिणामनिका प्रभावतैं चार आवश्यक होय हैं एक तो समय समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धताकी वृद्धि होय है। दूजा स्थितिबंधापसरण होय है पूर्वें जेता प्रमाण लिए कर्मनिका स्थितिबंध होता था तिसतैं घटाय घटाय स्थितिबंध करै है। बहुरि सातावेदनीयकूं आदि देकर प्रशस्तकर्मप्रकृतिनिका समय समय अनंतगुणा बधता गुड खांड सर्करा अमृत समान चतुःस्थानलिए अनुभागबंध होय है। बहुरि असातावेदनीयादि अप्रशस्तकर्मप्रकृतिनिका अनंतगुणा घटता निंब कांजीर समान द्विस्थानालिये अनुभागबंध होय है। विष हलाहलरूप नाहीं होय है। ऐसें अधःप्रवृत्तिकरणके परिणामतैं चार आवश्यक होय हैं। अधःप्रवृत्तिकरणका अंतर्मुहूर्तकाल व्यतीत भये दूजा अपूर्वकरण होय है। अधःकरणके परिणामतैं अपूर्वकरणके परिणाम असंख्यात लोकगुणे हैं सो नानाजीवनिकी अपेक्षा है। एक जीवकी अपेक्षा एक समयमें एकही परिणाम होय है। एक जीवकी अपेक्षा तो जेते अपूर्वकरणके अंतर्मुहूर्त कालके समय हैं ते ते परिणाम हैं ऐसे ही अधःकरणके भी एक जीवके एक समयमें एक परिणाम ही होय है। नाना जीवनिकी अपेक्षा एक समयके योग्य असंख्यात परिणाम हैं ते अपूर्वकरणके परिणामभी समय समय सदृश चय करि वर्द्धमान हैं। इस अपूर्वकरणके परिणाम हैं ते नीचले समय संबंधी परिणामनितैं समान नाहीं हैं। प्रथम समयकी उत्कृष्ट विशुद्धतातैं द्वितीय समयकी जघन्य विशुद्धता हू अनंतगुणी है ऐसें परिणामनिका अपूर्वपणा है तातैं दूसरा करणकूं अपूर्वकरण कह्या है। अपूर्वकरणका प्रथम समयतैं लगाय अंतसमयपर्यंत अपने जघन्यतैं अपना उत्कृष्ट अर पूर्वसमयका उत्कृष्टतैं उत्तर समयका जघन्य क्रमतैं परिणाम अनंतगुणी विशुद्धतालिये सर्पकी चालवत् जानने। इहां अनुकृष्टि नाहीं है। अपूर्वकरणके पहले समयतैं लगाय यावत् सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनीका पूर्ण काल जो जिसकालमें गुण संक्रमण करि मिथ्यात्वको सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनीरूप परिणमावे है तिसकालका अंतसमय-

पर्यंत गुणश्रेणी १, गुणसंक्रमण २, स्थितिखंडन ३, अनुभागखंडन ४ ये चार आवश्यक होय हैं। बहुरि स्थिति बंधापसरण है सो अधःकरणका प्रथम समयतैं लगाय तिस गुणसंक्रमण पूर्ण होनेका कालपर्यंत होय है। यद्यपि प्रायोग्यलब्धितैं ही स्थितिबंधापसरण होय है तथापि प्रायोग्यलब्धिके सम्यक्त्व होनेका अनवस्थितिपना है नियम नाहीं तातैं ग्रहण नाहीं किया। बहुरि स्थितिबंधापसरणका काल अर स्थितिकांडकोत्करणका काल ए दोऊ समान अंतर्मुहूर्तमात्र हैं। तहां पूर्वें बांध्या था ऐसा सत्तामैं कर्मपरमाणुरूप द्रव्य तामैंसूं काढि जो द्रव्यगुणश्रेणीमैं दिया ताका गुणश्रेणीका कालमैं समय समय प्रति असंख्यात गुणा अनुक्रमलिये पंक्तिबंध जो निर्जराका होना सो गुणश्रेणीनिर्जरा है॥ १॥ बहुरि समय समय प्रति गुणकारका अनुक्रमतैं विवाक्षित प्रकृतिके परमाणु पलट करि अन्यप्रकृतिरूप होय परिणमे सो गुणसंक्रमण है॥ २॥ बहुरि पूर्वें बांधी थी ते सत्तामैं तिष्ठती कर्मप्रकृतीनिकी स्थितिका घटावना सो स्थितिखंडन है॥ ३॥ बहुरि पूर्वें बांधा था ऐसा सत्तामैं तिष्ठता अशुभ प्रकृतीनिका अनुभागका घटावना सो अनुभागखंडन कहिये॥ ४॥ ऐसें चार कार्य अपूर्वकरणविषै अवश्य होय है। अपूर्वकरणके प्रथमसमयसंबंधी प्रशस्त अप्रशस्त प्रकृतीनिका जो अनुभागसत्व है तातैं ताके अंतसमयविषै प्रशस्तप्रकृतीनिका अनंतगुणा बधता अर अप्रशस्तप्रकृतिनका अनंतगुणा घटता अनुभागसत्व होय है। इहां समय समय प्रति अनंतगुणी विशुद्धता होनेतैं प्रशस्तप्रकृतीनका अनंतगुणा अर अनुभागकांडकका महातमकरि अप्रशस्तप्रकृतीनका अनंतवें भाग अनुभाग अंतसमयविषै संभवै है। इन स्थितिखंडादि होनेके विधानका कथन बहुत विस्ताररूप लब्धिसारतैं जानना इहां संक्षेपमात्र प्रकरणके वशतैं जनाया है। ऐसे अपूर्वकरणविषै कहे जे स्थितिखंडादि कार्य विशेषतैं तीसरा अनिवृत्तिकरण विषय भी जानना। विशेष इतना इहां समान समयवर्ती नाना जीवनिके सदृशपरिणाम ही हैं। जातैं जितने अनिवृत्तिकरणके अंतर्मुहूर्तके समय हैं तितने ही अनिवृत्तिकरणके परिणाम हैं तातैं समय २ प्रति

एक २ ही परिणाम है अर इहां जो स्थितिखंड अनुभागखंडादिकका प्रारंभ और ही प्रमाणलिये होय है। जातैं अपूर्वकरणसंबंधी है स्थितिखंडादिक जिनका ताकैं अंतसमयविषै ही समाप्तपना भया। इहां अंतकरणादिविधि हैं सो लब्धिसारजीतैं जाननी।

इहां प्रयोजन ऐसा है जो अनिवृत्तिकरणका अंतसमयविषै दर्शनमोहनीय अर अनंतानुबंधी-चतुष्क इनके प्रकृतिस्थितिप्रदेशअनुभागानिका समस्तपने उदय होनेकी अयोग्यतारूप उपशम होनेतैं तत्त्वार्थनिका श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शनकूं पाय औपशमिकसम्यग्दृष्टि होय है। तहां प्रथम समयविषै द्वितीय स्थितिविषै तिष्ठता मिथ्यात्वके द्रव्यको स्थितिकांडक अनुभागकांडक घात विना गुणसंक्रमणका भाग देय मिथ्यात्व सम्यङ्मिथ्यात्व सम्यक्त्वमोहनीरूपकरि मिथ्यात्वके द्रव्यकूं तीन प्रकार करै है। भावार्थ—अनादिकालका दर्शनमोहनी एकरूप था तिसका द्रव्य करणानिके प्रभावतैं तीनप्रकार शक्तिरूप न्यारे २ होय तिष्ठै है। ऐसैं मिथ्यादृष्टिके सम्यक्त्व होनेका कारण पंचलब्धिनिका संक्षेपतैं स्वरूप जनाया। इस उपशम सम्यक्त्वका जघन्य तथा उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त ही काल है। अंतर्मुहूर्त पूर्ण भए पाछे नियमतैं तीन दर्शनमोहनीका प्रकृतीनिमैं एकका उदय होय है। तहां जो सम्यक्त्वमोहनीका उदय होय तो उप-शमसम्यक्त्व छूटि जीवके वेदकसम्यक्त्व होय है। सो सम्यक्त्वमोहनीका उदयतैं वेदकसम्यग्दृष्टि चल मल अगाढरूप तत्वकूं श्रद्धान करै है। सम्यक्त्वमोहनीका उदयतैं श्रद्धान विषै चलपना होय है तथा मल जो अतिचारसहित होय है वा शिथिलश्रद्धान रहै है। इस वेदक सम्यक्त्वहीकूं क्षयोपशमसम्यक्त्व कहिए है। जातैं दर्शनमोहनीके सर्वघाती स्पर्द्धकानिका उदयका अभाव सो ही इहां क्षय है। अर देशघातिस्प-र्द्धकरूप सम्यक्त्वप्रकृतिका उदय होतैं बहुरि तिस सम्यक्त्वमोहनीहीके वर्तमानसमयसंबंधीते ऊपरिके निषेक उदयकूं नाहीं प्राप्त भए तिनसंबंधी स्पर्द्धकनिका सत्तामैं अवस्थितिरूप है लक्षण जाका ऐसा उपशम होतैं क्षयोपशमसम्यक्त्व होय है इसहीकूं सम्यक्त्वप्रकृतिके उदयका वेदन जो अनुभवन तातैं वेदकसम्यक्त्व

कहिए है। बहुरि जो इस उपशमसम्यक्त्वका अंतर्मुहूर्त काल वीते पीछें जो सम्यङ्मिथ्यात्वका उदय होय तो मिश्रगुणस्थानी होजाय ताकै तत्त्व अतत्त्व दोऊनका मिल्याहुवा श्रद्धान होय है। अर जो मिथ्यात्वका उदय होजाय तो मिथ्यादृष्टि विपरीतश्रद्धानी होय। जैसैं ज्वरकरि पीडित पुरुषकूं मिष्टभोजन नाहीं रुचै, तैसैं ताकूं अनेकांतरूप वस्तुका सत्यार्थस्वरूप तत्त्व नाहीं रुचै। तथा रत्नत्रयरूप मोक्षका मार्ग नाहीं रुचै। तथा दसलक्षणरूप स्वपरकी दयारूप धर्म नाहीं रुचै अर जो उपशमसम्यक्त्वका अंतर्मुहूर्तकालमैं ते जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली अवशेष रहै जो अनंतानुबंधी क्रोधमानमायालोभमैंतैं कोऊ उदय होय जाय तो सम्यक्त्वतैं छूटि सासादन नाम गुणस्थान पाय जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली सासादन नाम पाय नियमतैं मिथ्यादृष्टि होय है। ऐसैं उपशम सम्यक्त्वका अंतर्मुहूर्तकाल पूर्ण भए पाछैं चार मार्ग हैं। जो सम्यक्त्वमोहनीका उदय होय जाय तो क्षयोपशम सम्यक्त्वी होय। अर मिश्रप्रकृतिका उदय होय तो मिश्रगुणस्थानी होय। अर मिथ्यात्वका उदय होय तो नियमतैं मिथ्यात्वी होय। अनंतानुबंधी चार कषायमैंतैं कोऊ एकका उदय होय तो सासादनगुणस्थानी नाम पाय पाछे मिथ्यादृष्टि होय है। अब क्षायिकसम्यक्त्व होनेका संक्षेप कहै हैं—दर्शनमोहके क्षयतैं क्षायिक सम्यक्त्व होय है। अर दर्शनमोहका क्षपावनेका आरंभ करै सो कर्मभूमिका मनुष्य ही करै भोगभूमिका मनुष्य नाहीं करै। समस्त देव नारकी अर तिर्यंचनिकै क्षायिकसम्यक्त्व आरंभ नाहीं होय है अर कर्मभूमिका मनुष्य आरंभ करै सो हू तीर्थंकर वा अन्यकेवली श्रुतकेवलीके पादमूलके नजीक तिष्ठता होय सो ही दर्शनमोहकी क्षपणाका आरंभ करै है। जातैं केवली श्रुतकेवलीकी निकटता विना ऐसी विशुद्धता नाहीं होय है। यहां अधःकरणका प्रथमसमयसौं लगाय जेते मिथ्यात्वका अर मिश्रमोहनीका द्रव्यकूं सम्यक्त्वप्रकृतिरूप होय संक्रमण करै तावत् अंतर्मुहूर्तकालपर्यंत दर्शनमोहनीकी क्षपणाका आरंभ काहिए है तिस आरंभकालके अनंतरवर्ती समयतैं लगाय क्षायिकसम्यक्त्वके ग्रहणके प्रथम समयमैं पहिले निष्ठापक होय हैं। सो

जहां प्रारंभ किया था कर्मभूमिका मनुष्य वेही निष्ठापक होय तथा सौधर्मादिक कल्प वा कल्पातीत अहमिंद्रानेविषे वा भोगभूमिके मनुष्यातिर्यंचनिविषे वा घम्मानाम नरकपृथ्वीविषे भी निष्ठापक होय हैं। जातैं पूर्वैं बांधी है आयु जानै ऐसा कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि मरकरि च्यारों गतिनविषे उपजै है। तहां क्षपणाकूं पूर्ण करै है। अब अनंतानुबंधी क्रोधमानमायालोभ अर मिथ्यात्व सम्यङ्मिथ्यात्व सम्यक्त्व इन तीनकी कैसैं क्षपणा करै है सो कहै हैं। कोऊ मनुष्य वेदक सम्यग्दृष्टि असंयत वा देशसंयत वा प्रमत्त वा अप्रमत्त इन चार गुणस्थाननिमैंतैं कोऊ एक गुणास्थानमैं तिष्ठता पूर्वैं तीन करणकी विधि करकैं अनंतानुबंधी क्रोधमानमायालोभके उदयावलीमैं तिष्ठते निषेकानिकूं छांडि अर उदयावली बाह्य तिष्ठते समस्त निषेकानिकूं विसंयोजन करता अनिवृत्तिकरणके अंतके समयविषे समस्त अनंतानुबंधीके द्रव्यकूं द्वादश कषाय अर नव नोकषायरूप परिणमन करावे है सो अनंतानुबंधीका विसंयोजन है। यहां हू विसंयोजनमें गुणश्रेणी अर स्थितिकांडघातादिक बहुत विधि हैं। अनंतानुबंधीका विसंयोजन किये पीछे अंतर्मुहूर्तकाल विश्रामकरि अन्य क्रिया नाहीं करि ता पाछे बहुरि तीन करण करि अनिवृत्तिकरणका कालविषै मिथ्यात्वमिश्रसम्यक्त्वमोहनीको क्रमतैं नष्ट करै है। सो इन करणानिके सामर्थ्यतैं जो जो कर्मनिका स्थिति अनुभागनिका घात होनेका विधान है सो लब्धिसारतैं जानहु। ऐसे सप्त प्रकृतिनका नाशकरि क्षायक सम्यक्त्वी होय है। ऐसैं तीनप्रकार सम्यक्त्व होनेका विधान संक्षेपते वर्णन किया। अब सम्यग्दृष्टिके अन्य हू अष्ट गुण प्रकट होय हैं तिनकरि आपकै वा अन्यकै सम्यक्त्व जाना जाय है। संवेग १, निर्वेद २, आत्मनिन्दा ३, गर्हा ४, उपशम ५, भक्ति ६, वात्सल्य ७, अनुकंपा ८ ये आठ जाके होय उसके सम्यग्दर्शन होय है। संवेग कहिये धर्ममैं अनुराग ताके होय ही जातैं संसारी मिथ्यादृष्टिका अनुराग तो देहसूं लगि रह्या है। जो मेरा देह उज्वल रहै बलवान् रहै पुष्ट रहै तथा देहसूं ममता करि अभक्ष भक्षणकरि आनन्द मानै है। अन्यायके विषै शृंगारादिक करि देहहीकूं भूषित करै है पापी-

निका संबंधमें आनन्द माने है तथा विकथामें राग करे है तथा स्त्रीपुत्रधनसंपदामें नगरदेशराज्यऐश्वर्यमें अनुराग करे है। सम्यग्दृष्टिके देहादिकनिमें आत्मबुद्धि नाहीं तातें दशलक्षणधर्ममें अनुराग करे है अर सम्यग्दृष्टिका अनुराग तो धर्मात्मा पुरुषनिमें धर्मकी कथामें धर्मके आयतननिमें होय है। ऐसा संवेगगुण है सो सम्यग्दृष्टिके होय ही है ॥ १ ॥ बहुरि सम्यग्दृष्टिके पंच परिवर्तनरूप संसारतें अर कृतघ्नदेहतें अर दुर्गतिके लेजानेवाले भोगनितें विरक्तपना नियमतें होय ही सो दूजा गुण निर्वेद प्रगट होय है ॥ २ ॥ बहुरि अपना प्रमादीपना करि तथा असंयमभावकरि तथा सांसारिक पापमें प्रवृत्तिकरि निरंतर परिणाममें निंद्यपनाका चिंतवन जो ऐसा दुर्लभ मनुष्यपनाकी एक क्षण भी धर्मका आश्रय विना जाय है सो बडा अनर्थ है ऐसें अपने परिणामनिकरि अपना दोष सहित प्रवर्तनकूं विचारि अपने मनमें अपनी निंदा करना सो तीजा आत्मनिंदानाम गुण है ॥ ३ ॥ बहुरि जो अपने गुरु होंय तथा बहुज्ञानी साधर्मी होय तिनके निकट विनय सहित अपने निंद्य दोषादिक प्रगट करना सो चौथा सम्यग्दृष्टिका गर्हानाम गुण है ॥ ४ ॥ बहुरि जो क्रोधमानमायालोभकी सम्यग्दृष्टिके मंदता होय ही है। राग द्वेष काम उन्माद वैरादिक सम्यग्दृष्टिके अपना घातक जानि मंद होय ही है सो ही उपशमगुण है ॥ ५ ॥ बहुरि सम्यग्दृष्टिके पंच परमेष्ठीमें तथा जिनवाणीमें जिनेंद्रके प्रतिबिंबमें दशलक्षणधर्ममें धर्मके धारक धर्मात्मानिमें तपस्वीनिमें अनेक गुण स्मरण करि गुणनिमें अनुराग करना सो सम्यग्दृष्टिके भक्तिनाम छट्टा गुण होय ही है ॥ ६ ॥ बहुरि सम्यग्दृष्टिके धर्मात्मामें प्रीति होय ही जैसें दरिद्रीनिके धनकूं देखि प्रीति आनंद प्राप्त होय तैसें धर्मात्माकूं सम्यग्दृष्टिकूं वा सम्यग्ज्ञानीके धर्मके व्याख्यानकूं श्रवण करि वा देखने करि सम्यग्दृष्टिके अत्यन्त आनंद प्रगट होना सो वात्सल्यनामा सप्तमगुण है ॥ ७ ॥ बहुरि सम्यग्दृष्टिके षट्कायके जीवनिकी दया प्रगट होय ही है। पर जीवनके दुःख देख अपना परिणाम कंपायमान होजाय जातें आपमें दुःख आया तथा ताके दुःख मेटजाने प्रति परिणामका होना सो सम्यग्दृष्टिके अनुकंपागुण प्रगट

होय है ॥ ८ ॥ ऐसैं और हू अपरिमाणगुण सम्यग्दृष्टिके स्वयमेव प्रगट होय हैं जातैं जिनके सत्यार्थ श्रद्धान ज्ञान प्रगट होगया तिनके समस्त बाह्य अभ्यंतर गुण ही होय परिणमे हैं । अब जो जीव सम्यग्दर्शनसंयुक्त है तांहीके महान्पना है ऐसा कहनेकूं सूत्र कहै हैं:—

सम्यग्दर्शनसंपन्नमपि मातङ्गदेहजं । देवा देवं विदुर्भस्मगूढाङ्गारान्तरौजसं ॥ २८ ॥

अर्थ—सम्यग्दर्शनकरि संयुक्त चांडालके देहतैं उपज्या जो चांडाल ताहि हू देवा कहिये गणधरदेव जे हैं ते देव कहै हैं। जैसैं भस्मकरि दबा जो अंगार ताकै अभ्यंतर तेज है। भावार्थ—सम्यग्दर्शनकरि सहित चांडाल है ताकूं हू भगवान गणधरदेव हैं ते देव कहै हैं। जातैं यो हाडमांस मय देह चांडालतैं उपज्या तातैं देह चांडाल है। परंतु सम्यग्दर्शन जाकै हुआ ऐसा आत्मा तो दिव्य गुणनिकार दिपै है तातैं मनुष्य शरीरकूं भी उत्तमगुणका प्रभावकरि देव कह्या है। जैसैं भस्मकरि आच्छादित अंगारा अभ्यंतर झकझकाट करता तेजकूं धारण करै है तैसैं सम्यग्दृष्टि हू मलीनदेहके अभ्यंतर गुणनिकरि दिपै है तातैं स्वामी श्रीसमंतभद्रजी कहै हैं, जो सम्यग्दृष्टिकी महिमा हमारी रुचिकरि नाहीं कहै हैं भगवानका द्वादशांगरूप आगममैं गणधरदेव सम्यग्दृष्टि चांडालकूं हू देव कहै हैं। जातैं यह देह तो महामलीन मलमूत्रका भर्या हाडमांसचाममय जाके नवद्वारनितैं निरंतर दुर्गंध मल झरै हैं ऐसा अपवित्र मलीन हू साधुनका देह है सो रत्नत्रयका प्रभावकरि इंद्रादिक देवनिके दर्शन करनेयोग्य स्तवन करनेयोग्य नमस्कार करनेयोग्य होय है। गुण विना चामडाका कफमलमूत्रका भर्या मलीनकूं कौन बन्दना करै, पूजै, अवलोकन करै। यातैं सम्यग्दर्शनहीतैं बंदने पूजने योग्य है। अब धर्मअधर्मका फल प्रगट करता सूत्र कहै हैं—

श्वापि देवोऽपि देवः श्वा जायते धर्मकिल्बिषात् । कापि नाम भवेदन्या संपद्धर्माच्छरीरिणां ॥ २९ ॥

अर्थ—धर्मके प्रभावतैं श्वान जो कूकरो सो हू स्वर्गलोकमैं देव जाय उपजै है । अर पापके प्रभावतैं

स्वर्गलोकका महान् ऋद्धिधारी देव हू पृथ्वीमें कूकरो आय उपजे है। अर प्राणीनिके धर्मका प्रभावतैं और हू वचनद्वारे नाहीं कही जाय ऐसी अहिमिंद्रनिकी संपदा तथा अविनाशी मुक्तिसंपदा प्राप्त होय है। भावार्थ—मिथ्यात्वका प्रभावतैं दूजा स्वर्गपर्यंतका देव एकेंद्रियनिमें आय उपजै है अनंतानंतकाल त्रसस्थावरनिमें परिभ्रमण करता फिरै है। अर बारमा स्वर्गपर्यंतका देव मिथ्यात्वके प्रभावतैं पंचेंद्री तिर्यंचनिमें आय प्राप्त होय है। तातैं मिथ्यात्वभाव महाअनर्थकारी जानि सम्यक्त्वहीमें यत्न करना योग्य है। अब कुदेवादिक सम्यग्दृष्टिके वंदनेयोग्य नाहीं है ऐसा दिखावता सूत्र कहै हैं—

भयाशास्नेहलोभाच्च कुदेवागमलिङ्गिनां। प्रणामं विनयं चैव न कुर्युःशुद्धदृष्टयः ॥ ३० ॥

अर्थ—शुद्ध सम्यग्दृष्टि हैं ते भयतैं आशातैं स्नेहतैं लोभतैं कुदेवनिकूं कुआगमकूं कुलिंगीनिकूं प्रणाम नाहीं करै विनय नाहीं करै। जे काम, क्रोध, भय, इच्छा, क्षुधा तृषा, राग, द्वेष, मद, मोह, निद्रा, हर्ष, विषाद, जन्म, मरणादि दोषनिकरि संयुक्त हैं ते समस्त कुदेव हैं। तिनकी व्याप्ति जगतमें पंचमकालके प्रभावतैं प्रगट बहुत है। एक सर्वज्ञ वीतराग विना समस्त कुदेव हैं। अर हिंसाके पोषक रागीद्वेषी मोहनि-करि प्रकाश्या पूर्वापरदोषसहित विषय कषाय आरंभकूं पुष्ट करनेवाले प्रत्यक्ष अनुमान प्रमाणकरि दूषित ऐसे शास्त्र कुआगम हैं अर जो हिंसादिक पंचपापनिका त्यागी आरंभपरिग्रहरहित देहके संबंधमें निर्म-मत्व उत्तमक्षमादि दशधर्मके धारी दोष टारि अजाचीकवृत्तिसहित दीनतारहित निर्जनस्थानमें वसते ध्यान अध्ययनमें निरंतर प्रवर्त्ततो पांच इंद्रियनिके विषयांका त्यागी षट्कायका जीवांका विराधनाका त्यागी एकबार मौनतैं परका दिया रसनीरस आपके निमित्त नाहीं किया ऐसा भोजन रत्नत्रयका सह-कारी कायकी रक्षाके निमित्त ग्रहण करता ऐसा नग्नमुनिराजका लिंग (भेष) तथा एक वस्त्रका धारक तथा कोपीनधारक क्षुल्लकका लिंग (भेष) तथा तीजा अर्जिकाका लिंग (भेष) एकवस्त्रका

१ यह पंक्ति हस्तलिखित प्रतिमें नहीं है।

धारक इन तीन लिंग विना जो अन्य अनेक लिंग (भेष) धारण करै हैं ते समस्त कुलिंगी हैं एक मुनिका लिंग तथा कोपीन धारक छुल्लक तथा वस्त्रकी धारनहारी अर्जिका इन तीन भेष सिवाय समस्त भेषीनिकूं सम्यग्दृष्टि विनय नमस्कार नाहीं करै है। ऐसैं कुदेव कुशास्त्र कुलिंगीनिकूं भय आशा स्नेह लोभतैं सम्यग्दृष्टि नमस्कार नाहीं करै विनय नाहीं करै। भावार्थ—सम्यग्दृष्टि है सो कुदेवकूं भयतैं नमस्कार नाहीं करै। जो यो देव हैं याकूं राजादिक हजारां मनुष्य पूजैं हैं जो याकूं बंदना नाहीं करूंगा तो यो देव रोष करि मेरा बिगाड करैगा संपदा हरैगा तथा स्त्रीपुत्रादिकको घात करैगा। तथा कदाचित् याका द्वेषतैं मेरे रोग विद्यमान है दुःख विद्यमान है तथा द्वेषकरि अब मेरे हानि करैगा रोग करैगा तथा इस क्षेत्रमैं समस्त लोक पूजै हैं तथा हमारे कुलमैं बडा पिता तथा पिताका पिता माता भाई बंधु पूजते आवै हैं अब मैं इनकी वंदना पूजा उठादूंगा अर कदाचित् मेरा घर अनेक पुत्रपौत्रादिक लक्ष्मीकरि भऱ्या है जो किसीका मरण वा धनहानि तथा रोगादिक होजाय तो मोकूं दूषण आवै अर मेरे बडा दुःख खडा हो जाय तो बडा अनर्थ है अर सारा लोक हू ऐसैं कहै हैं यो देवता आगैं नाहीं माननेवालेनिकूं अन्धा कर दिया था। याकी पूजा बोलारी सत्कारतैं अनेकनिके रोग दूरि करि दिये। तथा या जगन्नाथ स्वामी है याकी पुरीमैं नाई धोबी मीणा खटीक चमार परस्पर सामिल होय औंठि (उच्छिष्ट) भक्षण करै हैं याकी अवज्ञा करे ताके कोढ निकाल देहै ऐसा भय दिखावै तथा अंधेनिकूं आखैं दी हैं संपदा दी है याकी निंदाकरि संपदा भ्रष्ट होगई थी तथा आगैं यह शनीश्चर देव रोष करि विक्रमादीत राजानै चोरंग्यो करा दियो छो ऐसैं अनेक देवी भैरौं क्षेत्रपाल हनुमान गणेश दुर्गा चंडी सूर्यादिक ग्रह योगिनी जक्ष इत्यादिकनिका भय मानि सम्यग्दृष्टि इनकूं नमस्कार विनयादिक नाहीं करै। बहुरि कुछ पुत्र संपदा आजीविका राज्य धन ये देवता देगा ऐसा आशा करि हू बंदना नाहीं करै। तथा हमारे माहिं इस देवताका स्नेह है हमारे तो दुःख आजाय तदि हमारा रक्षक तो देवता ही है ऐसा स्नेहतैं हू बंदना

नाहीं करै। बहुरि लोभतैं हू कुदेवनिका सत्कार बंदना नाहीं करै जो मैं तो जिस दिनतैं आराधना थी देवताकी करूं हू तिस दिनतैं मेरे लाभ है उचता है ऐसैं लाभका कारण संकल्पकारि कुदेवनिका आराधन नाहीं करै। तथा राजाका भयतैं पिता माताका भयतैं कुटुंबका भयतैं तथा लोकलाजतैं कुदेवनिकूं वंदना नाहीं करै। ऐसैं ही जो शास्त्र राग द्वेष हिंसाका पुष्ट करनेवाला तथा शृंगारकथा युद्धकथा स्त्रीकथादिक विकथाका प्ररूपक एकांतरूप वस्तुकूं कहै यज्ञ होम मंत्र यंत्र तंत्र वशीकरण मारण उच्चाटनादिक तथा महाहिंसाके आरंभके कहनेवाले तथा कुदेव कुधर्मकी आराधना करनेवाले संसारमैं उलझावनेवाले शास्त्रनिकूं सम्यग्दृष्टि बंदना सत्कार नाहीं करै है। तिसके कथनकू रचनाकूं प्रशंसा नाहीं करै संसारमैं उलझावनेवाला शास्त्रका व्याख्यानादिकर प्रकाश नाहीं करै। भय अर आशास्नेहलोभतैं खोटा आगमका प्रकाश नाहीं करै। जो मैं मेरा बाप दादा आदिक करि मेरे इन शास्त्रनिकरि बहुत द्रव्यका उपार्जन हुआ है तथा इस शास्त्रतैं मैं हू बहुत धन उपार्जन करूं तथा मेरी प्रतिष्ठा बधाऊं तथा जगतके मान्य होजाऊं तथा सबके ऊपरि होय राजादिकनै अपने सेवक करूं ऐसा लोभते कुशास्त्रनिका सेवन सम्यग्दृष्टि नाहीं करै तथा जो शास्त्रसेवन नाहीं करूंगा तो मेरी आजीविका नष्ट हो जायगी तथा समस्त लोकनिमैं मेरी मान्यता पूज्यता घट जायगी ऐसा भयतैं कुशास्त्रसेवन नाहीं करै। तथा इस शास्त्रके वांचने पढनेमैं बड़ा रस है मन रंजायमान हो जाय है बडी रसीली कथा है तथा लोकनिनैं रंजायमान करनेवाला है ऐसा स्नेह करि हू कुशास्त्रनिका आराधन सम्यग्दृष्टि नाहीं करै है। बहुरि कोऊ आशा करकै हू सम्यग्दृष्टि कुशास्त्रनिका सेवन नाहीं करै है। जो इसतैं देवता वश हो जायगा वा विद्या सिद्ध हो जायगी। इत्यादिक इस लोकसंबंधी आशा करकै हू कुशास्त्रनिकी प्रशंसा वंदना नाहीं करै है। बहुरि सम्यग्दृष्टि है सो कुलिंगीनिकूं हू भय आशा स्नेह लोभतैं प्रणाम वंदना प्रशंसा नाहीं करै है। जो यो तपस्वी है वा विद्यावान है तथा राजमान्य है लोकमान्य है तथा इसमें दृष्टि मुष्टि

मारण उच्चाटनादिक अनेक शक्ति है मेरा विगाड मत कदाचित् कर द्यो ऐसा भयतैं प्रणामादि नाहीं करै। तथा यो करामाती है वा विद्यावान है यातैं कोऊ विद्या सीखनी है तथा यो राज्यमान्य है यातैं हमारा कार्य लेना है ऐसा लाभतैं हू पाखंडीनिकूं वंदना नमस्कार सम्यग्दृष्टि नाहीं करै। तथा यो भेषधारी मोकूं रसायण देनी करी है तथा एक औषधि यासूं वाकिफ करनी वा सीखनी है तथा व्याकरणविद्या तथा न्याय तथा ज्योतिषविद्या मोकूं सीखनी है। यातैं याका सेवन है इत्यादिक आशा लोभ करी पाखंडी विषय आरंभी परिग्रहधारीकूं सम्यग्दृष्टि नमस्कार नाहीं करै ताकी प्रशंसा नाहीं करै ताकूं सत्यवादी नाहीं कहै धर्मरूप जानै नाहीं। अब यहां कोऊ कहै जो कोऊ बलवान जबरीतैं नमावै तथा आप नाहीं नमै तो बडा उपद्रव करै तदि कहा करै ? ताका उत्तर कहै हैं—जो परकी जबरीतैं नमस्कार किये श्रद्धान नाहीं विगडै है जातैं देवतादिकनिके भयतैं तथा आशातैं स्नेहतैं लोभतैं जो नमस्कार करै तदि श्रद्धान विगडै अर जबरीतैं दुष्ट म्लेच्छादिक व्रतीके मुखमैं अभक्ष देदेवै तो व्रत नाहीं विगडैगा तथा अन्यमतीनके ग्रंथनिमैं तथा वाक्यनिमैं कुदेवानिकूं नमस्कार लिखा है। तथा कुदेवनिकी स्तुति लिखी है तो उनके वांचनेमात्रतैं तो कुदेवनिकूं नमस्कार स्तुति नाहीं हो जायगी सम्यग्दर्शन तो आत्माका भाव है अपने भावानितैं जो कुदेवादिकनिमैं वंदना योग्य अर आपकूं वंदनेवाला मानि नमस्कार स्तवन वंदना करै कुछ इनतैं अपना भला होना जानै तिसके सम्यक्त्वका अभाव है। बहुरि इस कालमैं म्लेक्ष मुसल्मान राजा भए जब वे कुछ पूछै अर आप कुछ उनसूं कहा चाहै तदि हाथ जोड ही अर्ज करी जाय इसमें अपना श्रद्धान ज्ञान नाहीं नष्ट होय है। चारित्रधारी त्यागी साधुजन होय सो हाथ हू नाहीं जोड अर अपनी खंड २ कर तो हू धर्मकार्य विना वचन नाहीं कहै अर त्यागीनतैं दुष्ट मनुष्य म्लेक्ष राजादिक महापापी हू प्रणाम नाहीं चाहै हैं। तातैं संयमी तो राजाकूं चक्रीकूं माताकूं पिताकूं विद्यागुरुकूं कदाचित् ही नमस्कार नाहीं करै है। ये द्विजन्मा हैं अर अव्रत सम्यग्दृष्टि हू अपना

वशतैं कुदेव कुगुरु कुधर्मकूं नमस्कार नाहीं करे। अन्य व्यवहारीनिकूं यथायोग्य विनय सत्कारादि करे हैं। अर परकी जबरीतैं देश त्यागै आजीविका त्यागै धन त्याग जाय परंतु कुधर्मका सेवन कुदेवादिककी आराधना नाहीं करे है। अब रत्नत्रयमैं हू सम्यग्दर्शनके श्रेष्ठपना दिखावनेकूं सूत्र कहै हैं—

दर्शनं ज्ञानचारित्रात् साधिमानमुपाश्नुते। दर्शनं कर्णधारं तन्मोक्षमार्गे प्रचक्षते ॥ ३१ ॥

अर्थ—ज्ञान और चारित्रतैं सम्यग्दर्शन जो है ताहि अतिशय करकैं साधिमान कहिए सर्वोत्कृष्ट है ऐसा जानि सेवन करे है। तिस ही कारणतैं मोक्षके मार्गविषै सम्यग्दर्शनकूं कर्णधार कहिए है। जैसैं समुद्रके विषै जहाजकूं खेवटिया पार करे है तैसैं अपार ऐसा संसार समुद्रविषै रत्नत्रयरूप जहाजको पार करनेमैं सम्यग्दर्शन खेवटिया है। भावार्थ—रत्नत्रयमैं सम्यग्दर्शन ही अति उत्कृष्ट है। अब सम्यग्दर्शनके उत्कृष्टपनाका हेतु कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

विद्यावृत्तस्य संभूतिस्थितिवृद्धिफलोदयाः। न संत्यसति सम्यक्त्वे बीजाभावे तरोरिव ॥ ३२ ॥

अर्थ—विद्या कहिए ज्ञान अर व्रत कहिए चारित्र इनकी उत्पत्ति अर स्थिति अर वृद्धि अर फलका उदय वह सम्यक्त्व नाहीं होतैं संते नाहीं होय है। जैसैं बीजका अभाव होतैं वृक्षकी उत्पत्ति स्थिति वृद्धि फलका उदय नाहीं होय है। भावार्थ—बीज ही नाहीं तदि वृक्ष कैसैं उपजेगा अर वृक्ष ही नाहीं उपज्या तदि स्थिति कौनकी होय अर वृद्धि कौनकी होय अर फलका उदय कैसैं होय? जातैं सम्यग्दर्शन नाहीं होय तदि ज्ञान चारित्र हू नाहीं होय सम्यक्त्व विना ज्ञान है सो कुज्ञान है अर चारित्र है सो कुचारित्र है जब सम्यक्त्व विना ज्ञानचारित्रकी उत्पत्ति ही नाहीं तदि स्थिति कहांतैं होय अर ज्ञानचारित्रकी वृद्धि कैसैं होय अर ज्ञानचारित्रका फल जो सर्वज्ञ परमात्मारूप होना कैसैं होय? तातैं सम्यक्त्व विना सत्यश्रद्धान ज्ञानचारित्र कदाचित ही नाहीं होय। सो ही भगवान् गुणभद्राचार्य महाराजनैं आत्मानुशासनमैं कह्या है—

आर्या—समबोधवृत्ततपसां पाषाणस्येव गौरवं पुंसः । पूज्यं महामणेरिव तदेव सम्यक्त्वसंयुक्तं ॥ १ ॥

अर्थ—सम कहिए कषायनिकी मंदता अर बोध कहिए अनेकशास्त्रनिका प्रबल ज्ञान होना अर व्रत कहिये त्रयोदशप्रकार दुर्द्धरचारित्रका पालना अर कायरानितैं नाहीं धारि सकै ऐसा बारा प्रकारका घोर तप ये चारों ही पुरुषके बडे भारी हैं परंतु पुरुषके इनका बडा भारीपणा पाषाणका भारीपणाके तुल्य है अर एही समभाव ज्ञान चारित्र तप जो सम्यक्त्व संयुक्त होय तो महामणि चिन्तामणि ज्यों पूज्य हो जाय। भावार्थ—जगतमैं अनेक पाषाण हू हैं अर मणि हू हैं। मणि भी पाषाण ही है अर झाझडा पत्थर हू पाषाण ही है परंतु कांतिकरि बडा भेद है, पाषाण २ समान नाहीं। जो झाझडा पत्थर तीन मण हू लेजाय तो एक पैसा मिलै अर मणि जो पद्मरागमणि तथा वज्रमणि रत्ती मासा हू हाथ लागि जाय तो लक्ष्यां धन उपजै है। अपने पुत्र पौत्रादिकताईंका दरिद्र नष्ट होजाय है। तैसैं सम्यक्त्वसहित अल्प हू समभाव अल्प हू ज्ञान अल्प हू चारित्र तप भाव इस जीवकूं कल्पवासी इंद्रादिकनिमैं उपजाय जन्ममरणके दुःखरहित परमात्मा कर देहै। अर सम्यक्त्व विना बहुत हू समभाव तथा बहुत हूग्यारा अंगपर्यंत ज्ञानका अभ्यास बहुत हू उज्वल चारित्र घोररूप हू तप किया हुआ सो कषायनिकी मंदता होय तो भवनवासी व्यंतर ज्योतिषीनिमैं तथा अल्परिद्धिधारी कल्पवासीनमैं उपजाय फिर चतुर्गति संसारमैं भ्रमण करावै है। तातैं सम्यक्त्वसहित ही समबोध चारित्र तप धारण जीवका कल्याण है। अब कोऊ आशंका करै जो सम्यक्त्व नाहीं होय अर चारित्र तप ग्रहण करै ऐसा मुनि है सो आरंभादिकमैं लीन ऐसा गृहस्थतैं तो उत्तम होयगा तिसकूं उत्तर करता सूत्र कहै हैं—

गृहस्थो मोक्षमार्गस्थो निर्मोहो नैव मोहवान् । अनगारो गृही श्रेयान् निर्मोहो मोहिनो मुनेः ॥ ३३ ॥

अर्थ—जाके दर्शनमोह नाहीं ऐसा गृहस्थ है सो मोक्षमार्गमैं तिष्ठै है अर मोहवान ऐसा अनगार कहिये मोहरहित मुनि सो मोक्षमार्गी नाहीं है। याहीतैं मोहवान जो मुनि तातैं दर्शनमोहरहित गृहस्थ है सो

प्रधान कहिये सर्वोत्कृष्ट है। भावार्थ—जाके मोह जो मिथ्यात्व सो नाहीं ऐसा अव्रतसम्यग्दृष्टि हू मोक्षमार्गी है। जाके सात आठ भव देव मनुष्यनिके ग्रहण होय करि नियमतैं मोक्ष होजायगा अर जाके मिथ्यात्व है अर मुनिके व्रतधारी साधु भया तो हू मरि करि भवनत्रिकादिकमें उपजि संसारहीमें परिभ्रमण करैगा सो ही कुन्दकुन्दस्वामी दर्शनपाहुडमें कह्या है—

गाथा।

दंसणभट्टा भट्टा दंसणभट्टाण णत्थि णिव्वाणं। सिज्झंति चरियभट्टा दंसणभट्टा ण सिज्झंति ॥ १ ॥
सम्मत्तरयणभट्टा जाणंता बहुविहाइ सत्थाइं। आराहणाविरहिया भमंति तत्थेव तत्थेव ॥ २ ॥
सम्मत्तविरहियाणं सुट्ठुविओगां तवं चरंताणं। ण लहंति बोहिलाहं अवि वाससहस्सकोडीहिं ॥ ३ ॥
जे दंसणेसु भट्टा णाणे भट्टा चरित्तभट्टा ये। एदे भट्टविभट्टा सेसं वि जणं विणासंति ॥ ४ ॥
जह मूलम्मि विणट्ठे दुमस्स परिवार णत्थि परिवड्ढी। तह जिणदंसणभट्टा मूलविणट्ठा ण सिज्झंति ॥५॥
जे दंसणेसु भट्टा पाए पाडंति दंसणधराणं। ते हुंति लुल्लमूया वोही पुण दुल्लहा होदि ॥ ६ ॥
जे विपडंति च तेसिं जाणंता लज्जगोरवभयेण। तेसिं पि णत्थि वोही पावं अणुमोदमाणाणं ॥ ७ ॥
जिणवयणमोसहमिणं विसयेसु य विरेयणं अमियभूदं। जरमरणवाहिवेयणखययरणं सव्वदुक्खाणं ॥८॥
एकं जिणस्सरूवं वीयं उक्कस्ससावयाणं च। अवरट्ठियाण तिदयं चउत्थ पुण लिंग दंसणे णत्थि ॥ ९ ॥
जं सक्कइ तं कीरइ जं च ण सक्केइ तं च सद्दहई। केवलजिणेहिं भणियं सद्दहमाणस्य संमत्तं ॥ १० ॥
ण वि देहो वंदिज्जइ ण वि कुली ण विय जाइसंपण्णो। को वंदमि गुणहीणो ण हु सम्मणु ण सावओ होई ११

अर्थ—जो सम्यग्दर्शनकरि भ्रष्ट हैं ते भ्रष्ट हैं क्योंकि सम्यग्दर्शनतैं भ्रष्ट हैं तिनके अनन्तकालहूमैं, निर्वाण नाहीं होय है। अर जिनकै सम्यग्दर्शन नाहीं छूट्या अर चारित्रतैं भ्रष्ट भए तो तीजे भवमें निर्वाण पाय जाय है अर सम्यक्त्व छूटि जाय तो अनंतभवमें हू संसारभ्रमण नाहीं छूटे हैं ॥ १ ॥ जे

सम्यक्त्व रत्नकरि भ्रष्ट हैं ते बहुतप्रकार शास्त्रनिकूं जानते हू च्यार आराधनारहित भये संसारहीमें भ्रमण करे हैं॥ २॥ जे सम्यक्त्व रत्नकरि रहित हैं ते हजार कोटि वर्ष आछीतरह उग्रतपकूं आचरण करता हू रत्नत्रयका लाभकूं नाहीं पावे है ॥३॥ जे सम्यग्दर्शनरहित है ते ज्ञानके विषै हू विपरीतज्ञानी भए भ्रष्ट ही हैं अर जाका आचरण हू भ्रष्ट है ते तो भ्रष्टनिते हू भ्रष्ट हैं। जे इनकी संगति करे हैं तिनकूं हू धर्मरहित कर विनाश करे हैं ॥४॥ जैसें जिस वृक्षका मूल कहिए जड़ ताका नाश भया तिसके डाहला पत्र पुष्प फलादिक परिवारकी वृद्धि नाहीं होय है तैसे सम्यग्दर्शनकरि भ्रष्ट हैं ते मूल भ्रष्ट हैं तिनके ज्ञान चारित्रादिका की कैसें सिद्धी होय ?॥५॥ जे सम्यग्दर्शनकरि भ्रष्ट हैं अर सम्यग्दर्शनके धारकानिकूं अपने पगनिमें पडावनेकूं चाहे हैं ते परलोकमैं चरणरहित लूला अर वचनरहित गूंगा होय है। भावार्थ—सम्यग्दर्शनरहितैं होय सम्यग्दृष्टीनितैं बंदना नमस्कार करावे है तथा करावा चाहे हैं ते बहुत काल एकेंद्रिय होय हैं॥ ६ ॥ अर जे पुरुष लज्जा करकैं तथा गौरव जो अपना बडापणा करके भयं करकैं मिथ्यादृष्टिनिके चरणनिमें बंदना करें हैं तिनके हू पाप जो मिथ्यात्व ताका अनुमोदनातैं रत्नत्रयकी प्राप्ति दुर्लभ है ॥७॥ सम्यग्दृष्टिकै यो जिनेंद्रका वचनही अमृतरूप औषधि है अर विषयनिका सुखरूप आमाशयका विरेचन करनेवाला है अर जरामरणरूप वेदनाके क्षय करनेका कारण है अर समस्त संसारके दुःखनिका क्षयका कारण है। भावार्थ—सम्यग्दृष्टिके ऐसा निश्चय है जो जन्मजरामरणादिक समस्तदुःखरूप रोगकूं दूर करनेवाला अमृतरूप तो जिनेंद्रका वचन ही है इस बिना इस अनादिकालका विषयनिकी चाहरूप दाहका करनेवाला आमाशयकूं काढि ज्ञान सुखादि अंगनिकूं अमृतवत पुष्ट करनेवाला अन्य उपाय है ही नाहीं ॥ ८ ॥ एक लिंग तो जिनेंद्रका धारण किया नग्नस्वरूप समस्त वस्त्रशस्त्रादिरहित है अर दूजा उत्कृष्ट श्रावकका एक कोपीन तथा खंडवस्त्र सहित है तीजा आर्यिकाका है, चौथा लिंग (भेष) जिनमतमैं नाहीं, जो है सो जिनधर्मबाह्य है बंदने योग्य नाहीं ॥९॥ जिनेंद्रकी जो आज्ञा है तिसको पा-

रनेका सामर्थ्य होय सो तो आप आचरण करै अर जाका करनेकी सामर्थ्य नाहीं होय तो ताका श्रद्धान ही करता जीवकै केवली जिन सम्यक्त्व कह्या है ॥१०॥ सम्यग्दृष्टिकै रत्नत्रयरहित देह बंदनीक नाहीं है। जातिसंयुक्त कुल हू बंदने योग्य नाहीं है जातैं सम्यग्दर्शनादिक गुणरहित श्रावक हू बंदनीक नाहीं अर मुनि हू बंदनीक नाहीं। रत्नत्रयके प्रभावतैं देह बंदनीक हो जाय है कुल जात्यादिक हू बंदनीक होय हैं अब इस जीवका सर्वोत्कृष्ट उपकार करनेवाला अर अपकार करनेवाला कौन है सो कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

न सम्यक्त्वसमं किंचित्त्रैकाल्ये त्रिजगत्यपि। श्रेयोऽश्रेयश्च मिथ्यात्वसमं नान्यत्तनूभृताम् ॥ ३४ ॥

अर्थ—इन प्राणीनिके सम्यग्दर्शन समान तीन कालमैं अर तीन जगतमैं अन्य कोऊ कल्याण है नाहीं अर मिथ्यात्व समान तीन कालमें तीन जगतमें अन्य कोऊ कल्याण है नाहीं। भावार्थ—अनंत काल तो व्यतीत होगया अर वर्तमानकाल एक समय अर अनंत काल आगैं आसी ऐसे तीन कालमें अर अधोभवनलोक अर असंख्यात द्वीप सागरपर्यंत मध्यलोक अर स्वर्गादिक ऊर्द्धलोक इन तीन लोकमैं सम्यक्त्व समान अन्य कोऊ सर्वोत्कृष्ट उपकार करनेवाला जीवनिका है नाहीं हुआ नाहीं होसी नाहीं। जो उपकार इस जीवका सम्यक्त्व करै है ऐसा उपकार तीन लोकमैं भये ऐसे इंद्र, अहमिंद्र, भुवनेंद्र, चक्री, नारायण, बलभद्र, तीर्थंकरादिक समस्त चेतन अर मणि मंत्र औषधादिक समस्त अचेतन द्रव्य कोऊ सम्यक्त्व समान उपकार नाहीं करै। अर इस जीवका सर्वोत्कृष्ट अपकार जैसा मिथ्यात्व करै है तैसा अपकार करनेवाला तीन लोकमैं तीनकालमैं कोऊ चेतनद्रव्य अचेतनद्रव्य है नाहीं हुआ नाहीं होसी नाहीं। तातैं मिथ्यात्वका त्यागहीमैं परम यत्न करो। समस्त संसारका दुःखकूं मेटनेवाला आत्मकल्याणका परमहद एक सम्यक्त्व है तातैं इसका उपार्जनमैं ही उद्यम करो। अब सम्यग्दर्शनका प्रभाव वर्णन करनेकूं सूत्र कहै हैं—

सम्यग्दर्शनशुद्धा नारकतिर्यङ्नपुंसकस्त्रीत्वानि । दुष्कुलविकृताल्पायुर्दरिद्रतां च व्रजन्ति नाप्यव्रतिकाः ॥ ३५ ॥

अर्थ—जो जीव सम्यग्दर्शनकरि शुद्ध हैं ते व्रतरहित हू नारकीपणा तिर्यंचपणा नपुंसकपणा स्त्रीपणाकूं नाहीं प्राप्त होय हैं। अर नीचकुलमैं जन्म अर विकृत कहिये आंधा काणा बहरा टूंटा लूला गूंगा कूबडा बावन्या हीनअंग अधिकअंग मांजरा बिटरूप नाहीं होय तथा अल्प आयुका धारक अर दरिद्रीपनाकूं नाहीं प्राप्त होय है। बहुरि व्रतरहित अव्रत सम्यग्दृष्टिकै एक तौ इकतालीस कर्मप्रकृतिका बंध होय नाहीं ऐसा नियम है। मिथ्यात्व १ हुंडकसंस्थान २ नपुंसकवेद ३ असृपाटिकसंहनन ४ एकेंद्री ५ स्थावर ६ आताप ७ सूक्ष्मपना ८ अपर्याप्त ९ वेंद्री १० त्रीन्द्री ११ चतुरिंद्री १२ साधारण १३ नरकगति १४ नरकगत्यानुपूर्वी १५ नरकआयु १६ ए षोडशप्रकार प्रकृति तो मिथ्यात्वप्रभावतैं ही बंधे हैं अर अनंतानुबंधीके प्रभावतैं बंधकूं प्राप्त होय ऐसी पच्चीस प्रकृति और हैं। अनंतानुबंधी क्रोध १ मान २ माया ३ लोभ ४ स्त्यानगृद्धि ५ निद्रानिद्रा ६ प्रचलाप्रचला ७ दुर्भग ८ दुःस्वर ९ अनादेय १० न्यग्रोधपरिमंडलसंस्थान ११ स्वातिसंस्थान १२ कुब्जकसंस्थान १३ वामनसंस्थान १४ वज्रनाराचसंहनन १५ नाराचसंहनन १६ अर्द्धनाराचसंहनन १७ कीलितसंहनन १८ अप्रशस्तविहायोगति १९ स्त्रीपना २० नीचगोत्र २१ तिर्यग्गति २२ तिर्यग्गत्यानुपूर्वी २३ तिर्यंचआयु २४ उद्योत २५ इसप्रकार इकतालीस कर्मकी प्रकृति मिथ्यादृष्टि ही बंध करै है अर सम्यग्दृष्टिकै मिथ्यात्व अनंतानुबंधीका अभाव भया तातैं अव्रतिसम्यग्दृष्टिके इकतालीसप्रकृतिका नवीन बंध ही नाहीं होय है और जो सम्यक्त्व ग्रहण नाहीं हुआ तदि मिथ्यात्व अवस्थामैं बंद करीते प्रकृति सम्यक्त्वके प्रभावतैं नष्ट होजाय हैं परंतु आयुबंध किया सो नाहीं छूटै तो हू सम्यक्त्वका ऐसा प्रभाव है जो पूर्वैं सप्तमनरककी आयु बांधी होय अर पाछैं सम्यक्त्व हो जाय तो प्रथम नरक ही जाय द्वितीयादिकनिमैं नाहीं जाय और जो तिर्यंचमैं निगोदकी एकेंद्रीकी आयु बांधी होय तो सम्यक्त्वका प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिको पंचेन्द्रिय तिर्यंच ही होय एकें-

द्रियादिक कर्मभूमिको जीव नाहीं होय और जो पूर्वे लब्धिपर्याप्त मनुष्यकी आयु बांधी होय तो सम्यक्त्वके प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिको मनुष्य होय है। अर व्यंतरादिकनिमैं नीचदेवका आयु बंध न किया होय तो कल्पवासी महर्द्धिक देव ही होय है अन्य भवनत्रिक देवनिमैं तथा चारदेवनिकी स्त्रीनिमैं समस्त मनुष्यणी तिर्यंचणीनिमैं नाहीं उपजै है ऐसा सम्यक्त्वका प्रभाव है। नीचकुलमैं दरिद्रीनिमैं अल्पआयुका धारक नाहीं होय है। अब सम्यग्दर्शनका प्रभावतैं कैसा मनुष्य होय सो कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

ओजस्तेजोविद्यावीर्ययशोवृद्धिविजयविभवसनाथाः।

महाकुला महार्था मानवतिलका भवन्ति दर्शनपूताः॥ ३६॥

अर्थ–सम्यग्दर्शनकरि पवित्र पुरुष है ते मनुष्यनिका तिलक कहिये समस्त मनुष्यनिका मंडन करनेवाला वा समस्त मनुष्यनिके मस्तक ऊपरि धारण करने योग्य ऐसा मनुष्यनिका तिलक होय है। कैसेक होय है ओजः कहिये पराक्रम अर तेजः कहिये प्रताप अर विद्या कहिये समस्त लोकमैं अतिशयरूप ज्ञान अर अतिशयरूप वीर्य कहिये शक्ति अर उज्वल यश और वृद्धि कहिये दिनदिनप्रति गुणनिकी अर सुखकी वृद्धि, विजय कहिये समस्तप्रकारकरि जीतनरूप अर अतिशयकारी विभव ऐसैं ओज, तेज, विद्या, वीर्य, यश, विजय, विभव इन समस्त गुणनिका स्वामी होय है। बहुरि महानकुलका स्वामी होय है अर महानधर्म महाअर्थ महाकाम महामोक्षरूप चार पुरुषार्थका स्वामी होय है। सम्यग्दर्शनके धारणतैं ऐसैं अप्रमाणप्रभावके धारक मनुष्य होय है। अब सम्यक्त्वके प्रभावतैं देवनिका विभव प्राप्त होय है ताकूं कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

अष्टगुणपुष्टितुष्टा दृष्टिविशिष्टाः प्रकृष्टशोभाजुष्टाः।

अमराप्सरसां परिषदि चिरं रमन्ते जिनेन्द्रभक्ताः स्वर्गे॥ ३७॥

अर्थ—जिनेंद्रके भक्त ऐसे सम्यग्दृष्टि जे हैं ते देवनिमैं अप्सरानिकी सभाविषै चिरकालपर्यंत रमै

हैं। कैसे भये संते रमै हैं? अणिमा महिमा लघिमा गरिमा प्राप्ति प्राकाम्य ईशित्व वशित्वादि जो आठ गुण तिनकी पुष्टता जो अन्य असंख्यात देवनिमैं नाहीं पाइये अधिकता करि संतोषित भए तथा सर्व देवनितैं उत्कृष्ट ऐसी कांति तेज यश तिनकर युक्त ऐसे हुए स्वर्गलोकमैं तिष्ठै हैं। भावार्थ—अव्रतसम्यग्दृष्टि स्वर्गलोकमैं देव होय हैं सो हीणपुन्नी नाहीं होय। इंद्रतुल्य विभव कांति ज्ञान सुख ऐश्वर्यका धारक महर्द्धिक होय सामानिक वा त्रायस्त्रिंशत् वा लोकपालादिकनिमैं उपजै है अन्य असंख्यात देवनिकै ऐसी अणिमादिक ऋद्धि तथा देहकी कांति आभरण विमान विक्रिया नाहीं होय ऐसा उत्कृष्ट विभव पाय असंख्यातकालपर्यंत कोट्यां अप्सरानिकी सभामैं रमै हैं। अब स्वर्गका सागरांपर्यंत इंद्रियनितैं उपजे सुख भोग मनुष्यलोकमैं आय कैसा होय सो कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

नवनिधिसप्तद्वयरत्नाधीशाः सर्वभूमिपतयश्चक्रं। वर्तयितुं प्रभवन्ति स्पष्टदृशः क्षत्रमौलिशेखरचरणाः॥ ३८॥

अर्थ—जिनकै उज्वल सम्यग्दर्शन है ते स्वर्गलोकमैं आयु पूर्ण करकै यहां मनुष्यलोकमैं आय अर नवनिधि चौदहरत्ननिका स्वामी समस्त भरतक्षेत्रके बत्तीस हजार देशनिका पति अर बत्तीस हजार मुकटबंध राजानिके मस्तक ऊपरि मुकुटरूप है चरण जिनका ऐसा चक्रकूं प्रवर्तन करनेकूं समर्थ चक्रवर्ती होय है। भावार्थ—सम्यग्दृष्टि स्वर्गतैं मनुष्यभवमैं आय नवनिधि चौदह रत्ननिका स्वामी समस्त राजानिका मस्तक उपरि आज्ञा प्रवर्तन करता षट्खंड पृथ्वीका पति अर्थात् चक्रवर्ती होय है। अब सम्यक्त्वका प्रभावतैं तीर्थंकर होय हैं ऐसैं सूत्र कहै हैं—

अमरासुरनरपतिभिर्यमधरपतिभिश्च नूतपादाम्भोजाः।
दृष्ट्या सुनिश्चितार्था वृषचक्रधरा भवन्ति लोकशरण्याः॥ ३९॥

अर्थ—जे पुरुष सम्यग्दर्शनकरि सम्यक् निर्णय किए हैं पदार्थ जिनने ते अमरपति असुरपति नरपति अर संयमीनिका पति गणधर तिनकरि वंदनीक हैं चरणकमल जिनका अर लोकानिके शरणमैं

उत्कृष्ट ऐसे धर्मचक्रके धारक तीर्थंकर उपजे हैं। भावार्थ—सम्यग्दृष्टि तीर्थंकर होय अनेक जीवनिके संसारदुःखके छेदन करनेवाला धर्मचक्रकूं प्रवर्तन करावे है जिनकूं इंद्र असुरेंद्र गणधरादिक नित्य वंदना करे हैं। जीवनकूं परम शरण हैं। अब सम्यग्दृष्टिके ही निर्वाण होय है ऐसा सूत्र कहे हैं—

शिवमजरमरुजमक्षयमव्याबाधं विशोकभयशङ्कं ।
काष्ठागतसुखविद्याविभवं विमलं भजन्ति दर्शनशरणाः ॥ ४० ॥

अर्थ—जिनके सम्यग्दर्शन ही शरण है ते पुरुष शिव जो निराकुलता लक्षण मोक्ष ताहि अनुभवे है। कैसाक है शिव जामैं जरा नाहीं अनंतानंकालहूमैं आत्मा जहां जीर्ण नाहीं होय है अर अरुज कहिए जामें रोग पीडा व्याधि नाहीं है अर अक्षय कहिए जामें अनंत चतुष्टय स्वरूपका नाश नाहीं है अर जहां कोऊप्रकार बाधा नाहीं है अर नष्ट हुआ है शोकभयशंका जातैं ऐसा शोकभयशंकारहित है। बहुरि परम हदकूं प्राप्त भया है सुखका अर ज्ञानका विभव जामैं ऐसा है अर द्रव्यकर्म तो ज्ञानावरणादिक अर भावकर्म रागद्वेषादिक अर नोकर्म शरीरादिक इसप्रकार कर्ममलका अभावतैं विमल है ऐसा अद्वितीय स्वरूप मोक्षकूं सम्यग्दृष्टि ही अनुभवे है। ऐसैं सम्यक्त्वका प्रभाव वर्णन करि अब दर्शनाधिकारको समाप्त करता दर्शनकी महिमाकूं उपसंहार करता सूत्र कहे हैं—

देवेन्द्रचक्रमहिमानममेयमानं राजेन्द्रचक्रमवनीन्द्रशिरोऽर्चनीयं ।
धर्मेन्द्रचक्रमधरीकृतसर्वलोकं लब्ध्वा शिवं च जिनभक्तिरुपैति भव्यः ॥ ४१ ॥

अर्थ—जिन जो परमात्मा तिसका स्वरूपमैं है भक्ति कहिए अनुराग जाकै ऐसा सम्यग्दृष्टि भव्य है सो इस मनुष्यभवतैं चय करि स्वर्गलोकमैं अप्रमाण हैं ऋद्धि शक्ति सुख विभवका प्रभाव जामैं ऐसा देवेंद्रनिका समूहकी महीमा पायकरि पाछे पृथ्वीमैं आय अर बत्तीस हजार राजानिका मस्तककरि पूजनीय ऐसा राजेंद्र जो चक्रवर्ती ताका चक्रकूं पाय करके फिर अहिमिंद्रलोकका महिमाकूं पाय नीचे किया है

समस्त लोक जाने ऐसा भगवान तीर्थंकरनिका धर्मचक्र ताहि प्राप्त होय करि निर्वाणकूं प्राप्त होय है। सम्यग्दर्शनका धारी इन अनुक्रमकरि निर्वाणकूं प्राप्त होय है। ऐसैं दर्शनमोहनीका अभावतैं सत्यार्थश्रद्धान सत्यार्थज्ञान प्रगट होय है अर अनंतानुबंधीके अभावतैं स्वरूपाचरण चारित्र सम्यग्दृष्टिके प्रगट होय है यद्यपि अप्रत्याख्यानावरणके उदयतैं देशचारित्र नाहीं भया है अर प्रत्याख्यानावरणका उदयतैं सकलचारित्र नाहीं प्रगट भया है तो हू सम्यग्दृष्टिके देहादिक परद्रव्य तथा रागद्वेषादिक कर्मजनित परभाव इनमैं दृढ भेदविज्ञान ऐसा भया है जो अपना ज्ञानदर्शनरूप ज्ञानस्वभावहीमैं आत्मबुद्धि धारनेतैं अर पर्यायमें आत्मबुद्धि स्वप्नमैं हू नाहीं होनेसे ऐसा चिंतवन करै है—हे आत्मन्! तू भगवानका परमागमका शरण ग्रहण करकैं ज्ञानदृष्टितैं अवलोकन कर अष्टप्रकारका स्पर्श पंचप्रकारका रस दोयप्रकार गंध पंचप्रकार वर्ण ये तुम्हारा रूप नाहीं है पुद्गलका है ये क्रोध मान माया लोभ तुम्हारा स्वरूप नाहीं है कर्मका उदयजनित ज्ञानदृष्टितैं विकार है तथा हर्ष विषाद मद मोह शोक भय ग्लानि कामादिक कर्मजनित विकार हैं ते तुम्हारे स्वरूपतैं भिन्न हैं बहुरि नरक तिर्यंच मनुष्य देव ये चार गति आत्माका रूप नाहीं कर्मका उदयजनित है विनाशीक है। देव मनुष्यादिक तुम्हारा रूप नाहीं सम्यग्ज्ञानीके ऐसा चिंतवन होय है जो मैं गोरा नाहीं, मैं श्याम नाहीं, मैं राजा नाहीं, मैं रंक नाहीं, मैं बलवान नाहीं, मैं निर्बल नाहीं, मैं स्वामी नाहीं, मैं सेवक नाहीं, मैं रूपवान नाहीं, मैं कुरूपा नाहीं, मैं पुण्यवान नाहीं, मैं पापी नाहीं, मैं धनवान नाहीं, मैं निर्धन नाहीं, मैं ब्राह्मण नाहीं, मैं क्षत्रिय नाहीं, मैं वैश्य नाहीं, मैं शूद्र नाहीं, मैं स्त्री नाहीं, मैं पुरुष नाहीं, मैं नपुंसक नाहीं, मैं स्थूल नाहीं, मैं कृष नाहीं, मैं नीच जात नाहीं, मैं ऊंच जाति नाहीं, मैं कुलवान नाहीं, मैं अकुलीन नाहीं, मैं पंडित नाहीं, मैं मूर्ख नाहीं, मैं दाता नाहीं, मैं जाचक नाहीं, मैं गुरु नाहीं, मैं शिष्य नाहीं, मैं देह नाहीं, मैं इंद्रिय नाहीं, मैं मन नाहीं ये समस्त कर्मका उदय जनित पुद्गलका विकार है मेरा स्वरूप तो ज्ञाता है दृष्टा है ये रूप आत्माका नाहीं, पुद्ग-

लका है। मुनिपना क्षुल्लकपना हू पुद्गलका भेष है। ये लोक हमारा नाहीं यो देश यो ग्राम यो नगर समस्त परद्रव्य हैं। कर्म उपजाय दिया कौन २ क्षेत्रमें अपना संकल्प करूं सम्यग्दृष्टिके ऐसा दृढ विचार होय है अर मिथ्यादृष्टि परकृत पर्यायमें आपा माने है। मिथ्यादृष्टिका आपा जातमें कुलमें देहमें धनमें राज्यमें ऐश्वर्यमें महल मकान नगर कुटुंबानिमें है। याकी लार हमारी घटी, हमारी बढी, हमारा सर्वस्व पूरा हुआ, मैं नीचा हूआ, मैं ऊंचा हुआ, मैं मरा, मैं जीया, हमारा तिरस्कार हुआ, हमारा सर्वस्व गया इत्यादिक परवस्तुमें अपना संकल्प करि महा आर्त्तध्यान रौद्रध्यान करि दुर्गतिको पाय संसार परिभ्रमण करे है। बहुरि मिथ्यादृष्टि जीव किंचित् जिनधर्ममें अधिकार पाय अर नवीन नवीन अपना परिणाममें युक्ति बनाय लोकानिके भ्रम उपजाय आप पांच आदम्यांमें महान् ज्ञानीपना का अभिमानकरि सूत्रविरुद्ध अनेक कथनी करे है। कृतघ्न भया जिनसूत्रनिकी हू निंदा करे है। बहुज्ञानिनिकी निंदा करे है। दुष्ट अभिप्रायी पांच आदम्यांमें मान्यता वा पक्षपात ग्रहण करि निराधार रहित हुआ हठग्राही आप थापी एकांती स्याद्वादरूप भगवानकी वाणीतैं पराङ्गमुख हुआ कलह विसंवाद परकी निंदाहीकूं धर्म मानता तिष्टे है। तथा केतेक मिथ्यादृष्टि किंचित मात्र बाह्यत्याग ग्रहण करकैं तथा स्नानकरि भोजन करते तथा अन्य देवादिकी बंदनाका त्यागकूं कृत्यकृत्य मानता जगतके जीवनकी निंदा करि आपकूं प्रशंसा योग्य माने है अर अन्यायतैं आजीविका अर हिंसादिकके अरंभमैं निपुण होय अन्यधर्मीनिके छिद्र हेरते फिरे है। तथा निर्दोष पुरुषनिके दोष विख्यात करि मदमैं छके फिरे है आपकूं ऊंचा माने है अन्यकू अज्ञानी भ्रष्ट माने है पापिष्ठ आपकी प्रशंसा कराय फूलो फूलो फिरे है अपना स्वरूपकी शुद्धताकूं नाहीं देखता नाना चेष्टा करे है भोले जीवानिकूं मिथ्या उपदेश देय एकांतके हठकू ग्रहण करावे है। अर कुगुरु कुदेवानिकूं नमस्कारके त्याग करनेतैं अर अन्य देवानिकी निंदा करके अर सभामैं बैठ मिथ्या भेषधारीनिकी निंदा करके ही आपकूं सम्यग्दृष्टि माने है। तथा लोग

हमकूं दृढ श्रद्धानी धर्मात्मा मानैंगे ऐसा अनंतानुबंधीमानके उदयतैं परकी निंदा करनेतैं ही आपकूं उच्च जानतैं जगतकूं अधर्मी माने है जातैं कुदेव कुगुरुकूं नमस्कार तो समस्त तिर्यंच भी नाहीं करे हैं अर नारकी नाहीं करे हैं। भोगभूमिके कुभोगभूमिके हू नमस्कार नाहीं करे हैं अर समस्त देवता हू नाहीं पूजे हैं। नमस्कार पूजा नाहीं करनेतैं ही सम्यग्दृष्टि होय तो समस्त नारकी मनुष्य तिर्यंचादिक सम्यग्दृष्टि होय जाय सो है नाहीं। बहुरि जगतके समस्त मिथ्यादृष्टि मनुष्य देवादिकनिकी निंदा करनेतैं ही सम्यक्त्व नाहीं होयगा। जगतकी निंदा करनेवाला अर पापीनतैं वैर करनेवाला तो कुगतिहीका पात्र होयगा। जातैं मिथ्याभाव तो जीवानिके अनादिका है सम्यग्दृष्टि तो इनकी हू करुणा करै अर समस्तमैं साम्यभाव ही करे है। यातैं सम्यग्दर्शन तो आपापरका सत्य श्रद्धान ज्ञान विनय सहित स्याद्वादरूप परमागमके सेवनतैंही होयगा।

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्येविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके सूत्रनिकी देशभाषामयवचनिकाविषै सम्यग्दर्शनका स्वरूपवर्णन नामवाला प्रथम अधिकार समाप्त भया ॥ १ ॥

अब सम्यग्ज्ञानरूप धर्मकूं प्रगट करनेकूं सूत्र कहे हैं—

(आर्या छंद।)

अन्यूनमनतिरिक्तं याथातथ्यं विना च विपरीतात्। निस्सन्देहं वेद यदाहुस्तज्ज्ञानमागमिनः ॥ ४२॥

अर्थ—आगमके जाननेवाले श्रीगणधर देव तथा श्रुतकेवली हैं ते ताकूं ज्ञान कहे हैं जो वस्तुका स्वरूपकूं परिपूर्ण जाने न्यून नाहीं जाने अर वस्तुका स्वरूप जैसा है तातैं अधिक नाहीं जाने अर जैसा वस्तुका सत्यार्थस्वरूप है तैसा ही जाने अर विपरीतपनाकरि रहित जाने अर संशयरहित जाने ताहि भगवान ज्ञान कहे हैं। इहां सम्यग्ज्ञानका स्वरूप कह्या है, सो जो वस्तुका स्वरूपकूं न्यून जाने सो

मिथ्याज्ञान है। जैसें आत्माका स्वभाव तो अनंतज्ञानस्वरूप है अर आत्माकूं इंद्रियजनित मतिज्ञान-मात्र ही जानै सो न्यूनस्वरूप जाननेतैं मिथ्याज्ञान भया। अर वस्तुके स्वरूपकूं अधिक जानै सो हू मिथ्याज्ञान है। जैसें आत्माका स्वभाव तो ज्ञान दर्शन सुख सत्ता अमूर्तीक है ताकूं ज्ञान दर्शन सुख सत्ता अमूर्त भी जानना अर पुद्गलके गुणरूप स्पर्श गंध वर्ण रस मूर्तीक हू जानना सो अधिक जाननेतैं मिथ्याज्ञान है। अर सीपकूं सुपेद अर चिलकता देख वामैं रूपाका ज्ञान होना सो विपरीतज्ञान हू मिथ्याज्ञान है। अर यह सीप है कि रूपो है ऐसें दोऊमैं संशयरूप एकका निश्चयरहित जानना सो संशयज्ञान है सो हू मिथ्याज्ञान है अर जो वस्तुका जैसा स्वरूप है तैसें जानना सो सम्यग्ज्ञान है अथवा जैसें सोलाकूं पांचगुणा करिये तो अस्सी होय ताकूं अठहत्तर जानै सो न्यून ज्ञान भया अर अस्सीका वियासी जानिये सो अधिकका जानना भया अर अस्सी होय ताकूं सोलह जानना वा पांच जानना सो विपरीतज्ञान भया अर सोलहकूं पांचगुणा किये अस्सी भये कि अठहत्तर भये ऐसा संदेहरूप ज्ञान सो संशयज्ञान है। ऐसें न्यून जानना तथा अधिक जानना तथा विपरीत तथा संशयरूपजानना ऐसें चार-प्रकारका मिथ्याज्ञान है अर जो वस्तुका स्वरूपकूं न्यून नाहीं जानै अधिक नाहीं जानै विपरीत (अंवली) नाहीं जानै संशयरूप नाहीं जानै जैसा वस्तुका स्वरूप है तैसा संशयरहित जानै ताहि सम्यग्ज्ञान कहिये है। अब सम्यज्ञान है सो प्रथमानुयोगकूं जानै है ऐसा सूत्र कहै हैं—

प्रथमानुयोगमर्थाख्यानं चरितं पुराणमपि पुण्यं। बोधिसमाधिनिधानं बोधति बोधः समीचीनः ॥ ४३ ॥

अर्थ—सम्यग्ज्ञान है सो प्रथमानुयोगनै जानै है, कैसाक है प्रथमानुयोग—अर्थ जे धर्म अर्थ काम मोक्ष रूप चार पुरुषार्थ तिनका है कथन जामैं बहुरि चरित कहिये एक पुरुषके आश्रय है कथा जामैं, बहुरि त्रिषष्ठिशलाका पुरुषनिकी कथनीका संबंधका प्ररूपक यातैं पुराण है। बहुरि बोधिसमाधिको निधान है सो सम्यग्दर्शनादिक नाहीं प्राप्त भए तिनकी प्राप्ति होना सो बोधि है अर प्राप्ति भए जे

सम्यग्दर्शनादिकनकी जो परिपूर्णता सो समाधि है। सो यो प्रथमानुयोग रत्नत्रयकी प्राप्तिको अर परिपूर्णताको निधान है उत्पत्तिको स्थान है अर पुण्य होनेका कारण है तातैं पुण्य है। ऐसा प्रथमानुयोगकूं सम्यग्ज्ञान ही जानै है। भावार्थ—जामें धर्मका कथन अर धर्मका फलरूप कहे जे धन संपदा रूप अर्थ काम जो पंच इंद्रियनिका विषय अर संसारतैं छूटनेरूप मोक्ष ताका कथन है अर एक पुरुषका आचरणका है कथन जामैं ऐसा चारित्ररूप है। अर त्रिशष्ठिशलाका पुरुषनिका है वर्णन जामें तातैं पुराणरूप है। अर वक्ता श्रोतानिके पुण्यके उपजावनेका कारण है तातैं पुण्यरूप है। अर चार आराधनाकी प्राप्ति होनेका अर चार आराधनाकी पूर्णता करनेका निधान है ऐसा प्रथमानुयोगकूं सम्यग्ज्ञान ही जानै है। अब करणानुयोगका जाननेवाला हू सम्यग्ज्ञान है ऐसा सूत्र कहे हैं—

लोकालोकविभक्तेर्युगपरिवृत्तेश्चतुर्गतीनां च। आदर्शमिव तथामतिरवैति करणानुयोगं च ॥ ४४ ॥

अर्थ—तैसैं ही मति कहिये सम्यग्ज्ञान जो है सो करणानुयोग जो है ताहि जानै है। कैसाक है करणानुयोग लोक अर अलोकके विभागको अर उत्सर्पिणीके छह काल अर अवसर्पिणीके षटकालके परिवर्तन कहिये पलटनेका अर चार गतिनिके परिभ्रमणका आदर्शमिव कहिये दर्पणवत् दिखावनेवाला है। भावार्थ—जामैं षटद्रव्यका समुदायरूप तो लोक अर केवल आकाश द्रव्य ही सो अलोक अपने गुणपर्यायनिसहित प्रतिबिंबित होय रहे हैं। अर छहूकालके निमित्ततैं जैसे जैसे जीवपुद्गलनिकी परणति है ते प्रतिबिंबरूप होय जामें झलके हैं अर जामें चार गतिनिका स्वरूप प्रगट दिपै है सो दर्पण समान करणानुयोग है। तिनै यथावत् सम्यग्ज्ञान ही जानै है। अब चरणानुयोगका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

गृहमेध्यनगाराणां चारित्रोत्पत्तिवृद्धिरक्षाङ्गम्। चरणानुयोगसमयं सम्यग्ज्ञानं विजानाति ॥ ४५ ॥

अर्थ—गृहमें आसक्त है बुद्धि जिनकी ऐसे गृहस्थी अर गृहतैं विरक्त होय गृहका त्यागी ऐसा

अनगार कहिये यति तिनके चारित्र जो सम्यक् आचरण ताकी उत्पत्ति अर वृद्धि अर रक्षा इनकी अंग कहिये कारण ऐसा चरणानुयोग सिद्धांत ताहि सम्यग्ज्ञान ही जानै है। भावार्थ—मुनिका अर गृहस्थका जो निर्दोष आचरण ताकी उत्पत्तिका अर दिन दिन वृद्धि होनेका अर धारण किया तिनकी रक्षाका कारण चरणानुयोगरूप ज्ञान ही है। अब द्रव्यानुयोगका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

जीवाजीवसुतत्त्वे पुण्यापुण्ये च बन्धमोक्षौ च। द्रव्यानुयोगदीपः श्रुतविद्यालोकमातनुते ॥ ४६ ॥

अर्थ—यो द्रव्यानुयोग नाम दीपक है सो जीव अर अजीव ये दोय जे निर्बाध तत्त्व तिनने अर पुण्य पापनै अर बंध मोक्ष जे हैं तिननै भावश्रुतज्ञानरूप प्रकाश होय जैसें होय तैसें विस्तारता है। भावार्थ—द्रव्यानुयोगनामा दीपक ऐसा है जो बाधारहित जीव अजीवका स्वरूपकूं अर पुण्यपापकूं अर कर्मके बंधकूं अर कर्मतैं छूट जानेकूं आत्मामें उद्योत हो जाय तैसें विस्तार करि दिखावै है। ऐसें चार अनुयोगरूप श्रुतज्ञानका स्वरूप वर्णन किया। ज्ञानके वीस भेद अर अंग तथा पूर्वरूप वर्णन किये ग्रंथ बहुत हो जाय।

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके मूल सूत्रनिकी देशभाषामय वचनिका विषै सम्यग्ज्ञानका स्वरूप वर्णन करनेवाला द्वितीय अधिकार समाप्त भया ॥ २ ॥

अब सम्यक्चारित्रनामा तृतीय अधिकारकूं वर्णन करते चारित्रस्वरूप धर्मके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

मोहतिमिरापहरणे दर्शनलाभादवाप्तसंज्ञानः। रागद्वेषनिवृत्यै चरणं प्रतिपद्यते साधुः ॥ ४७ ॥

अर्थ—दर्शनमोहरूप तिमिरको दूर होते संते सम्यग्दर्शनका लाभतैं प्राप्त भया है सम्यग्ज्ञान जाकै ऐसा साधु जो निकटभव्य है सो रागद्वेषका अभावके अर्थि चारित्र है ताहि अंगीकार करै है। भावार्थ—इस संसारी जीवके अनादिकालका दर्शनमोहनीयका उदयरूप तिमिरकरि ज्ञाननेत्र ढकि रह्या है

तिस मोह तिमिरतैं अपना अर परका भेदविज्ञानरहित हुआ चारों गतिनिमें पर्यायहीकूं आपा जानता अनंतकालतैं भ्रमण करै है। कोऊ जीवके करणलब्धादिक सामग्रीतैं दर्शनमोहका उपशमतैं तथा क्षयतैं तथा क्षयोपशमतैं सम्यग्दर्शन होय है तदि मिथ्यात्वका अभावतैं ज्ञान हू सम्यक्पनाकूं प्राप्त होय है तादि कोऊ सम्यग्ज्ञानी रागद्वेषका अभावके अर्थि चारित्र अंगीकार करै। अब रागद्वेषका अभावतैं ही हिंसादिकका अभाव होनेका नियमके अर्थि सूत्र कहै हैं—

रागद्वेषनिवृत्तेर्हिंसादिनिवर्तना कृता भवति। अनपेक्षितार्थवृत्तिः कः पुरुषः सेवते नृपतीन् ॥ ४८ ॥

अर्थ—रागद्वेषका अभावतैं हिंसादिक पंच पापनिकी निवृत्ति कहिए अभाव परिपूर्ण होय है। पंच-पापनिका अभाव सो ही चारित्र है। अभिलाषरूप नाहीं है प्रयोजनकी प्राप्ति जाके ऐसा कौन पुरुष राजानिनै सेवन करै? भावार्थ—जाकै अर्थ जो प्रयोजन तथा धनादिक फलके प्राप्त होनेकी अभिलाषा नाहीं ऐसा कौन पुरुष राजानिनै सेवन करै? नाहीं करै। राजानिकी महाकष्टरूप सेवा तो जाकै भोगनिकी चाह तथा धनकी तथा अभिमानादिककी अभिलाषा होय सो करै। जाकै कुछ अपेक्षा चाहना नाहीं सो राजाका सेवन नाहीं करै जाकै रागद्वेषका अभाव भया सो पुरुष हिंसादिक पंच पापनिमें प्रवृत्ति नाहीं करै। अब चारित्रका लक्षण रागद्वेषका अभाव कह्या सो इसहीका विशेष कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

हिंसानृतचौर्येभ्यो मैथुनसेवापरिग्रहाभ्यां च। पापप्रणालिकाभ्यो विरतिः संज्ञस्य चारित्रं ॥ ४९ ॥

अर्थ—हिंसा अनृत चौर्य मैथुनसेवन परिग्रह ये पाप आवनेके प्रनाला हैं इनतैं जो विरक्त होना सो सम्यग्ज्ञानीके चारित्र है। भावार्थ—निश्चय चारित्र तो बहिरंग समस्त प्रवृत्तितैं छूटे परमवीतरागताके प्रभावतैं परमसाम्यभावकूं प्राप्त होय अपना ज्ञायकभावरूप स्वभावमें चर्या सो स्वरूपाचरण नामा सम्यक्चारित्र है तो हू पंच पापनितैं विरक्त होय अंतरंग बहिरंग प्रवृत्तिकी उज्जलतास्वरूप व्यवहार

चारित्र विना निश्चयस्वरूप चारित्रकूं प्राप्त नाहीं होय है। तातैं हिंसादिक पंच पापनिका त्याग करना ही श्रेष्ठ है। पंच पापका त्याग करना ही चारित्र है। अब इस चारित्रकैं दोय प्रकारका कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

सकलं विकलं चरणं तत्सकलं सर्वसंगविरतानां। अनगाराणां विकलं सागाराणां ससंगानां ॥ ५० ॥

अर्थ—सो चारित्र समस्त अंतरंग परिग्रहतैं विरक्त जे अनगार कहिए गृह मठादि नियत स्थानरहित वन खंडादिकमें परम दयालु हूआ निरालंब विचरै ऐसे ज्ञानी मुनीश्वरनिके सकलचारित्र है अर जे स्त्रीपुत्रधनधान्यादिक परिग्रहसहित घरमें तिष्ठैं ते जिनवचनके श्रद्धानी न्यायमार्गकूं नाहीं उलंघन करिकैं पापतैं भयभीत ऐसे ज्ञानी गृहस्थीनिके विकलचारित्र है। भावार्थ—गृहकुटुंबादिकके त्यागी अपने शरीरमें निर्ममत्व साधूनिकै सकलचारित्र होय है। गृहकुटुंबधनादिकसहित गृहस्थीनिके विकलचारित्र होय है। अब गृहस्थीनिकै विकलचारित्र कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

गृहिणां त्रेधा तिष्ठत्यणुगुणाशिक्षाव्रतात्मकं चरणं। पञ्चत्रिचतुर्भेदं त्रयं यथासंख्यमाख्यातं ॥ ५१ ॥

अर्थ—गृहस्थनिके चारित्र है सो अणुव्रत गुणव्रत शिक्षाव्रतस्वरूप तीनप्रकारकरि तिष्ठै है। सो यो तीन प्रकार चरित्र है सो यथासंख्य पांच भेदरूप तीनभेदरूप च्यार भेदरूप परमागममें कह्या है। भावार्थ—जो गृहवास छोडनेकूं समर्थ नाहीं ऐसा सम्यग्दृष्टि गृहमें तिष्ठता ही पंच प्रकार अणुव्रत तीन प्रकार गुणव्रत च्यार प्रकार शिक्षाव्रत धारण करि चारित्रकूंपाले है। अब पंच प्रकार अणुव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

प्राणातिपातवितथव्याहारस्तेयकाममूर्छाभ्यः। स्थूलेभ्यः पापेभ्यो व्युपरमणमणुव्रतं भवति ॥ ५२ ॥

अर्थ—प्राणनिका जो अतिपात कहिये वियोग करणा सो प्राणातिपात कहिये हिंसा अर वितथ असत्य ऐसा व्यवहार कहिये वचन कहना सो वितथव्याहार कहिये असत्य वचन अर स्तेय कहिये चोरी ओर काम कहिये मैथुन अर मूर्छा कहिये परिग्रह ये पांच पाप हैं। इनमें स्थूलपापनितैं विरक्त होना

सो अणुव्रत है। भावार्थ—मारनेका संकल्प करकैं जो त्रसकी हिंसाका त्याग सो स्थूलहिंसाका त्याग है। बहुरि जिस वचन कर अन्य प्राणीका घात होजाय तथा धर्म बिगड जाय अन्यका अपवाद होजाय कलह संक्लेश भयादिक प्रगट होजाय ऐसा वचनका क्रोध अभिमान लोभके वश होय कहनेका त्याग कर सो स्थूल असत्यका त्याग है। अर बिना दिया अन्यके धनका लोभके वशतैं छलकरि ग्रहण करनेका त्याग सो स्थूल चोरीका त्याग है। बहुरि अपनी विवाही स्त्री बिना समस्त अन्यस्त्रीनिमैं कामका अभिलाषका त्याग सो स्थूल कामत्याग है। बहुरि दशप्रकार परिग्रह परिमाण करि अधिक परिग्रहका त्याग सो स्थूल परिग्रहका त्याग है। ऐसैं पाप आवनेके प्रनाले ये पांच हिंसादिक तिनका त्याग सो ही पंच अणुव्रत है। अब अहिंसा अणुव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहैं है—

संकल्पात्कृतकारितमननाद्योगत्रयस्य चरसत्वान्। न हिनस्ति यत्तदाहुः स्थूलवधाद्विरमणं निपुणाः ॥ ५३ ॥

अर्थ—जो गृहस्थ मनवचनकायके कृतकारित अनुमोदनारूप संकल्पतैं चर प्राणी द्वीन्द्रियादिक त्रसप्राणीनका घात नाहीं करै ताहीं निपुण जे गणधरदेव हैं ते स्थूलहिंसातैं विरक्त कहे हैं। इहां ऐसा जानना जो गृहस्थ सम्यग्दर्शन संयुक्त दयावान हिंसातैं भयभीत होय त्यागके सन्मुख हुआ तो गृहस्थके एकेन्द्रिय जे पृथिवीकायादिक तिनकी हिंसाका त्याग तो बन सके नाहीं गृहका त्यागी योगीश्वरनिके ही त्रसस्थावर दोऊनका हिंसाका त्याग बने अर प्रत्याख्यानावरणादिक कषायका उदयतैं गृहतैं ममता छूटी नाहीं तिस गृहस्थके त्रसजीवनका संकल्पीहिंसाके त्यागतैं भगवान अहिंसा अणुव्रत कह्या है। संकल्पीहिंसाका त्याग ऐसे जानना—दयावान गृहस्थ अपने परिणामनिकर मारनेरूप संकल्पतैं तो त्रस जीवका घात करै नाहीं करावै नाहीं घात करनेका मनवचनकायतैं प्रशंसा करै नाहीं ऐसा परिणाम रहे। अर जो कोऊ दुष्ट वैर ईर्षादिककरि आपकूं मार्‍या चाहे तथा आजीविका धनादिक हर्‍या चाहे तिसका भी घात करनेकूं नाहीं चाहे तथा कोऊ आपकूं बहुत धन देकर मरावै तो कीडीमात्रकूं मार-

नेका संकल्पकरि कदाचित् नाहीं मारे। तथा एक जीव मारनेतें अपना रोग आपदा दूर होय तो जीवनके लोभतें त्रसजीवकूं नाहीं मारन करै। हिंसातें अत्यन्त भयभीत है तो हू गृहस्थके आरंभमैं त्रस जीवनिका घात हुआ बिना रहै नाहीं याहीतें गृहस्थके मारनेका संकल्पकरि त्रसकी हिंसाका त्याग है अर आरंभी हिंसाका त्याग करनेकूं समर्थ नाहीं है केवल आरंभमैं यत्नाचारसहित दयाधर्मकूं नाहीं भूलता प्रवर्तै है क्योंकि गृहस्थके आरंभ बिना निर्वाह नाहीं। केते आरंभ नित्य होय है, चूल्हा बालना चाकी पीसना ओखलीमें कूटना बुहारी देना जलका आरंभ करना उपार्जन करना ये छह पापके कर्म तो नित्य ही हैं बहुरि केतेक और हू नित्य भी कदाचित् अन्य कारणतें हू आरंभ बहुत हैं अपने पुत्र पुत्रीका विवाह करना मकान बनाना लीपना धोवना झाडना होय ही। रात्री गमनादि आरंभ करना धातुका पाषाणका काष्ठका आरंभ करना शय्या बिछावना उठाना पात्र पसारना समेटना जातिकूं जिमावना दीपकादिक जोवना इत्यादिक पापहीके कार्य हैं। तथा गाडी रथ ऊपरि चढ़ि चालना हस्ती घोड़ा ऊंट बलद इत्यादिक ऊपर चढ़ि चालना गाय भैंस इत्यादिक राखना तिनमैं त्रस जीवका घात होय ही तथा जिनमंदिर करावना दानका देना पूजन करना इनमें हू आरंभ है तो कैसे त्रसहिंसाका त्याग होय? ताका उत्तर करै हैं, जो आपका परिणाम तो जीव मारनेका है नाहीं अर जीव मारने वास्ते आरंभ करै नाहीं इस कार्य करनेमैं जीव मर जाय तो भला है ऐसा राग हू नाहीं आप तो जीव विराधनातैं भयभीत हुआ गृहचाराका कार्य करनेको आरंभ करै है। जीव मारनेके वास्ते नाहीं करै है। अपने परिणाममें तो मेलता धरता उठता बैठता लेता देता जीवनिकी रक्षा करनेहीका संकल्प करै है, मारनेका संकल्प नाहीं करै, तिसके पापबंध कैसैं होय? जीव अपने आयुकर्मके आधीन उपजैं अर मरै है अपने हाथ नाहीं आप तो जेता आरंभ करै तितना दयारूप हुआ यत्नाचार्यतैं करै यत्नाचारीके भगवानका परमागममें हिंसा होते हू बंध होना नाहीं कह्या है। समस्त लोक जीवनिकरि भर्‍या है जीवनिके मरने जीवनिके आधीन

अपना उपयोग बिना हिंसा अहिंसा नाहीं है। अपने परिणामके आधीन हिंसा अर अहिंसा है। जातैं सिद्धांतमें ऐसा कह्या है जो मुनिराज चार हस्त परमाण आगेको सोधता गमन करै है अर जो पगको उठाय धरबो होय तहां जीव उछलकरि आय पड़ै अर जीव मर जाय तो मुनीश्वरनिके किंचित हू बंध नाहीं होय है क्योंकि साधुके परिणामनिमें तो इर्यासमिति पालना चित विषैं तिष्ठै था तातैं बंध नाहीं। आहार प्रासुक जानि देखि सोधि करिये है अर सूक्ष्म जीव आय पड़ै तो कौन जानैं? भगवान् केवलज्ञानी ही जाने। आप प्रमादी होय यत्नतैं देखे सोधे बिना भोजन करै तो दोषतैं लिपै। याहीतैं श्रावक प्रमाद छांडि बड़ी सावधानीतैं प्रवर्तन करता दोषकूं कैसैं प्राप्त होय? चूल्हाकूं दिनमें सोधि बुहारि ईंधन झड़काय यत्नतैं अग्नि जलावै है ऐसे ही चाकी ओखली भी सोधि झाड़ि अन्नकूं सोधि पीसण षोटणका आरंभ करै है बीधा अन्नकूं नाहीं ग्रहण करै है। अर बुहारि हू दिवसमें देखि कोमल कूंची मूंज इत्यादिकतैं जीव विराधनाका भयसहित हुआ देवैं हैं कजोडा बुहारैं हैं तथा जलकूं दोहरा दृढ़ वस्त्रतैं छानि जतन पूर्वक वरतै है तथा द्रव्यका उपार्जन हू अपना कुलके योग्य सामर्थ्य सहायादिकके योग्य जैसैं यश अर धर्म नीति नाहीं बिगड़ै तैसैं यत्नतै असि मसि कृषी विद्या बाणिज्य शिल्प इन षट् कर्मनिकरि करै हैं क्योंकि श्रावकका व्रत तो चारों वर्णोंमें होय है आपके उज्वल हिंसा रहित कर्मसूं आजीवका होती ही तो निंद्य कर्म करि संक्लेश कर्मकरि लोभादिकके वश होय पापरूप आजीवका करै नाहीं अर आपकूं अन्य आजीवकाका उपाय नाहीं दीखै तो घटायकरि पापतैं भयभीत हुआ न्यायतैं करै। क्षत्रिकुलका शस्त्र धारक होय तो दीन अनाथकी रक्षा करता दीन दुःखित निर्बलको घात नाहीं करै शस्त्र रहितकूं नाहीं मारै गिर पड्या ऊपरि घात नाहीं करै पीठ देय भाग जाय दीनता भाषै तिन ऊपरि घात नाहीं करै है अर धनके लूटनेको घात नाहीं करै अभिमानतैं वैरतैं घात नाहीं करै अपने ऊपर घात करता आवै ताकूं तथा दीनानिकूं मारनेकूं आवै तिनकूं शस्त्रतैं रोकै जो शस्त्रतै जीविका

करता होय सो केवल स्वामिधर्मतैं तथा अनाथनिका स्वामीपना आपके होय सो शस्त्र धारण करै जाके शस्त्रसंबंधी सेवा नाहीं अर प्रजाका स्वामीपना नाहीं ताकै वृथा शस्त्र धारण नाहीं होय है। अर स्याही तैं आमद खरच लिखनेकी जीविका होय तो मायाचारादिक दोष रहित स्वामीके कार्यकूं यथावत् सही लिखता जीविका करै। और माली जाट इत्यादिक कुलमें अन्य जीविका नाहीं होय तो कृषि जो खेती करि आजीविका करता हू दयाधर्मको छांडै नाहीं जो खेत पहली बहता आया होय तिसकूं परिमाण करि अधिकका त्यागी हुआ खेती करै है अधिक तृष्णा नाहीं करै यामें हू बहुत घटाय आपाकूं निं-दता खेती करै है। बहुत जल सींचै है तो हू आप अनछाण्या जल एक चल्लू मात्र हू नाहीं पीवै है कोऊ आय बहुत धन भी देवै अर कहै तुम यहां धान्यके बहुत वृक्ष छेदो हो हमतैं एक मोहर लेय हमारे एक वृक्षकी एक डाहली काट आवो तो लोभके वशि होय कदाचित् नाहीं छेदै है तथा खेतीमें बहुत जीव मरै हैं तो भी इसके जीव मारनेका अभिप्राय नाहीं केवल आजीविकाका अभिप्राय है कोऊ सौ मोहर देवै तो लोभके वशि होय अपना संकल्पतैं एक कीडी हू मारै नाहीं ऐसा व्रतमें दृढता है। अर उत्तम कुलवाला खेती करै नाहीं। बहुरि विद्याकरि आजीविका करै ऐसा ब्राह्मणादिक श्रावक हैं सो मिथ्यात्वभावका पुष्ट करनेवाला तथा हिंसाका प्रधानता लिये रागद्वेषका बधावनेवाला शास्त्रनिकूं त्याग करि उज्वलविद्या पढावै सो ही दया है। बहुरि श्रावक है सो बहुत हिंसाके खोटे वाणिज्य त्याग न्याय-पूर्वक तीव्र लोभकूं त्याग आपकी निंदा करता संतोष सहित घटाय प्रमाणीक सांचसूं व्योहार करै दयाधर्मकूं नाहीं भूलता समस्त जीवनिकूं आप समान जानता वाणिज्य करै है। बहुरि शिल्पकर्म कर-नेवाला शूद्र हू श्रावकका व्रत ग्रहण करै है सो बहुत निंदकर्मनिकूं तो टालै ही अर टालवेकूं समर्थ नाहीं तीमैं बहुत हिंसा टालि दयारूप प्रवर्तै है संकल्पतैं याकूं मारना या जाणि घात नाहीं करै। अर मंदिर बनवाना पूजन करना दान देना इन कार्यनिमैं तो निरंतर बडा यत्नाचारतैं केवल दयाधर्मके निमित्त

ही प्रवर्तन करे है। हिंसाका भाव काहेतैं होय जातैं पुरुषार्थसिद्ध्युपाय नामा ग्रंथमें श्रीअमृतचन्द्रस्वामी ऐसें कह्या है—

यत्खलु कषाययोगात्प्राणानां द्रव्यभावरूपाणां। व्यपरोपणस्य करणं सुनिश्चिता भवति सा हिंसा ॥ ४३ ॥

अर्थ—जे कषायके संयोगतैं द्रव्यप्राण जे इंद्रिय कायादिक अर भावप्राण जे ज्ञानदर्शनादिक तिनके वियोग करवो सो निश्चितहिंसा होय है। भावार्थ—जो कषायके वशि होय परके द्रव्यप्राण भावप्राणनिको वियोग करवो सो निश्चितहिंसा होय है। कषायरहितके प्राणीका मरणमात्रतैं हिंसा नाहीं होय है आप परजीवके मारनेकी कषायसहित होय ताकैं हिंसा होय है।

अप्रादुर्भावः खलु रागादीनां भवत्यहिंसेति। तेषामेवोत्पत्तिर्हिंसेति जिनागमस्य संक्षेपः ॥ ४४ ॥

अर्थ—जो रागद्वेषादिको आत्माके नाहीं प्रगट होवो सो अहिंसा है अर आत्माके परिणाममें रागद्वेषादिकनिकी उत्पत्ति होय सो ही हिंसा है। जिनेन्द्रभगवानके आगमका संक्षेप तो इस प्रकार है—बाह्यप्राणीनिका हिंसा होहू वा मत होहू जो परिणाम रागद्वेषादि कषायसहित होय सो ही अपना ज्ञानदर्शनादिरूप भावप्राणनिका घात है सो ही आत्महिंसा है जाके आत्महिंसा है ताके परकी हिंसा भी होय ही है ॥

युक्ताचरणस्य सतो रागाद्यावेशमन्तरेणापि। न हि भवति जातु हिंसा प्राणव्यपरोपणादेव ॥ ४५ ॥

अर्थ—योग्य आचरण करता सत्पुरुषकै रागद्वेषादि कषाय विना प्राणनिका घाततैं ही हिंसा कदाचित् नाहीं होय है। भावार्थ—यत्नतैं दयासहित प्रवर्तन करता पुरुषके जीवघात होते हू हिंसाकृत बंध नाहीं होय है।

व्युत्थानावस्थायां रागादीनां वशप्रवृत्तायां। म्रियतां जीवो मा वा धावत्यग्रे ध्रुवं हिंसा ॥ ४६ ॥

अर्थ—रागद्वेषादिकनिके आधीन प्रवृत्ते जे गमन आगमन उठना बैठना धरना मेलना ऐसे आरंभ

तिनमें जीवनिका मरण होहू वा मत होहू हिंसा तो निश्चयतैं आगैं दौडती है। यत्नाचाररहित होय आरंभ करे है ताके जीव अपने आयुके आधीन मरण करौ वा मत करौ आप तो अपने परिणामतैं निर्दय भया ताके हिंसाकृत बंध आगैं आगैं दौडे है ॥

यस्मात्सकषायः सन् हन्त्यात्मा प्रथममात्मनात्मानं। पश्चाज्जायेत न वा हिंसा प्राण्यन्तराणां तु ॥ ४७ ॥

अर्थ—जातैं आत्मा कषायसहित हुवो संतो प्रथम ही आप करिकै आपने हनै है पाछै अन्य प्राणीनिकी हिंसा उत्पन्न होय वा नाहीं होय। जिस काल कषायसहित आत्मा भया तिस ही कालमें अपना ज्ञानानंद वीतरागस्वरूपका घात तो अवश्य करि हो चुका।

हिंसायामविरमणं हिंसापरिणमनमपि भवति हिंसा। तस्मात्प्रमत्तयोगे प्राणव्यपरोपणं नित्यं ॥ ४८ ॥

अर्थ—जातैं हिंसाके विषै विरक्त होय त्याग नाहीं करना सो भी हिंसा है अर हिंसामें प्रवर्तन है सो हू हिंसा है तातैं प्रमत्तयोग होतैं प्राणानिका घात नित्य है। भावार्थ—अपना अर परका घात होनेकी सावधानीरहित प्रवर्तते जे मनवचनकायके योग सो प्रमत्तयोग है जहां प्रमत्तयोग है तहां सासती हिंसा है जो कोऊ हिंसा तो नाहीं करै परंतु हिंसातैं विरक्त होय हिंसाका त्याग नाहीं करै सो सूते बिलाव समान सदाकाल हिंसक ही है अर हिंसामें प्रवर्तन करै है सो हू हिंसक ही है। भावनितैं तो दोऊ हिंसक हैं बाह्यनिमित्त हिंसाका मिलो वा मति मिलो ॥

सूक्ष्मापि न खलु हिंसा परवस्तुनिबन्धना भवति पुंसः।
हिंसायतननिवृत्तिः परिणामविशुद्धये तदपि कार्या ॥ ४९ ॥

अर्थ—अन्यवस्तु है कारण जाकूं ऐसी तो सूक्ष्म हू हिंसा नाहीं है जातैं पुरुषकै जो हिंसा होय है सो तो अपना परिणाममें हिंसा करनेका भाव होतैं हिंसा होय है। इहां कोऊ पूछै जो परद्रव्यके निमित्ततैं सूक्ष्महिंसा नाहीं होय है तो बाह्यवस्तुका त्याग व्रत संयम किसवास्तै करिये हैं? ताका उत्तर करै हैं—

यद्यपि हिंसकपरिणाम होय तादि ही जीवके हिंसा होय परंतु हिंसा होनेके स्थानानिमें प्रवर्तेगा ताके हिंसाके परिणाम कैसें नाहीं होयगा? तातैं परिणामकी विशुद्धताके अर्थि जहां हिंसा होय ऐसे स्थान पान ग्रहण आसन वचन चिंतवनादिक त्याग करने योग्य है ।

निश्चयमबुद्ध्यमानो यो निश्चयतस्तमेव संश्रयते । नाशयति करणचरणं स बहिःकरणालसो बालः ॥५०॥

अर्थ—जो जीव निश्चयनयका विषय रागादि कषायरहित शुद्धात्मा रूपकूं तो जाण्या नाहीं अर मेरा भाव कषायरहित है मेरे समस्त प्रवृत्तिमें हिंसा नाहीं ऐसा वृथा निश्चय करता निरर्गल यथेच्छ प्रवर्ते है सो अज्ञानी बाह्य आचरणमें प्रवृत्ति छांडि प्रमादी हुआ करणचरणरूप चारित्रका नाश करे है । भावार्थ—जाका परिणाम रागद्वेषरहित भया ते अयोग्य भोजन पान धन परिग्रह आरम्भादिकमें कैसें प्रवर्तन करैगा जो हिंसासूं विरक्त है सो हिंसा होनेके कारण दूरहीतैं छांडैगा । अब और हू पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें कहे हैं, कोऊ तो हिंसा नाहीं करके अर हिंसाके फलका भोगनेवाला होय है जैसें आयुध बनावनेवाले लुहार सिकलीगर हिंसा नाहीं करिकैं हू तंदुलमच्छकी ज्यों हिंसाके फलकूं प्राप्त होय हैं । अर कोऊ दयावान होय यत्नाचारतैं जिनमंदिर बनावनेवाला बाह्यहिंसा होते हू हिंसाके फलकूं नाहीं प्राप्त होय है । कोऊ पुरुष हिंसा तो अल्प करी परंतु तीव्र रागद्वेषरूप भावनितैं करने करि उदयकालमें महाफलकूं प्राप्त होय है । बहुरि केई अनेक पुरुष मिलि करकें एक हिंसा करी परंतु उस हिंसा करनेमें कोऊ तो तीव्र रागवाला सो तीव्रफलकूं प्राप्त होय है मंदकषायवाला मंदफलकूं प्राप्त होय है मध्यमकषायवाला मध्यमफलकूं प्राप्त होय है । तथा कोऊ पुरुषके हिंसा तो पाछें काल पाय बनेगी परंतु हिंसाके परिणाम करनेतैं हिंसाका फल पहले ही उदय होय रस दे है । अर कोऊके हिंसा करतां करतां फल है जैसें कोऊ पुरुष अन्य कोऊकूं मारण करै तिस कालमें ही उसका प्रहारतैं आपहू मार्‍या जाय है । कोऊके पूर्वै करी पाछें फले है । कोऊ हिंसाका आरंभ तो किया अर पाछें बन सकी नाहीं सो हू फले है जैसें कोऊका घात

करनेका उपाय किया सो तो बणि सक्या नाहीं अर पाछैं वे जानि आपका घात किया ही । बहुरि हिंसा तो एक करै अर हिंसाका फल अनेक पुरुष भोगै जैसैं चोर तथा हत्याराकूं मारै वा सूली चढावै तो एक चांडाल अर देखनेवाले अनेक तमासगीर पापबंधकरि फल भोगवै हैं । अर संग्राममें हिंसा करनेवाला तो बहुत योद्धा होय हैं अर फल भोगनेवाला एक राजा होय है तातैं करै एक अर भोगै अनेक हैं अर करै अनेक भोगै एक है । बहुरि कोऊके तो हिंसा करी हुई हिंसाहीका फल देहै अर अन्यके सो ही हिंसा अहिंसाका फल देहै जैसैं कोऊ पुरुष किसी जीवकी रक्षा करनेकूं यत्न करै छा यत्न करते हू उसका मरण होय गया तो वाकै रक्षाका अभिप्रायतैं अहिंसाहीका फल होयगा अर कोऊका परिणाम तो किसीके मारनेका था आपदाकूं प्राप्त करनेका था अर उसका पुण्यका उदयतैं आपदा हू नाहीं भई अर मरण हू नाहीं भया अनेक लाभ भया तो मारनेके अर्थीकौं तो पापहीका बंध होय है । अर कोऊका परिणाम किसीकूं दुःख देनेका नाहीं था सुख देनेका वा रक्षा करनेका था अर उसके दुःख होगया वा मरण होगया तो सुख देनेका परिणामकरि वाकै पुण्यबंध ही होयगा । इसप्रकार अनेक भंगनिकरि गहन यो जिनेन्द्रका मार्ग है यामें एकांती मिथ्यादृष्टिनिका पार होना अतिकष्टतैं हू नाहीं होय । अनेकांतके प्रभावतैं नयसमूहके जाननेवाला गुरु ही शरण है । यो जिनेंद्रभगवानको नयचक्र तीक्ष्णधाराकूं धारण करता एकांती दुष्टआग्रहसहित मिथ्यादृष्टिनिका मिथ्यायुक्तिनिकी हजारां खण्ड करनेवाला है । यातैं भो ज्ञानीजन हो ! भगवान वीतरागकी आज्ञातैं प्रथम ही हिंसा होने योग्य जे जीवनिके स्थान इंद्रियकायादिक जीवनिके कुलकोड तिनकूं जानो । बहुरि हिंसा करनेवाला भाव ताकूं जानो । बहुरि हिंसाका स्वरूप कहा है ताकूं जानो । बहुरि हिंसाका फलकूं जानो । ऐसैं हिंस्य हिंसक हिंसा हिंसाका-फल इन चारकूं यत्नतैं जानि करिके पाछैं देशकाल सहाय अपना परिणाम अर निर्वाह होना जानि अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय गृहस्थपणामें हू अपने पदके योग्य हिंसाका त्याग ही करो तथा त्रसजी-

वनिकी संकल्पी हिंसाका तो त्याग करो अर समस्त आरम्भमें दयावान हुआ यत्नाचारतें प्रवर्तन करो अर पंचस्थावरनिका आरम्भमें घटाय करि दयावान होय प्रवर्तो। ऐसें अहिंसा अणुव्रतका स्वरूप कह्या अब अहिंसाणुव्रतका पंच अतीचार जनावनेकूं सूत्र कहे हैं—

छेदनबंधनपीडनमतिभारारोपणं व्यतीचाराः। आहारवारणापि च स्थूलवधाद्व्युपरतेः पंच ॥ ५४ ॥

अर्थ—ये स्थूलहिंसाका त्याग नामक व्रतके पंच अतीचार हैं ते गृहस्थके त्यागने योग्य हैं। छेदन कहिये अन्य मनुष्यतिर्यंचनिके कर्ण नासिका ओष्ठादिक अंगनिका छेदना सो छेदन नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर मनुष्यनिकूं बंधनादिककरि बांधना तथा बंदीगृहमें रोकना तथा तिर्यंचनिकूं दृढबंधनकरि बांधना पक्षीनिकूं पींजरेमें रोकना इत्यादिक बंधन नाम अतीचार है ॥ २ ॥ अर मनुष्यतिर्यंचनिकूं लात घमूका लाठी चाबुक आदिका घातकरि ताडना करना सो पीडन नाम अतीचार है ॥३॥ बहुरि मनुष्य-तिर्यंच गाडा गाडी इत्यादिक ऊपरि बहुत बोझका लादना सो अतिभारारोपण नाम अतीचार है॥ ४॥ अर मनुष्यतिर्यंचनिकों खावने पीवनेको रोकना सो अन्नपानका निराकरण नामा अतीचार है ॥ ५॥ ये पांच अतीचार स्थूलहिंसाका त्यागीकूं त्यागने योग्य है। अब सत्य नाम अणुव्रतके कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

स्थूलमलीकं न वदति न परान् वादयति सत्यमपि विपदे। यत्तद्वदन्ति सन्तःस्थूलमृषावादवैरमणं ॥ ५५ ॥

अर्थ—जो स्थूल असत्य नाहीं बोलै अर परकूं असत्य नाहीं बुलावै अर जिस वचनतैं आपके अन्यके आपदा आवै ऐसा सत्य हू नाहीं कहै ताहि सत्पुरुष स्थूलझूंठका त्याग कहै हैं। भावार्थ—सत्य अणुव्रतका धारक होय सो क्रोधमानमायालोभके वशीभूत होय ऐसा वचन नाहीं कहै जाकरि अन्यका घात होजाय अन्यका अपवाद होजाय अन्यकै कलंक चढि जाय सो वचन निंद्य है। जिस वचनतैं मिथ्याश्रद्धान होजाय तथा धर्मसूं छूटि जाय व्रत संयम त्यागतैं शिथिल होजाय श्रद्धान विगडि जाय

सो वचन नाहीं कहै तथा कलह विसंवाद पैदा हो जाय विषयानुराग बधि जाय महाआरंभमें प्रवृत्ति होजाय अन्यके आर्त्तध्यान प्रगट होजाय कामवेदना प्रगट होजाय परके लाभमें अंतराय होजाय परकी जीविका विगाडि जाय अपना परका अपयश होजाय ऐसा निंद्यवचन योग्य नाहीं तथा ऐसा सत्य वचन हू नाहीं कहै जाकरि आपको अन्यको विगाड होजाय आपदा आजाय अनर्थ पैदा होजाय दुःख पैदा होजाय मर्म छेद्या जाय राजका दंड होजाय धनकी हानि होजाय ऐसा सत्यवचन हू झूठ ही है। बहुरि गालीके वचन भंडवचन नीचकुलवालेनिके बोलनेके वचन तथा मर्मछेदके वचन परके अपमानके वचन परके तिरस्कारके वचन अहंकारके वचनकूं कदाचित् नाहीं कहै। जिनसूत्रके अनुकूल तथा आपका परका हितरूप अर बहुत प्रलाप रहित प्रमाणीक संतोषका उपजानेवाला धर्मका उद्योत करनेवाला वचन कहै जातैं न्यायरूप आजीविका सधै अनीतिरहित होय ऐसे वचनको कहता गृहस्थके स्थूल असत्यका त्यागरूप द्वीतिय अणुव्रत होय है। अब सत्याणुव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

पारिवादरहोभ्याख्या पैशून्यं कूटलेखकरणं च। न्यासापहारितापि च व्यतिक्रमाः पंच सत्यस्य ॥ ५६ ॥

अर्थ—इहां परिवाद तो मिथ्याउपदेश है जो स्वर्गमोक्षका कारण जो चारित्र तिस चारित्रकूं अन्यथा उपदेश करना सो परिवाद नाम अतीचार है॥ १ ॥ अर कोऊ आपकूं छानी बात कही होय सो किसीकूं कह देना विख्यात करि देना तथा कोऊ स्त्रीपुरुषादिकनिका एकान्तमें गुह्य चेष्टा देख करिकैं तथा गुह्यवचन श्रवण करि किसीकूं प्रगट करना सो रहोभ्याख्यान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यका छिद्र जानि विगाडि करानेके अर्थि कोऊकूं छिपकरि कह देना चुगली करना सो पैशून्यनाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि अन्यके विना कह्या तथा विना आचरण किया झूठा लिख देना जो इसने ऐसा कह्या है ऐसा आचरण किया है सो कूटलेखकरण नामा अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि कोऊ आपको धन सौंपि गया तथा वस्त्र आभरणादिक मेलि गया फिर संख्या भूलि अल्प मांगने आया ताकूं कहै तुम्हारा है

सो ही लेजावो सो न्यासापहारिता अतीचार है ॥५॥ ऐसैं स्थूल असत्यका त्याग नाम अणुव्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। इहां ऐसा विशेष जानना जो अनादितैं अनंकाल तो यो जीव निगोदमें ही वास किया। फिर कदाचित् निगोदिमेंतैं निकसि करिकैं फिर पंच स्थावरनिमें असंख्यातकाल परिभ्रमणकरि बहुरि निगोदमें अनंतकाल बारंबार अनंतानंत परिवर्तन एकेन्द्रियमें किए तहां तो वचन पाया नाहीं जिह्वा इंद्रिय ही नाहीं भई बहुरि द्वीन्द्रिय त्रीन्द्रिय चतुरिंद्रिय असैनी सैनी पंचेन्द्रियमें उपज्या तहां जिह्वा पाई तो अक्षरात्मक कहने सुननेरूप वचन नाहीं पाया। कदाचित् अनंतानंतकालमें मनुष्य जन्ममें वचन बोलनेकी शक्ति पाई तो नीच कुलनिमें अयोग्य वचन हिंसाके वचन असत्य वचन परके अर आपकै संताप करनेवाला वचन बोलि महापापबंध करि दुर्गतिका पात्र भया अपने वचन करि अपना घातक भया। कदाचित् कोऊ पूर्वपुण्यके उदयकरि मनुष्यजन्म पाया है तो यामें वचन बोलनेमें बडा यत्न करो। भोजनपान करना कामसेवन करना नेत्रानितैं देखना कानानितैं श्रवण करना तो शूकर कूकर गधा कागलाकै भी होय है क्योंकि आंख नाक कान जीभ कामेन्द्रिय ये तो समस्त ढोरनिके भी होय हैं। इस मनुष्यजन्ममें तो एक वचन ही सार है करामाति है जो इस वचनकूं बिगाड्या सो अपना समस्त जन्म बिगाड्या। बचनतैं ही जानिये है यो पंडित है यो मूर्ख है यो धर्मात्मा है यो पापी है यो राजा है वा राजाका मंत्री है यो रंक है यो कुलीन है यो अकुलीन है यो हीणाचारी है यो उत्तमाचारी है यो संतोषी है यो तीव्रलोभी है यो धर्मवासनासहित है यो धर्मवासनारहित है यो मिथ्यादृष्टि है यो सम्यग्दृष्टि है यो संस्कृती है यो संस्कृत रहित है यो उत्तम संगातिको राजसभामें रह्यो हुवो है यो ग्राम्यजन गंवारनिमें रह्यो है यो लौकिकचतुर है यो लौकिकमूढ है यो हस्तकलासहित है यो कलाविज्ञानरहित है यो उद्यमी पुरुषार्थी है यो आलसी प्रमादी है यो शूर है यो कायर है यो दातार है यो कृपण है यो दयावान है यो निर्दय है यो दीन याचक है यो महंत है यो क्रोधी है यो क्षमावान है

यो मदोद्धत है यो मदरहित है यो विनयवान है यो कपटी है यो निष्कपट है यो सरल है यो वक्र है इत्यादिक आत्माके गुणदोषादिक समस्त वचनद्वारे ही प्रगट होय है, यातैं मनुष्य जन्म पावना सफल किया चाहो तो एक वचनहीकी उज्वलता करो। इस वचनहीतैं सत्यार्थ उपदेशकरि भगवान अरहंत त्रैलोक्यकरि वंदनीक होय जगतको मोक्षमार्गमें प्रवर्तन कराया है वचनहीतैं अनेक जीवनिका मिथ्यात्वरागादिक मल दूरकरि अजर अमर अविनाशी पद दिया है। पंचपरमेष्ठीमें भी वचनकृत उपकारके प्रभावतैं प्रथम अरिहंतनिकूं ही नमस्कार किया है। ज्ञानी वीतरागीके वचनकरि स्वर्ग नरकादिक तीन लोक प्रत्यक्षकी ज्यौं दीखैं है। वचनहीकी सत्यताके प्रभावकरि पंचमकालमें धर्म प्रवर्तैं है। अर उज्वल वचन विनयका वचन प्रियवचनरूप पुद्गलनि करि समस्त लोग भरया है मोल नाहीं लागै तथा किसीकूं जीकारो देनेमें अपना अंगमें दुःख नाहीं उपजै है जीभ तालू कंठ नाहीं भिदै है यातैं समस्त प्राणीनिके सुख उपजावै ऐसा प्रियवचन ही कहो अर असत्यवचनके प्रभावकरि ही मिथ्यादेवनिकी आराधना तथा यज्ञादिक हिंसाके प्ररूपक वेदादिक ग्रंथनिमें मांस भक्षणादिक कुकर्मनिमें प्रवृत्ति हू असत्य वचनतैं ही भई है तथा खोटे शास्त्रनिकी रचना नानाप्रकारके मिथ्यात्वरूप मत नरक तिर्यंचनिमें परिभ्रमण करावनेवाला समस्त दुष्ट आचार इस असत्य वचनके प्रभावकरि ही प्रवृत्तैं है अर अयोग्यवचनतैं ही घर घरमें कलह विसंवाद परस्पर वैर परस्पर ताड़न मारन प्राणापहार क्रोधभय संतापभय अपमानादिक देखिये है अर अप्रतीत अविश्वास खेदका कारण एक असत्य वचनहीकूं जानो। अर असत्यका प्रभावकरि परलोकमें नरकातिर्यंचगतिकूं प्राप्त होय अरु कुमानुषनिमें तथा नीच चांडाल चमार भील कषायी इत्यादिक कुलमें हू असत्य ही उपजावै तथा अनेक भवनिमें दरिद्री रोगी गूंगो बहरो हीण दीन असत्यका प्रभावतैं होय है तातैं समस्त दुःखका मूल एक असत्यवचन है सो शीघ्र ही त्याग करि एक सत्यवचन प्रियवचनहीमें प्रवृत्ति करो। तातैं तुम्हारा वचन समस्तके आदरने योग्य

अनेक देव मनुष्यनिके ऊपरि आज्ञा करने योग्य होय तथा समस्तश्रुतका परिगामी श्रुतकेवलीपना गणधरपना सत्यहीका प्रभावतैं प्राप्त होय है यातैं असत्यका त्याग ही जीवका कल्याण है। बहुरि पुरुषार्थसिद्ध्युपायमें कहे हैं—

हेतौ प्रमत्तयोगे निर्दिष्टे सकलवितथवचनानां। हेयानुष्ठानादेरनुवदनं भवति नासत्यं ॥ १०० ॥

भोगोपभोगसाधनमात्रं सावद्यमक्षमा मोक्तुं। ये तेऽपि शेषमनृतं समस्तमपि नित्यमेव मुञ्चन्तु ॥ १०१ ॥

अर्थ—समस्त असत्यवचनको कारण प्रमत्तयोग भगवान कह्यो है कषायके आधीन होय जो वचन कहे है सो असत्य है यातैं कषायविना देना मेलना धरना त्यागना ग्रहण करना इत्यादिकका कहना सो असत्य नाहीं है अर जे गृहस्थ अपना भोग उपभोगका साधनमात्र सदोष वचन त्यागनेकूं समर्थ नाहीं हैं ते गृहस्थ अन्य निरर्थक पापबंध करनेवाला समस्त असत्यवचनकूं तो त्याग अवश्य ही करो। भावार्थ—अपना भोग उपभोगका साधनमात्र सदोष वचनका त्याग नाहीं होय सके तो ताका त्याग करनेमें बडा उद्यम राखणा अर वृथा बहु आरम्भ बहुपरिग्रहका कारण दुर्ध्यानका कारण अन्यके आपकै संतापका कारण ऐसा सदोष निंद्यवचनका तो त्याग अवश्य करना ही श्रेष्ठ है। ऐसैं स्थूलअसत्यका त्याग नामा दूजा अणुव्रतकूं कह्या है। अब स्थूलचोरीका त्याग नामा तीजा अणुव्रतकूं कहे हैं—

निहितं वा पतितं वा सुविस्मृतं वा परस्वमविसृष्टं। न हरति यन्न च दत्ते तदकृशचौर्यादुपारमणं ॥ ५७ ॥

अर्थ—जो किसी पुरुषका जमींमें गड्या हुआ धन होय वा कोऊ स्थानमें महल मन्दिर गृहादिकमें स्थापन किया हुआ धन होय अथवा आपकूं अमानत सौंपि गया होय वा अपने मकानमें तथा परके स्थानमें आपकूं नाहीं जनाया धर गया होय अथवा ग्राममें नगरमें वनमें बागमें पटकि गया होय अथवा आपको सौंपि भूलि गया होय वा हिसाब लेखामें चूकि गया होय वा आपके स्थानमें भूलिकरि पटकि गया होय अथवा लेनेदेनेमें गिनतीमें विस्मरण हुआ पैसा रुपया महोर आभरण वस्त्रादिक

बहुत वा अल्प द्रव्य बिना दिया नाहीं ग्रहण करै अर परका द्रव्य उठाय किसीकूं देवे भी नाहीं सो स्थूल चोरीका त्यागरूप अणुव्रत है। अर कार्तिकेयस्वामी ऐसैं कह्या है—

जो बहुमुल्लं वत्थुं अप्पमुल्लेण णेय गिण्हेदि। वीसारियं पि ण गिण्हेदि लाहे थूवेहि तूसेदि ॥ ६३५ ॥

अर्थ—जाके स्थूलचोरीका त्याग होय सो बहुत मोलकी वस्तु अल्पमोलमें नाहीं ग्रहण करै जैसैं कोऊ पुरुष आपको वस्तुको चोकासि करि बेचै तो सवारुपयामें बिक जाय अर आपकूं आय सौंपी जो इसकी कीमत होय सो आप देवो तो तहां सवारुपयाका वस्तुकूं प्रगट जानता लोभके वाशि हो एक रुपयामें हू नाहीं लेवै। अन्यकी भूली हुई वस्तु ग्रहण नाहीं करै तथा ऐसा परिणाम नाहीं करै जो कोऊ निर्धन तथा अज्ञानीकी वस्तु हमारे थोडे मोलमें आजाय तो भला है अर अल्प लाभहीमें बहुत संतोष राखै। भावार्थ—बनजके व्यवहारमें तथा सेवामें लाभ थोरा होय तो संतोष ही करै अधिकमें लालसा नाहीं करै तिसके स्थूलचोरीका त्याग जानना। अब अचौर्य नामा अणुव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

चौरप्रयोगचौरार्थादानविलोपसदृशसन्मिश्राः। हीनाधिकविनिमानं पंचास्तेये व्यतीपाताः ॥ ५८ ॥

अर्थ—अचौर्य नाम अणुव्रतके ये पंच अतीचार हैं आप तो चोरी नाहीं करै परंतु अन्यकूं प्रेरणा करै तथा चोरी करनेका प्रयोग (उपाय) बतावै सो चोरप्रयोग नामा अतीचार है ॥ १ ॥ अर चोरका ल्याया धनको ग्रहण करणा सो चौरार्थादान नामा दूसरा अतीचार है ॥ २ ॥ अर उचित न्यायतैं छांडि अन्यरीतितैं ग्रहण करना अथवा राजाकी आज्ञासूं जाका निषेध होय तिस कार्यका करना विलोप नामा अतीचार है ॥ ३ ॥ अर बहुत मोलकी वस्तुमैं अल्पमोलकी वस्तु मिलाय चला देना सो सदृशसन्मिश्र नामा अतीचार है जैसैं घृतमैं तेल मिलाय देणा शुद्धसुवर्णमें कृत्रिमसुवर्ण मिलाय देना सो सदृशसन्मिश्र है ॥ ४ ॥ बहुरि देनेके बांट ताखडी घाटि परिमाण राखना लेनेकूं बधती राखना सो हीनाधिकमानो-

न्मान नामा अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसें स्थूल चोरीका त्याग नामा अणुव्रतके पंच अतीचार त्यागने योग्य हैं। इस चोरी समान जगतमें अपराध नाहीं है समस्त उच्चता कुलकर्म धर्मविनाश करनेवारी समस्त प्रतीति बडापनाका विध्वंस करनेवाली है अर चोरीका धन हू वेश्यासेवनमें परस्त्रीमें व्यसननिमें अभक्षमें खरच होय है वा अन्य किसीमें रही जाय है संतोष नाहीं आवे है क्लेशित होय रहे है अर प्रगट होय तो राजा तीव्र दंड देहै समस्त लोक मारे है हस्तनासिकाका छेदन सर्वस्वहरणादिक दंड यहां ही प्राप्त होय है परलोकमें नरकादिक कुयोनिनमें परिभ्रमण होय है। अब स्थूल ब्रह्मचर्य नामा अणुव्रतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

न च परदारान् गच्छति न परान् गमयति च पापभीतेर्यत्। सा परदारनिवृत्तिः स्वदारसंतोषनामापि ॥ ५९ ॥

अर्थ—जो पापका भयतैं परकी स्त्रीप्रति आप नाहीं प्राप्त होय अर परकी स्त्री प्रति अन्य पुरुषनिनैं गमन नाहीं करावै सो स्वदारसंतोषनामधारक परस्त्रीका त्याग नामा चौथा अणुव्रत है। भावार्थ—जो अपने जाति कुलकी साखतैं विवाही स्त्री तिसविषै संतोष धारण करके तिसतैं अन्य समस्त स्त्रीमात्रमें रागभावका त्यागी होय परस्त्री तथा वेश्या दासी तथा कुलटा तथा कन्या इत्यादिक स्त्रीनिमें विरागताकों प्राप्त होय स्त्रीनिसूं रागभावकरि संगम वचनालाप अवलोकन स्पर्शनका त्याग करै ताकूं परस्त्रीका त्यागी कहिये तथा स्वदारसंतोषी हू कहिये है। अब स्वदारसंतोषव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

अन्यविवाहाकरणानङ्गक्रीडाविटत्वविपुलतृषाः। इत्वरिकागमनं चास्मरस्य पंच व्यतीचाराः ॥ ६० ॥

अर्थ—ये अस्मर जो स्थूल ब्रह्मचर्य ताके पंच अतीचार हैं ते त्यागने योग्य हैं। अपने पुत्र पुत्री विना अन्यके पुत्रपुत्रीनिका विवाहकूं आ संमतात् कहिये आप रागी होय करवो सो अन्य विवाहकरण नाम अतीचार है ॥ १ ॥ अर कामके अंग छांडि अन्य अंगनितैं कीडा करिवो सो अनंगक्रीडा नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि भंडिमारूप पुरुषकूं स्त्रीका रूप स्वांगादिक बनाय मनवचनकायकी प्रवृत्ति

सो विटत्व नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि कामकी अतितृष्णा कामकी तीव्रता सो अतितृष्णा नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि इत्वारिका जे व्यभिचारिणी स्त्री तिनके घर जावना व्यभिचारिणींकूं आपके घर बुलावना देन लेन रखना परस्पर वार्ता करना रूप शृंगार देखना सो इत्वरिकागमन नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ये स्थूल ब्रह्मचर्यव्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। जो देवनिकरि पूज्य यो ब्रह्मचर्यव्रत ताकी रक्षा किया चाहै सो अपनी विवाही स्त्री विना अन्य माता भगिनी पुत्री पुत्रवधूके नजीक हू एकांतस्थानमें नाहीं रहै अन्य स्त्रीका मुख नेत्रादिककूं अपना नेत्र जोड नाहीं देखै। शीलवंतपुरुषनिका नेत्र अन्यस्त्रीकूं देखत प्रमाण मुद्रित हो जाय हैं । अब परिग्रहपारिमाण नामा अणुव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

धनधान्यादिग्रन्थं परिमाय ततोऽधिकेषु निस्पृहता। परिमितपरिग्रहः स्यादिच्छापरिमाणनामापि ॥ ६१ ॥

अर्थ—अपने परिणामनिमें जेतामें संतोष आजाय तितना धन धान्य द्विपद चतुष्पद गृहक्षेत्र वस्त्र आभरणादि परिग्रहका परिमाण करकें अधिक परिग्रहमें निर्वांछकपनो सो परिमितपरिग्रह नाम व्रत है याहीकूं इच्छापरिमाण नाम कहिये है। बहुरि कोऊके वर्त्तमानमें परिग्रह अल्प है अर बांछा अधिक करि बहुत धनमें परिमाण करि मर्याद करै है सो हू धर्मबुद्धि है व्रती है परंतु अन्यायतैं लेवाका त्याग दृढ राखै जैसें कोऊके परिग्रह तो सौ रुपयाका है परिमाण हजारका करै जो हजार सिवाय नाहीं ग्रहण करूं यो भी व्रत है परंतु हजार अन्यायतैं नाहीं ग्रहण करूंगा ऐसा दृढ नियम करै जातैं परिग्रहका परिमाण बिना निरंतर परिणाम अनेक वस्तुनिमें परिभ्रमण करै है। समस्त पापनिका मूलकारण परिग्रह है समस्त दुर्ध्यान याहीतैं होय है जातैं भगवान मूर्छाकूं परिग्रह कह्या है। बाह्यपरिग्रह अन्य वस्त्रमात्र तथा रहनेकूं कुटीमात्र नाहीं होतै हू परवस्तुमें ममता (बांछा) करिसहित है सो परिग्रही ही है परमागममें अंतरंग परिग्रह चौदह प्रकार कह्या है—मिथ्यात्व १ वेद २ राग ३ द्वेष ४ क्रोध ५ मान ६ माया ७ लोभ ८

हास्य ९ रति १० अरति ११ शोक १२ भय १३ जुगुप्सा १४। तहां मिथ्यात्वतें तो देहादिक परद्रव्यनिमें अनादिकालतैं ममतारूप परिणाम हैं यह देह है सो मैं हूं जाति मैं हूं कुल मैं हूं इत्यादिक परपुद्गलनिमें आत्मबुद्धि अनादितैं लाग रही है सो मिथ्यात्व है तथा रागद्वेषभाव क्रोधादिकभाव मोहकर्मकरि किए भावनिमें आत्मपनाको संकल्प सो मिथ्यात्वपरिग्रह है। तथा कामतैं उपज्या विकारमें लीन हो जाना तथा राग द्वेष क्रोध मान माया लोभ हास्यादिक छह नोकषायनिमें आपा धारन सो अतरंग परिग्रह है जाकै अंतरंगपरिग्रहका अभाव है ताकै बाह्यपरिग्रहमें ममता नाहीं होय है समस्त अनीति परिग्रहकी ममतासूं करे है। परिग्रहकी बांछातैं हिंसा करै झूठ बोलै ही चोरी करै ही कुशीलसेवन करै ही परिग्रहके वास्ते मरजाय अन्यकूं मारै महा क्रोध करै परिग्रहका प्रभावतैं महाअभिमान करै परिग्रहवास्ते अनेक मायाचार करै परिग्रहकी ममतातैं महालोभ करै बहुत आरंभ बहुत कषायको मूल परिग्रह ही है समस्त पापनितैं छूट्या चाहै सो परिग्रहतैं विरक्त होय है सो ही कार्तिकेयस्वामी कह्या है–

को ण वसो इत्थिजणे कस्स ण मयणेण खंडियं माणं। को इंदिएहिं ण जिओ को ण कसाएहि संतत्तो २८१
सो ण वसो इत्थिजणे सो ण जिओ इंदिएहिं मोहेण। जो ण य गिण्हदि गंथं अब्भंतरबाहिरं सव्वं २८२
जो लोहं णिहणित्ता संतो सरणायणेण संतुट्ठो। णिहणदि तिण्णा दुट्ठा मण्णंतो विणस्सरं सव्वं ॥ ३३९॥
जो परिमाणं कुव्वदि धणधाणसुवण्ण खित्तमाईणं। उवओगं जाणित्ता अणुव्वयं पंचमं तस्स ॥ ३४०॥

अर्थ–इस जगतमें स्त्रीनिके वश कौन नाहीं है अर कामविकारनें कौनका मान खंडन नाहीं किया अर इंद्रियनिकरि कौन नाहीं जीत्या गया अर कषायनिकरि तप्तायमान कौन नाहीं है? समस्त संसारी जीव है ते स्त्रीनिके वश होय रहे हैं अर कामविकार समस्त संसारीनिका अभिमान खंडन करे है अर समस्त संसारी इंद्रियनिके वश पराधीन होय रहे हैं अर चार प्रकार कषायनिकार समस्त प्राणी दग्ध होय रहे हैं जो पुरुष अभ्यंतर अर बाह्य समस्त परिग्रहकूं ग्रहण नाहीं करे है सो ही स्त्रीनिके वश नाहीं

सो ही इंद्रियनिके आधीन नाहीं तिसहीकूं मोह नाहीं जीतै सो ही कामकरि नाहीं खंडन होय है सो ही कषायकरि दग्ध नाहीं होय है। जो पुरुष लोभको नष्टकरि संतोषरूप रसायणकरि आनंदित हुआ समस्त धन संपदादिकनिनै विनाशीक मानि दुष्ट तृष्णाकूं आगामी बांछाकूं छांडिकरि धन धान्य सुवर्ण क्षेत्र स्थानादिकनिको अपना अभिप्राय जानि परिणाम करै है जो इतना परिग्रहसूं मेरा निर्वाह करना अधिकमें मेरा प्रवृत्ति करनेका त्याग है ऐसे पापरूप जानि बांछा छांडै ताकै परिग्रहपरिमाण नामा अणुव्रत होय है। बहुरि परमागममें परिग्रहका लक्षण मूर्छा कह्या है जीवकै जो परपदार्थनिमें ममता-बुद्धि सो ही मूर्छा है जातैं परवस्तुमें ऐसा अपना मानकरि राग है जो आत्माका मरण जीवन हित अहित योग्य अयोग्यके विचारमें अचेत होय रह्या है मोहकी उदीरणातैं म्हारो म्हारो ऐसो परद्रव्यमें परिणाम सो ही मूर्छा है। मूर्छा हीकूं भगवान परिग्रह कह्या है याहीतैं बाह्यपरिग्रह अल्प होहु वा मति होहु समस्त परिग्रहरहित है तो हू मूर्छावान परिग्रही है सो ही कहै हैं—

बाहिरगंथविहीणा दलिद्दमणुआ सहावदो हुंति। अब्भंतरगंथं पुण ण सक्कदे को वि छंडेदुं ॥ ३८७ ॥

अर्थ—बाह्य परिग्रह रहित तो दरिद्री मनुष्य स्वभावहीतै होय है सो देखिये ही है हजारां लाखां मनुष्य ऐसे हैं जिनकूं जन्मलिये पीछे पीतल तांबा कांसाका पात्र मिल्या ही नाहीं जे जन्मतैं घृत भक्षण किया नाहीं मोदकादिक खाया नाहीं पाग अंगरखी जामा कदे पहरह्या ही नाहीं स्त्री विवाही ही नाहीं कदे उदर भर भोजन मिल्या नाहीं सुवर्णादिक देख्या नाहीं समस्त जन्ममें दोय चार दिनके खावने योग्य अन्नमात्रका हू संग्रह हुआ नाहीं अन्य सुवर्णरूपादिकनिका तो दर्शन ही नाहीं पैसा रुपया एक भी जिनकूं कदे प्राप्त हुआ नाहीं रहनेकूं कुटीमात्र हू अपनी भई नाहीं ऐसे अनेक मनुष्य देखिये हैं परंतु अभ्यंतर ममता छोडनेकूं कोऊ सामर्थ नाहीं तातैं मूर्छा ही परिग्रह है। यहां कोऊ पूछै जो मूर्छा ही परिग्रह है तो बाह्य धनधान्यवस्त्रादिक बाह्यवस्तुका संगमके परिग्रहपना नाहीं ठहरया ताकूं उत्तर करै

हैं—ये बाह्यपरिग्रह अंतरंगपरिग्रहके निमित्त हैं इन बाह्यपरिग्रहका देखना श्रवण करना चिंतवन करना शीघ्र ही परिग्रहमें लालसा उपजावै है ममता उपजावै है अचेत करे है तातैं बहिरंगपरिग्रह मूर्छाका कारण त्यागने योग्य है अर अंतरंग बहिरंग दोऊ प्रकार परिग्रहके ग्रहणकूं भगवान हिंसा कही है अर दोय प्रकारका परिग्रहका त्याग सो अहिंसा है ऐसैं परमागमके जाननेवाले कहै हैं। जातैं मिथ्यात्वकषायादिक अंतरंगपरिग्रह तो हिंसाहीके दूजे पर्यायनाम हैं अर बाह्यपरिग्रहमें मूर्छा सो ही हिंसा है। बहुरि ये कृष्णादिक लेश्याके अशुभपरिणाम हू परिग्रहमें रागकरि ही होय हैं क्योंकि परिणामनिकी शुद्धता मंदकषायकरि होय है कषायनिकी मंदता होय सो परिग्रहके अभावतैं होय अर महान आरंभ भी परिग्रहका अधिकतातैं ही होय है ऐसैं जानि समस्त परिग्रह छांडनेका राग नाहीं घट्या तो परिग्रहमें उपयोग माफिक परिणाम करिकैं तो रहो। अर जो परिग्रह तो अल्प है अर अधिककी बांछा बनि रही है सो इस बांछातैं प्राप्त नाहीं होयगा लाभ तौ अंतरायकर्मका क्षयोपशमत होयगा बांछातैं तो और पाप कर्मका बंध ही होयगा तातैं पापका कारण परिग्रहकी ममता छांडि जेता प्राप्त भया तितनामें संतोष धारण करि ही रहो। यहां ऐसा विशेष जानना, यद्यपि समस्त परिग्रह त्यागने योग्य है परंतु जो गृहस्थपनामें रहि धर्मसेवन कऱ्या चाहै सो अपने पुण्यके अनुकूल परिग्रह राखै ही जो परिग्रह गृहस्थके नाहीं होय तो काल दुकालमें रोगमें वियोगमें व्याहमें मरणमें परिणाम ठिकाने रहै नाहीं परिणाम बिगाडि जाय तातैं गृहस्थधर्मकी रक्षावास्तै परिग्रह संचय करै ही अर आजीविकाको उपाय न्यायमार्गत करै ही क्योंकि साधु तो परिग्रह अल्प हू राखै तो दोऊ लोक तैं भ्रष्ट होजाय अर गृहस्थ परिग्रह नाहीं राखै तो भ्रष्ट होजाय जातैं गृहस्थाचारमें रहै तो ताके अल्प तथा बहुत परिग्रह बिना परिणाममें समता नाहीं रहै अर अजीविका नाहीं होय तो निराधारका परिणाम धर्मसेवनमें ठहर सकै नाहीं परिणाममें तीव्र आर्ति मिटै नाहीं भोजनपान मिलने योग्य आजीविका बिना स्वाध्यायमें पूजनमें शुभभावनामें

परिणाम ठहरि सके नाहीं अकुलता करि संक्लेश बधतो जाय संतोष रहै नाहीं । जातैं रोग आवतैं वृद्धपना आवतैं वियोग होतैं अन्न वस्त्रका आधार विना अपना परिणाम कोऊ देशमैं कोऊ कालमैं थिरता पावै नाहीं देहकी रक्षा अजीविका बिना नाहीं, देह बिना अणुव्रत शील संयम काहेतैं होय ? यातैं अपना पुण्यकी अनुकूलता अर उद्यम सामर्थ्य सहाय साधनादिक देशकालके योग्य विचारि न्यायमार्गतैं आजीविका करि धर्म सेवन करो । अहिंसातैं सत्यप्रवृत्तितैं अदत्त परके धनका त्याग करि आपकूं जगतके लोकानिकै विश्वास आवनेयोग्य पात्र बनो । तथा विद्या कला चातुर्य करि आजीविका होने योग्य आपकूं करो । पाछैं लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण लाभ अलाभ अल्पलाभ होय ताहीमैं संतोष करो । अर कुंटुबका पोषण देहका पोषण पुण्यके उदयतैं लाभ भया तिस परिमाण करो । ऋणवान मत होहु ऋण हुआ पाछैं समस्त धीरज प्रतीतका अभाव हो जायगा दीनता प्रगट हो जायगी एक वार अपनी प्रतीति बिगडे पाछैं आजीविका होना कठिन है बहुरि अजीविकाकै अनुकूल खरच राखो पुण्वाननिकूं देख अधिक खरच करोगे तो जस अर धर्म अर नीति तीनों नष्ट हो जायंगे अर अन्य पुण्यवानोंका खरच देख बराबरी करोगे तो दरिद्री होय दोऊ लोकनैं भ्रष्ट हो जावोगे अर या जानो हो जो हमारी बडी आबरू है पूर्वैं हमार बडा २ कार्य भया है अब कैसैं घटावैं जो घटावैं तो हमारा समस्त बडापना बिगडि जाय ऐसी बुद्धि मति करो पुण्य अस्त होजाय तब बडापना कैसैं रहेगा अब बडापना तो सांच संतोष धारणकरि शीलकरि विनयकरि दीनता रहितपनाकरि इंद्रियनिके विषयनिकी चाह घटावनेकरि है । जातैं दोऊ लोकमें उज्वलता होय पुण्यको उदय आजाय तदि जीवकूं स्वर्गलोकका महर्द्धिक देव बना दे चक्रवर्ती करदे अर पापका उदय आवै तदि नरकका नारकी तथा एकेन्द्रिय बनादे तथा भार बहनेवाला रोगी दरिद्री मनुष्य करदे तिर्यंच करदे इसही भवमें राजा होय रंक होजाय कौनसा बडापनाकूं देखो हो अर अपने धन तो अल्प अर अभिमानी होय बहुत धन खरच करोगे तो दरिद्री

अर ऋणवान दीन होय समस्ततैं नीचे होजावोगे निंद्यताकूं प्राप्त होय आर्तध्यानतैं दुर्गतिके पात्र होजावोगे तातैं आजीविका होय तातैं अल्प खरच करो यो ही प्रवीणपणो है पंडितपणो है जो आंवदनीतैं अल्प खरच करै सो ही कुलवानपणो है सो ही उत्तम धर्म है क्योंकि आंवदनीतैं खरच बधावोगे तो अपनी ही बुद्धितैं दरिद्री होय मूर्खता दिखावोगे अर ऋणवान हो जावोगे तदि उत्तम कुल योग्य आदर सत्कार आचरण समस्त नष्ट होजायगा अर मलीनता प्रगट होजायगी अर पूजन स्वाध्याय शुभ भावनामें बुद्धि निर्धन हुआ पीछैं ऋणवान हुआ पीछैं नाहीं तिष्टैगी। तातैं आजीविकातैं अल्प खरच करना ही गृहस्थकी परम नीति है अर अभिमानी होय अधिक खरच करै ताकैं अन्यका बिना दिया धन ऊपरि चित्त चलि जाय है अनेक असत्य कपटादिक पापमैं प्रवृत्ति होय संतोष धर्म नष्ट हो जाय है । कोऊ या कहै जो आजीविका तो पूर्वकर्मके आधीन है धर्मसेवन अपने आधीन है ताकूं कहिये है जो—यहां आजीविका पुण्यके आधीन ही है परंतु धर्मग्रहण होजाना हू पुण्यकर्मका सहाय बिना नाहीं होय है । धर्मग्रहणकी योग्यतामैं हू एती सामग्री मिले होय है उत्तमकुलमें जन्म पावना, जातैं चांडाल चमार भील शूद्रादिकके कुलमें धर्मका लाभ कैसैं होय ? बहुरि सुदेशमें उपजना, इंद्रियांकी पूर्णता पावना, रोगरहित देह पावना शुभ संगति पावना, आजीविकाकी स्थिरता पावना सम्यक्धर्मका उपदेश पावना, इत्यादिक पुण्यका उदयजनित बाह्यसामग्री पाये बिना धर्मग्रहण वा धर्मका सेवन नाहीं होय है । तातैं जाकैं पूर्वपुण्यका उदयतैं आजीविकाकी स्थिरता होय ताकै धर्मसेवनमैं योग्यता होय है । बहुरि जाके इंद्रियनिकी पूर्णता नीरोगता होजाय अर न्याय अन्यायका विवेक तथा धर्म अधर्म योग्य अयोग्यका विवेक होय तथा प्रियवचन विनय अन्यके धन अर अन्यकी स्त्रीसूं पराङ्मुखता अर आलस्य प्रमादरहितता धीरता कालदेशके योग्य वचन होय ताकै आजीविकाका लाभ अर धर्मका लाभ होजाय । गुणवानकै निर्लोभीकै आलस्यरहित उद्यमीकै विनयवानकै जीविका दुर्लभ नाहीं है । आप जीविका योग्य पात्र बन जाय तो जीविका कदाचित् दूर

नाहीं लोभांतराय कर्मका क्षयोपशम प्रमाण आजीविका थोडी वा बहुत नियमतैं बन ही जाय तिसमैं संतोष करि अधिकमैं वांछाका त्याग करि परिग्रहपरिमाणव्रत धारण करो। अर पुण्यका उदयके आधीन आजीविका प्राप्त होजाय तो अनीतिमैं प्रवृत्ति करि आजीविकाकूं नष्ट मत करो आजीविका नष्ट हो जायगी तो धर्म अर जस नष्ट होजायगा अर अपने भावनिकरि जो नीति धर्म नाहीं छांडोगे न्यायमार्ग चालोगे फिर हू असाताका उदयतैं अग्नितैं जलतैं चोरनितैं राजाके उपद्रवतैं आजीविका बिगडि जाय तथा धन बिगडि जायगा तो धर्म नाहीं बिगडैगा यश नाहीं बिगडैगा जगतमैं अप्रतीतका पात्र नाहीं होवोगा, अर प्रबल लाभांतरायका उदयतैं न्यायरूप उद्यम करते हू जो लाभ नाहीं होय तो समता ही ग्रहण करो। जो आयुकर्म बाकी है तो भोजनादिककी विध कर्म मिलाय देगो कर्म बलवान है। वनमैं पहाडमैं जलमैं नगरमैं अंतरायका क्षयोपशम प्रमाण सबकूं मिलै है। कोऊका पुण्य तो ऐसा है जो बहुत लोकनिकूं भोजनादिक देय आप भोजन करै है अर कोऊके अंतरायका ऐसा उदय है जो अपना उदर हू नाहीं भरै है। कोऊकूं आधा उदर भरनेलायक मिलै है। कोऊकूं एक दिन मिलै एक दिन नाहीं मिलै। कोऊकूं दिनके आंतरै तीन दिनके आंतरै नीरस भोजन मिलै तो हू धर्मात्मा समताकूं नाहीं छाडैं। जो पूर्वैं तिर्यंचनिके भवमैं कदे उदरभर भोजन मिल्या नाहीं तथा क्षुधा तृषाके मारे अनेक बार मरे हैं तातैं अब धैर्य धारण करि जैसैं हमारे धर्म नाहीं छूटै तैसैं यत्न करना जिनका परिणाममैं ऐसा गाढ प्रगट होय तो स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देव होय है। बहुरि कोऊ या कहै जो आप तो गाढ पकडि समता राखै परंतु कुटुंब जाकी गैलि होय तो कहा करै? तो ऐसे कुटुंबकूं कहै भो कुटुंबके जन हो! जो आपां पूर्वजन्ममैं दान दिया नाहीं व्रत पाल्या नाहीं अभक्ष भक्षण किये अन्यायतैं परका धन ग्रहण किया तिस पापके उदय करि ऐसे दरिद्री भये जो उदरकूं भोजन अर वस्त्र भी नाहीं सो अपना किया पापका फल है जो अब अन्य पुण्यवाननिके आभरण भोजनादिक देखि क्लेशित होवोगे तो केवल आगांनै हू तिर्य-

चगतिके घोर दुःखनिका कारण पापकर्म तथा कोटनि भवपर्यंत दरिद्रादिकके कारण पापबंध करोगे परकी संपदा आपके नाहीं आवैगी। क्लेश दुर्ध्यान तृष्णादि कियेतैं दुःख नाहीं मिटैगा अर दुःख बधैगा अर जो अल्प मिल्यामैं संतोष करि निर्वांछक होओगे तो वर्तमानमैं तो दुःख ही नाहीं व्यापैगा अर समस्त पापकर्मकी निर्जरा ऐसी होयगी जो घोर तपश्चरणतैं हू नाहीं होय। अर अल्पभोजन वस्त्रादिक मिले अर परिणाममैं आकुलतारहित समतासूं रहे तो बडा तप है। अर कर्म मुझे थांके सामिल उपजायो सो अब मैं दैव पुरुषार्थ दोऊनिके अनुकूल द्रव्य उपार्जनमैं उद्यम करूं हूं परंतु लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण न्यायमार्गतैं प्राप्त होजायगा सो तुम्हारे निकट लाऊं हूं। अब यामैंसूं हमारे विभागका बांटा होय सो हमकूं द्यो अर तुम्हारा होय सो तुम विभाग करि भोजनादिक करो परंतु अब हम भगवानका उपदेश्या दुर्लभ धर्म ग्रहण किया है सो अब तुम्हारे वास्तै अनीति कपट घोर पापकरि धन नाहीं ग्रहण करैंगे न्यायनीतितैं जैसे धर्म नाहीं बिगडै तैसैं उद्यमकरि उपार्जन करैंगे। तुम भी जैसे हमारा धर्म विगडि जाय तैसैं प्रवर्तन मत करो। अपना अपना पुण्यपापका फल भोगो। आकुलता छांडि जेता मिले तितनामैं संतोष धारि सुखतैं रहो ऐसा जाके निश्चय है ताके परिग्रहपरिमाण नाम स्थूल व्रत होय है। और जो कुटुंबका पोषणके अर्थि पाप क्रियामैं प्रवर्तै है असत्य चोरी कपट हिंसा इत्यादिक पापनिमैं प्रवर्तै है तिनके घोरपापका बंध होय पापतैं दुर्गतिका पात्र होय है तातैं अल्प जीतव्यमैं व्रत शील संयममैं ही दृढता करो। केतेक लोक कहै हैं जो धन तो पापहीतैं आवै है पाप बिना धन आवै नाहीं त्यागी व्रती हुयां धन कैसैं आवै? ताकूं कहिये है—ऐसा तो तुम्हारी भ्रांति है जो पाप बिना धन आवै नाहीं ऐसा कहना अयुक्त है। जो पापहीतैं धन आवै तो इस जगतमैं लाखां भील चांडाल चोर चुगुल मनुष्यनिकूं मारनेवाले ग्राम दग्ध करनेवाले मार्ग लूटनेवाले समस्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र समस्त जाति समस्त कुल पापीनि करि भर्या है समस्त पुरुष स्त्री बालकादि हिंसाके करनेकूं असत्य बोलनेकूं

चोरी करनेकूं तय्यार हैं परंतु जो पूर्वजन्ममें कुपात्र दान दिया है कुतपकरि खोटा पुण्य बांध्या है तिनके कुमार्गतैं धन आवे है पुण्यहीन तो मारया जाय पूर्वपुण्य विना पापतैं ही तो नाहीं आवे है अर जो पुण्य बांध्या ते यहां चोरी चुगुली करयां बिना ही संपदाकूं प्राप्त होय है। राजाके घर जन्म ले है तातैं कोट-धनके धणीनिके घर जन्म ले है। बहुत कहा कहिये समस्त पुण्यका फल है खोटे पुण्यकी लक्ष्मी भोगि नरक तिर्यंचमें जाय डूबे है। अब परिग्रहपरिमाण वृतके पंच अतीचार वर्णन करनेकूं सूत्र कहे हैं—

अतिवाहनातिसंग्रहविस्मयलोभातिभारवहनानि। परिमितपरिग्रहस्य च विक्षेपाः पंच लक्ष्यन्ते ॥ ६२ ॥

अर्थ—परिमितपरिग्रह नाम वृतके ये पंच अतीचार जानिये है जो घोडा ऊंट बैल इत्यादिक तिर्यंचानिकूं तथा दासी दास सेवकादिकनिकूं अतिलोभके वशतैं मर्यादारहित अतिदूरका मंजल करावे बहुत चलावे सो अतिवाहन नाम अतीचार है॥ १ ॥ बहुरि अपने गृहमें प्रयोजनरहित हू बहुत वस्तुनिका संग्रह करै भोजनवस्त्रपात्र इत्यादिक थोरेका प्रयोजन होय अर बहुतका संग्रह करै तथा धान्यादिक अर वस्त्रादिक तथा औषधादिक तथा काष्ट पाषाण धातु इत्यादिकनिका संग्रहमें बहुत परिणाम रहै सो अतिसंग्रह नाम दूजा अतीचार है॥ २ ॥ बहुरि अन्यके बहुत संपदा बहुत परिग्रह तथा अनेक देशांतरनिकी वस्तु वा कदे नाहीं देखे ऐसे वस्तुका देखनेकरि श्रावक आश्चर्य करना सो विस्मय नाम तीजा अतीचार है॥ ३ ॥ बहुरि कोऊ बनिजमें तथा सेवामें तथा कलाहुन्नरतैं आपके अंतरायके क्षयोपशम परिमाण लाभ होय तो हू तृप्त नाहीं होना संतोष नाहीं आवना सो अतिलोभ नामा चौथा अतीचार है॥ ४ ॥ बहुरि तिर्यंचनि ऊपरि लोभके वशतैं अधिक भार लादि चलावना सो अतिभारवाहन नामा पांचमा अतीचार है॥ ५ ॥ जो गृहस्थ परिग्रह परिमाण करै सो इन पांच अतीचारका हू परित्याग करै। ऐसैं गृहस्थनिके धारण करनेयोग्य पंच अणुवृत कह करिके अब अणुवृतनिके फल कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

पञ्चाणुव्रतनिधयो निरतिक्रमणाः फलन्ति सुरलोकं । यत्रावधिरष्टगुणा दिव्यशरीरं च लभ्यन्ते ॥ ६३ ॥

अर्थ—अतीचारनिकरि रहित ये पूर्वोक्त पंच अणुव्रतरूप निधि हैं सो देवलोकरूप फलकूं फले हैं जिस देवलोकमैं अवधिज्ञान अर आणिमा महिमा लघिमा गरिमा प्राप्ति प्राकाम्य ईशित्व वशित्व ये अष्ट महागुण हैं अर धातु उपधातुरहित दिव्यशरीर पाइये है। भावार्थ—अणुव्रतनिके धारण करनेवाला मरकरि स्वर्गलोकमैं महान् अणिमादिक ऋद्धिके धारक देव ही होय अन्य पर्याय नाहीं पावै ऐसा नियम है। स्वर्गमैं धातु उपधातुरहित रोग वृद्धत्वादिकरहित दिव्यशरीरकूं प्राप्त होय असंख्यात वर्षपर्यंत सुखसंपदामैं लीन हुआ तिष्ठै है। अब जे पंच अणुव्रतनिकूं धारण करि इस लोकमैं विख्यात महिमाकूं प्राप्त भये तिनके नाम प्रगट करनेकूं सूत्र कहै हैं—

मातङ्गो धनदेवश्च वारिषेणस्ततः परः । नीली जयश्च संप्राप्ताः पूजातिशयमुत्तमं ॥ ६४ ॥

अर्थ—अहिंसा नाम अणुव्रतकरि मातंग जो चांडाल अर सत्य अणुव्रतकरि धनदेव नाम वणिकपुत्र अर अचौर्यव्रत करि वारिषेण नाम राजपुत्र अर ब्रह्मचर्यव्रतकरि नीली नाम श्रेष्ठीकी पुत्री अर परिग्रह परिमाणकरि जयकुमार ये व्रतके माहात्म्य करि उत्तम पूजाके अतिशयकूं प्राप्त भये इस ही भवमैं देवनिकरि पूज्य भये। यद्यपि इन व्रतनिके प्रभावतैं अनेक भव्य इस लोकमैं महिमा पाय देवलोकमैं गये तथापि आगमप्रसिद्ध इनकी ही कथा है। अब पंच पापनिके प्रभावतैं जे इस लोकमैं घोर क्लेश पाय दुर्गति गये तिनका नाम कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

धनश्रीसत्यघोषौ च तापसारक्षकावपि । उपाख्येयास्तथा श्मश्रुनवनीतो यथाक्रमम् ॥ ६५ ॥

अर्थ—हिंसा करि तो धनश्री असत्य करि सत्यघोष चोरीकरि तापसी कुशीलकरि कोतवाल परिग्रहकरि श्मश्रु नवनीत ये इस लोकमैं राजानितैं तीव्र दंड पाय दुर्गतिकूं प्राप्त भये इनका यथाक्रम दृष्टांत जानना। अब अष्टमूल गुणनिकूं कहै हैं—

मद्यमांसमधुत्यागैः सहाणुव्रतपञ्चकं । अष्टौ मूलगुणानाहुर्गृहिणां श्रमणोत्तमाः ॥ ६६ ॥

अर्थ—श्रमणोत्तम जे गणधर तथा श्रुतकेवली हैं ते गृहस्थके मद्यमांसमधुके त्याग सहित जे पंच अणुव्रत ताहि अष्टमूलगुण कहे हैं। भावार्थ—जीव मारनेके संकल्पकरि त्रस जीवनके मारनेका त्याग ॥ १ ॥ अन्यके अर आपके क्लेश उपजावनेवाला अर सांचा श्रद्धान ज्ञान आचरणका घातकरनेवाला वचनका त्याग ॥ २ ॥ बिना दिया धरया गड्या पड्या भूल्या परके धनके ग्रहण करनेका त्याग ॥ ३॥ अपना कुलके योग्य विवाही स्त्री बिना अन्य समस्त स्त्रीनिमें रागका त्याग।४। न्यायकरि उपजाया परिग्रहके मांहि परिमाणकरि अधिक परिग्रहका त्याग। ५। ये पांच तो अणुव्रत अर जिसतैं परिणाम मोहित होय अर अपना हित अहितकी सावधानी बिगडि जाय सो मद्य है ताका त्याग ॥ ६ ॥ अर द्वींद्रियादिक जीवनिके देहतैं उपज्या मांसका त्याग ॥७॥ अर मक्षिकानिकरि संचय किया मधु छत्तातैं उपज्या मधुका त्याग ॥८॥ इन अष्टका त्याग सो अष्टमूलगुण हैं। जातैं गृहस्थके पंच पाप अर तीन मकारका त्यागमैं दृढता होजाय तदि समस्त गुणरूप महलकी नींव लग गई। अनादिकालतैं संसारमें परिभ्रमणका कारण मिथ्यात्व अन्याय अर अभक्ष था तिनका अभाव हुआ तब अनेक गुण ग्रहणका पात्र भया तातैं ये अष्ट त्याग हैं तैं ही मूलगुण हैं। बहुरि अन्य ग्रंथनिमें पंच उदंबरफल अर तीन मकारका त्यागतैं अष्टमूलगुण कहे हैं। इहां उदुंबर ॥ १ ॥ कठूंबर ॥ २ ॥ पीलू ॥ ३ ॥ पीपलका गोल ॥ ४ ॥ बडका बडवाल्या ॥ ५ ॥ ये पांच उदंबर फल कहिये हैं इनमें बहुत त्रस जीवनिकूं प्रगट देखिये है तातैं इन फलनिका भक्षण मांसके समान है और हू केतेक फल जिनमें काल पाय त्रस मरि जाय तिनका भक्षणमैं हू रागभावकी अधिकतातैं महा हिंसा होय है जाकै ऐसा परिणाम होय जो याकूं मैं सुकाय खाऊंगा तिसकै अभक्षमैं तीव्र अनुरागतैं बहुत बंध होय है। मदिरा है सो मनकूं मोहित करै है अचेत करै है अर मन मोहित होय जाय सो धर्मकूं विस्मरण होजाय अर धर्म भूलि जाय सो पुरुष निःशंक हिंसाकूं आचरण करै है ऐसा विशेष जानना

जो—मनकूं उन्मत्त करै स्वरूपकी सावधानी भुलाय विषयनिमैं आसक्तता उपजावै रसना इंद्रिय अर उपस्थ इंद्रियके विषयमैं अतिराग उपजावै सो ही मद्य है यातैं भंग पीवना तथा अमल (अफीम) पोस्त आदिक नशाकी वस्तु तथा इनके संयोगतैं उपजे पाक माजूम इन समस्त मदकारी वस्तुके भक्षण करनेतैं धर्मबुद्धिका नाश होय है अर अभक्ष्य भक्षणमैं रक्त होजाय बुद्धिकी उज्वलता परमार्थका विचार नष्ट होजाय है तातैं जिनेंद्रकी आज्ञाकूं धारण करचा चाहै तो अवश्य अमलकारी वस्तुका भक्षणका त्याग करै है। बहुरि भांगमैं त्रस जीव बहुत उपजै हैं अर मदिरामैं तो अपरिमाण त्रस जीवनिकी उत्पत्ति है महा दुर्गंध है। उत्तमकुलके पुरुष मदिराकी धारा दूरतैं हू भोजन करते देख लें तो भोजनका शीघ्र त्याग करैं अर स्पर्शनतैं वस्त्र सहित स्नान करैं। मदिराकरि उन्मत्त होय सो माताकूं पुत्रीकूं स्त्रीरूप आचरण करै है अर अपनी स्त्रीकूं मातापुत्रीरूप आचरण करै है। भय ग्लानि क्रोध काम लोभ हास्य रति अरति शोक ये समस्त दोष हिंसाहीतैं हैं ते समस्त मद्यपायीकै होय हैं तातैं धर्मका अर्थी मद्यपानका दूरहीतैं त्याग करै। बहुरि द्विइंद्रियादिक प्राणीनिके घातकरनेतैं मांस उपजै है अर जाकी आकृति महाघृणा उपजावै है मांसका स्पर्शन अर दुर्गंध अर नाम ही परिणाममैं महाग्लानि उपजावै है जे धर्मरहित नरकादिकके जानेवाले महा निर्दय परिणामी होय ते मांस भक्षण करै हैं अर जो स्वयमेव मरे हुए बलध भैंसा अजा मृगादिकनिका मांस है ताके आश्रय अनंत तो बादर निगोदिया जीव अर असंख्यात त्रसजीव तिनका घात होय है बहुरि कच्चा मांसमैं अर अग्निकरि पक्या मांसमैं अर जिस काल नीचैं अग्नि लाग करि सीझै है तिस काल पकता हुआ मांसमैं हू अनंत जीव निरंतर उपजै हैं तैसी ही जातिका समय समय उपजै हैं तातैं कच्चा मांस पक्या हुआ मांस वा पकता हुआ मांस सूका हुआ मांसकूं जो खाय हैं तथा मांसकी डलीको स्पर्शन करै हैं ते मनुष्य निरंतर संचय किया ऐसा बहुत जीवनिका घात करै हैं। बहुरि चांडालनिकी उच्छिष्ट कषायीनिकी म्लेछनिकी कूकरानिका उच्छिष्ट तो

मांस होय ही है मांस भक्षीनिके दया नाहीं आचार नाहीं जाति कुल धर्म दया क्षमादिक समस्त गुणनिकरि भ्रष्ट हैं। दुर्गतिगामी महापापी महानिर्दयीनिनैं मांस भक्षणकूं शास्त्रनिमैं धर्म कह्या है। मांसकरि देवता तथा पितरनिकूं तृप्त होना कहैं देवतानिकूं मांसभक्षी कहैं श्राद्धनिमैं ब्रह्मणनिकूं मांसपिंड भक्षण कराय देवनिका पितरनिका तृप्त होना कहै हैं सो ये समस्त मिथ्यादर्शनका प्रभाव है। बहुरि मधु समान कोऊ अधम नाहीं माक्षिकानिका वमन भीलचडांलनिकी उच्छिष्ट अनंतजीवानिका स्थान है बहुत मक्षिकानिकूं मारि भील चांडाल ल्यावैं वा स्वयमेव मरे हैं तिनमैं हू असंख्यात त्रसजीवानिकी उत्पत्ति है याकूं पवित्र मानना पंचामृतनिमैं कहना याकूं शुद्ध कहना इस समान विपरीत और नाहीं। सहतका एक कणमात्र हू जो औषधादिकनिकैं अर्थि ग्रहण करे हैं रोगके दूर करनेकूं भक्षण करे हैं सो नरकनिके घोर दुःख भोगि असंख्यात वा अनंत जन्मनिमैं अनेक रोगनिका पात्र होय है। मधु मद्य मांस नवनीत (मगवल) ये चार महाविकृति भगवानके परमागममैं कहे हैं जो जिनधर्म ग्रहण करै सो मद्य माखन मांस मधु इन चार विकृतिनका प्रथम ही परित्याग करै। इन चारनिकूं भगवान महा-विकृति कही है इनका परिहार विना धर्मका उपदेशका पात्र ही नाहीं होय है। धर्म है सो अहिंसारूप है ऐसैं जिनेंद्रनकी आज्ञा वारंवार श्रवण करते हू जो स्थावरनिकी हिंसाकूं छाडनेकूं असमर्थ हैं ते त्रस जीवानिकी हिंसाकूं तो शीघ्र ही छोडो। हिंसाका त्याग नव प्रकार करि है मनकरि हिंसा करै नाहीं अन्यकरि हिंसा करावै नाहीं अन्य हिंसा करै ताकूं सराहै नाहीं। ऐसैं ही वचनकरि हिंसा करै नाहीं करावै नाहीं करतेकूं प्रशंसा करै नाहीं। ऐसैं ही कायकरि हिंसा करै नाहीं परकूं हिंसा करनेकूं प्रेरणा करै नाहीं करनेवालेकूं प्रशंसा करै नाहीं। ऐसैं मनवचनकायद्वारै कृतकारितअनुमोदनाकरि हिंसाकूं छांडै है तिसकै औत्सर्गिक त्याग कहिये उत्कृष्ट त्याग है। अर नव भंग विना जो त्याग सो अपवादिकत्याग कहिये सो अनेक प्रकार है। या अहिंसाधर्म मोक्षको कारण अर समस्त संसारके परिभ्रमणका

दुःखरूप रोगके मेटनेकूं अमृत समान पाय करके अज्ञानी मिथ्यादृष्टिनिका अयोग्य आचरण देखि अपने परिणाममें आकुल मत हो हू। संसारमें कर्मके प्रेरे अनेक प्रकारके जीव हैं। केई हिंसक हैं केई अभक्ष्य भक्षण करनेवाले हैं केई क्रोधी लोभी मानी मायावी महाआरंभी महापरिग्रही हैं अन्यामार्गी हैं तिनकी अनीति देखि अपने परिणाम मत बिगाडो कर्मके प्रेरे जीव आपा भूल रहे हैं आप तो साम्यभाव ही ग्रहण करो। कोऊ या कहै भगवानका धर्म सूक्ष्म है धर्मके अर्थि हिंसा होनेमें दोष नाहीं ऐसें धर्ममूढ होय करिकें प्राणीनिकी हिंसा नाहीं करिये। बहुरि जो देवके निमित्त गुरुके कार्य करनेके निमित्त करी हुई हिंसा हू शुभ नाहीं है हिंसा तो पाप ही है। धर्म तो दयारूप है जो देवगुरुके कार्य करनेके निमित्त हिंसाका आरम्भ ही धर्म होय तो हिंसारहित धर्म है ऐसा जिनेंद्रका वाक्य असत्य होजाय यातैं हिंसाकूं धर्म कदाचित् श्रद्धान मत करो। कोऊ कहै धर्म तो देवतानितैं होय है, देवतानिके निमित्त समस्त देना योग्य है ऐसी विपरीत बुद्धिकरि प्राणीनिकी हिंसा करना योग्य नाहीं। बहुरि केतेक कहै हैं देवी कहिए कात्यायनी चंडिका भवानी दुर्गा पारवती इत्यादिक नाम करिकैं प्रसिद्ध हैं ताकै बकरा तथा भैंसा मारि चढाइए या भवानी इनतैं ही प्रसन्न है सो मिथ्यादृष्टिनिके वाक्यतैं चलायमान नाहीं होना। एक तो यह विचार करो जो देवी जीवनिका मांसकूं भोगना चाहै है तो आप अनेक भुजानिमैं शस्त्रधारण करि भौंह वक्र करि खडी है आप ही जीवनिकूं मारि करि भक्षण क्यों नाहीं करै है ? अपने भक्तनितैं दीन अनाथ जीवनिकूं भयभीतनिकूं क्यों मरावै है ? आप ही सिंह व्याघ्रादिक ज्यों सिंहादिकांनै मारि क्यों नाहीं भक्षण करै है ? और आप देवता होय करि हू कागला कूकरा भील चांडालकी ज्यों मांस भक्षणमैं रत है क्षुधातुर है दुःखी है ताकै काहेका देवपना ? जो आपही दुःखी आसक्त सो भक्तनिकूं कैसें सुखी करैगा ? महादुर्गंध तिर्यंचनिके दुर्गंधमय घृणा देनेवाला मांसका इच्छुक महा पापीनिके देवपना नाहीं होय है। पापीनिनै झूठे शास्त्र बनाय आपके मांस भक्षण करनेकूं अर मूढलोकनिकूं

देवीनिका प्रसादके संकल्पतैं मांस भक्षणमैं प्रवृत्ति कराय जगतके जीवनिकूं अपनी इन्द्रियानिके पुष्ट करनेकूं नरकमैं डबोवै है। जिनेंद्रके परमागममैं तो भवनवासी व्यन्तर ज्योतषी कल्पवासी चार प्रकारके देवानिकै कवलाहार नाहीं है मानसीक आहार कह्या है। कोऊ कालमैं इच्छा उपजते प्रमाण अपने कंठहीमैं अमृत झरै है तिसकरि लेशमात्र क्षुधावेदना रहै नाहीं। तिनकै दिव्य वैक्रियिक देह सातधातु-उपधातुरहित महादिव्यरूप सुगंध शरीर है। देवनिकै मांस भक्षण कहना महाविपरीतबुद्धि है। जो देवता मांसभक्षी है तो कागला कूकरा गीध स्यालतैं हू देवता नीच ठहरया तातैं देवताके अर्थि हिंसा करना योग्य नाहीं अर कोऊ मांसभक्षी गुरुके अर्थि मांसका दान मत करो। जो पापी मांसादिक अभक्ष्य भक्षण करै मदिरा पीवै वह पापी काहेका गुरु? वो तो मांसादिक भक्षण कराय नरक पोहचावनेका गुरु है। ताकै स्पर्शने देखनेतैं घोर पापका बंध होय है। बहुरि कोऊ कहै अन्नादिकके भक्षणमैं तो बहुत जीवनिका घात है तातैं एक जीवकूं मारि भक्षण करना श्रेष्ठ है ऐसा विचार करि बडा प्राणीकूं मारि खावना योग्य नाहीं जातैं एकेंद्रिय प्रत्येक वनस्पती पृथ्वी जल अग्नि पवन समस्त त्रैलोकमैं भरे हुए अर समस्त विकलत्रय अर समस्त देव मनुष्य तिर्यंच इन समस्तनिकूं इकट्ठा करि गिणिए तो समस्त असंख्यात परिमाण हैं अर मनुष्य तिर्यंचनिके मांसका एक कणामैं एते बादर निगोदिया जीव हैं जो त्रैलोक्यके एकेंद्री बेंद्री तेहंद्री चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय समस्त मनुष्य तिर्यंच देव नारकीनितैं अनंतगुणा भगवान सर्वज्ञ देखि परमागममैं कह्या है तातैं अन्न जलादिक असंख्यात वरस भक्षण करै तिसमैं जो एकेंद्रीकी हिंसा होय तातैं अनंतगुणे जीवनिकी हिंसा सूईकी अणीमात्र मांसके भक्षण करनेमैं है। बहुरि एकेंद्रीकी हिंसा अर त्रसहिंसा बराबर नाहीं है दुःखमैं हू बडा अंतर है ज्ञानमैं बडा अंतर है एकेंद्रीका शरीर रस रुधिर हाड मांस चामादिक धातुकरि रहित है अर मांसभक्षणमैं तीव्र परिणाम तीव्र निर्दयपना है तैसा अन्नके भक्षणमैं नाहीं है। जैसैं अपनी स्त्रीकूं स्पर्शकरनेमैं अर अपनी पुत्रीके माताके स्पर्शकरनेमैं

परिणाम कैसैं समान होय बडा अन्तर है तातैं बहुत कहनेकरि कहा त्रसजीवका घात करना घोर पाप जानना। बहुरि ऐसी आशंका हू मत करो जो यह सिंह व्याघ्र सर्पादिक बहुत प्राणीनिका घातक हैं इनकूं मारे बहुत जीवनिकी रक्षा होयगी ऐसी मिथ्याबुद्धिकरि हिंसक जीवनिकी हिंसा हू मत करो। जातैं कौन कौन हिंसककूं मारोगे? चिडी कागला सूवा मैना तीतर इत्यादिक समस्त पक्षी हिंसक हैं तथा कीडा कीडी लट मकडी माखी सर्प बीछू इत्यादिक तथा ऊंदरा कूकरा बिलाव स्याल सिंह अनेक तिर्यंच मनुष्यादिक समस्त जीव पापकर्मके संतापतैं हिंसक ही हैं। तुम कौन कौनकी हिंसा करोगे? और तुम्हारे हिंसक जीवनिके मारनेका विचार भया तब तुम समस्त हिंसकनिके घात करनेवाले महाहिंसक भये। तुमारे समान पापी कौन रह्या तातैं हिंसक जीवनिकी हिंसाके परिणाम कदाचित् मत करो। हिंसक कौननै किया? पूर्वं उपजाये अपने कर्मके आधीन समस्त जीव उपजै हैं पापका संतान अनंतकालतैं चल्या आया है कौन दूर करि सकै। पापी जीव कौननै किया पुण्यवान कौननै किया? समस्त कर्मकी विचित्रता है। कालके प्रभावतैं पापी जीवनिको पापके फल देनेकूं अनेक पापी जीव उपजै हैं कौन दूरि करनेकूं समर्थ है तातैं दयावान होय समस्त जीवनिकी करुणा ही करो। बहुरि ऐसा विचार हू मत करो जो यो बहुत जीवैगा तो पापका बंध करैगा जो इस पापरूप पर्यायतैं छूटि जाय तो याकै बहुत पापका बंध नाहीं होय ऐसी करुणा करिकै हू पापी जीवनिकूं मत मारो जातैं तुम तो समस्तकी दया ही करो। बहुरि ये जीव बहुत दुःख करि पीडित है जो मरण करि जाय तो शीघ्र ही दुःखसौं छूटि जाय सो ऐसा मिथ्या विचार हू मत करो जातैं मरण करि जो जायगा तो वर्त्तमानकी पर्याय ही छूटैगी असाताकर्म नाहीं छूटैगा जो यहांतैं छूटि अन्य पर्याय तिर्यंच नरक मनुष्यादिक पावैगा तहां बहुतगुणा रोग दरिद्र प्राप्त होयगा बहुतकाल दुःख भोगैगा बहुत कहने करि कहा है जो कदाचित् सूर्यका उदय पश्चिम दिशामैं होजाय अर अग्नि शीतल होजाय चंद्रमाकी किरण

उष्ण होजाय अर सूर्यका आताप शीतल होजाय और समस्त पृथ्वी जगतके ऊपरि होजाय अर पाषाणमय भारी गोला जलतैं तिर जाय अर अग्निमैं कमल उपजि जाय अर सूर्यकूं अस्त होतैं दिनका प्रारंभ होजाय सर्पका मुखमैं अमृत होजाय कलहतैं यश होजाय अजीर्णतैं रोग नष्ट होजाय कालकूट जहरके भक्षणतैं जीवना बधि जाय विवादतैं प्रीति बधि जाय तो हू हिंसातैं तो धर्म नाहीं उपजैगा जगतमैं एते नाहीं होने योग्य कार्य होजांय तो हो हू परंतु हिंसाके परिणामतैं तो कोऊ देश कोऊ कालमैं धर्म नाहीं हुआ नाहीं होय है अर नाहीं होयगा। अब यहां कोऊ आशंका करै जो गृहस्थ जिनमंदिर करावे है उपकरण करावे है जिनपूजा करै है इनमैं हू आरंभ ही है अर आरंभ है तहां हिंसा होय ही तातैं जिनमंदिरादिक बनावनेमैं धर्म कैसैं संभवे है? ताकूं उत्तर कहिये है जो गृहस्थ आरंभादिकका त्यागी है अर जाका परिणाम वीतरागतारूप होय धनका उपार्जनादिकसूं विरक्त होयगा ताकूं मंदिरादिक बनावना योग्य नाहीं अर जाका राग धन परिग्रहसूं आरंभसूं घट्या नाहीं अभिमान घट्या नाहीं अपनी जाति कुलादिकमैं ऊंचे होनेके अर्थि अभिमानतैं विख्याततताके अर्थि अपने भोगनिके अर्थि हवेली महल चित्रशालादिक बनावे है बाग बनावे है अनेक अपने विहार करनेके स्थान बनावे है संतानादिकके विवाहादिकमैं बहुत धन लगावे है जाति कुल नगर निवासीनिकूं जिमावे है तिनकूं कोऊ धर्मात्मा शिक्षा करै है जो तुम्हारा राग आरंभादिकतैं नाहीं घट्या तो ये केवल पापबंधके कारण अभिमानादिक पुष्टकरनेवाले पापके आरंभनिकूं त्याग करि जिनमंदिर बनावनेका आरंभ करो। जिसके प्रभावतैं तुम्हारा अशुभ राग घटि जाय अर आगेकूं तुम्हारे परिणाम वीतरागके सम्मुख होजांय अर अहिंसाधर्मका प्रवर्तन बधि जाय अनेक जीव स्वाध्याय करि शास्त्रश्रवणकरि वीतरागका दर्शन भावना पापाचारका रोकना शील संयम ध्यानकी वृद्धि करना इत्यादिक उत्तम कार्य करि धर्मकी वृद्धि करै। जिनमंदिर है सो अहिंसाधर्मका आयतन है जिनमंदिरका निमित्तसूं अनेक जीव पापाचार छांडि जिनमंदिरमैं आवे तदि जिनधर्मके शास्त्रश्रवण करै तदि अपना अर परद्रव्य-

निका भेदविज्ञान उपजै तादि मिथ्यादेव मिथ्यागुरु मिथ्याधर्मकी उपासना छांडि सर्वज्ञ वीतरागके धर्ममैं प्रवर्तन करै तादि हिंसादिक पापनितैं सप्तव्यसननैं अन्यायतैं अभक्षतैं विरक्त होय वीतरागके ध्यानमैं पूजनमैं कायोत्सर्गनैं सामायिकमैं संयममैं उपवास शील संयम दान व्रत प्रभावनामैं लीन होय मोक्षमार्गमैं प्रवर्तन करै तातैं ऐसा निश्चय जान हू जिनमंदिरका निमित्त विना मोक्षमार्ग नाहीं प्रवर्तै तातैं जापुरुषनै जिनमंदिर कराया सो बहुत जीवनिका उपकार किया। बहुरि आपका हू बडा उपकार है आप करावनेवालेका परिणाम सुलटे मार्गमें लगि जाय है जो मैं जिनेन्द्र वीतरागका मंदिर कराया है अब जो मैं अन्यायमार्ग चलूंगा तो जगतमैं निंद्य हो जाऊंगा। मैं अभक्ष्य भक्षण कैसैं करूं झूठ कैसैं बोलूं व्यसनिमैं प्रवृत्ति कैसैं करूं कलह करना गाली देना लोकनिंद्यकर्म करना ये अयोग्य दुराचार तो लोकलाजतैं ही अति दूर जाता रहै है अर परिणाम ऐसा होजाय जो मंदिरमैं मैं मंदिर करानेवाला ही प्रवर्तन नाहीं करूंगा तो और कौन प्रवर्तैगा ऐसा विचार करि अभिषेकमैं जिनपूजनमैं शास्त्रश्रवणमैं जापमैं व्रतमैं जागरण भजनमैं प्रवर्तन लागि जाय तदि आपके धर्ममैं अतिप्रीति बधि जाय शास्त्रके वाचनेवालेनितैं शास्त्रश्रवण करनेवालनितैं धर्ममैं प्रीति करनेवाले साधर्मीनिसूं सिद्धांतकी चर्चा कथनी करनेवालेनिमैं अनुराग बधता चल्या जाय पढ़नेवालेनिसूं अतिहर्ष बधै। बहुरि आज मंदिरमैं पूजन कौन कौन किया दर्शनमैं कौन कौन आवै है यहां व्याख्यानमैं कौन २ बैठे है आज उपवासवाले केतेक हैं अबकै बेला तेला कौन कौन किया प्रोषधोपवासवाले केतेक हैं जागरणमें केतेक लोग लुगाई प्रवर्तै हैं भजन गान बहुत सुंदर भये ऐसैं धर्मकी प्रवृति देखि बहुत आनंद बधै समस्त साधर्मीनिमैं वात्सल्यता दिन दिन बधै अर हजारां लोग लुगाईनिमैं प्रभाव जैसैं जैसैं प्रगट होय तैसैं तैसैं धर्मानुराग बधता चल्या जाय। बहुरि गृहचारका नुकता व्योहार विवाह करना वस्त्र बनावना आभरण-बनावना अपने रहनेका जायगामैं मकान बनावना चित्राम करावना सुवर्ण लगावना इत्यादि रागके

बधावनेवाले पाप कार्यनिमें तो प्रीति घटि जाय है जो इनकरि कहा प्रयोजन है कानेकूं दिखवना है पापका कारण है निंद्य है ऐसा विराग आजाय है लज्जा आजाय जो पाप कार्यकूं कहा दिखाऊं ? जो एता धन मन्दिरमें लगाऊं तो बहुत जीवनिकै बहुत कालपर्यंत धर्ममें अनुराग बधै ऐसा विचार जो धन लगावै सो मंदिरके उपकरणनिमें सिंहासन छत्र चामर भामंडल घंटा ठोणा कलश तथा थाल रकाबी झांरी धूपदहनादिक समवशरणादि अनेक उपकरण सुवर्ण रूपाके कांसीके पीतलके उपकरणनिमें धन लगाय आपकै धर्मात्माजननिकै धर्ममें अनुराग बधावै तथा गदेला चांदनी पडदा सायबान इत्यादिकनिकरि साधर्मी धर्मसेवन करनेवालेनिका बडा वैयावृत्य होय है तथा विवाहादिकमें लगाया धनतैं ऐसी कीर्ति उच्चपना प्रकट नाहीं होय जैसा मन्दिर करानेवालेका बहुत कालपर्यंत कीर्ति (यश) प्रकट हो जाय अपने देशके समस्त लोक पूजन प्रभावना दर्शन धर्मश्रवण करि महान पुण्य उपार्जन करे हैं। यहां कोऊ कहै मंन्दिर करावना उपकरण कराय जिनमंदिरमें मेलना अपना अर अन्यका उपकार तो करे हैं परंतु मंदिर करावनेमें छहकायके जीवनिकी हिंसा तो धर्मके घात करनेवाली होय ही। ऐसैं कहनेवालेकूं उत्तर करिए है—यामें हिंसा नाहीं होय है हिंसा तो अपना जीवघातकरनेकी परिणाम होयगा तदि होयगी। मंदिर करानेवालेके हिंसा करनेका परिणाम नाहीं है अहिंसाधर्ममें प्रवृत्ति करनेका परिणाम है जैसैं मुनीश्वरनिकूं यत्नाचारतैं आहार देता गृहस्थके हिंसा नाहीं तथा जैसैं साधुनिकी बंदनाके अर्थि वा धर्मश्रवणके अर्थि गमन करता गृहस्थके हिंसा नाहीं होय है तथा जैसैं नित्य विहार करता ईर्यापथ सोधि गमन करता मुनीश्वरनिके हिंसा नाहीं है तथा मुनीश्वर नित्य उपदेश करे हैं गमन करे हैं शयन करे हैं उठे हैं बैठे हैं आहार करे हैं निहार करे हैं बंदना करे हैं कायोत्सर्ग करे हैं तीर्थ बंदना गुरुवंदनाकूं जाय हैं तिन कार्यनिमें हिंसक परिणामविना जीवकी विराधना होते हू हिंसा नाहीं है जीवनिकरि तो समस्त धरती आकाश समस्त वस्तु भऱ्या है परंतु कषायके वशि होय दयाभाव रहित होय

प्रवर्तन करेगा तिसके जीव मरो वा मत हिंसा ही है । जातैं अपना परिणाममैं दया नाहीं । हिंसा भाव अर अहिंसाभाव तो जीवके परिणाम है बाह्यमैं जीवका घात अघातके आधीन नाहीं सो पूर्वै बहुत वर्णन किया है । अब यहां मन्दिर बनावनेवालेका परिणाम विचारो जाकूं हवेली बनावनेमैं बाग बनावनेमैं कूआ बावडी बनावनेमैं महाहिंसा दीखै है अर जिसकै लाभ घट्या है घनसूं ममता टूटी है पापतैं भयभीत भया है सो मंन्दिर करावै है । पाहिले गृहस्थके व्यापारनिमैं तो प्रवर्तनि करै था तादि दयाधर्मकूं याद हू नाहीं करै था अब सब काममैं धर्महीसूं परिणाम जोडै है जो यत्नसूं करो यो मन्दिरको काम है जल दोहरा नातणासूं छान २ लगावै है । कली चूना तगार दो दिन सिवाय नाहीं राखै दो दिनमैं उठावनेमैं यत्न करै है अर उठावना मेलना धरना इनमैं अपना परिणाम तो यही राखै है जो यत्नसूं करो विरधनाकूं टालो । इत्यादिक कार्यनिमैं हिंसाका परिणाम तो नाहीं करै है अपना परिणाम तो धर्मके आयतन बनावनेका है जो धर्मका स्थान बनि जायगा तो यामैं अखंड अहिंसाधर्म प्रवर्तैगा अर यो मंदिर है सो महान धर्मको आयतन है गृहसंबंधी बहुत हिंसा आरंभ घटाय परिणामनिमैं दयारूप प्रवर्तनमैं यत्न किया है मंदिरमें पग धरतां प्रमाण ईर्यापथ सोधि चालो यो मंदिर है मत विराधना हो जाओ । मंदिरमैं प्रवेश किए पीछैं जैनीनिकै इतने त्याग तो विना करै ही है—भोजनका त्याग जलपान का त्याग विकथाका त्याग गालीका त्याग शयनका त्याग पवनलेनेका त्याग बनज करनेका त्याग इत्यादिक पापबंधके कारण समस्त दुराचारका त्याग होय है तातैं जिनमंदिर तो समस्त प्रकार अहिंसा धर्महीका प्रवर्तक जानना जामैं आरंभ विषय कषायनिका त्याग करनेकी ही महिमा है । ऐसैं मांसादिका त्यागरूप मूलगुण कहि अब तीन प्रकार गुणव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

दिग्व्रतमनर्थदण्डव्रतं च भोगोपभोगपरिमाणं । अनुबृंहणाद्गुणानामाख्यान्ति गुणव्रतान्यार्याः ॥ ६७ ॥

अर्थ—आर्य जे भगवान गणधरदेव हैं ते दिग्व्रत अनर्थदण्डव्रत भोगोपभोगपरिमाण ये तीन

वृत हैं ते तिन अणुवृतनिकूं गुणकाररूप बधावनेतैं गुणवृत कहे हैं। दश दिशानिमें गमन करनेकी मर्यादा करना सो दिग्वृत है ॥ १ ॥ अर जिनके कुछ कार्य तो सधै नाहीं अर जिनतै सासतो पाप होय बिना प्रयोजन दंड भुगतना पडै सो अनर्थदंड है, अनर्थदंडनिका त्याग सो अनर्थदंडविरति नामका गुणवृत है ॥ २ ॥ अर एकबार भोगनेमैं आवै सो भोग अर बारम्बार भोगनेमैं आवै सो उपभोग कहिए है, भोम उपभोगानेका परिमाण करना सो भोगोपभोगपरिमाणवृत है ॥ ३ ॥ अब दिग्वृत नाम गुणवृतका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

दिग्वलयं परिगणितं कृत्वातोऽहं बहिर्न यास्यामि। इति संकल्पो दिग्वृतमामृत्यणुपापविनिवृत्त्यै ॥ ६८ ॥

अर्थ—दश दिशानिका समूहमैं परिमाण करिकैं अर परिमाण करी तातैं बाहर मैं नाहीं गमन करूंगा अणुमात्र हू पापतैं निवृत्तिके अर्थि इसप्रकार मरणपर्यंत संकल्प करना सो दिग्व्रत नाम गुणव्रत है। भावार्थ—गृहस्थ है सो अपना प्रयोजन जानै जो हमारे इस दिशामैं एता क्षेत्रतैं अधिक बनज ब्योहारका प्रयोजन नाहीं तथा इस दिशामैं एता क्षेत्र सिवाय मोकूं ब्योहार नाहीं करना लोभनाशके अर्थि अहिंसाधर्मकी वृद्धिके अर्थि ऐसा विचार करि मरणपर्यंत दश दिशानिमैं मर्यादा करि बाहर जावनेका कोऊको बुलावनेका भेजनेका वस्तु मंगावनेका त्याग करि लोभकूं जीतना सो दिग्वृत नाम गुणवृत है। अब दश दिशानिकी मर्यादा कौन परिमाणतैं करिए यातैं सूत्र कहे हैं—

मकराकरसरिदटवीगिरिजनपदयोजनानि मर्यादाः। प्राहुर्दिशां दशानां प्रतिसंहारे प्रसिद्धानि ॥ ६९ ॥

अथ—दश दिशानिकी मर्यादारूप संकोचविषै प्रसिद्ध विख्यात मर्यादा परमागमविषै समुद्र नदी पर्वत वन देश योजन कहे हैं। मरणपर्यंत मर्यादाबाह्यक्षेत्रमैं गमनागमनादि नाहीं करै समुद्रादिक लोक विख्यात चिह्नतैं मर्यादा करै। अब दश दिशाकी मर्यादा धारण करनेवालेकै कहा होय सो कहे हैं—

अवधेर्बहिरणुपापं प्रतिविरतेर्दिग्वृतानि धारयताम्। पञ्चमहावृतपरिणतिमणुवृतानि प्रपद्यन्ते ॥ ७० ॥

अर्थ–दिग्व्रतानिनै धारण करते गृहस्थनिकै मर्यादा बाहर अणुमात्र हू पापप्रवृत्तिकी विरक्ततातैं अणुव्रत हैं ते ही पंच महाव्रतनिकी परणतिकूं प्राप्त होय हैं। भावार्थ–जो गृहस्थ दश दिशानिकी मर्यादा करिकैं रहै है ताकै मर्यादामांहि तो अणुव्रत रह्या अर मर्यादाबाहर समस्त त्रसस्थावरनिकी हिंसादिक पंच पापनिके त्यागतैं अणुव्रत ही महाव्रतपनाकी परणातिकूं प्राप्त होय हैं। अब या कहै हैं जो सम्बर कियो तितना क्षेत्र बाहर अणुवृत हैं ते महावृतका परणतिकूं प्राप्त होना ही कैसैं कहो हो? मर्यादा बाहर साक्षात् महावृती कहो, ताकूं उत्तर करनेरूप सूत्र कहै हैं—

प्रत्याख्यानतनुत्वान्मन्दतराश्चरणमोहपरिणामाः। सत्त्वेन दुरवधारा महाव्रताय प्रकल्प्यन्ते ॥ ७१ ॥

अर्थ—अणुव्रती गृहस्थकै सकलसंयमका विरोधी जो प्रत्याख्यानावरणका उदयका मंदपनातैं मंदतर चारित्र मोहका परिणाम सत्त्वेन दुरवधारा कहिये अस्तिपनाकरि महा कष्टकरिकै हू धारण नाहीं किया जाय तातैं महाव्रतके अर्थि कल्पना करिये है। भावार्थ–जाकै चारित्रमोहकर्मकै मंदउदयका परिणाम संज्वलनकषायरूप होय ताकै तिसकालमैं महाव्रत होय है अर गृहस्थ देशव्रतीकै प्रत्याख्यानावरणका उदय विद्यमान है तातैं संज्वलन कषायका मंदउदयरूप परिणाम कष्टतैं हू होना दुर्लभ है तातैं समस्त पापनिका त्याग होते हू महाव्रत नाहीं होय है। महाव्रतकी कल्पना ही करिये है। महाव्रत तो प्रत्याख्यानावरण कषायका उदयका अभावतैं होय हैं। अब महाव्रत कैसैं होय सो कहै हैं—

पञ्चानां पापानां हिंसादीनां मनोवचःकायैः। कृतकारितानुमोदैस्त्यागस्तु महाव्रतं महतां ॥ ७२ ॥

अर्थ–हिंसादि पंच पापनिका मनवचनकायकरि कृतकारितअनुमोदनाकरि त्याग सो महंत पुरुषनिकै महाव्रत होय हैं। अब दिग्व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

ऊर्ध्वाधस्तात्तिर्यग्व्यतिपाताः क्षेत्रवृद्धिरवधीनां। विस्मरणं दिग्विरतेरत्याशाः पञ्च मन्यन्ते ॥ ७३ ॥

अर्थ–दिशानिकी मर्यादा करी तिनमैं अज्ञानतैं वा प्रमादतैं पर्वतादिक ऊपरि चढावना सो ऊर्ध्वा-

तिपात अतीचार है। कूप बावडी इत्यादिकनिमें नीचें उतरवो सो अधःआतिक्रम है। तिर्यक् गुफादिकनिमें प्रवेश करना सो तिर्यग्व्यतिक्रम है। बहुरि क्षेत्र बधाय लेना सो क्षेत्रवृद्धि अतीचार है। त्याग किया तिसका विस्मरण हो जाना सो विस्मरण नाम अतीचार है। ये दिग्व्रतके पंच अतीचार हैं। अब अनर्थदंडत्यागव्रत कहनेकूं अष्ट सूत्र कहे हैं–

अभ्यन्तरं दिगवधेरपार्थकेभ्यः सपापयोगेभ्यः। विरमणमनर्थदण्डव्रतं विदुर्व्रतधराग्रण्यः॥ ७४॥

अर्थ–आप जो दिशानिकी मर्यादा करी ताके मांहि वृथा जे मनवचनकायके योगनिकी प्रवृत्ति तिनतें विरक्त होना ताहि व्रतधरनिमें अग्रणी जे भगवान ते अनर्थदंडव्रत कहे हैं। भावार्थ–मर्यादा करि लीनी तहां हू ऐसा कर्म करे जातें अपना प्रयोजन हू नाहीं सधे अर वृथा पापका बंध होय दंड भुगतना पडे सो अनर्थदंड है सो अनर्थदंड त्यागने योग्य है जातें जिसके करनेतें अपना विषयभोग हू नाहीं सधे कुछ लाभ हू नाहीं होय यश हू नाहीं होय धर्म हू नाहीं होय अर पापका बंध निरंतर होय जाका फल कडवा दुर्गतनिमें भोगना पडे सो अनर्थदंड त्यागने ही योग्य है। अब अनर्थदंड पांच प्रकार है तिनकूं कहे हैं–

पापोपदेशहिंसादानापध्यानदुःश्रुतीः पंच। प्राहुः प्रमादचर्यामनर्थदण्डानदण्डधराः॥ ७५॥

अर्थ––पापका उपदेश हिंसादान अपध्यान दुःश्रुति प्रमादचर्या ए पंच अनर्थदंड हैं तिनने अदंडधर जे गणधर देव हैं ते कहे हैं। भावार्थ–अशुभ मन वचन कायके योग तिनकूं दंड कहिये है, जातें समस्त जीवनिकूं अपने अपने अशुभ मनवचनकायके योग ही दुर्गतिनिमें नानाप्रकार दंड दे हैं तातें अशुभ मनवचनकायकूं दंड कहिये, ताकूं अदंडधर जे अशुभ योगनिकूं नाहीं धारें ऐसे गणधरदेव हैं ते पांच प्रकार अनर्थदंड कह्या है। पापका उपदेश देना सो पापोपदेश॥ १॥ हिंसाके उपकरणनिका दान सो हिंसादान॥ २॥ खोटा ध्यान सो अपध्यान॥ ३॥ खोटा श्रवण करना सो दुःश्रुति॥ ४॥ प्रमा-

दरूप चर्या करणा सो प्रमादचर्या ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार अनर्थदंड हैं। पापोपदेश नाम अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

तिर्य्यक्क्लेशवणिज्याहिंसारम्भप्रलम्भनादीनाम्। प्रसवः कथाप्रसंगः स्मर्तव्यः पाप उपदेशः ॥ ७६ ॥

अर्थ–जे तिर्यंचानिके क्लेश उपजनेकी तथा वनज कहिये बेचनेकी खरीदनेकी अर हिंसाकी अर आरंभकी अर प्रलंभ कहिये कपट ठगपनाकी इत्यादिक पाप उपजनेकी कथामैं वारंवार प्रवृत्तिरूप उपदेश करनेतैं पापोपदेश नामा अनर्थदंड है। भावार्थ– तिर्यंचानिकूं मारनेका डाहनेका दृढ बांधनेका मर्मस्थानमैं पीडा करनेका बहुत बोझ लादनेका बाधी करनेका नाशिका फोडनेका तिर्यंचनिको पकडनेका पिंजरेनिमैं रोकनेका जो उपदेश सो तिर्यक्क्लेश नाम पापोपदेश है, तथा अनेक वस्तुनिमैं पाप उपजानेवाला वनजका उपदेश तथा जिनतैं छहकायके जीवनिकी हिंसा होय ऐसा उपदेश सो हिंसोपदेश है, अर बाग बनावना जायगा बनावना विवाह करना इत्यादि पापके आरंभका उपदेश सो आरंभोपदेश, अर कपट छल करनेका उपदेश सो प्रलंभनोपदेश है, अनेक प्रकार पापका उपदेशकी कथा करना पापमैं प्रेरणा करना, सो पापोपदेश नाम अनर्थदंड है। अब हिंसादान नामा दूजा अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

परशुकृपाणखनित्रज्वलनायुधशृङ्गिशृङ्खलादीनां। वधहेतूनां दानं हिंसादानं ब्रुवन्ति बुधाः ॥ ७७ ॥

अर्थ–हिंसाका कारण जे फरसी खडग कुदाल अग्नि आयुध विष बेडी सांकल इत्यादिकनिका दान ताहि ज्ञानी हैं ते हिंसादान नाम अनर्थदंड कहै हैं। जिनतैं हिंसा ही उपजे ऐसा वस्तुका अन्यकूं देना फावडा कुदाल खुरपा कुशि हथोडा तरवार छुरी कटारी तमंचा भाला बाण धनुष बंदूक तोप दारू गोला गोली चाबुक दांतला दतीला बेडी सांकल जहर अग्नि इत्यादिक वस्तुकूं दान करना मांगी देना बेचना भाडे देना सो समस्त हिंसादान नाम अनर्थदंड है। अब अपध्यान नामा अनर्थदंडकूं कहै हैं–

वधबन्धच्छेदादेर्द्वेषाद्रागाच्च परकलत्रादेः । आध्यानमपध्यानं शासति जिनशासने विशदाः ॥ ७८ ॥

अर्थ—जो वैरतैं वा अपने विषय साधनेके रागतैं परकी स्त्री पुत्रादिकनिका बंधन मारण वा छेदनादिकका चिंतवन ताहि जिनशासनविषै प्रवीण हैं ते अपध्यान नामा अनर्थदंड कहे हैं । भावार्थ—जाके रागद्वेषतैं ऐसा परिणाममैं चिंतवन रहै जो याका पुत्र मर जाय याकी स्त्री मरजाय याके दंड होजाय याका हस्त नाक कर्ण छेद्या जाय याका धन लुट जाय याकी आजीविका नष्ट होजाय याकी इन्द्रियां नष्ट होजायं याका लोकमैं अपवाद होजाय यो स्थानभ्रष्ट होजाय बुद्धिभ्रष्ट होजाय ऐसा चिंतवन वारंवार करै ऐसैं अन्यके दुःख आपदा चाहना अपने कुछ लाभादिक होय नाहीं आपका चिंतवनतैं कुछ होय नाहीं अपने वृथा महापापका बंध होय अन्यका बुरा भला आपका पापपुण्यके अनुकूल होय है वृथा दुर्ध्यान करै ताकै अपध्यान नामा अनर्थदंड कहिये है। अब दुःश्रुति नामा अनर्थदंड कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

आरम्भसंगसाहसमिथ्यात्वद्वेषरागमदमदनैः । चेतः कलुषयतां श्रुतिरवधीनां दुःश्रुतिर्भवति ॥ ७९ ॥

अर्थ—आरम्भ कहिए असि मसि कृषि विद्या वाणिज्य शिल्प अर संग कहिए धन धान्यादिक परिग्रह अर साहस कहिए आश्चर्यकारी वीरकर्मादिक अर मिथ्यात्व कहिए ब्रह्माद्वैत ज्ञानाद्वैत क्षणिक याज्ञकादिक विरुद्ध अर्थका प्रतिपादक शास्त्र अरु राग कहिये आसक्तता द्वेष कहिये वैर अष्ट मद अर कामवेदनाकृत विकार इनकरि चित्तकूं कलुषित करनेवाले ऐसे अवधि जे शास्त्र तिनको जो श्रवण सो दुःश्रुति नामा अनर्थदंड है । भावार्थ—जो मिथ्यात्व राग द्वेषका उपजानेवाला पदार्थनिका विपर्यय स्वरूप ग्रहण करावनेवाला शास्त्रका विकथाका शृंगार वीर हास्यका प्ररूपक तथा मारण उच्चाटन वशीकरण कामका उत्पादक शास्त्रनिका श्रवण करना तथा जांगलिक सर्पनिका भूतनिका रसकर्म इंद्रजाल रसायण मायाचारादिके प्ररूपक यज्ञादिक हिंसाके प्ररूपक दुष्टशास्त्र दुष्टकथा दुष्टराग दुष्टचेष्टा दुष्टक्रिया

दुष्टकर्मनिका श्रवण करना सो दुःश्रुति नामा अनर्थदण्ड है। अब प्रमादचर्या नामा अनर्थदण्डकूं कहे हैं–

क्षितिसलिलदहनपवनारम्भं विफलं वनस्पतिच्छेदं। सरणं सारणमपि च प्रमादचर्यां प्रभाषन्ते ॥ ८० ॥

अर्थ–पृथ्वी खोदनेका पाषाणादिक फोडनेका आरम्भ, जलपटकनेका सींचनेका छिडकनेका जल विलोवनेका अवगाह करनेका आरम्भ, विना प्रयोजन अग्नि बधावनेका बालनेका बुझावनेका दाबनेका आरम्भ, पवन घालनेका पवनके यंत्र रोकनेका अग्निमें धमनेका वृथा आरम्भ, तथा प्रयोजन विना बनस्पतिका छेदना तथा विना प्रयोजन गमन करना विना प्रयोजन गमन करावना ते समस्त प्रमादचर्या नामा अनर्थदंड कह्या है। यहां ऐसा विशेष जानना, गृहस्थके गृहाचारामें अनेक पापहीके आचरण हैं जो गृहाचारके पापतैं निराला नाहीं हुआ जाय तो जिनसूं कुछ प्रयोजन तुम्हारा सिद्ध नाहीं होय ऐसें विना प्रयोजन पापबंधका कारण जिनका फल दुर्गतिनिमें असंख्यातकाल अनंतकाल दुःख भोगो ऐसे निंद्यकर्म तो छोडो जो उत्तम कुलमें जिनेंद्रको उपदेश उत्तमधर्म अतिदुर्लभ पायो है तो विना प्रयोजनके पाप बंधतैं भयभीत होना योग्य है पशुकी ज्यों जन्म वृथा मत व्यतीत करो आपका घरका पापतैं नाहीं छूट्या जाय तो अन्यकूं ऐसा पापका उपदेश मत करो गृह जायगा बणावनेमें महा हिंसा होय है, यातैं गृह बनावनेका जायगा धवल करावनेका जायगाकी मरम्मत करावनेका बागबगीचा बनावनेका रोडीखुदावनेका गली खुदावनेका कुआ बावडी बनावनेका तालाव खुदावनेका जल निकासनेका तालावकी पाल बंधावनेका तालाबकी पाल फुडावनेका नदीकी पाल बंधावनेका बना हुआ मकान गृह डहावनेका बागबगीचा डहावनेका वृक्ष कटावनेका बनकटी करावनेका कोयला बनावनेका घास खुदावनेका दाहलगावनेका मिथ्या देवनिका मकान बनावनेका मिथ्या देवतानिका मंदिर तथा मूर्तिका विगाडनेका खेती करनेका सुंदर मकानकूं मलीन करनेका कदाचित् उपदेश मत करो। तथा तिर्यंचनिके

दुःख होनेका मारनेका दृढ बांधनेका वाधी करनेका डाह देनेका नाशिका फोडनेका उपदेश मत करो मनुष्य तिर्यंचानिके भोजनपानके रोकनेका बंदीगृहमें घरनेका संतानानितैं वियोग करनेका पक्षीनिकूं पिंजरानिमैं घरनेका सर्प बीछू सिंह व्याघ्र मूसा न्योला कूकरा इत्यादिक हिंसक जीवनिके मारनेका जूवां लीखां मारनेका उटकण खटमल मारनेका खाट तावडे देनेका छिडकाव करावनेका जीवनिके पकडने मारनेके यंत्र जाल बनावनेका उपदेश मत करो। खोटे पापरूप शास्त्र पढनेका जिन शास्त्रनिमें शृंगार मायाचारादिककी अधिकता मिथ्या श्रद्धान करानेवाले जिनग्रंथनिमें मारणक्रिया विष बनावनेकी क्रिया मारण उच्चाटन वशीकरण मंत्र तंत्रादिक तथा इंद्रजालादिक अनेक कपटनिका उपदेश तथा रसनिका दग्ध करना रसायण करना इत्यादिक पापके शास्त्र वीररसके शास्त्र हिंसाप्रधान क्रियाके शास्त्र मत पढो अन्यकूं उपदेश मत करो तथा अभक्ष्य भक्षण करनेका रात्रिभोजन करनेका झूठ बोलनेका चुगली करनेका चोरी करनेका खोटी साख भरनेका व्याभिचार करावनेका व्यवहारादिक महाआरम्भ करनेका रोशनी प्रज्वालित करनेका दारूके (बारूदके) छुडावनेके तथा बागबागीचा देखवेकूं प्रेरणा करनेका उपदेश मत करो।

तथा इस देशतैं दूसरे देशमें व्योपार बहुत है वहां जावो ऐसा उपदेश मत करो। तथा परिणामनिमें दुर्ध्यानके कारण ऐसा मेला ख्याल कौतुक व्याभिचारादिक कर्म मनुष्यतिर्यंचनिकी राडि-कलहादिक देखनेका उपदेश मत करो। तथा युद्धादिक करनेका गाली देनेका परकी आजीविका बिगाडि देनेका उपदेश मत करो। तथा खोटे गीत गान नृत्य वादित्र कलह विसंवाद श्रवण करनेका उपदेश मत करो। तथा इस देशमें दासी दास सुलभ है इनकूं अमुक देशमें लेजाय बेचै तो बहुत लाभ होय ऐसा उपदेश क्लेशवणिज्या है तथा गाय भैंस अश्वादिक अमुक देशतैं ग्रहण करि अन्य देशमें बेचै तो बहुत धनका लाभ होय सो तिर्यक्वणिज्या है तथा चिडीमार शिकारानिकूं शाकुनीनिकूं ऐसें

कहे जो अमुक देशमें मृग सूकर पक्षी इत्यादिक जीव बहुत हैं ऐसा कहना सो वधकोपदेश है तथा खेती करनेवालेनिकूं पृथ्वीके आरंभका जल अग्नि पवन वनस्पति छेदनादिकका उपदेश देना सो आरंभोपदेश है ये समस्त पापोदेश त्यागने योग्य हैं। तथा हुक्का जरदा तमाखू भांग अमल छोंतरादिक पीवनेका सूंघनेका खावनेका उपदेश महापापका कारण है सो मत करो जातैं हुक्को जर्दो तो उत्तम कुलके योग्य ही नाहीं जिसतैं जाति कुल भ्रष्ट होजाय धुवांका अर जलका संयोगतैं बहुत जीव हुकाके जलमें उपजैं अर जल महादुंगध होजाय अर जहां पडे तहां छहकायके जीवनिकी विराधना ही करै अर चूना ईंट पकावनेका उपदेश मत करो। बहुरि बहुत पापके वानिजका उपदेश मत करो। गाय भैंस बलद ऊंट गाडा गाडीनिका राखनेका उपदेश मत करो। कोऊ दातार मनुष्य तिर्यंचानिकूं भोजन वस्त्र धनादिक देता होय ताके अंतराय मत करो। कुपात्र दानका उपदेश मत करो देतेमैं विघ्न मत करो। व्रत भंग करनेका उपदेश मत करो। इत्यादि बहुत कहा कहिये अपने धर्म अर्थ कामना कुछ भी सिद्ध होय नाहीं केवल आपके पापहीका बंध होय ऐसा पापरूप उपदेश मत करो। बहुरि जिनतैं हिंसा बहुत होय ऐसे उपकरण किसीकूं मत द्यो मांगे मत द्यो भाडे मत द्यो प्रीतिकरि मत द्यो मोलकरि मत द्यो जिनके देनेमैं किंचित लाभ ही होय तो हू महापापके कारण जानि देना योग्य नाहीं जिनकूं हस्तमें लेते ही दुष्ट परिणाम होजाय घातहीका विचार रहै ऐसे खडग छुरी भाला बाण धनुष बंदूक कटारी इत्यादिक आयुध देना योग्य नाहीं। बहुरि भूमि खोदनेके कारण जिनकरि गलीनिमैं रोडीनिमैं खेतिनमैं बडे बडे जीव सर्प विछू गिंडोला लट कीडा मूसा इत्यादिक जीव कटि जांय छिद जांय कोटनि जीवनिकी हिंसा होजाय ऐसा फावडा कुदाल कुस खुरपा हल मुद्गर हथोडा किसीकूं मत द्यो। तथा अनेक त्रसस्थावरानिकूं चीरनेवाला मारनेवाला परसी कुल्हाडा बसोला करोंत दातला दतीला किसीकूं मत द्यो। तथा तिर्यंच मनुष्यनिके मारनेके कारण लाठी घोटा चाबुक चामडा लोंढा किसीको मत द्यो।

बहुरि अग्नि विष बेडी सांकल पिंजरा जाल जीव पकडनेका यंत्र किसीको मत द्यो। मार्जार कूकरा इत्यादिक हिंसक जीवानिकूं अपनाकरि मत पालो। सूआ तीतर बुलबुल कूकडा मैना कबूतर बाज इत्यादिक पक्षीनिकूं पीजरामें रखना पालना मत करो। बहुरि केतेक बहुत पापके उपकरण घरमें हू मत राखो घरमें रहे देखते हू हिंसाके उपकरण परिणाम ही बिगाडे हैं। बहुरि एते निंद्य बनिज हू महापापके कारण जिनमें किंचित लाभ होय तो हू पापसूं भयभीत होय त्याग करो लोहा नील मेण लवण लकडा साजी सण सावण लाख चामडा ऊन केश कसूंभा गुड खांड अन्न चावल सिंहाडा शस्त्र दारू गोला सीसा लहसन कांदा आदो जमीकंद तथा घृत तैल आंम नीबू इत्यादिक वनस्पतिकाय भांग तमाखू जर्दा तिल खल काकडा पिंजरा फांसी गांजा चरस दासी दास घोडा ऊंट बलध भैंसा गाडा-गाडी ईंट इनके बेचनेमें खरीदनेमें संचयमें महा हिंसा होय है यातैं त्याग करो। समस्तका त्याग नाहीं बन सके तो यामैं महापाप जानि कोऊ अन्नादिकमैं अल्प संग्रह अल्प प्रमाण राखि अन्य समस्तका तो त्याग करो। बहुरि केतीक खोटी आजीविका महापापबंधकरि दुर्गति लेजाय ते परिहार करो। कोटि-वाली करनेकी कोटवालका पियादापनाकी बनकटी करानेकी गाडा गाडी ऊंट बलध भाडे देनेकी ऊंट बलध गाडा गाडी भाडे करानेवाला दलाल यो नाहीं देखै है जो याका कांधा गल गया है कि नासिका गल गई है कि पीठ गल गई है कि पग दूखै है कि याका अंगमैं कीडा पडि रह्या है कि वृद्ध है कि रोगी है ऐसा बिचार भाडाकी दलालीवालाके नाहीं है चतुर्मासमैं भी बहुत बोझ लदाय दे अर भाडाकी आजीविका अर भाडाकी दलाली दोऊ महापाप हैं अर लोभके वश होय वृद्ध पुरुषका व्याह सगाई मत करावो। राजका हासिल मत चुरावो।

तथा अन्य अपराधीकी चुगली खानेकी झूठी साखि भरनेकी गवाही होजानेकी वैद्यपनाकी आजीविका मत करो जंत्र मंत्र भूत भूतणी डाकनिके इलाज करनेकी रसायणादिक धूर्त्ताईतैं दिखाय ठग

लेनेकी आजीविका मत करो। यह दुर्गतिको ले जानेवाली है तथा काठ बेचनेवाला मदिरा करनेवाला कलाल कषायी धोबी चमार ईंट चूना पकावनेवाला नीलगर जुवारी घसियारा घास खोदनेवाला इनकूं व्याजपर धन मत दो। मांसभक्षीनिकूं वेश्यानिकूं निंद्यपापकी आजीविका करनेवालेनिकूं व्याजपर रुपया मत दो अपना मकान भाडे मत दो। बहुरि अशुभ परिणामके धारक अन्य मार्गी मांसभक्षी मद्यपायी वेश्यामैं आसक्त परस्त्रीलंपटी अधर्मीनितैं मित्रता प्रीति करनेका हू त्याग करो। परके दोष ग्रहण मत करो। अन्यकी लक्ष्मीमैं बांछा मत करो अन्यकी लक्ष्मीकूं देखि आश्चर्य मत करो अपना दीनपना मत चिन्तवन करो अन्यकी स्त्रीके देखनेमैं अभिलाषा मत करो। अन्य मनुष्य तिर्यंचनिकी कलह मत देखो। अन्यके पुत्रका स्त्रीका वियोगकी बांछा मत करो। परका अपमान अपयश अपवाद सुनि हर्षित मत होहू। अन्यकै लाभ देख विषाद मत करो। अन्यके रससहित भोजन आभरणादिक देखि अपने परिणाममैं दुःखित मत होहू। आपके दारिद्र वियोग रोग होते आर्तपरिणामकरि क्लेशित मत होहु धनवाननिसूं ईर्षा मति करो। बहुरि कोऊ सिंघ व्याघ्र सर्पादिकनिकी शिकार चिंतवन मत करो। कोऊका संग्राममैं जय पराजय मत चाहो। परकी स्त्रीका संसर्ग वचनालाप करनेमैं वेश्यादिकनिका हावभाव नृत्यका विलास देखनमैं अभिलाषा मत करो। गाली भंडवचन लिए गीत मत सुनो। खोटे राग सांग कोतूहल परिणाम मलिन करनेका कारणका श्रवण देखना दूरहीतैं छांडो। दारिद्र आवते हू नीच प्रवृत्तिकरि आजीविका मत करो किसीतैं याचना मत करो दीनता मत भाखो निर्धनपणाकूं होते हू प्रवृत्ति विकाररूप मत करो। नीच कुलवालेनिके करनेयोग्य वस्त्र रंगणा धोवना इत्यादिक निंद्यकर्म करनेका परिहार करो। बहुरि जिनालय आदिक धर्मके स्थाननिमैं स्त्रीनिका कथा राजकथा चोरकथा देशकथा महापापबंध करनेवाली कथा कदाचित् मत करो। बहुरि लेन देन व्याह सगाईका झगडा तथा न्याय पंचायती जिनमंदिरमैं बैठि जाति कुलका विसंवाद कदाचित् मत करो। मन्दिरमैं बैठि करोगे

तो धर्मस्थानकी मर्यादा तोडनेतैं नरक निगोदका कारण घोरकर्मका बंध होयगा तातैं धर्मायतनमैं पापका बधावनेवाला कर्म दूरहीतैं त्याग करो। बहुरि जिनमंदिरमैं भोजनपान तांबूल गंध पुष्प विषयादिक तथा शयन उचासन वनिज सगाई झगडा गालीके वचन हास्यके वचन अविनयके वचन आरम्भके वचनादिकमैं कदाचित् प्रवर्तन मत करो। बहुरि मिथ्याश्रुतका श्रवण मत करो जिनके श्रवणतैं विषयनिमैं राग बधै हास्य कौतुक उपजै काम जाग्रत होजाय भोजनके नाना स्वादनिमैं चित्त चलि जाय ऐसी कथनी श्रवण मत करो। तथा स्त्रीपुरुषनिके पापरूप चारित्रकी कथा तथा भूतप्रेतनिकी असत्य कथा तथा हिंसाकी प्रधानताके धारक वेद स्मृत्यादिककी कथा तथा कपोलकल्पित अनेक कहानी तथा फारसी किताबनिका लिख्या तिनकूं किस्सा कहै हैं ते महा दुर्ध्यानके करनेवाले श्रवण मत करो तथा भारत रामायणादिकनिकी कल्पित कथा कदाचित् श्रवण मत करो। बहुरि कषायनिके उत्पन्न करनेवाले क्रोधीनिके वचन अभिमानीनिके मदके भरे वचन मायाचारीनिके कुटिल वचन लोभीनिके लालसा उपजावनेवाले वचन मद्यमांसअभक्ष्यके स्वादकी प्रशंसा करनेवालेनिके वचन मद्य अमल भांग तमाखू हुकनिकी प्रशंसा करनेवालेनिके वचन मत श्रवण करो। बहुरि धर्मके अभाव करनेवाले परलोकादिकके अभाव कहनेवाले नास्तिकनिके वाक्य पापबंधके कारण मत श्रवण करो। बहुरि वृथा आरम्भ विसंवादकूं छोडो तथा माटी कजोडी कर्दम कांटा ठीकरा मल मूत्र कफ उच्छिष्ट जल अग्नि दीपक इत्यादिक भूमिकूं देखे विना मत पटको तथा शीघ्रतासूं पाषाण काष्ठ आसन शय्या पल्यंक धातुका पात्र चरवा चरी तवला परात चौकी पाटा वस्त्रादिकनिकूं जमीन ऊपरि घींसकरि रगडकरि प्रमादतैं मत सरकावो यामैं बहुत जीवनकी हिंसा होय है यत्नाचारका अभाव है तातैं देखि यत्नतैं उठावो मेलो। बहुरि बिना प्रयोजन भूमिका कुचरना वृक्षकी डाहलीनिका मोडना हरित तृणादिककूं छेदना मर्दन करना वृक्षनिके पत्र पुष्पादिकनिकूं चीरना तोडना वृथा जल पटकना इत्यादिक पापतैं भयभीत होय मत करो। बहुत कहा

कहिये गृहाचारमैं जेता वस्तु पात्र अन्न जलादिक हैं तिनकूं देख करि घरो जैसैं धर्म नाहीं बिगडे उजाड बिगाड नाहीं होय तैसैं करो। प्रमाद छाडि भोजनपान औषधि पकवानादिक नेत्रनितैं देखि सोधि भक्षण करो। शीघ्रतासूं प्रमादी होय बिना सोध्या भोजन मत करो। गमनमैं आगमनमैं उठनेमैं देखे विना सोधे विना प्रवर्तन मत करो। जातैं दया पलै अर अपना शरीरकै बाधा नाहीं होय हानि नाहीं होय तथा प्रमादी होय हित अहितका विचार किये विना सुपात्र कुपात्रका विचार विना किसीकूं वार्ता मत कहो कहनेमैं गुणदोषका विचार करि कहो। अर कोई आपकूं पूछै तो शीघ्रतासे उत्तर मत द्यो याही कहो मैं समझ करि विचार करि आपकूं जबाब देस्यों पाछैं अवकाश पाय धर्मअर्थकामसूं अविरुद्ध विचार विनयसहित उत्तर करो शीघ्रतातैं उत्तर देनेमैं उस कालमैं क्रोधमानमायालोभके वशतैं वचन निकसनेका ठिकाना नाहीं कषायके उदयतैं योग्य अयोग्य कहनेका विचार नाहीं रहै है अन्यका वाक्य हू परिपूर्ण श्रवण करि लेवे तथा कहनेका समस्त अभिप्राय जाननेमैं आजाय तदि उत्तर करना योग्य है तातैं प्रमाद जो असावधानतातैं वचन मत कहो। एकांतरूप हठग्राही पक्षपाती मत होहु धर्म विगडि जायगा तातैं दोऊ लोकके हितके अर्थी हो तो प्रमादचर्या नामा अनर्थदण्ड छोडो ऐसैं पंच प्रकार अनर्थदण्डनिकूं समझ करि त्याग करै तातैं अनर्थदण्ड त्याग नामा व्रत होय है।

बहुरि अनर्थदंडनिमैं महा अनर्थकारी द्यूतक्रीडा है जूवा समस्त व्यसननिमैं प्रधान है समस्त पापनिका संकेत स्थान है महान आपदाका कारण है समस्त अनीतिनिमैं महा अनीति है याका परिणाम ही महादुष्ट है जो अपना समस्त घर संपदा जूवामें संकल्प करिकैं हू अन्यका धन लिया चाहै है जुवारीके एता बडा लोभ है जो कोऊ प्रकार परका धन मेरे आजाय ऐसैं रात्रि दिन चिंतवन करता रहै है मेरा धन जाय तो जावो अपयश होहु मरण होहु दरिद्रता होहु कोऊप्रकार परका धन मैं जीत ल्यूं तदि मेरा जीवतव्य सफल है लोभकषायकी तीव्रता सो ही महाहिंसा है। जुवारीका महा निर्दयी परिणाम

होय है परका घात ही चिंतवन करे है। जो जुवामें धन हारि जाय तो चोरी करे धनवास्ते मनुष्यनिकूं मारे ही जुवारीनिके परस्पर महाक्लेश होय ही मारामारी होय ही मायचारी होय ही जिनसूं महाप्रीति होय तिनसूं भी महाकपट अनेक छल करि धनग्रहण कऱ्या ही चाहे जुवा कपटका तो स्थान ही है हजारां छल रचे है अपनी स्त्रीने जुवामें संकल्प करदे पुत्र पुत्रीने करदे स्त्रीने हारजाय पुत्रीने हारजाय जुवारीने देदे है जुवारी दरिद्री व्यसनीकूं पुत्री परणाय देहै जुवामें अपना मकान रहनेका बेच देहै दावपर लगाय देहै तथा पुत्रकूं बेच देहै लक्ष धनका धनी एक क्षणमें समस्त धन हार दरिद्री होजाय है तादि महा आर्तध्यान रौद्रध्यानतें मरि दुर्गतिमें भ्रमण करे है अर धन जीत ल्यावे तो मद उपजे है कुमार्गमें ही जाका धन खर्च होय है महा रौद्रध्यानके प्रभावतें मरि महा कुयोनि पाय भ्रमण करे है जुवारी मदपान भंगपानादिक करे है वेश्यामें आसक्त होय जाय है सुमार्गमें धन लगे नाहीं जुवारीतें न्यायरूप अन्य आजीविका नाहीं करी जाय है जुवारीकी प्रतीति जाती रहे है याकूं कोऊ धन नाहीं धीजे है जुवारीके सत्य वचन कदाचित नाहीं होय है। जुवारीके शुभपरिणाम होय नाहीं अपना पूर्वोपार्जित कर्मका दिया न्यायका धनमें संतोष कदाचित् आवे नाहीं। एकांतमें एकाकीकूं मारि धन खोस लेजाय है अपना घना नातादार भाई होय ताकूं एकांतमें मारि आभरणादि ले ही जाय है। जुवारीकी प्रतीति मूरख होय सो हू नाहीं करे है परधनकी अति तीव्र तृष्णाकरि कुदेवनिकी बोलारी बोले है मिथ्याधर्म सेवन करे है संतोष शील निराकुलताकूं जलांजली दे है अति लोभके परिणामतें विपरीत बुद्धि होजाय है। परमार्थ जाने नाहीं है। धर्मको श्रद्धान स्वप्नमें हू नाहीं होय है। समस्त पापनिका मूल जुवाकूं जानि दूरहीतें त्याग करो। जुवारीकी बुद्धि कोट उपायकरि हू विपरीतता नाहीं छाडे है परलोकमें दुर्गति ही जाय है। जुवारी तो तीव्रलोभकरि अपना आत्माकूं घात्या है।

बहुरि केतेक अज्ञानी जुवामें हार जीत धनकी तो नाहीं करे परंतु मनुष्य जन्मकूं वृथा व्यतीत

करनेका इच्छुक धन संकल्प कर तो जुवा नाहीं करै है अर क्रीडाके निमित्त चोपड शतरंज गंजफा इत्यादिक अनेक अविद्या करै हैं तिनके हारमैं अर जीतमैं रागद्वेषकी बडी तीव्रता है हरष विषाद बहुत होय है कपट बहुत करै हैं पिता पुत्र हू परस्पर विसंवाद कलह करै ही हैं परिणाममैं जीतहारमैं तीव्रताने प्राप्त होय है। या ऐसी अविद्या है जो इस क्रीडामैं रचै है ताका इस लोकसंबंधी सेवा बानिज लिखना इत्यादिक समस्त कार्य बिगाडि जाय तो हू छाड नाहीं सकै है जाके द्यूतक्रीडा है ताके अन्य उद्यमका अभाव होय है। दरिद्रता नजीक आवै है। हीन नीच मालिन जातिके बरोबर बैठ द्यूतक्रीडा करै है यो नाहीं देखै है यो म्लेच्छ है नाई कलाल धोवी समस्त द्यूतक्रीडामैं सामिल प्रत्यक्ष देखिये हैं जिनकी महा दुर्गंध आवै है वस्त्रनिमैंतैं जूंवां झड झड पडै हैं तिनके बरोबर बैठ रमिये है। अन्य अधर्मनिका स्थानमैं आप जाय बैठै हैं मार्गमैं खेलते देखकर खडा रहजाय बैठनेकूं स्थान नाहीं होय तो आप खडा खडा ही देखै है ऐसा व्यसन है खावना पीवना देन लेन सब छांडि खडा हुआ देखै है मनिहार नीलगर कमनीगर बिसायती समस्त मांसभक्षी नीच कर्मीनिके सामिल ख्याल खेलै देखै है बहुत कहा कहिये अपना सर्व कार्य बिगाडि जाय तथा माता पितादिकका मरण होजाय तो हू इस ख्यालमैंतैं उठ्या नाहीं जाय है ऐसा तीव्र परिणामतै नरक तिर्यंच बंध होय ही। जामैं धन कुछ नाहीं आवै बडा विसंवाद होय तिस क्रीडामैं तीव्र राचनेतैं धनकी हारजीतवालेतैं हू तीव्र पापका बंध करै है जाके धनकी हारजीत होय सो तो अल्पकाल राचै है याका परिणाम समस्त कालमैं राचै है इस व्यसनमैं लागै है ताकूं धर्मका नाम नाही सुहावै है ताके बुद्धि विपरीत होय पापक्रियामैं अन्यायमैं असत्यमैं विकथाहीमैं राचै है। देखहु यह मनुष्यजन्म अर उत्तमकुल अर नीरोगशरीर उत्तमधर्म ए अंनतकालमैं नाहीं पाया सो संयोग मिलि गया याका एक एक घडी कोड धनमैं नाहीं मिलै ऐसा अवसर सिद्धांतनिका स्वाध्याय जीवादिक द्रव्यनिकी चर्चा अनित्यादिक द्वादश भावना षोडशकारण भावना पंच परमगुरुका नमस्कार

जाप स्मरणादिककरि सफल करनेका था तानैं चौपड गंजफा शतरंज ये महा आविद्यामैं राचि समस्त धर्मतैं धर्मके मार्गतैं पराङ्मुख होय महापाप उपजाय मरजाना यो फल ग्रहण करि तिर्यंच नरकादिकमैं जाय उपजै है। बहुरि ऐसा जानना भगवानका परमागममैं तो सप्त व्यसनका त्याग जाके होयगा सो ही जिनधर्म ग्रहण करनेका पात्र होयगा जाके ए व्यसन ग्रहण होजायं तिसकी बुद्धि ही विपरीत होजाय है पाप कार्यनिमैं प्रवीण होजाय है अनीतिमैं तत्पर होजाय है। इस लोकका कार्य तो न्यायमार्गतैं अपने कुलके योग्य षट्कर्मकरि आजीविका करना अर खानपानादिक शरीरका संस्कार तथा न्यायरूप लेना देना धरना जाना आना प्रयोजनरूप करना अर परलोकके अर्थि धर्मकार्यमैं प्रवर्तन करना यही गृहस्थके दोय करने योग्य कार्य हैं इन दोय कार्य विना जो प्रवृत्ति सो ही व्यसन है ते सप्त व्यसन हैं। द्यूतक्रीडा ॥ १ ॥ मांसभक्षण ॥ २ ॥ मद्यपान ॥ ३ ॥ वेश्यासेवन ॥ ४ ॥ शिकार करना ॥ ५ ॥ चोरी करना ॥ ६ ॥ परस्त्रीसेवन करना ॥ ७ ॥ ये महाघोरपापबंधके कारण सप्त व्यसन हैं। इन व्यसनानिमैं उलझना सहज है छूटकरि सुलझना बडा काठिन है। इन व्यसननितैं पापबंध ही ऐसा होय है जो बुद्धि ही विपर्ययमैं होजाय है निकस नाहीं सके है। यहां द्यूत व्यसन वर्णन किया याहीमैं होड लगावना है। अब दस बीस बरससे अफीमके फाटकाको व्योपार हू तीव्रतृष्णाकरि युक्त पुरुषके संतोषका बिगाडनेवाला प्रवर्त्या सो हू जुवाहीमैं गर्भित जानना। बहुरि मांस मद्य शिकार जैनीनिके कुलमैं है ही नाहीं ये लगे पीछैं महा व्यसन हैं परंतु आगैं अभक्ष्यनिमैं कहैंगे तथा बीध्या अन्नादिकनिका समस्त भोजन अर चमडाका स्पर्श्या समस्त जल घृत तेल रसादिक रात्रि भोजन इत्यादिक समस्त अभक्ष्य मांसके दोष समान जानि त्यागै ही। बहुरि भांग तमाखू जर्दा (अफीम) हुका ये समस्त पराधीन करनेतैं अर ज्ञानके नष्ट करनेतैं परमार्थरूप बुद्धिकूं नष्ट करनेतैं मदिरा समान ही हैं यातैं त्याग ही करना। बहुरि अन्य जीवनिकी दया नाहीं करिके आजीविका बिगाड देना वन लुटाय देना तीव्रदंड

कराय देना सो समस्त शिकार ही है अन्यका मानभंग कराय देना खान छुडाय देना सो समस्त शिकारतैं अधिक अधिक है सो त्याग ही करना। बहुरि वेश्यासेवन किया जाका समस्त आचार भोजनपान भ्रष्ट है वेश्याकूं चांडाल भील म्लेच्छ मुसलमान इत्यादिक समस्त सेवन करे हैं जो वेश्या मांसमद्यका खानपान नित्य ही करे है धनहीतैं जाके प्रीति है ऐसी वेश्याकी मुखकी लाल पीवै है जातिकुल आचार समस्त भ्रष्ट है तातैं त्याग ही श्रेष्ठ है वेश्याका संगम किया तिसके चोरी जूवा मद्यपानादिक समस्त व्यसन होय हैं। समस्त धनकी हानि होय है धर्मतैं पराङ्मुखता होजाय है बुद्धि विपरीत होजाय है मायाचारमैं झूठमैं छलमैं तत्परता होजाय है निंद्यकर्मकी ग्लानि जाती रहै है लज्जा नष्ट होजाय है वेश्याका देखनेमैं हाव भाव विलास विभ्रमादिक देखने चिंतवन करनेतैं अतिरागी होय कुलमर्यादा समस्त भंग करै है वेश्यामैं आसक्त हुआ पुरुष कफविषै पडी मक्षिकाकी ज्यों आपकूं नाहीं छुडाय सकै है महा अनीत है। बहुरि चोरपनाका महा व्यसन है। चोर आप भी निरंतर भयरूप रहै है अर चोरका अन्य जीवनिकै बडा भय रहै है माताकै भी चोरपुत्रका भय रहै है। चोर इस लोकमैं आपकी समस्त प्रतिष्ठा बिगाडि महाकलंकित होय है। राजासूं तीव्रदंड पावै है हस्तनाशिकादिक छेद्या जाय है। चोरका परिणाम संतोषरूप कदाचित नाहीं होय है। चोरके योग्य अयोग्य करने योग्यका विचार ही नाहीं रहै है। याहीतैं धर्मध्यान स्वाध्याय धर्मकथातैं पराङ्मुख रहै है। अर जिनशास्त्रनिका श्रवण पठन करता हू अन्यके धन ऊपर चित्त चलावै है सो ठग है जगतके ठगनेकूं शास्त्ररूप शस्त्र ग्रहण किया है तिसकै धर्मकी श्रद्धा कदाचित् नाहीं जानना जाके जिनधर्मकी प्रधानता होय है ताकै चारित्रमोहका उदयतैं त्याग व्रत संयम नाहीं होय तो हू अन्यायके धनमैं तो बांछा नाहीं चालै है चोरीतैं दोऊ लोक भ्रष्ट होना जानि विना दिया परका धनमैं बांछा मत करो। बहुरि परस्त्रीकी बांछा नाम व्यसन समस्त अनर्थनिमैं प्रधान है परस्त्रीलंपटकै इसलोक परलोकमैं जो घोरपाप आपदा अकीर्ति अपयश मरण रोग

अपवाद धनहानि राजदंड जगतका वैर दुर्गतिगमन मारन ताड़न बंदीगृहमें बंदनादिक होय हैं तिनकूं वचनद्वारे कौन कहनेकूं समर्थ है ? ऐसे सप्तव्यसन दूरतैं ही त्यागो इनके त्यागनेमैं कुछ हानि नाहीं है जानें सप्तव्यसन त्याग किया सो आपका समस्त दुःख अकीर्ति नरकादिक कुगति समस्त आपदाका निराकरण किया। अब अनर्थदंडव्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

कंदर्पं कौत्कुच्यं मौखर्यमतिप्रसाधनं पञ्च। असमीक्ष्य चाधिकरणं व्यतीतयोऽनर्थदण्डकृद्विरतेः ॥ ८१ ॥

अर्थ—चारित्र मोहनीयकर्मका उदयतैं रागभावकी अधिकतातैं हास्यतैं मिल्या हुआ भंडवचन बोलना सो कंदर्प नाम अतीचार है ॥१॥ बहुरि तीव्ररागका उदयतैं हास्यरूप भंडवचनकरि सहित जो कायकी खोटी चेष्टा शरीरकी निंद्यक्रिया करना सो कौत्कुच्य है ॥ २ ॥ अर बिनाप्रयोजन बहुत सार-रहित बकवाद सो मौखर्य कहिये है ॥ ३ ॥ अर प्रयोजन रहित अधिकताकरि मनवचनकायको प्रवर्तावना सो असमीक्ष्याधिकरण कहिये है। रागद्वेषकरनेवाला काव्य श्लोक कवित्त छंद गीतनिका चिंतवन सो मन असमीक्ष्याधिकरण कहिये है। बहुरि पापकथाकरि अन्यके मनवचनकायकूं बिगाडनेवाली खोटी कथा कहना सो वचन असमीक्ष्याधिकरण है। बहुरि प्रयोजन बिना गमन करना उठना बैठना दौड़ना पटकना फेंकना तथा पत्र फल पुष्पादिकनका छेदन भेदन विदारण क्षेपणादिक करना तथा अग्नि विष क्षारादिकका देना सो काय असमीक्ष्याधिकरण नामका अतीचार है ॥ ४ ॥ जेता भोग-उपभोगकरि प्रयोजन सधै तातैं अधिक बिना प्रयोजनका अतिसंग्रह करै सो अतिप्रसाधन नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं अनर्थदंडव्रतके पांच अतीचार कहे ते त्यागने योग्य हैं अब भोगोपभोगपरिमाणव्रत अष्ट सूत्रनिकरि कहै हैं—

अक्षार्थानां परिसंख्यानं भोगोपभोगपरिमाणम्। अर्थवतामप्यवधौ रागरतीनां तनूकृतये ॥ ८२ ॥

अर्थ—प्रयोजनवान हू पंचइंद्रियनिके विषयनिका जो रागभाव करिकैं आसक्तताकौं घटावनेके

अर्थि जो परिमाण करना सो भोगोपभोगपरिमाण नामा व्रत है। भावार्थ—संसारी जीवनिकै इंद्रियनिके विषयनिमैं अतिराग वर्तै है रागतैं व्रत संयम दया क्षमादिक समस्त गुणनितैं पराङ्मुख होय रह्या है यातैं अणुव्रतका धारक गृहस्थ है सो हिंसा असत्य चोरी परस्त्रीसेवन अपरिमाणपरिग्रहतैं उपजी जो अन्यायके विषयनिमैं प्रीति तिसका त्याग करकें तो व्रती भया अब न्यायके विषयनिकूं हू तीव्ररागके कारण जानि जाकै अति अरुचि भई होय सो रागकी आसक्तता घटावनेके अर्थि अपने प्रयोजनवान हू इंद्रियनिके विषयनिमैं परिमाण करै सो भोगोपभोगपरिमाण नामा गुणव्रत है। व्रतीनिकूं इंद्रियनिके विषयनिमैं निरर्गल प्रवृत्ति रोकि भोगोपभोगका परिमाण करना महान संवरका कारण है। अब भोग तो कहा होय है अर उपभोग कहा तिनका लक्षण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

भुक्त्वा परिहातव्यो भोगो भुक्त्वा पुनश्च भोक्तव्यः। उपभोगोऽशनवसनप्रभृतिः पाञ्चेन्द्रियो विषयः॥ ८३ ॥

अर्थ—जो एकबार भोग करकैं फिर त्यागनेयोग्य होय सो भोग है बहुरि भोग करकैं फिर भोगने योग्य होय सो उपभोग है। भोग तो भोजनादिक पंच इंद्रियनिके विषय हैं अर उपभोग वस्त्रादिक पंच इंद्रियनिके विषय हैं। भावार्थ—जो एकबार ही भोगनेमैं आवै फिर भोगनेमैं नाहीं आवै ते भोग हैं। अर जो बारबार भोगनेके अर्थि आवै ते उपभोग हैं जैसैं भोजन नानारूप एकबार ही भोगनेमैं आवै है तथा कर्पूर चंदनादिकका विलेपन तथा पुष्प माला अतर फुलेल तथा मेला कौतुक इंद्रजालादिकस्तवनके गीतके शब्दादिक एकबार ही भोगनेमैं आवै हैं ते पंच इंद्रियनिके विषयभोग कहावै हैं। अर जैसे वस्त्र आभरण स्त्री सिंहासन पर्यंक महल बाग वादित्र चित्राम इत्यादिक वारंवार भोगनेमैं आवैं ते उपभोग हैं भोगोपभोग दोऊंनिका परिमाण करै ताकै व्रत होय है। अब जे परिमाण करनेयोग्य नाहीं यावज्जीव त्याग करने योग्य हैं तिनके कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

त्रसहतिपरिहरणार्थं क्षौद्रं पिशितं प्रमादपरिहृतये। मद्यं च वर्जनीयं जिनचरणौ शरणमुपयातैः॥ ८४ ॥

अर्थ—जिनेन्द्रभगवानके चरणनिकी शरणकूं प्राप्त भये ऐसे सम्यग्दृष्टि हैं तिनने त्रसनिकी हिंसाका परित्यागके अर्थि क्षौद्र जो मधु अर पिशित कहिये मांस वर्जन करनेयोग्य है अर प्रमाद जो हितअहितमें असावधानी ताका वर्जनके अर्थि मद्यका त्याग करना योग्य है। भावार्थ—जे पुरुष जिनेंद्रका चरणनिकी आज्ञाका श्रद्धानी हैं ते त्रसजीवनिकी हिंसाका त्यागके अर्थि मधुका अर मांसका त्याग ही करैं अर प्रमाद जो अचेतपना ताका त्यागके अर्थि मदिराका त्याग करैं ही। जाकै मधुमांसमद्यका त्याग नाहीं सो जिनआज्ञात पराङ्मुख है जैनी नाहीं है। बहुरि त्यागने योग्यनिकूं कहै हैं—

अल्पफलबहुविघातान्मूलकमार्द्राणि शृङ्गवेराणि। नवनीतनिम्बकुसुमं कैतकमित्येवमवहेयम् ॥ ८५ ॥

यदनिष्टं तद्व्रतयेद्यच्चानुपसेव्यमेतदपि जह्यात्। अभिसंधिकृता विरतिर्विषयाद्योग्याद् व्रतं भवति ॥ ८६ ॥

अर्थ—जिनके सेवनतैं फल जो अपना प्रयोजन सो तो अल्प सिद्ध होय अर जिनके भक्षणतैं घात अनंत जीवनिका होय ऐसे मूल कंद आदो शृंगवेर इत्यादिक कंद मूल अर नवनीत जो माखन निंबका फूल केवडा केतकीका फूल इत्यादिक जे अनंतकाय ते त्यागने योग्य हैं। एक देहमैं अनंत जीव ते अनंतकाय हैं जो आपके अनिष्ट होय ताका व्रत करना त्याग करना अर जो सेवन योग्य नाहीं ते अनुपसेव्यनिका त्याग ही करना योग्य है। यद्यपि अनिष्ट अनुपसेव्यके सेवनेका प्रयोजन नाहीं है तो हू अपने अभिप्रायकरि योग्य विषयका हू त्याग सो व्रत है जातैं जाका फल तो एक जिह्वाका आस्वादनमात्र अर जाका एक बालमात्र कणहूमैं अनंतानंत बादरनिगोदजीवनिका घात होय ऐसे कंदमूलादिक अर निंबका पुष्प अर केतकी केवडाका पुष्प त्यागने योग्य है तथा अन्य हू पुष्प प्रत्यक्ष त्रसजीवनिकर भरे हैं ते जिनधर्मीनिके त्यागने योग्य हैं। बहुरि जो वस्तु शुद्ध हू है अर भक्षण करनेतैं अपना देहमें वेदना उपजावै उदरशूलादिक उपजावनेवाला वाय पित्त कफादिक दोष तथा रुधिरविकार उदरविकारादिककूं उत्पन्न करनेवाला भोजनादिक तथा अन्य हू दुःखके कारण इंद्रियविषयनिका सेवन मत करो।

जातैं जो अति तीव्ररागी इंद्रियनिका लंपटी होयगा सो ही अनिष्टसेवन करैगा। जो अपना मरण होजाना तथा तीव्रवेदना भोगना ऐसैं तीव्र दुःखहूकूं नाहीं गिणता भक्षण करे है ताके जिह्वाकी तीव्र विकलतातैं महापापका बंध होय है। अनेक मनुष्य भोजनके आस्वादनमैं अनुराग करके अनिष्ट भोजनतैं रोग बधाय आर्तध्यानकरि दुर्गतिकूं जाय हैं तातैं अनिष्टका त्यागही श्रेष्ठ है। बहुरि केते ही वस्तु अपने कुलकूं तथा व्यवहारकूं धर्मकूं मलीन करनेवाले हैं ते सेवने योग्य नाहीं ते अनुपसेव्य हैं। संख हस्तीका दांत केश मृगमद गोलोचन इत्यादिकका स्पर्श्या हुआ भोजन जल सेवन योग्य नाहीं तथा ऊंटनीका दुग्ध तथा गर्धीका अर गायका मूत्र तथा मल मूत्र कफ लाल उच्छिष्ट भोजन ये सेवने योग्य नाहीं तथा म्लेच्छ भील अस्पर्श्यशूद्रनिका स्पर्शन किया हुआ भोजन तथा अशुद्धभूमिमैं पड्या चर्मका स्पर्श्या मार्जार श्वानादिक करि तथा मांसभक्षी मद्यपायीनिकरि बनाया हुआ स्पर्शन किया हुआ समस्त भोजन लोकनिंद्य भोजन अनुपसेव्य है। जिनधर्मीनिके भक्षण करने योग्य नाहीं। बुद्धिकूं विपरीत करे है। मार्गतैं भ्रष्ट करनेवाला धर्मतैं भ्रष्ट करनेवाला है। इहां ऐसा विशेष जानना, श्रीराजवार्तिकमैं हू पंच प्रकार भोग संख्या कही है तहां त्रसका घात जामैं होय ॥ १ ॥ प्रमाद उपजावनेवाला होय ॥ २ ॥ बहुबध कहिये जामैं अनंत जीवनिका घात होय ॥ ३ ॥ अनिष्ट होय ॥ ४ ॥ अनुपसेव्य होय ॥ ५ ॥ ये पांच प्रकार त्यागने योग्य हैं यावज्जीवन त्यागने योग्य हैं। अर जिसका यावज्जीव त्याग करनेकूं समर्थ नाहीं तो वाका त्याग कालकी मर्यादाकरि करना। यहां केतेक वस्तुनिमैं तो प्रगट त्रसनिका घात है अर केतेक वस्तूनिमैं अनंत जीवनिके संघट्ट इकट्ठे होय घात होय हैं बीधा अन्न है तामैं ईली घुन प्रगट हजारां फिरे हैं बीधे अन्न खानेवालेके अप्रमाण त्रसनिका घात होय है जो गृहस्थ धान्यका संग्रह राखे है ताके नित्य बीधा अन्नके भक्षणतैं महापाप प्रवर्तै है याहीतैं पापतैं भयभीत जैनी होय सो अबीधा अन्न खरीदे और दोय महीनाका खरच प्रमाण राखै दोय महीना भक्षण करि चुके तदि और अबीधा अन्न देखि ग्रहण करे थोडा।

संग्रहमें अच्छीतरह सोधनेमें आजाय थोडाका जावता यत्नाचारतैं बनि सकै बीधता देखि तदि बद-लाय मगावै अन्य पांच जायगा अबीधा देखि लावै बहुत धान्य होय तो देय सकै नाहीं फटाकि सकै नाहीं बदल्या जाय नाहीं बहुत बीधा होजाय अर खावना पडै तदि नित्य छांणि छांणि ईली लट धुणानिकूं पात्र भर भर मार्गमें पटकै तहां मनुष्यनिके तथा पशुनिके पगतलैं खुंदजाय मरजाय पशु चर जाय बहुरि धान्यमैं जीव पडने लगैं हैं तदि दिन प्रति दूना चौगुना सौगुना हजारगुना छोटा बडा बधता चल्या जाय है अर समस्त घरके मकाननिमैं अर रसोईमें परींडा ऊपर दीवारपर चाकीपर फैलते खान-पानकी वस्तुनिमैं जमींमैं छतानिमैं लाखां कोड्यां जीव विचरने लग जायं हैं तातैं लोभके वशतैं प्रमा-दके वशतैं अभिमानके वशतैं बहुत संग्रह मत करो बहुरि मूंग मोठ उडद तथा अन्य हू फलादिक जिनके ऊपरि सुफेद फूली प्रगट होजाय तामैं त्रसजीव जानि भक्षण मत करो। बहुरि वर्षाकालके चार महीनेमैं केतीक वस्तुका संग्रह मत राखो नगर शहरमैं वसनेका सुख तो ये ही है कि जिस अवसरमें चाहें तिस अवसरमैं दश पांच दो चार दिनके खरचमैं आवै तितनी दश पांच जायगांमें आछी निर्दोष दीखे सो खरीदो। वर्षाऋतुमैं गुडमैं शकरमैं खांडमैं बहुत चींटी लट सुलसुली पडै हैं तथा सूंठ अज-वायणि इलायची डोडा सुपारी बहुत बीधे हैं दाख पिस्ता चारोली छिंआरा खोपरा इत्यादिकनमैं परि-माण रहित लट कीडा इल्यां बहुत हजारां लाखां उत्पन्न होय हैं। पुरवाई पवनका संयोगतैं ही गुडा-दिकमैं परिमाणरहित जीव उपजे हैं तथा मर्यादारहित वस्तु लाडू पेडा घेवर बरफी इत्यादिकमैं बहुत जीव प्रगट लट उपजे हैं। बहुरि हलदी धणां जीरा मिरच अमचूर कोथोडी इनमैं वर्षाऋतुमें बहुत त्रसजीव उपजे हैं तातैं अल्प संग्रह करो नित्य देख सोधि प्रवर्तो यो यत्नाचार ही धर्म है। चून शीत ऋतुमैं सात दिनका ग्रीष्मऋतुमैं पांच दिनका वर्षाऋतुमैं तीन दिनका सिवाय भक्षण मत करो चूनका संग्रह मति करो चूनमैं बहुत लट पैदा होजाय हैं दाल चावल इत्यादिक जब रांधो तदि दोय तीन बार सोधि

रांधो। बहुरि प्रश्नोत्तरश्रावकाचारमैं ऐसा लिख्या है श्लोकार्द्ध—"सर्वाशनं च न ग्राह्यं दिनद्वययुतं नरैः" अर्थ—समस्त भोजन दोय दिनकर युक्त नाहीं भक्षण करना। यातैं एक रात्रि गयां सिवाय दूजी रात्रि व्यतीत होजाय सो भक्षण योग्य नाहीं। यामैं जलका संसर्ग युक्त पक्वान्नादिक हू आगये। बहुरि पुवा मालपुवा सीरो इत्यादिक तथा बडा कचोरी रात्रिवास्याको रस चालि जाय है। जातैं यामैं जलका संसर्ग बहुत रहै है। बहुरि रोटी खिचडी तरकारी लोंजी रात्रिवासी तो भक्षण ही नाहीं करना अर स्वादसों चलि जाय तो उस दिनमैं भी भक्षण नाहीं करना। बहुरि रात्रिका बनाया समस्त भोजनका भक्षण नाहीं करना बहुरि दही पहला दिनका जमाया दूजा दिन पर्यंत खावो अधिक नाहीं। बहुरि दोय दाल का अन्नकूं दही छाछके सामिल भक्षण मत करो जो मिलायकरि खावोगे तो यामैं विदलका दोष लागेगा जीभ नीचे कंठमें उतरते ही संमूर्छन जीव उपजै हैं याकूं विदल कहिए है। बहुरि दुग्ध दूह्यां पाछैं छानि दोय घडी पहली तप्त करो पाछैं सम्मूर्च्छन त्रसनिकी उत्पत्ति होय है। घृत हू छाछमैंसूं निकस्यां पाछैं शीघ्र ही तपाय छानि भक्षण करना योग्य है ताया छान्यां बिना मत भक्षण करो। बहुरि घृत तेल जल इत्यादिक रस चामका पात्रमैं घाल्या हुआ भक्षण योग्य नाहीं यामैं असंख्यात त्रस जीव उपजै हैं। सींघडा (कुप्पा) बनै हैं ते मांसकूं गाडि पाछैं कूटि माटीके सांचे ऊपरि बनावै हैं इनका स्पर्श्या घृत तेल जल मांसके समान है। इनकी प्रवृत्ति मुसलमानांका राज्य हुआ तदि मुसलमानां चलाई है। जो चामका विना स्पर्श्या घृतादि नाहीं मिलै तो रूक्ष भोजन करो अर फागुन पीछैं तिलनिमैं तथा सिंघाडेनिमैं बहुत त्रसजीव उपजै हैं यातैं फागुन पीछैं तेल अथवा सिंघाडा कदाचित् मत भक्षण करो। बहुरि जलकूं गाढी दोहरा कपडासूं छाणिकरि पीवो अन्यकूं छाणिकरि प्यावो छाणिकरि ही पशूनिकूं हू प्यावो अणछाण्यां जलतैं स्नान भोजन वस्त्रधोवन इत्यादि कोई भी क्रिया मत करो जलमैं यत्नाचार क्रियातैं दया वानपनाकी हद बनी रहै है। पात्रका मुखतैं तिगुना लांबा दोहरा वस्त्र नवीन होय तातैं छाणा अज-

वाण्या (विलछन) अन्य पात्रमें करि जलके स्थानमें पहुंचावो जलमें यत्नाचारकी याही मर्यादा है छाण्या पाछैं दोय घडीकी मर्यादा है फिरि काम पडै तो फिरि छाण करि वर्तौ । तप्तजल दोय पहर वर्तौ बहुत उकलतो तप्त कियो हुवो आठ पहर वर्तौ पाछैं निकाम है । बहुरे केतेक वस्तूनिकूं त्रसनिको घात जानि सर्वथा भक्षण मति करो जैसैं—बोर लटांको प्रत्यक्ष स्थान है भिंडीनिमैं बहुत लट उपजै हैं बैंगण तरबूज कोहला पेठा जामुन आडू बडवाला गोल अंजीर कठूमर ऊमरफल पीलू आलू जामफल टींडू अज्ञातफल सूक्ष्मफल वीघाफल चलितरस तथा साराफल तथा पत्र शाक कंदमूल आदो शृंगवेर सलगम प्याज लहसन गाजर किशोन्या इत्यादिक तथा कचनार महुवा क्षीरवृक्षका फल खिरनीकूं आदि लेय नीमका फल इत्यादिक अनेक फल हैं केवडा केतकी इत्यादिक फूल हैं तिनका तो प्रगट दोष आगमतैं वा प्रत्यक्षतैं है ही परंतु परमागमतैं वनस्पतीका ऐसा स्वरूप जानना—वनस्पती दोय प्रकार है एक प्रत्येक दूजी साधारण प्रत्येक तो एक देहमैं एक जीव है अर देह एक जामैं जीव अनंतानंत सो साधारणवनस्पती है यातैं साधारण भक्षण करै तामैं अनंतानंत जीवनिका घात जानि त्याग करना योग्य है । अब साधारण प्रत्येककी पहिचानके ऐसे लक्षण जानने—जिस वनस्पतीमैं लीक प्रगट नाहीं भई होय रेखसी नाहीं दीखी होय कली प्रगट नाहीं भई होय अर जामैं पैली प्रगट नाहीं भई होय अर जाका तोडता ही समभंग हो जाय वा कांटे फूटे नाहीं तथा जाके माहीं तांतू तूतडो प्रगट नाहीं भयो होय सो साधारण वनस्पती है यामैं एक अणुमात्रमैं अनंतानंत जीव हैं अर जिस वनस्पतीमैं धार तथा कला तथा रेखा तथा पैली प्रगट दीखै सो साधारण नाहीं प्रत्येकवनस्पती है तथा जाकूं तोडिये तो टेढा बांका टूटै सूधा शस्त्रसे बनाऱ्या जैसा साफ बरोबर नाहीं टूटै तथा जाके माहीं तार तूतडा प्रगट होगया होय सो प्रत्येक वनस्पती है परंतु कोऊ वनस्पती पहली साधारण होय वाही एक अंतर्मुहूर्तमैं प्रत्येक होजाय है कोऊ साधारण ही बनी रहै पान फूल बीज डाहली कूंपल इत्यादिक समस्तमैं साधारण

प्रत्येककी याही पिछाण जानना। पत्रमें समभंगादिक होय तो पत्र साधारण है अन्य समस्त वृक्ष साधारण नाहीं। बीज कूंपल समभंग सहित होय रेखादिक प्रगट नाहीं होय तेते बीज कूंपल साधारण हैं अन्य साधारण नाहीं ऐसें इस वनस्पतिमें कोऊ साधारण मिल जाय कोऊ प्रत्येक होजाय इत्यादिक दोषरूप तथा वनस्पतिमें अनेक त्रस जीवनिका संसर्ग उत्पत्ति जानि जे जिनेंद्रधर्म धारणकरि पापनितैं भयभीत हैं ते समस्त ही हरितकायका त्याग करो जिह्वा इंद्रियकूं वश करो अर जिनका समस्त हरितकायके त्याग करनेका सामर्थ्य नाहीं है ते कंदमूलादिक अनंतकायका तो यावज्जीव त्याग करो। अर जे पंच उदंबरादिक प्रगट त्रस जीवनिकरि भऱ्या है ऐसा फल पुष्प शाक पत्रादिकनिकूं छांडि करिकैं त्रसघातकरिरहित दीखे ऐसी तरकारी फलादिक दश वीशकूं अपने परिणामनिके योग्य जानि नियम करो। इन सिवाय अट्ठाईस लाख कोड कुल वनस्पतीकाय हैं तिनका तो त्याग करि भार उतारो। हरितकाय प्रमाणीकका नियम करै ताकै कोठ्यां अभक्ष टलै है तिसमैं पत्रजात भक्षण योग्य नाहीं। त्रसकी उत्पत्ति टालि अन्य बहुत घटाय नियम करो विना घटायां निरर्गल रह्यां असंयमीपना होय आस्रव होय है तातैं हरितकायका भक्षणमैं नियम व्रत करना योग्य है। बहुरि जिस भोजन ऊपरि ऊलण आजाय ऊपर फूलसा नीला हरा लाल आजाय सो भोजन मत करो यामैं अनंतजीवनिका घात है यातैं जिस ऊपर फूली आजाय सो दूरतैं ही त्यागो। बहुरि मोहके कारण प्रमादके उपजावनेवाले ज्ञानकूं बिगाडनेवाले जिह्वाइंद्रिय अर उपस्थइंद्रियकूं विकल करनेवाली ऐसी भांग तमाखू छोंतरा अमल हुका जरदा इत्यादिक अभक्ष्यनिका खावना पीवना जिनधर्मीनिकै त्यागने योग्य है। ये अमल पराधीन करै हैं इनमैं अफीमका भक्षण करनेवालेकूं एक घडी अफीम नाहीं होय तो जमीमैं बेहोश होय पड़ि जाय है वदनाका आर्त्तपरिणामतैं पशुका ज्यों पग जमीमैं पछ्या पछ्या रगडै है निर्लज्ज हुआ याचना करै है नेत्रानितैं नीर पडै है और अफीम मिलि जाय तदि अमलमैं आया भूला हुआ ऊंगवो करै है जिह्वा इंद्रियकी

लोलुपता बधि जाय है स्वाध्याय धर्मश्रवण व्रत संयम उपवासादिकानिकूं दूरहीतैं त्यागे है बुद्धि धर्मतैं परांमुख होजाय है उत्तम आचार नष्ट होजाय है। बहुरि हुक्काकी महामलीनता दुर्गंध तमाखू और धुंवां का योगतैं पानीमैं जीवनिकी उत्पत्ति होय है जहां हुक्काका जल पडे तहां छहकायके जीवानेका घात होय है। अर याकी दुर्गंधतैं उत्तम आचारके धारक नजीक बैठ नाहीं सके हैं अर बारम्बार घरघरमैं अग्नि हेरतो फिरे है घरमैं राखको ठीकरो घन्योही रहै है नीचकुलवाले नीचजनानिके पीवने योग्य है। हुका पीवनेवालेकूं गाडीवान घोडाका चाकर मीणा गूजर मुसलमान इत्यादिकनिकी संगति रुचे है उत्तम कुलवालेनिके योग्य नाहीं है अर हुक्का नाहीं मिलै तो नाई धोबी गूजर मीणा तेली तमोली मुसलमानानिकी चिलम याचना करि पीवै है अर नाहीं पीवै तो बडा रोग पैदा होजाय उदरमैं आफरो बाढि जाय नीहार बंद होजाय महान दुःख गले बांध्या है तातैं व्रत संयम उपवास स्वाध्यायादिक समस्त उत्तम कार्यनिकूं जलांजलि देहै। बहुरि जरदा महा अशुचि द्रव्य है याकूं मुखमैं राखि मलमूत्र मोचन करे है रास्तामैं मार्गमैं मलमूत्रादिक ऊपरि पगरखी पहरे जरदा खाय है मांसभक्षी मद्यपायीनिका तथा नीच जातिका घरका पानी मिल्या कत्था चूना खाय है नीच जाति अपना हस्तादिक बिना धोये अंग खुजावते जरदा मसल देहै उच्छिष्टकी ग्लानि नाहीं करे है समस्त शय्या आसन खूणा बारी जाली समस्त जायगां उच्छिष्टसूं लिप्त करिदेय है पशु हू रस्तै चालता सोता मुख नाहीं चलावै है याकै पशुतैं हू अधिक विकलता है। मुखमैं महादुर्गंध रहै है जरदाका पीका जहां पडै तहां माछी माछर डांस मकडी कीडा कीडी बडा बडा त्रस ही मरि जाय तहां पंचस्थावरानिका घात होय ही। व्रत संयम उपवास स्वाध्याय जाप्य शुभ भावनाका नाश होय है जरदा खानेवालेनिकी बुद्धि आत्माके हितमैं प्रवर्तन नाहीं करे है संयमके योग्य नाहीं होय है तामैं दया क्षमा शील संतोष इंद्रियविजय परिणाम कदाचित् नाहीं प्रवर्तैं हैं अनेक पापाचार कपट छलमैं बुद्धि प्रवीण होजाय है। अनेक व्यसननिमैं प्रवृत्ति होजाय है जरदा

खानेवालेके मांगनेकी लाज नाहीं रहै है। समस्त नीच जातिसूं भी मांगि करि खाय है। मद्य मांस खानेवाले जिसकाल मद्य पीवै हुक्का पीवै है उसका हस्ततैं दीया जरदा बीडी मांगि मांगि खाय है जरदा खानेवाले बहुत मनुष्यनिकूं नीकेकरि देखिए है एककै हू परमार्थमें बुद्धि परलोक शुद्ध करनेकी बुद्धि नाहीं होय है इस जरदेके प्रभावकरि हीनआचारकी वृद्धि होय तदि परमार्थतैं बुद्धि भ्रष्ट होय लौकिकजनमें व्यभिचारमें लोभमें प्रबल होय है सांचा धर्म याकै नाहीं होय है ऐसा आपका परिणाममें आप अनुभव करो। अर परका जरदा खानेका स्वरूप प्रत्यक्ष देखि जरदा खानेका त्याग करो। अर जरदा एक दिन हू नाहीं खाय तो परिणाममें उपाधि उदरमें व्याधि अनेक रोगव्याधि उपजावै है तातैं जरदा खाना महारोगकूं महाव्याधिकूं सूगलापनाकूं अंगीकार करना है। बहुरि भांग पीवना हू अपना बडापना शोभितपना नष्ट कर देहै भंगेराका दरजा घटि जाय है भंगेराके जिह्वा इंद्रियकी लंपटता बधि जाय है। विकलीपना होइ जाय है प्रमादी हुवा ऐश करना बहुत निद्रा लेना बहुत घृत खांडका भोजन करना चाहै है। पांचोंइंद्रियां विषयांकी लंपटताने प्राप्त होजाय हैं ज्ञान शिथिल होजाय है बेमी होजाय है भांग पीवनेवालेके मीठा भोजनमें ऐसी लंपटता होजाय है जो मीठा मिलै कृतकृत्य होजाय है आत्मज्ञान धर्मका ज्ञान कदाचित् नाहीं होय है बाह्य आचरण भ्रष्ट होय ही है अर भांगमें हजारां त्रसजीव चालता दौडता उपजै है वर्षाऋतुमें भांगमें अपरिमाण त्रसजीव उपजै हैं भंगेरा भांग सांधै नाहीं घोटिकरि पीजाय है। ऐसैं हू अफीम खाना जरदा खाना हुक्का पीवना भांग पीवना अर और हू छोंतरा पीवना तमाखू सूंघना ये देहके तो महारोग ही हैं अमल करनेंवालेकी आकृति बिगडि जाय है धर्म बिगडि जाय आचार बिगडि जाय ऐसा नियम है। ये नशा सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रका हू महाघातक है ये अमल अनर्थदंडनिमें हू हैं अर व्यसननिमें हू हैं यातैं मनुष्यजन्म अर जिनधर्म उत्तम कुलादिक पायाकूं सफल किया चाहो हो तो अमल नशा करनेका त्याग ही करो।

बहुरि रात्रिके अवसरमैं भोजन करना त्यागने योग्य ही है रात्रिभोजन करै ताकै यत्नाचार तो रहै ही नाहीं अर जीवनकी हिंसा होय ही। रात्रिविषै कीडी मांछर मांखी मकडी कसारी अनेक जीव आय पडै हैं अर दीपक जोय भोजन करै तो दीपकके संयोगतैं दूरदूरके जीव दीपकने शीघ्र आय भोजनमैं पडै हैं। अर रात्रिभोजन जिनधर्मी होय करै तो आगांने मार्ग भ्रष्ट होजाय अर रात्रिमैं चूल्हा चाकी परीडाका आरंभ करना मेलना धोवना मांजना ये घोरकर्म प्रगट होजांय तदि महान हिंसा अर महान दुःख प्रगट होजाय तदि घोर आरंभीके जिनधर्मका लेश हू नाहीं रहै है। बहुरि कोऊ कहै जो आरंभ तो नाहीं करै सीधा भोजन लाडू पेडा पूडी पूवा बरफी दुग्धादिक भक्षण करनेमैं रात्रि आरंभ नाहीं भया ताकूं ऐसा समझना जो दिवसकूं छांड रात्रि भोजन करै ताकै तीव्ररागरूप महान हिंसा होय है जैसैं अन्नके ग्रासका अनुराग अर मांसके ग्रासका अनुराग समान नाहीं होय है तैसैं रात्रि भोजनका अनुराग है सो दिनके भोजनका अनुरागके समान नाहीं है। दिवसमैं ही भोजन बहुत है रात्रिदिवस दोऊनिमैं भोजन करै ताके ढोर समान संवररहित प्रवृत्ति रही तथा रात्रिभोजन करनेवालेके व्रत तप नाहीं होय है। ऐसा विशेष जानना जो अनादिकालतै विदेहनिमैं एकबार वा दोयबार ही भोजन है रात्रिमैं कदाचित हू भोजन नाहीं जो रात्रि भोजन करै तो चूल्हा चाकी बुवारी जलादिकका समस्त आरंभ रात्रिमैं होजाय तदि भोजन करनेमैं तरकारी बनावनेमैं तथा पुरुषनिके भोजन करनेमैं स्त्रीनिके कुंटुंब सेवकादिकनिके भोजन करनेमैं धोयबेमैं बुहारिबेमैं मांजनेमैं दोय पहर रात्रि व्यतीत हो जाय है अनेक जीवनिका संहार होजाय समस्त यत्नाचारका अभाव होय जाय अर कीडा कीडी इली कसारी मकडी इत्यादिक बडे बडे जीवनिका भोजनमैं पतन तथा ईंधनमैं चूल्हामैं तरकारीमैं जलमैं पात्रनिमैं पतन होय है अर दीपकादिक तथा चूल्हाका निमित्तकरि माखी माछर डांस पतंगादिक अनेक जीवनिका नितप्रति होम होजाय अर दिनमैं भी आरंभ अर रात्रिमैं हू घोर आरंभ करि समस्त

कुटुंबजनानिके महा दुःख पैदा होजाय । रात्रिमें घोर बंधातैं समता नाहीं आसके तामें धर्मसेवन तथा शास्त्रका पठन श्रवण तत्वार्थकी चर्चा सामायिक जाप्य शुभध्यानका तो अवसर ही रात्रिभोजन करनेवालेके नाहीं रहे है । यातैं जिनेन्द्रधर्मके धारक रात्रिभोजन कदाचित् हू नाहीं करे हैं ऐसी सनातनरीति अब ताईं चली आवे है अर जिनधर्मी रात्रिभोजन नाहीं करे हैं ऐसैं कोट्यां मनुष्यनिमें प्रसिद्धता अर उज्वलता अर प्रभावना अर उच्चता अर भोजनकी शुद्धताकूं बिगाड कोऊ विषयनिकरि प्रमादी अंध भया रात्रिमें दुग्ध कलाकंद पेडा खाय है तथा औषधि जलादिक पीवे है सो अपने उत्तम आचार धर्मनै अर कुल मर्यादानै अर जैनीपनानै जलांजलि देय सन्मार्गतैं भ्रष्ट हुआ उन्मार्गी है, उनका मार्ग तो बाह्य अभ्यंतर भ्रष्ट है अर आगानै अधर्मकी परिपाटी चलावै है । बहुरि रात्रिका किया भोजन दिनमें हू भक्षण करना योग्य नाहीं है । बहुरि मिथ्याधर्मके धारकनिके मांसभक्षीनिकै संग बैठि भोजन मत करो । नीचजातिकेसूं मित्रता मति करो देवताके चढ्या भोजन मत भक्षण करो । दांतका चूडा रोमका वस्त्र कामली पहिर भोजन बनावै तो भक्षण योग्य नाहीं मांसभक्षीनिके घरमें भोजन नाहीं करना नीचजातिके घरमें भोजन नाहीं करना । बहुरि अचारनिका अर्क तथा माजूम तथा सरबत अन्य हू समस्त वस्तु भक्षण करना योग्य नाहीं । अचारके बिलायतका बण्यां म्लेछनिके जलकर बनाया उच्छिष्ट अर्कनिकी भरी हुई बोतलां आवै हैं अर समस्त वस्तु अज्ञात हैं अर अर्कादिकनिमें अनेक जलचर थलचर नभचर पंचेन्द्रियादिक जीवानिके मांसके कई अर्क हैं अर बहुत जातिकी मदिरा बनाय अर्क संज्ञा करे हैं बहुत जीवनिके अंडानिका रसकी बोतलां भरी हैं । अर मधु जो सहत सो समस्त सरबत मुरब्बा माजूम जवारसादिकनिमें है अर अनेक जीवनिका अनेक अंग इन्द्रियां जिह्वा कलेजा इत्यादिक शुष्क हुआ मांसानिकूं अचार बेचैं है यहांके समस्त उत्तमकुलनिकी बुद्धि भ्रष्ट करनेकूं मुसलमान लोक अपनी उच्छिष्ट भक्षण करावनेकूं समस्त हिंदुस्थानके लोकनिकूं भ्रष्ट करनेकूं

अचारनिकी दुकानां करवाई हैं करोड कषायीनिकी दुकान समान एक अचारकी दुकान है। यहां इसदेशमें राजालोक हिंदूधर्मकी रक्षावास्ते अठारासै चाईसका संवत तांई तो अचारका वसना दुकान करना नाहीं होने दीया फिर कालके निमित्ततैं पापकी प्रवृत्ति फैली ही अब उत्तम कुलवाले हू इनका अर्कादिक खावने लगे हैं सो मुसलमाननिका झूंठन अर मांस मदिरादिक भक्षण करने लगे तदि ब्राह्मणपना महाजनपना वैश्यपना कहां रह्या सब कुल भ्रष्ट भये अर अभक्ष्यभक्षण करनेहीतैं सत्यार्थधर्मतैं रहित लोकनिकी बुद्धि होगई है अर अचारानिकी औषधिहीतैं रोग मिटै है ऐसा नियम नाहीं। अचारनिका अर्क पीवा करि धर्मभ्रष्ट होय बहुत लोक मरते देखिये हैं जिनके दुर्गतिका बंध होगया है तिनके ही इनकी भ्रष्ट औषधिसे आराम होय है। जैसैं राजा अरविंदके दाहज्वरका अनेक इलाज किया तो हू दाहज्वर शांत नाहीं भया अर पाछे अपना महलकी छाति ऊपर लडते विसमरानिका शरीरतैं रुधिरका बूंद अपने शरीर ऊपरि पडा तातैं शीतलता भई तदि पापी पुत्रानिसूं कही मोकूं रुधिरकी बावडी भराय द्यो जो मैं वामैं क्रीडा करि आतापरहित हो हूं तब पुत्र पापतैं भयभीत होय लाखका रंगकी बावडी भराई तदि राजा बावडीकूं देखि बडा आनंद मानि बावडीमैं गर्क होय अर कपटके लोहीकी बावडी जानि पुत्र ऊपर क्रोधित होय पुत्रकूं मारनेकूं छुरी लेय दौड्या सो मार्गमैं पडि अपना हाथकी छुरीतैं आप मरि नरक जाय पहुंच्या। ऐसैं ही जिनकी दुर्गति होनी है तिनकै अचारानिकी औषधिसूं आराम होय है तदि उनके पापरूप अचारी वस्तुनिमैं प्रवृत्ति होय है यातैं प्राणानिका नाश होते हू छह महीनेके बालकहूकूं अचारकी औषधि देना योग्य नाहीं। धर्म विगड्यां पाछैं यो जिनधर्म अनंतकालमैं हू नाहीं मिलेगा तातैं जैनधर्मके धारकनिकूं हजारां खंड होजाय तो हू अभक्ष्यभक्षण नाहीं करना बहुरि बजारकी दुकाननिका चून कदाचित् मति भक्षण करो बेचनेवालेनिके समस्त चमारी खटीकनी और मुसलमनिनी धोबिन इत्यादिक तो पीसै हैं मुसलमान धोबी बलाईनिके राजाका तबेला तोपखानानितैं

चून मिले सो बजारवाले मोल लेय लेवे हैं अर महीनाका छह महीनाका पीस्याको प्रमाण नाहीं हजारां सुलसुल्यां पडि जाय हैं। घणा जणा बीधो नाज लेय मोदी लोग पिसावै हैं अर मुसलमान म्लेच्छ समस्त उसहीमें हस्त घालि तुला लेजाय हैं मुसलमानांके नुकता विवाहमें काम नाहीं आवे सो आधा ओसणि आधो फेर जाय हैं बहुरि सरायका दुकानदारांका पीतलका कांसीका लोहेका पात्र भोजन करनेकूं लेना योग्य नाहीं समस्त मांसभक्षी दुराचारीनिकूं भी वेही पात्र देहैं तातैं अपना आचारकी उज्वलता चाहे हैं सो तीन चार पात्र अपने निकट राखि विदेशमें गमन करे हैं अर जहां जाय तहां दमडी बधती देय चून तराय भक्षण करे चूनकी नाहीं विधि मिलै तो खिचडी तथा घूघरी रांधि खाय। बहुरि बजारकी मिठाई लाडू बरफी घेवरादिक मत भक्षण करो। इनका चूनका घृतका जलका कुछ परिमाण नाहीं है। लोभी निंद्यकर्मीनिके आचार नाहीं होय है बहुरि मैदाका खमीरा वाडिकरि सडावे हैं खट्टा पडते ही तामें अनंतानंत जीव पडे हैं पाछैं कढाईमें पके हैं भुने हैं सो जलेबी करे हैं माबूनी करे हैं सो भक्षण करने योग्य नाहीं तथा दहीमें खांड बूरा मिलाय बहुतकालपर्यंत मति राखो दोय महूरततांई खाना योग्य है अपना मित्र भाई पुत्रादिकके सामिल एक पात्रमें भोजन करना योग्य नाहीं। मनुष्य कूकरा बिलाई इत्यादिकनिका उच्छिष्ट भोजन त्यागना योग्य है तथा गाय भैंस गधा इत्यादिक तिर्यंचनिका उच्छिष्ट जलादिकमें स्नान मति करो पान तो कदाचित् हू मत करो तथा अन्नका खांडका लापसीका बनाया मनुष्य तिर्यंचनिका आकार ताकूं मत भक्षण करो तथा देवी दिहाडी व्यंतरादिक-निकी पूजाके वास्तै संकल्प किया भोजन त्यागने योग्य है तथा मांसभक्षीनिका भोजनमें भाजन मत भक्षण करो। भाजन मांसभक्षीको मांग्या मत द्यो। नाईका भाजनका जलसों छौर मत करावो रज-स्वलाका स्पर्शन किया पात्र भोजन योग्य नाहीं। बहुरि अनुपसेव्य जानि विकाररूप वस्त्र आभरण मत पहरो जो उत्तम कुलके योग्य नाहीं ऐसा नीचकुलनिके पहरनेके वेश्या तथा विटपुरुषनिके पहरनेके

तथा म्लेच्छ मुसलमाननिके पहरनेके तथा स्वामी योगी फकीर भांडानिके पहरनेके वस्त्र आभरण परिणाम बिगाडे हैं अपने तथा परके विकार उपजावनेवाला तथा अपना पदस्थके योग्य लोकतैं अविरुद्ध ऐसा आभरण वस्त्र भेष धारना योग्य है बहुत करनेकरि कहा संक्षेपतैं जानना जो समस्त संसार परिभ्रमणके कारण पंचइंद्रियनिका विषयनिमैं लालसा है तिन इंद्रियनिमैं हू जिह्वाइंद्रिय अर उपस्थइंद्रिय दोय इंद्रियनिकी लालसा इसलोक परलोक दोऊनिकूं विगाडदेनेवाली है इन दोय इंद्रियनिके विषयकी लोलुपता जिनके अधिक है ते मनुष्यजन्ममैं हू पशुके समान हैं । पशुयोनिमैं हू इन दोऊ इंद्रियांका विषयकी चाहकरि परस्पर लडि लडि मरजाय है अर मनुष्यजन्ममैं हू कलह करना मारना मरना निर्लज्ज होना उच्छिष्ट खावना दीनता भाषणा पुण्यदान लेना अभक्ष्य भक्षण करना इत्यादिक समस्त नीचकर्मनिमैं प्रवृत्ति रसनाइंद्रियके विषयनिकी लालसातैं ही होय है । अरु देखहु भोगभूमिके अर देवलोकके नानाप्रकारके भोगनितैं हू तृप्तता नाहीं भई अब ये किंचित् जिह्वाका स्पर्शमात्रका स्वाद अति अल्पकालमैं है भोजन गिल्यां पाछैं नाहीं अर पहली नाहीं ऐसा तृष्णाका बधावनेवाला आहारमैं लुब्धताका त्याग करि समस्त इंद्रियांको विजय करि रस नीरसकी कर्म जैसी विधि मिलाई तीसमैं संतोष धरि अभक्ष्यनिका त्याग करि देहका धारणमात्रके अर्थि भोजन करै है सो समस्त पापरहित होय देवलोकका पात्र होय है । अब यहां ऐसा जानना जो भोगोपभोगपरिमाण करै सो अपना परिणामनिकी दृढता देखै जो मेरे ऐता राग घट्या है ऐता हाल नाहीं घट्या है अर सामर्थ्य देखै जो ऐसा योग्य बनैगा तो मेरा देहका तथा परिणामका इसकूं निर्वाह करनेका सामर्थ्य है कि नाहीं है ऐसा विचार करि व्रत धारण करना अर देशकी रीति निर्वाह योग्य देखनी अर कालकूं अवसरकूं देखना अवस्था देखना अपना कोऊ सहायी है कि त्यागव्रतके बिगाडनेवाला है ऐसा हू विचार करना शरीरका रोगरहितपना (नीरोगपना) देखना भोजनादिक मिलनेका नाहीं मिलनेका संयोग देखना तथा भोजनादिक मेरे आधीन है कि पराधीन है ऐसे त्यागव-

तातैं हमारे तथा स्त्री पुत्र स्वामी इत्यादिकनिके परिणाममैं संक्लेश होयगा कि संक्लेश नाहीं होयगा अपना स्वाधीनपना पराधीनपना जानि जैसैं परिणामनिकी उज्वलता सहित व्रतका निर्वाह होय तैसैं नियमरूप त्याग करो तथा यम कहिये यावज्जीव त्याग करो । केतेक तो यावज्जीव ही त्यागने योग्य हैं—जामैं प्रगट त्रसनिका घात होय तथा अनंत जीवनिका घात होय अपने कुलमैं सेवने योग्य नाहीं होय तथा मद करनेवाला होय तथा मांस मद्य माखन मदिरा अचार महा विकृति अर रात्रिविषै भोजन द्यूतक्रीडा-दिक सप्तव्यसन विना दिया परधनका ग्रहण अर त्रसहिंसा अर स्थूल असत्य अन्यायका परिग्रह बिनाछान्या जल अनर्थदंड ये तो यावज्जीव ही त्यागने योग्य हैं। इनमैं नियम कहा करिये ये तो महा अनीति है इनके त्याग करनेमैं शरीर ऊपरि कुछ क्लेश भार दुःख नाहीं आवे है अपयश नाहीं होय है इनका त्यागमैं धन चाहिये नाहीं बल चाहिये नाहीं स्वामीका तथा स्त्रीका पुत्र कुटुंबादिकनिका सहाय चाहिये नाहीं किसीकूं पूछनेका वाकिफ करनेका हू काम नाहीं अपने परिणामके ही आधीन है कोऊ प्रकार इनका त्यागमैं शीत उष्ण क्षुधा तृषादिककी बाधा पीड़ा भोगना पडे नाहीं स्वाधीन है परिणामनिमैं देहमैं सुख करनेवाला है यातैं दुर्लभ सामग्री पाय भोगोपभोगका परिमाण करना श्रेष्ठ है। बहुरि कदाचित् प्रबलकर्मके उदयतैं यो मनुष्य कुदेशमैं पराधीनतामैं जाय पडे तथा प्रबल रोगतैं पराधीन होजाय तथा प्रबल जराके आवनेतैं उठने बैठने चालनेकी सामर्थ्य घटि जाय तथा कोऊ स्त्री पुत्रादिक सहायी नाहीं होय तथा नेत्रनिकरि अंध होजाय बधिर होजाय तथा लंबा रोग आजाय तथा बंदीखानामैं दुष्ट म्लेच्छा-दिक अपना भोजन जलादिक बिगाडि दे तथा जवरीतैं समस्तके सामिल बैठाय खान पान करावे ऐसा उपद्रव आजाय तो तहां अंतरगमैं तो व्रतसंयमकूं छांडे नाहीं बाहिर श्रीपंचनमोकार मंत्रको ध्यान करि ही शुद्ध है क्योंकि बाह्यदेहादिक पवित्र हो हू वा अपवित्र हो हू मलमूत्र रुधिरादिक करि लिप्त हो हू समस्त कुत्सित ग्लानियोग्य अवस्थाकूं प्राप्त हुआ जो पुरुष परमात्माकूं स्मरण करै है सो बाह्य हू पवित्र

है अर अभ्यंतर हू पवित्र है जातैं देह तो सप्तधातुमय मलमूत्रादिकी भरी हुई अर रोगनिका स्थान है एक क्षणमैं समस्त शरीरमैं कोढ झरने लगि जाय है हजारां फोडा फुनसी गूमडी लोहू राध स्रवणे लागि जाय मलमूत्र अबुद्धिपूर्वक स्रवणे लागि जाय है ऐसा अवसरमैं बाह्य व्यवहार शुद्धता कैसैं होय अर निर्धन एकाकीका सहायक कौन होय ? तहां धर्मात्मा पुरुष अशुभकर्मका उदयमैं ग्लानि त्याग करके धीरता धारण करि आर्त्तपरिणाम करि संक्लेश नाहीं करै है अशुभकर्मके उदयकूं निर्जरा मानता अंतरंग वीतरागताकरि संसार देह भोगनिका स्वरूप चिंतवन करता बारह भावना भावता कर्मके उदयतैं अपना आत्मस्वरूपकूं भिन्न ज्ञाता दृष्टा शुद्ध चिंतवन करता वीतरागताकरि ही राग द्वेष हर्ष विषाद ग्लानि भय लोभ ममतारूप आत्माके मलकूं धोय आपकूं शुद्ध मानै है ताकै समस्त शुद्धता होय है । अब भोगोपभोगपरिमाण व्रतके दोय प्रकारता कहनेकूं सूत्र कहै हैं–

नियमो यमश्च विहितो द्वेधा भोगोपभोगसंहारात् । नियमः परिमितकालो यावज्जीवं यमो ध्रियते ॥ ८७ ॥

अर्थ–भगवान है सो भोग अर उपभोगका घटावनेतैं नियम अर यम ऐसैं दोय प्रकार भोगोपभोग परिमाण व्रत कह्या है । तिनमैं कालका परिमाणकरि त्याग करना सो नियम कह्या है अर इस देहमैं जीवन है तितने तक तो त्याग करि रहना सो यम कह्या है । भावार्थ–जो एकवार भोगनेमैं आवै ऐसे आहारादिक तो भोग हैं अर जे वारंवार भोगनमैं आवैं ऐसे वस्त्र आभरणादिक हैं ते उपभोग हैं । तिन भोग उपभोगनिका परिमाण यम नियम करि दोय प्रकार है तिनमैं जिस भोग उपभोगका एक मुहूर्त्त तथा दोय मुहूर्त्त तथा पहर तथा दोय पहर एक दिवस दोय दिवस पांच दिन पंद्रह दिन एक मास दोय मास चार मास छह मास एक वर्ष दोय वर्ष इत्यादिक कालकी मर्यादा करि त्याग करै सो नियम नामका परिमाण है । जातैं जो आपके उपयोगी होय शुद्ध होय ताका त्यागमैं तो कालकी मर्यादाकरि ही नियमका त्याग करना । अर जो आपके प्रयोजनरूप हू नाहीं होय तथा परिणामनिकूं

बिगाडनेवाला होय अथवा सदोष होय ताकूं यावज्जीव त्याग करि यमनामा परिमाण करना योग्य है इस भोगोपभोग परिमाणतैं अनेक पापके आश्रव रुक जाय हैं। इंद्रियां वशीभूत हो जाय हैं राग अतिमंद होजाय है व्यवहार शुद्ध होजाय है। मन वश होजाय व्यवहार परमार्थ दोऊ उज्वल होजाय तातैं भोगोपभोग परिमाण व्रत ही आत्माका हित है विरुद्ध भोग तो त्यागिये ही और अविरुद्ध भोग होय तिनमें हू अपनी शक्ति परिमाण देश काल देखि दिवस रात्रिके कालकी मर्यादा करो तामैं हू फिर दोय घडीकी चार घडीकी मर्यादा करि रहना यातैं कर्मनिकी बडी निर्जरा है। अब और हू भोगोपभोगनिमैं परिमाण कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

भोजनवाहनशयनस्नानपवित्राङ्गरागकुसुमेषु। ताम्बूलवसनभूषणमन्मथसंगीतगीतेषु ॥ ८८ ॥

अर्थ—भोगोपभोग परिमाणनाम व्रतमैं नित्य हू नियम करै आजका दिनमैं एक बार भोजन करूंगा वा दोय बार भोजन करूंगा वा तीन चार बार इत्यादिक भोजन करनेका परिमाण करै अथवा आजका दिन मैं एती जातिका अन्न तथा एते रस एते व्यंजन भक्षण करूंगा अधिक प्रकार भक्षण नाहीं करूंगा ऐसैं भोजनका नियम करै। बहुरि वाहन जे हस्ती घोडा ऊंट बलध पालकी रथ बहली नाव जहाज इत्यादिक वाहन ऊपरि चढनेका नियम करै। बहुरि पलंग खाट इत्यादिकविषै शयनका नियम करै जो आज मैं पलंगादिकमैं शयन करूंगा वा भूमिमैं ही शयन करूंगा। बहुरि आज एक बार स्नान करूंगा वा दोय बार स्नान करूंगा वा स्नान नाहीं करूंगा इत्यादिक नियम करै। बहुरि पवित्र जो अंगराग कहिये चंदन केसर कर्पूरादिकके विलेपन करना वा नाहीं करना इनमैं नियम करै बहुरि पुष्प तथा पुष्पनिकी माला आभरणादिक धारण करनेमैं नियम करै। बहुरि तांबूल इलाची सुपारी लवंगादिक भक्षण करूंगा वा नाहीं करूंगा ऐसा नियम करै। बहुरि वस्त्रनिका नियम करै जो आज एते वस्त्र पहरूंगा अधिक नाहीं पहरूंगा ऐसैं वस्त्रनिमैं नियम करै। बहुरि आज एते ही आभरण पहरूंगा अधिक नाहीं

ऐसैं आभरण पहरनेमैं नियम करे। बहुरि काम सेवनेका नियम करे। बहुरि नृत्य देखनेका नियम करे बहुरि गीत गावनेका वा अन्य वेश्या कलावंतादिकतैं गवावनेका नियम करे। बहुरि और हू हरितकायके भक्षणमैं नियम करे। बहुरि षटरसके भक्षणमैं जल पीवनेमैं नियम करे। बहुरि सिंहासन कुरसी चौकी इत्यादिक आसनमैं बैठनेका नियम करे। इत्यादिक अपने योग्य हू भोगउपभोग निमैं नित्य नियम करे है ताकै भोजनपानादिक करनेतैं हू निरंतर संवर होय है। अब नियमके अर्थि कालकी मर्यादा कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

अद्य दिवा रजनी वा पक्षो मासस्तथर्तुरयनं वा। इति कालपरिच्छित्त्या प्रत्याख्यानं भवेन्नियमः॥ ८९ ॥

अर्थ—अद्य कहिये एक घडी मुहूर्त प्रहर अर दिवा कहिये दिवस तथा रात्रि पक्ष तथा एक मास तथा दोय मासका ऋतु अर अयन कहिये छह मास इत्यादिक कालका परिमाण करि त्याग करना सो नियम है। ऐसैं भोगोपभोगका परिमाण वर्णन किया। अब भोगोपभोगपरिमाण व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

विषयविषतोऽनुपेक्षाऽनुस्मृतिरतिलौल्यमतितृषानुभवौ। भोगोपभोगपरिमाव्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥ ९० ॥

अर्थ—ये भोगोपभोग व्रतके पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। विषय हैं ते संताप करावै हैं अर विषयांका निमित्ततैं मरण होय है यातैं ये पंचइंद्रियनिके विषय विष हैं इनमैं परिणामका राग नाहीं घटना सो अनुपेक्षा नाम अतीचार है॥ १॥ बहुरि जे विषय पूर्वकालमैं भोगे थे तिनकूं बारंबार याद करया करै सो अनुस्मृति नाम अतीचार है॥ २॥ बहुरि विषय भोगे तिस कालमैं अतिगृद्धि यातैं अति आसक्त हुआ भोगै सो अतिलौल्य नाम अतीचार है॥ ३॥ बहुरि विषयनिकूं आगामी कालमैं भोगनेकी अति तृष्णा लगी रहै सो अतितृष्णा नाम अतीचार है॥ ४॥ बहुरि विषयनिकूं नाहीं भोगे तिस कालमैं भी

जाने भोगूं ही हूं ऐसा परिणाम सो अनुभव नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसें भोगोपभोगपरिमाण व्रतके पांच अतीचार छांडि वृतकूं शुद्ध करना ॥

इति श्रीस्वामीसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारके मूल सूत्रनिकी देशभाषामय वचनिकाविषै तृतीय अधिकार समाप्त भया ॥ ३ ॥

अब च्यार शिक्षाव्रतनिके स्वरूपका निरूपण करनेकूं सूत्र कहे हैं—

देशावकाशिकं वा सामयिकं प्रोषधोपवासो वा । वैय्यावृत्त्यं शिक्षाव्रतानि चत्वारि शिष्टानि ॥ ९१ ॥

अर्थ—देशावकाशिक ॥ १ ॥ सामायिक ॥ २ ॥ प्रोषधोपवास ॥ ३ ॥ वैयावृत्य ॥ ४ ॥ ऐसें चार शिक्षाव्रत कहे हैं । भावार्थ—ए चार वृत हैं ते गृहस्थपनामैं मुनिपनाकी शिक्षा करे हैं । अब देशावकाशिक वृतके कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

देशावकाशिकं स्यात्कालपरिच्छेदनेन देशस्य । प्रत्यहमणुव्रतानां प्रतिसंहारो विशालस्य ॥ ९२ ॥

अर्थ—अणुव्रतनिके धारक पुरुषनिकै दिन दिन प्रति विस्तीर्ण देशकूं कालकी मर्यादा करि घटावना सो देशावकाशिक नाम शिक्षाव्रत है । भावार्थ—जो पूर्वकालमैं दश दिशानिमैं जावना मंगावना भेजना बुलावना इत्यादिकनिकी मर्यादा यावज्जीव दिग्व्रतमैं करी थी सो तो बहुत थी तामैंतैं अब रोजीना क्षेत्रकूं घटाय कालकी मर्यादा करि व्रत करे सो देशावकाशिक व्रत है जैसैं पूर्वदिशामैं दोयसै कोसका परिमाण यावज्जीव किया सो तो दिग्वृत है फिर यामैंतैं रोजीना मर्यादा रूपकरि राखे जो आज चार कोसहीका म्हारे परिमाण है वा इस नगरका ही परिमाण है वा आज अपने घर बाहिर नाहीं जाऊंगा सो देशावकाशिक वृत है । अब देशावकाशिक वृतमैं क्षेत्रकी मर्यादा प्रगट करे हैं—

गृहहारिग्रामाणां क्षेत्रनदीदावयोजनानां च । देशावकाशिकस्य स्मरंति सीम्नां तपोवृद्धाः ॥ ९३ ॥

अर्थ—तपोवृद्ध जे गणधर देव हैं ते देशावकाशिक व्रत करनेकूं सीमा मर्यादा कहे हैं। गृहकूं कटककूं ग्रामकूं क्षेत्रकूं नदीकूं वनकूं योजनकूं देशावकाशिक व्रतमें मर्यादा करे हैं। इनकूं उलंघनका हमारे इतने काल त्याग है। अब देशावकाशिकमें कालकी मर्यादा कहे हैं—

संवत्सरमृतुमयनं मासचतुर्मासपक्षमृक्षं च। देशावकाशिकस्य प्राहुः कालावधिं प्राज्ञाः॥ ९४॥

अर्थ—प्रवीण पुरुष हैं ते एक वर्ष छह महीना दोय मास चार मास एक पक्ष एक नक्षत्र इस प्रकार देशावकाशिक व्रतके कालकी मर्यादा कहे हैं। अब देशावकाशिकका प्रभाव दिखावे हैं—

सीमान्तानां परतः स्थूलेतरपंचपापसंत्यागात्। देशावकाशिकेन च महाव्रतानि प्रसाध्यंते॥ ९५॥

अर्थ—रोजीना जेता क्षेत्रका परिमाण किया ताके बारैं स्थूल अर सूक्ष्म जे पंच पाप तिनका त्यागतैं देशावकाशिक व्रत करकैं महाव्रतानिकूं सिद्ध करिये हैं। भावार्थ—मर्यादा करी तीं बारैं समस्त पंचपापनिका त्यागतैं महाव्रत तुल्य भया। अब देशावकाशिक व्रतके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहे हैं—

प्रेषणशब्दानयनं रूपाभिव्यक्तिपुद्गलक्षेपौ। देशावकाशिकस्य व्यपदिश्यन्तेऽत्ययाः पञ्च॥ ९६॥

अर्थ—आपके जेता क्षेत्रकी मर्यादा थी तिस बार प्रयोजनके अर्थि अपना सेवककूं वा मित्र पुत्रादिककूं कहे तुम जावो तथा या काम करदो ऐसें कहना सो प्रेषण नाम अतीचार है॥ १॥ बहुरि मर्यादाबाह्य क्षेत्रमें तिष्ठतेनितैं बचनालाप करना तथा अन्य शब्दकी समस्या करि समझाय देना सो शब्द नाम अतीचार है।२। बहुरि मर्यादाबाह्य क्षेत्रमैं कोऊकूं बुलावना वा वस्त्रादिक वांछित वस्तुकूं शब्द कहि मंगावना सो आनयन नाम अतीचार है॥ ३॥ बाह्य क्षेत्रमैं तिष्ठतेनिकूं समस्या वास्ते अपनारूप दिखावना सो रूपाभिव्यक्ति नाम अतीचार है॥ ४॥ बहुरि मर्यादाके क्षेत्रके बाह्य क्षेत्रमैं वस्त्रादिक तथा कंकरी पाषाण काष्ठखंड आदिक फेंकि आपाकूं जितावना सो पुद्गलक्षेप नाम अतीचार है॥ ५॥ ऐसें देशावकाशिकव्रतके पंच अतीचार त्यागने योग्य हैं ऐसें देशावकाशिक व्रत कहि करि अब सामायिकका स्वरूप कहे हैं—

असमयमुक्तिमुक्तं पञ्चाघानामशेषभावेन । सर्वत्र च सामयिकाः सामायिकं नाम शंसन्ति ॥ ९७ ॥

अर्थ—सामायिक कहिये परम साम्यभावकूं प्राप्त भये ऐसे गणधर देव हैं ते सामायिक नाम करि ताकी प्रगट प्रशंसा करे हैं जो सर्वत्र कहिये मर्यादा करी तिस क्षेत्रमें अर मर्यादाबाह्य क्षेत्रमें हू समस्त मनवचनकाय कृतकारितअनुमोदनाकरि कालकी मर्यादारूप जो समस्त पंचपापनिका त्याग सो सामायिक है । भावार्थ—समस्त पंचपापनिका कालकी मर्यादाकरि समस्तपनाकरि त्याग सो सामायिक है । अब सामायिकमें पंचपापनिका त्याग करि कैसें तिष्ठै सो कहे हैं—

मूर्धरुहमुष्टिवासोबन्धं पर्यङ्कबन्धनं चापि । स्थानमुपवेशनं वा समयं जानन्ति समयज्ञाः ॥ ९८ ॥

अर्थ—समयज्ञ जे परमागमके जाननेवाले हैं ते मूर्द्धरुह जे केश तिनका बंधन अर मुष्टिबंधन अर वस्त्रबंधन अर पर्यंकासनबंधन हू जैसें होय तैसें स्थान कहिये खडा तथा उपवेशन कहिये बैठा समय कहिये रागद्वेषादि रहित शुद्धात्मा जो है ताहि जानता रहै । भावार्थ—सामायिक करनेवाला कालकी मर्यादा परिणाम समस्त प्रकार पापनिका त्याग करि खडा होय करि तथा पर्यंकासन कर बैठे । अर पर्यंकासनमें अपना वाम हस्ततल ऊपरि दक्षिण हस्ततलकूं स्थापन करै । अर अपना मस्तकका केश वा वस्त्र हलता होय तो परिणामके विक्षेप करै यातैं मस्तकके चोटी इत्यादिकके केश होय तिनकू बांधिले अर वस्त्र हू बिखरि रह्या होय ताकूं हू गांठ देय बांधि करि सामायिक खडा हुआ करै वा बैठा हुआ करै । अब सामायिकके योग्य स्थानकूं कहे हैं—

एकान्ते सामयिकं निर्व्याक्षेपे वनेषु वास्तुषु च । चैत्यालयेषु वापि च परिचेतव्यं प्रसन्नधिया ॥ ९९ ॥

अर्थ—जिस स्थानमें चित्तकूं विक्षेप करनेकें कारण नाहीं होय अर बहुत असंयमीनका आवना जावना नाहीं होय अर अनेक लोकनकरि वाद विवादादिकका कोलाहल नाहीं होय स्त्रीनिका नपुंसकनिका आगमन प्रचार नाहीं होय अर जहां गीत नृत्य वादित्रादिकनिका प्रचार नजीक नाहीं होय

अर तिर्यंचनिका अर पक्षीनिका संचार नाहीं होय और जहां बहुत शीतकी तथा उष्णताकी प्रचंड पवनकी वर्षाकी बाधा नाहीं होय तथा डांस माछर मक्षिका कीडा कीडी जवा मधुमाक्षिका टांच्या सर्प बीछू कनसला इत्यादिक जीवनकृत बाधा नाहीं होय ऐसा विक्षेपरहित स्थान एकांत होय वा वन होय जीर्ण बागके मकान होय वा गृह होय वा चैत्यालय होय वा धर्मात्माजननिका प्रोषधोपवास करनेका स्थान होय ऐसा एकान्त विक्षेपरहित वन होहु वा जीर्ण बाग तथा सूना गृहादिक चैत्यालयादिकमैं प्रसन्नचित्त हुआ सामायिकमैं परिचय करो। अब सामायिककी और हू सामग्री कहिये है—

व्यापारवैमनस्याद्विनिवृत्त्यामन्तरात्मविनिवृत्त्या। सामायिकं बध्नीयादुपवासे चैकभुक्ते वा॥ १००॥

सामायिकं प्रतिदिवसं यथावदप्यनलसेन चेतव्यं। व्रतपञ्चकपरिपूरणकारणमवधानयुक्तेन॥ १०१॥

अर्थ—कायकी चेष्टारूप व्यापार तामैं विरक्तपनातैं बाह्य आरंभादिकतैं छूटि अर अंतरात्मा जो मन ताकूं विकल्परहित करिकैं अर उपवासके दिनविषै अथवा एकभुक्तिके दिनविषै सामायिकरूप तिष्ठै तथा आलस्यरहित पुरुष दिवस २ प्रति नित्य रोजीना यथावत् सामायिक जो है ताहि एकाग्र चित्त करि युक्त हुवा परिचय करने योग्य है वृद्धि करने योग्य है। कैसाक है सामायिक अहिंसादिक पंचव्रतनिकी परिपूर्णताका कारण है। भावार्थ—सामायिक करनेमै उद्यमी श्रावक है सो समस्त आरंभादिक कायकी क्रियाकूं त्याग करि अर मनका विकल्प छांडि सामायिक करै तिनमैं कोऊ तो पर्वका निमित्त पाय उपवास जिस दिन करै तिसही दिनमै सामायिक करै कोऊ एक ठाणाके दिन सामायिक करै कोऊ नित्यप्रति सामायिक करै कोऊ एक दिवसकी आदि अंतमैं दोय बार नित्यप्रति सामायिक करै अथवा पूर्वाह्न मध्याह्न अपराह्न तीनकालविषै दोय दोय घडीका नियम करि साम्यभावकी आराधना करै सो एक स्थानमैं निश्चल पर्यंकासन तथा कायोत्सर्ग नाम निश्चल आसन धरि अंगउपंगनिका चलायमानपना छांडि काष्ठपाषाणकरि गण्या प्रतिबिंबतुल्य अचल होय दशदिशानिकूं नाहीं अवलोकन करता

अपने अंगउपंगानिकूं नाहीं देखता किसीतैं वार्ता नाहीं करता समस्त पंच इंद्रियनके विषयनितैं मनकूं रोकि समस्त चेतन अचेतन द्रव्यनिमैं राग द्वेष हर्ष विषाद वेर स्नेहादिकनिकूं छांडि सामायिकमैं तिष्ठै है सामायिकमैं तिष्ठता समस्त जीवनिमैं मैत्री धारण करता परम क्षमा धारण करै है मैं सर्व जीवनिमैं क्षमा धारण करूं हूं कोऊ जीव मेरा बैरी नाहीं है मेरा उपार्जन किया मेरा कर्म ही बैरी है मैं अजानभावतैं क्रोधी अभिमानी लोभी होय करिकै विपरीत परिणामी हुआ जाकी प्रवृत्तिसूं मेरा अभिमानादिक पुष्ट नाहीं भया तिसकूं ही बैरी मान्या कोऊ मेरा स्तवन बडाई नाहीं करी मेरे कर्तव्यकी प्रशंसा नाहीं करी ताकूं बैरी समझ्या मेरा आदर सत्कार उठना स्थान देना इत्यादिकमैं मंद प्रवर्त्या ताकूं बैरी जान्या तथा कोऊ मेरा दोष छो ताकूं जनाया ताकूं बैरी जान्या तथा कोऊ मेरे आधिन नाहीं प्रवर्तन किया तथा मोकूं कुछ भोजन वस्त्र धनादिक नाहीं दिया ताकूं बैरी मान्या सो ये समस्त मेरी कषायतैं उपजी दुर्बुद्धितैं अन्य जीवनिमैं वैर बुद्धि ताहि छांडि क्षमा अंगीकार करूं हूं अर अन्य समस्त जीव हैं ते हू मेरा अज्ञानभाव विषयकषायके आधीन जानि मेरे ऊपरि क्षमा करो मोकूं माफ करो ऐसैं बैर विरोधकी बुद्धिकूं छांडि मैं समस्तमैं समभाव धारि सामायिक अंगीकार करूं हूं जेते दोय घटिका परिमाणमैं मनकरि बचनकरि कायकरि समस्त पंच इंद्रियनिका विषयनिकूं समस्त आरंभ परिग्रहकूं त्यागकरि भगवान पंचपरमेष्ठीका स्मरण करता तिष्ठू हूं ऐसैं सामायिकका अवसरमैं प्रतिज्ञाकरि पंच नमस्कारके अक्षरानिका ध्यान करता तथा पंच परमेष्ठीके गुणनिकूं स्मरण करता तथा जिनेन्द्रका प्रतिबिंबकूं चिंतवन करता सामायिकमैं तिष्ठै तथा अपणा आत्माका ज्ञाता दृष्टा स्वभावकूं रागद्वेषतैं भिन्न अनुभव करता तिष्ठै तथा चार मंगल पद चार उत्तम पद चार शरण पदनिकूं चिंतवन करता तिष्ठै तथा द्वादशभावना षोडशकारणभावना चिंतवन करै अर चतुर्विंशति तीर्थंकरनिका स्तवनमैं तथा एक तीर्थंकरकी स्तुति तथा पंच परम गुरुनिका स्तवनमैं इनके अर्थमैं एकाग्रचित्त धारण करि सामायिक करै तथा प्रतिक्रमण करनेकूं समस्त दिवसमैं किये दोषनिकूं दिनका अंतमैं

चिंतवन करै अर समस्त रात्रिमैं जे दोष किये तिनकूं प्रभात समय चिंतवन करै जो यो मनुष्य जन्म अर तामैं भगवान सर्वज्ञ वीतरागका उपदेश्या धर्म अनंतकालमैं बहुत दुर्लभ प्राप्त भया है इस जन्मकी एक घडी हू धर्म विना व्यतीत मत होहू ऐसा विचार करै जो आजका दिनमें तथा रात्रिमैं जिनदर्शन पूजन स्तवनमैं केता काल व्यातीत किया अर स्वाध्याय सतसंगति तत्त्वार्थनिकी चर्चा तथा पंच परमेष्ठीनिका जाप ध्यानमैं तथा पात्रदानमैं केता काल व्यतीत किया अर बहुत आरंभमैं अर इंद्रियनिके विषयनिमैं अर व्यवहारादिक विकथामैं अर प्रमादमैं निंद्रामे काम सेवनमैं भोजनपानादि-कमैं आरंभादिकनिमैं केता काल व्यतीत किया तथा मेरा मनवचनकायकी प्रवृत्ति तथा रागादिक संसारके कार्यनिमैं अधिक भई कि परमार्थमैं अधिक भई ऐसे समस्त दिवसका किया कर्तव्यकूं दिनका अंतमैं चिंतवन करै अर रात्रिका कियाकूं प्रभात समय चिंतवन करै जातैं जो पांच रुपयाकी पूंजी लेय बनिज करै है सो हू नित्य रोजाना अपना ठगावना कुमावना टोटा नफाकी संभाल करै है तो पूर्व पुण्यके प्रभावतैं इस जन्म लाया जो उत्तम मनुष्य जन्म वीतराग धर्म सतसंगति इंद्रियपरिपूर्णतादिक धन तिसमैं व्यवहार करता ज्ञानी अपनी आत्माके हानि वृद्धि नाहीं संभालि करै कहा? जो टोटा नफाकी संभाल नाहीं करै तो परलोकतैं ल्याया धर्मधनादिकनकूं नष्ट करि घोर तिर्यंच गतिमैं वा नारकीनिमै निगोदनिमैं जाय नष्ट होजाय तातैं धर्मरूप धनका बधावनेका अर्थि एक दिनमैं दोय बार तो संभाल करै ही अर जो कषायनिके वशतैं जो अपने मनवचनकायकी दुष्ट प्रवृत्ति भई ताकूं वारंवार निंद्या करै हाय मैं दुष्ट चिंतवन किया तथा कायतैं दुष्ट क्रिया करी हाय मैं वचनकी प्रवृत्ति बहुत निंदा करी यामैं महा अशुभकर्मका बंध किया धर्मकूं दूषित किया अपयश प्रगट किया अब इस निंद्यकर्मकूं चिंतवन करते मेरे परिणाम पश्चात्तापकरि दग्ध होय हैं अहो! मोहकर्म बडा बलवान है जो मैं मेरे दुष्ट परि-णामनिकी दुष्टताकूं अर पापके करनेवाले अर दुर्गतिके ले जानेवाले हमारे निंद्य परिणामनिकूं नीके

मेरा घात करनेवाले जानूं हूं अर प्रयोजनरहित जानूं हूं अर अपनी जीवितव्यकूं बहुत अल्प जानूं हूं अर परलोकमें मेरे किये कर्मका फलकूं मैं ही अकेला ही भोगूंगा ऐसा अच्छी तरह वारंवार परिणाममें निश्चय करूं हूं चिंतऊ हूं चिंतवन करते करते हू मेरा परिणाम जो अन्य जीवनितैं बैर अर विषयनिमैं राग नाहीं घटै है सो यो प्रबल मोहकर्मकी महिमा है याहीतैं मोहकर्मका नाश करि विजयकूं प्राप्त भये ऐसे पंच परमेष्ठीनिकूं स्मरण करूं हूं जो मोहकर्मके जीतनेवाले जिनेन्द्रका प्रभावकरि मेरे मोह कर्मतैं उपजे रागभाव द्वेषभाव कामादि विकारभाव तथा क्रोधभाव अभिमानभाव मायाचारके भाव लोभभाव मेरा नाशकूं प्राप्त होहु जैसी वीतरागता जिनेन्द्रभगवान पाई तैसी मेरे भी हो हू इस अभिप्रायतैं मैं कायतैं ममत्व छांडि पंचपरमेष्ठीका ध्यान सहित कायोत्सर्ग करूं हूं तथा अज्ञानभावतैं जो पूर्वकालमैं पृथ्वीकायका खोदना कुचरना कूटना इत्यादिक करि घात किया होय तथा अवगाहनेकरि बिलोवनकरि छिडकनेकरि स्नानादिककरि जलकायका जीवांकी विराधना करी तथा दाबनां बुझावना कसेरना कूटना इत्यादिककरि अग्निकायके जीवनिकी बिराधना करी तथा बीजणां इत्यादिक करि पवनकायका जीवांकी विराधना करी तथा जड कंद मूल छाल कूपल पत्र फूल फल डाइला डाहली सींख तृण घास बेल गुल्म वृक्षादिकनिका तोडना छेदना बनारना उपाडना चबाना रांधना बांटना इत्यादिककरि वनस्पतिकायकी विराधना करी तिनतैं उत्पन्न भया पापकर्म तिनका नाश परमेष्ठीके जाप्यके प्रभावतैं मेरे हो हू अर परमेष्ठीके ध्यानका प्रभावतैं अब मेरा परिणाम छह कायनिके जीवनिकी घाततैं पराङ्मुख हो हू संयमभावकी प्राप्त हो हू। बहुरि जो मेरे गमनमैं आगमनमैं उठनेमैं पसारनेमैं संकोचनेमैं भोजनमैं पानीमैं आरंभमै उठावनेमै मेलनेमैं तथा चाकी चूल्हा ओखली बुहारी जलका परीडा अर सेवा कृषी विद्या वाणिज्य लिखना शिल्पकर्म जीविकामैं तथा गाडी घोडा इत्यादिक वाहननिमैं प्रवर्तन करि जो मेरी यत्नाचाररहित प्रवृत्ति ताकरि जो द्विइंद्रिय त्रिइंद्रिय चतु-

रिन्द्रिय पंचेंद्रिय जीवनिकी विराधना भई होय सो मिथ्या होहू। मैं बुरी करी ये आरंभादिक भला नाहीं संसारमें डबोनेवाले हैं नरक देनेवाले हैं इन आरंभविषय कषायनिकरि ही यो जीव एकेन्द्रियादिक तिर्यंचनिमैं अनंतानंतकाल क्षुधा तृषा मारन ताडन लादन बंधन बालन छेदन फाडन चीरन चाबन इत्यादिक घोर दुःख भोगता ते हिंसातैं उपजाया कर्मको नाशके अर्थि अर आगाने हिंसारूप परिणामका अभावके अर्थि मैं पंच नमस्कार पदका शरण ग्रहण करूं हूं। बहुरि अज्ञान भावतै व प्रमादतैं जो मैं असत्य वचन कह्या तथा गाली दीनी तथा भंडवचन कह्या तथा मर्मछेद करनेवाले कर्कश वचन व कठोर कह्या तथा किसीकूं चोरीका कलंक लगाया किसीकूं कुशीलका कलंक लगाया तथा धर्मात्मा ज्ञानी तपस्वी शीलवंतानिकूं दोष लगाया तथा धर्मात्मानिकी निंदा करी तथा सांचे देवधर्मगुरुकी निंदा करी तथा मिथ्याधर्मकी पोषणा करी हिंसाकी प्रवृत्तिका उपदेश किया तथा मिथ्याधर्मकी प्ररूपणा करी तथा स्त्रीनिकी कथा राजकथा भोजनकथा देशकथा इत्यादिक घोर पापनिमैं मेरा वचन प्रवर्त्या ताका अब पश्चात्ताप करूं हूं। मैं घोर कर्मका बंध किया जाका फल नरकानिके दुःख तथा तिर्यंचगतिनिके घोर दुःख अनंतकाल भोगने हैं अर अनंतकाल गूंगा बहिरा आंधा नीच जाति नीचकुलमैं महा दारिद्रसहित उपजवना है यातैं अब दुष्ट वचनके बोलनेकरि उपजाया पापकर्मका नाशके अर्थि अर अब आगाने मेरे दुष्ट वचनमैं प्रवृत्ति कदाचित मत होहू इस वास्ते मैं पंचनमस्कारपदका शरण ग्रहण करूं हूं बहुरि अज्ञानभावतैं वा प्रमादतैं पूर्वकालमैं जो मैं परका विना दिया धन गिन्या पड्या भूल्या ग्रहण करनेमैं परिणाम किया कपटछलतैं ठग्या तथा जबर होय परका धन राखि मेल्या नाहीं दिया तो बहुत संक्लेश आपकै अर अन्यकै उपजाय दिया तातैं घोर पाप उपजाया ताका फल नरक तिर्यंचादि गतिनिमैं परिभ्रमण अनंतकालपर्यंत दरिद्रादिक घोर दुःख होना है यातैं चोरीकरि उपजाया जो पाप कर्म ताका नाशके अर्थि अर आगानै मेरा पराया धन विना दिया ग्रहण करनेमैं परिणाम कदाचित् मत होऊ

इसवास्ते मैं पंचनमस्कारपदका शरण ग्रहण करूं हूं बहुरि परकी स्त्रीके रूप आभरण वस्त्र भाव विलासकूं राग भावतैं देखनेकी इच्छा करि तथा राग भावतैं देखी तथा संगमादिक किया तातैं उपार्जन किया घोर पाप जाका फल अनंतकालपर्यंत नरकगतिनिमैं परिभ्रमण करि अनेक भवनिमैं हजारां रोगका पावना तथा दरिद्रादि दुःख भोगना तथा बहुत कालपर्यंत कामरूप अग्निकरि दग्ध भया असंख्यात भवनिमैं कामवेदनाकरि पीडित हुआ लडि लडि मर जाना है तातैं परस्त्रीकी वांछाकरि उपजाया पापकर्मका नाशके अर्थि अर आगामी कालमैं मेरा अन्यकी स्त्रीमैं अनुराग कदाचित् मन होऊ इसवास्ते मैं पंचपरमगुरुनिका पंचनमस्कारमंत्रका ध्यान करूं हूं। बहुरि मैं अज्ञानी परिग्रहमैं बडी ममता करि शरीरादिक पुद्गलकूं मेरा मानि यामैं ही आपा जान्या तथा रागादिकभाव मोहकर्मके उदयतैं भया तिनिकूं अपना भाव मानि परद्रव्यनिमैं बडी आसक्तता करी धनधान्य कुटुम्बादिककी वृद्धिकूं अपनी वृद्धि मानी इनकी हानिकूं अपनी हानि मानी अर अब हू जायगा हाट आजीविका स्त्री पुत्र धन धान्य आभरण वस्त्रादिक हजारां वस्तुरूप परिग्रहमैं हमारा हमारा ऐसी बुद्धिमैं विपरीतता लग रही है जो आपका ज्ञान परका ज्ञान पापपुण्यका ज्ञान परलोकका ज्ञान नष्ट होय रह्या है कण्ठगत प्राण हो जाय तो हू ममता नाहीं घटे है अर जगतमैं प्रत्यक्ष देखे है जो किसीकी लार परिग्रह गया नाहीं मेरी लार जायगा नाहीं तो हू दिन प्रति बधाया चाहे है यामैं मरण करूं तहां पर्यंत किंचित् मत घट जावो इसप्रकार ही निरंतर चिंतवन रहे है इस परिग्रहरूप दावाग्निकूं संतोषरूप जलकरि नाहीं बुझाया चाहे है समस्त पापनिका मूल एक परिग्रहमैं मूर्छा है मैं अज्ञानी याहीका आरम्भमैं याहीमैं ममता धारण करनेकरि अनंतकालमैं दुर्लभ ऐसा मनुष्य जन्म जिनधर्म पाया ताहि बिगाडि अनंतभवनिमैं नरक तिर्यंच गतिनिके दुःखकूं अंगीकार किया ताका मेरे बडा पश्चात्ताप है अब ऐसे घोर पापकर्मके नाश करनेका उपाय भगवान पंचपरमेष्ठीका शरण विना कोऊ दूजा है नाहीं अर आगामी कालहूमैं परिग्रहमैं विरक्तताका करानेवाला

भगवान पंचपरमेष्ठी विना कोऊ है नाहीं यातैं मूर्छाका नाशके अर्थि परम संतोष उपजनेके अर्थि परिग्रहका त्यागके अर्थि पंचनमस्कारका ध्यानपूर्वक कायोत्सर्ग करूं हूं ॥ अब सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ केसा है सो कहै हैं—

सामयिके सारम्भाः परिग्रहा नैव सन्ति सर्वेऽपि । चेलोपसृष्टमुनिरिव गृही तदा याति यतिभावं ॥ १०२ ॥

अर्थ—गृहस्थ जे हैं तिनके सामायिकके अवसरविषै आरम्भकरि सहित समस्त ही परिग्रह नाहीं है यातैं सामायिक करता गृहस्थ जो है सो वस्त्रसहित मुनिकी ज्यों यतिका भावकूं प्राप्त होय है। भावार्थ—सामायिकके अवसरमैं समस्त आरम्भ अर समस्त परिग्रह नाहीं है परन्तु गृहस्थ है यातैं वस्त्र पहरे है तातैं वस्त्रविना अन्य प्रकार तो मुनितुल्य ही है मुनिकै नग्नपना होय है याकै वस्त्रधारण है एता ही अंतर है तातैं मुनि नाहीं कह्या जाय है। बहुरि जो उपसर्ग परीषह आजाय तो मुनीश्वरनिकी ज्यों धीरता धारण करि सकै कायर नाहीं होय ऐसैं सूत्र कहै हैं—

शीतोष्णदंशमशकपरिषहमुपसर्गमपि च मौनधराः । सामयिकं प्रतिपन्ना अधिकुर्वीरन्नचलयोगाः ॥ १०३ ॥

अर्थ—सामायिककूं धारण करता गृहस्थ मौनकूं धारण करे है अर मनवचनकायकूं नाहीं चलायमान करता शीत उष्ण देशमशकादि परीषह अर चेतन अचेतनकृत उपसर्गनिकूं सहै है। भावार्थ—सामायिक करनेके अवसरमैं जो शीतका उष्णताका वर्षाका पवनका डांस मांछर दुष्टनिकै दुर्वचन रोगपीडादिका परीषह आजाय तथा दुष्ट वैरीकरि किया तथा सिंह व्याघ्र सर्पादिक तथा अग्निजलादिकजनित उपसर्ग आजाय तो बडा धैर्य धारणकरि मनवचनकायकूं साम्यभावतैं नाहीं चलायमान करता मौनसहित समस्तकूं सहै है। अब सामायिक करता संसारका स्वरूपकूं अर मोक्षके स्वरूपकू ऐसे चिंतवन करै है—

अशरणमशुभमनित्यं दुःखमनात्मानमावसामि भवम्। मोक्षस्तद्विपरीतात्मेति ध्यायन्तु सामयिके ॥ १०४ ॥

अर्थ—सामायिक धारता गृहस्थ संसारकूं ऐसे चिंतवन करे यो चतुर्गतिमैं परिभ्रमणरूप संसार

अशरण है यामैं अनंतानंत जन्म मरण करते अनंतकाल व्यतीत भयो अर समस्त पर्यायनिमैं क्षुधा तृषा रोग वियोग मारन ताडन भोगतैं कहू शरण नाहीं जो कोऊ कालमैं कोऊ क्षेत्रमैं कोऊ रक्षा करनेवाला नाहीं तातैं संसार अशरण है। बहुरि अशुभकर्मके बंधनकरि दुःखका देनेवाला अशुभदेहरूप पिंजरामैं फस्या हुआ अशुभ कषायनिरूप अशुभभावनिमैं लीन हुआ निरंतर अशुभका ही बंध करता अशुभहीकूं भोगै है तातैं यो संसार अशुभ है। बहुरि इस संसारमैं जीव अनंतानंतकाल परिभ्रमण करते करते कदाचित सुक्षेत्रमैं वास उत्तमकुल इंद्रियपरिपूर्णता सुंदररूप प्रबलबुद्धि जगतमैं पूज्यता मानता तथा राज्यसंपदा धनसंपदा सुन्दर मित्रनिका संगम आज्ञाकारी महाप्रवीण सुपुत्र मनोहर वल्लभाका संगम तथा पण्डितपना सूरपना बलवानपना आज्ञा ऐश्वर्यादिक मनोवांछित भोग नीरोग शरीरादिक कर्मके उदयकरि पा जाय तो क्षणमात्रमैं विजुलीवत् इंद्र धनुषवत् इंद्र जालीका नगरवत् नियमतैं विलाय जाय हैं। फिर अनंतानंतकालमैं हू नाहीं प्राप्त होय हैं तातैं संसार अनित्य है अर समस्त कालमैं कर्मबंधनसहित देहपिंजरमैं फस्या अनंतानंत जन्ममरणादिकनिकरि सहित है अनंतकालहूमैं दुःखका अभाव नाहीं तातैं संसार दुःख ही है। बहुरि संसारपरिभ्रमणरूप मेरा आत्मा नाहीं तातैं संसार अनात्मा है ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ चिंतवन करै है अहो परिभ्रमणरूप संसार है सो अशरण है अनित्य है दुःखरूप है अर मेरा स्वरूप नाहीं ऐसा संसारमैं मिथ्याज्ञानका प्रभावकरि मैं अनंतकालतैं वास करूं हूं। अब मोक्ष जो संसारतैं छूटना है सो मेरा आत्माकूं शरण है फिर अनंतानंत कालमैं हू संसारमैं आवनेकरि रहित है बहुरि शुभ है अनंत कल्याणरूप है बहुरि नित्य है अविनाशी है बहुरि अनंतानंतस्वरूप है जामैं अनंतज्ञानादि अर अनाकुलतारूप है अर मेरा आत्माका स्वरूप है पररूप नाहीं ऐसैं सामायिकमैं तिष्ठता गृहस्थ संसारका अर मोक्षका स्वरूप चिंतवन करै है। साम्यभाव सहित सामायिक दोय घडी मात्र हो जाय तो महान कर्मकी निर्जरा है सामायिककी महिमा कहनेकूं इंद्र हू समर्थ नाहीं है सामायिकके

प्रभावतैं अभव्य हू ग्रैवेयिकपर्यंत उपजै हैं। सामायिक समान धर्म कोऊ हुयो न होसी यातैं सामायिक अंगीकार करना ही आत्माका हित है। अर जाकै सामायिकादिकका पाठका ज्ञान नाहीं आवै नाहीं ते पंचनमस्कारमात्र ही एकाग्रतातैं मनवचकायकूं निश्चलकरि समस्त आरंभ कषायविषयनिका त्याग करि पंचनमस्कार मंत्रका ध्यान करता दोय घटिका पूर्ण करो। अब सामायिकके पंच अतीचार कहै हैं–

वाक्कायमानसानां दुःप्रणिधानान्यनादरास्मरणे। सामयिकस्यातिगमा व्यज्यन्ते पञ्च भावेन ॥ १०५ ॥

अर्थ–ए पांच सामायिकका भावनिकरि अतीचार हैं सामायिक करते वचनकी संसारसंबंधी प्रवृत्ति करना सो वचनदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि शरीरकी संयमरहित चलायमानपनाकी चेष्टा सो कायदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ २ ॥ बहुरि मनमैं आर्तरौद्रादिक चिंतवन करै सो मनोदुःप्रणिधान नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ बहुरि सामायिककूं उत्साहरहित निरादरतैं करै सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि सामायिक करता देववंदनादिक पाठ भूलि जाय वा कायोत्सर्गादिक भूलि जाय सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं पंच अतीचारसहित सामायिकका वर्णन किया। अब प्रोषधोपवासकूं वर्णन करै हैं–

पर्वण्यष्टम्यां च ज्ञातव्यः प्रोषधोपवासस्तु। चतुरभ्यवहार्याणां प्रत्याख्यानं सदिच्छाभिः ॥ १०६ ॥

अर्थ–पर्वणि जो चतुर्दशी अर अष्टमीका दिवसरात्रिविषै चार प्रकारका आहारका जो सम्यक् इच्छा करि त्याग करना सो प्रोषधोपवास जानने योग्य है। एकमासविषैं दोय अष्टमी अर दोय चतुर्दशी ए अनादितैं पर्व ही हैं इन पर्वनिमैं गृहस्थ व्रतसंयमसहित ही रहै जातैं धर्मात्मा संयमी हैं ते तो सदाकाल व्रती ही रहै हैं यातैं धर्ममैं अनुरागका धारक गृहस्थ एक महीनामैं चार दिन तो समस्त पापके आरंभ अर इंद्रियनिके विषयनिकूं नष्ट करि व्रतशीलसंयमसहित उपवास धारण करि चार प्रकारका आहारका त्याग करि संयम सहित तिष्ठै ताकै प्रोषधोपवास जानना। अब प्रोषधोपवासका विशेष कहै हैं। सप्तमीके

दिन वा त्रयोदशीके दिन मध्याह्नकाल पहली एक वार भोजनपानादिक करि समस्त आरंभ वाणिज सेवा लेन देनका त्याग करि देहादिकमैं ममत्व त्यागि एकांत वस्तिका तथा जिनमंदिरमैं एकांतस्थान वा वनके चैत्यालय वा शून्य गृह मठादिक वा प्रोषधोपवास करनेका स्थानमैं जाय समस्त विषय कषायनिका त्याग करि मनवचनकायकी प्रवृत्तिकूं रोकि धर्मध्यान करिकैं वा स्वाध्याय करिकैं सप्तमी वा त्रयोदशीका अर्द्ध दिनकूं व्यतीत करै। पाछैं संध्याकाल संबंधी देववंदनादिक करि रात्रिने धर्मकथा वा जिनेन्द्रका स्तवनादिक करि रात्रि व्यतीत करै वा धर्मध्यान करता शोधित संथरामैं अल्पकाल प्रमाद टालि रात्रि व्यतीत करै अष्टमी चतुर्दशीका प्रातःकालमैं सामायिकादिक वंदना करि तथा प्राशुक द्रव्यनितैं पूजन-करि शास्त्रका अभ्यासकरि भावनाका चिंतवनकरि धर्मध्यानसहित अष्टमी चतुर्दशीका दिन अर समस्त रात्रिकूं व्यतीतकरि नवमी वा पूर्णिमाका प्रभातसंबंधी कर्म क्रिया करि पुजनादि वंदना करि उत्तम मध्यम जघन्य पात्रमैं कोऊ पात्रका लाभ होय ताकूं भोजन कराय आप पारनौ करै। ऐसैं षोडश प्रहर धर्मसहित व्यतीत करै ताकैं उत्कृष्ट प्रोषधोपवास होय है। तथा कार्तिकेयस्वामी कह्या है जो अष्टमी चतुर्दशीके दिन स्नान विलेपन आभूषण स्त्रीसंसर्ग पुष्प अतर फुलेल धूपदीपादिकानितैं त्याग जो ज्ञानी वीतरागतारूप आभरण करि भूषित हुआ दोऊ पर्वनिमैं सदा काल उपवास करै वा एक वार भोजन करै वा नीरस भोजन करै ताकै प्रोषधोपवास होय है तथा अमितगतिश्रावकाचारमैं परवीका दिनमैं उपवास अनुपवास एकभुक्त ऐसैं तीन प्रकार कह्या है। तिनमैं चार प्रकार आहारका त्यागकूं उपवास कह्या अर एक वार जल ग्रहण करै ताकूं अनुपवास कह्या अर एक वार अन्न जल ग्रहण करना ताकूं एकभुक्त ऐसी संज्ञा है परंतु तात्पर्य ऐसा जानना जो अपनी शक्तिकूं नाहीं छिपाय करिकैं धर्ममैं लीन भया उपवास करै तथा आगैं प्रोषधप्रतिमा चतुर्थी कहसी तिसविषै तो षोडशप्रहरका नियम जानना अर दूजी व्रतप्रतिमामैं यथाशक्ति व्रत तप संयम धारण करि परवीमैं धर्मध्यानसहित रहना॥ अब उपवासमैं और हू वर्णन करै हैं—

पञ्चानां पापानामलंक्रियारम्भगन्धपुष्पाणां । स्नानाञ्जननस्यानामुपवासे परिहृतिं कुर्यात् ॥ १०७ ॥

अर्थ—उपवासके दिन हिंसादिक पंच पापनिका त्याग करि रहै अर अलंक्रिया कहिये आभरणादिक मंडनका त्याग करै अर गृहकार्यका आरंभ जीविकाका आरंभ छांडै अर सुगंधि केशर कपूरादिक तथा अतर फुलेलादिक गंधके ग्रहणका त्याग करै अर पुष्पनिका ग्रहण करनेका त्याग करै बहुरि स्नान करनेका नेत्रमें अंजन आंजनेका अर नास लेनेका त्याग करै तथा और हू नृत्य वादित्रके बजावनेका देखनेका श्रवणका त्याग करै। तथा और हू पंच इंद्रियनिके भोगका त्याग करै जातैं उपवास करि है सो इंद्रियनिका मद मारनेकूं अर इंद्रियनिका विषयनिमें गमन है ताके रोकनेकूं अर कामके मारनेकूं प्रमाद आलस्यादिकनिके रोकनेकूं नष्ट करनेकूं आरंभादिकतैं विरक्त होनेकूं परीषह सहनेमें सामर्थ्य होनेकूं धर्मके मार्गतैं नाहीं चिगनेकूं जिह्वाइंद्रिय उपस्थइंद्रियके दंड देनेकूं उपवास करिये है अर अपनी प्रशंसा वा लाभ वा परलोकमैं राज्यसंपदादिक प्राप्त होनेकूं उपवास नाहीं करिये है। केवल विषयानुराग घटावनेकूं शक्ति बधावनेकूं उपवास करिये है। जातैं इंद्रियां खानपानादिकके नाना स्वादमैं निरंतर प्रवर्तैं हैं उपवास करनेतैं रसादिकके भोजनमें लालसा नष्ट होजाय निद्राका विजय होजाय काम मारया जाय तातैं उपवासका बडा प्रभाव जानि उपवास करिये है। अब उपवासका दिन कैसे व्यतीत करै सो कहैं हैं—

धर्मामृतं सतृष्णः श्रवणाभ्यां पिबतु पाययेद्वान्यान्। ज्ञानध्यानपरो वा भवतूपवसन्नतन्द्रालुः ॥ १०८ ॥

अर्थ—उपवास करता गृहस्थ है सो निरालसी हुआ संता ज्ञानका अभ्यासमैं अर धर्मध्यानमें तत्पर होहू अर अतितृष्णारूप हुआ धर्मरूप अमृतका पान कर्णइंद्रियकरि करि हू। अर अन्य भव्य जीवनिकूं धर्मरूप अमृतका पान करावो। भावार्थ—उपवासके दिन धर्मकथा श्रवण करो तथा अन्य धर्मात्मानिकूं धर्मश्रवण करावो ज्ञानका अभ्यासकरि वा धर्मध्यानमैं लीनता करि ही उपवासका अव-

सर व्यतीत करो आलस्य निद्राकरि व्यतीत मत करो। तथा आरंभादिकमैं विकथामैं काल व्यतीत मत करो। उपवासका अर्थ कहै हैं—

चतुराहारविसर्जनमुपवासः प्रोषधः सकृद्भुक्तिः। स प्रोषधोपवासो यदुपोष्यारम्भमाचरति ॥ १०९ ॥

अर्थ—असन पान खाद्य स्वाद्य ये चार प्रकारके आहार इनका त्याग सो उपवास है अर धारणाका दिन विषैं अर पारणाका दिनविषैं एकवार भोजन करना सो प्रोषध कहिये है ऐसैं षोडश प्रहर भोजनादिक आरंभ छांडि पाछैं भोजनादिक आरंभ आचरण करै सो प्रोषधोपवास है ॥ अब उपवासके पंच अतीचार कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

ग्रहणविसर्गास्तरणान्यदृष्टमृष्टान्यनादरास्मरणे। यत्प्रोषधोपवासे व्यतिलङ्घनपञ्चकं तदिदं ॥११०॥

अर्थ—जो प्रोषधोपवासके पंच अतीचार हैं ते ऐसैं जानने, नेत्रनितैं देख्यां विना अर कोमल उपकरणतैं शुद्ध किये विना जो पूजाके तथा स्वाध्यायके उपकरण ग्रहण करना ॥ १ ॥ बहुरि देख्यां सोध्यां विना उपकरणनिका मेलना अथवा शरीरके हस्त पदादिक पसारना ॥ २ ॥ बहुरि देख्यां सोध्यां विना आस्तरण जो शयन करनेका उपकरण बिछावना बैठना ॥ ३ ॥ ऐसैं ए तीन अतीचार हैं। बहुरि उपवासमैं अनादर करना उत्साहित रहित करना सो अनादर नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ बहुरि उपवासके दिन क्रिया पाठ करनेकूं भूल जाना सो अस्मरण नाम अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं उपवासके पंच अतीचार कहे ते टालने योग्य हैं। अब वैयावृत्य नामा शिक्षाव्रत कहनेकूं सूत्र कहै हैं इस व्रतकूं अतिथिसंविभाग नाम हू कहिये है—

दानं वैयावृत्यं धर्माय तपोधनाय गुणनिधये। अनपेक्षितोपचारोपक्रियमगृहाय विभवेन ॥ १११ ॥

अर्थ—यहां परमागममैं दानहीकूं वैयावृत्य कहिये है जाकै तपही धन है अर्थात् जो इच्छानिरोधादिक तपहीकूं अपना अविनाशी धन जानै है जातैं तप विना समस्त कर्मकलंकमलरहित आत्माका शुद्ध

स्वभावरूप अविनाशी धन नाहीं पाइये तातैं रागादिक कषायमलका दग्ध करनेवाला ऐसा तपरूप धन ग्रहण किया अर जो संसारमैं नष्ट करनेवाला जड अचेतन विनाशीक सुवर्णादिकका त्याग किया. ऐसा जो तपकी निधि जो परम वीतरागी दिगंबर यतिनकूं आप दातारके अर पात्रके धर्मप्रवृत्तिके अर्थि जो दान देना सो वीतरागी यतीनकी वैयावृत्य है, कैसे हैं दिगंबर यति सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र इत्यादिक गुणनिका निधान हैं बहुरि कैसे हैं यातैं नाहीं है अंतरंग बाहिरंग परिग्रह जिनके ऐसे मठ मकान उपासरा आश्रमादिकरहित एकाकी अथवा गुरुजनाकी चरणाकी लार कदे बनमैं कदे पर्वतनिकी निर्जन गुफानिमैं कदे घोर वनमैं नदीनके तटनिमैं नियम रहित है नित्य विहार जिनका असंयमीनिका गृहस्थनिका संगमरहित आत्माकी विशुद्धता जो परम वीतरागताकूं साधता अर लौकिकजनकृत पूजा स्तवन प्रशंसादिककूं नाहीं चाहता परलोकमैं देवलोकादिकनिके भोगनिकूं तथा इंद्रपनाका अहिमिंद्रपनाका ऐश्वर्यकूं रागरूप अंगारेनिकरि तप्त महान् आताप उपजावनेवाली तृष्णाके बधावनेवाले जानि परम अतींद्रिय आकुलतारहित आत्मीक सुखकूं सुख जानता देहादिकमैं ममत्वरहित आत्मकार्य साधै है ऐसे साधुजनका वैयावृत्यका लाभ अनंतकालमैं दुर्लभ है। कैसे हैं साधु यद्यपि इस देहतैं अत्यंत निर्ममत्व हैं तो हू देहकूं रत्नत्रयका सहकारी कारण जानि रस नीरस करडा नरम आहार देय रत्नत्रयका साधनकरि धर्मके अर्थि इस कृतघ्नदेहकी रक्षा करै हैं जो अकालमैं देह नष्ट होय जायगा तो मरकरि देवादिक पर्यायमैं असंयमी जाय उपजूंगा तहां असंख्यातकालपर्यंत असंयमी हुआ कर्मका बंध करूंगा तातैं जो आहारादिकका त्याग करि इस मनुष्यपनाका देहकूं मारूंगा तो कर्ममय कार्माण देह नाहीं मरैगा इस देहकूं मारूंगा तो नवीन और देह धारण करूंगा तातैं इन समस्त शरीरके उत्पन्न करनेका बीज जो कर्ममय कार्माणदेह है याके मारनेमैं यत्न करूं यातैं कषायनिकूं जीतता विषयनिका निग्रह करता छियालीस दोषटालि बत्तीस अंतरायरहित चौदहमलका परिहार

करिकैं आपके निमित्त नाहीं किया ऐसा शुद्ध आहारकी योग्यता मिलि जाय तो अर्द्ध उदर तौ भोजनतैं भरे चतुर्थभाग जलतैं भरे चतुर्थभाग ध्यान अध्ययन कायोत्सर्गादिकमैं सुखतैं प्रवृत्तिके अर्थि खाली राखे है। न्योंत्या बुलाया जाय नाहीं याचना करै नाहीं हस्तादिककी समस्या करै नाहीं ऐसैं साधुनकूं जो आहारादिकका दान सो वैयावृत्य है। कैसाक है दान अनपेक्षितोपचारोपक्रिय जो प्रत्युपकार कहिये हमारा हू कुछ उपकार करेगा वा उपक्रिय कहिये हमकूं प्रसन्न होय विद्या मंत्र औषधादिक देगा तथा मुनीश्वरनिके अर्थि देनेतैं मेरी नगरमैं दातापनाकरि मान्यता होजायगी वा राज्यमान्य हो जाऊंगा वा मेरे घरमैं अटूट धन हो जायगा तातैं आगैं पंचाश्चर्य भये हैं मेरे हू लाभ होयगा ऐसा विकल्प अर वांछा नाहीं करता केवल रत्नत्रयका धारकनिकी भक्तिकरि आपकूं कृतार्थ मानि अपना मनवचनकायकूं तथा गृहचारा पायाकूं कृतार्थ मानता दान करै है आनंदसहित आपकूं कृतकृत्य मानै है सो वैयावृत्य है। वैयावृत्यका अन्य हू स्वरूप कहै हैं—

व्यापत्तिव्यपनोदः पदयोः संवाहनं च गुणरागात्। वैयावृत्यं यावानुपग्रहोऽन्योऽपि संयमिनां ॥ ११२ ॥

अर्थ—संयमीनके जो व्यापत्तिव्यपनोद कहिए नाना प्रकारकी जे आपदा ताहि दूर करना अर संयमीनका चरणमर्दनादिक करना और हू जो संयमीनका गुणमैं अनुराग करि यावन्मात्र उपकार करना सो वैयावृत्य है। भावार्थ—साधुनिके ऊपरि कोऊ देव मनुष्य तिर्यंच वा अचेतनकरि किया उपसर्ग आया होय तो अपनी शक्तिप्रमाण उपसर्ग दूर करै तथा चोर भील दुष्टादिक मार्गमैं खेदित किया होय अर परिणाम क्लेशित होय गया होय तिनकूं धैर्य धारण करावना तथा मार्गकरि खेदित भया होय ताका पादमर्दनादिक करना रोगी होय ताका संयम मलीन नाहीं होय तैसैं यत्नाचारतैं आसन शय्या वस्तिकाका सोधना यत्नाचारपूर्वक उठावना बैठावना शयन करावना मलमूत्रादिक कराय देना जो अबुद्धिपूर्वक मलमूत्रादिक अयोग्य स्थानमैं वा वस्तिकामैं भया होय तो यत्नतैं अविरुद्ध स्थानमैं क्षेपना

तथा कफ नाशिका मलादिककूं पूंछना उठाय अविरुद्ध स्थानमैं क्षेपणा आहार औषधादिक संयमीके योग्य होय तिनकूं अवसरमैं देय वेदना दूर करना तथा कालके योग्य बाधारहित वस्तुका देना वेदना करि चलायमान चित्त होगया होय तो उपदेश देय चित्तकूं थांभना धर्मकथा करना अनुकूल प्रवर्तना गुणनिका स्तवन करना ऐसैं संयमीनिका गुणनिमैं अनुराग करि जेता उपकार करना सो समस्त वैयावृत्य है। अब वैयावृत्यमैं प्रधान आहारदान है ताकूं कहिये हैं—

नवपुण्यैः प्रतिपत्तिः सप्तगुणसमाहितेन शुद्धेन। अपसूनारम्भाणामार्याणामिष्यते दानं ॥ ११३ ॥

अर्थ—सप्त गुणनिकरि सहित जो दातार है सो सून अर आरम्भ करि रहित जे आर्य कहिये सम्यग्दर्शनके धारक मुनि तिनकूं नवपुण्य परिणामनिकरि जो प्रतिपत्ति कहिये गौरव आदर करि अंगीकार करना ताहि दान कहिये है। भावार्थ—दान करना सो तीन प्रकारके पात्रनिकूं करना तिनमैं जो चाकी चूल्हा ओखली बुहारी परींडा ये तो पंच सून अर द्रव्यका उपार्जनकूं आदि लेय समस्त आरंभ अर पंच सून करि रहित तो उत्तम पात्र दिगम्बर साधु है। अर व्रतनिका धारक श्रावक मध्यमपात्र है अर व्रतकरि रहित अर सम्यक्त्वकरि सहित जघन्य पात्र है तिनमैं उत्तमपात्रादिकनिकूं दानका देनेवाले दातारके सप्त गुण हैं। दान देय इस लोकसंबंधी विख्यातता लोकमान्यता राजमान्यता धनधान्यादिककी वृद्धि यशकीर्तनादिक इस लोकसंबंधी फल न चाहिये ॥ १ ॥ बहुरि दातार क्रोधकषायकूं नाहीं प्राप्त होय जो बहुत लेनेवाले हैं कौन कौनकूं देवैं ऐसा क्रोध नाहीं करै मुनि श्रावकादिकनिकूं दान देना ॥ २ ॥ बहुरि कपटकरि सहित दान नाहीं करै कहना और, करना और, लोकनिकूं भक्ति दिखावेमाहि संक्लेशित न होना ऐसा कपटकरि रहित दान करे ॥ ३ ॥ अन्य दातारतैं इर्ष्यारहित होय दान करे जो इसने कहा दिया है मैं ऐसा दान करूं जो मेरा दानतैं इसका यश घटि जाय ऐसैं ईर्ष्याभावकरि दान नाहीं करै ॥ ४ ॥ अर दान देय विषाद करे नाहीं जो कहा करूं मैं समस्तमैं उच्चता राखूं हूं अर नाहीं दूं तो मेरी उच्चता

घटि जाय ऐसैं विषादी हुआ नाहीं देवै ॥ ५ ॥ बहुरि पात्रका संगम मिल जाय या निर्विघ्नैं दान होजाय तिसका अपूर्व निधि पायेकासा आनंद मानना सो मुदितभाव जानना। दान देनेका मद अहंकार नाहीं करना सो निरहंकारता नाम गुण है ॥ ७ ॥ ऐसैं पात्र दान करता दातार सप्तगुण सहित होय है। बहुरि पात्रकूं दान देवै सो मुनिश्रावकका जैसा पद होय तिस परिमाण नवधा भक्तिकरि देवै, नव प्रकार भक्तिके नाम—संग्रह ॥ १ ॥ उच्चस्थान ॥ २ ॥ पादोदक ॥ ३ ॥ अर्चन ॥ ४ ॥ प्रणाम ॥ ५ ॥ मनःशुद्धि ॥ ६ ॥ वचनशुद्धि ॥ ७ ॥ कायशुद्धि ॥ ८ ॥ एषणाशुद्धि ॥ ९ ॥ तिनमैं मुनीश्वरनिकूं तथा क्षुल्लककूं तो तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ याका अर्थ खडा रहो खडा रहो खडा रहो ऐसैं तीन बार कहना जामैं अति पूज्यपनातैं अति अनुराग जाका चित्तमैं होयगा सो ही तीन बार आदरपूर्वक कहैगा अन्य हू श्रावकादिक योग्यपात्र घर आवैं तो आइये पधारिये विराजिये इत्यादिक आदरके वचनका कहना सो संग्रह वा प्रतिग्रह है ॥ १ ॥ बहुरि उच्चस्थान देना ॥२॥ अर प्राशुक प्रमाणिक जलसूं चरण धोवना ॥ ३ ॥ जैसा अवसर जैसा पात्र ताके योग्य पूजन स्तवन पूज्यपनाके वचन कहना ॥ ४ ॥ अर मुनि वा श्रावकाकी योग्यता प्रमाण नमस्कार आदि करना ॥५॥ मनकी शुद्धता करनी ॥६॥ वचनकी शुद्धता करनी अयोग्य वचन नाहीं बोलना ॥७॥ कायशुद्धि यत्नाचार सहित चलना उठना इत्यादिक ॥ ८ ॥ अर भोजनशुद्धि पात्रके योग्य होय सो देना यो ऐषणा शुद्धि है ॥ ९ ॥ ऐसे जिन सूत्रके अनुसार पात्रके योग्य देशकालके योग्य आहार देना जातैं पात्रके गुणनिमैं हर्ष अनुराग विना देना निष्फल है अर जाकूं धर्म प्रिय होयगा ताके धर्मात्मामैं अनुराग होयहीगा ऐसा नियम है । अर मुनीश्वरनिके जिनधर्मीकी नवधाभक्तिहीतैं परीक्षा होय है जाके नवधाभक्ति नाहीं ताका हृदयमैं धर्म हू नाहीं धर्मरहितके मुनीश्वर भोजन हू नाहीं करे है। अन्य हू धर्मात्मा पात्र गृहस्थादिक हैं ते हू आदर विना लोभी होय घरका निरादर कराय दान वृत्तितैं भोजनादिक कदाचित नाहीं ग्रहण करे हैं जैनीपना ही दीनताराहित परम

संतोष धारण करना है। अर दातार है सो ऐसा आहार औषधि शास्त्र वस्तिका वस्त्रादिक द्रव्यका दान करै जातैं रागद्वेष बधै नाहीं मद बधै नाहीं जातैं मोह काम आलस्य चिंता असंयम भय दुःख अभिमानका करनेवाला द्रव्यकूं देना योग्य नाहीं। जिम द्रव्यके देनेतैं स्वाध्याय ध्यान तप संतोषकी वृद्धि होय सो द्रव्य देने योग्य है। जातैं पात्रका दुख मिटि जाय रोग नष्ट होजाय परिणामका संक्लेश नष्ट होजाय ऐसा द्रव्य देना योग्य है। इहां अन्य विशेष जानना, दानविषै पांच प्रकार जानना दाता ॥ १ ॥ देय ॥ २ ॥ पात्र ॥ ३ ॥ विधि ॥ ४ ॥ फल ५ दाता तो कैमाक होय सप्त गुणका धारक होय धर्ममैं तत्पर पात्रनिके गुणनिके सेवनमैं लीन भया पात्रकूं अंगीकार करै प्रमादरहित ज्ञानसहित शांतपरिणामी हुआ पात्रकी भक्तिमैं प्रवर्तै सो भक्तिक गुण दातारका है ॥ १ ॥ देनेमैं अति आसक्त हुआ पात्रका लाभकूं परम निधान लाभ मानै सो दातारका तुष्ट गुण है ॥ २ ॥ साधुनिकूं दान होजाना इसलोक परलोकमें परम कल्याण है ऐसा परिणाममैं गाढ सो दातारका श्रद्धा नाम गुण है ॥ ३ ॥ जो द्रव्य क्षेत्र काल भावकूं सम्यक् विचार योग्य वस्तुका दान करै सो दातारका विज्ञान गुण है ॥ ४ ॥ दानकूं देय दानका प्रभावतैं संसारसंबंधी धन राज्य ऐश्वर्य विद्या मंत्र यश कीर्तनादि फलकूं नाहीं चाहै सो दातारका अलोलुप गुण है ॥ ५ ॥ जाकै अल्प हू वित्त होय तो हू दान देनेमैं बडा उद्यम होय जाका दानकूं देखि घनाढ्य पुरुषनिके हू आश्चर्य उपजै सो दातारका सात्विकगुण है ६ कलुषताका महान कारण हू आजाय तो हू किसीके अर्थि रोष नाहीं करै सो दाताका क्षमा गुण है ७ और हू मुनि तथा श्रावक तथा अव्रत सम्यग्दृष्टी ये तीन प्रकारके पात्र तिनके अर्थि देनेवाले उत्तम दातारके अनेक गुण हैं। विनयवान होय विनयरहितका दान निष्फल है जातैं कुछ देनेकूं नाहीं होय तो विनय करना ही महादान है। सत्कार करना प्रिय वचन बोलना स्थान देना गुण स्तवन करना यो ही बडो दान है धर्ममैं प्रीति होय दानका अनुक्रमका ज्ञाता होय दानका कालकूं जाननेवाला होय; जिनसूत्रका जाननेवाला होय भोगनिकी बां-

छारहित होय समस्त जीवनिका दयालु होय रागद्वेषकी मंदता जाकै होय सार असारका जाननेवाला होय समदर्शी होय इंद्रियानिकूं जीतनेवाला होय आया परीषहतैं कायरतारहित होय अदेखसका भावरहित होय स्वमत परमतका ज्ञाता होय प्रियवचनसहित होय व्रतीनिका पवित्र गुणकरि जाका चित्त व्याप्त होय लोकव्यवहार अर परमार्थ दोऊनिका जाननेवाला होय सम्यक्त्वादि गुणसहित होय अहंकारादि मदरहित होय वैयावृत्यमैं उद्यमी होय ऐसा उत्तम दातार प्रशंसायोग्य है । बहुरि जाका हृदयमैं निरंतर ऐसो विचार रहै कि जो द्रव्य व्रतीनिकी सेवामै लागै तथा साधर्मी जननिका उपकारमैं श्रावक जैननिके आपदा दुःख निवारनमैं धर्मके बधावनेमैं धर्ममार्गके चलावनेमैं लागैगा सो धन मेरा है । अन्य संसारके कार्यनिमैं विषय भोगनिमैं कुटुंबके विषय कषाय साधनेमैं जो धन खर्च होय सो केवल बंधके करनेवाला संसारसमुद्रमैं डबोनेवाला है ये कुटुंबके धन खाय ते तो दायादार हैं धन बटावनेवाले हैं जबरीतैं धन लूटनेवाले हैं राग द्वेष क्रोधादि कषाय उपजाय व्रत संयमका घात करनेवाले हैं अर मोकूं पापमैं प्रेरणा करनेवाले हैं अर मेरे हू इनका संयोगतैं ऐसा अज्ञानरूप अंधकार छाया है जातैं धर्म अधर्म न्याय अन्याय यश अपयश कछू नाहीं दीखै है । स्त्री पुत्रादिकके विषय साधनेकूं अन्य निर्बल तथा भोले अज्ञानी जीवनिका धनके ठगनेमैं लूट लेनेमैं परिणाम उद्यमी होय जाय हैं । इस कुटुंबकूं धन वस्त्र आभरण भोजनादिककरि तृप्ति करनेके अर्थि झूठमैं चोरीमैं निरंतर परिणाम लग्या रहै हैं यातैं अब भगवान वीतरागका धर्मकूं पाय कुटुंबके अर्थि धनका उपार्जनके अर्थि अन्यायमैं अनीतिमैं तो नाहीं प्रवर्तन करना जो न्यायमार्गतैं धनका उपार्जन होइगा तिसमेंतैं मेरा कुटुंबका अर धर्मके अर्थि दानका विभाग करि जीवनका दिन व्यतीत करूंगा । धन यौवन जीतव्य क्षणभंगुर है अवश्य जायगा मरण अचानक आवगा धन संपदा कुटुंबादि कोऊ लार नाहीं जायगा । मेरा दान शील तप भावनाकरि उपजाया पुण्य एक परलोकमैं मेरा सहायी होय लार जायगा जो इहां

समस्त सामग्री मिली है सो पूर्वजन्ममें जैसा दान दिया तैसी फली है। अब दानके देनेमें धर्मात्मानिकी सेवामें दुःखित बुभुक्षितनिके उपकारमें प्रवर्तूंगा तो परलोकमें समस्त सुखकूं प्राप्त हूंगा मोक्षमार्गकी सम्यग्ज्ञानादिक सामग्रीकूं प्राप्त हूंगा भोजन तो दानपूर्वक भक्षण करें ताका भोजन करना सफल है अपना उदर भरना तो पशुके हू है। जाके गृहमें पात्रदान है ताका गृहाचार सफल है दान विना पशुनिके हू रहने योग्य विल होय ही है। पक्षीनकै घूमला होय ही हैं। समुद्रमें जल हू बहुत अर रत्न हू बहुत परंतु जल तो महाक्षार अर रत्न मगर मच्छादिकन करि व्याप्त दोऊ उपकार विना निष्फल हैं। तैसें धनवान कृपणका धन परके उपकार रहित है सो निष्फल है। जो गृहस्थ धन पाय साधर्मीनिका उपकारमें दीन अनाथनिके सत्कारमें नाहीं खरच किया सो यो धन याको नाहीं यो धन तो किसी अन्य पुण्यवानको है यो तो रखवालो भयो चोकसी करै है। धनका स्वामी तो अन्य ही पुण्यवान् है। जो दान भोगमें लगावेगा जाके घरमें पात्र आजाय अर देनेका सामग्री होय फिर नाहीं दिया जाय ताकें हस्तमें चिंतामणिरत्न नष्ट भया जान हू। जो धनकूं पाय दानमें नाहीं प्रवर्तें हैं सो मूढ अपने आत्माकूं ठगे है। धनकूं दानमें लगावे है सो धनका स्वामी है जाका परिणाम दानका देनेमें पात्रके हेरनेमें निरंतर प्रवर्तें है तिनके दानका संयोग नाहीं होय तो हू निरंतर दान ही है। जो द्रव्यकूं होते वा बहुत होते हू पात्रकूं पाय अतिभक्तित देवै है सो दातार है। भक्ति रहितके दातापना नाहीं होय है।

बहुरि अवसर टालि अकालमें दान देहै तिनकै अकालमें बोया बीजकी ज्यों निष्फल होय है अर जो अपात्रमें दान देहै ताको दान खारडी भूमिमें बोया बीजकी ज्यों निरर्थक है। अथवा दुष्टकूं दिया दान सर्पकूं पाया दुग्ध मिश्रीकी ज्यों दातारने संसारके घोर दुःख मरण आताप देनेकूं विष समान परिणमै है बहुरि अपना भाग्यप्रमाण जेता धन मिलै तितनामें दानका विभागमें परिणाम करै ऐसा नाहीं विचारै जो मेरे पास अधिक धन होय तो अधिक दान करूं ऐसें दान वास्ते अभिमानी होय धनकी

बांछा मत करो। जेता आपके लाभांतरायका क्षयोपशमसूं लाभ भया तेतामैं संतोष करि अधिककी बांछा नाहीं करना सो ही बडा दान है। आपकूं जो न्यायपूर्वक द्रव्य प्राप्त भया तिसमैं जाका निरंतर ऐसा परिणाम रहै जो मेरा धनमैंतैं कोऊके अर्थि आजाय तो कुमावना मेरा सफल है अपने गृहके खरचमैं लेनेमैं देनेमैं कोई मोतैं कुछ कुमाय ले तो ही हमारे बड़ा लाभ है ऐसा परिणाम दातारका रहै है अर जो दान देय सो हर्षितचित्त होय देवे, जो देवे भी अर क्रोधकरि देवे अपमानकरि देवे तिरस्कारके वचन कहि देवै रोषकरि देवे दूषण लगाय देवे तिस दातारके इसलोकमें तो कलह अर अपयश होय है परलोकमैं अशुभकर्मका फलतैं दारिद्र अपमानादिक अनेक भवनिमैं प्राप्त होय है। अब देनेयोग्य नाहीं ऐसे खोटे दान कुदान ही हैं तिनिकूं देना योग्य नाहीं भूमिदान देना योग्य नाहीं जामैं हल फावडा खुरपादिकनिकरि भूमि विदारन करिये अर महान् हिंसा प्रवर्तै महा आरंभ पंचेन्द्रियादिक सर्प मूषा सूर हिरणादि बडे बडे जीवनिकूं धान्यादिक फलके बाधक मारियै हैं भूमिकी ममताकरि भाई भाई परस्पर मारि मरजाय तीव्ररागको कारण ऐसा भूमिदानतैं महाघोरपापका बंध जानि बहुरि महाहिंसाका कारण तातैं अनेक हिंसा होय ऐसा लोहका दान महा कुदान जानि छांडना। बहुरि सुवर्णदान त्यागना जाकरि पात्रका नाश होजाय मारया जाय सदाकाल भय उपजावे संयमका नाश करै तथा इस धनतैं राग द्वेष काम क्रोध लोभ भय मद आरंभादिककी प्रचुर उत्पत्ति होय आत्मस्वरूपका विस्मरण होजाय तातैं वीतराग धर्मका इच्छुक सुवर्णदानकूं पाप समझि त्यागना। बहुरि कोट्यां त्रसजीवनिका उत्पत्तिका कारण ऐसा तिलदान त्यागने योग्य है। बहुरि चाकी चूल्हा छाजला बुहारी मूसल फावडा दतीला अन्न तेल दीपक गुडादि रस इत्यादिक महापाप सामग्रीका भरया महा आरंभ मोहका उपजावनेवाला गृहका दानकूं धर्म मानि मिथ्याधर्मी दे हैं सो कुदान है बहुरि जिस गोकूं बांधनेमैं हरित तृणादिक चरनेमैं तथा जीवा (जवा) बुग (वग) उपजनेमैं मलमैं मूत्रमैं असंख्यात जीव उपजैं सींगनतै मारनेतैं खुर पूंछादि-

कनितैं जीवघात करनेवाला गौका दान सो कुदान है बहुरि संसारके बधावनेवाला महाबंधन करनेवाला जो कन्याका दान सो कुदान है इहां कहो जो कन्यादान तो गृहस्थकूं दिये विना कैसैं रह्या जाय सो ठीक है गृहस्थ है सो अपनी कन्याका विवाह योग्यकुलमैं उपज्या जो जिनधर्मी व्यवहारचातुर्यादिक वरके गुण देखि कन्या देवे है परंतु कन्यदानकूं धर्म तो श्रद्धान नाहीं करै जिनधर्मी तो कन्यादानकूं पाप ही श्रद्धान करै है जैसैं गृहचारका आरंभादिक अनेक पापका कारण है तैसैं कन्यादान हू पापका कारण है परंतु विषयनिका दंड है सो अंगीकार किया ही सरै। अन्यमतवाले तो कन्यादान देनेका बहुत बडा फल कहै हैं लक्षयज्ञ कियाका फल कहै हैं कोटि ब्राह्मणकूं भोजन करावनेतैं कोटि गऊनिका दान देनेतैं हू अधिक फल कहै हैं अन्यकी कन्याका विवाह कराय देनेका हू बडा धर्म कहै हैं सो जिनधर्ममैं तो याकूं संसारपरिभ्रमणका कारण कुदान कहै हैं। बहुरि और हू संसारसमुद्रमैं डबोवनेवाले मिथ्यादृष्टि लोभी विषयनिका लंपटनिकरि कह्या कुदान त्यागने योग्य है। सुवर्णकी गाय बनाय देवैं हैं तिलकी गाय घृतकी गाय रूपाकी गाय बनाय देवे हैं अर लेनेवाला घृतकी गायकूं लापसीकी गायकूं तिलकी गायकूं खाय है सुवर्णरूपाकीकूं कटावे है गलावै है अर गायकी पूंछमैं तेतीसकोटि देवता अर अडसठ तीरथ कहै हैं तथा दासी दासका दान देहै रथदान देहै तथा संक्रांति मानि ग्रहण मानि व्यतीपातादि मानि दान देवें हैं ते समस्त मिथ्यात्वका प्रभाव है। बहुरि मृतककूं तृप्ति करनेके अर्थि ब्राह्मणादिकनिकूं भोजन करावे है देखहू ब्राह्मणानेके जीमनेतैं मृतककूं कैसैं पहुंचेगा दान तो पुत्र देवै अर पिता पापतैं छूटै, बहुत कालका मऱ्या हुआका हाड गंगामैं क्षेपणेतैं मृतकका मोक्ष होय। गयामैं जाय श्राद्ध करनेतैं इकबीस पीढीका उद्धार कहै हैं गयामैं पिंड देनेतैं दश पीढी पहली दश पाछली एक आप ऐसैं इकबीस पीढी संसारमैं कुगतिमैं पडी हुई निकस वैकुण्ठ वास करै हैं अगाऊ बेटा पोतानिका संतान चाहे जेता पाप करो गया श्राद्ध इकबीस पीढीमैं कोऊ एक हू पिंडदान दिया तो सबकी मुक्ति होय जायगी तातैं

कोऊ पापको भय मत करो। बहुरि जे श्राद्धमें ब्राह्मणानिकूं मांसपिंड जिमावे हैं मांस करि देवतानिकूं तृप्ति करे हैं देवता दुर्गा भवानी जीवनिका राक्षसनिका तिर्यंचनिका रुधिर पावनेतैं बहुत तृप्ति होती मानै हैं देवीनिकै बकरा भैंसा काटि बलिदान करै हैं। पापी खोटा शास्त्र बनाय अपने मांसभक्षणके अर्थि महाघोर कर्मकरि नरकके मार्गकूं आप जाय है अन्यकूं नरक पहुंचावे हैं सो जिह्वाइन्द्रीका लोलुपी लोभी कौन घोरकर्म नाहीं करै? वे पापी मनुष्यपनामैं भी स्याली स्याल कागला कूकरा व्याघ्रकासा आचरण करै हैं जिनका ऐसे घोरपापके शास्त्र तिनके धर्ममैं अर म्लेच्छ धर्ममैं कुछ फरक नाहीं। ये अक्षर म्लेच्छानिके हैं वेदके अक्षरनितैं लोकनिके अज्ञान उपजाय शिकारमैं धर्म जनाया। जलचर थलचर नभचर जीवनिके मारनेमैं धर्म बताया जगतकूं भ्रष्ट किया है अर करै हैं। अर जाका देवता तो मुंडमाला अर मांसभक्षक रुधिर पीवनेमैं अति लीन है तिनके सेवकनिके पापकी कहा कथा। तिन कुपात्रनिकूं दान देना सो महा दुःखका करनेवाला कुदान है। ऐसैं कुदानके बहुत भेद हैं कुदानके देनेतैं अर कुदानके लेनेतैं नरकतिर्यंचनिमैं बहुत जन्ममरणकरि निगोदमैं एकेन्द्रिय विकलत्रयमैं अनंतकाल पर्यंत असंख्यात परावर्तन करै है या जानि कुदान मत करो कुपात्रदान मत करो॥ अब यहां पहली सूत्रके अनुकूल दानका फल कहै हैं—

गृहकर्मणापि निचितं कर्म विमार्ष्टि खलु गृहविमुक्तानां। अतिथीनां प्रतिपूजा, रुधिरमलं धावते वारि ॥ ११४ ॥

अर्थ—गृहरहित ऐसे अतिथि जे मुनि तिनकी जो प्रतिपूजा कहिये दान सन्मानादिक उपासना है सो गृहस्थके षटकर्मकरि उपार्जन किया जो पापकर्मरूप मल ताहि शुद्ध करै है। जैसैं शरीर ऊपरि लग्या रुधिररूप मल तिनै जल धोवै है। भावार्थ—गृहस्थके नित्य ही आरंभादिककरि निरंतर पापका उपार्जन होय है तिस पापकूं धोवनेकूं एक मुनीश्वरादिकनिकूं दिया दान ही समर्थ है जैसैं रुधिर लग्या होय सो रुधिरतैं नाहीं धुवै है जलकरि धुवै है तैसैं गृहचारके आरम्भतैं उपज्या पाप मल है सो गृहके

त्यागी साधूनिके अर्थि दान देनेकरि धुवै है । अब दानका और हू प्रभाव कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

उच्चैर्गोत्रं प्रणतेर्भोगो दानादुपासनात्पूजा । भक्तेः सुन्दररूपं स्तवनात्कीर्तिस्तपोनिधिषु ॥ ११५ ॥

अर्थ—तपके निधान जे साम्यभावके धारक द्वाविंशति परीषहनिके सहनेवाले अपने देहमें निर्ममत्व पंचइंद्रियनिके विषयनिमें अत्यंत विरक्त अभिमान कषायादिरहित आत्मविशुद्धताके इच्छुक ऐसे उत्तम पात्र जो मुनि तिनके अर्थि नमस्कार प्रणति करनेतैं उच्चगोत्र जो स्वर्गलोकमें जन्म तथा स्वर्गतैं आय तीर्थंकरपनामें जन्म वा चक्रीपनामें जन्मरूप उच्चगोत्रकूं तथा सिद्धनिकी सर्वोत्कृष्ट उन्नतताकूं प्राप्त होय है अर उत्तमपात्रके दान देनेतैं भोगभूमिके भोग वा देवलोकके भोग भोगि राज्यादिकनिके भोग पाय अहमिंद्र लोकके भोग पाय तीर्थंकर चक्रीपना पाय निर्वाणके अनंत सुखका भोगकूं पावै हैं। बहुरि साधुनिका उपासना जो सेवन ताकरि त्रैलोक्यमें पूज्य केवली होय हैं बहुरि साधुनिकी भक्ति करनेतैं सुंदररूप ताहि प्राप्त होय हैं। बहुरि साधुनिका स्तवन करनेतैं त्रैलोक्यव्यापिनी कीर्ति इंद्रादिकनिकरि स्तवन कीर्तनकूं प्राप्त होय हैं। और हू दानके प्रभाव कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

क्षितिगतमिव वटबीजं पात्रगतं दानमल्पमपि काले। फलति च्छायाविभवं बहुफलमिष्टं शरीरभृताम् ॥ ११६ ॥

अर्थ—अवसरविषै सत्पात्रविषैं गया अल्प हू दान सुंदर पृथ्वीमें प्राप्त भया बडका बीजकी ज्यों प्राणीनिके छाया जो माहात्म्य ऐश्वर्य अर विभव जे भोगोपभोगकी संपदारूप वांछित बहुत फलकूं फलै है जातैं पात्रदानका अचिंत्य फल है पात्रदानके प्रभावतैं सम्यक्त्व ग्रहण हो जाय है। बहुरि सम्यक्त्वरहित मिथ्यादृष्टि हू पात्रदानके प्रभावतैं उत्तम भोगभूमिविषैं जाय उपजै है कैसाक है भोगभूमि जहां तीन पल्यका आयु तीन कोशका ऊंचा शरीर समचतुरस्र संस्थान महाबल पराक्रमयुक्त मनुष्य होय है स्त्री पुरुषनिका युगल उपजै है तीन दिन गये कदाचित् किंचित आहारकी इच्छा उपजै सो बदरीफल प्रमाण आहार करनेकरि क्षुधाकी वेदनारहित होय है। दश जातिके कल्पवृक्षनितैं उपजे वांछित

भोगनिकूं भोगे है। जहां शीत उष्णताकी वेदना नाहीं है जहां वर्षाका ताडनाका उपजना नाहीं दिन रात्रिका भेद नाहीं सदा उद्योतरूप अंधकाररहित काल वर्ते है शीतल मंद सुगंध पवन निरंतर विचरे है जिसभूमिमें रज पाषाण तृण कंटक कर्दमादि नाहीं होय है स्फटिकमणि समान भूमिका है यावत् जीव रोग नाहीं शोक नाहीं जरा नाहीं क्लेश नाहीं जहां सेवक नाहीं स्वामी नाहीं स्वचक्रका भय नाहीं षट्कर्मकरि जीवनोपाय करना नाहीं। दश प्रकारके कल्पवृक्ष हैं। तूर्यांग ॥ १ ॥ पात्रांग ॥ २ ॥ भूषणांग ॥ ३ ॥ पानांग ॥ ४ ॥ आहारांग ॥ ५ ॥ पुष्पांग ॥ ६ ॥ ज्योतिरंग ॥ ७ ॥ गृहांग ॥ ८ ॥ वस्त्रांग ॥ ९ ॥ दीपांग ॥ १० ॥ तूर्यांगजातिका कल्पवृक्ष तो बासुरी मृदंग इत्यादिक कर्णइंद्रियनिकूं तृप्त करनेवाला वादित्र देहैं ॥ १ ॥ पात्रांगजातिका वृक्ष रत्नसुवर्णमय अनेक प्रकारके आनंदकारी कलस दर्पण झारी आसन पर्यंकादि समस्त जातिके पात्र देहैं ॥ २ ॥ भूषणांगजातिके अनेक आभूषण अनेक प्रकारके क्षण क्षणमें पहरने योग्य हार मुकुट कुंडल मुद्रिकादि अंगकूं भूषित करनेवाले वा महलकूं द्वारकूं तथा शय्या आसन भूमिकूं भूषित करनेवाले अनेक आभूषण देहैं ॥ ३ ॥ पानांगजातिके वृक्ष नाना प्रकार पीवने योग्य शीतल सुगंध पान लिये खरे हैं ॥ ४ ॥ आहारांगजातिके कल्पवृक्ष अनेक स्वादरूप अनेक प्रकारके आहार धारे हैं परंतु क्षुधाकी पीडा ही नाहीं तादि रोग विना इलाज औषध कौन अंगीकार करे भोगभूमिमें उपजनेवालेके क्षुधा नाहीं तीन दिन गये बदरीफल मात्र भोजन करे है ॥ ५ ॥ पुष्पांगजातिके वृक्ष नानाजातिके महा कोमल सुगंध पुष्पमाला आभरणादिक अनेक पुष्प धारें हैं ॥ ६ ॥ ज्योतिरंग जातिके कल्पवृक्षनिकी ज्योतिकरि सूर्य चंद्रमा नजर ही नाहीं आवे हैं सूर्यके उद्योततें बहुत गुणा उद्योत धारण करे हैं तातें रात्रि दिनका भेद नाहीं है ॥ ७ ॥ गृहांगजातिके कल्पवृक्ष अनेक महल चौशसी खणनिपर्यंत विस्तीर्ण रत्ननिकरि चित्र विचित्र देहैं ॥ ८ ॥ वस्त्रांगजातिके कल्पवृक्ष नानाप्रकारके वांछित पहरने योग्य वस्त्र तथा शय्या आसन बिछायत आदि समस्त वस्त्र देहैं ॥ ९ ॥

बहुरि दीपांगजातिके अंधकार विना ही दीपमालिकाकी शोभाकूं विस्तरै हैं ॥ १० ॥ बहुरि भोगभूमिमें स्त्रीपुरुषनिका युगल मरण समयमें पुरुषकूं छींक अर स्त्रीकूं जम्भाई आवै है तिस समयमें संतान युगल उत्पन्न होय है संतानकूं तो माता पिता नाहीं दीखै अर मातापिताकूं संतान नाहीं दीखै तातैं इनके वियोगका दुःख नाहीं है अर मरण किये पाछैं इनका देह शरद कालका मेघपटलवत विलाय जाय है। बहुरि युगालिया उत्पन्न हुआ पाछैं सप्त दिन तो अपना अंगुष्ठ चाटै है। अर पाछैं सप्त दिनमैं सूधा औंधा पलटना होय पाछैं सप्त दिनमैं अस्थिर गमन करै हैं पाछैं सप्त दिनमैं परिपूर्ण यौवनवान होय हैं। बहुरि सप्त दिनमैं समस्त दर्शन ग्रहण चातुर्य कला ग्रहण करै हैं ।·ऐसे गुणचास दिनमैं परिपूर्ण होय अनेक पृथक् विक्रिया अपृथक् विक्रियासहित नानाप्रकारके महल मन्दिर वनविहार करते क्षणक्षणमैं अनेक कोटि नवीन नवीन विषय तिनकी सामग्री भोगतैं अनेक क्रीडा रागरंगादिक अनेक सुखरूप क्रीडा चेष्टाकरि तीन पल्य पूर्ण करि मरण समयमैं छींक जंभाई मात्रतैं प्राण त्याग सम्यग्दृष्टि होय सो तो सौधर्म ईशान स्वर्गमें जाय है अर मिथ्यादृष्टि मरणकरि भवनवासी व्यंतर जोतषी देवनिमें उपजै है कषायके प्रभावतैं देवलोकाविना अन्य गति नाहीं पावै है बहुरि सम्यग्दृष्टि होय तथा श्रावकके व्रतका धारक होय जो पात्र दान करै सो षोशडम स्वर्गपर्यंत महार्द्धिक देव ही उपजै है। आगममैं पात्र तीन प्रकार हैं अर्थात् उत्तमपात्र, मध्यमपात्र और जघन्यपात्र । तिनमैं उत्तमपात्र तो महाव्रतनिके धारक अठाईस मूलगुण तथा उत्तरगुणनिके धारक देहमै निर्ममत्व वीतरागी साधु हैं। मध्यम पात्र ग्यारा भेदरूप श्रावक सम्यग्दृष्टि व्रतनिकरि सहित है तथा स्त्रीपर्यायमें व्रतनिकी हदकूं धारण करती तिनके एक वस्त्रतैं अन्य समस्त परिग्रहरहित परके घर एक वार याचनारहित मौनतैं भिक्षा भोजन करि आर्यिकानिका संगमें धर्मध्यानसहित महातपश्चरण करती तिष्ठै ऐसी आर्यिका मध्यमपात्र हैं तथा अणुव्रत अर सम्यग्दर्शनसहित श्राविका मध्यमपात्र है अर व्रतरहित जिनेन्द्रवचनके श्रद्धानी सम्यग्दर्शन

सहित पुरुष तथा सम्यग्दर्शनसहित वृत रहित स्त्री जघन्यपात्र है । इन तीन प्रकारका पात्रनिमैं चार दान देना तथा सत्कार करना स्थानदान करना आदर करना तथा यथायोग्य स्तवन पूजा प्रशंसादिकके वचन बोलना उठि खडा होना उच्च मानना सो समस्त दान है अब चार प्रकार दान कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

आहारौषधयोरप्युपकरणावासयोश्च दानेन । वैयावृत्त्यं ब्रुवते चतुरात्मत्वेन चतुरस्राः ॥ ११७ ॥

अर्थ—चतुरस्र जे प्रवीण ज्ञानी हैं ते आहार दान औषधि दान उपकरणदान अर आवासदान इन चार प्रकारके दान करके वैयावृत्यकूं चार स्वरूप करि कहैं हैं । आहारदान औषधिदान उपकरणदान आवासदान । या प्रकार गृहस्थके चार प्रकार दान कह्या जातैं अभयदानकी प्रधानता तो छहकायके जीवानिकी कृतकारितअनुमोदनाकरि विराधनाका त्यागी दिगंबर मुनीश्वरनिके है अर श्रावकनिके हू त्रसजीवनिका संकल्पीहिंसाका त्यागतैं अभयदान है ही परंतु अभयदानकी मुख्यता तो आरंभका त्यागतैं विषयनितैं अत्यंत पराङ्मुखतातैं होय है तातैं जेते गृहचारतै संपदातैं तथा न्यायरूप विषयनितैं परिणाम नाहीं निराला होय तितने आहारादिक चार प्रकारका दान करि पापका नाश करहू। संपदा आयु काय अत्यंत अस्थिर है गृहचारा तो दानकरि ही पूज्य है । आहारादिक दान विना गृहस्थपना पाप आरंभके भारकरि पाषाणकी नाव समान केवल संसारसमुद्रमें डबोवनेवाला है । बहुरि ज्ञानी गृहस्थ चिंतवन करै है जो यो धन मैं उपार्जन किया तथा पितादिकनिका धरचा हमारे विना खेद प्राप्त होगया तथा राज्य ऐश्वर्य देश नगर आभरण वस्त्र स्त्री सेवकनका समूह समस्त जो विना खेद प्राप्त होगया सो समस्त पूर्व जन्ममैं दान दिया दुःखितनिका पालनपोषण किया ताका फल है । तथा परके धनमैं स्वप्नमैं हू चित्त नाहीं चलाया परम संतोष धारण करि विषयनिसूं विरक्त होय निर्वांछकता धारण करी ताका फल है । तथा दीन दुःखित रोगी असमर्थ बाल वृद्धनिका दया धारण करि उपकार किया ताका फल यह संपदा है सो दोय दिन याका संयोग है परलोक लार जायगी नाहीं जमीनमैं गडी रहैगी

तथा अन्य दशांतरमैं धरी रहैगी तथा अन्यमैं रह जायगी वा स्त्री पुत्र कुटुम्ब दायेदार मालिक बनेंगे तथा राजा लूट लेगा तथा अचानक मरि दुर्गति चल्या जाऊंगा यो धन सैकडा दुर्ध्याननतैं महापापके आरंभतैं देश देशानिमैं परिभ्रमणकरि बडा कष्टतैं उपार्जन किया था प्राणनिसूं हू अधिक याकी रक्षा करी अब इस धनका फल छोडकरि मरि जाना ऐसा विचारना तो योग्य नाहीं जगतमैं देखो जो लाख धन होय भोगनेमैं तो आवै नाहीं जातैं भोगनेमैं तो आधा सेर अन्न आवै है अर तृष्णा ऐसी बधै है जो अब धन बधाऊं। अहो अन्यकै तो पचास लाख धन होगया मेरे पांच लाख ही है। अब कैसैं बधाऊं कौन आरंभ करूं कौन उपाय करूं कौन राजानिकूं रिझाऊं तथा कौन बानिज करूं तथा कोनसूं मित्रता करूं जाकी बुद्धितैं मेरे धन उपार्जन होजाय तथा कौनसा सेवककूं अंगीकार करूं जो मेरा अल्प धन खाय अर मोकूं बहुत धन उपार्जन करदे ऐसैं हजारां दुर्ध्यान करतो संसारी जीव समस्त संपदा राज्य ऐश्वर्य छांडि महा मूर्छातैं अतिरौद्र परिणामतैं मरि घोर नरकका घोर दुःख भोगै है। संसारमैं अनंत दुःखरूप परिभ्रमण करता क्षुधा तृषा रोग दारिद्रकूं भोगता अनंतकाल असंख्यातकाल व्यतीत करै है। अब इस घोर कालमैं कोऊ किंचित मोहनिद्राके उपशमतैं जिनेंद्रभगवानके वचनतैं कोऊ अति विरले पुरुष सचेत होय अपना हितकूं चिंतवन करता चार प्रकारके दानमैं प्रवर्तन करै है। दानमैं आहारदान प्रधान है इस जीवका जीवन आहारतैं कोटि सुवर्णका दान आहारदानसमान नाहीं है। आहारहीतैं देह रहै है। देहतैं रत्नत्रय धर्म पलै है। रत्नत्रयधर्मतैं निर्वाण होय है निर्वाणमैं अनंत सुख है। त्यागी निर्वांछक साधुनिका उपकार तो एक आहारदानतैं ही है। आहार विना कोऊ तिलतुषमात्र वस्तु हू नाहीं अंगीकार करै आहार बिना देह रहै नाहीं आहार विना अनेक रोग उपजै हैं। आहार विना ज्ञानाभ्यास नाहीं होय। आहार विना व्रत संयम तप एक हू नाहीं पलै। आहार विना सामायिक प्रतिक्रमण कायोत्सर्गध्यान एक हू नाहीं होय आहार विना परमागमको उपदेश नाहीं होय। आहार बिना उपदेश ग्रहण करनेकूं

समर्थ नाहीं होय। आहार बिना कांति विनसि जाय मति विनसि जाय कीर्ति क्षांति नीति गति रति उक्ति शक्ति श्रुति प्रीति प्रतीति नाशकूं प्राप्त होय है। आहार विना समभाव इंद्रियदमन जीवदया मुनि श्रावकका धर्म विनयमें प्रवृत्ति न्यायमें प्रवृत्ति तपमें प्रवृत्ति यशमें प्रवृत्ति समस्त विनाशनै प्राप्त होय जाय आहार विना वचनकी प्रवीणता नष्ट होजाय है आहार विना शरीरका वर्ण विगडि जाय शरीरमें मुखमें दुर्गंधता होजाय। शरीर जीर्ण होजाय। समस्त चेष्टा नष्ट होजाय। आहार नाहीं मिले तो अपने प्यारे पुत्रकूं पुत्रीकूं स्त्रीकूं वेच देइ। आहार बिना नेत्रनितैं देखनेकूं समर्थ नाहीं होय कर्णनितैं श्रवण करनेकूं नासिकातैं गंध ग्रहण करनेकूं स्पर्शनइंद्रियतैं स्पर्शन करनेकूं समर्थ नाहीं होय। आहार विना समस्त चेष्टारहित मृतकसमान होय। आहार विना मरण होजाय आहार बिना चिंता शोक भय क्लेश समस्त संताप प्रगट होय हैं। दीनता होजाय संसारी लोक अपमान करैं ऐसें घोर दुःख दुर्घानकूं दूर करनेवाला जो आहारदान दिया सो समस्त व्रत संयममें प्रवृत्ति कराई। समस्त रोगादिक दूर किया यातैं आहारदान समान कोऊ उपकार नाहीं है। बहुरि रोगका नाश करनेवाला प्रासुक औषधिका दान श्रेष्ठ है। रोगकरि व्रत संयम विगडि जाय। स्वाध्याय ध्यानादिक समस्त धर्मकार्यका लोप होजाय है। रोगीकै सामायिकादिक आवश्यक नाहीं बनि सकै है। रोगकरि आर्त्तध्यान निरंतर होय है मरण विगडि जाय है रोगीके संक्लेश दिन दिनप्रति बधै है। अपघात करया चाहै है रोगी पराधीन होजाय है। मन इंद्रियां चलायमान होजाय हैं। उठना बैठना सोवना चालना बहुत कठिन होजाय है। स्वासकी लार वेदना बधै है। क्षणमात्र जक (चैन) नाहीं लेने देहै। बहुत कहा कहिये रोगीकूं खावना पीवना बोलना चालना देना सोवना उठना बैठना समस्त कार्य जहर पीवने समान बाधाकारी होय हैं यातैं प्रासुकऔषधिदानकरि रोग मेटने समान कोऊ उपकार नाहीं। रोग मिटै आहारादिक किया जाय समस्त तप व्रत संयम ध्यान स्वाध्याय कायोत्सर्गादि रोगरहित होय तदि करि सकै है। बहुरि ज्ञानदान समान

जगतमें उपकार नाहीं। ज्ञान बिना मनुष्य जन्ममें हू पशु समान है ज्ञानाभ्यास विना आपका परका ज्ञान नाहीं होय। ज्ञान बिना इसलोक परलोकका जानना कैसैं होय ज्ञान बिना धर्मका स्वरूप पापका स्वरूप करनेयोग्य नाहीं करनेयोग्यका विचार नाहीं होय है। ज्ञान बिना देव कुदेवका गुरु कुगुरुका धर्म कुधर्मका जानना नाहीं होय है। ज्ञान बिना मोक्षमार्ग ही नाहीं। ज्ञान बिना मोक्ष नाहीं। ज्ञानरहित मनुष्यमें अर पशुमें भेद नाहीं इंद्रियनिका विषय पोषना कामसेवन करना तो तिर्यंचनिकै भी होय है जातें मनुष्यजन्म तो ज्ञानहीतैं पूज्य है। तातैं ज्ञानदान दिया सो पुरुष समस्त दान दिया। परमोपकार तो ज्ञानदानही है। बहुरि वस्तिकादान जो स्थानका दान जामें शीत उष्ण वर्षा पवनादिक बाधारहित ध्यान स्वाध्यायकी सिद्धताको कारण ऐसा स्थानका दान श्रेष्ठ है। यहां ऐसा जानना—उत्तम पात्र जे परमदिगम्बर महामुनि तिनका समागम तो कोऊ महाभाग पुरुषकै कदाचित् होय है। जैसैं जगत पाषाणनिकरि बहुत भऱ्या है। परंतु चिंतामणिरत्नका समागम होना अति दुर्लभ है। तैसैं वीतराग साधुका समागम दुर्लभ है। फिर आहारदान होना अतिही दुर्लभ है। अर आहारहू आपके निमित्त नाहीं किया अर सोलह उद्गम दोष षोडश उत्पादन दश एषणा दोष ऐसैं वियालीस दोष अर प्रमाण १ संयोजन १ धूम १ अंगार १ ऐसैं छियालीस दोष बत्तीस अंतराय चौदह मलनिकूं टालि एकबार भोजन करै सो अर्द्ध उदर तो भोजनसूं भरे अर चतुर्थभाग जलकरि पूर्णकरै अर उदरका चतुर्थभाग खाली राखै सो हू एक उपवासकें पारने कदै होय उपवासके पारन कदाचित् तीन उपवास भये कदाचित् उपवास पक्षोपवास मासोपवासादिकके पारन अजाचीक वृत्ति करि नवधा भक्तिकरि दिया हुआ भोजन कोऊ पुण्यवानके घर होय है अर अजाचीक वृत्तिकूं धारते मौनसहित मुनीश्वरनिकूं औषधिदानहूका देना दुर्लभ है। कोऊ गृहस्थ आपके निमित्त प्रासुक औषधि करी होय अर अचानक मुनीश्वरनिका समागम हो जाय अर शरीरकी चेष्टासूं रोगकूं बिना कह्या जानि योग्य औषधि होय तो देवै तातैं साधुनिकूं औष-

विदान हू दुर्लभ है। शास्त्रदान हू योग्य पुस्तक इच्छा होय तो पढै तिनने ग्रहण करे पाछैं वनमें तथा वनके चैत्यालयमें मेलि चल्या जाय है। बहुरि मुनीश्वरनिके अर्थि वस्तिका दान हू दुर्लभ है जातैं दिगंबरमुनि एकस्थानमें रहैं नाहीं कदे पर्वतनिकी गुफामें कदे भयंकर बनमें कदे नदीनिके पुलनिमें ध्यान अध्ययन करते तिष्ठैं हैं। कदाचित् कोऊ वस्तिकामें एक दिन ग्रामके बाह्य अर पांच दिन नगरके बाह्य अर वर्षाऋतुमें चार महीना एक स्थानमें रहैं। अर कदाचित् कोऊ साधुके समाधिमरणका अवसर आ जाय तो मास दोय मास एक स्थान रहे। अन्यप्रकार जैनका दिगम्बर एक स्थानमें रहे नाहीं। अर एक रात्रि दोय रात्रि हू कोऊ कदाचित् निर्दोष प्रासुक वस्तिकामें रहे सो वस्तिका कैसी होय आपके निमित्त करी नाहीं होय। आपके निमित्त भुवारी नाहीं होय मुनि आयां पाछैं धोले नाहीं उजालदान खोले नाहीं वारणा मुद्या होय तो वारणा खोलै नाहीं भाडा देइ लेवै नाहीं। बदलके अपना वस्तिका देय परकी लेवे नाहीं याचना करि लीनी नाहीं होय राजाका भय दिखाय लीनी नाहीं होय। इत्यादिक छियालीस दोष रहित वस्तिका होय तथा जीर्ण बनमें तथा उजड ग्रामका मकान होय जहां असंयमीनका आर (आना) जार (जाना) नाहीं होय। स्त्री नपुंसक तिर्यंचनिका आगमन नाहीं होय जीवविराधनारहित होय अंधकारादि नाहीं होय तहां साधुजन एकरात्रि दोयरात्रि कदाचित् वसैं। अनेक देशनिमें विहार करे तिनकूं वस्तिकादान होना बहुत दुर्लभ है यातैं उत्तम पात्रकूं दान होना अति दुर्लभ है अर इस पंचमकालमें वीतरागी भावलिंगी साधु ही कोई विरला देशांतरमें तिष्ठै है तिनका पावना होय नाहीं पात्रका लाभ होना चतुर्थकालमें ही बडे भाग्यतैं होय था। परन्तु इस क्षेत्रमें पात्र तो बहुत थे अब इस दुःषम कालमें यथावत् धर्मके धारक पात्र कहीं देखनेमें ही नाहीं आवैं। धर्मरहित अज्ञानी लोभी बहुत विचरै हैं सो अपात्र हैं। इसकालमें धर्मपायकरिकैं गृहस्थ जिनधर्मके धारक श्रद्धानी कोई कहीं कहीं पाइए है। जे वीतराग धर्मकूं श्रवण करि कुधर्मकी आराधनाका दूरहीतैं त्याग करि नित्य ही अहिंसाधर्मके धारने-

वाले जिनवचनामृतपान करनेवाले शीलवान संतोषी तपस्वी ही पात्र हैं अन्य भेषधारी बहुत विचरै हैं। जिनके मुनि श्रावकके धर्मका सत्य सम्यग्दर्शनादिकको ज्ञान ही नाहीं ते कैसे पात्रपना पावैं। मिथ्यादर्शनके भावकरि आत्मज्ञानरहित लोभी भये जगतमैं धनादिकनिका मिष्ट आहारदानका इच्छुक भये बहुत विचरे हैं ते अपात्र हैं। तातैं पात्रदान होना अति दुर्लभ है।

यहां ऐसा विशेष जानना जो इस कलिकालमैं भावलिंगी मुनीश्वर तथा अर्जिका तथा क्षुल्लकका समागम तो है ही नाहीं। अर जो कदाचित् चिंतामणिरत्नकी ज्यों किसी महाभाग्य पुरुषकूं उनका दानका समागम मिले तो आध सेर अन्नका भोजनमात्र उनके अर्थि देनेमैं आवै अर जो क्षुल्लक अर अर्जिकाके कदाचित् वस्त्र जीर्ण होजाय तो अर्जिका तो एक स्वेत वस्त्र ही ग्रहणकरि पुराणा वस्त्र वहां छांडि जाय अर क्षुल्लक एक कोपीन एक स्वेत ओछा वस्त्र जातैं समस्त अंग नाहीं ढकै ऐसा थोडे मोलका ग्रहण करि पुराणा वस्त्र वहां ही छांडि जाय है अन्य तिल तुषमात्र हू ग्रहण करै नाहीं। ऐसे पात्रनिके दानमैं तो कुछ द्रव्यको खरच नाहीं। विना न्योता विना बुलाया कदाचित् अचानक आजाय तो गृहस्थ अपने निमित्त किया रूक्ष सचिक्कण भोजन तिसमैं दानका विभाग करिये हैं धनाढ्य पुरुष धनकूं कौन कार्यमैं लगाय सफल करै। जो भोगनिमैं लगाईये तो भोग तो तृष्णाके बधावनेवाले इंद्रियनिकूं बिकल करनेवाले महापापमैं प्रवर्तन कराय नरकादिक कुगतिकूं प्राप्त करै हैं। जीवका हित अहितका जाननेकूं लुप्त करै हैं। अर मोह वश होय पुत्रादिकनिकूं समर्पण करिये है सो पुत्रादिक तो ममताके बधावनेवाले विना दिये हू सर्वस्व लेवेंगे। पापाचारकरि दुर्ध्यानतैं संपदामैं ममता धारणकरि धर्मका विध्वंसकरि संपदा बधाई ताका अर्द्धविभाग तो धर्मके अर्थि दयाके पात्रनिमैं दानकरि अपना हित करो। संपदा छांडि परलोक जावोगे। तहां पुत्र पौत्रादिकको देखनेकूं कैसे आवोगे कुटुंबका सबन्ध तो तुम्हारा यह चामडामय मुख नासिका नेत्रादिकतैं है। सो इनकी भस्म होजासी तथा मृत्तिकामैं जासी

कुटुंब तुमकूं अन्य पर्यायमें देखने आवे नाहीं। तुम कुटुंबकूं देखने आवो नाहीं क्योंकि जिन नेत्र कर्णादिकनितैं कुटुंबकूं जानो हो तिन नेत्रादिकनिकी तो राख उडजायगी तदि कुटुम्बकूं कैसैं जानोगे अर पुत्रादिक कुटुम्बका सम्बन्ध तुम्हारे शरीरका चामतैं है। तुम्हारे आत्माकूं जानै नाहीं अर तुम्हारे अर तुम्हारा चामडाकी राख उड जायगी तदि कुटुम्बके तुमसूं कहां सम्बन्ध करैंगे तातैं भो ज्ञानीजन हो जीवन अल्प है पुत्रादिकनिका सम्बन्ध हू अल्पकाल है कोऊ संसारमैं शरण नाहीं है एक धर्म ही शरण है अर यो धन है सो हू तुम्हारा नाहीं है कोऊ पुण्यका प्रभावकरि दोय दिन इसका स्वामीपना अंगीकार करि छांडि मर जावोगे। यो धन लार जायगा नाहीं पुत्रका ममत्वतैं महा दुराचार करि धन संचय करो हो सो धनका ममत्व अर पुत्रादिकनिके ममत्वतैं संसारमैं आपा भूलि नरक जाय पहुंचोगे अर अनेक पर्यायनिमें दीन दरिद्री भये विचरोगे। अर प्रत्यक्ष देखो हो हजारां मनुष्य अन्न अन्न करते मर जाय हैं दरिद्री रंक भये घरघरके बारने फिरैं हैं दीनता करै हैं जिनकी ओर कोऊ देखै हू नाहीं कोऊ उनकी श्रवण करै नाहीं सो समस्त प्रभाव पूर्व जन्मांतरमैं धनसूं तीव्र ममता बांधि कृपण होय धन संचय किया ताका फल है अर तुम्हारे विभव संपदा रत्न सुवर्ण रूपादिक हैं तथा नाना रसनिकरि सहित भोजन अर शीलवंती रूपवंती रागरस करि भरी स्त्रीनिका समागम अर आज्ञाकारी प्रवीण सुपुत्र अर हितमैं सावधान कार्यसाधक चतुर सेवक अर महान विस्तीर्ण महल मंदिरानिमैं इत्यादिक जे सामग्री पाई हैं ते कोई पूर्वजन्ममैं दान दिया ताका फल है। दानके प्रभावतैं भोगभूमिमैं जन्म अर स्वर्गके विमाननिके स्वामीपना होय है तहां असंख्यात कालपर्यंत सुख भोगिये है सो यहांका तुच्छकाल क्लेशसहित महा मलीन देहादिक कहा बस्तु है ऐसी संपदा हू तुम्हारे थिर नाहीं रहैगी अर तुम्हारे ऐसा विचार है जो या लक्ष्मी हमारी है हमारा कुलमैं चली आवै है हम बुद्धिरहित नाहीं हैं जो हमारी विनसि जाय जे बुद्धिहीन चूक करि चाले हैं तिनकी संपदा विनसै है ऐसा तुम्हारा भ्रम है सो मिथ्यादर्शनके उदय करि बडा भ्रम

है अर अनंतानुबंधी कषायतैं अभिमान है सो थोरे दिननिमें नरकके नारकी बनाय देगा तातैं हे आत्मन्! जो जिनेन्द्रके वचननिका श्रद्धान है अर धर्मसूं प्रीति है अर दुःखीलोकानिकूं देख दया आवे है तो चित्तमें सम्यक् चिंतवन करो जो मैं मूढात्मा धनसूं ममता करि पूर्वला धन था ताकी तो बडा यत्नतैं रक्षा करी अर नवीन भी बहुत धन उपार्जन किया धनका उपार्जनके निमित्त क्षुधा तृषा शीत उष्णादिक भोगे अर अनेक आरंभ बनिज राजसेवा विदेशगमन समुद्रप्रवेश इत्यादिक किए अधर्मी म्लेच्छादिकनिके परिणामकूं राजीकरनेकूं निंद्य जो तो प्रकार धन उपार्जन किया तो अब मरण अचानक आवैगा धन रक्षा नाहीं करैगा। तातैं अब मोकूं न्यायतैं अनीतितैं तथा पापके बनिजतैं अर पापीनिकी पापरूप सेवातैं तो धन उपार्जन करनेका शीघ्र ही त्याग करना चाहिये अर न्यायतैं उपार्जन किया धन तिसमैं मर्यादा-करि रहना अर जिनका धन अन्यायतैं जबर होय खोस लिया है तथा परिणामनिकी दुष्टतातैं भुलाय चुकाय राख्या तिस धनकूं उलटा देय क्षमा करावना बहुरि जो द्रव्य है तिसमैं पुत्रादिकनिका विभागका धन तो पुत्रादिकके अर्थि न्यारा करना अर दानके अर्थि निराला धन राख करके परका उपकारके अर्थि धर्मकी प्रवृत्तिके अर्थि दान करना अर जो नवीन धन उपार्जन होय तिसमैं हू चतुर्थभाग तथा छट्ठा भाग तथा अष्टम भाग तथा जघन्य दशम भाग तो पुण्यदानधर्मके कार्यमैं धनवानकूं वा निर्धनकूं समस्तकूं ही दानादिकका विभाग करना योग्य है। जाके उदर पूर्ण भी नाहीं होय आधा चौथाई भोज-नादिक मिलै ताकूं हू दानधर्मका विभाग उत्कृष्ट चतुर्थ भाग जघन्य दशम भाग मध्यम छट्ठो भाग अष्टम भाग न्यारो कर दुःखित बुभुक्षित जिनपूजनादिकका विभाग करना श्रेष्ठ है दान विना गृह है सो श्मशान है पुरुष है सो मृतक है अर कुटुम्ब हैं ते गृद्धपक्षी हैं ते इस पुरुषका धर्मरूप मांस चूंथि चूंथि खाय हैं अर गृहस्थ धनवान है जैनीनिकी अनेक प्रकार पालना करै हैं जे धर्ममैं शिथिल होंय ते हू धना-ढ्यपुरुषनिका आदर देने करि मिष्ट वचन बोलनेकरि धर्ममैं दृढ होजाय हैं। केतेक काम चाकरी करावने-

लायक होय तो उनतैं काम हू लेना अर उनका भरण पोषण करना केतेक कुमाय पैदा करि लेने योग्य होय तिनकूं पूंजीका सहारा देय धन हू बन्या रखावे है अर ताकूं पांच रुपयांकी पैदासि कराय देय केतेकनिकूं बनिज व्योहारमैं अपने सामिलकरि निर्वाह करदे केतेनकी चीज प्रतीत करायके पदाके योग्य करदे केतेकानिकूं कहकरि रोजगार लगाय दे केतेकानिकूं दलाली वगैरह लगाय रोजगार कराय दे क्यों कि पुण्यवानका आश्रय विना पकव्या मनुष्यका खडा होना दुर्लभ है आप धर्मात्मा होय सो अपना धन बिगडवाका भय नाहीं करै है जो मेरा धन साधर्मीनिके कार्यमैं आवै सो धन मेरा है अर जो धन साधर्मीनिके कार्यमैं नाहीं आया सो मेरा नाहीं बहुरि केतेक पुरुष पहली धनाढ्य थे प्रतिष्ठावान थे तिनके कर्मके उदयकरि धन नष्ट होयगया आजीविका नष्ट होयगई अर खानपानका ठिकाना रह्या नाहीं घरमैं स्त्रीबालकादिकनिकी बडी त्रास ऐसे पुरुषनितैं मिहनत मजूरी होय नाहीं ओछा काम किया जाय नाहीं बडा आदमी जान कोउ अंगीकार करै नाहीं धन आभरण वस्त्र पात्र समस्त बेंच खाये अब कोनसौं कहैं कौन उपाय करैं ऐसे प्रतिष्ठावान पुरुषकूं आजीविका लगाय देना विगतेनिकू दुःख समुद्रमैंतैं हस्तावलंबन देय काढना धर्ममैं न्यायमैं लगाय थोरा बहुत सहारा देय खडा कर देना जेती योग्यता होय तिस माफिक चीज करनी अन्य दूजाके कने राखि देना रोटीका निर्बाह होजाय तैसैं करना धर्मतैं जोड देना यो बडा उपकार है। केते स्त्री पुत्रादिरहित होय तिनकूं धर्मके कार्यमैं लगाय खानपानका दुःख मेटि देना केते वृद्ध होगये उद्यम करनेकूं समर्थ नाहीं होय केतेक जिनधर्मी धर्ममैं सावधान हैं तो हू इंद्रियां थक गईं रागसहित देह होगया सहाय विना समता रहै नाहीं तिनकी स्थितिकरण धनवानहीसूं बने। केतेक पुत्रादिकरहित है तिनकूं धर्मका आश्रय ग्रहण करावना कर्ता श्राविका विधवा होगई तिनके भोजनवस्त्रका ठिकाना नाहीं तिनमैं करुणाबुद्धितैं भोजन वस्त्रादिकका साधन कराय धर्ममैं लगाय देना धनाढ्य पुरुषनिका सहाय पाय केते पुरुष स्त्री कुधर्मका त्याग करि दृढ श्रद्धान करै हैं केतेक अणुव्रतादिक

ग्रहण करे हैं केई श्रद्धानादि सहित सचित्तका त्यागी केई परवीमैं उपवास केई दिवसमैं ब्रह्मचारी केई अपनी स्त्रीका त्यागी केई आरंभका त्यागी केई परिग्रहत्यागी केई पापकी अनुमोदनाका त्यागी केई उच्छिष्ट आहारका त्यागी ऐसैं ग्यारैं स्थान श्रावकके धारण करनेतैं दानके पात्र होय हैं ते हू धनाढ्य-पुरुषनिका सहायतैं धर्ममैं प्रवर्तते देख अनेक पुरुष धर्मकी प्रवृत्तिमैं लागि जाय है। बहुरि धनाढ्य पुरुष है सो विद्या पढनेके स्थान बनाय दे पढावनेवालेनिकूं जीविका देय व्याकरणविद्या काव्यविद्या गणितविद्या तर्कविद्या इत्यादिक अनेक विद्या पढावनेकी पाठशाला स्थापन करदे तो जैनीनिमैं सैकडां विद्याका पढवामैं लगिजाय बरसां वरस दस बीस पढकरि तैयार हुवा करैं तो धर्मको संतान चल्यो जाय। केई बुद्धिकरि अधिक होय तिनकूं आजीविकादिका सहायी होय निराकुल करदे तो धर्मकी प्रवृत्ति चली जाय तथा अनेक ग्रन्थनिकूं लिखावना पढनेवालेनिकूं पुस्तक देना ग्रन्थके सोधनेमैं सोधनेवाले-निकूं निराकुल कर देना ज्ञानके अभ्यास करनेवालेनिसूं प्रीति करना अपने आत्माकूं ज्ञानके अभ्यासमैं लगावना अपने संतानकूं तथा कुटुंबनिकूं ज्ञानके अभ्यासमैं लगावना जैसे बने तैसे लोकानिकी शास्त्रके अभ्यासमैं रुचि करावनी। ये शास्त्र धर्मके बीज हैं जो शास्त्रनिका ज्ञान हो जाय तो सैंकडां दुराचार नष्ट हो जांय सम्यग्ज्ञान ही व्यवहार परमार्थ दोऊंनिकूं उज्ज्वल करदे है तातैं शास्त्र पढावने समान दान नाहीं है। तथा रोग मेटनेवाली प्रासुक केतेक औषधि बनाय करि रोगीनिकूं देना जे निर्धन मनुष्य हैं तिनकूं औषधि तय्यार मिलजाय तो बडा उपकार है तथा कोऊ निर्धन नाहीं होय तिनका भी औषधि-करि बडा उपकार है निर्धन दुःखित जननिकूं औषधिदान देने समान उपकार नाहीं है केतेक निर्धन-निकूं औषधि मिलैं नाहीं करनेवाला नाहीं बिना सहाय औषधि बन सके नाहीं औषधि तय्यार मिलै ताका बहुत कोटि धनका लाभ है रोग मेटने बराबर कोऊ दान नाहीं बड़ा अभय दान है।

बहुरि धर्मात्मा जननिके अर्थि रहनेके अर्थि धर्म साधन करनेके धर्मशाला वस्तिकादिक अपनी

शक्ति सारू मोल ले देना अपना घरका स्थान होय तहां राखि देना जातैं रहनेके स्थान बिना धर्मसेवनादिकमैं परिणाम थिर नाहीं रहै है। बहुरि जिनधर्मी परदेशी दुःखित आजाय तो महीना दो महीना को भोजनादिकके सहायमैं प्रवर्तना। कोऊ परदेशीके पासि मार्गमैं खरची अपने स्थान पहुंचनेकी नाहीं होय तथा मार्गमैं लुटिगया होय चोर ले गया होय जैनी जानि आपकनै आया होय ताकूं अपने गृह पहुंचै तैसैं दानादिककरि पहुंचावना अर परदेशी रोगी होय आया होय ताकूं स्थान बतावना औषधादिककरि रोगरहित करना बारम्बार धर्मोपदेश देय समता देना बारम्बार पूछना वैयावृत्य करना। बहुरि निर्धनमनुष्यनितैं नाहीं बन सकै ऐसा औषधिका दान निरंतर करना। परिणाम चल गया होय रोगकरि वियोगके दुःखकरि दारिद्रकरि धैर्य छूट गया होय तिनकूं धर्मोपदेश करि धीरज धारण करावना। बहुरि अपने आत्माकूं निरंतर ज्ञानदान देना आप ज्ञानवान होय तो नित्य अनेक जीवनिकूं धर्मोपदेश देना तथा कोऊ शास्त्रके अर्थके जाननेवाले पुरुषकी प्राप्ति होय तो ताकूं कल्पवृक्षका लाभ तुल्य बडा हर्ष सहित आजीविकादिककी थिरता कर देना बहुत विनय आदरतैं राखि धर्मका ग्रहण आप करना धर्मकी वृद्धिके निमित्त ज्ञानीनिका सन्मानादिककरि धर्मके उपदेशकी तत्त्वनिके स्वरूपकी चर्चाकी गुणस्थान मार्गणा स्थानादिककी चर्चाकी प्रवृत्ति कराय धर्मकी प्रभावना सम्यग्ज्ञानकी प्रभावनाकी प्रवृत्ति करावना। जहां धर्मकी प्रवृत्ति मंद होगई होय तिन ग्रामनिमैं शास्त्र लिखाय भाषा वचनिका योग्य शास्त्र भेजना ज्ञानदान समस्त मंदकषायी भद्र परिणामीनिकूं करना चाहिये। बहुरि संपदा पाय दान सन्मानतैं प्रियवचनतैं अपने मित्रनिकूं कुटुम्बकूं आनंदित करना संपदाका समागम अर जीवन क्षणभंगुर है इस धनतैं अर देहतैं तथा वचनतैं अन्य जीवनिका उपकार करना ही श्रेष्ठ है। प्रियवचन बोलनेका बडा दान है वैरीनितैं अपना वैर छांडना प्रियवचनतैं अपराध क्षमा करावना बडा दान है अपना धन धरती देय करकैं हू संतोषित करना वैर धोवना अभिमान त्यागना कुटुम्बी निर्धन होय तिनकूं शक्तिप्रमाण दानस-

मान करना अपनी बहन बेटी निर्धन होय तो बारम्बार भोजन पान वस्त्र आभरणादिककरि बारम्बार सन्मानदान करना दयावान होय ते अन्यकूं दुःखित जान सन्मानतैं दुःख मेटे हैं सो जिनका आपमैं उदर पहुंचै अर अपना अंग समान भूवा बहण बेटी जमाई इनका संताप कैसैं सहै कोऊकरि अपना उजाड बिगाड होगया होय तो कटुक वचन नाहीं कहना उनको या कहना जो भाई थैं परिणाममैं कुछ संताप मत करो गृहचाराभैं हानि वृद्धि लाभ अलाभ तो कर्मके अनुकूल है अर समस्त सामग्री विनाशीक है तुम तो हमारे अनेक कार्य सुधारो हो तथा हमारे भले करनेकूं करो हो कर्मके अनुसार कोऊ बिगडे भी है ऐसैं प्रियवचनकरि संतोषित ही करै। बहुरि निरंतर ऐसा परिणाम ही रखै जो मेरा धनतैं किसी जीवका उपकार होय तो अच्छा है अन्य पुरुष अपने हितमैं प्रवर्त्तन करो वा अपने अहितमैं प्रवर्तन करो आप तो उपकार करनेमैं ही प्रवर्त्तन करै। बहुरि कोऊ बंदीखानामैं पड्या होय कोऊ झगडामैं फंस्या होय तो अपने घरके पांच रुपया देयकर छुडावना कोऊ चूकि अपना धन चोरया होय तो प्रियवचनादिकतैं समताभावतैं सुलझाय लेना निर्धन होय तासूं लेनेको इरादो वा झगडो नाहीं करना कोऊ चोर खाया ताका फजीता अपवाद नाहीं करना आपके आश्रित होय तिनका पालन पोषण करना विधवा होय अनाथ होय रोग वियोगादिक दुःखकरि संतापित होय तिनका दुःख संताप दूर करनेमैं सावधानी करना बालक होय बालविधवा होय तिनका बहुत प्रकार सम्हालितैं प्रतिपालन करना अपनेतैं जे वैर राखैं उपकार करेका हू अपकार मानैं तिनका हू गुण ग्रहण करना अर दान सन्मान करना। अवसर पाय अपने मित्र बांधवादिकनिका सन्मान नाहीं किया तो धन ऐश्वर्य पाय केवल अपयशकी कालिमा ही ग्रहण करी। बहुरि अपने पुत्र कुटुम्बादिककी पालना तो सूरडी कूकरी हू करै है अवसर पाय अपने बिगाड करनेवाले धन आजीविका हरनेवाले वैरीनिका हू दान सन्मान उपकार करि वैरका अभाव करना दुर्लभ है। मनुष्यजन्म धन संपदा यौवन ऐश्वर्य क्षणभंगुर है अनेकका धन जीवन नष्ट होगया जिनका

नाम अर स्थान हू नाहीं रह्या सोई कार्तिकेयस्वामी कह्या है—अतिशय करके आभरण वस्त्र स्नान सुगंध विलेपन नाना प्रकारके भोजन पानादिक करि अत्यंत पालन पोषण किया हुवा हू देह एक क्षणमात्रमैं जलका भऱ्या काचा घडाकी ज्यों विनशै है। जो लक्ष्मी चक्रवर्तीनिकूं आदि लेय महापुण्यवाननिमैं नाहीं रमी सो लक्ष्मी अन्य पुण्यरहित जननिमैं कैसैं प्रीति बांधि रहैगी या लक्ष्मी कुलवाननिमैं नाहीं रमै है कोऊ जानै मेरा कुल ऊंचा है मेरे लक्ष्मी रहती आई है ऐसा नाहीं जानना कुलवानमैं भी रहै वा नाहीं रहै नीच कुलवालेमैं जाय रहै है धीरमैं रमै वा नाहीं रमै पंडित प्रवीणके रहै वा नाहीं रहै मूर्खनिके हू होय है सूरवीरनिके वा कायरनिके मांहि रमै वा न रमै पूज्यपुरुषनिमैं तथा सुंदररूपवालेनिमैं वा सज्जननिमैं वा महापराक्रमीनिमैं वा धर्मात्मामैं या लक्ष्मी राचै है ऐसा नियम जान सो नाहीं है।

भावार्थ—संसारी अज्ञानी भ्रमतैं ऐसा जानैं है जो मैं तो कुलवान हूं मोकूं छांडि लक्ष्मी कैसैं जायगी तथा मैं धीर हूं धीरजवानके लक्ष्मी स्थिर रहै है चलायमानकै विनसै है तथा मैं महापंडित प्रवीण हूं मैं बडा प्रवीणतातैं बधाई है मूर्ख अज्ञानी चूक करि चालै ताकी लक्ष्मी नष्ट होय है तथा मैं सूरवीर हूं अन्यकी लक्ष्मीकी रक्षा करूं हू मेरी कैसैं विनसै कायरकै विनसै है तथा मैं पूज्य हूं समस्तकी लक्ष्मी पूज्यमैं रही चाहिये कोऊ नीचकी विनसै है तथा मैं धर्मात्मा हूं नित्य ही दानपूजाशीलादिकमैं प्रवर्तूं हूं मेरी कैसैं नष्ट होय कोऊ पापीके संपदा विनसै है तथा मैं सुंदर रूपवान हूं हमारी सूरत ऊपरही लक्ष्मीको वास दीखै है कोऊ कुरूपकै विनसै तथा मैं सुजन हू सबका प्रिय हूं मेरे लक्ष्मी कैसै विनसै दुष्ट होय सबका अप्रिय होय ताकै विनसै तथा मैं महा पराक्रमी हूं उद्यमी हूं मैं प्रतिदिन नवीन उपार्जन करूं हूं मेरी लक्ष्मी कैसैं विनसै आलसी होय उद्यमरहित होय ताकै विनसै है ऐसा समझना मिथ्या भ्रम है या लक्ष्मी तो पूर्वले किये पुण्यकी दासी है पुण्यपरमाणु नष्ट होते ही बिनसै है जैसैं पचास हाथकी महलमैं दीपक बुझते ही अंधकार होजाय कोन रोकै तथा जैसैं जीव निकसते ही समस्त इंद्रियां चेष्टारहित हो

जांय तथा जैसैं तेल पूर्ण होते ही दीपक नष्ट होजाय तैसैं पुण्य अस्त होते ही समस्त लक्ष्मी कांति बुद्धि प्रीति प्रतीति एक क्षणमैं नष्ट होजाय है प्रथम तो या लक्ष्मी न्यायके भोगनिमैं लगावो अर परिणामनिमैं दयाभाव विचारि दुःखित बुभुक्षितनिकूं दान करो या लक्ष्मीका जलमैं तरंग क्षणमात्रमैं बिलाय जाय तैसैं कोई दोय दिन लक्ष्मीका संयोग है पाछैं नियमसूं वियोग होयगा जो पुरुष या लक्ष्मीकूं निरंतर संचय ही करै है न तो भोगै है अर न पात्रानिकूं दान देवै है सो अपने आत्माकूं ठगै है अचानक मरि अंतर्मुहूर्तमैं नारकी जाय उपजैंगे मनुष्यजन्मकूं निष्फल किया। जे पुरुष लक्ष्मीका संचय करके अतिदूर गाडैं हैं विनसनेके भयतैं पृथ्वीमैं बहुत ऊंडी गाडैं हैं सो पुरुष तिस लक्ष्मीकूं पाषाण समान करै है जैसैं जमीमैं अनेक पाषाण हैं तैसैं धन भी धरया रहेगा आपके दान भोगके अर्थि नाहीं तदि दरिद्री तुल्य रह्या। बहुरि जो पुरुष लक्ष्मीकूं निरंतर संचय करै है अर दान नाहीं करै अर भोगै हू नाहीं तिस पुरुषके अपनी हू लक्ष्मी परकी समान है जैसैं पडोसीकी लक्ष्मी तथा नगरनिवासीनिकी लक्ष्मी देखनेमैं आवै है अपने भोगनेमैं आवै नाहीं। देनेमैं आवै नाहीं बहुरि जो पुरुष लक्ष्मीमैं अति आसक्त भया प्रीतिरूप भया अपना आत्माकूं हू खावनेमैं पीवनेमैं औषधादिकनिमैं वस्त्र पहरनेमैं अपने रहनेका जायगामैं और हू भोगोपभोगानिमैं नित्य ही क्लेश भोगै है पण धनके खरच होनेका बडा दुःख दीखै है तातैं कष्टतैं आप दिन व्यतीत करै है सो मूढ राजानिका वा अपने दाइयादार पुत्रस्त्रीभ्रातादिकनिका कार्य साधै है आप तो धनकी ममताकरि दुर्गतिमैं जाय ऊपजैगा अर राजा ले जायगा अथवा पुत्र कुटुंबादिक लेवेंगे आप तो पापी ही धन उपार्जन करकेहू केवल इसलोकमैं क्लेशका पात्र ही रह्या। जो मूढ बहुत प्रकार अपनी बुद्धि करकैं लक्ष्मीकूं बधावै है अर बधाता २ तृप्त नाहीं होय है अर लक्ष्मी बधावनेकूं अनेक आरंभ करै है पाप होनेतैं नाहीं डरै है रात्रिमैं अर दिनमैं धनके उपजानेके विकल्प करते २ बहुत रात्रि व्यतीत भए निद्रा ले है अर दिनमैं प्रातःकालहीतैं द्रव्यके उपार्जनके विकल्प करै है अवसरमैं भोजन हू नाहीं करै है

अनेक लेन देन वनिज व्यवहार बकवाद करते २ कठिन क्षुधाकी प्रेरणातैं भोजन करै है अर रात्रिविषै कागद पत्र लेखा हिसाब जबाब सवालकी बडी चिंतामैं मग्न भए तीन प्रहर रात्रि व्यतीत भए सोवे है सो मूढ केवल लक्ष्मीरूप तरुणीका दासपणा करिकै संकट भोगि दुर्गति गमन करै है । अर जो इस वर्द्धमान लक्ष्मीकूं निरंतर धर्मकार्यके आर्थि देहै सो पंडित प्रवीण पुरुषनिकरि स्तुति करने योग्य है अर तिसहीका लक्ष्मी पावना सफल है ऐसैं जान करि जे धर्मसंयुक्त दारिद्रकरि पीडित ऐसे मनुष्यनिनै श्रीनिनै निरंतर अपेक्षारहित ख्याति लाभ पूजाकूं नाहीं चाहता तथा उनतैं कुछ अपना उपकार नाहीं चाहता आदर प्रीति हर्ष सहित दान देवै है तिनका जीवना सफल है जातैं धन यौवन जीवन तो प्रत्यक्ष जलमैं बुद्बुदाकी ज्यों अथिर देखिए हैं अर दानका फल स्वर्गकी लक्ष्मीका भोगभूमिकी लक्ष्मीका असंख्यातकालपर्यंत भोग संपदा देनेवाला है ऐसा जानि निरंतर दानहीमैं प्रवर्त्तन करो ।

इहां ऐसा विशेष और हू जानना जो पूर्वजन्ममैं सुपात्रदान दिया है सम्यक्तप किया है ते पुरुष तो इस दुःषमकालमैं भरत क्षेत्रमैं नाहीं उपजे हैं जातैं इस दुःषमकालमैं यहां सम्यग्दृष्टिका उपजना है ही नाहीं जे सम्यग्दृष्टि देवगति नरकगतितैं आवैं ते विदेहक्षेत्रनिमैं ही पुण्यवान मनुष्य होय हैं अर मनुष्य तिर्यंच गतिका सम्यग्दृष्टि मरके स्वर्गलोकमैं उपजै हैं जातैं इस क्षेत्रमैं सम्यग्दृष्टि आय नहीं उपजे है यहां कोऊ पुण्याधिकारीके काललब्ध्यादि सामग्रीतैं सम्यक्त्व नवीन उपजै है अर पूर्व जन्ममैं जिनधर्म पालिकरि पुण्य उपजाया सो हू यहां नाहीं उपजै है याहीतैं जिनधर्ममैं राजा उपजते रह गये अर और हू बहुत धनाढ्य पुरुष हू जैनीनिके कुलमैं नाहीं उपजै हैं और जो जैनीनिके कुलमैं धनाढ्य उपजै तो ते जिनधर्मरहित होय हैं कोऊ पुण्याधिकारीने अठैं सत्संगति मिल जाय वा जिनसिद्धांत श्रवण मिले तदि नवीन बीजतैं जिनधर्ममैं सावधान हो जाय है । बहुरि इस कालमैं जैनी भी धनाढ्य होय अर धर्मकूं समझ त्याग आखडीमैं सावधान होय तो हू दानमैं धन नाहीं खरच्या जाय है लाखां धन छांडि मर

जाय है परंतु आधा चौथाई धन हू दान धर्ममें नाहीं लगाया जाय है। इस कलिकालके धनाढ्य पुरुषनिकी कैसी रीति वा परिणाम होय है सो कहिये है—परिणाम करि क्रोध बधे है अपने पुरुषार्थका बडा अभिमान बधे है वात्सल्यता मूलतैं जाती रहे है अन्यका किया कार्यकूं सराहै नाहीं समस्तकी अकल बुद्धि घाटि दीखै दया रहै नाहीं अन्य पुरुषका वचनादि करि अपमान तिरस्कार करता शंकै नाहीं अन्य पुरुष धर्मनीति लिए वचन कहे तिनकूं कुयुक्तितैं खण्डन किया चाहै धर्मात्मा पुरुष विनयसहित संभाषण करै तो मनमें बडी शंका उपजै जो मोतैं कदाचित् कुछ याचना करैगा निर्वांछक साधर्मीनिका भी भय हीं रहै जो मोकूं कदाचित् धन खरचनेका उपदेश देगा आभिमान दिन दिन प्रति बधै स्वभाव ऊपरि तेजी बधै जो अपना कार्य होय ताकूं बहुत शीघ्रतासू चाहै सेवकादिकका कष्ट दुःखकू नाहीं देखै अपना प्रयोजन साध्या चाहै परका प्रयोजन तथा दुःख क्लेशकूं तुच्छ जानै संपदा बधै ताकी लार खरच बधै खरचकी लारि दुःख बधै दिन दिन खरच घटावनेकाही परिणाम रहै अपने भोगोपभोगकी वस्तु लेनेमें ऐसा परिणाम रहै जो अर्ध दामनिमें आजाय कुछ घाटि ले जाय मोकूं बडा आदमी समझि बहुत मोलकी वस्तु थोडे दामनिमें दे जाय कोऊ निर्धन तथा लूटका माल अति अल्प मोलमें आजाय ताका बडा हर्ष मानै संचय करते २ तृप्ति नाहीं होय कोऊ आपकूं ठगाई जाय तासूं प्रीति करै धनवान दिखै ताकूं आप ठगावै धनवान पापी भी होय तासूं प्रीति करै धनवान अधर्मी भी होय ताकी बुद्धिकूं बडी मानै धनवानानै अपनी उदारता दिखावै निर्धनके निकट अपना अनेक दुःख रोवै दुःखी देखै तिसको अपना बहुत दुःख सुनावै अन्यकी वा निर्धनकी आबरू ओछी जानै धनरहितकूं अपना वस्तु धीजतां बडी अप्रतीत करै धनरहितकूं चोर दगाबाज समझै आप पैला सर्वस्व खा जाय तो हू आपकूं सांचा जानै अपनी बडाई करै अपने कर्तव्यकी प्रशंसा करै अन्यके उत्तम कार्यनिमें हू खोट प्रगट करै आपकूं निस्पृह निर्वांछक समझै जगतके अन्य जीवनिके तृष्णा समझै आपकूं अजर अमर समझै अनित्यपना

समझे अन्य जीवनिकूं अति लोभी समझे आपकूं न्यायमार्गी समझे आपकूं प्रभु समझे धनरहितानिकूं रंक समझे आरंभ परिग्रह बधावता धापे नाहीं तृष्णा अति बधे मरण पर्यंत संतोष नाहीं धारे अपयशका कार्य करे अर आपकूं यशस्वी समझे कपटी छलीकूं धन ठिगा देवे बहुत धूर्त कपटी छलीकूं अपना कार्य साधनेवाला पुरुषार्थी प्रवीण समझे सत्यवादी मर्यादा सहित प्रवृत्तिका धारी निरपेक्ष होय तिनकूं बुद्धि-हीन समझे जहां अपना अभिमान बधे कषाय पुष्ट होय आपका नाम होता जाने तहां जायगामें मंदिरमें बागबगीचानिमें विवाहमें यात्रामें भाडानिमें बहुत धन खरच करे मंदिरादिकानिमें भी अपनी उच्चता होनेकूं पंचनिमें अभिमान जहां बधे तहां धन खरचि करे जीर्णमंदिरादिकनमें नहीं देवे निर्धन भूखेनिके पालनमें पीस्यो (पैसा) एक नाहीं देवे दुर्बल दीन अनाथ वृद्ध रोगी विधवा इनका पालानिमें धन कदाचित नाहीं खरच करे निर्धन दुःखितकूं नष्ट हुवा समझे आपहू अच्छा भोजन न करे जो कुटुंबादिका विभाग करना पडेगा। ऐसा अभिमान धारे है जे घणे ही धर्मात्मा तपस्वी पण्डित हमारे घर आवे हैं अर अनेक आवेंगे समस्त देशी विदेशी गुणवान जैनीनिकूं बडा ठिकाना हमारा घर ही है अर हमही दातार हैं और कहां ठिकाना है अर केतेक अपने घरके कार्य सुधारनेवाले वा धर्म कार्यमें नियुक्त हैं तिनकी भी धनका मदकरि बडी अवज्ञा करे है इनकी हम पालना करें हैं हमारेतैं छूटे इनकूं कहां ठिकाना है ऐसे पंचमकालके धनवानानिके ऊपरि मोहकी बडी अंधेरी पड रही है पूर्व जन्ममें जिनधर्मरहित कुतपस्या करी है कुपात्रकूं दान दिया है इसबीजतैं धन संपदा पाई है सो धन संपदा छांडि धनकी मूर्छातैं मरि कषाय-निकी मंदता तीव्रताके प्रभाव माफिक सर्पादिक तिर्यंचानिमें वृक्षादिकानिमें मधुमाक्षिकादिकानिमें उपजि नरकादिकनिमें बहुतकाल परिभ्रमण करेंगे या धनकी मूर्छा इसलोकमें हू वैरको तथा अपयशको कारण है कृपणका सकल जन अपवाद करें हैं कृपणका परिणाम निरंतर क्लेशित रहें हैं दुर्ध्यानी रहें अर दानके मार्गमें लगाया धन अपना धन जानहू पात्रदानमें गया धन मरणके समयमें परिणामनिकी उज्वलता

कराय अंतर्मुहूर्तमें स्वर्गकी संपदाकूं प्राप्त करै है। यहां उत्तम पात्र तो निर्ग्रंथ वीतरागी समस्त मूलगुण उत्तरगुणके धारक दशलक्षणधर्मके धारक बाईस परिषहके सहनेवाले साधु हैं दर्शनादिक उद्दिष्ट आहार का त्यागी पर्यंत ग्यारह स्थान श्रावकके हैं ते मध्यम पात्र हैं बहुरि जिनके व्रत तो नाहीं अर जिनेन्द्रके प्ररूपे तत्त्वके श्रद्धानी जन्ममरणादि रूप संसार परिभ्रमणतैं भयवान चारप्रकारके संघके हित होनेमें बांछासहित संसारदेहभोगनिमें विरक्तबुद्धि जिनशासनका उद्योतक अपनी निंदा गर्हा करता स्वपरतत्त्व का विचारमें चतुर जिनकथित तत्त्वमें धर्ममें दृढताका धारक धर्म अधर्मके फलमें अनुरागसहित सकल जीवनिकी दया करि व्याप्तचित्त मंदकषायी परमेष्ठीका भक्त इत्यादिक समस्त सम्यक्त्वके गुणनिका धारक सो जघन्यपात्र है। ऐसे तीन प्रकारके पात्रनिमें यथायोग्य आहार औषधि शास्त्र वस्तिकादिक स्थान वस्त्र जीविका जीवनेकी स्थिरताके कारण भक्ति विनयसहित दिये हुये भावनिके अनुकूल उत्तम मध्यम जघन्य भोगभूमिमें दातारकूं उत्पन्न करै हैं अर सम्यग्दृष्टिकूं सौधर्मादिक स्वर्ग महर्द्धिक देवनिमें उत्पन्न करै हैं। अब कुपात्रके ऐसें लक्षण जानना जिनके मिथ्याधर्मकी दृढ बासना हृदयमें तिष्ठै है अर घोर तपके धारक अर समस्त जीवनिकी दया करनेमें उद्यमी असत्य वचन कठोर वचनसूं परांमुख समस्तसूं प्रिय वचन कहै धनमें स्त्रीमें कुटुम्बमें निस्पृह रहै मिथ्याधर्मका निरंतर सेवन करनेवाला जप तप शील संयम नियममें जिनके दृढतासहित प्रीति हो मंदकषायी परिग्रहरहित कषायविषयनिका त्यागी एकांत बाग बनादिकमें वसनेवाले आरंभरहित परीषह सहनेवाले संक्लेशरहित संतोषसहित रसनीरसके भक्षणमें समभावके धारक क्षमाके धारक आत्मज्ञानरहित बाह्यक्रियाकांडतैं मोक्ष माननेवाले ऐसे कुपात्र हैं तथा केई जिनधर्मके पक्ष ग्रहणकरनेवाले हू एकांती हठग्राही अपनी बुद्धिहीतैं आपकूं धर्मात्मा मान रहे हैं सो केई तो जिनेंद्रका पूजन आराधन गान भजनहीसूं आपकूं कृतकृत्य मानि बाह्य पूजन स्तवनादिकमें ही तत्पर हैं अन्य ज्ञानाभ्यास व्रतादिकमें शिथिल रहे हैं। केतेक जलादिकतैं धोवना सोधना अन्नादिककूं

धोवना स्नान कर जीमना अपना हस्तते बनाया भोजन करना वस्त्रादिकनिका धोवना धायाहुवा स्थानमें जीमना इत्यादिक क्रिया करके ही आपके धर्म माने हैं। केई देखि सोधि चालना सोवना बैठना जलकूं बडा यत्नाचारतें छानना याहीतें आपकूं कृतकृत्य मानें हैं अन्यकूं क्रियारहितकूं निंद्य जानें हैं। केई उपवासादिक व्रत रसपरित्यागादि करि आपकूं ऊंचा मानें हैं। केई दुःखित बुभुक्षितका दानहीकूं धर्म जानें हैं। केई भद्रपरिणामी समस्त धर्मनहीकूं समान जानता विचाररहितपनाहीमें लीन है। केई परमेश्वरका नाम मात्रहीकूं धर्म जानि विकथा निंदादिरहित तिष्ठे हैं। केतेक अन्यजीवनिका उपकार करि समस्तका विनय करनेकूं धर्म मानें हैं केतेक अपनी इंद्रियनिकूं दण्ड देते रूखा सूखा एक बार भोजन कर मौनावलंबी भये अपनी आयुकूं जेठे तेठे तिष्ठते व्यतीत करें हैं केतेक नानाभेषके धारक मंदकषायी परिग्रहरहित विषयरहित तिष्ठे हैं। केतेक कोऊ एकबार हस्तमें भोजन धर दे सो भक्षण कर याचनारहित विचरे हैं इत्यादिक अनेक एकांती परमागमका शरणरहित आत्मज्ञानरहित मिथ्यादृष्टी कुपात्र हैं इनको दान देना अनेकप्रकार फले है जैसा पात्र जैसा दातार जैसा भाव जैसा द्रव्य जैसी विधिसूं दिया तैसा फले है। केई तो असंख्यात द्वीपनिमें दानके प्रभावतें पंचेंद्रिय तिर्यंचनिके युगलनिमें उपजे हैं जहां च्यार २ अंगुल प्रमाण महामिष्ट सुगंध तृण भक्षण है महान अमृत समान जल पीवें हैं परस्पर वैरविरोधरहित तिष्ठे हैं जहां शीतकी बाधा नाहीं उष्णताकी तावडा पवन वर्षादिककी बाधारहित एक पल्यपर्यंत आयु भोगें हैं जहां विकलत्रयनिकी बाधारहित अनेकप्रकार स्थलचर नभचर तिर्यंच होय यथेच्छ विहार करते सुखतें भोग भोगते जुगल ही लार उपजें लार ही मरकरि व्यंतर भवनवासी ज्योतिषी देवनिमें उपजे हैं तथा केई कुपात्रदानके प्रभावतें उत्तरकुरु देवकुरु भोगभूमिमें तिर्यंच उपजें तीनपल्यपर्यंत सुख भोगि देवनिमें उपजें हैं केई कुपात्रदानके प्रभावतें हरिक्षेत्र रम्यकक्षेत्रनिमें दोय पल्यकी आयुके धारक केई हिमवतक्षेत्रमें हिरण्यवनक्षेत्रनिमें एक पल्यकी आयुकूं धारण करि तिर्यंच युगलनिमें उपजि मरि देवलोक

जाय हैं केई कुपात्रदानके प्रभावतें अन्तरद्वीप छिनवे हैं तिनमें मनुष्य युगल उपजै हैं। इहां अंतर द्वीपनिमें मनुष्य उपजै हैं तिनका स्वरूप ऐसा है—समुद्रकी पूर्वादिदिशाविषें चार द्वीप हैं तिनमे पूर्वदिशाके द्वीपमे मनुष्य एक पगवाले उपजै हैं दक्षिणदिशामें पुंछवाले मनुष्य हैं पश्चिमदिशामे सींगवाले मनुष्य उत्तरदिशामें वचनरहित गूंगे मनुष्य उपजै हैं समुद्रकी चार विदिशाके चार द्वीपनिमे अनुक्रमतै सांकलकैसे कर्णवाले तथा शष्कुलीकर्ण मनुष्य उपजै हैं एक कर्णकूं ओढले एककूं बिछायले ऐसें लंबकर्ण उपजै हैं बहुरि लम्बे कानवाले लम्बकर्णमनुष्य अर सुसाकेसे कर्णवाले मनुष्य ए समुद्रकी विदिशामें उपजै हैं। बहुरि सिंहकासा मुख ॥ १ ॥ घोडाकासा मुख ॥ २ ॥ कूकराकासा मुख ॥ ३ ॥ सूकरकासा मुख ॥४॥ भैंसाकासा मुख ॥ ५ ॥ व्याघ्रकासा मुख ॥ ६ ॥ घूघूकासा मुख ॥ ७ ॥ वानरकासा मुख ॥ ८ ॥ मच्छकासा मुख ॥ ९ ॥ कालमुख ॥ १० ॥ मींढाकासा मुख ॥ ११ ॥ गौकासा मुख ॥ १२ ॥ मेघकासा मुख ॥ १३ ॥ बिजलीकासा मुख ॥ १४ ॥ दर्पणकासा मुख ॥ १५ ॥ हस्तीकासा मुख ॥ १६ ॥ ये सोलह दिशा विदिशानिके अंतरालेमें तथा पर्वतनिके अंतकी सूधिमें द्वीप हैं तिनमें मनुष्य ऐसे मुखवाले उपजै हैं। ऐसे २ लवणसमुद्रके एक तटमें चौवीसे अंतरद्वीप हैं दोऊ तटके अडतालीस अर अडतालीस ही कालोदधि समुद्रके ऐसें छिनवे अंतरद्वीपनिमें कुभोगभूमि है तिनमें कुपात्रदानतें मनुष्य युगल उपजै हैं तिनमें एक टांगवाले हैं ते गुफानिमे बसै हैं अर अत्यंत मीठी मृत्तिका भक्षण करै हैं इनतें अन्य जे इसप्रकारके मनुष्य हैं ते वृक्षनिके नीचे बसै हैं अर कल्पवृक्षनिके दिये नानाप्रकारके फल भक्षण करै हैं अब कुभोगभूमिके मनुष्यनिमे उपजनेके कारण परिणामनिकूं तीन गाथानिमें त्रिलोकसारजीमे कह्या सो कहै हैं—

जिणलिंगे मायावी जोइसमंतोवजीविधणकंखा। अइगउरवसण्णजुदा करेंति जे परविवाहं पि ॥ १२२ ॥
दंसणविराहिया जे दोसं णालोचयंति दूसणगा। पंचग्गितवा मिच्छा मोणं परिहरिय भुंजंति ॥ १२३ ॥
दुब्भावअसुइसूदगपुप्फवई जाइसंकरादीहिं। कयदाणावि कुवत्ते जीवा कुणरेसु जायंते ॥ १२४ ॥

अर्थ—जो जिनेंद्रका निर्ग्रंथ लिंग धारण करकैं अनेक परीषह सहते हू मायाचारके परिणाम धारैं हैं तथा केतेक जिनलिंग धारण करि हू ज्योतिषविद्या मंत्रविद्या वैद्यविद्या लोकनिमैं भोजनादिकरि जीवैं हैं लोकनिकूं ज्योतिष वैद्यक मंत्र शास्त्रादि करि आपमैं भक्त करै हैं तथा जिनेंद्रका लिंग अर तपश्चरण करि धनकी बांछा करै हैं तथा जिनलिंग धारण करि ऋद्धिका गर्वकरि युक्त हैं हम जगतमैं पूज्य हैं तथा अपना यश जगतमैं विख्यात हैं ताका गर्वकरि युक्त हैं तथा अपने साताका उदयजनित सुखकरि गर्वकूं धारै हैं तथा जिनलिंग धारण करि आहारकी बांछा धारै हैं तथा अशुभका उदयको भय धारैं हैं तथा मैथुनकी बांछा करै हैं परिग्रह शिष्यादिककी बांछा करै हैं तथा जिनलिंग धारि परके विवाहमैं प्रवृत्ति करैं हैं ते कुतपके प्रभावतैं कुमानुषनिमैं उपजैं है। बहुरि जे जिनलिंग धारणकरि सम्यग्दर्शनकी विराधना करैं हैं जे जिनलिंगधारणकरके हू अपने दोषनिकी आलोचना गुरुनिसूं नाहीं करै हैं तथा जिनलिंग धारणकरके हू अन्यके दोष कहै हैं बहुरि जे मिथ्यादृष्टि पंचाग्नितप करि कायक्लेश करैं हैं तथा जे मौन छांडि भोजन करैं हैं तथा जे दुष्ट भावनिकरि दान देहैं तथा जे असूचिपणाकरि दान देवै है तथा सूतकादि सहित होय दान देवैं हैं तथा रजस्वला स्त्रीका संसर्ग करि दान देवै हैं तथा जातिसंकरादिकनिकरि दान देवैं हैं तथा कुपात्रनिमैं दान करैं हैं ते कुमानुषनिमैं उपजैं हैं ते कुमानुष हू समस्त क्लेशरहित एक पल्यपर्यंत स्त्री पुरुषका युगल साथि ही उपजै अर मरैं हैं। दानके तपके प्रभावतैं सदा काल सुखमैं मग्न काल पूर्ण करि मंद कषायके प्रभावतैं भवनत्रिकनिमैं जाय उपजैं हैं। बहुरि केई कुपात्रनिकूं दान देय बहुत भोगनि सहित म्लेच्छ उपजैं हैं केई कुपात्रदानके प्रभावतैं नीचकुलनिमैं बहुत धनके धनी मांसभक्षी मद्यपायी वेश्यामैं आसक्त निरोग शरीर होय हैं। केई कुपात्रदानके प्रभावतैं राजानिके दासी दास हस्ती घोडा श्वान बानर इत्यादिकनिमैं सुंदर भोजन वस्त्र आभरणादिक प्रचुर भोग उपभोग सामग्री भोगि मरणकरि दुर्गति चले जांय हैं जातैं कुपात्र हू अनेकजातिके अर दातारके भाव हू अनेक जातिके हैं अर

दानकी सामग्री हू अनेक जातिकी हैं तातैं दानका फल हू अनेकजातिका है। बहुरि दयादान ऐसा जानना जो बुभुक्षित होय दरिद्री होय अंधा होय लूला होय पांगला होय रोगी होय अशक्त होय वृद्ध होय बालक होय विधवा होय बावरा होय अनाथ होय विदेशी होय अपने यूथतैं संघतैं बिछुडि आया होय तथा बंदीगृहमैं रुक्या होय बंध्या होय तथा दुष्टनिका आतापतैं भागि आया हो लुट आया होय जाका कुटुंब मार्‍या गया होय भयवान होय ऐसा पुरुष हो हू वा स्त्री हो हू तथा बालक होहू वा कन्या तथा तिर्यंच होहू इनकी क्षुधा तृषा शीत उष्ण रोग तथा वियोगादिकनिकरि दुःखित जानि करुणाभावतैं भोजन-वस्त्रादिक दान देना सो करुणादानमैं हू उनका जाति कुल आचरणादिक जानि यथायोग्य दान करना। जो अभक्षादि भक्षण करनेवाले हैं उनकूं तो भोजन अन्न औषधि मात्र ही देना अर निंद्य आचरणवाले नाहीं इनका दुःख दूर करनेयोग्य रुपया पैसा हू देना स्थान हू देना ये दुःखित उपदेश योग्य हू हैं इनकूं भोजन वस्त्र औषधि स्थान उपदेश हू देना तथा जे स्थान देनेयोग्य नाहीं इनको दुःखी देखि रोटी अन्न-मात्र देय चलावना वैयावृत्य करनेयोग्य तिनका वैयावृत्य करना ज्ञानदान हू देना जातैं करुणादन पात्रकुपात्र अपात्रका विचाररहित केवल दया मात्र ही करि देना है तो हू देश काल परिणाम जाति कुलादि विचार यत्नसहित दान करो। मांसभक्षी मद्यपायीकूं रुपया पैसा नाहीं देना बहुत दुःखीमैं करुणा उपजै तो अन्नमात्र देना याका फल यशकीर्तनादिकी बांछा नाहीं करना। बहुरि दानके देनेयोग्य नाहीं ते अपात्र हैं। अब अपात्रनिके लक्षण कहैं हैं—जे दयारहित होय हिंसाके आरंभमैं आरक्त होय महालोभी परिग्रह वधाया ही चाहैं धनका धनी होय करकैं हू याचना करबो करै यज्ञादिकके करनेवाले वेदोक्त हिंसाधर्ममैं रक्त रहै चंडी भवानीके सेवक होय बकरा भैंसानिका घात करावनेवाले तथा कुदानके लेने-वाले मद्यपीवनेमैं भंग पान करनेमैं वेश्यासेवनेमैं लीन जिनधर्मके द्रोही शिकारादि करनेमैं धर्म कहने-वाले परधन परकी स्त्रीके रागी अपनी प्रशंसा करनेवाले व्रती नाम कहाय व्रतभंग करि पंच पापनिमैं

आसक्तता युक्त बहुतआरंभी बहुपरिग्रही तीव्रकषायी असत्यमें लीन खोटे शास्त्रके उपदेश देनेवाले तथा जिनशास्त्रमें खोटे मिलाय मिथ्या प्ररूपणा करनेवाले व्यसनी पाखंडी अभक्षभक्षक अर व्रतशील संयम तपतैं पराङ्मुख विषयनिके लोलुपी जिव्हाइंद्रियके वशीभूत भए मिष्ट भोजनके लंपटी ये सब अपात्र हैं जातैं इनमें पात्रपना तो रत्नत्रय धर्मके अभावतैं नाहीं अर कुधर्म जे मिथ्याधर्म सेवनेवाले भी परके उपकारी दयावानपना क्षमा संतोष सत्यशील त्यागादिक पूजा जाप्य नाम स्मरणादिक मिथ्याधर्म भी जिनमें पाइये नाहीं तातैं कुपात्र हू नाहीं अर गरीब दीन दरिद्री दुःखित हू नाहीं तातैं दयादानके पात्र हू नाहीं। केवल लोभी मदोन्मत्त विषयांका लंपटी है धर्मके इच्छुक हू नाहीं तथा केई जैनी नाम करके हू जिनधर्मका भेष हू केवल जिह्वा इंद्रियका विषयरूप नाना प्रकारके भोजन जीमनेकूं धारया है तथा धन पैदा करनेकूं भेष धारया है तथा अभिमानी होय अपनी पूजा उच्चता धनका लाभके इच्छुक होय तप व्रत पठन वाचनादि अंगीकार करै हैं ते अपात्र हैं दानके योग्य नाहीं इनको दान देना कैसाक है पाषाणमें बीज बोवने समान है तथा कटुक तूंबामें दुग्ध धारण तुल्य है तथा गहनवनमें चौरके हस्तमें अपना धन सोंपने तुल्य है तथा अपने जीवनेके अर्थि विषभक्षण समान है तथा रोग दूरि करनेकूं अपथ्यभोजन समान है तथा सर्पकूं दुग्धपान करावने समान दुःखकी उत्पत्तिका बीज है तातैं अंधकूपमें अपना धनकूं पटकि देना परन्तु अपात्रकूं दान मत करो अपात्रका दान है सो अपने घरमें विषके वृक्षकूं पुष्ट करना है अपात्रका संगम दावाग्निवत् दूरहीतैं त्याग करो। जैसैं विषवृक्षकी वासना ही मूर्छित कर दे है तैसैं अपात्रकी वासना हू आत्मज्ञानतैं भ्रष्ट करै है ऐसा दानका वर्णनमैं पात्र कुपात्र अपात्रका वर्णन किया अब च्यार प्रकार सुपात्रदान देय जे प्रसिद्ध हुआ तिनके आगमपाठतैं नाम कहनेकूं सूत्र कहै हैं—

श्रीषेणवृषभसेने कोण्डेशः सूकरश्च दृष्टान्ताः। वैयावृत्यस्यैते चतुर्विकल्पस्य मन्तव्याः ॥ ११८ ॥

अर्थ—चार प्रकारके वैयावृत्यका चार दृष्टांत जानने योग्य हैं आहारदानका फलतैं श्रीषेण राजा

प्रसिद्ध हुआ और औषधिदानका फलतैं वृषभसेना नाम श्रेष्ठीकी पुत्री प्रसिद्ध भई अर शास्त्रदानके फलतैं कोंडेश नामा ग्वाल शास्त्रदान देय अन्यभवमैं केवली भयो अर वस्तिकाके दानतैं सूअर मरि स्वर्गलोकमें महर्द्धिक देव हुवो दानका अचिंत्य प्रभाव है इस लोकमै हू दानी समस्तमैं उच्च होय जाय है। अब यहां ऐसा और हू जानना जो दान देय दानका फल विषयभोग मेरे होयगा ऐसैं विषयनिकी बांछा कदाचित मत करो। जे दानका फलतैं इंद्रियनिके भोग चाहै हैं ते चिंतामणि देय काचखंडकूं ग्रहण करै हैं तथा अमृत छांडि विष पीवै हैं तथा सूत्रके अर्थि मणिमयहारकूं तोडै हैं तथा इंधनके अर्थि कल्पवृक्षकूं छेदै हैं तथा लोहके अर्थि नावकूं तोडै हैं तथा अपने कंठके अतिभारी पाषाण बांधि अगाध जलमैं प्रवेश करै हैं कैसेक हैं इंद्रियनिके विषय अग्निकी ज्यों दाह उपजावै हैं कालकूट जहरकी ज्यूं अचेत करै हैं मारै हैं पंचपापनिमैं प्रवर्तावनेवाले हैं तृष्णा उपजावनेवाले हैं नरकमैं प्राप्त करनेवाले हैं महा वैरके कारण हैं ज्वररोगकी ज्यों संताप मूर्छा प्रलाप दुःख भय शोक भ्रम उपजावनेवाले हैं विषयनिका चिंतवन ही जीवकूं अचेत करै है सेवनाकिये तो अनेक भवनिमैं मारै ही यातैं निर्वांछक होय दानधर्ममैं प्रवर्तन करो। आपकूं लाभांतरायका क्षयोपशमतैं जो प्राप्त भया तीमे संतोष करि आगामी बांछा मत करो पावभर धान हू मिलै तामैं भी दानका विभाग करो दान निमित्त धनकी बांछा मत करो बांछाका अभाव सो ही परम दान है सो ही परमतप है ऐसैं वैयावृत्यकूं ही अतिथिसंविभाग व्रत कहिये है। ऐसैं दानका वर्णन तो किया। अब वैयावृत्यहीमैं जिनेंद्रका पूजन है यातैं जिनेंद्रका पूजनका उपदेश करनेकूं सूत्र कहै हैं—

देवाधिदेवचरणे परिचरणं सर्वदुःखनिर्हरणं। कामदुहि कामदाहिनि परिचिनुयादादृतो नित्यं ॥ ११९ ॥

अर्थ—देव जे इंद्रादिक तिनका अधिदेव कहिये स्वामी जो अरहंतदेव ताका चरणनिके समीप जो परिचरण कहिये पूजन सो आदरतैं नित्य ही करै। कैसाक है पूजन समस्त दुःखनिका नाश करनेवाला है बांछितकूं परिपूर्ण करनेवाला है अर कामकूं दग्ध करनेवाला है भावार्थ—गृहस्थके नित्य ही जि-

नेंद्रका पूजन समान सर्वोत्तम कार्य अन्य नाहीं है तातैं प्रथम ही नित्य जिनेंद्रका पूजन करना इहां ऐसा संबंध जानना जो किंचितमात्र अशुभकर्मका क्षयोपशमतैं मनुष्य तिर्यंचनिका ज्यों सप्तधातुमय देह जिनके नाहीं तथा आहारादिके आधीन क्षुधा तृषादिक वेदनाका मेटना नाहीं स्वयमेव कण्ठमैंतैं अमृत झरै है तिसकरि क्षुधा तृषा वेदना करि जिनके बाधा नाहीं अर जरा आवै नाहीं रोग आवै नाहीं इत्यादिक कर्मकृत किंचित् बाधाके अभावतैं च्यारगतिमैं देवनिको उत्तम कहे हैं अर जिनके ज्ञानावरण वीर्यांतरायादिक कर्मका अधिक क्षयोपशम होनेतैं अन्य देवनिमैं नाहीं पाइये ऐसैं ज्ञान वीर्यादिक शक्तिकी अधिकतातैं देवनिके स्वामी इंद्र भये ये इंद्र समस्त असंख्यात देवनकरि वंद्य हैं अर जो समस्त ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अंतराय आत्माकी शक्तिके घातक समस्त कर्मका नाश करि जिनेंद्र भए ते समस्त इंद्रादिककरि वंदनीक भए ते देवाधिदेव हैं देवाधिदेवका चरणनिका पूजन है सो समस्त दुःखका नाश करनेवाला है अर इंद्रियनिके विषयनिकी कामनाका नाश कर मोक्ष होनेरूप सुखकी कामनाकूं पूर्ण करनेवाला है तातैं अन्य आराधना छांडि जिनेंद्रका आराधन करो। बहुत काल संसारी रागी द्वेषी मोही जीवनिकी आराधना सेवन करि घोर कर्मका बंधकरि संसारमैं परिभ्रमण किया वीतराग सर्वज्ञकूं आराधन करता तो कर्मके बंधका नाश करि स्वाधीन मोक्षरूप आत्माकूं प्राप्त होता तातैं संसारके समस्त दुःखका नाश करनेवाला जिनेंद्रका पूजन ही करो। इहां कोऊ आशंका करै भगवान अरहंत तो आयु पूर्णकरि लोकके अग्रभागमें मोक्षस्थानमैं हैं धातुपाषाणके स्थापना रूप प्रतिबिंबनिमैं आवै नाहीं तथा अपना पूजन स्तवन चाहै नाहीं अपना अनंतज्ञान अनंत सुखमैं लीन तिष्ठै हैं अपना पूजन स्तवन तो अभिमान कषाय करि संतापित अपनी बडाईका इच्छक अपना स्तवन करि संतुष्ट होय ऐसा संसारी रागद्वेषसहित होय सो चाहै भगवान परमेष्ठी वीतराग अनंतचतुष्टयरूपमैं लीन तिनके पूजाकी चाह नाहीं धातुपाषाणका प्रतिबिंबमैं आवै नाहीं किसीका उपकार करै नाहीं किसीका अपकार हू करै नाहीं पूजन

स्तवनादि करै तासूं प्रीत करै नाहीं निंदा करै तामैं द्वेष करै नाहीं फिर किस प्रयोजनके अर्थि पूजन स्तवन करिये है ताकूं उत्तर कहे हैं जो भगवान वीतराग तो पूजन स्तवन चाहै नाहीं परन्तु गृहस्थका परिणाम शुद्ध आत्मस्वरूपकी भावनामैं तो ठहरै नाहीं साम्यभावरूप रहै नाहीं निरालंबचित्त ठहरै नाहीं तदि परमात्मभावनाका अवलंबन करि वीतराग स्वरूपका ध्यानके अर्थि शुद्ध आत्माका अवलंबनके निमित्त विषय कषाय आरम्भका अवलम्बन छांडि साक्षात् परमागमस्वरूपका धातु पाषाणमैं प्रतिबिंबनिमैं संकल्पकरि परमात्माका ध्यान स्तवन पूजन करै है तिस अवसरमैं विषयकषायादिक संकल्पके अभावतैं दुर्ध्यानके छूटनेतैं अपने परिणामकी विशुद्धताका प्रभावतैं अशुभकर्मनिका रस सूकि जाय अशुभकर्मनिकी स्थिति घटि जाय अनुभाग घटि जाय सो ही पापकर्मका अभाव है अर परिणामनिकी विशुद्धताके प्रभावकरि शुभ प्रकृतिनिमैं रस बधि जाय है तिन शुभ आयु विना समस्त कर्मनिकी प्रकृतिकी स्थिति घटि जाय है याहीतैं वीतरागका स्तवन पूजन ध्यानके प्रभावतैं पापकर्मका नाश होय है सातिशय पुण्यकर्मका उपार्जन होय है और हू निश्चय करो पुण्यपापका बन्धका कारण तो अपना भाव ही है बाह्य जैसा अवलंबन मिलै तैसा अपना भाव होय है यद्यपि भगवान अरहंत धातुपाषाणके प्रतिबिंबमैं आवै नाहीं अर भगवान वीतराग किसीका उपकार अपकार करै नाहीं तथा वीतरागका ध्यान पूजन नाम अपने शुभ परिणाम करनेकूं रागद्वेषके नाश करनेकूं बाह्य कारण हैं तातैं परम उपकार जीवका होय है जैसैं काष्ठपाषाण चित्रामके स्त्रीनिके रूप रागकूं कारण है तथा अचेतन सुवर्ण मणि माणिक्य रूपी महल वन बाग ग्राम पाषाण कर्दम स्मशानादिका देखना श्रवण करना राग द्वेष उपजावै है तथा शुभ अशुभ वचन राग रुदन सुगंध दुर्गंध ये समस्त अचेतन पुद्गल द्रव्य हैं इनका श्रवण अवलोकन चिंतवन अनुभव करि रागद्वेष होय है तैसैं जिनेंद्रकी परमशांतमुद्रा ज्ञानीनिके वीतरागता होनेकूं सहकारी कारण है प्रेरक नाहीं अर भव्य जीवनिके वीतरागतातैं अन्य कुछ चाहना नाहीं है अर जिनेंद्रके चरणानिके पूजनेमैं जो जल

चंदनादि अष्ट द्रव्य चढाइये है सो कुछ भगवान भक्षण करे वा पूजन विना अपूज्य रहैंगे वा वासना लेवै हैं ऐसा अभिप्रायतैं चढावना नाहीं है भगवानके दर्शनका अति आनन्दतैं जलचंदनादिकरूप अर्घ उतारण करना है। जैसैं राजानिकी भेट करना नजर करना उतारना निछरावलि करनी अक्षतपुष्पादिक क्षेपना मोतीनिके थाल बार (फेर) के उतारन करै हैं तथा सुवर्णकी महोर रुपयांका थाल उतार करि लुटावै हैं रत्ननिके थाल भर निछरावलि करि क्षेपै हैं पुष्प अक्षतादिक उतारन करै हैं ते राजानिकी भक्ति अर आनंद प्रकट करना है राजानिकूं दान नाहीं राजानिके अर्थि नाहीं है निछरावलि राजानिके निकट करी हुई अर्थी जन याचक जन ग्रहण करै हैं तैसैं भगवान अरहंतानिके अग्रभागविषै अष्टद्रव्यनिका अर्घ चढावना जानना। अब पूजनके योग्य नव देवता हैं। उक्तं च गोमट्टसारे गाथा—

अरहंतसिद्धसाहुतिदयं जिणधम्मवयणपडिमाहू। जिणणिलया इदिराए णवदेवा दिंतु मे वोहिं॥ १॥

अर्थ—अरहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, सर्वसाधु, जिनधर्म, जिनवचन, जिनप्रतिमा, जिनमंदिर इसप्रकार ये नव देव हैं ते मोकूं रतनत्रयकी पूर्णता देवो सो जहां अरहंतनिका प्रतिबिंब है तहां नव रूप गर्भित जानना जातैं आचार्य उपाध्याय साधु तो अरहंतकी पूर्व अवस्था है अर सिद्ध है सो पूर्वैं अरहंत होय करके ही सिद्ध भया है अरहंतनिकी वाणी सो जिनवचन है अर वाणीकरि प्रकाश किया अर्थ सो जिनधर्म है अर अरहंतका स्वरूप जहां तिष्ठै सो जिनालय है ऐसे नवदेवतारूप भगवान अरहंतके प्रतिबिंबका पूजन नित्य ही करना योग्य है अरिहंतके प्रतिबिंब अधोलोकमैं भवनवासीनिके चमर वेरोचनादिक इंद्र अर असंख्यात भवनवासी देवनिकरि पूजिये है अर मध्यलोकमैं चक्रवर्ती नारायण बलभद्रादिक अनेक धर्मात्मानि कर पूजिये है अर व्यंतरलोकमैं व्यंतरेंद्रादिक देवनि करि पूजिये है अर ज्योतिर्लोकमैं चंद्रसूर्यादिक असंख्यात ज्योतिषी देवनि करि पूजिये है स्वर्गलोकमैं सौधर्म इंद्रादिक असंख्यात कल्पवासी देवनिकरि पूजिये है ऐसैं त्रैलोक्यके भव्यानि करि वंद्य पूज्य अरहंतका तदाकार प्रतिबिंब है सो सदाकाल

भव्यजीवनिकूं पूजना योग्य है। अब पूजा दोय प्रकार है एक द्रव्यपूजा एक भावपूजा तहां जो अरहंत प्रतिबिंबका वचनद्वारे स्तवन करना नमस्कार करना तीनप्रदक्षिणा देना अंजुलि मस्तक चढावना जल चंदनादि अष्ट द्रव्य चढावना सो द्रव्यपूजा है अर अरहंतके गुणनिमें एकाग्रचित होय अन्य समस्त विकल्पजाल छांडि गुणनिमें अनुरागी होना तथा अरहंतप्रतिबिंबका ध्यान करना सो भावपूजा है अथवा अरहंतप्रतिबिंबका पूजनके अर्थि शुद्धभूमिमें प्रमाणीकजलतैं स्नान करि उज्वल वस्त्र पहिर महाविनयसंयुक्त अंजुलि जोडि भक्तिसहित उज्ज्वल निर्दोष जलकरि अरहंतके प्रतिबिंबका अभिषेक करना सो पूजन है यद्यपि भगवानके अभिषेकका प्रयोजन नाहीं तथापि पूजकके ऐसा भक्तिरूप उत्साहका भाव है जो अरहंतकूं साक्षात् स्पर्श ही करूं हूं अभिषेक ही करूं हूं ऐसी भक्तिकी महिमा है। बहुरि उत्तम जलकूं झारीमें धारण करि अरहंतप्रतिबिंबका अग्रभागविषे ऐसा ध्यान करै जो हे जन्म जरा मरणकूं जीतने वाले जिनेंद्र मैं जन्मजरामरणके नाशके अर्थि जलकी तीनधार आपका चरणारबिन्दांकी अग्रभूमिविषे क्षेपण करूं हूं हे जिनेंद्र हे जन्मजरामरणरहित आपका चरणांका शरण ही जन्मजरामणरहित हानेकूं कारण है बहुरि हे संसारपरिभ्रमणका आतापरहित मैं अपने संसारपरिभ्रमणरूप आताप नष्ट करनेकूं चंदन कर्पूरादिक द्रव्यकूं आपका चरणानिका अग्रभागविषै चढाऊं हूं। हे अविनाशी पदके धारक जिनेंद्र मैं हू अक्षयपदकी प्राप्तिके अर्थि अक्षतनिकूं आपका अग्रस्थानमें क्षेपण करूं हूं। हे कामबाणके विध्वंसक जिनेंद्र मैं हू कामका विध्वंशके अर्थि पुष्पनिकूं आपका अग्रस्थानमै क्षेपण करूं। हे क्षुधारोगरहित जिनेंद्र मैं हू क्षुधारोगका नाशके अर्थि नैवेद्यकूं आपका अग्रस्थानविषे स्थापन करूं हूं। हे मोहअंधकाररहित जिनेंद्र मैं हू मोहअंधकार दूरि करनेकूं आपका अग्रस्थानविषे दीपक स्थापन करूं हूं। हे अष्टकर्मके दाहक जिनेंद्र मैं हू अष्टकर्मके नाशकेअर्थि आपका अग्रभागस्थानविषै धूप स्थापन करूं हूं। हे मोक्षस्वरूप जिनेंद्र मैं हू मोक्षरूपफलके अर्थि आपका अग्रस्थानविषै फलनिकूं स्थापन करूं हूं ऐसें अपने देश कालकी योग्यता प्रमाण

एकद्रव्यतैं हू पूजन है दोयद्रव्यतैं तथा तीन च्यार पांच छह सात अष्टद्रव्यनितैं हू पूजन करि भावानिकूं परमेष्ठीके ध्यानमैं युक्त करै है स्तवन पढै है महा पुण्य उपार्जन करै है पापकी निर्जरा करै है । इहां ऐसा विशेष और जानना जो जिनेंद्रके पूजक समस्त च्यारप्रकारके देव तो कल्पवृक्षनितैं उपजे गंध पुष्प फलादि सामग्री करि पूजन करै हैं अर सौधर्म इंद्रादिक सम्यग्दृष्टि देव हैं ते तो जिनेंद्रकी भक्ति पूजन स्तवन करके ही अपनी देवपर्यायकूं सफल मानैं अर मनुष्यनिमैं चक्रवर्ती नारायण बलभद्रादिक राजेंद्र हैं ते मोतीनिके अक्षत रत्ननिके पुष्प फल दीपकादिक तथा अमृतपिंडादिकानिकरि जिनेंद्रका पूजन स्तवन नृत्य गानादिककरि महापुन्य उपार्जन करै हैं । अर अन्य मनुष्यनिमैं हू जिनके पुण्यके उदयतैं सम्यक् उपदेशके ग्रहणतैं जिनेंद्रके आराधनमैं भक्ति उत्पन्न होय ते समस्त जातिकुलके धारक यथायोग्य पूजन करैं हैं । समस्त ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य शूद्र अपना अपना सामर्थ्य अपना अपना ज्ञान कुल बुद्धि संपदा संगति देशकालके योग्य अनेक स्त्री पुरुष नपुंसक धनाढ्य निरधन सरोग नीरोग जिनेंद्रका आराधन करै है । केई ग्रामनिवासी हैं केई नगरनिवासी हैं केई वननिवासी हैं केई अतिछोटे ग्राममैं बसनेवाले हैं तिनमैं केई तो अतिउज्वल अष्टप्रकारसामग्री बनाय पूजनके पाठ पढिकरि पूजन करैं हैं केई कोरा सूका जव, गेहूं, चना, मका, बाजरा, उडद, मूग, मोठ इत्यादिक धान्यकी मूठी ल्याय जिनेंद्रकै चढावै हैं केई रोटी चढावैं हैं केई राबडी चढावैं हैं केई अपनी बाडीतैं पुष्प ल्याय चढावैं है केई नानाप्रकारके हरित फल चढावैं हैं, केई जल चढावै हैं । केई दाल भात अनेक व्यंजन चढावै हैं, केई नाना मेवा चढावैं हैं, केई मोतीनिके अक्षत माणिकानिके दीपक सुवर्ण रूपानिके तथा पंचप्रकार रत्ननिकरि जडे पुष्प फलादि चढावैं हैं केई दुग्ध केई दही केई घृत चढावैं है केई नानाप्रकारके घेवर, लाडू, पेडा, बरफी, पूडी, पूवा इत्यादिक चढावैं हैं केई बंदना मात्रही करै हैं केई स्तवन केई गीत नृत्य वादित्र ही करैं हैं, केई अस्पर्शशूद्रादिक मंदिरके बाह्य ही रहि मंदिरके शिखरकी तथा शिखरानिमैं जिनेंद्रके प्रतिबिंबका ही दर्शन बंदना

करै हैं ऐसैं जैसा ज्ञान जैसी संगति तैसी सामर्थ्य जैसा धन संपदा जैसी शक्ति तिस प्रमाण देशकालके योग्य जिनेंद्रका आराधक अनेक मनुष्य हैं ते वीतरागका दर्शन स्तवन पूजन बंदना करि भावनिके अनुकूल उत्तम मध्यम जघन्य पुण्यका उपार्जन करै हैं यो जिनेंद्रका धर्म जाति कुलके आधीन नाहीं धनसंपदाके आधीन नाहीं बाह्यक्रियाके आधीन नाहीं है। अपने परिणामनिकी विशुद्धताके अनुकूल फलै है कोऊ धनाढ्य पुरुष अभिमानी होय यशका इच्छुक होय मोतीनिके अक्षय माणिकानके दीपक रत्न सुवर्णके पुष्पनिकरि पूजन करै हैं अनेक वादित्र नृत्यगान करि बडी प्रभावना करै है तो हू अल्प पुण्य उपार्जन करै वा अल्पहू नाहीं करै केवल कर्मका बंध ही करै है कषायनिके अनुकूल बंध होय है। केई अपने भावनिकी विशुद्धतातैं अति भक्तिरूप हुवा कोऊ एक जल फलादिक करि वा अन्नमात्र करि वा स्तवनमात्रकरि महापुण्य उपार्जन करै है तथा अनेक भवनिके संचय किये पापकर्मकी निर्जरा करै हैं धनकरि पुण्य मोल नाहीं आवै है। जे निर्वांछक हैं मंदकषायी ख्याति लाभ पूजादिककूं नाहीं वांछा करता केवल परमेष्ठीका गुणांमें अनुरागी हैं तिनके जिनपूजन अतिशयरूप फलकूं फलै है। अब इहां जिन पूजन सचित्त द्रव्यनितैं हू अर अचित्तद्रव्यनितैं हू आगममें कह्या है जे सचित्तके दोषतैं भयभीत हैं यत्नाचारी तो प्रासुक जल गंध अक्षतकूं चंदन कुंकुमादिकतैं लिप्त करि सुगंध रंगीनमें पुष्पनिका संकल्पकरि पुष्पनितैं पूजै हैं तथा आगममें कहे सुवर्णके पुष्प वा रूपाके पुष्प तथा रत्नजटित सुवर्णके पुष्प तथा लवंगादिक अनेक मनोहर पुष्पनि करि पूजन करै हैं अरु प्रासुक हो बहुआरंभादिकरहित प्रमाणीक नैवेद्य करि पूजन करै है बहुरि रत्ननिके दीपक वा सुवर्णरूपामय दीपकनिकरि पूजन करै है तथा सचिक्कणद्रव्यनिके केसरके रंगादिकतैं दीपका संकल्पकरि पूजन करै हैं तथा चंदनअगरादिककूं चढावे हैं तथा बादाम जायफल पूंगीफलादिक अबीध शुद्ध प्रासुक फलनितैं पूजन करै हैं ऐसैं तो अचित्त द्रव्यनिकरि पूजन करै हैं।

बहुरि जे सचित्त द्रव्यनितैं पूजन करे हैं ते जल गंध अक्षतादि उज्वल द्रव्यनिकरि पूजन करे हैं अर चमेली चंपक कमल सोनजाई इत्यादिक सचित्त पुष्पनितैं पूजन करे हैं घृतका दीपक तथा कपूरादिक दीपकनिकरि आरती उतारे हैं अर सचित्त आम्र केला दाडमादिक फल करि पूजन करे हैं धूपायनिमैं धूपदहन करे हैं ऐसैं सचित्त द्रव्यनिकरि हू पूजन करिये हैं दोऊप्रकार आगमकी आज्ञा प्रमाण सनातनमार्ग है अपने भावनिके आधीन पुण्यबंधके कारण हैं। यहां ऐसा विशेष जानना जो इस दुःखमकालमैं विकलत्रय जीवनिकी उत्पत्ति बहुत है अर पुष्पनिमैं बेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री त्रसजीव प्रगट नेत्रनिके गोचर दौडते देखिये है पुष्पनिकूं पात्रमैं झडकाय देखिये तो हजारां जीव फिरते दौडते नजर आवे हैं अर पुष्पनिमैं त्रसजीव तो बहुत ही हैं अर बादर निगोदजीव अनंत हैं अर चैत्रमासमैं तथा वर्षाऋतुमैं त्रसजीव बहुत उपजे हैं तातैं ज्ञानी धर्मबुद्धि हैं ते तो समस्त कार्य यत्नाचारतैं करो। जैसे जीवनिकी विराधना नाहीं होय तैसैं करो। बहुरि फूलनिके धोवनेमैं दौडते त्रसजीवनिकी बडी हिंसा है यातैं हिंसा तो बहुत है अर परिणामनिकी विशुद्धता अल्प है यातैं पक्षपात छांडि जिनेंद्रका प्ररूप्या अहिंसाधर्म ग्रहण करि जेता कार्य करो तेता यत्नाचाररूप जीवविराधना टालि करो इस कलिकालमैं भगवानका प्ररूप्या नयविभाग तो समझै नाहीं अर शास्त्रनिमैं प्ररूपण किया तिस कथनीकूं नयविभागतैं जानै नाहीं अर अपनी कल्पनाहीतैं पक्ष ग्रहण करि यथेष्ट प्रवर्तै है। बहुरि केतेक पक्षपाती भादवामै दिवसमै तो पूजन नाहीं करे रात्रिमैं पूजन करे हैं बहुत दीपक जोवै है नैवेद्य चढावै है बहुत पुष्पनिका पुंज चढावै है तिनमै लाखां मच्छर डांस माक्षिकाका छत्ता पडे है दीपकके पात्रनिमैं अपरिमाण मच्छर डांस माक्षिका अर हरे पीत श्याम लालरंगके कोट्यां त्रसजीव अनेकरंगके छोटी अवगाहनाके धारक सामग्री करनेमै चढावनेके थालनिमै वस्त्रनिमै दीपकनिके निमित्त दूर दूरतैं आय पडि पडि मरैं हैं प्रत्यक्ष देखे है अपने मुखमै नासिकामै नेत्रनिमै कर्णनिमै धसै है उडावै हैं मारै हैं तो हू अपनीपक्ष छांडै नाहीं दिवस

छांडि रात्रिमें ही पूजन करै हैं। रात्रिमें तो आरम्भ छांडि यत्नाचारसहित रहनेकी आज्ञा है धर्मका स्वरूप तो बाह्य जीवदया अर अंतरंगमैं रागद्वेषमोहका विजयरूप है। जहां जीवहिंसा तहां धर्म नाहीं अर जहां अभिमानके वश होय एकांतपक्षका ग्रहण करि अपना पक्ष पुष्ट करनेकूं हिंसाका भय नाहीं करै हैं तहां धर्म नाहीं बहुरि केतेक एकांती मंडल मांडि आठदिन दशदिन राखैं हैं। तिन सामग्रीनिमें प्रत्यक्ष नेत्रनिके गोचर लट कीडा विचरै हैं। फलादिक गलि चालितरस होय हैं। तथा नैवेद्यादिकनिकी गंधतैं कीडा कीडीनिके नाला खुल जाय हैं। प्रभावनाके अर्थि अनेक मनुष्य आवैं तिन करि खूंदि मरि जाय हैं ऐसैं प्रत्यक्ष देखतै हू अपनी पक्षका अभिमानकी अंधेरी करि नाहीं देखै हैं। रात्रीकी बासी सामग्री रखना महान् हिंसाका कारण है। बहुरि अनेक पुराणनिमें अर अनेक श्रावकाचारानिमें अरहंतकी प्रतिमाका अष्ट द्रव्यनिकरि पूजन करनेका ही उपदेश है। अर कहूं अरहंत प्रतिबिंबका स्तवनवंदनाका कहूं अभिषेकका वर्णन है। अर प्रतिबिंब तदाकार होते किमी ग्रंथमैं हू स्थापनाका वर्णन नाहीं अर अब इस कलिकालमें प्रतिमा विराजमान होते हू स्थापनाही कूं प्रधान कहै हैं। इस जयपुरमैं संवत् १८५० अठारहसैपचासका सालमैं अपना मनकी कल्पनातैं कोई नव स्थापनाकी प्रवृत्ति रची है तिनमैं अरहंत १ सिद्ध २ आचार्य ३ उपाध्याय ४ साधु ५ जिनवाणी ६ दशलाक्षण धर्म ७ षोडश कारण ८ रत्नत्रय ९ ऐसैं नवप्रकार स्थापना करै हैं अर ऐसैं कहै हैं जो सप्तव्यसनका त्याग अन्यायका त्याग अभक्षका त्याग जाकै होय सो स्थापनासंयुक्त पूजन करै अन्याय अभक्षका त्याग जाकै नाहीं होय सो स्थापना मत करो। स्थापनासहित पूजन तो सप्तव्यसनका अन्याय अभक्षका त्याग करनेवाला ही करै जाकै त्याग नाहीं सो स्थापना कर्‍यां विना पूजन करलो स्थापना नाहीं करना। अर स्त्रीनिकूं रंगीन कपडा पहरि स्थापनाविना पूजन करना कहै हैं। ऐसैं कहनेवालेनिकै साक्षात् जिनेंद्रका प्रतिबिंब मानना नाहीं रह्या अर तदाकार चांवलाकी स्थापनाहीका विनय करना रह्या प्रतिबिंबका विनय करना मुख्य नाहीं रह्या।

प्रतिमाका पूजन वंदना स्तवन तो चाहे सो ही करो अर पीततंदुलांमैं स्थापना करना तो उत्तम होय व्यसन अभक्षादिक पापरहित होइ तिसहीके योग्य है। ऐसैं पीतअक्षतानिमैं स्थापना सो तो मुख्य विनय रह्या अर प्रतिमामैं पूजनादिक गौण रह्या अर पक्षपाती कहै हैं जिस तीर्थंकरकी प्रतिमा होय तिनके आगैं तिनहीकी पूजा स्तुति करनी अन्य तीर्थंकरकी स्तुति पूजा नाहीं करनी अर अन्य तीर्थंकरकी पूजा करनी होय तो स्थापना तंदुलादिकतैं करके अन्यका पूजन स्तवन करना ऐसा पक्ष करे हैं। तिनकूं इस प्रकार तो विचार किया चाहिये जे समंतभद्रस्वामी शिवकोटिराजाके प्रत्यक्ष देखते स्वयंभू स्तवन कियो तद चंद्रप्रभ स्वामीकी प्रतिमा प्रगट भई तब चंद्रप्रभके सन्मुख अन्य षोडश तीर्थंकरनिकी स्तवन कैसैं किया ? बहुरि एक प्रतिमाके निकट एकहीका स्तवन पढना योग्य होय तो स्वयंभूस्तोत्रका पढना ही नाहीं संभवै तथा आदिजिनेन्द्रकी प्रतिमाविना भक्तामरस्तोत्र पढना नाहीं बनैगा। पार्श्वजिनकी प्रतिमा विना कल्याणमन्दिर पढना नाहीं बनैगा पंचपरमेष्ठीकी प्रतिमा विना वा स्थापना विना पंच नमस्कार कैसैं पढ्या जायगा कायोत्सर्ग जाप्यादिक नाहीं बनैगा वा पंचपरमेष्ठीकी प्रतिमाविना नाम लेना जाप्य करना सामायिक करना नाहीं संभवैगा तथा अन्यदेशमैं नाहीं जान्या मन्दिरमैं पहली प्रतिमाका निश्चय विना स्तुति पढना नाहीं संभवैगा तथा रात्रिका अवसर होय छोटी अवगाहनाकी प्रतिमा होय तहां पहली चिह्नका निश्चय करे पाछैं स्तवनमैं प्रवर्त्या जायगा तथा जिस मंदिरमैं अनेक प्रतिमा होंय तादि जाको स्तवन करे तिसके सन्मुख दृष्टिसमस्या हस्त जोर वीनती करना संभवै अन्य प्रतिमाके सन्मुख नाहीं संभवै बहुरि जिसमन्दिरमैं अनेक प्रतिबिंब होय तहां जो एकका स्तवन वंदना किया तादि दूजेका निरादर भया। दूजेका स्तवन किया तादि तीजे चौथे पंचमादिकका भावानिमैं निरादर भया तादि भक्ति नष्ट भई अर जो कहोगे बहुत प्रतिमा होय तहां चौवीसका स्तवन करेंगे तो तहां जो बीस ही तथा बाईस तेईस ही होंय तो पहली एकके चिह्नका आछीतरह निर्णयकरि तितनाहीका स्तवन किया जायगा

अन्य तीर्थंकरनिका स्तवन निकास्या जायगा अर जहां छोटे स्वरूप होंय दूरि विराजमान होंय तथा दृष्टि मंद होय तहां पांच आदम्याने पूछि स्तवन वंदना करना बनेगा ऐसें एकांती मनोक्त कल्पना करनेवालेके अनेक दोष आवें हैं ।

बहुरि जो स्थापनाके पक्षपाती स्थापनाविना प्रतिमाका पूजन नाहीं करैं तो स्तवन वंदना करनेकी योग्यता हू प्रतिमाके नाहीं रही । बहुरि जो पीततंदुलनिकी अतदाकार स्थापना ही पूज्य है तो तिन पक्षिपातीनके धातुपाषाणका तदाकार प्रतिबिंब स्थापन करना निरर्थक है तथा अकृत्रिम चैत्यालयके प्रतिबिंब अनादिनिधन स्थापन हैं तिनमें हू पूज्यपना नाहीं रह्या। बहुरि एकप्रतिमाके आगें एकका पूजन होय अन्य तेईसका पूजन करै सो पीतअक्षतनिकी स्थापन करके करै तदि तेईसप्रतिमाका संकल्प पीतअक्षतनिमें भया तदि जयमाल स्तवन पूजनमें अपनी दृष्टि पीत अक्षतनिमें ही रखनी । एक प्रतिमामें चौईसका भाव अयोग्य ठहरै तेईस प्रतिमास्थापनके पुष्प रहैं । जो पूजन ही स्थापना विना नाहीं तदि घरमें वनमें विदेशमें अरहंतनिका स्तवन वंदना हू नाहीं संभवै एकांती आगमज्ञानरहित पक्षपाती हैं तिनका कहनेका ठिकाना नाहीं पापका भय नाहीं । बहुरि पूजन चौईसका करै शांतिमें सोलमातीर्थंकरका स्तवन करै । तातैं अनेकांतका शरण पाय आगमकी आज्ञा विना पक्षका एकांत ठीक नाहीं है । ऐसा विशेष जानना—एक तीर्थंकरके हू निरुक्ति द्वारै चौईस नाम संभवै हैं । तथा एकहजार आठ नाम करि एक तीर्थंकरका सौधर्म इंद्र स्तवन किया है तथा एक तीर्थंकरके गुणनिके द्वारै असंख्यात अनंत नाम संभवै है । बहुरि अब ए चौईस नाम तथा असंख्यात नाम अनंतकालतैं अनंत तीर्थंकरनिके होगए हैं अर मातापिताके हू ए ही नाम अर शरीरकी अवगाहना अर वरणादिक ए हू अनंत कालमैं अनंत होगये । तातैं हू एक तीर्थंकरमें एकका भी संकल्प अर चौईसका भी संकल्प संभवै है । अर इस कालमैं अन्यमतीनकी अनेक स्थापना हो गई तातैं इसकालमैं तदाकार स्थापनाहीकी मुख्यता है जो अतदाकार स्थापनाकी प्रधानता होजाय तो चाहे

जोंमें वा अन्यमतीनकी प्रतिमामें हू अरहंतकी स्थापनाका संकल्प करने लागि जाय तो मार्ग भ्रष्ट होजाय। अर प्रतिमाके चिह्न है सो इंद्र जन्माभिषेक करि मेरूसूं ल्यायो तादि ध्वजामें जो चिह्न स्थापन किया था सो ही प्रतिमाके चरणचौकीमें नामादिक व्यवहारके अर्थि हैं अर एक अरहंत परमात्मा स्वरूपकरि एकरूप है अर नामादिककरि अनेकस्वरूप है। सत्यार्थ ज्ञानस्वभाव तथा रत्नत्रयरूपकरि वीतरागभावकरि पंच परमेष्ठीरूप एक ही प्रतिमा जाननी तातैं परमागमकी आज्ञा विना वृथा विकल्प करना शंका उपजावनी ठीक नाहीं जिनसूत्रकी आज्ञा हू सो प्रमाण है। बहुरि व्यवहारमें पूजनके पंच अंगनिकी प्रवृत्ति देखिये है आह्वानन ॥ १ ॥ स्थापना ॥ २ ॥ संनिधिकरण ॥ ३ ॥ पूजन ॥ ४ ॥ विसर्जन ॥ ५ ॥ सो भावनिके जोडवास्तैं आह्वाननादिकनिमें पुष्प क्षेपण करिये है। पुष्पनिकूं प्रतिमा नाहीं जाने है। ए तो आह्वाननादिकनिका संकल्पतैं पुष्पांजलि क्षेपणा है। पूजनमें पाठ रच्या होय तो स्थापना करले नाहीं होय तो नाहीं करे। अनेकांतनिके सर्वथा पक्ष नाहीं भगवान् परमात्मा तो सिद्धलोकमें हैं एक प्रदेश भी स्थानतैं चलै नाहीं परंतु तदाकार प्रतिबिंबसूं ध्यान जोडनेके अर्थि साक्षात् अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय साधुरूपका प्रतिमामें निश्चय करि प्रतिबिंबमें ध्यान पूजन स्तवन करना। बहुरि केतेक पक्षपाती कहैं है जो भगवान्का प्रतिबिंब विना सभाके श्रावक लोकानिमें हजूरी पद तथा स्तोत्र मत पढो। भगवान् परमेष्ठीका ध्यान स्तवन तो सदाकाल परमेष्ठीकूं ध्यान गोचर करि पढना स्तवन करना योग्य है जो प्रतिमाका सन्मुख तो विना स्तुतिका हजूरी पद पढनेकूं निषेध है तिनके पंच नमस्कार पढना स्तवन पढना सामायिक बंदनाका पढना प्रतिमाका सन्मुख विना नाहीं संभवेगा। शास्त्रका व्याख्यानमें नमस्कारके श्लोक पढनेका निषेध होजायगा तातैं अज्ञानीनका कहनेतैं स्तवनतैं अध्यात्ममें कदाचित् पराङ्मुख होना योग्य नाहीं।

यहां प्रकरण पाय अकृत्रिम चैत्यालयनिका स्वरूप ध्यानकी शुद्धताके अर्थि श्रीत्रिलोकसारके

अनुसार किंचित लिखिये है। अधोलोकमैं सात करोड बहत्तर लाख भवनवासीके भवन हैं तिनमें केतेक भवन असंख्यात योजनके विस्ताररूप हैं। केतेक संख्यात योजनके विस्ताररूप हैं तिन एक एक भवनमैं असंख्यात भवनवासी देवनिकरि वंदनीक एक एक जिनमंदिर ऐसैं सात कोड बहत्तरि लाख ही जिनमंदिर हैं। अर मध्यलोकमैं पंचमेरुनिमैं अस्सी जिनमंदिर हैं गजदंतनि ऊपरि बीस हैं अर कुलाचलनिमैं तीस। विजयार्द्धनि परि एक सो सत्तर। देवकुरु उत्तरकुरुमैं दश। वक्षारगिरनिमैं अस्सी। मानुषोत्तर उपरि चार। इष्वाकार उपरि चार। कुंडलगिरि उपरि चार। रुचिकगिरि ऊपरि चार। नंदीश्वरद्वीपमैं बावन ऐसे मध्यलोकमें चारसे अठावन हैं। ऊर्ध्वलोकमें स्वर्गोनेंमें अहमिंद्रलोकमैं चौरासी लाख सत्तानवे हजार तेईस हैं। अर व्यंतरनिके असंख्यात जिनमंदिर हैं अर जोतिर्लोकमें असंख्यात जिनमंदिर हैं। ऐसें संख्यारूप जिनमंदिर तो आठ कोडि छप्पन लाख सत्तानवे हजार चारसे इक्यासी हैं। अर व्यंतरज्योतिषिनके असंख्यात जिनमंदिर हैं। अब जिनालयनिका स्वरूप कहिये है, जिनालय तीन प्रकार हैं उत्कृष्ट मध्यम जघन्य तिनमैं उत्कृष्ट जिनमंदिरकी लंबाई सौ योजनकी है चौडाई पचास योजन हैं ऊंचाई पचहत्तर योजनकी है। अर मध्यम जिनमंदिर पचास योजन लंबे पचास योजन चौडे साढा सैंतीस योजन ऊंचे हैं अर जघन्य जिनमंदिर पचास योजन लंबा साढा बारा योजन चौडा पौणा उगणीस योजन ऊंचा है अर समस्तकी नींव जमीनमें आधा २ योजनकी है बहुरि इन जिनमंदिरानिके तीन तीन द्वार हैं तिनमें सन्मुख द्वार तो एक एक है और पसवाडे दोऊनिके दोय दोय द्वार हैं तिनमें सन्मुख द्वारका परिमाण ऐसा जानना उत्कृष्ट जिनमंदिरके द्वारकी ऊंचाई सोलह योजनकी है चौडाई आठ योजनकी है। मध्यम मंदिरनिका द्वारकी ऊंचाई आठ योजनकी अर चौडाई चार योजनकी है जघन्य जिनमंदिरनिका द्वारकी ऊंचाई चार योजनकी अर चौडाई दोय योजनकी है। बहुरि पसवाडानिके दोय २ छोटे द्वारनिका परिमाण ऐसा जानना, उत्कृष्ट जिनमंदिरका छोटा द्वारकी ऊंचाई चार योजनकी है

अर मध्यम जिनमंदिरनिका छोटा द्वारकी ऊंचाई चार योजनकी है अर चौडाई दोय योजनकी है अर जघन्य जिनमंदिरनिके छोटे द्वार दोय योजन ऊंचे और एक योजन चौडे हैं इहां भद्रशालवन नंदनवन नंदीश्वरद्वीपमें अर स्वर्गके विमाननमें उत्कृष्ट परिमाण सहित जिनालय हैं। अर सौमनसवनमें रुचक पर्वतमें कुंडलागिरी ऊपरि वक्षार गिरानि उपरि इष्वाकार उपरि मानुषोत्तर उपरि कुलाचलनि उपरि मध्यम प्रमाण लिये जिनमंदिर हैं। अर पांडुक वनके जिनालयनिका जघन्य प्रमाण है। बहुरि विजयार्द्ध पर्वतनके उपरि अर जंबूशाल्मलि वृक्षनिविषै जिनमंदिरनिकी लंबाई एक कोशकी है अवशेष जे भवनवासिनके भवननिमें तथा व्यंतरानिके जोतिषीदेवनिके जिनालय हैं ते यथायोग्य लंबाई जिनेंद्र भगवान देखी है तैसे तैसे प्रमाण लिये हैं। अब जिनमंदिरनिका बाह्यपरिकर सात गाथानिमैं कह्या है। समस्त जिनभवनके चार तरफ चार चार द्वारनिकरि युक्त मणिमयी तीन कोट हैं। अर द्वारनि होय जानेकी गली गली एक एक मानस्तंभ है अर नव नव स्तूप हैं अर तीन तीन कोटका अंतरालके माहीं पहला दूजा कोटके बीच वन है दूसरा तीसरा कोटके बीच ध्वजा है। तीजा कोट अर चैत्यालयके बीच चैत्यभूमि है। तिन जिनभवननिविषै एकसौ आठ गर्भगृह हैं। तिन जिनभवननिके मध्य रत्ननिके स्तंभनिकरियुक्त सुवर्णमय दोय योजन चौडा आठ योजन लंबा चार योजन ऊंचा देवच्छद कहिये मंडप गुमज छाति सहित हैं तिसविषै एकसौ आठ गर्भगृह हैं तिन गर्भगृहनिविषै आदि जिनेन्द्रके देह परिमाण उच्चतायुक्त एकसौ आठ जिनप्रतिमा रत्नमय हैं। कैसेक हैं जिनप्रतिमा भिन्न भिन्न सिंहासन छत्रत्रयादि प्रातिहार्यनिकरि सहित हैं। अति नील मस्तकविषै जिनके केश हैं। ते केशनिके आकार रत्ननिके पुद्गलपरिणमे हैं केश नाहीं हैं। बहुरि वज्र जो हीरा तिनमयी दंतानिके आकार संयुक्त हैं। अर विद्रुम जो मूंगा तिस समान रक्त जिनके ओष्ठ हैं। अर नवीन कूंपल समान शोभायुक्त रक्त हस्तपादतल हैं श्रीराजवार्तिकमें प्रतिमाका वर्णनमें लोहिताक्ष मणिकरि व्याप्त अंक स्फाटिकमणिमय हैं नयन जिनके

अर अरिष्ट मणिमय हैं श्याम नेत्रनकी तारका जिनकी अर अंजन मूल मणिमय वाफणी अर भृकुटीकी लता जिनके नीलमणिमय केशनिकरि युक्त ऐसी जिनप्रतिमा हैं दश ताल प्रमाण लक्षणादिकरि भरी हैं। इहां तालका परिमाण बारह अंगुलका है। प्रथम जिनेंद्र ज्यों जानो कि देखें ही है मानो बोले ही है। बहुरि एक एक गर्भगृहविषै बराबर पंक्ति करि खडे नागकुमारनिके वा यक्षनिके बत्तीस युगल चमर हस्तनिमैं लिये हैं। भावार्थ—एक एक गर्भगृहमैं एक एक जिनप्रतिमाके दोऊ तरफ समस्त आभरणकरि भूषित अर श्वेतनिर्मलरत्नमय चमर हस्तमैं धारण करते नाग कुमार वा यक्ष चौंसठ चमर ढारैं हैं। ऐसैं एकसो आठ प्रतिमानिके जुदे २ प्रातिहार्य एक एक जिनालयमैं हैं बहुरि तिन जिनप्रतिमानिके दोऊ पसवाडेनविषै श्रीदेवी अर सरस्वती देवी अर सर्वाह्न यक्ष अर सनत्कुमार यक्ष इनके रूप आकार तिष्ठै हैं बहुरि अष्टप्रकारके मंगल द्रव्य जिनप्रतिमाके निकट शोभै हैं। झारी ॥ १ ॥ कलश ॥ २ ॥ दर्पण ॥ ३ ॥ बीजणा ॥ ४ ॥ ध्वजा ॥ ५ ॥ चमर ॥ ६ ॥ छत्र ॥ ७ ॥ ठोना ॥ ८ ॥ ए आठ मंगलद्रव्य हैं ते एक एक मंगलद्रव्य एक सौ आठ प्रमाण एक एक प्रतिमानके शोभै हैं। अब गर्भगृहके बाह्यकी रचनाकूं ऐसैं जानो—मणिजटित सुवर्णमय पुष्पनिकरि शोभित बना जो देवच्छंद तींका अग्रभाग के मध्य रूपामयी अर सुवर्णमयी बत्तीस हजार कलश हैं बहुरि महाद्वार जो बडा द्वार ताके दोऊ पार्श्वनिविषै चौईस हजार धूपके घडे हैं। बहुरि तिस महाद्वारके बाहिर दोऊं तरफ आठ हजार मणिमई माला है। तिन मणिमई मालानिके बीच चौईस हजार सुवर्णमय माला हैं। बहुरि तिस महाद्वारके आगैं सन्मुख मुखमंडप है तिस मुखमंडपविषै सोलह हजार कलश हैं अर सोलह हजार सुवर्णमय माला है तिस मुखमंडपविषै सोलह हजार धूपघट हैं तिस मुखमंडपका मध्यविषै ही महान मिष्ट झणझणाट शब्द करतीं मोती अर मणिनि-कर निपजी किंकणी जे छोटी घंटी तिनकरि सहित नानाप्रकारके घण्टानिके समूह अनेक रचना करियुक्त शोभैं हैं अब जिनमन्दिरके छोटे द्वारादिकका स्वरूप कहे हैं। जिनमन्दिरका दक्षिण उत्तरके पसवाडे-

निका मध्यमैं प्राप्त जे छोटे द्वार तिनविषै कह्या विधानतैं समस्त रचना आधी आधी जानना। मणिमाला चार हजार हैं धूपघट बारह हजार हैं सुवर्णमाला बारह हजार हैं तिन छोटे द्वारानिके आगैं मुखमंडप हैं तिसमैं सुवर्णके घट आठ हजार हैं अर सुवर्णमय माला आठ हजार हैं आठ हजार धूपघट हैं और मुखमंडपानिमैं क्षुद्रघंटिका अनेक रचना है बहुरि तिस मंदिरका पृष्ठभागविषै मणिमाला तो आठ हजार हैं। अर सुवर्णमाला चौईस हजार हैं। माला हैं ते भीतिके चौगिरद लूंबती जाननी अब मुखमंडपानिका विस्तारादिका स्वरूप पंद्रह गाथानिमैं कह्या है सो कहिये हैं,—इस मंदिरके आगैं मुखमंडप है सो जिनमंदिरके समान सौ योजन लंबा पचास योजन चौडा सोलह योजन ऊंचा है। अर तिस मुखमंडपके आगैं चौकोर प्रदक्षिणमंडप है सो प्रदक्षिणमंडप सौ योजन चौडा लंबा है। सोलह योजनतैं अधिक ऊंचा है तिस प्रदक्षिणमंडपके आगैं अस्सी योजन चौडा लंबा अर दोय योजन ऊंचा सुवर्णमय पीठ है। पीठ नाम चौंतराका जानना। तिस पीठका मध्यविषैं चौकोर चौसठ योजन चौडा लंबा अर सोलह योजन ऊंचा स्थानमंडप है स्थानमंडप नाम सभामंडपका है। बहुरि इस स्थानमंडपके आगैं चालीस योजन ऊंचा स्तूपनिका मणिमय पीठ है सो पीठ चार द्वारानिकरि संयुक्त बारह अंबुज वेदीनकरि युक्त है। बहुरि तिस पीठके मध्य तीन कटनीकरि युक्त चौसठ योजन चौडा लंबा ऊंचा बहुत रत्नमय जिनबिंबनिकरि सहित स्तूप है। तीन कटनीलिये जो रत्नराशि ताका नाम स्तूप है। तिस ऊपरि जिनबिंब विराजैं हैं सो ऐसैं ही नव स्तूप हैं। तिनका ऐसा क्रम करि स्वरूप है तिस स्तूपके आगैं एक हजार योजन चौडा लंबा गिरदविषैं बारह वेदीनिकरि संयुक्त सुवर्णमय पीठ है तिस पीठ ऊपरि चार योजन लंबा अर एक योजन चौडा है स्कंध कहिये पेड जिनका अर बहुत मणिमय गिरदविषैं तीन कोटनिकरि संयुक्त अर बारह योजन लंबी है चार महा शाखा जिनके अर छोटी शाखा अनेक हैं जाके अर बारह योजन चौडा है शिखर कहिये ऊपरला भाग जिनका। अर नानाप्रकार पान फूल फल संयुक्त हैं। बहुरि एक लाख

चालीस हजार एकसौवीस वृक्षनिका परिवारसंयुक्त सिद्धार्थ अर चैत्य नामा दोय वृक्ष हैं। तिन वृक्षनिका मूलविषै जो पीठ है ताके ऊपरि तिष्ठते चार दिशानिविषै चार सिद्धनिकी प्रतिमा तो सिद्धार्थवृक्षका मूलविषै हैं अर चैत्यवृक्षका मूलविषै पीठ है ताके ऊपरि चार अर्हंतप्रतिमा विराजमान हैं। बहुरि इन वृक्षनिकी पीठके आगैं पीठ हैं ताविषै नानाप्रकार वर्णनकरि युक्त महाध्वजा तिष्ठे हैं। सोलह योजन ऊंचे एक कोस चौंडे ऐसे ध्वजानिके सुवर्णमय स्तंभ हैं। तिन स्तंभनिका अग्रभागविषै मनुष्यनिके नेत्र अर मनकूं रमणीक ऐसे नानाप्रकारके ध्वजा वस्त्ररूप रत्ननिकरि परिणये हैं अर तीन छत्र सोभै हैं इहां ध्वजानिके वस्त्र नाहीं है। वस्त्रकासा आकार कोमलता नाना रंग ललिततालिये रत्नरूप पुद्गल परिणये हैं तातैं वस्त्र भी रत्नमय जानने। तिस ध्वजापीठके आगैं जिनमंदिर है ताकी चारों दिशानविषै नानाप्रकार पुष्पनिकरि युक्त सौ योजन लंबे पचास योजन चौडे दशयोजन ऊंडे मणिसुवर्णमय वेदीनकरि संयुक्त चार हूद कहिये द्रह हैं ताके आगैं जो मार्गरूप वीथी है गली है ताके दोऊ पार्श्वनविषैं पचास योजन ऊंचे पचास योजन चौडे देवानिके क्रीडा करनेके रत्नमय दोय मंदिर हैं। बहुरि ताके तोरण हैं सो मणिमय स्तंभनिका अग्रभागविषै स्थित हैं। दोय स्तंभनिके बीच भींतिरहित मरगोलकासा आकार ताका नाम तोरण है सो तोरण मोतीनके जाल अर घंटासमूहकरि युक्त है। मोतीनके जाल अर घंटासमूह तोरणनिके लूंबें हैं बहुरि सो तोरण पचास योजन ऊंचा पचीस योजन चौडा है ते तोरण जिनबिंबनिके समूहकरि रमणीक हैं। जिनबिंबनिका आकार तोरणनिमैं तिष्ठै है तिस तोरणके आगैं स्फटिकमय जो प्रथम कोट ताके अभ्यंतर कोटके द्वारका दोऊ पार्श्वनिविषैं सौ योजन ऊंचे पचास योजन चौडे रत्ननिकरि रचे दोय मंदिर हैं ऐसैं कोटपर्यंत वर्णन किया पूर्वद्वारविषै मंडपादिकका जो परिमाण कह्या तातैं दक्षिणद्वार उत्तरद्वारविषै आधा २ परिमाण जानना। अन्य वर्णन तीन तरफ समान जानना। बहुरि ते चैत्यालय सामायिकादि क्रिया करनेका स्थान वंदना मंडप अर स्नान करनेके स्थान अभिषेक मंडप

अर नृत्यकरनेके स्थान नर्त्तन मंडप अर संगीत साधन करनेके स्थान संगीतमंडप अर अवलोकन करनेके अवलोकन मंडप तिनकरि संयुक्त बहुरि क्रीडा करनेके स्थान क्रीडन गृह शास्त्रादिक अभ्यास करनेके स्थान गुणनगृह तिनकरि अर विस्तीर्ण उत्कृष्ट पट्ट चित्रामादि दिखावनेके स्थान पट्टशालादि तिनिकरि संयुक्त है। अब द्वितीय कोट अर बाह्यकोटके बीच अंतराल ताका स्वरूप कहैं हैं। सिंह, गज, वृषभ, गरुड, मयूर, चंद्रमा, सूर्य, हंस, कमल, चक्र, इन दशनिका आकारकरि संयुक्त ध्वजा हैं ते जुदी जुदी एकसो आठ आठ है। ऐसें एकहजारअस्सी एक दिशामैं हैं। ऐसें चार दिशानिके चारहजार तीन सौ वीस मुख्यध्वजा हैं। बहुरि एकएक मुख्यध्वजाविषै एकसोआठ क्षुलक छोटी ध्वजा हैं। आगैं दूसरा अर तीसरा कोटके बीच जो अंतराल ताकेविषै अशोक अर सप्तच्छद अर चंपक अर आम्रमई चार वन हैं। बहुरि यहां सुवर्णमय फूलनिकरि शोभित मरकतमणिमय नानाप्रकार पत्रानिकरि पूर्ण ऐसे कल्पवृक्ष हैं तिनके वैडूर्यमणिमय फल हैं अर मूंगामय डालीकरि युक्त हैं। ऐसें कल्पवृक्ष भोजनांगआदि भेद लिये दश प्रकार हैं बहुरि तिन च्यारों वननिविषैं चैत्यवृक्ष च्यारि हैं। ते वृक्ष तीन पीठि ऊपरि हैं। तीन कोटनिकरि युक्त हैं रत्नमय शाखापत्रपुष्पफलकरि युक्त चार वनानिके बीच हैं तिन चार चैत्यवृक्षानिके मूलमैं दिशानमैं पल्यंकासन सिंहासन छत्रप्रातिहार्यादियुक्त चार जिनेंद्रकी प्रतिमा हैं। बहुरि नंदादि सोलह बावडी तीन कटनीनि करि सयुंक्त शोभै हैं। बहुरि वननकी भूमिमैं द्वारानितैं आवनेका मार्ग रूप जो वीथी तिनका मध्यविषै तीनकोटसंयुक्त तीन पीठनि ऊपरि धर्मका विभवसंयुक्त मस्तकविषै च्यारिदिशानिमैं च्यारि जिनप्रतिमाकूं धारण करते मानस्तंभ हैं। श्रीराजवार्तिकमें कह्या है—जिनालयनकी महिमा वर्णनकरनेकूं हजारजिह्वाकरि हू समर्थ नाहीं होय है अर सहस्राक्ष जो हजारनेत्रधारक हजारनेत्रानिकूं विस्तारकरि निरंतर देखतो हू तृप्तिताकूं नाहीं प्राप्त होय है ऐसें अप्रमाणमाहिमाके धारक अकृत्रिमजिनालयका वर्णन त्रिलोकसारनामग्रंथतैं अपने शुभध्यानकी सिद्धिके अर्थि वर्णन किया। ऐसें

जिनपूजनका कथन किया। अब जिनपूजनका फलमें तो प्रसिद्ध अनेक भये हैं। तथापि पूर्वाचार्यनि करि प्रसिद्ध फल कहनेकूं सूत्र कहैं हैं–

अर्हच्चरणसपर्यामहानुभावं महात्मनामवदत्। भेकः प्रमोदमत्तः कुसुमेनैकेन राजगृहे ॥ १२० ॥

अर्थ—राजगृहनाम नगरकेविषै जिनेंद्रका पूजनेका हर्षकरि मत्त कहिये अपना सामर्थ्यकूं नाहीं जानतो जो मींडको सो अरहंतके चरणनिकी पूजाका महाप्रभाव महानपुरुष जे भव्यजीव तिनकूं प्रगट करतो हुवो दिखावतो हुवो। याकी कथा ऐसी जाननी–मगधदेशमें राजगृहनगर तिसविषै राजाश्रेणिक राज्य करै। तिस ही नगरकेविषै एक नागदत्तनामश्रेष्ठी ताके भवदत्तनामा स्त्री सो श्रेष्ठी आर्तपरिणामतैं मर्‍या। मरिकरि आपकी गृहकी बावडीमैं मींडको उपजतो हुवो। एक दिन भवदत्तानामा सेठानी बावडी ऊपरि गई तदि ताने देखि मींडकाके पूर्वजन्मको स्मरण हुवो तदि पूर्वलो स्नेहकी यादकरि शब्द करतो उछलि २ सेठानीके वस्त्रांऊपरि चढै। तदि सेठानी वारंवार वाकों दूरि फेकि दियो तो हू बारम्बार सेठानीका वस्त्रनि परि आवै तदि सेठानी मींडकानै दूरि करि अपने घर गई। एक दिन सुव्रतनाम अवधिज्ञानी मुनीकूं पूछी भो स्वामिन्! मैं गृहवापिकामैं जाऊं तदि एक मींडको शब्द करतो २ बारम्बार हमारे अंगपरि आवै इसका संबंध कहो। तदि मुनीश्वर कह्यो। थारो भर्ता नागदत्त आर्त परिणामतैं मरि मींडको हुवो ताकै जातिस्मरण हुवो सो पूर्वजन्मका स्नेहकरि थारे निकट आवै है। तदि सेठानी मींडकाकूं अपना भर्ताको जीव जानिकरि अपने गृहमैं लेजाय बहुत सन्मानतैं राख्यो। एक दिन राजा श्रेणिक भगवान वीरजिनेंद्रका समवसरण वैभार पर्वतऊपरि आयो जानि राजा वंदनाकेअर्थि नगरमैं आनन्दभेरी दिवाई। तादि नगरके भव्यजीव भगवानकी वंदनाके अर्थि नाना प्रकारके उज्जलवस्त्र आभरण पहरि पूजनसामग्री हस्तानिमैं लेय जयजय शब्द करते हर्षतैं नृत्यगानवादित्रादि शब्दसहित चाले सो समस्तनगरमैं आनंदहर्ष व्याप्त होयगयो। तदि मींडको लोकनिका पूजनजनित आनंदका शब्द

श्रवण करि आपके पूजन करनेका बडा उत्साह प्रगट भया तदि एक पुष्पकूं मुखमैं लेय आनन्दसहित उछलतो हुवो वीरजिनेंद्रका पूजनके अर्थि चाल्यो अतिभक्तितैं एसा विचार नाहीं भया जो विपुलाचल पर्वतऊपरि वीस हजार पैडीनिसहित समवशरण तो कहां अर मैं असमर्थ मींडको कहां कैसैं पहुंचूगा। अतिभक्तितैं ऐसा विचार नाहीं रह्या। अब जिन पूंजूं ऐसैं उत्साहसहित मार्गमैं गमन करतो राजाका हस्तीका पग नीचे मरि सौधर्मस्वर्गविषै महान ऋद्धिको धारक देव हुवो तदि अवधिज्ञानतैं पूजनके भावतैं अपना देवपनामैं उत्पाद जानि मींडकाको चिह्न धारणकरि तत्काल वीरजिनेंद्रका समवसरणमैं पूजनके अर्थि जाय समस्त जीवनिकूं पूजनको प्रभाव प्रगट दिखायो। जो तिर्यंच मींडक पूजनताईं पहुंच्यो हू नाहीं केवल पूजनके भाव करकैं ही स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देव भयो। जिनेन्द्रका पूजनका अचिंत्य प्रभाव है यातैं गृहचारामैं बडा शरण समस्तपरिणामकी विशुद्धता करनेवाला एक नित्यपूजन करना ही है। जिनपूजन निर्धन हू करि सकै धनाढ्य हू करि सकै जेता आपका सामर्थ्य होय तिसप्रमाण पूजन सामग्री वानिसकै है बहुरि पूजन करना करावना करतेकूं भला जानना सो समस्त पूजन ही है। तथा स्तवनवंदना हू पूजन, एकद्रव्यतैं हू पूजन जैसैं अरहंतके गुणनिमैं भक्तिकी उज्वलता होय तैसा फल है बहुरि जिनमन्दिरमैं छत्रचमरसहित सिंहासन कलश घंटा इत्यादिक सुवर्णमय रूपामय पीतलमय कासी ताम्रमय अनेक सुंदर उपकरणनिकरि जेता अपना सामर्थ्य होय तिसप्रमाण जिनमंदिरको भूषितकरि वैयावृत्य करै। बहुरि जीर्णमंदिरनिकी मरम्मत उद्धार करना। तथा धनाढ्य पुरुष हैं तिनकूं जिनबिंबनकी प्रतिष्ठा करवाना कलश चढावना ये समस्त अरहंतकी वैयावृत्ति हैं।

बहुरि जिनमंदिरनकी टहल करना कोमल पीछीसूं यत्नाचारतैं भुवारना अभिषेक पूजना बिछावना गाननृत्यवादित्रादिकनिकरि अरहंतके गुण गावणा सो समस्त अर्हद्वैयावृत्ति है। मनसे वचनसे कायसे धनसे विद्यासे कलासे जैसे अरहंतके गुणनिमैं अनुराग बधै तैसे करना धन पावनेका देह पावनेका

इंद्रियपावनेका बलपावनेका ज्ञानपावनेका सफलपणा जिनमंदिरकी टहल वैयावृत्तिकरके ही है। जिनमंदिरकी वैयावृत्ति सम्यक्तकी प्राप्ति करै तथा सम्यग्ज्ञानकी प्राप्ति करै है । मिथ्याज्ञान मिथ्याश्रद्धानका अभाव करै। स्वाध्याय संजम तप व्रत शीलादिगुण जिनमंदिरका सेवनतैं ही होय। नरकातिर्यंचादिगतिनमें परिभ्रमणका अभाव होय। जिनमंदिर समान कोऊ उपकार करनेवाला जगतमें दूजा नाहीं । जिनमंदिरका निमित्ततैं शास्त्र श्रवण पठनकरि अनेक श्रोतानिका उपकार होय वक्ताका उपकार होय है । जिनमंदिरके निमित्ततैं केई जीव कायोत्सर्ग करैं हैं। केई जाप्य जपैं हैं। केई रात्रिमें जागरण करैं हैं। केई अनेकप्रकार पूजनकरि प्रभावना करैं हैं। केई स्तवन करैं हैं। केई तत्त्वार्थनिकी चर्चा करैं हैं। केई प्रोषधोपवास तथा बेला तेला पंच उपवासादिकरि बडी निर्जरा करैं हैं। केई स्वाध्याय करैं हैं। केई वीतरागभावना करै हैं। केई नानाप्रकार उपकरणनि करि प्रभावना करैं हैं। जिनमंदिरके निमित्ततैं पाप पुण्य देवकुदेव धर्मकुधर्म गुरुकुगुरुका जानना होय। भक्ष्यअभक्ष्य कार्यअकार्य त्यागनेयोग्य ग्रहणकरनेयोग्यका ज्ञान हू जिनमंदिरमें प्रवृत्तिकरि ही होय है। त्याग व्रत शील संयम भावनाका स्वरूप जानना तथा आचरण करना समस्त जिनमंदिरके प्रभावतैं होय है। जिनमंदिर बराबर कोऊ उपकारी नाहीं है। जिनमंदिर अशरणनिकूं शरण है। ऐसे परोपकार करनेवाला जिनमंदिरकूं जानि याका वैयावृत्य करो। ऐसैं वैयावृत्यमें जिनपूजाका वैयावृत्य कह्या। अब वैयावृत्यके पंच अतिचार कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

हरितपिधाननिधाने ह्यनादरास्मरणमत्सरत्वानि। वैयावृत्त्यस्यैते व्यतिक्रमाः पञ्च कथ्यन्ते ॥ १२१ ॥

अर्थ—वैयावृत्य जो दान ताके ये पांच अतीचार त्यागने योग्य हैं। हरितपिधान, हरितनिधान, अनादर, स्मरण, मत्सरत्व जो व्रतीनिकूं देने योग्य आहारपानऔषध है ताकूं हरित जो कमलका पत्र वा पातल पान इत्यादि सचित्तकरि ढक्या हुवा देना सो हरितपिधान नाम अतीचार है ॥ १ ॥ बहुरि हरित जो वनस्पतिके पत्रादिक ऊपरि धरया हुवा भोजन देना सो हरितनिधान नाम अतिचार है ॥ २ ॥

बहुरि दानकूं अनादरतैं अविनयतैं प्रियवचनादि रहित देना सो अनादरनाम अतिचार है ॥ ३ ॥ बहुरि पात्रकूं भोजनादिक देनेके अर्थि स्थापनकरि अन्यकार्यमैं लगि भूलि जाना तथा देनेयोग्य द्रव्यकूं तथा विधिकूं भूलि जाना सो अस्मरण नाम अतिचार है ॥ ४ ॥ बहुरि अन्य दातारतैं ईर्षाकरि देना सो मत्सरत्व नाम दोष है ॥ ५ ॥ ऐसे दान जो वैयावृत्य ताके पंच अतीचार टालि महाविनयतैं शुद्ध दान करो ॥ १२१ ॥

इति श्रीस्वामिसमंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारविषै शिक्षाव्रतनिका वर्णन करि चतुर्थ अधिकार समाप्त भया ॥ ४ ॥

अब श्रीपरमगुरुनिका प्रसादकरि परमागमकी आज्ञाप्रमाण भावनानामा महाधिकार लिखिए है। समस्त धर्मका मूल भावना है। भावनातैं ही परिणामिनिकी उज्वलता होय है। भावनातैं मिथ्यादर्शनका अभाव होय है। भावनातैं व्रतनिमैं दृढ परिणाम होय है। भावनातैं वीतरागताकी वृद्धि होय है। भावनातैं अशुभध्यानका अभाव होय शुभध्यानकी वृद्धि होय है। भावनातैं आत्माका अनुभव होय है। इत्यादिक हजारां गुणनिकूं उपजावनेवाली भावना जानि भावनाकूं एक क्षण हू मति छांडो। अब प्रथम ही पंचव्रतनिकी पच्चीस भावना जानहू। अहिंसा अणुव्रत धारण करता पुरुष पांच भावना विस्मरण नाहीं होय है। मनके विषै अन्यायके विषयनिके भोगनेकी बांछाका अभावकरि दुष्टसंकल्पनिकूं छांडि अपनी उच्चताकूं नाहीं चाहना अन्यजीवनके विघ्न इष्टवियोग मानभंगादि तिरस्कार धनकी हानि रोगादिक नाहीं चाहना सो मनोगुप्ति है ॥ १ ॥ हास्यके वचन विवादके वचन अभिमानके वचन नाहीं कहना तथा कलहके अपयशके कारण वचन नाहीं कहना सो वचनगुप्ति है ॥ २ ॥ बहुरि त्रसजीवनिकी विराधना टालिकरि हरिततृण कर्दमादिककूं छांडि देखि शोधि गमन करना तथा चढना उतरना उलंघना

बडा यत्नतैं अपना सामर्थ्यप्रमाण ऐसा करना जैसैं अपना हस्त पादादि अंगउपांगनिमैं वेदना नाहीं उपजे अन्यजीवकै बाधा नाहीं होय तैसैं हलनचलन धीरतातैं करना सो ईर्यासमिति है ॥ ३ ॥ जो वस्तु अन्न पान वस्त्र आसन शय्या काष्ठ पाषाण मृत्तिकाके तथा पीतल कांसी लोह सुवर्ण रूपा इत्यादिकके बासन पात्र तथा घृतादि रस इत्यादिक गृहस्थकै परिग्रह हैं तिनकूं यत्नतैं उठावना मेलना जैसैं अन्य जीवनिका घात नाहीं होय अपने अंगमैं पडने गिरने करि पीडा नाहीं उपजे उजाड विगाड होनेतैं आपकैं अन्यकैं संक्लेश नाहीं उपजै तैसैं धरना मेलना हिंसाका कारण तथा हानिका कारण जो घसीटना सो नाहीं करै ताकैं आदाननिक्षेपणसमिति नाम भावना होय है ॥ ४ ॥ बहुरि गृहस्थ जो भोजनपान करै सो अभ्यंतर तो द्रव्य क्षेत्र काल भावकी योग्यता अयोग्यताका विचार करै। योग्य देखि करै। अर बाह्य दिवसमैं उद्योतमैं नेत्रनतैं अवलोकन करि बारंबार शोधि धीरपनातैं ग्रासादिककूं मुखमैं देय भक्षण करै। गृद्धितातैं विना विचारयां विना शोध्यां भोजन नाहीं करै सो आलोकितपान भोजन नाम भावना है ॥ ५ ॥ ऐसैं अहिंसाअणुव्रतकी पांच भावना कहीं। सो निरंतर नाहीं भूलना। अब सत्यअणुव्रतकी पंचभावना कहिये है। क्रोधत्याग, लोभत्याग, भीरुत्वत्याग, हास्यत्याग, अनुवीचीभाषण ये पांचभावना सत्यअणुव्रतकी हैं। जो सत्यअणुव्रत धारै क्रोध करनेका त्याग करै ऐसा विचारै जो क्रोधी होय बचन बोलै है ताकै सत्य कहना नाहीं बनै है यातैं क्रोध त्याग्या ही सत्य रहै। अर जो कर्मके उदयतैं गृहस्थके कोऊ बाह्य विपरीत निमित्त मिलनेतैं क्रोध उपजि आवै तो ऐसा चिंतवन करै जो मेरे परिणाममैं क्रोधजनित तातई उपाजि आई है तातैं मोकूं अब मौनग्रहण ही करना अब बचन नाहीं बोलना। जो वचनकूं रोकूंगा तो कषायविसंवाद नाहीं बधैगा। हमारा क्षमादिगुण हू नाहीं बिगडैगा। तातैं मेरे हृदयमैं क्रोधजनित अग्निका उपशम नाहीं होय तितने वचनकी प्रवृत्ति नाहीं करनी। ऐसा दृढ विचार करै ताकै सत्यकी क्रोधत्यागभावना होय है ॥ १ ॥ लोभके निमित्ततैं सत्य वचन नाहीं प्रवर्तैं

है। तातैं अन्यायका लोभ छांडना सो लोभत्यागभावना है ॥ २ ॥ बहुरि भयके वश होय ताके सत्यवचन नाहीं होय तातैं भयका त्याग भये सत्य होय है ॥ ३ ॥ बहुरि हास्यमैं सत्य नाहीं कह्या जाय है। यातैं सत्यअणुव्रती हास्यकूं हू दूरहीतै छांडै है ॥ ४ ॥ बहुरि जिनसूत्रसूं विरुद्धवचन नाहीं कहै। जिनसूत्रके अनुकूल वचन बोलना सो अनुवीचीभाषण नाम भावना है ॥ ५ ॥ भावार्थ—जो अपने सत्यअणुव्रत पालन किया चाहैगा सो क्रोधके कारणनिकूं रोकै है। जाके वास्ते अनेक असत्यमैं प्रवर्तना होय ऐसा लोभकूं हू छांडि देगा अर जातैं धर्मविरुद्ध लोकविरुद्ध वचनमें प्रवृत्ति होजाय ऐसा धन विगडनेका शरीर विगडनेका भय नाहीं करेगा। अर जो अपना सत्यवादीपनाकी रक्षा किया चाहैगा सो अन्यका हास्य कदाचित् नाहीं करैगा। अर जिनसूत्रसूं विरुद्धवचन कदाचित् नाहीं कहैगा। अब अचौर्यअणुव्रतकी भावना पांच कहिये है। शून्यागार, विमोचितावास, परोपरोधाकरण, भैक्ष्यशुद्धि, सधर्माविसंवाद ए पंच भावना अचौर्यव्रतकी हैं। यातैं अचौर्यअणुव्रतका धारक गृहस्थ हू पंचभावना निरंतर भावता रहै। व्यसनीमनुष्य तथा दुष्टमनुष्य तथा तीव्रकषायी कलहका करनेवाला पुरुषनिकरि शून्यमकान होय तहां बसनेका भाव राखै। जातैं तीव्रकषायी दुष्टनिके नजीक बसनेमैं परिणामकी शुद्धता नष्ट होजाय दुर्ध्यान प्रगट होजाय तातैं पापीनिकरि शून्य मकानमैं बसना सो ही शून्यागारभावना है ॥ १ ॥

बहुरि जिस मकानमैं अन्यदूजाका झगडा नाहीं होय तहां निराकुल बसना सो विमोचितावास है ॥ २ ॥ बहुरि अन्यके मकानमैं आप जबरीतैं नाहीं धंस बैठना सो परोपरोधाकरणभावना है ॥ ३ ॥ बहुरि अन्यायअभक्ष्यकूं त्यागि भोगांतरायका क्षयोपशमके आधीन मिल्या जो रसनीरसभोजन तामैं समता धारि लालसारहित भोजनकरना सो भैक्ष्यशुद्धि भावना है ॥ ४ ॥ साधर्मीपुरुषमैं वादविसंवाद नाहीं करना सो सधर्माविसंवादभावना है ॥ ५ ॥ ऐसैं अचौर्य अणुव्रतके धारकनिकूं पंच भावना भावने

योग्य हैं। अब ब्रह्मचर्यव्रतकी पंच भावना कहे हैं,—स्त्रीरागकथाश्रवणत्याग, स्त्रीनके मनोहरअंग देखनेका त्याग, पूर्वकालमैं भोग भोगे तिनका स्मरण करनेका त्याग, पुष्टरसका भोजन तथा इंद्रियनिमैं दर्प उपजावनेवाला भोजनका त्याग, अर अपने शरीरके संस्कारका त्याग, ये पंच भावना ब्रह्मचर्यव्रतकी हैं। अन्यकी स्त्रीनिकी राग उपजावनेवाली कथाका त्यागकी भावना करै ॥ १ ॥ तथा अन्यकी स्त्रीनिके स्तन जघन मुख नेत्रादिक रूपकूं रागभावतैं देखनेका त्याग करै ॥ २ ॥ बहुरि आपके अणुव्रत धारण हुआ तिस पहली अव्रती होय भोग भोगे थे तिन भोगनिकूं याद नाहीं करना सो तीजी भावना है ॥३॥ बहुरि पुष्ट इष्ट कामोद्दीपन करनेवाला भोजनका त्याग सो चौथी भावना है ॥४॥ बहुरि अपने शरीरकूं अंजन मंजन अतर फुलेलादि कामके विकार करनेवाले आभरण वस्त्रादिका त्याग करनेकी भावना करना सो स्वशरीरसंस्कारत्याग नामा पंचमी भावना है ॥ ५ ॥ ऐसैं ब्रह्मचर्य नामा अणुव्रतके धारक गृहस्थकूं पंच भावना भावने योग्य हैं। अब परिग्रहत्यागकी पंच भावना कहे हैं,—जो परिग्रहपरिमाण नाम अणुव्रत धारण करै सो गृहस्थ बहुत पापबंधके कारण अन्यायरूप अभक्ष्यनिका तो यावत् जीव त्याग करै। अर अंतरायकर्मके क्षयोपशम प्रमाण प्राप्त भये जे पंचइंद्रियनिके विषय तिनमैं संतोष धारण करि मनोज्ञविषयनिमैं अतिराग नाहीं करै अर अति आसक्त नाहीं होय। अर अमनोज्ञ असुहावने मिलैं तिनमैं द्वेष नाहीं करै क्लेश नाहीं करै। अर अन्य जीवनके सुंदरविषयभोग देखि लालसा नाहीं करना सो परिग्रहपरिमाणअणुव्रतकी पंच भावना हैं। बहुरि पंच पापनिका महा निंद्यपना है ताकी भावनाकूं हू भावना योग्य है। ये हिंसादिक पंच पाप हैं तिनतैं इसलोकमैं महादुःखकरि अपना नाश है अर परलोकमैं घोरदुःख अनेक भवनिमैं जानि पापनितैं भयभीत होय दूरहीतैं त्यागना। हिंसा करनेवाला निरंतर भयवान रहै है। अर जाकूं मारै ताकै अनेक भवनिपर्यंत वैरका संस्कार चल्या जाय है। जाकूं मारै ताका स्त्रीपुत्रपौत्रमित्रकुटुम्बी वैर लेवैं हैं। तिर्यंचनिऊपरि भी लाठी पत्थर शस्त्र चाबुक चलावै

ताका वैर तिर्यंच हू नाहीं छांडे हैं। हाथी घोडा सर्प ऊंट बहुत दिनपर्यंत वैर धारण करि बदला लेवैं हैं मारे हैं। जगतमैं निंद्य होय हैं। पापी कहावे हैं। सर्वमैं प्रतीत जाती रहे है। तथा जाकूं मारे वे आपकूं मार लेहैं। राजाका तीव्र दण्ड भोगे हैं । हस्तपाद नाक छेद्या जाय है। राजा सर्वस्व हरण करैं है। महा अपयश गर्दभारोहणादिक तीव्र दंड भोगि नरकादि कुगतिनिमैं बहुतकाल नाना ताडन मारन छेदन भेदन शूलीरोहण वैतरणीमैं मज्जनादि असंख्यात दुःख भोगि घोर तिर्यंच मनुष्यमैं तीव्ररोग दारिद्र अपमानादिक भोगता असंख्यात अनंतभव दुःखका पात्र होय है। बहुरि जो अन्यजीवका घात तो नाहीं करै है अर अभिमान क्रोध करि अपने शरीरका बल करि अन्य मनुष्यतिर्यंचनिकूं तथा बालककूं स्त्रीकूं लात घमूका चपेटनितैं मारे हैं। तथा लाठी चाबुक वेतनतैं मारे हैं। त्रास देवै हैं ते हू इसलोकमैं राक्षसकी ज्यों भयंकर उद्वेगका करनेवाला महाअपयश पाय दुर्गतिका पात्र होय हैं। बहुरि जो निर्दयपरिणामी होय करकै विकलत्रयादिकका कषायके वश होय घोर आरंभादिक करि घात करै हैं तथा विना प्रयोजन वनस्पतिका छेदन तथा पृथ्वी जल अग्निकायके जीवनिकी अज्ञानभावतैं तथा प्रमादतैं विराधना करै हैं ते इसलोकमैं ही ज्वर सन्निपात आमवात पक्षाघात संग्रहणी अतीसार वात पित्त कफ खांसी कोढ खाज पांव फोडा आदीठ बाला विष कंटकादि रोगनितैं घोरदुःख भोगि नानादुर्गतिमैं रोग अर दारिद्र इष्टवियोगादि घोर दुःखनिका पात्र होय हैं। यातैं हिंसातैं इसलोकमैं घोरदुःखरूप फल जानि हिंसाका त्याग ही सर्वप्रकार करि करना श्रेष्ठ है। बहुरि जो जीवनिकी दयाकरि युक्त होय समस्त जीवनिकूं अभयदान देहै। अपने परिणामनितैं जीवमात्रकी विराधना नाहीं चाहता यत्नाचाररूप प्रवर्तता प्रमाद छांडि अहिंसाधर्मकूं नाहीं भूलै है तिसकी महिमा इहां ही देव करै हैं पूज्य होय है समस्त पापनितैंरहित होय स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देवपना पाय मनुष्यलोकमैं विदेहादिक उत्तम क्षेत्रमैं महाप्रभावका धारक होय निर्वाण गमन करै है। अब असत्यवचनका स्वरूप केवल दोषरूप ही है सो प्रगट विचार करहू। असत्य

वादीकी प्रतीत नाहीं रहे है। माता पिता पुत्र मित्र स्त्रीनिके हू याकी प्रतीत नाहीं विश्वास नाहीं आवे है तदि अन्यके याका श्रद्धान कैसे होय जातैं जगतमैं जेता व्यवहार है तेता वचनके द्वारे है। जो वचन विगाड्या सो अपना समस्त व्यवहार विगाड्या। धर्म अर्थ काम मोक्ष चार पुरुषार्थ वचन करि प्रवर्तें हैं जाका वचन ही निंद्य भया ताका चारूं पुरुषार्थ निंद्य होय हैं। असत्यवादी समस्तके अप्रिय होय हैं। याकै मायाचार होयही असत्यके अर कपटकै अविनाभावीपना है। कुवचन बोलना चुगली करना अर विकथा आत्मप्रशंसा परकी निंदा ये असत्यका परिवार है। असत्यवादी इसही लोकमैं जिह्वाछेद सर्वस्वहरण तथा जिह्वाके रोगकरि नष्ट होना इत्यादिक घोरदुःखनिकूं प्राप्त होय है। अपवादकूं पावे है। परलोकमैं नरकादिकनिमैं परिभ्रमण तिर्यंच गतिमैं वचनरहितपना तथा गूंगा बहिरा अंधा दरिद्री रोगीपना पावै है। तथा मूर्खपना वचनकलारहितपना होय है। तथा जगतमैं दीनताका विलाप करतो फिरै है तो हू कोऊ श्रवण ही नाहीं करै तातैं असत्यवचनका त्यागही श्रेष्ठ है। अर सत्यके प्रभावतैं देवलोकमैं गमन स्वर्गका महर्द्धिकपना होय है। समस्त जगतके आदरने योग्य वचन होय। तथा समस्त उत्तम शास्त्रनिका पारगामी होय। कविपना होय वाग्मीपना होय अनेक जीवनिका उपकार होय। जाकी आज्ञा लाखांमनुष्य अंगीकार करैं ऐसा सत्यवचनका फल है। जो पूर्वजन्ममैं वचनकी उज्ज्वलता धारी है ताका वचन श्रवण करनेका लाखांमनुष्य अभिलाष करे हैं। जो हमसूं बोलै सो हम कृतार्थ हो जावें ये समस्त सत्यवचनका प्रभाव है। अब चोरीके दोषनिकी भावना कहिए है। चोर मनुष्य समस्तकै भय उपजावनेवाला होय है। माता हू चोरी करनेवाला पुत्रका बडा भय करै है।

तथा हितू बांधवादिक कोऊ चोरका संसर्ग नाहीं चाहै है। याका संसर्गतैं कलंक चढि जायगा कोऊ राजाकी आपदा आजायगी। तथा हमारा कुछ ले जायगा। ऐसा भय नाहीं छांडै है। चोर समस्तमैं नीचा होजाय है चोरकै काहूके मारनेकी दया नाहीं होय है असत्य कपट छल अनेक चोरानिके निश्चयतैं

होय ही है चोर पापीनिमें महापापी है। चोरका कोऊ सहाई नाहीं होय है। पिता माता स्त्री पुत्रादिक समस्त कुटुंब चोरकी लार नाहीं लागे हैं। धीज प्रतीत सब जाती रहै है। कोऊ स्थानदान नाहीं देवे है। चोर जानि समस्त मारने लगि जाय हैं। राजानिकरि तीव्र मारन ताडन हस्तनासिका छेदन मारण दंड होय है। बंदीखानाकूं बहुत दीर्घकाल सेवनिकरि अपवाद पाय मरणकरि घोर नरककी वेदना भोगता असंख्यात अनंतकाल तिर्यंचनिमें भूख प्यास ताडन मारण लादन घसीटनादि असंख्यात भवानिमें पावै है। मनुष्य होय तो महानीच दरिद्री रोगी वियोगी घोर क्षुधा तृषा मारणबंधन चोरीके कलंकादि सहित निरादरका दुःख भोगता पैंड पैंडमें याचना करता घोर दुःख भोगनेका संतान चल्या जाय है। यातैं चोरीका दूरहीतैं परिहार करो। अपने पुण्य पापके अनुकूल जे विषय मिले हैं तिनमैं संतोष धारणकरि अन्यके धनमैं स्वप्नहूमैं वांछा मति करो। परका धन पुण्य विना आवनेका हू नाहीं। पूर्व जन्ममें कुपात्र दान किया कुतप किया तातैं परका धन हाथ लगि जाय तो हू के दिन भोगैगा महासंक्लेशतैं अल्पआयु भोग दुर्गतिनमैं जाय प्राप्त होयगा। यातैं चोरीकाहू दूरहीतैं त्याग करना श्रेष्ठ है। जिनके परधनमैं इच्छा नाहीं है। अपना पुण्यपापके अनुकूल मिल्या तिसमें संतोष धारणकरि अन्यायका धनमैं कदाचित् चित्त नाहीं चलावैं हैं तिनका इसलोकमैं हू जश है प्रतीत है समस्तमें आदर होय है। जाका परिणाम परधनमें नाहीं अपने उपार्जन कियाहीमैं मंदरागी है तिनके एकहू क्लेश नाहीं आवे अशुभकर्मका बंध नाहीं होय है समस्त जगत अपना धन दीजे है परलोकमैं देवलोककी अपरिमाणविभूति असंख्यात कालपर्यंत भोगि मनुष्यानिमें राजाधिराज मंडलेश्वर चक्रवर्तीनिका विभव भोगि क्रमतैं निर्वाणकूं प्राप्त होय है। यातैं भगवानवीतरागका धर्म धारण करि अन्यायका धनका त्याग करि रहना ही श्रेष्ठ है॥ अब कुशीलके दोषनिकी भावना चिंतवनकरि विरक्त हो जाना योग्य है। कुशील-पुरुष है सो कामका मदकरि उन्मत्त हुआ मदोन्मत्तहस्तीकी ज्यों विचरै है। स्त्रीनिके रागकरि ठिग्या

हुवा दोऊं लोकका विचाररहित कार्य अकार्यकूं नाहीं जानै है। भक्ष्यअभक्ष्य योग्यअयोग्यका विचार रहित होय है। पापपुण्यकूं नाहीं देखै है। प्रत्यक्ष आपदा अपयश होता दीखै है तो हू कामकी अँधेरीतैं नाहीं देखै है। कामसारसी दूजी अँधेरी त्रैलोकमें नाहीं है। कामकरि आच्छादित मनुष्य पर्यायमें हू पशुसमान है। पशुमें अर कामांधमैं भेद नाहीं है। कामकरि अंध हुआ वनादिकमें तिर्यंच कटि कटि मरिजाय है। मनुष्य जन्ममैं हू मरि जाय है अर मार ले है। कामांधके धर्म अधर्मका विचार नाहीं रहै है। लोकलाज मूलतैं नष्ट हो जाय है। परस्त्री लंपटानिकूं अनेक ओछे आदमी मार लेवैं हैं। राजादिकनिकरि लिंगच्छेदन सर्वस्वहरणादि दंडनिकूं प्राप्त होय है मरिकरि नरकादि दुर्गतिनमें परिभ्रमणकरि तिर्यंचमनुष्यनिमें घोर दुःख भोगता नीच चांडाल चमार धीवरनिमें महादरिद्री महाकुरूप कोढी अंगहीन आंधो लूलो पागलो कूबड़ो इत्यादि नीच मनुष्यनिमें उपजिकरि नरक बहुरि तिर्यंच बहुरि कुमानुष नपुंसकादि भवनिमें दुःख भोगै है। तातैं कुशीलका त्याग ही श्रेष्ठ है। बहुरि शीलवंत पुरुष स्वर्गलोकमें कोट्यां अपछराने सेव्यमान हुवा असंख्यात कालपर्यंत भोग भोगता मनुष्यनिमें प्रधान मनुष्य होय अनुक्रमतैं मोक्षका पात्र होय है। अब परिग्रहकी ममताका दोष चिंतवन करि परिग्रहतैं विरागी होना श्रेष्ठ है। परिग्रहकी ममता समस्त पंच पापनिमें प्रवृत्ति करावै है। परिग्रहकरि तृप्तिता नाहीं आवै है। जैसे इंधन करि अग्नि बधे है तैसे तृष्णारूप अग्निकरि निरंतर बधै है। अर परिग्रहके उपार्जनमें रक्षणमैं अर नाशमैं महान दुखित होय है। परिग्रहकी ममताका धारक धर्म अधर्मका जीवनमरणका विचाररहित होय है। परिग्रहकी ममता हिंसा असत्य चोरी कुशील अभक्ष्य बहुआरंभ कलह वैर ईर्षा भय शोक संताप इत्यादिक हजारां दोषनिमें प्रवृत्ति करावै है। संसारमें जेता बंधन अर पराधीनता अर कषाय अर दुःख है तितना परिग्रहतैं है अर परिग्रहका त्यागना है सो बडा भारका उतारना है। परिग्रहका त्यागी निर्बंध है। परिग्रहत्यागका फल स्वर्गमुक्ति है यातैं परिग्रहका त्याग ही समस्तकल्या-

णका मूल है ऐसैं हिंसाअसत्यचोरीकुशीलपरिग्रहनिमैं दोष हैं। तिनकी भावना भावनी। बहुरि ये पांच पाप दुःख ही हैं ऐसी भावना राखना हिंसादिक दुःखका कारण हैं तातैं हिंसादिक पंच पाप हैं ते दुःखही हैं। हिंसादिक दुःखका कारणनिमैं कार्यका उपचार किया है तातैं पंच पापनिकूं दुःखही कह्या है। जैसैं बध बंधन पीडन मोकूं अप्रिय हैं तैसैं ही समस्त अन्य प्राणीनिकूं हू अप्रिय हैं जैसैं झूठ कटुक कठोर वचन मोकूं कोऊ कहै ताके श्रवणकरनेतैं हमारे अतितीव्र दुःख उपजै है तैसैं अन्यजीवनिके हू कटुकवचन असत्यवचन दुःख उपजावैं है जैसैं मेरा इष्टद्रव्यकूं कोऊ चोर लैजाय तो मेरे महाःदुःख होय है तैसैं अन्यजीवनिके हू धन हरनेका दुःख होय है जैसैं हमारी स्त्रीका कोऊ तिरस्कार करै तिसकरि हमारे तीव्र मानसीक पीडा होय है तैसैं अन्यजीवनके हू अपनी माता बहण पुत्री स्त्रीके व्यभिचारकूं श्रवणकरि देखनेकरि अतिदुःख होय है। जैसैं धनधान्य वस्त्रादिक नाहीं मिलनेतै तथा प्राप्त हुवा ताकूं नष्ट होनेतैं वांछारक्षाशोकभयकरि अपने दुखितपना होय है तैसैं परिग्रहकी वांछातैं तथा परिग्रहके नष्ट होनेतैं समस्तजीवनिकै दुःख होय है। तातैं हिंसादिकपापनितैं विरक्त होना ही जीवका कल्याण है। यहां कोऊ कहै कोमल अंगकी धारक स्त्रीनिके अंगके स्पर्शनतैं रतिसुख उपजता देखिये है दुःखरूप कैसैं कह्या ताका उत्तर—इंद्रियनिका विषयनितै उपज्या सुख नाहीं है भ्रांतितैं सुखरूप दीखै है पहली विषयनिकी चाहरूप महावेदना उपजै है वेदना उपजै तब ताके दूरि करनेकों चाहै जैसै देहमैं चाम मांस रुधिर है ते जब विकारतैं कलुषपणाने प्राप्त होजांय तब खाजि उत्कटताकूं प्राप्त होइ तब नखनितै ठीकरीतैं पत्थरतै अपना शरीरकूं खुजावै है। गात्रकूं छेदने रगडनेतै रुधिरकरि लिप्त हुआ हू अत्यंत खुजाय करि दुःखहीकूं सुख मानै है तैसैं मैथुनका सेवनवारा हू मोहतैं दुःखहीकूं सुख मानै है तथा मनुष्य तिर्यंच असुर सुरेंद्रादिक समस्त ही जीव अपने देहकी साथि उपजी इंद्रियां तिनकरि उपज्या जो विषयनिकी चाह रूप आताप ताका दुःख सहनेकूं असमर्थ भया महा निंद्य विषयनिमैं अति लालसा करि झंपापात लेवै

है। अग्निकरि तप्तायमान लोहेका गोलाकी ज्यों इंद्रियनिका ताप करि तप्तायमान जो आत्मा ताके विषयनिमें अति तृष्णातें उपज्या अति दुःखरूप वेगके सहनेकूं असमर्थ भया विषयनिमें पडे है। जैसें कोऊ पुरुष च्यारों तरफ अग्निकी ज्वालातें बलता अग्निके आतापकूं नाहीं सहि सकता विष्ठाका भर्‍या महा दुर्गंध अति ऊंडा खाडामें जाय पडे है तिस विष्ठामें मस्तकपर्यंत डूबि ताकूं ही तापरहित सुखमानि मरण करे है। तैसें ही संसारी जीव स्पर्शन इंद्रियनिका विषयकी चाहरूप आतापके सहनेकूं असमर्थ हुवा स्रीनिका दुर्गंध मलीन देहमें डूबि कामकी आतापरहित सुख मानता अति तृष्णातें उपज्या तीव्र दुःखकूं भोगता मरण करि संसारमें नष्ट होजाय है।

तथा इस जीवके ये इंद्रियां तो आतापदुःख करनेवाली महा व्याधि हैं अर ये विषय हैं ते किंचित् काल दाहकी उपशमताका कारण विपरीत अपथ्य औषध हैं। जिनकरि विषयनिकी चाहरूप दाह बधता चल्या जाय है घटै नाहीं है भ्रमतें इलाज मानै है जिनके इंद्रियां जीवती तिष्ठे हैं तिनके स्वाभाविक ही दुःख है, दुःख नाहीं होय तो विषयनिमें उछालि उछालि कैसें पडें सो देखिये ही है कपटकी हथिनीका शरीरका स्पर्शके अर्थि वनका हस्ती स्पर्शन इंद्रियकी आताप करि खाडामें पडि घोर बंधनकूं भोगै है। बहुरि जलका चंचल मछली रसना इंद्रियके वसि होय धीवर करि पसार्‍या कांटामें फसिकारि प्राणरहित होय है। घ्राण इंद्रियका आतापका मार्‍या भ्रमर है सो संकोचके सन्मुख कमलका गंधकूं ग्रहण करता कमलमें प्राणरहित होय है। नेत्रइंद्रियजनित संतापकूं नाहीं सहि सकता पतंग जीवरूपका लोभी दीपककी ज्वालामें भस्म होय है। कर्णइंद्रियजनित श्रवण करनेकी तृष्णाका आतापकूं नाहीं सहनेकूं समर्थ ऐसा हिरण सिकारीकरि गाया रागमें अचेत होय मार्‍या जाय है। ऐसें दुर्निवार इंद्रियनिकी वेदनाके वश पडे जीव ते निकट ही है मरण जिनमें ऐसे विषयनिविषे यतन करे हैं। इंद्रियजनित आतापतुल्य त्रैलोक्यमें आताप नाहीं है जैसें इंद्रियनिका विषयनिकी चाहका आताप है तैसा आताप अग्निमें नाहीं है

शस्त्रका नाहीं हैं विषका नाहीं है इंद्रियनिका आताप सहनेकूं असमर्थ भये विषयनिके अर्थि अग्निमें बलै हैं शस्त्रनिके सन्मुख होय मरैं हैं विषभक्षण करैं है धर्मकूं लोपैं हैं माता पिता गुरु उपाध्यायकूं विषयनिका रोकनेवाला जाणि मारि डारैं हैं। इस संसारमैं इंद्रियनितैं केवल दुःखही है जिनकैं इंद्रियरहित अतींद्रिय केवलज्ञान है तिनहीके निराकुलता लिये ज्ञानानन्द सुख है यातैं जे इंद्रियांके आधीन हैं ताकैं स्वाभाविक दुःखही है जो स्वाभाविक दुःख नाहीं होय तो विषयनिमैं प्रवृत्ति कैसैं करै जाकै शीतज्वर मिटि गया सो अग्नितैं तापना नाहीं चाहैगा जाकै दाहज्वर मिटिगया सो कांज्याका सींचना नाहीं चाहैगा जाकैं नेत्ररोग मिटिगया सो खपरचा अंजनादिक नेत्रनिमैं डारचा नाहीं चाहैगा जाकै कर्णका शूल मिटि गया सो कर्णमैं बकराका मूत्रादिक नाहीं डारैगा जाकैं व्रणघाव मिटिगया सो मालिम पट्टी नाहीं करैगा तैसे हू जाके इंद्रियजनित वेदना नाहीं ताके विषयनिमैं प्रवृत्ति कदाचित् नाहीं होयगी क्षुधावेदना विना भोजन कौन करै तृषावेदना विना जल कौन पीवै गरमीकी बाधा विना शीतल पवन कौन चाहै शीतकी बाधा विना रुईकरिभरचा वस्त्र तथा रोमका वस्त्र कौन ओढै। तातैं ए समस्त विषय वेदनाके इलाजके हैं इनि विषयनितैं किंचित् काल वेदना घटि जाय ताकूं अज्ञानी सुख मानैं हैं सो सुख वास्तवमैं सुख नाहीं है सुख तो यो है जहां वेदना नाहीं उपजै है अनाकुलतालक्षण स्वाधीन अनन्त ज्ञान है सो ही सुख है अन्य नाहीं है ऐसैं निश्चय जानहु। ऐसैं हिंसादिकनिकूं दुःखरूप ही चिंतवन करनेकी भावना भायबो योग्य है। अब श्रावककूं मैत्र्यादिक च्यारि भावना भावने योग्य हैं तिनकूं कहै हैं— एकेंद्रियादिक समस्त प्राणीविषै मैत्रीभावना भावै जो कोऊ प्राणीनिकै दुःखकी उत्पत्ति मति होहु ऐसा अभिलाष रखना सो मैत्री भावना है। अर जे सम्यग्दर्शन ज्ञान चरित्र तप इत्यादिकनिकरि अधिक होय तिनमैं प्रमोद भावना करना। प्रमोद नाम हर्षका आनंदका है सो गुणनिकरि आधिककूं देखि परिणाममैं ऐसा हर्ष उपजै जैसे जन्म दरिद्री निधानकूं पाय हर्ष करै। गुणवंतनिकूं देखत प्रमाण हर्षका

रोमांच होना तथा मुखकी प्रसन्नता करि नेत्रानिका प्रफुल्लित होना हृदयमें आल्हादन स्तुतिभाषण नाम-कीर्तनादि करि अंतर्गत भक्तिका प्रगट करना सो प्रमोद भावना है। बहुरि असातावेदनीकर्मका उदय-करि रोग दारिद्रादिकरि पीडित जे क्लेशसहित प्राणी तथा इंद्रियनिकरि विकल आंधा बहिरा लूला तथा अनाथ विदेशी तथा अति वृद्ध बाल तथा विधवा इत्यादिक दुःखित प्राणीनिके दुःख मेटनेका अभिप्राय सो कारुण्य भावना है। बहुरि जे धर्मरहित तीव्रकषायी हठग्राही उपदेश देनेके अयोग्य विपरीतज्ञानी धर्मद्रोही दुष्ट अभिप्रायी निर्दयी तिनविषै रागद्वेषका अभावरूप माध्यस्थ भावना करना। भावार्थ—समस्त प्राणीनिके दुःखका अभाव चाहना सो मैत्री भावना है। बहुरि गुणनिकरि अधिक होय तिन पुरुषनिकूं देखि करि श्रवण करि महान् हर्षका उपजना सो प्रमोद भावना है। दुःखित देखि उपकार बुद्धिका उपजना सो कारुण्य भावना है बहुरि हठग्राही निर्दयी अभिमानीनिमैं रागद्वेषरहित रहना सो माध्यस्थ भावना है। ऐसैं धर्मके धारक श्रावकनिकूं मैत्र्यादि च्यारि भावना भावना योग्य हैं। बहुरि गृहस्थनिकूं जगतका स्वभाव अर कायका स्वभाव हू चिंतवन करना योग्य है जगतका स्वभाव चिंतवन करनेतैं संसार परिभ्रमणका भय उपजे है अर देहका स्वरूप चिंतवन करनेतैं रागभावका अभाव होय है। यो जगत कहिये लोक है सो अनादि निधन है अर्द्धमृदंग ऊपरि एक मृदंग धरिये ऐसा ओड मृदंगकासा आकार है चौदह राजू ऊंचा है दक्षिण उत्तर सर्वत्र सात राजू चौडा है अर पूर्व पश्चिम नीचै सात राजू है ऊपरि क्रमतैं घटता-घटता सात राजू ऊंचा जाय एक राजू चौडा रह्या है फेरि उपरि क्रमतैं बधता बधता साढा तीन राजू ऊंचा गया तहां पांच राजू चौडा है फिर क्रमतैं घट्या है सो साढा तीन राजू ऊंचा गया लोकका अंतमैं एक राजू चौडा है ऐसे पूर्व पश्चिम क्रमतैं घटती बढती उंचाई जाननी। ऐसे आकारका धारक लोकका एक राजू चौडा एकराजू लंबा एक राजू ऊंचा विभाग कल्पना करिये तो तीनसैतियालीस खंड होय हैं इस लोकरूप क्षेत्रमैं अनंतानंतकाल परिभ्रमणकरते व्यतीत भयो सो ऐसा कोऊ पुद्गल नाहीं रह्या जो

शरीरादिकरूप नाहीं धारण किया अर तीनसेतियालीस राजू प्रमाण क्षेत्रमें ऐसा कोऊ एकप्रदेश हू बाकी नाहीं रह्या जहां अनंतानंतवार इस जीवने जन्म नाहीं धरया अर मरण नाहीं किया। अर उत्सर्पिणी, अवसर्पिणी कालका वीस कोडाकोडी सागरमें ऐसा कोऊ एक कालका समय हू नाहीं रह्या जिसमें यो जीव जन्ममरण नाहीं किया। अर नरक तिर्यंच मनुष्य देव इन चार गतिनिमें जघन्य आयु कूं लेय उत्कृष्ट आयुपर्यंत समयोत्तर ऐसा कोऊ पर्याय बाकी नाहीं रह्या जाकूं अनंतबार नाहीं पाया। बहुरि ज्ञानावरणादिक समस्तकर्मनिकी मिथ्यादृष्टिके बंध होने योग्य जघन्यस्थिति तो अंतःकोटाकोटि सागर परिमाण है अर उत्कृष्ट स्थिति ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अंतराय इन चार कर्मनिकी तीस कोटाकोटी सागरकी है अर मोहनीयकर्मकी उत्कृष्टस्थिति सत्तर कोटाकोटी सागर प्रमाण है अर नामकर्म अर गोत्रकर्मकी उत्कृष्टस्थिति वीस कोटाकोटी सागर प्रमाण है अर आयुकर्मकी उत्कृष्ट स्थिति तेतीससागरकी है। सो जघन्य स्थितिकूं आदि लेय समयसमयकरि उत्कृष्टस्थितिवृद्धि पर्यंत जो कर्मनिकी स्थिति है तिन समस्त स्थितिनके एक स्थानकूं असंख्यातलोक प्रमाण कषायनिके स्थान कारण हैं ते कषायनिके एकएक स्थान अनंतबार संसारी जीवके भये हैं तातैं ऐसा परिभ्रमणरूप जगतमें जीव है ते नानाभेदरूप चतुर्गतिमें परिभ्रमण करता निरंतर दुःख भोगै है। कोउ जीव निश्चल नाहीं है जलका बुदबुदातुल्य जीवन अथिर है अर भोगसंपदा मेघपटलवत् विनाशीक है राज्य धन संपदा इंद्रधनुषवत् क्षणभंगुर है इससंसारमें प्राणी अनंतानंत परिवर्तन करै हैं ऐसैं संसारका सत्यार्थस्वरूप चिंतवन करनेतैं संसारपरिभ्रमणतैं भय उपजै है। बहुरि कायका चिंतवन करिये है यो मनुष्य शरीर है सो रोगरूपसर्पनिको बिल है अनित्य है दुःखका कारण है अपवित्र निःसार है कोटि यत्न करते करते हू विनसि जाय है यो शरीर धोवते धोवते मैलकूं निरंतर उगलै है सुगंध अत्तर फुलेल लगाते लगाते दुर्गंध वमै है पोषते पोषते बल नाहीं धारै है सुखतैं राखतेराखते हू अपना नाहीं होय है भूषित करतेकरते विडरूप

दिन दिन होय है सुधारतांसुधारतां दिनदिन भयानकता धारै है सुख देतांदेतां दुःखी हुआ जाय है मंत्रते मंत्रते निरंतर रहै है दीक्षारूप होतांहोतां हू साधुनिका मार्गकूं दूषित करै है शिक्षा देतेदेते गुणिनिमैं नाहीं रमै है दुःख भोगते भोगते हू कषायनिका उपशमभावकूं प्राप्त नाहीं होय है रोकते रोकते हू पापहीमैं प्रवर्तन करै है प्रेरणा करते करते हू धर्मकूं नाहीं धारण करै है मर्दन करते करते हू दिनदिन कठोरकर्कश होता जाय है रूक्ष करते करते आमकूं धारै है तैलादिक रमावते रमावते हू वासकूं प्राप्त होय है चंदनादिकतैं सींचतेसींचते हू पित्तकरि जलै है सोपण करते करते हू कफकूं गलै है पूंछतांपूंछतां कोढादिक रोगतैं मिलै है चामडाकरि बंध्या है तो हू क्षीण होता चल्याजाय है रक्षा करते करते हू कालका मुखमैं प्रवेश करै है। शरीरका ऐसा निंद्य स्वभाव चिंतवन करनेतैं शरीरमैं राग भाव नष्ट होय जाय है यातैं जगतका स्वभाव अर कायका स्वभाव संवेग जो संसारतैं भय अर वैराग्यके अर्थि चिंतवन करना श्रेष्ठ है। बहुरि षोडश कारण भावना हू श्रावकके भावने योग्य हैं षोडशकारण भावनाका फल तीर्थंकरपना है इसहीकरि तीर्थंकरप्रकृतिका बंध अव्रती सम्यग्दृष्टिहूकै होय अर देशव्रतीश्रावकहूकै होय अर प्रमत्तसंयत अप्रमत्तसंयत हूकै होय है सर्वोत्कृष्टपुण्यप्रकृति तीर्थंकर प्रकृति है इसतैं अधिक पुण्यप्रकृति त्रैलोक्यमें नाहीं है। उक्तं च गोमट्टसारे कर्मकांडे—

पढमुवसमिये सम्मे सेसातिये अविरदादिचत्तारि। तित्थयरबंधपारम्भया णरा केवलिदुगंते ॥ ९३ ॥

अर्थ—तीर्थंकरप्रकृतिके बंधका आरम्भ कर्मभूमिका मनुष्य पुरुषलिंगधारीहीकै होय है अन्य तीन गतिमैं आरम्भ नाहीं होय अर केवली तथा श्रुतकेवलीके चरणारविंदकै समीपही होय केवली श्रुतकेवली का निकटविना तीर्थंकरप्रकृतिका बंधके योग्य भावानकी विशुद्धता नाहीं होय है अर तीर्थंकरप्रकृतिका बन्ध प्रथमोपशमसम्यक्त्वमैं होय तथा शेषत्रिक जो द्वितीयोपशम तथा क्षयोपशम तथा क्षायिक इन चारसम्यक्त्वमैं कोऊ एकमैं होय है इस तीर्थंकरप्रकृतिबंधके कारण षोडशकारण भावना हैं ये भावना

समस्तपापका क्षय करनेवाली भावनिके मलकूं विध्वंस करनेवाली श्रवणपठनकरते संसारके बंध छेदनेवाली निरंतर भावनेयोग्य हैं। अब यहां षोडशभावनाकी षोडश जयमाला पढि महान पुण्य उपार्जन करिये है तिनहीका अर्थकूं भावनिकी विशुद्धता अर अशुभभावनिका नाशके अर्थि लिखिए है।

अथ समुच्चयजयमालका अर्थ प्रथमही लिखिए है—हे संसारसमुद्रतैं तारनेवाला, हे कुमतिकूं निवारण करनेवाला, हे तीर्थंकरत्वलब्धिकूं धारण करनेवाला, हे शिव जो निर्वाणका कारण, हे षोडशकारण! मैं तिहारेताईं नमस्कारकरके तेरा स्तवन करूं हूं अर मेरी शक्तिकूं प्रगट करूं हूं। भावार्थ—षोडशकारण भावना जाकै होजाय सो नियमसूं तीर्थंकर होय जाय संसारसमुद्रकूं तिरै ही ऐसा नियम है। बहुरि षोडशकारण भावना जाकै होय ताकै कुगति नाहीं होय केई तो विदेहक्षेत्रनिविषै गृहचारामैं षोडशकारण भावना केवलीके अथवा श्रुतकेवलीके निकट भाय उसी भवमैं तपकल्याण ज्ञानकल्याण निर्वाणकल्याण देवनिकरि पाय निर्वाणकूं प्राप्त होय हैं। अर केई पूर्वजन्ममैं केवली श्रुतकेवलीके निकट भावना भाय सौधर्मस्वर्गकूं आदि लेय सर्वार्थसिद्धि अहमिंद्रपर्यंत उपजिकरि फिर तीर्थंकर होय निर्वाण पावै हैं। केई पूर्वजन्ममैं मिथ्यात्वके परिणाममैं नरकका आयु बन्ध किया फिर केवली श्रुतकेवलीका शरण पाय सम्यक्त्व ग्रहणकरि षोडशकारण भावना भाय नरक जाय नरकतैं निकसि तीर्थंकर होय निर्वाणकूं प्राप्त होय हैं। पूर्वजन्ममैं षोडशकारण भावनाकरि तीर्थंकरप्रकृति बांधे है ताकै पंच कल्याणकी महिमा होय है अर जो विदेहनिमैं गृहस्थपनामैं तीर्थंकरप्रकृति बांधे सो उसही भवमैं तप ज्ञान निर्वाण तीन कल्याणनिमैं इन्द्रादिककरि पूजन पाय निर्वाणकूं प्राप्त होय है। केई विदेहक्षेत्रनिमैं मुनिके व्रत धर्यां पाछैं केवलीके निकट षोडशकारण भावना भाय उसीभवमैं तीर्थंकर होय ज्ञान निर्वाण कल्याण दोयकल्याणकी पूजाकूं प्राप्त होय हैं। तप कल्याण ताकै पहले ही भया तातैं नाहीं होय है। जाकै तीर्थंकरप्रकृतिका बंध होय जाय सो भवनत्रिक देवनिमैं अन्य मनुष्य तिर्यंचनिमैं भोगभूमिमैं स्त्री नपुंसक एकेन्द्रिय विकल

चतुष्कादि पर्यायनिमैं नाहीं उपजै है अर तीसरी पृथ्वीतैं नीचे नाहीं उपजै है याहीतैं षोडशकारण भावना कुमतिका निवारण करनेवाली है। बहुरि षोडशकारण भावना हुआ पाछैं तीजे भव निर्वाण होय ही तातैं शिवका कारण है अर तीर्थकरत्वऋद्धि षोडशकारणतैंही उपजै है तातैं हे षोडशकारणभावना मैं तनै नमस्कारकरि थारो स्तवन करूं हूं। हे भव्यजीवो इस दुर्लभ मनुष्यजन्ममैं पच्चीस दोषरहित दर्शन विशुद्धता नाम भावना भावहू। सम्यग्दर्शनके नष्ट करनेवाले दोषानिकूं त्यागना सो ही सम्यग्दर्शनकी उज्वलता है। तीनमूढता, अष्टमद, छह अनायतन शंकादि अष्ट दोष ये सत्यार्थ श्रद्धानकूं मलीनकरनेवाले पच्चीस दोष हैं तिनका दूरहीतैं त्याग करो। बहुरि चारप्रकारका विनय जैसैं भगवानका परमागममैं कह्या तैसैं दर्शन विनय, ज्ञान विनय, चारित्र विनय, उपचार विनय ये चारप्रकार विनय जिनशासनका मूल भगवान जिनेंद्र कह्या है। जहां चारप्रकार विनय नाहीं है तहां जिनेंद्रधर्मकी प्रवृत्ति हो नाहीं तातैं जिनशासनका मूल विनयरूप ही रहना योग्य है। बहुरि अतीचाररहित शीलकूं पालहू शीलकूं मलीन नाहीं करना सो उज्वलशील मोक्षके मार्गमैं बडा सहाई है जाके उज्वलशील है ताके इंद्रिय विषय कषाय परिग्रहादिक मोक्षमार्गमैं विघ्न नाहीं कर सकै हैं। इस दुर्लभ मनुष्यजन्मविषै क्षणक्षणमैं ज्ञानोपयोगरूप ही रहो सम्यग्ज्ञानविना एकक्षण हू व्यतीत मति करो अन्य जे संकल्प विकल्प संसारमैं डबोवनेवाले हैं दूरहीतैं परित्याग करो। बहुरि धर्मानुराग करि संसार देह भोगनितैं विरागता रूप संवेग भावना मनके मांहि चिंतवन करते रहो जातैं समस्तविषयनिमैं अनुरागका अभाव होय धर्ममैं अर धर्मका फलमैं अनुरागरूप प्रवर्तन दृढ होय। बहुरि अंतरंगमैं आत्माके घातक लोभादिक चार कषायनिका अभाव करि अपनी शक्तिप्रमाण सुपात्रनिके रत्नत्रयगुणमैं अनुराग करि आहारादिक चार प्रकारका दानमैं प्रवृत्ति करो। बहुरि दोयप्रकार अंतरंग बहिरंग परिग्रहमैं आशक्तता छांडि समस्तविषयनिकी इच्छाका अभाव करि अतिशयकरि दुर्धर तपकूं शक्तिप्रमाण अंगीकार करो। बहुरि चित्तके विषै रागादिकदोषनिका

निराकरणकरि परमवीतरागतारूप साधुसमाधि धारण करो। बहुरि संसारके दुःख आपदाका निराकरण करनेवाला वैयावृत्य दशप्रकार करहू। बहुरि अरहंतके गुणानिमें अनुरागरूप भक्तिकूं धारण करता अरहंतके नामादिकका ध्यान करि अरहंतभक्तिकूं धारण करो। बहुरि पंचप्रकार आचारकूं आप आचरण करावे अर दीक्षा शिक्षा देनेमें निपुण धर्मके स्थंभ ऐसे आचार्यपरमेष्ठीके गुणानिमें अनुराग धारना सो आचार्यभक्ति है। बहुरि ज्ञानमें प्रवृत्ति करावनेवाले निरंतर सम्यग्ज्ञानका पठन आप करैं अन्य शिष्यनिकूं पढावनेमें उद्यमी चारि अनुयोगविद्याके पारगामी वा अंगपूर्वादि श्रुतके धारक उपाध्याय परमेष्ठीमें जो बहुभक्ति धारण करना सो बहुश्रुतभक्ति नाम भावना है।

बहुरि जिनशासनका पुष्ट करनेवाला अर संशयादिक अंधकार दूर करनेकूं सूर्यसमान जो भगवानका अनेकांतरूप आगम ताके पठनमें श्रवणमें प्रवर्तनमें चिंतवन भक्तिकरि प्रवर्तन करना सो प्रवचनभक्ति भावना भावहू। बहुरि अवश्य करनेयोग्य षट् आवश्यक हैं ते अशुभकर्मके आस्रवकूं रोकि महान निर्जरा करनेवाले हैं अशरणानिकूं शरण हैं ऐसे आवश्यकनिकूं एकाग्रचित्तकरि धारहू इनकी भावना निरंतर भावहू बहुरि जिनमार्गकी प्रभावनामें नित्य प्रवर्तन करो जिनमार्गकी प्रभावना धन्यपुरुषनिकरि प्रवर्तें हैं। अनेकपुरुषनिकी वीतरागधर्ममें प्रवृत्ति अर कुमार्गका अभाव प्रभावना करके ही होय है। बहुरि धर्ममें धर्मात्मा पुरुषानिमें तथा धर्मके आयतनमें परमागमके अनेकांतरूप वाक्यानिमें परम प्रीति करना सो वात्सल्य भावना है यो वात्सल्य अंग है सो समस्तअंगानिमें प्रधान है दुर्द्धर मोह तथा मानका नाश करनेवाला है ऐसें निर्वाणके सुखकी देनेवाली ये षोडशकारण भावनानिकूं जो भव्य स्थिरचित्तकरि भावै है चिंतन करै है जाके आत्मामें रचिजाय है सो समस्त जीवनिका हितरूप तीर्थंकरपनो पाय पंचमगति जो निर्वाण ताहि प्राप्त होय है। ऐसें षोडशकारणकी समुच्चयरूप भावना समाप्त करी। अब दर्शनविशुद्धि नाम प्रथम अंगकी भावना वर्णन करिये है। हे भव्यजीव हो जो यो मनुष्यजन्म पाय याकूं सुफल किया

चाहो हो तो सम्यग्दर्शनकी विशुद्धता करहू। यो सम्यग्दर्शन समस्त धर्मका मूल है सम्यक्त्व विना श्रावकधर्म हू नाहीं होय मुनिधर्म हू नाहीं होय सम्यग्दर्शनविना ज्ञान है सो कुज्ञान है चारित्र कुचारित्र है तप है सो कुतप है। सम्यग्दर्शन विना यो जीव अनंतानंतकाल परिभ्रमण किया है अब जो चतुर्गति संसारपरिभ्रमणसूं भयवान हो अर जन्मजरामरणतैं छूट्या चाहो हो अर अनंत अविनाशी सुखमय आत्मा कूं इच्छो हो तो अन्य समस्त परद्रव्यनिमें अभिलषा छांडि सम्यग्दर्शनहीकी उज्जलता करहू। कैसीक है दर्शनविशुद्धता निर्वाणके सुखकी कारण है दुर्गतिका निराकरण करनेवाली है विनयसंपन्नतादिक पंद्रहकारणनिका मूलकारण है दर्शनविशुद्धता नाहीं होय तो अन्य पंद्रहभावना नाहीं होय हैं यातैं संसारका दुःखरूप अंधकारके नाश करनेकू सूर्यसमान है भव्यनिकूं परम शरण है ऐसी दर्शनविशुद्धता नाम भावना भावहु। जैसैं स्वपरद्रव्यका भेदविज्ञान उज्जल होय तैसैं यत्न करहू। यो जीव अनादिकालको मिथ्यात्वनाम कर्मके वशि होय आपका स्वरूपकी अर परकी पहिचान ही नाहीं करी जैसैं पर्याय-कर्मके उदयतैं पर्याय पावै तैसी पर्यायकूं ही अपना स्वरूप जानता अपना सत्यार्थरूपका ज्ञानमें अंध होय आपके स्वरूपतैं भ्रष्ट हुआ चतुर्गतिमें भ्रमण करै है देवकूं जानै नाहीं धर्मकुधर्मकू जानै नाहीं सुगुरु कुगुरुकूं जानै नाहीं। बहुरि पुण्यका पापका, इसलोकका परलोकका, त्यागनेयोग्य ग्रहणकरनेयोग्य, भक्ष्यअभक्ष्यका, सत्संगका कुसंगका, शास्त्रका कुशास्त्रका विचाररहित कर्मका उदयके रसमें एकरूप भया अपना हित अहितकूं नाहीं पहिचानता परद्रव्यनिमें लालसारूप होय सदाकाल क्लेशित होय रह्या है कोऊ अकस्मात् काललब्धिके प्रभावतैं उत्तमकुलादिकमें जिनेंद्रधर्म पाया है यातैं वीतरागसर्वज्ञका अनेकांतरूप परमागमके प्रसादतैं प्रमाणनयनिक्षेपनितैं निर्णयकरि परीक्षाका प्रधानी होय वीतरागी सम्यग्ज्ञानी गुरुनिके प्रसादतैं ऐसा निश्चय भया जो एक जाननेवाला ज्ञायकरूप अविनाशी अखंड चेतना लक्षण देहादिक समस्तपरद्रव्यनितैं भिन्न मैं आत्मा हूं देह जाति कुल रूप नाम इत्यादिक मोतैं अत्यंत

भिन्न हैं अर राग द्वेष काम क्रोध मद लोभादिक कर्मके उदयतैं उपजे मेरे ज्ञायकस्वभावमैं विकार हैं जैसैं स्फटिकमणि तो आप स्वच्छ श्वेतस्वभाव है तिसमैं डागके संसर्गतैं काला पीला हरा लाल अनेक रंगरूपके दीखे हैं तैसैं मैं आत्मा स्वच्छ ज्ञायकभाव हूं निर्विकार टंकोत्कीर्ण हूं मोहकर्मजनित राग द्वेषादिक यामैं झलकैं हैं ते मेरे रूप नाहीं पर हैं ऐसैं तो अपने स्वरूपका निश्चय हुवा। बहुरि सर्वज्ञ वीतराग परम हितोपदेशक अर क्षुधा तृषा जन्म जरा मरण राग शोक भय विस्मय राग द्वेष निद्रा स्वेद मद मोह चिंता खेद अरति इन अष्टादशदोषनिका अत्यंत अभाव जाके भया अर अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुख इत्यादिक अनंत आत्मीक अविनाशीगुण जाकै प्रगट भए सो ही आप्त हमारे वंदन स्तवन पूजन करने योग्य है। अन्य कामी क्रोधी लोभी मोही स्त्रीनिमैं आशक्त शस्त्रादिक ग्रहण किए कर्मके आधीन इंद्रियज्ञानके धारक सर्वज्ञतारहित हैं सो मेरे वंदन स्तवन पूजने योग्य नाहीं। जो चोरनिमैं शिरोमणि अर जारनिमैं शिरोमणि है सो कैसैं आराधने योग्य होय। बहुरि सर्वज्ञवीतरागका उपदेश्या अर प्रत्यक्ष अनुमानादिकरि जामैं सर्वथा बाधा नाहीं आवै अर समस्त छहकायके जीवनिकी हिंसारहित धर्मका उपदेशक आत्माका उद्धारके अनेकांतरूप वस्तुकूं साक्षात् प्रगट करनेवाला ही आगम है सो पढने पढावने श्रवण करने श्रद्धान करने वंदने योग्य है। अर जे रागी द्वेषीनिकरि प्ररूपणकिये अर विषयानुराग अर कषायके बधावनेवारे जिनमैं हिंसाके करनेका उपदेश है ऐसे प्रत्यक्ष अनुमानकरि बाधित एकांतरूप शास्त्र श्रवणपढनेयोग्य नाहीं वंदनायोग्य नाहीं है। बहुरि विषयनिकी वांछाका अर कषायका अर आरम्भपरिग्रहका जाकै अत्यंत अभाव भया, केवल आत्माकी उज्जलता करनेमैं उद्यमी, ध्यान स्वाध्यायमैं अत्यंत लीन, स्वाधीन कर्मबंधजनित दुःख सुखमैं साम्यभावके धारक, जीवन मरण लाभ अलाभ स्तवननिंदनेमैं रागद्वेषरहित उपसर्गपरीषहनिके सहनेमैं अकम्प धैर्यके धारक परमनिरग्रंथ दिगम्बर गुरु ही वंदन स्तवन करनेयोग्य हैं अन्य आरम्भी कषायी विषयानुरागी कुगुरु कदाचित् स्तवन वंदन करने

योग्य नाहीं है। बहुरि जीवदया ही धर्म है हिंसा कदाचित् धर्म नाहीं जो कदाचित् सूर्यका उदय पाश्चिमदिशामैं होजाय अर अग्नि शीतल होजाय अर सर्पका मुखमैं अमृत होजाय अर मेरु चालि जाय अर पृथ्वी उलटपलट होजाय तो हू हिंसामैं तो धर्म कदाचित् नाहीं होय। ऐसा दृढश्रद्धान सम्यग्दृष्टिके होय है जाके अपने आत्माके अनुभवनमैं अर सर्वज्ञ वीतरागरूप आप्तके स्वरूपमैं अर निरग्रंथ विषयकषाय राहित गुरुमैं अर अनेकांतस्वरूप आगममैं अर दयारूप धर्ममैं शंकाका अभाव सो निःशंकित अंग है सम्यग्दृष्टि यामैं कदाचित शंका नाहीं करै है। बहुरि सम्यग्दृष्टि है सो धर्मसेवनकरि विषयनिकी वांछा नाहीं करै है जातैं सम्यग्दृष्टिकूं इंद्र अहमिंद्रलोककेविषै हू महान वेदनारूप विनाशीक पापका बीज दीखै है अर धर्मका फल अनंत अविनाशी स्वाधीन सुखकरियुक्त मोक्ष दीखै है तातैं जैसैं बहुमूल्यरत्न छांडि काचखण्डकूं जौंहरी नाहीं ग्रहण करै है तैसैं जाकूं सांचा आत्मीक अविनाशी बाधारहित सुख दीख्या सो झूठा बाधासहित विषयनिका सुखमैं कैसैं वांछा करै तातैं सम्यग्दृष्टि वांछारहित ही होय है। अर जो अव्रती सम्यग्दृष्टिके वर्तमानकालमैं आजीविकादिकानिमैं तथा स्थानादिकपरिग्रहमैं वेदनाके अभावमैं जो वांछा होय है सो वर्तमानकालकी वेदना सहनेकी असामर्थ्यतैं वेदनाका इलाजमात्र चाहै है। जैसैं रोगी कडवी औषधितैं अतिविरक्त होय तो हू वेदनाका दुःख नाहीं सह्या जाय तातैं कडवी औषधि वमन विरेचनादिकका कारण हू ग्रहण करै है दुर्गंध तैलादिक हू लगावै है अंतरंगमैं औषधितैं अनुराग नाहीं है तैसैं सम्यग्दृष्टि निर्वांछक है तो हू वर्तमानके दुःखमेटनेकूं योग्य न्यायके विषयनिकी वांछा करै है। अर जिनके प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानावरणकषायका अभाव भया ते अपना सो खंड होय तो हू विषयवांछा नाहीं करै है यातैं सम्यग्दृष्टिके निकांक्षितगुण होय ही। बहुरि सम्यग्दृष्टि अशुभकर्मके उदयतैं प्राप्त भई अशुभ सामग्री तिसमैं ग्लानि नाहीं करै परिणाम नाहीं विगाडै है मैं पूर्व जैसा कर्म बांध्या तैसा भोजन पान स्त्री पुत्र दरिद्र संपदा आपदाकूं प्राप्त भया हूं तथा अन्य किसीकूं रोगी दरिद्री हीन

नीच मलीन देखि परिणाम नाहीं विगाडै है पापकी सामग्री जानि कलुषता नाहीं करै है तैसा मलमूत्र कर्दमादिद्रव्यकूं देखि अर भयंकर स्मशान वनादि क्षेत्रकूं देखि भयरूप दुःखदायी कालकूं देखि दुष्टपना कडवापना इत्यादिक वस्तुका स्वभावकूं देखि अपना परिणाममैं क्लेशित नाहीं होना सो निर्विचिकित्सित अंग सम्यग्दृष्टिके होय ही है। बहुरि खोटे शास्त्रनितैं तथा व्यंतरादिकदेवनिकृत विक्रियातैं तथा मणि मन्त्र औषधादिकनिके प्रभावतैं अनेक वस्तुनिके विपरीत स्वभाव देखि सत्यार्थधर्मतैं चलायमान नाहीं होना सो सम्यग्दर्शनका अमूढदृष्टि गुण है सो सम्यग्दृष्टिके होय ही है। बहुरि सम्यग्दृष्टि अन्य जीवनिके अज्ञानतैं अशक्ततातैं लगेहुए दोष देखि आच्छादन करै है जो संसारीजीव ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय कर्मके वशि होय अपना स्वभाव भूल रहे हैं कर्मके आधीन असत्य परधनहरण कुशीलादि पापनिमैं प्रवृत्ति करै हैं जे पापनितैं दूरि वर्तैं हैं ते धन्य हैं। बहुरि कोऊ धर्मात्मापुरुष (नामीपुरुष) पापके उदयतैं चूकि जाय ताकूं देखि ऐसा विचारै जो यो दोष प्रगट होसी तो अन्यधर्मात्मा अर जिनधर्मकी बडी निंदा होसी या जानि दोष आच्छादन करै अर अपनागुण होय ताकी प्रशंसाका इच्छुक नाहीं होय है सो यो उपगूहनगुण सम्यक्त्वका है इनगुणानितैं पवित्र उज्वल दर्शनविशुद्धता नाम भावना होय है। बहुरि जो धर्मसहित पुरुषका परिणाम कदाचित् रोगकी वेदनाकरि धर्मतैं चलिजाय तथा दारिद्रकरि चलि जाय तथा उपसर्ग परीसहनिकरि चलिजाय तथा असहायताकरि तथा आहारपानका निरोधकरि परिणाम धर्मतैं शिथिल होजाय ताकूं उपदेशकरि धर्ममैं स्थम्भन करै। भो ज्ञानी भो धर्मके धारक तुम सचेत होहू कैसैं कायरता धारण करि धर्ममैं सिथिल भए हो जो रोगकी वेदनासे धर्मतैं चिगो हो ज्ञानी होय कैसैं भूलो हो यो असातावेदनीकर्म अपना अवसर पाय उदयमैं आयगया है अब जो कायर होय दीनताकरि रुदनविलापादि करते भोगोगे तो कर्म नाहीं छांडैगा कर्मके दया नाहीं होय है और धीरपनातैं भोगोगे तो कर्म नाहीं छांडैगा कोऊ देव दानव मन्त्र तन्त्र औषधादिक तथा स्त्री पुत्र मित्र बांधव

सेवक सुभटादिक उदयमैं आयाकर्म हरनेकूं समर्थ है नाहीं यो तुम अच्छीतरह समझो हो अब इस वेद-नामैं कायर होय अपना धर्म अर यश अर परलोक इनकूं कैसैं विगाडो हो अर इनकूं विगाडि स्वछंद-चेष्टा विलापादि करनेतैं वेदना नाहीं घटै है ज्यों ज्यों कायर होवोगे त्यों त्यों वेदना दुःख बढैगा । तातैं अब साहस धारणकरि परमधर्मका शरण ग्रहण करो । संसारतैं नरकके तथा तिर्यंचनिके क्षुधा तृषा रोग संताप ताडन मारण शीत उष्णादिक घोर दुःख असंख्यात कालपर्यंत अनेक बार अनंतभव धारणकरि भोगे ये तुम्हारे कहा दुःख है अल्पकालमैं निर्जरैगा अर रोग वेदना देहकूं मारैगा तुम्हारा चेतनस्वरूप आत्माकूं नाहीं मारैगा अर देहका मारना अवश्य होयगा जो देह धारण किया ताकै अवश्यंभावी मरण है सो अब सचेत होहू यो कर्मका जीतबाको अवसर है अब भगवान पंचपरमेष्ठीका शरण ग्रहणकरि अपना अजर अमर अखंड ज्ञाता दृष्टा स्वरूपका ग्रहण करो ऐसा अवसर फेरि मिलना दुर्लभ है इत्या-दिक धर्मका उपदेश देय धर्ममैं दृढ करना अर अनित्य असरणादि भावनाका ग्रहण शीघ्र करावना त्याग व्रतादिक छांडि दिए होंय तो फिर ग्रहण करावना तथा शरीरका मर्दनादिक करि दुःख दूरि करना अर कोऊ टहल करनेवाला नाहीं होय तो आप टहल करना अन्य साधर्मीनका मेल मिलादेना आहार पान औषधादि करि स्थितिकरण करना तथा मलमूत्रकफादिक होय तो धोवना पूंछना इत्यादिककरि स्थिर करना तथा दारिद्रकरि चलायमान होय तिनका भोजनपानादिककरि आजीवकादिक लगाय देनेकरि उपसर्ग परीसहादिक दूर करनेकरि सत्यार्थधर्ममैं स्थापन करना सो स्थितिकरण अंग सम्यग्दृष्टिके होय है । बहुरि वात्सल्यनामगुण सम्यग्दृष्टिके होय है संसारीजीवनिकी प्रीति तो अपने स्त्री पुत्रादिकनिमैं तथा इंद्रियनिके विषयभोगनिमैं धनके उपार्जनमैं बहुत रहै है जाकै स्त्री पुत्र धन परिग्रह विषयादिकनिकूं संसारपरिभ्रमणके कारण जानि अंतरंगमैं विरागता धारणकरि जाकी धर्मात्मामैं रत्नत्रयके धारक मुनि अर्जिका श्रावक श्राविकामैं वा धर्मके आयतननिमैं अत्यंत प्रीति होय ताकै सम्यग्दर्शनका वात्सल्यअंग

होय है। बहुरि जो अपने मनकरि वचनकरि कायकरि धनकरि दानकरि व्रतकरि तपकरि भक्तिकरि रत्नत्रयका प्रभाव प्रगट करै सो मार्गप्रभावना अंग है याका विशेष प्रभावनाअंगकी भावनामैं वर्णन करियेगा। ऐसैं सम्यग्दर्शनके अष्ट अंग धारण करनेतैं इनगुणनिका प्रतिपक्षी शंकाकांक्षादिक दोषनिका अभावकरि दर्शनविशुद्धता होय है।

बहुरि लोकमूढता देवमूढता गुरुमूढताका परिणामनिकूं छांडि श्रद्धानकूं उज्वल करना। अब लोकमूढताका स्वरूप ऐसा है जो मृतकनिका हाड नखादिक गंगामैं पहुचानेमैं सुगति भई माने हैं तथा गंगाजलकूं उत्तम मानना तथा गंगास्नानमैं अन्य नदीके स्नानमैं नदीकी लहर लेनेमैं धर्म मानना तथा मृतक भर्ताके साथ जीवती स्त्री तथा दासी अग्निमें दग्ध होजाय ताकूं सती मानि पूजना मरयाकूं पितरमानि पूजना पितरानिकूं पातडीमें स्थापन करि पहरना तथा सूर्य चंद्रमा मंगलादिक ग्रहनिकूं सुवर्णरूपाका बनाय गलेमैं पहरना तथा ग्रहनिका दोष दूरि करनेकूं दानदेना संक्रांति व्यतिपात सोमोतीअमावसी मानि दान करना सूर्यचंद्रमाका ग्रहणका निमित्ततैं स्नान करना डाभकूं शुद्ध मानना हस्तीके दंतनिकूं शुद्ध मानना कूवा पूजना सूर्यचंद्रमाकूं अर्घ देना देहली पूजना मूशलकूं पूजना छींककूं पूजना विनायक नामकरि गणेश पूजना तथा दीपककी जोतिकूं पूजना तथा देवताकी बोलारी बोलना जडूला चोटी रखना देवताकी भेटके करारतैं अपना संतानादिकका जीवित मानना संतानकूं देवताका दिया मानना तथा अपने लाभ वास्ते तथा कार्य सिद्धि वास्तै ऐसी वीनती करै जो मेरे एता लाभ होजाय तथा संतानका रोग मिटि जाय तथा संतान होजाय वा वैरीका नाश हो जाय तो मैं आपके छत्र चढाऊं मकान बनाऊं इतना धन भेट करूं ऐसा करार करै है देहताकूं सौंक (रिसवत) देय कार्यकी सिद्धिके वास्ते वांछे है। तथा रात जगा करना कुलदेवकूं पूजना शीतलाकूं पूजना लक्ष्मीकूं पूजना सोनारूपाकूं पूजना दवात पूजना पशुनिकूं पूजना अन्नकूं जलकूं पूजना शस्त्रकूं वृक्षकूं पूजना अग्निकूं देव मानि

पूजना सो लोकमूढता मिथ्यादर्शनका प्रभावतैं श्रद्धानके विपरीतपना है सो त्यागने योग्य है । बहुरि देवकुदेवका विचार रहित होय कामी क्रोधी शस्त्रधारीहूमैं ईश्वरपनाकी बुद्धि करणा जो यह भगवान परमेश्वर हैं समस्त रचना याकी है ये ही कर्ता हैं हर्ता हैं जो कुछ होय है सो ईश्वरको कियो होय है समस्त आछी बुरी लोकानिसूं ईश्वर करावै है ईश्वरका किया विना कछू ही नाहीं होय है सब ईश्वरकी इच्छा के आधीन है शुभकर्म अशुभकर्म ईश्वरकी प्रेरणा विना नाहीं होय है इत्यादिक परिणाम मिथ्यादर्शन के उदयकरि होय सो देवमूढता है। बहुरि पाखंडी हीण आचारके धारक तथा परिग्रही लोभी विषैयनि का लोलुपीनिकूं करामाती मानना वाका वचन सिद्ध मानना तथा ये प्रसन्न हो जाय तो हमारा वांछित सिद्ध होजाय ये तपस्वी हैं पूज्य हैं महापुरुष हैं पुराण हैं इत्यादिक विपरीत श्रद्धान करै सो गुरुमूढता है तातैं जिनके परिणामनितैं इन तीनमूढताका लेशमात्र हू नाहीं होय ताकै दर्शनकी विशुद्धता होय है। बहुरि छह अनायतनका त्यागकरि दर्शनविशुद्धता होय है कुदेव कुगुरु कुशास्त्र अर इनके सेवन करने वाले ये धर्मके आयतन कहिये स्थान नाहीं तातैं ये अनआयतन हैं। भावार्थ—जो रागी द्वेषी कामी क्रोधी लोभी शस्त्रादिक सहित मिथ्यात्वकरिसहित हैं तिनमैं सम्यक्धर्म नाहीं पाईये तातैं कुदेव हैं ते अनायतन हैं। बहुरि पंचइंद्रियानिके विषयनिके लोलुपी परिग्रहके धारी आरंभ करनेवाले ऐसे भेषधारी ते गुरु नाहीं धर्म-हीन हैं तातैं अनायतन हैं। बहुरि हिंसाके आरंभकी प्रेरणा करनेवाला रागद्वेषकामादिकदोषनिका बधावने-वाला सर्वथा एकांतका प्ररूपक शास्त्र हैं ते कुशास्त्र धर्मरहित हैं तातैं अनायतन हैं। बहुरि देवी दिहाडी क्षेत्रपालादिक देवकूं वंदनेवाले अनायतन हैं। बहुरि कुगुरुनिके सेवक हैं भक्तितैं धर्मतैं रहित हैं ते अना-यतन हैं। बहुरि मिथ्याशास्त्रके पढनेवाले अर इनकी सेवा भक्ति करनेवाले एकांती धर्मका स्थान नाहीं तातैं अनायतन हैं ऐसे कुदेव कुगुरु कुशास्त्र अर इनकी सेवा भक्ति करनेवाले इनछहूनिमैं सम्यक्धर्म नाहीं है ऐसा दृढश्रद्धानकरि दर्शनविशुद्धता होय है बहुरि जातिमद कुलमद ऐश्वर्यमद रूपमद शास्त्रका

२६१

मद तपकामद बलका मद विज्ञानमद इन अष्ट मदनिका जाके अत्यंत अभाव होय है ताकै दर्शन विशुद्धता होय है सम्यग्दृष्टिके सांचा विचार ऐसा है हे आत्मन् या उच्च जाति है सो तुम्हारा स्वभाव नाहीं यह तो कर्मकी परिणमानि है परकृत है विनाशिक है कर्मनिके आधीन है। संसारमें अनेकबार अनेकजाति पाई है माताकी पक्षकूं जाति कहिये है जीव अनेकबार चांडालीके तथा भीलनीके तथा म्लेक्षणीके चमारीके धोबडिके नायणिके डूमणीके नटनीके वेश्याके दासीके कलालीके धीवरी इत्यादि मनुष्यनिके गर्भमें उपज्या है तथा सूकरी कूकरी गर्द्दभी स्यालणी कागली इत्यादिक तिर्यंचनिके गर्भमें अनंतबार उपजि उपजि मऱ्या है अनंतबार नीचजाति पावै तब एकबार उच्चजाति पावै फिर अनंतबार नीचजातिपावै तब एकबार उच्चजाति पावै ऐसे उच्चजाति भी अनंतबार पाई तो हू संसारपरिभ्रमण ही किया अर ऐसें ही पिताकी पक्षका कुल हू ऊंचा नीचा अनंतबार प्राप्त भया संसारमें जातिका कुलका मद कैसें करिये है स्वर्गका महर्द्धिकदेव मरिकरि एकेन्द्री आय उपजै है तथा स्वानादिक निंद्य तिर्यंचनिमें उपजै है तथा उत्तमकुलका धारक होय सो चांडालमें जाय उपजै तातैं जातिकुलमें अहंकार करना मिथ्यादर्शन है। हे आत्मन्! तुम्हारा जातिकुल तो सिद्धानिके समान है तुम आपा भूलि माताका रुधिर पिताका वीर्यतैं उपजै जातिकुलमें मिथ्या आपा धरि फेर हू अनंतकाल निगोदवास मतिकरो वीतरागका उपदेश ग्रहण किया है तो इस देहकी जातिकूं हू संयम शील दया सत्यवचनादिकरि सफलकरो जो मैं उत्तम जातिकुल पाय नीच कर्मनिकेसे हिंसा असत्य परधन हरण कुशीलसेवन अभक्ष्यभक्षणादि अयोग्य आचरण कैसे करूं नाहीं करूं ऐसा अहंकार करना योग्य है सम्यग्दृष्टिके कर्मकृत पुद्गलपर्यायमें कदाचित आत्मबुद्धि नाहीं होय है। बहुरि ऐश्वर्य पाय ताका मद कैसे करिये यो ऐश्वर्य तो आपा भुलाय बहु आरंभ राग द्वेषादिकमें प्रवृत्ति कराय चतुर्गतिमें परिभ्रमणका कारण है और निर्ग्रंथपना तीनलोकमें ध्यावने योग्य है पूज्य है अर यो ऐश्वर्य क्षणभंगुर है बडे २ इंद्र अहमिंद्रानिका पतनसहित है बलभद्र नारायणनिका

ऐश्वर्य क्षणमात्रमें नष्ट होयगया अन्यजीवनिका ऐश्वर्य केताक है ऐसें जानि ऐश्वर्य दोयादिन पाया है तो दुःखित जिवनिका उपकार करो विनयवान होय दान देहु परमात्मस्वरूप अपना ऐश्वर्य जानि इस कर्मकृत ऐश्वर्यमें विरक्त होना योग्य है। बहुरि रूपका मद मति करो यो विनाशीक पुद्गलको रूप आत्माको स्वरूप नाहीं विनाशीक है क्षणक्षणमें नष्ट होय है इस रूपकूं रोग वियोग दरिद्र जरा महाकुरूप करैगा ऐसा हाडचामका रूपमैं रागी होय मद करना बडा अनर्थ है इस आत्माका रूप तो केवलज्ञान है जिसमैं लोक अलोक सर्व प्रतिबिम्बित होय है तातैं चामडाका रूपमैं आपा छांडि अपना अविनाशी ज्ञानस्वरूपमैं आपा धारहू। बहुरि श्रुतका गर्वकूं छांडहू आत्मज्ञानरहितका श्रुत निष्फल है जातैं एकादशअंगका ज्ञानसहित होय करके हूं अभव्य संसारहीमैं परिभ्रमण करे है सम्यग्दर्शन विना अनेक व्याकरण छंद अलंकार काव्य कोषादिक पढना विपरीत धर्ममैं अभिमान लोभमैं प्रवर्तन कराय संसाररूप अंधकूपमैं डुबोवनेके अर्थि जानहु। और इस इंद्रियजनित ज्ञानका कहा गर्व है एकक्षणमैं वातपित्तकफादिकके घटनेवधनेतैं ज्ञान चलायमान होयजाय है अर इंद्रियजनित ज्ञान तो इंद्रियनिका विनाशकी साथ ही विनशैगा अर मिथ्याज्ञान तो ज्यों बंधैगा त्यों खोटे काव्य खोटी टीकादिकनिकी रचनामैं प्रवर्तन कराय अनेक जीवनिकूं दुराचारमैं प्रवर्तन कराय डवोयदेगा तातैं श्रुतका मद छांडहु ज्ञान पाय आत्मविशुद्धता करहू ज्ञान पाय अज्ञानी कैसे आचरणकरि संसारमें भ्रमण करना योग्य नाहीं। बहुरि सम्यक्त्व विना मिथ्यादृष्टिका तप निष्फल है तपको मद करो हो जो मैं बडा तपस्वी हूं सो मदके प्रभावतैं बुद्धि नष्टकरिकैं यो तप दुर्गतिमैं परिभ्रमण करावैगा तातैं तपका गर्व करना महा अनर्थ जानि भव्यनिकूं तपका गर्व करना योग्य नाहीं है। बहुरि जिस वलकरि कर्मरूप वैरीकूं जीतिये तथा कामक्रोधलोभकूं जीतिये सो वल तो प्रसंशायोग्य है और देहका वल यौवनका वल ऐश्वर्यका बल पाय अन्य निर्वल अनाथ जीवनिकूं मारिलेना धन खोसिलेना जमी जीविका खोसिलेना कुशील सेवन करना दुराचारमैं

प्रवर्तन करना सो वल तो नर्कके घोरदुःख असंख्यातकाल भोगाय तिर्यंचगतिमैं मारणताडनलादन करि तथा दुर्वचन तथा क्षुधा तृषादिकानिके दुःख अनेक पर्यायनिमैं भुगताय एकेन्द्रियानिमैं समस्तबलरहित असमर्थ करैगा। तातैं बलका मद छांडि क्षमा ग्रहण करि उत्तमतपमैं प्रवर्तन करना योग्य है।

बहुरि जे विज्ञान कहिये अनेक हस्तकला अनेक वचनकला अनेक मनके विकल्प जिनकरि यो आत्मा चतुर्गतिरूप संसारमैं परिभ्रमणकरि दुःख भोगै है ते समस्त कुज्ञान हैं। इस संसारमैं खोटीकला चतुरताका बडा गर्व है जो हमारा सामर्थ्य ऐसा है कहो तो सांचेकूं झूंठा करिदेवैं झूंठेकूं सांचा करिदेवैं कलंकरहितकूं कलंकसहित करिदेवैं शीलवंतनिकूं दूषित करिदेवैं अदण्डनिकूं दंडदेने योग्य करिदेवैं बहुत दिननिका संचय किया द्रव्यकूं कढा लेवैं तथा धर्म छुटाय अन्यथा श्रद्धान कराय देवैं तथा प्राणीनिके वशीकरण तथा अनेक जीवनिका मारण तथा अनेक जलमैं गमन करनेके, स्थलमैं गमन करनेके, आकाशमैं गमन करनेके, अनेक यंत्र बनायदेवैं इत्यादिक कलाचातुर्य हैं ते सब कुज्ञान हैं याका गर्व नर्कके घोरदुःखका कारण है। कलाचातुर्य सम्यक् तो सो है जातैं अपना आत्माकूं विषयकषायके उलझाडतैं सुलझावना तथा लोकनिकूं हिंसारहित सत्यमार्गमैं प्रवर्तावना है, ऐसैं सत्यार्थवस्तुका स्वरूप समझि जाति, कुल, धन, ऐश्वर्य, रूप, विज्ञानादिककूं, कर्मके आधीन जानि इनका मद छांडि दर्शनविशुद्धता करो। ऐसैं तीन मूढता अर आठ शंकादिकदोष अर षट्अनायतन अर अष्टमद ऐसैं पचीस दोषका परिहार करि सम्यग्दर्शनकी उज्जलता होय है ऐसैं जानि दर्शनविशुद्ध भावना ही निरंतर चिंतवनकरि अर याहीकूं ध्यान गोचरकरि स्तुतिसहित उज्जल अर्घ उतारण करै सो मुक्तिस्त्रीसूं संबंध करै है। ऐसैं दर्शनविशुद्धता नाम प्रथम भावना वर्णन करी॥ १॥

अब आगैं विनयसंपन्नता नाम दूजी भावना कहिये हैं सो—विनय पंचप्रकार कह्या है दर्शनविनय, ज्ञानविनय, चारित्रविनय, तपविनय, उपचारविनय। तहां जो अपने श्रद्धानके शंकादिकदोष नाहीं

लगावना तथा सम्यग्दर्शनकी विशुद्धताकरि ही अपना जन्म सफल मानना सम्यग्दर्शनके धारकनिमैं प्रीति धारना आत्मा अर परका भेदविज्ञानका अनुभव करना सो दर्शनाविनय है । बहुत सम्यग्ज्ञानके आराधनमैं उद्यम करना, सम्यग्ज्ञानकी कथनीमैं आदर करना तथा सम्यग्ज्ञानके कारण जे अनेकांत रूप जिनसूत्र तिनके श्रवण पठनमैं बहुत उत्साहरूप होना तथा वंदना स्तवनपूर्वक बहुत आदरतैं पढना सो ज्ञानविनय है तथा ज्ञानके आराधक ज्ञानीजनांका तथा जिनागमके पुस्तकनिका संयोगका बडालाभ मानना सत्कार स्तवन आदरादिक करना सो ज्ञानविनय है । बहुरि अपनी शक्तिप्रमाण चारित्र धारणमैं हर्ष करना दिनदिन चारित्रकी उज्वलताके अर्थि विषयकषायनिकूं घटावना तथा चारित्रके धारकनिके गुणनिमैं अनुराग स्तवन आदर करना सो चारित्राविनय है । बहुरि इच्छाकूं रोकि मिलेहुए विषयनिमैं संतोष धारणकरि ध्यानस्वाध्यायमैं उद्यमी होय कामके जीतनेकूं अर इंद्रियनिके विषयनिमैं प्रवृत्ति रोकनेकूं अनशनादिकतपमैं उद्यम करना सो तपविनय है । बहुरि इन च्यारि आराधनाका उपदेशकरि मोक्ष मार्गमैं प्रवर्तन करावनेवाले हैं तथा जिनके स्मरण करनेतैं परिणामनिका मल दूरि होय विशुद्धता प्रगट होजाय ऐसे पंचपरमेष्ठीके नामकी स्थापनाका विनय वंदना स्तवन करना सो उपचारविनय है । अन्य हू उपचारविनयका बहुतभेद हैं आभिमानकूं छांडि अष्टमदका अत्यंत अभाव जाके होय कठोरता छूटि कोमलता जाके प्रगट होय ताके नम्रपना प्रगट होय है ताके सत्यार्थ ऐसा विचार है यो धन योवन जीवन क्षणभंगुर है कर्मके आधीन है कोऊ जीव हमतैं क्लेशित मति होहु सकल संबंध वियोगसहित है इहां केते काल रहूंगा समय समय कालके सन्मुख अखंड गमन करूंहूं कोऊ वस्तुका संबंध थिर नाहीं है इहां विनय धर्म ही भगवान मनुष्य जन्मका सार कह्या है यो विनय संसाररूप वृक्षके दग्ध करनेकूं अग्नि है यो विनय है सो त्रैलोक्यवर्ती जीवनिके मनकी उज्जलता करनेवाला है अर विनय है सो समस्त जिनशासनको मूल है विनयरहितके जिनेंद्रकी शिक्षा ग्रहण नाहीं होय है विनयरहित जीव समस्त दोषनिका

पात्र है विनय है सो मिथ्याश्रद्धानके छेदनेकूं सूल है विनयविना मनुष्यरूप चामडाको वृक्ष मानरूप अग्नि करि भस्म होय है अर मानकषायकरिके यहां ही घोर दुःख सहै है अर परलोकमैं निंद्यजाति कुलरूप बुद्धिहीन बलहीन उपजे है जे अभिमानी यहां किंचित् वचनमात्र हू नाहीं सहै हैं ते तिर्यंचगतिमैं नासिकामैं मूंजका जेवडाका बंधन लादन मारण लात ठोकरांका घात चामडाका मरमस्थानमैं घात पराधीन हुआ भोगै है तथा चांडालनिके मलीन घरमैं बंधनतैं बंध रहै हैं जिन ऊपरि मलादि निंद्य वस्तु लादिये हैं और इसलोकमैं हू अभिमानीके समस्तलोक बेरी होजाय हैं अभिमानिकूं समस्त निंदै हैं महाअपयश प्रगट होजाय है समस्त लोक अभिमानीका पतन चाहै हैं मानकषायतैं क्रोध प्रगट होय कपट विस्तरै अतिलोभ करै दुर्वचननिमैं प्रवर्तन करै लोकमैं जेती अनीति है तितनी मानकषायतैं होय है। परधन हरणादिक हू अपने अभिमान पुष्ट करनेकूं करै है यातैं इस जीवका बडा वैरी मानकषाय है यातैं विनय गुणमैं महान आदरकरि अपना दोऊं लोक उज्जल करो सो विनय देवको शास्त्रको गुरुनिको मन वचन कायतैं प्रत्यक्ष करो अर परोक्ष हू करो तहां देव जो भगवान अरहंत समवशरणविभूतिसहित गंधकुटीके मध्य सिंहासन ऊपरि अंतरीक्ष विराजमान चौसठ चमरनिकरि वीज्यमान छत्रत्रयादिक प्रातिहार्यनिकारि विभूषित कोटिसूर्यसमान उद्योतका धारक परमौदारिकदेहमैं तिष्ठता द्वादशसभाकरि सेवित दिव्यध्वनि करि अनेकजीवनिका उपकारकरनेवाले अरहंतको चिंतवनकरि ध्यान करना सो मनकरि परोक्षाविनय है। याका विनयपूर्वक स्तवन करना सो वचनकरि परोक्षाविनय है। अंजुलिजोडि मस्तक चढाय नमस्कार करना सो कायकरि परोक्षाविनय है। बहुरि जो जिनेन्द्रकी प्रतिबिंबकी परम शांत मुद्राकूं प्रत्यक्ष नेत्रनितैं अवलोकनकरि महाआनन्दतैं मनमैं ध्यानकरि आपकूं कृतकृत्य मानना सो मनकरि प्रत्यक्षाविनय है। जिनेन्द्रका प्रतिबिंबके सन्मुख होय स्तवन करना सो प्रत्यक्ष वचनविनय है। अंजुली मस्तक चढाय वंदना करना तथा भूमिमैं अंजुलिसहित मस्तक गोडानिका स्पर्शनकरि नमस्कार करना सो कायकरि

प्रत्यक्षविनय है। तथा सर्वज्ञ वीतराग परमात्मा जिनेन्द्रका नामका स्मरण ध्यान बंदना स्तवन करना सो समस्त परोक्षविनय है। ऐसैं देवका विनय समस्त अशुभकर्मनिका नाश करनेवाला कह्या है। बहुरि जो निर्ग्रंथ वीतरागी मुनीश्वरनिकूं प्रत्यक्ष देखि खडा होना आनंदसहित सन्मुख जाना स्तवन करना वंदना करना गुरुनिकूं आगैंकरि पाछैं चालना कदाचित् बराबर चालना होय तो गुरुनिके बामतरफ चालना गुरुनिकूं अपने दक्षिणभागमैं करकै चालना बैठना, गुरुनिकूं विद्यमान होते आप उपदेश नाहीं करना कोऊ प्रश्न करै तो गुरुनिके होते आप उत्तर नाहीं देना अर गुरुनिकी इच्छा होय तो गुरुनिकी इच्छाके अनुकूल उत्तर देना गुरुनिके होते उच्चआसन नाहीं बैठना अर गुरु व्याख्यान उपदेशादिक करै ताकूं अंजुलि जोडि बहोत आदरतैं ग्रहण करना गुरुनिका गुणनिमैं अनुराग करि आज्ञाके अनुकूल प्रवर्तन करना अर गुरु दूरक्षेत्रमैं होय तो वाकी जो आज्ञा होय तैसैं प्रवर्तन करना दूरहीतैं गुरुनिका ध्यान स्तवन नमस्कारादि विनय करना सो गुरुनिका विनय है।

बहुरि शास्त्रका विनय करना बडा आदरतैं पठन श्रवण करना द्रव्य क्षेत्र काल भावकूं देखि व्याख्यानादि करना शास्त्रका कह्या व्रत संयमादिक आपतैं नाहीं बनि सकै तो आज्ञाका लोप नाहीं करना सूत्रकी आज्ञा होय तिस प्रमाण ही कहना तथा जो सूत्रकी आज्ञा होय ताकूं एकाग्रचित्ततैं श्रवण करना श्रवण करते अन्य कथा नाहीं करना आदरपूर्वक मौनतैं श्रवण करना अर जो संशय होय तो संशय दूर करनेकूं विनयपूर्वक अल्प अक्षरनिकरि जैसे सभाके अर लोकनिकै अर वक्ताकै क्षोभ नाहीं उपजै तैसैं विनयपूर्वक प्रश्न करना उत्तरकूं आदरतैं अंगीकार करना सो शास्त्रका विनय है तथा शास्त्रकूं उच्चआसनपर धरि नीचा बैठना प्रशंसा स्तवन करना इत्यादिक शास्त्रका विनय करना ऐसैं देव गुरु शास्त्रका विनय है सो धर्मका मूल है। बहुरि जो रागद्वेषकरि आत्माका घात जैसे नाहीं होय तैसे प्रवर्तन करना सो आत्माका विनय है जातैं ऐसा विचारै है अब यो मेरो जीव चतुर्गतिमैं भति परिभ्रमण करो

अब मेरा आत्मा मिथ्यात्व कषाय अविनयादिक करि संसार परिभ्रमणके दुःख मति प्राप्त होहू ऐसे चिंतवन करता मिथ्यात्व कषाय अविनयादिक करि आत्माका ज्ञानादिक गुण घात नाहीं करना सो आत्माका विनय है याहीकूं निश्चय विनय कहिये है यह तो परमार्थ विनय कह्या अब यहां ऐसा विशेष जानना जाके मान कषाय घटि जाय ताहीके व्यवहार विनय है कोऊ जीवका मोतैं अपमान मति होहू जो अन्यका सन्मान करैगा सो आपहू सन्मानकूं प्राप्त होयगा जो अन्यका अपमान करैगा सो आपहू अपमानकूं प्राप्त होग है जो समस्तकूं मिष्टवचन बोलना सो विनय है किसी जीवकूं तिरस्कार नाहीं करना सो हू विनय ही है। अपने घर आया ताका यथायोग्य सत्कार करना किसीकूं सन्मुख जाय ल्यावना किसीकूं उठि खडा होना एक हस्तकूं माथे चढावना किसीकूं आइए ३ इत्यादिक तीनवार कहि अंगीकार करना कोऊकूं आदरकरि नजीक बैठावना किसीकूं आसनदान देना किसीकूं आवो बैठो किसीकूं शरीरकी कुशल पूछना तथा हम आपके हैं हमकूं आज्ञा करिये भोजनपान करिये यह आपहीका गृह है ये गृह आपके आवनेतैं उच्च भया है आपकी कृपा हमारेपर सनातनतें है ऐसे हू व्यवहाराविनय है तथा कोऊकूं हस्त उठाय माथे चढावना एता ही विनय है यह समस्त व्यवहाराविनय है और हू दान सन्मान कुशल पूछना रोगी दुखीका वैयावृत्त्य करना सो भी विनयवानहीके होय है दुःखित मनुष्य तिर्यंचनिकूं विश्वास देना दुःखित होय आपका दुःख कहनेकूं आया होय ताका दुःख श्रवण करना अपना सामर्थ्य प्रमाण उपकार करना नाहीं बननेका होय तो धीरता संतोषादिकका उपदेश देना ऐसे व्यवहार विनय है सो परमार्थविनयका कारण है यशकूं उपजावै है धर्मकी प्रभावना करै है मिथ्यादृष्टिका हू अपमान नाहीं करना मिष्टवचन बोलना यथायोग्य आदर सत्कार करना योही विनय है महापापी द्रोही दुराचारीकूं हू कुवचन नाहीं कहना एकेन्द्रिय विकलेन्द्रियादिक तथा सर्पादिक दुष्ट जीव तिनकी विराधना नाहीं करना थाकी रक्षा करि प्रवर्तना सो ही इनका विनय है अन्यधर्मीनिका मंदिरप्रतिमादिकतैं बेर करि

निंदा नाहीं करना ऐसा परमार्थ व्यवहार दोऊप्रकारकूं विनयको धारणकरि गृहस्थकूं प्रवर्तन करना योग्य है। देखो सकलसंगका परित्यागी वीतरागी मुनीश्वरहूकूं कोऊ मिथ्यादृष्टि वंदना करै है ताकूं आशीर्वाद देवै हैं चांडाल भील धीवरादिक अधमजाति हू वंदना करै ताकूं पापक्षयोस्तु इत्यादिक आशीर्वाद देहैं तातैं विनयअंग धारण करो हो तो बाल अज्ञान धर्मरहितका तथा नीच अधम जाति होय ताका हू विनय नाहीं करो तो हू तिरस्कार निंदा कदाचित करना उचित नाहीं है इस मनुष्यजन्मका मंडन विनय ही है विनय विना मनुष्यजन्मकी एक घडी भी हमारे मति जावो ऐसे भगवान गणधर देव कहैं हैं ऐसा विनयगुणकी महिमा जानि याका महान अर्घ उतारण करो। हे विनयसंपन्नताअंग हमारे हृदयमें तू ही निरंतर वास करि तेरे प्रसादतैं अब मेरा आत्मा कदाचित अष्टमदनिकरि अभिमानकूं मति प्राप्ति होहू ऐसे विनयसंपन्नता नाम अंगकी दूजी भावना वर्णन करी॥ २॥

अब तीसरी शीलव्रतेष्वनतीचार भावना कहै हैं—शीलव्रतेष्वनतीचारका ऐसा अर्थ वार्तिकमें कह्या है अहिंसादिक पंचव्रत अर इनव्रतनिका पालनके अर्थि कोधादिकषायका वर्जनादिरूप शीलविषय जो मनवचनकायकी निर्दोष प्रवृत्ति सो शीलव्रतेष्वनतिचारभावना है शीलनाम आत्माका स्वभावका है आत्मस्वभावका नाश करनेवाला हिंसादिक पांच पाप हैं तिनमैं कामसेवन नाम एक ही पाप हिंसादिकसमस्तपापनिकूं पुष्ट करै है अर क्रोधादिकषायनिकी तीव्रता करै है तातैं यहां जयमालामें ब्रह्मचर्यकी ही प्रधानताकरि वर्णन करिये है यो शील दुर्गतिके दुःखका हरनेवाला है स्वर्गादिक शुभगतिका कारण है तपव्रतसंयमका जीवन है शीलविना तपकरना व्रतधरना संयम पालना मृतकका अंगसमान देखने मात्र है कार्यकारी नाहीं तैसे शीलरहितका तपव्रतसंयम धर्मकी निंदा करावनेवाला है ऐसा जानि शील नाम धर्मका अंगकूं पालना करहु अर चंचल मनरूप पक्षीकूं दमो अतिचाररहित शुद्धशीलकूं पुष्ट करो धर्मरूपवनके विध्वंस करनेवाला मनरूप मदोन्मत्त हस्तीकूं रोको चलायमान हुआ

मनरूपहस्ती महान अनर्थ करै है हस्ती मदवान होय तदि ठाणमैंतैं निकालि भागे है अर मनरूपहस्ती कामकरि उन्मत्त होय तब समभावरूपी ठाणतैं निकलिभागै है तथा कुलकी मर्यादा संतोषादि छांडि निकसै है मदोन्मत्तहस्ती तो सांकल तुडाय जाय है अर मनरूपहस्ती सुबुद्धिरूप सांकल तोडि विचरै है हस्ती तो मार्गमैं चलावनेवाला महावतकूं नाखै है अर कामीका मन सम्यग्धर्मके मार्गमैं प्रवर्तावनेवाला ज्ञानकूं छांडै है हस्ती तो अंकुशकूं नाहीं मानै है अर मनरूपहस्ती गुरूनिके शिक्षाकारी वचनकूं नाहीं मानै है हस्ती तो महाफल अर छायाका देनेवाला वृक्षकूं उखाडि पटकै है अर कामकरि व्याप्त मन है सो स्वर्गमोक्षरूप फलका देनेवाला अर यशरूप सुगंधकूं विस्तारता सकलविषयांकी आतापकूं हरनेवाला ब्रह्मचर्यरूप वृक्षकूं उखाडि डालै है हस्ती तो मल कर्दमादिक दूर करनेवाला सरोवरमैं स्नानकरि मस्तक ऊपरि धूलि नाखता धूलिरजसूं क्रीडा करै है अर कामकरि व्याप्त मन सिद्धांतरूपसरोवरमैं अवगाहनकरि अनेक अज्ञानरूप मैलकूं धोय करके हू पापरूप धूलितैं क्रीडा करै है हस्ती तो कर्णनिकी चपलताकूं धारण करै है अर कामसंयुक्तमन पांचू इंद्रियनिका विषयनिमैं चंचलता धारण करै है हस्ती तो हस्तिनीमैं रति करै है कामसंयुक्त मन कुबुद्धिरूप हस्तिनीमैं रचै है हस्ती हू स्वछंद डोलै मन हू स्वछंद डोलै हस्ती तो मदकरिके मत्त है कामीका मन रूपादिक अष्टमदकरि मत्त है हस्तीके नजीक तो कोऊ पथिक नाहीं आवै दूर भागिजाय अर कामकरि उन्मत्तके नजीक कोऊ एक हू गुण नाहीं रहै हैं यातैं इस कामकरि उन्मत्त मनरूप हस्तीकूं वैराग्यरूप स्थंभकै बांधो यो खुल्यो हुवो महा अनर्थ करैगा यो काम अनंग है याकै अंग नाहीं है यो तो मनासिज है मनहीमैं याका जन्म है ज्ञानकूं मथन करनेवाला है याहीतैं याकूं मनमथ कहिये है। संवरको अरि कहिये वैरी है यातैं संवरारि कहिये है कामतैं खोटा दर्प जो गर्व सो उपजै है यातैं याकूं कंदर्प कहिये है याकरि अनेक मनुष्य तिर्यंच परस्पर विरोधकरि मरि जाय हैं यातैं वाकूं मार कहिये है याहीतैं मनुष्यनिमैं अन्यइंद्रियानिके भोग तो प्रगट हैं अर कामके अंगहू

ढके हुये हैं कामके अंगका नाम हू उत्तमपुरुष हैं ते नाहीं उच्चारण करे हैं यो समान अन्य पाप नाहीं है धर्मतैं भ्रष्ट करनेवाला काम है यो काम हरिहरब्रह्मादिकानिकूं भ्रष्टकरि आपके आधीन किये हे याहीतैं समस्त जगतकूं जीतनेवाला एककाम है याका विजय करनेवाला मोहकूं सहज ही जीते है याहीतैं कामके परिहारके अर्थि मनुष्यनी तथा देवांगना तथा तिर्यंचनी इनका संसर्ग संगति कामविकारके उपजावनेवाली दूर हीतैं परिहार करो स्त्रीनिमैं मनवचनकायकरि रागका त्याग करो आप कुशीलके मार्गमैं नाहीं चलना अन्यकूं कुशीलके मार्गका उपदेश मति करो अन्य कोऊ कुशीलके मार्गमैं प्रवर्तन करे तिनकी अनुमोदना भव्यजीव नाहीं करे है बालकास्त्रीकूं देखि पुत्रीवत् निर्विकार बुद्धि करो अर यौवनरूप करींद्रऊपरि चढी लावण्य जो सौंदयरूप जलमैं जाका सव अंग डूबि रह्या ऐसी रूपवतीस्त्रीमैं बहिणवत निर्विकार बुद्धि करहू अर वाकूं सनमान दान मति करो। वचनकरि आलाप मति करो शीलवान हैं तिनकी दृष्टि स्त्रीनिमैं प्राप्ति होते ही मुद्रित होजाय है जो स्त्रीनिमैं वचनालाप करैगा स्त्रीके अंगनिका अवलोकन करैगा ताके शीलका भंग अवश्य होयगा तातैं जो गृहस्थ है ताके तो एक अपनी स्त्रीविना अन्यस्त्रीनिकी संगति तथा अवलोकन वचनालापकरि परिहार अर अन्य स्त्रीनिकी कथाका स्वप्नहूमैं विचार नाहीं रहै है अर एकांतमैं मातावहनपुत्रीकी संगति हू नाहीं करे है अर मुनीश्वर तो समस्त स्त्रीमात्रका ही संबंध नाहीं करे है स्त्रीनिमैं उपदेश नाहीं करे है जातैं स्त्रीका नाम ही प्रगट दोषनिकूं कहे है। स्त्रीसमान इस जीवकूं नष्ट करनेवाला अन्य कोऊ अरि कहिये वैरी नाहीं तातैं उत्तम पुरुष याकूं नारी कहे हैं दोषनिकूं प्रत्यक्ष देखते देखते आच्छादन करे तातैं याका नाम स्त्री है याका देखनेकरि पुरुषको पतन होजाय तातैं याका नाम पत्नी है कुमरण करनेका कारण है तातैं याका नाम कुमारी है याकी संगतकरि पौरुषबुद्धिबलादिक नष्ट होजाय यातैं याका नाम अबला है। संसारके बंधका कारण है यातैं याका नाम वधू है कुटिलतामायाचारका स्वभाव धारे है यातैं याका नाम वामा है याका नेत्र-

निमैं कुटिलता बसै है यातैं याका नाम वामलोचना है शीलवंतकूं इंद्र नमस्कार करैं हैं शीलवानपुरुष रत्नत्रयरूप धन लेय कामादिक लुटेरानिका भयरहित निर्भय निर्वाणपुरीप्रति गमन करै हैं शीलकरि भूषित रूपरहित होय तथा मलीन होय रोगादिककरि व्याप्त होजाय तो हू अपना संसर्गकरि समस्त सभानिवासीनिकूं मोहित करै है सुखित करै है। अर शीलरहित व्यभिचारी रूपकरि कामदेव समान है तो हू लोकनिमैं थुथकार करिये है जातैं याका नाम ही कुशील है शील नाम स्वभावका है कामी मनुष्यका शील जो आत्माका स्वभाव सो खोटा होजाय है यातैं याकूं कुशील कहिये है। बहुरि कामी मनुष्य धर्मतैं आत्माका स्वभावतैं व्यवहारकी शुद्धतातैं चलिजाय है यातैं याकूं व्यभिचारी कहिये हैं या समान जगमैं अन्य कुकर्म नाहीं तातैं कामकूं कुकर्म कहिये है यातैं मनुष्य पशुकेसमान होजाय यातैं याकूं पशुकर्म कहिये है ब्रह्म जो आत्मा ताका ज्ञानदर्शनादिस्वभाव ताका घात यातैं होय है तातैं याकूं अब्रह्म कहिये है जातैं कुशीलाकी संगतितैं कुशीलो होय जाय है जो शीलकी रक्षा करी सो ही क्षांति तप व्रत संयम समस्त पाल्या। बहुरि जो अपना स्वभावतैं नाहीं चलायमान होना ताकूं मुनिश्वर शील कहै हैं शीलनामका गुण समस्तगुणनिमैं बडा है शीलकरिसहित पुरुषका तो थोरा हू व्रत तप प्रचुर फलकूं फलै है अर शीलविना बहुत हू तप व्रत है सो निष्फल है। इसप्रकार जानि अपने आत्मामैं शीलकी शुद्धताके अर्थि शीलहीकूं नित्य पूजू हूं यो शीलवृत मनुष्यजन्महीमैं है अन्यगतिमैं नाहीं है तातैं जन्मसफल किया चाहो हो तो शीलकी ही उज्वलता करो ऐसैं शीलवृतेष्वनतीचार नाम तीसरी भावना वर्णन करी ॥ ३ ॥

अब अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नाम चौथी भावनाका वर्णन करै हैं। भो आत्मन् यो मनुष्यजन्म पाय निरंतर ज्ञानाभ्यास ही करो ज्ञानका अभ्यासविना एकक्षण हू व्यतीत मति करो ज्ञानके अभ्यासविना मनुष्य पशुसमान है यातैं योग्यकालमैं जिनआगमका पाठ करो अर समभाव होय तदि ध्यान करो अर शास्त्रनिके अर्थका चिंतवन करो अर बहुत ज्ञानी गुरुजन तिनमैं नम्रता बंदना विनयादिक करो अर

धर्म श्रवण करनेके इच्छुक तिनकूं धर्मका उपदेश करो याहीकूं अभीक्ष्णज्ञानोपयोग कहैं हैं इस अभीक्ष्णज्ञानोपयोगनामगुणका अष्टद्रव्यानितैं पूजन करके याका अर्घ उतार करो अर पुष्पनिकी अंजुलि अग्रभागविषै क्षेपण करो इहां ज्ञानोपयोग है सो चैतन्यकी परिणति है याहीतैं क्षणक्षणमैं निरंतर चैतन्यकी भावना करना। मेरे अनादिकालतैं काम क्रोध अभिमान लोभादिक संग लगि रहे हैं इनका संस्कार अनादितैं मेरे चैतन्यरूपमें घुलि रहे हैं अब ऐसी भावना होहू जो भगवानके परमागमका सेवन का प्रभावतैं मेरा आत्मा रागद्वेषादिकतैं भिन्न अपना ज्ञायकस्वभावरूपहीमैं ठहरि जाय अर रागादिकनिके वशीभूत नाहीं होय सो ही मेरी आत्माका हित है अथवा नवीनशिष्यनिके आगे श्रुतका अर्थ का ऐसा प्रकाश करना जो संशयादिक रहित शिष्यनिका हृदयमें यथावत स्वपर पदार्थका स्वरूप प्रगट हो जाय पाप पुण्यका स्वरूप लोकअलोकका स्वरूप मुनिश्रावकका धर्मको स्वरूप सत्यार्थ निर्णय हो जाय तैसैं ज्ञानाभ्यास करना तथा अपने चित्तमैं संसारदेहभोगतैं विरक्तता चिंतवन करना। संसारदेह भोगनिका यथार्थ स्वरूपका चिंतवन करनेतैं रागद्वेषमोह ज्ञानकूं विपरीत नाहीं करि सकै हैं। समस्त द्रव्यनिमें एक मिल्या हुआ हू आत्माका भिन्न अनुभव होय सो ही ज्ञानोपयोग है ज्ञानाभ्यास करके विषयनिकी बांछा नष्ट होय है कषायनिका अभाव होय है माया मिथ्या निदान तीनशल्य ज्ञानके अभ्यास करि ही नष्ट होय हैं ज्ञानके अभ्यासहीतैं मन स्थिर होय है ज्ञानके अभ्यास करके ही अनेक प्रकारके विकल्प नष्ट होय हैं ज्ञानाभ्यास करके धर्मध्यानमैं शुक्लध्यानमें अचल होय तिष्ठैं हैं ज्ञानअभ्यासतैं ही व्रतसंयमतैं चलायमान नाहीं होय है ज्ञानाभ्यास करके ही जिनेंद्रका शासन (आज्ञा) प्रवर्तै है अशुभकर्म का नाश हू ज्ञानाभ्यास करके ही होय प्रभावना हू जिनधर्मकी ज्ञानके अभ्यास करके ही होय ज्ञानका अभ्यासतैं लोकनिका हृदयमैंतैं पूर्वसंचय किया ऐसा पापरूप ऋण नष्ट हो जाय है अज्ञानी घोरतप करि कोटिपूर्वमें जिस कर्मकूं खिपावे तिस कर्मकूं ज्ञानी अंतर्मुहूर्तमें खिपावै है जिनधर्मका स्तंभ ज्ञानका

अभ्यास ही है ज्ञानहीके प्रभावतैं समस्त विषयनिकी वांछारहित होय संतोष धारण करिये है ज्ञानहीतैं उत्तमक्षमादि गुण प्रगट होय हैं ज्ञानाभ्यासतैं ही भक्ष्यअभक्ष्य योग्यअयोग्य त्यागनेयोग्य ग्रहणकरनेयोग्यका विचार होय है ज्ञान विना परमार्थ अर व्यवहार दोऊ नष्ट हो जाय हैं ज्ञानरहित राजपुत्रहूका निरादर होय है ज्ञानसमान कोऊ धन नाहीं है ज्ञानका दान समान कोऊ दान नाहीं है दुःखित जीवकूं सुखितकूं सदा ज्ञान ही शरण है ज्ञान ही स्वदेशमें अन्यदेशमें आदर करावनेवाला परम धन है ज्ञानधन है सो किसी करि चोरथा जाय नाहीं किसीकूं दिये घटै नाहीं ज्ञान ही सम्यग्दर्शन उपजावे है ज्ञानहीतैं मोक्ष होय है सम्यग्ज्ञान आत्माका अविनाशी स्वाधीन धन है ज्ञानबिना संसारसमुद्रमैं डूबतेकूं हस्तावलंबन देय कौन रक्षा करे। विद्यासमान आभूषण नाहीं विद्याविना आभूषणमात्रतैं ही सत्पुरुषनिके आदरने योग्य होय नाहीं है निर्धनके परमनिधान प्राप्त करानेवाला एक सम्यग्ज्ञान ही है यातैं हे भव्यजीवो! भगवान करुणानिधान वीतराग गुरु तुमकूं या शिक्षा करैं हैं अपनी आत्माकूं सम्यग्ज्ञानके अभ्यासहीमें लगावो अर मिथ्यादृष्टिनिकरि प्ररूप्या मिथ्याज्ञानका दूरहीतैं परिहार करो सम्यक्‌मिथ्या की परीक्षा करि ग्रहण करो अपना संतानकूं पढावो अन्यजननिकूं विद्याका अभ्यास करावो जे धनवान होय अपने धनकूं सफल करथा चाहो हो तो पढने पढानेवालेकूं आजीविकादिक देयकरि थिरता करावो पुस्तक लिखाय देवो विद्या पढनेवालेकूं देवो पुस्तकानिकूं शुद्ध करो करावो पठनपाठनके अर्थि स्थान देवो निरंतर पठन श्रवणमैं ही मनुष्य जन्मका काल व्यतीत करो यो अवसर व्यतीत होतो चल्या जाय है जेते आयु काय इंद्रियां बुद्धि बनि रही हैं तेते मनुष्यजन्मकी एक घडी हू सम्यग्ज्ञान विना मति खोवो ज्ञानरूपधन परलोकमें हू लार जायगा इस अभीक्ष्णज्ञानोपयोगकी महिमा कोटि जिह्वानि करि हू वर्णन नाहीं करी जाय है, याहीतैं ज्ञानोपयोगकी परमशरणके अर्थि गृहस्थ धनसहित होय सो भावना भाय अर अर्घ उतारण करे अर गृहके त्यागी होंय ते निरंतर भावना भावो ऐसैं अभीक्ष्णज्ञानोपयोग नामा चौथी भावना वर्णन करी ॥ ४ ॥

अब पंचमी संवेग भावनाका वर्णन करे हैं–जो संसार देह भोगनितैं विरक्तपना सो संवेग तथा धर्ममें अर धर्मका फलमें अनुराग सो संवेग है अथवा संसार देह भोगनितैं विरक्त होय करि धर्ममें अनुराग करना सो संवेग है। इहां संसारमें जिस पुत्रसूं राग करिये है सो पुत्र जन्म लेते ही तो स्त्रीका यौवन सौंदर्यादिक बिगाडे है अर जन्म हुये पाछें बडी आकुलताकरि बडा कष्टकरि धनका खरचकरि पुत्रकूं बधाइये है अर रोगादिकनिका बडा जाब्ता अर क्षणक्षणमें बडी सावधानीतैं महामोही महारागी ग्लानिरहित होय बडा कष्ट सहिकरि बडा करिये है बडा होय तदि आछा भोजन आछा वस्त्र आछा आभरण आछा स्थानकूं हठतैं ग्रहण करे है अर जो मूर्ख होय व्यसनी होय तीव्रकषायी होय तो रात्रि-दिन क्लेश होनेका परिमाण नाहीं कहनेमें आवै है पुत्रके मोहतैं परिग्रहमें बडी मूर्छा बधे है अर समर्थ होजाय अर अपनी आज्ञामें मंद होय तो महा आर्तरूप हुआ मरणपर्यंत क्लेश नाहीं छांडे है अर जो पिताकूं अपना कार्य करनेवाला समझे जतैं प्रीति करे है असमर्थ होजाय तासूं राग नाहीं करे धन-रहितका निरादर करे है यातैं पुत्रका स्वरूपकूं समझि राग त्यागि परमधर्मसूं राग करो पुत्रके अर्थि अन्यायतैं धनादिपरिग्रहके ग्रहणका परित्याग करो। बहुरि स्त्री हू मोह नाम ठिगकी महापाशी है ममता उपजावनेवाली है तृष्णाकूं बधावनेवाली है स्त्रीमें तीव्रराग है सो धर्ममें प्रवृत्तिका नाश करे है लोभकूं अत्यंत बधावे है परिग्रहमें मूर्छा बधावे है ध्यानस्वाध्यायमें विघ्न करे है विषयनिमें अंध करनेवाली है क्रोधादिक च्यारो कषायनिकी तीव्रता करनेवाली है संयमका घात करनेवाली है कलहको मूल है दुर्ध्यानको स्थान है मरण विगाडनेवाली है इत्यादिक दोषनिका मूलकारण जानि स्त्रीके संगमें रागभाव छांडि वीतराग धर्मसूं अपना संबंध करो। बहुरि कलिकालके मित्र हू विषयनिमें उलझावनहारे हैं समस्त व्यसनानिमें सहकारी हैं धनवान देखे है तिनतैं अनेकप्रकार मित्रता करे हैं निरधनतैं कोऊ संभाषण हू नाहीं करे हैं तातैं भो ज्ञानीजन हो जो संसारपतनको भय है तो अन्यसमस्ततैं मित्रता छांडि

परमधर्ममें अनुराग करो अर संसार निरंतर जन्ममरण रूप है। जन्मदिनतें ही मरणके सन्मुख निरंतर प्रयाण करै है अनंतानंतकाल जन्ममरण करते भया तातैं पंच परिवर्तनरूप संसारतैं विरागता भावो अर ये पंचइंद्रियनिके विषय हैं ते आत्माका स्वरूपकूं भुलावनेवाले हैं तृष्णाके बधावनेवाले हैं अतृप्तताके करनेवाले हैं विषयनिकीसी आताप त्रैलोक्यमैं अन्य नाहीं है विषय हैं ते नरकादिकुगतिके कारण हैं धर्मतैं पराङ्मुख करैं हैं कषायनिकूं बधावनेवाले हैं अपना कल्याण चाहैं तिनकूं दूरहीतैं त्यागनेयोग्य हैं ज्ञानकूं विपरीत करनेवाले हैं विषके समान मारनेवाले हैं विष अर अग्निसमान दाहके उपजावनेवाले हैं तातैं विषयनितैं राग छांडना ही परमकल्याण है अर शरीर है सो रोगनिका स्थान है महामलीन दुर्गंध सप्तधातुमय है मलमूत्रादिककरि भरया है वातपित्तकफमय है पवनके आधारतैं हलन चलनादिक करै है सासता क्षुधातृषाकी वेदना उपजावै है समस्त अशुचिताका पुंज है दिन दिन जीर्ण होता चल्याजाय है कोटिनिउपाय करके हू रक्षा किया हुआ मरणकूं प्राप्त होय है ऐसा देहतैं विरागता ही श्रेष्ठ है ऐसे पुत्र मित्र कलत्र संसार भोग शरीरका दुःख करनेवाला स्वरूप जानि विरागभावकूं प्राप्त होना सो संवेग है। संवेग भावनाकूं निरंतर चिंतवन करना ही श्रेष्ठ है यातैं मेरे हृदयमैं निरंतर संवेगभावना तिष्ठो ऐसा चिंतवन करते संसारदेहभोगनितैं विरक्तता होय तदि परमधर्ममैं अनुराग होय है। धर्मशब्दका अर्थ ऐसा जानना जो वस्तुका स्वभाव है सो धर्म है तथा उत्तमक्षमादि दशलक्षणरूप धर्म है तथा रत्नत्रय-स्वरूप धर्म है तथा जीवनिका दयारूप धर्म है ऐसे पर्यायबुद्धि शिष्यनिके समझावनेके अर्थि धर्मशब्दकूं च्यारिप्रकारकरि वर्णन किया है तो हू वस्तु जो आत्मा ताका स्वभाव ही दशलक्षण है क्षमादि दश-प्रकार आत्माका ही स्वभाव है अर सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्र हू आत्मातैं भिन्न नाहीं है अर दया है सो हू आत्माहीका स्वभाव है सो ऐसा जिनेन्द्रकरि कह्या आत्माका स्वभावरूप दशलक्षणधर्ममैं जो अनुराग सो संवेग है अर कपटरहित रत्नत्रयधर्ममैं अनुराग करना सो संवेग धर्म है तथा मुनीश्वरनिका अर

श्रावकका धर्ममें अनुराग सो संवेग है तथा जीवनिकी रक्षाकरनेरूप जीवनिका दयामें परिणाम होना सो भगवान संवेग कह्या है अथवा वस्तु जो आत्मा ताका स्वभाव केवलज्ञान केवलदर्शन है तिस स्वभावमें लीन होना सो प्रशंसा करनेयोग्य संवेग है जातैं धर्ममें अनुराग परिणाम सो संवेग है तथा धर्मका फलकूं अत्यन्तमिष्ट जानना सो संवेग है ये तीर्थंकरपना चक्रवर्ती होना नारायण प्रति-नारायण बलभद्रादिक उपजना सो धर्महीका फल है तथा बाधारहित केवली होना तथा स्वर्गादिकनिमें महानऋद्धिका धारक देव होना तथा इंद्र होना तथा अनुत्तरादिकविमानमें अहमिंद्र होना सो समस्त पूर्वजन्ममें आराधन किया धर्मका ही फल है। बहुरि और हू जो भोगभूमिआदिकमें उपजना राजसंपदा पावना अखंड ऐश्वर्य पावना अनेक देशनिमें आज्ञा प्रवर्तना प्रचुरधनसंपदा पावना रूपकी अधिकता पावनी बलकी अधिकता चतुरता महान पंडितपना सर्वलोकमें मान्यता निर्मलयशकी विख्या-तता बुद्धिकी उज्वलता आज्ञाकारी धर्मात्मा कुटुंबका संयोग होना सत्पुरुषनिकी संगति मिलना रोगरहित होना दीर्घआयु इंद्रियनिकी उज्वलता न्यायमार्गमें प्रवर्तना वचनकी मिष्टता इत्यादिक उत्तमसामग्रीका पावना है सो हू कोऊ धर्ममें प्रीति करी है तथा धर्मात्मानिका सेवन किया है धर्मकी तथा धर्मात्मानिकी प्रशंसा की है ताका फल है। कल्पवृक्ष चिंतामणि समस्त धर्मात्माके द्वारे खडे जानहू। धर्मके फलकी महिमा कोऊ कोटि जिह्वानिकरि कहनेकूं समर्थ नाहीं होइये है। ऐसे धर्मके फलकूं त्रैलोक्यमें उत्कृष्ट जानै है ताके संवेगभावना होय है। बहुरि धर्मसहित सधर्मीनिकूं देखि आनंद उपजना तथा धर्मकी कथनीमें आनंदमय होना और भोगनितैं विरक्त होना सो संवेग नामा पंचमअंग है याकूं आत्माका हित समझि याकी निरंतर भावना भावो अर भावनाके आनंदकरि सहित होय याकी प्राप्तिके अर्थि याका महाअर्घ उतारण करो। ऐसैं संवेगनामा पंचम भावना वर्णन करी ॥५॥

अब शक्तिप्रमाणत्याग भावना वर्णन करिये है। त्यागनामभावना प्रशंसायोग्य मनुष्यजन्मका

मंडन है। अपने हृदयमें त्यागभाव रचनेके अर्थि अनेक उत्सवरूप वादित्रनिकूं बजाय याका महान अर्घ उतारण करो। बाह्य अभ्यंतर दोय प्रकारका परिग्रहतैं ममता छांडनेकरि त्यागधर्म होय है। अंतरंगपरिग्रह चौदहप्रकार है सो ऐसे जानना। जाण्याविना ग्रहण त्याग वृथा है। मिथ्यात्व, अर स्त्रीवेद, पुरुषवेद, नपुंसकवेदरूप परिणाम सो वेदपरिग्रह है। हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, राग, द्वेष,क्रोध,मान,माया,लोभ ऐसे चौदहप्रकार अंतरंग परिग्रह जनाया। तहां जो शरीरादिक परद्रव्यनिमें आत्मबुद्धि करना सो मिथ्यात्व नाम परिग्रह है। यद्यपि जो वस्तु है सो अपना द्रव्य अपना गुण अपना पर्याय है सो ही अपना स्वरूप है। जैसे सुवर्णनाम द्रव्य है सुवर्णके पीतादिक गुण हैं कुंडलादि पर्याय हैं सो समस्त सुवर्ण ही हैं यातैं सुवर्ण अन्यवस्तुका नाहीं अन्यवस्तु सुवर्णका नाहीं सुवर्ण है सो सुवर्ण हीका है अन्य वस्तुका कोऊ हुआ नाहीं हो है नाहीं होयगा नाहीं अपना स्वरूप है सो ही आपका है ऐसें आत्मा है सो आत्माहीका है आत्माका अन्य कोऊ ही द्रव्य नाहीं है। अब जो देहकूं आपा माने है जो मैं गोरा, मैं सांवला, मैं राजा, मैं रंक, मैं स्वामी, मैं सेवक, मैं ब्राह्मण, मैं क्षत्रिय, मैं वैश्य, मैं शूद्र, मैं वृद्ध, मैं बाल, मैं बलवान, मैं निर्बल, मैं मनुष्य, मैं तिर्यंच इत्यादिक कर्मकृत विनाशीक परद्रव्यकृत पर्यायमें आत्मबुद्धि करना सो मिथ्यात्वनाम परिग्रह है। मिथ्यादर्शनतैं ही मेरा गृह मेरा पुत्र मेरा राज मैं ऊंच मैं नीच इत्यादिक मानि समस्त परपदार्थनिमें आत्मबुद्धि करे है पुद्गलका नाशकूं अपना नाश माने है याके बंधनेतैं अपना बंधना घटनेतैं घटना मानि पर्यायमें आत्मबुद्धिकरि अनादिकालतैं आपा भूलि रह्या है यातैं समस्त परिग्रहमें आत्मबुद्धिका मूल मिथ्यात्वनामपरिग्रह है जाके मिथ्याज्ञान नाहीं सो परद्रव्यनिमें 'हमारा' ऐसें कहता हुवा हू परद्रव्यनिमें कदाचित् आपा नाहीं माने है। बहुरि वेदके उदयतैं स्त्रीपुरुषनिमें जो कामसेवनके परिणाम होय हैं तिस काममें तन्मय होय कामके भावकूं आत्मभाव मानना सो वेदपरिग्रह है। काम तो वीर्यादिकका प्रेर्या देहका विकार है इसकूं अपना स्वरूप जाने सो वेदपरि-

ग्रह है। बहुरि धन ऐश्वर्य पुत्र स्त्री आभरणादि परद्रव्यादिकमैं आसक्तता सो रागपरिग्रह है अन्यका विभव परिवार ऐश्वर्य पांडित्यादिक देखि वैरभाव करना सो द्वेषपरिग्रह है हास्यमें आसक्त होना सो हास्य परिग्रह है अपना मरण होनेतैं मित्रनिका परिग्रहादिकनिकरि वियोगहोनेतैं निरंतर भयवान रहना सो भय परिग्रह है पंचइंद्रियनिकरि वांछित भोगउपभोगके भोगनिमें लीन हो जाना सो रति परिग्रह है। अनिष्टवस्तुका संयोगमैं परिणामनिका संक्लेशरूप होना सो अरतिपरिग्रह है अपना इष्ट स्त्रीपुत्रमित्रधनजीविकादिकका वियोग होते तिनका संयोगकी वांछा करके संक्लेशरूप होना सो शोक परिग्रह है। बहुरि घृणावान पुद्गलनिके देखनेतैं श्रवणतैं चिंतवनतैं स्पर्शनतैं परिणाममैं ग्लानि उपजना सो जुगुप्सा नाम परिग्रह है। अथवा अन्यका उदय देखि परिणाममैं क्लेशित होना सुहावे नाहीं सो जुगुप्सा परिग्रह है। बहुरि परिणाममें रोषकरि तप्त होना सो क्रोध परिग्रह है बहुरि उच्च कुल जाति धन ऐश्वर्य रूप बल ज्ञान बुद्धि इनकरि आपकूं अधिक जानि मद करना तथा परकूं घाटि जानि निरादर करना कठोरपरिणाम रखना सो मानपरिग्रह है अनेक कपटछलादिककरि वक्रपरिणाम रखना सो माया परिग्रह है। परद्रव्यानके ग्रहणमें तृष्णा सो लोभ परिग्रह है। ऐसैं संसारपरिभ्रमणके कारण आत्माके ज्ञानादिक गुणनिके घातक चौदहप्रकार अंतरंगपरिग्रह हैं अर इनहीतैं मूर्छाके कारण धनधान्यक्षेत्रसुवर्णादिक स्त्रीपुत्रादि चेतन अचेतन बाह्य परिग्रह हैं ऐसे अंतरंग बहिरंग दोयप्रकारके परिग्रहके त्यागनेतैं त्याग धर्म होय है। यद्यपि बाह्यपरिग्रहरहित तो दरिद्री मनुष्य स्वभावहीतैं होय है परंतु अभ्यंतरपरिग्रहका त्याग बहुत दुर्लभ है। यातैं दोयप्रकारका परिग्रह एकदेशत्याग तो श्रावकके होय है अर सकलत्याग मुनीश्वरनिके होय है बहुरि कषायनिका त्यागनैं त्यागधर्म होय है बहुरि इंद्रियनिकूं विषयनितैं रोकनेकरि त्याग होय है। बहुरि रसनिका त्यागकरि त्यागधर्म होय है। जातैं रसना इंद्रियकी लोलुपता जीतनेतैं समस्त पापनिका त्याग सहज होय है। बहुरि जिनेंद्रका परमागमका अध्ययनका अन्यकूं

अध्ययन करावना शास्त्रनिकूं लिखाय देना शोधना शुधावना सो परम उपकार करनेवाला त्यागधर्म होय है। बहुरि मनके दुष्टविकल्पनिका अभाव करना दुष्टविकल्पनिके कारण छांडि चारि अनुयोगकी चरचामें चित्त लगावना सो त्यागधर्म है। बहुरि मोहका नाश करनेवाला धर्मका उपदेश श्रावकनिकूं देना सो महापुण्यका उपजावनेवाला त्यागधर्म है। वीतरागधर्मका उपदेशतैं अनेकप्राणीनिका परिणाम पापतैं भयभीत होय है धर्मके प्रभावकूं अनेक प्राणी प्राप्त होय हैं। बहुरि उत्तम मध्यम जघन्य ऐसैं तीन प्रकारके पात्रनिकूं भक्तिकरि युक्त होय आहारदान देना प्रासुक औषधि देना ज्ञानके उपकरण सिद्धांतके पढनेयोग्य पुस्तकका दान देना मुनिके योग्य तथा श्रावकके योग्य वस्तिका दान देना गुणनिके धारकनिकूं तपकी वृद्धि करनेवाला स्वाध्यायमैं लीन करनेवाला ध्यानकी वृद्धिका कारण आहारादिक चारि प्रकारका दान परमभक्तितैं विकासितचित्त हुआ अपना जन्मकूं कृतार्थ मानता गृहचाराकूं सफल मानता बडा आदरतैं पात्रदान करो। पात्रदान होना महाभाग्यतैं जिनका भला होना है तिनके होय है पात्रका लाभ होना ही दुर्लभ है अर भक्तिसहित पात्रदान होय जाय ताकी महिमा कहनेकूं कौन समर्थ है बहुरि क्षुधातृषाकरि जो पीडित होय तथा रोगी होय दरिद्री होय वृद्ध होय दीन होय तिनकूं अनुकंपाकरि दान देना सो समस्त त्यागधर्म है त्यागहीतैं मनुष्यजन्म सफल है त्यागहीतैं धनधान्यादिक पावना सफल है त्यागविना गृहस्थका गृह है सो श्मशान समान है अर गृहस्थका स्वामी पुरुष मृतक समान है अर स्त्रीपुत्रादिक गृद्धपक्षी समान हैं सो याका धनरूप मांस चूंटि चूंटि खाय हैं ऐसैं त्यागभावना वर्णन करी॥ ६ ॥

अब शक्तिप्रमाणतपभावना अंगीकार करना। क्योंकि यो शरीर दुःखको कारण है। अनेकदुःख यो शरीर उपजावे है अर यो शरीर अनित्य है अस्थिर अशुचि है कृतघ्नवत् है कोट्यां उपकार करता हू जैसें कृतघ्न अपना नाहीं होय है तैसैं देहके नाना उपकार सेवा करता हू अपना नाहीं होय है याते

यथेष्टविधिकरि याकूं पुष्ट करना योग्य नाहीं कृश करने योग्य है तो हू यो गुण रत्नत्रयके संचयको कारण है। शरीर विना रत्नत्रयधर्म नाहीं होय है सेवककी ज्यों योग्यभोजन देय यथाशक्ति जिनेन्द्रका मार्गतैं विरोधरहित कायक्लेशादि तप करना योग्य है। तप विना इंद्रियनिकी विषयनिमैं लोलुपता घटै नाहीं तपविना त्रैलोक्यका जीतनेवाला कामकूं नष्टकरनेकूं समर्थता होय नाहीं तपविना आत्माकूं अचेत करनेवाली निद्रा जीती जाय नाहीं अर तपविना शरीरका सुखिया स्वभाव मिटै नाहीं जो तपके प्रभावतैं शरीरकूं साधि राख्या होय तो क्षुधा तृषा शीत उष्णादिक परीषह आये कायरता उपजै नाहीं संयमभवतैं चलायमान होय नाहीं तप है सो कर्मकी निर्जराका कारण है। तातैं तप ही करना श्रेष्ठ है। अपना वीर्यकूं नाहीं छिपायकरिकैं जैसैं जिनेन्द्रके मार्गतैं विरोधरहित होय तैसैं तप करो तपनाम सुभटका सहाय विना ये अपना श्रद्धान ज्ञानआचरणरूप धनकूं काम क्रोध प्रमादादिक लूटेरे एकक्षणमैं लूटि लेवैंगे तदि रत्नत्रयसंपदाकरि रहित चतुर्गतिरूपसंसारमैं दीर्घकाल भ्रमण करोगे याहीतैं जैसैं वात पित्त कफ ये त्रिदोष विपरीत होय रोगादिक नाहीं उपजावैं तैसैं तप करना उचित है समस्तमैं प्रधानतप तो दिगम्बरपणा है कैसा है दिगम्बरपणा जो घरकी ममतारूपफांसीकूं छेदि देहका समस्त सुखियापणा छांडि अपनाशरीरतैं शीत उष्ण तावडा वर्षा पवन डांस मच्छर मक्षिकादिकनिकी बाधाके जीतनेकूं सन्मुख होय कोपीनादिक समस्त वस्त्रादिकको त्यागकरि दशदिशारूपही जामैं वस्त्र हैं ऐसा दिगम्बरपणा धारण करना सो अतिशयरूप तप जानना जाका स्वरूपकूं देखते श्रवण करते बडे बडे शूरवीर कंपायमान हो जाय हैं तातैं भो शक्तिकूं प्रगटकरनेवाले हो जो संसारके बंधनमे छूट्या चाहो हो तो जिनेश्वरसंबंधी दीक्षा धारण करो जातैं अंगका सुखियापणा नष्ट होय उपसर्गपरीषह सहनेमैं कायरताका अभाव होय सो तप है। जातैं स्वर्गलोककी रंभा अर तिलोत्तमा हू अपने हावभावविलासविभ्रमादिककरि मनकूं कामका विकारसहित नाहीं कर सकै ऐसा कामकूं नष्ट करै सो तप है। जो दोय प्रकारके परिग्रहमैं

इच्छाका अभाव हो जाय सो तप है जो इंद्रियानिके विषयानिमें प्रवर्तनेका अभाव हो जाय सो तप है तप तो वही है जो निर्जनवन अर पर्वतनिका भयंकर गुफा जहां भूतराक्षसादिकानिके अनेकाविकार प्रवर्तें अर सिंहव्याघ्रादिकानिके भयंकर प्रचार होय रहे अर कोट्यां वृक्षनिकरि अंधकार होय रह्या अर जहां सर्प अजगर रींछ चीता इत्यादिक भयंकर दुष्टतिर्यंचनिका संचार होय रह्या ऐसे महा विषमस्थाननिमें भयरहित हुआ ध्यानस्वाध्यायमें निराकुल हुवा तिष्ठै सो तप है। जो आहारका लाभ अलाभमें समभावके धारक मीठा खाटा कडवा कषायला ठंडा ताता सरस नीरस भोजन जलादिकमें लालसारहित संतोषरूप अमृतका पान करते आनंदमें तिष्ठै सो तप है। जो दुष्ट देव दुष्ट मनुष्य दुष्टतिर्यंचनिकरि किये घोर उपसर्गनिकूं आवते कायरता छांडि कंपायमान नाहीं होना सो तप है जातें चिरकालका संचय किया कर्म निर्जरै सो तप है। बहुरि जो कुवचन कहनेवाले निंद्यदोष लगावनेवाले ताडन मारन अग्निमें ज्वलनादिउपद्रव करनेवालेमें द्वेषबुद्धिकरि कलुषपरिणाम नाहीं करना अर स्तुतिपूजनादि करनेवालेमें राग भावका नाहीं उपजना सो तप है। बहुरि पंचमहाव्रतनिका अर पंचसमितिका पालन अर पंचइंद्रियनिका निरोध करना अर छह आवश्यक समयका समय करना अपने मस्तकके डाढीमूछके केशानकूं अपने हस्ततें उपवासका दिनमें उपाडना दोय महीना पूर्ण भए उत्कृष्ट लोंच है मध्यम तीनमहीने गये लोंच करे जघन्य चारमहीने गए लोच करै है सो लोंचकरना हू तप है अन्य भेषीनिकी ज्यों रोजीना केश नाहीं उपाडै है शीतकाल ग्रीषमकाल वर्षाकालमें नग्न रहना अर स्नानका नाहीं करना अर भूमिशयनकरि अल्पकाल निद्रा लेना दंतनिकूं अंगुलिकरि हू नाहीं धोवना अर एकवार भोजन खडा भोजन रसनीरसस्वादकूं छांडि भोजन करै ऐसे अट्ठाईस मूलगुण अखंड पालना सो बडा तप है इन मूलगुणनिके प्रभावतें घातियाकर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानकूं प्राप्त होय मुक्त हो जाय है। यातैं भो ज्ञानीजन हो धर्मको अंग यो तप है याकी निर्विघ्न प्राप्तिकेअर्थि याहीका स्तवनपूजनादिकरि याका महाअर्घ उतारण करो। यातैं दूरि

अर अत्यंतपरोक्ष हू मोक्ष तुम्हारे अतिनिकटताकूं प्राप्त होय है ऐसें शक्तितस्त्यागनामा सप्तमी भावनाका वर्णन किया ॥ ७ ॥

साधुसमाधि नामा अष्टमीभावनाकूं कहे हैं। जैसें भंडारमें लागी हुई अग्निकूं गृहस्थ है सो अपना उपकारक वस्तुका नाश जानि अग्निकूं बुझाइये है क्योंकि अनेक वस्तुकी रक्षा होना बहुत उपकारक है तैसें अनेक व्रतशीलादि अनेकगुणनिकरि सहित जो व्रती संयमी तिनके कोऊ कारणतैं विघ्न प्रगट होतैं विघ्नकूं दूरिकरि व्रत शीलकी रक्षा करना सो साधुसमाधि है। अथवा गृहस्थके अपने परिणामकूं बिगाडनेवाला मरण आ जाय उपसर्ग आ जाय रोग आ जाय इष्टवियोग हो जाय अनिष्टसंयोग आ जाय तदि भयकूं नाहीं प्राप्त होना सो साधुसमाधि है। सम्यग्ज्ञानी ऐसा विचार करे है हे आत्मन्! तुम अखंड अविनाशी ज्ञानदर्शन स्वभाव हो तुम्हारा मरण नाहीं जो उपज्या है सो विनशैगा पर्यायका विनाश है चैतन्य द्रव्यका विनाश नाहीं है पांच इंद्रिय अर मनबल कायबल वचनबल आयुबल अर उस्वास ये दशप्राण हैं इनिका नाशकूं मरण कहिये है तुम्हारा ज्ञानदर्शन सुख सत्ता इत्यादिक भावप्राण हैं तिनका कदाचित् नाश नाहीं है तातैं देहका नाशकूं अपना नाश मानना सो मिथ्याज्ञान है। भो ज्ञानिन्! हजारां कर्मनिकरि भरया हाडमांसमय दुर्गंध विनाशीक देहका नाश होतैं तुम्हारे कहा भय है तुम तो अविनाशी ज्ञानमय हो यो मृत्यु है सो बडा उपकारी मित्र है जो गल्या सड्या देहमेतैं काढि तुमकूं देवादिकनिका उत्तमदेह धारण करावै है मरण मित्र नाहीं होता तो इस देहमें केतेकाल बसता अर रोगका अर दुःखनिका भरया देहतैं कौन निकासता अर समाधिमरणादिककरि आत्माका उद्धार कैसें होता अर व्रततपसंयमका उत्तमफल मृत्युनाममित्रका उपकारविना कैसें पावता अर पापतैं कौन भयभीत होता अर मृत्युरूप कल्पवृक्षविना चारिआराधनाका शरण ग्रहण कराय संसाररूप कर्दमतैं कौन काढता तातैं संसारमें जिनका चित्त आसक्त है अर देहकूं अपना रूप जानै हैं तिनके मरणका भय है सम्यग्दृष्टि देह

तैं अपना स्वरूपकूं भिन्न जानि भयकूं प्राप्त नाहीं होय है तिनके साधुसमाधि होय है अर जो मरणके अवसरमैं कदाचित् रोगदुःखादिक आवै हैं सो हू सम्यग्दृष्टिके देहसूं ममत्व छुडावनेके अर्थि है अर त्याग संयमादिकके सन्मुख करनेकेअर्थि है प्रमादकूं छुडाय सम्यग्दर्शनादिक चारिआराधनामैं दृढताकेअर्थि हैं अर ज्ञानी विचारै है जो जन्म धाऱ्या है सो अवश्य मरैगा जो कायर होहूंगा तो मरण नाहीं छांडेगा अर धीर होय रहूंगा तो मरण नाहीं छांडेगा तातैं दुर्गतिका कारण जो कायरतातैं मरण ताकूं धिक्कार होहु अब ऐसा साहसतैं मरूं जो देह मरि जाय अर मेरा ज्ञानदर्शनस्वरूपका मरण नाहीं होय ऐसैं मरण करना उचित है तातैं उत्साहसहित सम्यग्दृष्टिके मरणका भय नाहीं सो साधुसमाधि है।

बहुरि देवकृत मनुष्यकृत तिर्यंचकृत उपसर्गकूं होते जाके भय नाहीं होय पूर्वकर्मका उपजाया निर्जरा ही मानै है ताके साधुसमाधि है। बहुरि रोगका भयकूं नाहीं प्राप्त होय हैं जातैं ज्ञानी तो अपना देहकूं ही महारोग मानै है जातैं निरंतर क्षुधातृषादिक घोररोगकूं उपजावनेवाला शरीर है बहुरि यो मनुष्यशरीर है सो वातपित्तकफादिक त्रिदोषमय है असातावेदनीयकर्मके उदयतैं त्रिदोषकी घटतीबधती-तैं ज्वर कांस स्वास अतिसार उदरशूल शिरशूल नेत्रका विकार वातादिपीडा होते ज्ञानी ऐसा विचार करै है जो यो रोग मेरे उत्पन्न भया है सो याकूं असातावेदनीयकर्मको उदय तो अंतरंग कारण है अर द्रव्य क्षेत्रकालादि बहिरंग कारण है सो कर्मके उदयकूं उपशम हुआ रोगका नाश होयगा असाताका प्रबल उदयकूं होते बाह्य औषधादिक ही रोग मेटनेकूं समर्थ नाहीं है अर असाताकर्मके हरनेकूं कोऊ देव दानव मंत्र तंत्र औषधादिक समर्थ हैं नाहीं यातैं अब संक्लेशकूं छांडि समता ग्रहण करना अर बाह्य औषधादिक हैं ते असाताके मंद उदय होतैं सहकारी कारण हैं असाताका प्रबल उदय होतैं औषधादिक बाह्यकारण रोग मेटनेकूं समर्थ नाहीं है ऐसा विचार असाताकर्मके नाशका कारण परमसमता धारण करि संक्लेशरहित होय सहना कायर नाहीं होना सो ही साधुसमाधि है। बहुरि इष्टका वियोग होतैं अर

अनिष्टका संयोग होतैं ज्ञानकी दृढतातैं जो भयकूं प्राप्त नाहीं होना सो साधुसमाधि है। पुरुष जन्म जरामरण-करि भयवान है अर सम्यग्दर्शनादिगुणनिकरि सहित है सो पर्यायका अनंतकालमें आराधनाका शरण-सहित अर भयकरिरहित देहादिक समस्तपरद्रव्यानिमें ममतारहित हुआ व्रतसंयमसहित समाधिमरणकी वांछा करै है। इस संसारमैं परिभ्रमण करता अनंतानंत काल व्यतीत भया समस्त समागम अनेकवार पाया परंतु सम्यक्समाधिमरणकूं नाहीं प्राप्त भया हूं जो समाधिमरण एकवार हू होता तो जन्ममरणका पात्र नाहीं होता संसार परिभ्रमण करता मैं भवभवमैं अनेक नवीन नवीन देह धारण किये ऐसा कौन देह है जो मैं नाहीं धारण किया अब इस वर्तमानदेहमैं कहा ममत्व करूं अर मेरे भवभवमैं अनेक स्वजन कुटुंबजनका हू संबंध भया है अब ही स्वजन नाहीं मिलैं हैं यातैं कौन कौन स्वजनमैं राग करूं अर मेरे भवभवमैं अनेकबार राजऋद्धि हू उपजी अबमैं इस तुच्छ संपदामैं ममता कहा करूंगा भवभवमैं मेरे अनेक मातापिता हू पालना करनेवाले हो गये अब ही नाहीं भये हैं। बहुरि मेरे भवभवमैं नारीपणा हू भया अर मेरे भवभवमैं कामकी तीव्रलंपटतासहित नपुंसकपणा हू भया अर मेरे भवभवमैं अनेकवार पुरुषपणा हू भया तो हू वेदके अभिमानकरि नष्ट होता फिरया अर भवभवमैं अनेक जातिके दुःखकूं प्राप्त भया ऐसा संसारमैं कोऊ दुःख नाहीं है जो मैं अनेकबार नाहीं पाया अर ऐसा कोऊ इंद्रियजनित सुख हू नाहीं है जो मैं अनेकबार नाहीं पाया अर अनेकबार नरकमैं नारकी होय होय असंख्यात काल पर्यंत प्रमाणरहित नानाप्रकारके दुःख भोगे अर अनेक भव तीर्यंचनिके प्राप्त होय होय असंख्यात अनं-तबार जन्ममरण करता अनेकप्रकारके दुःख भोगता भोगता वारंवार परिभ्रमण किया अनेकबार धर्म-वासनारहित मिथ्यादृष्टी मनुष्य हू भया अर अनेकबार देवलोकनिमैं हू प्राप्त भया अर अनेक भवनिमैं जिनेंद्रकूं पूज्या अनेक भवनिमैं गुरुवंदना हू करी अनेकभवनिमैं मिथ्यादृष्टि हुआ कपटतैं आत्मनिंदा हू करी अनेक भवनिमैं दुर्द्धर तप हू धारण किया अनेक भवनिमैं भगवानका समवसरणहूमैं संचार

किया अर अनेक भवनिमैं श्रुतज्ञानके अंगनिका हू पठनपाठनादिक अभ्यास किया तथापि अनंतकाल भव-निवासी ही रह्या यद्यपि जिनेंद्रकूं पूजना गुरुनिकी वंदना तथा आत्मनिंदा करना तथा दुर्द्धरतपश्चरण करना समवसरणमैं जावना श्रुतनिके अंगनिका अभ्यास करना इत्यादिक ये कार्य प्रशंसायोग्य हैं पापका विनाशक हैं पुण्यका कारण हैं तोहू सम्यग्दर्शनविना अकृतार्थ हैं संसारपरिभ्रमणकूं नाहीं रोकि सकैं हैं सम्यग्दर्शनविना समस्त क्रिया पुण्यका बंध करनेवाली है सम्यग्दर्शनसहित होय तदि संसारको छेद करै सो ही आत्मानुशासनमैं कह्या है—

समबोधवृत्ततपसां पाषाणस्यैव गौरवं पुंसः। पूज्यं महामणेरिव तदेव सम्यक्त्वसंयुक्तं ॥ १ ॥

अर्थ—पुरुषके समभाव अर ज्ञान अर चारित्र अर तप इनको महानपणो पाषाणका महानपणाके तुल्य है अर ये ही जे समबोध चारित्र अर तप जो सम्यक्त्वसहित होय तो महामणिकी ज्यों पूज्य हो जाय। भावार्थ—जगतमैं मणि है सो हू पाषाण है अर अन्य झाझडा पत्थर है सो हू पाषाण है परन्तु पाषाण तो मण दोय मणहू बांधि ले जाय बेचै तो हू एक पीसो उपजै तातैं एकदिन हू पेट नाहीं भरै अर मणि केई रती हू ले जाय बेचै तो हजारां रुपया उपजै समस्तजन्मका दारिद्र नष्ट होजाय तैसैं समभाव अर शास्त्रनिका ज्ञान अर चारित्रधारण अर घोरतपश्चरण ये सम्यक्त्वविना बहुतकाल धारण करै तो राज्यसंपदा पावै तथा मंदकषायके प्रभावतैं देवलोकमैं जाय उपजै फिर चयकरि एकइंद्रियादिक पर्यायनिमैं परिभ्रमण करै अर जो सम्यक्त्वसहित होय तो संसारपरिभ्रमणका नाशकरि मुक्त होजाय तातैं सम्यक्त्वविना मिथ्यादृष्टि है सो जिनकूं पूजो वा गुरुवंदना करो समवसरणमैं जावो श्रुतका अभ्यास करो तप करो तोहू अनंतकाल संसारबास ही करैगा इस तीनभवमैं सुख दुःखकी समस्त सामग्री यो जीव अनन्तबार पाई कोऊ हू दुर्लभ नाहीं एक साधुसमाधि जो रत्नत्रयका लाभकूं निर्विघ्न परलोकताईं ले जाना है सो रत्नत्रयसहित हुवा देहकूं छांडै है तिनके साधुसमाधि होय ताका पावना ही दुर्लभ है साधु-

समाधि है सो चतुर्गतिनिमैं परिभ्रमणके दुःखका अभावकरि निश्चल स्वाधीन अनंतसुखकूं प्राप्त करै है जो पुरुष साधुसमाधि भावनाकूं निर्विघ्नप्राप्त होनेके अर्थि इस भावनाकूं भावता याका महान अर्घ उतारण करै है सो ही शीघ्र संसारसमुद्रकूं तिरि अष्टगुणनिका धारक सिद्ध होय है ऐसैं साधुसमाधिनामा अष्टमीभावना वर्णन करी ॥ ८ ॥

अब वैयावृत्तिनामा नवमी भावनाका वर्णन करिये है। कोठा अर उदरकी व्यथा जो आमवात संग्रहणी कठोदर सफोदर नेत्रशूल कर्णशूल शिरःशूल दंतशूल तथा ज्वर कास स्वास जरा इत्यादिक रोगनिकरि पीडित जे मुनि तथा श्रावक तिनकूं निर्दोष आहार औषध वस्तिकादिक करि सेवा करना तिनकी शुश्रूषा करना विनय करना आदर करना दुःख दूरि करनेमैं यत्नकरना सो समस्त वैयावृत्य है जे तपकरि तप्त होंय अर रोगकरि युक्त जिनका शरीर होय तिनके वेदना देखकर तिनके अर्थि प्रासुक औषधि तथा पथ्यादिककरि रोगका उपशम करना सो नवमो वैयावृत्य नाम गुण है वैयावृत्य मुनीश्वरनिके दशभेद करि दश प्रकार है। आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष्य, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ इन दश प्रकारके मुनीश्वरनिके परस्पर वैयावृत्य होय है कायकी चेष्टाकरि वा अन्यद्रव्यकरि दुःख वेदनादिक दूर करनेमैं व्यापार करिये प्रवर्तन करिये सो वैयावृत्य है। इन दश प्रकारके मुनिनिका ऐसा स्वरूप जानना जिनतैं स्वर्गमोक्षके सुखके बीज जे व्रत तिननैं आदरसहित ग्रहण करिकै भव्यजीव अपने हितके अर्थि आचारण किए ते सम्यग्ज्ञानादिगुणनिके धारक आचार्य हैं। भावार्थ—जिनतैं मोक्षके स्वर्गके साधक व्रत आचारण करिये ते आचार्य हैं जिनका समीपकूं प्राप्त होय आगमकूं अध्ययन करिये ते व्रत शीलश्रुतके आधार ऐसे उपाध्याय हैं महान् अनशनादितपमैं तिष्ठै ते तपस्वी हैं जे श्रुतके शिक्षणमैं तत्पर निरंतर व्रतनिकी भावनामैं तत्पर ते शैक्ष्य हैं रोगादिककरि जाका शरीर क्लेशित होय सो ग्लान है वृद्धमुनिनिकी परिपाटीका होय सो गण है आपकूं दीक्षा देनेवाला

आचार्यका शिष्य होय सो कुल है च्यारिप्रकारके मुनिका समूह सो संघ है चिरकालका दीक्षित होय सो साधु है जो पण्डितपणाकरि वक्तापणाकरि ऊंचे कुलकरि लोकनिमें मान्य होय धर्मका गुरु कुलका गौरवपणाका उत्पन्न करनेवाला होय सो मनोज्ञ है अथवा असंयतसम्यग्दृष्टि हू संसारका अभावरूपपणातैं मनोज्ञ है इन दश प्रकारकेनकै रोग आजाय परीषहनिकरि खेदित होय तथा श्रद्धानादि बिगडि मिथ्यात्वादिक प्राप्त होय जाय तो प्रासुक औषधि भोजनपान योग्य स्थान आसन काष्ठफलक तृणादिकनिका संस्तरादिकनिकरि अर पुस्तक पीछिकादिक धर्मोपकरणकरि जो प्रतिकार उपकार करिये तथा सम्यक्त्वमें फेरि स्थापन करिये इत्यादि उपकार सो वैयावृत्य है । अर जो बाह्य भोजन पान औषधादिक नाहीं सम्भवते होंय तो अपने कायकरके कफ तथा नाशिकामल मूत्रादि दूरि करनेकरि तथा उनके अनुकूल आचरणकरनेकरि वैयावृत्य होय है इस वैयावृत्यमें संयमका स्थापन ग्लानिको अभाव अर प्रवचनमें वात्सल्यपणो अर सनाथपणो इत्यादि अनेकगुण प्रगट होय हैं वैयावृत्यही परम धर्म है वैयावृत्य नाहीं होय तो मोक्षमार्ग बिगडि जाय आचार्यादिक हैं ते शिष्य मुनि तथा रोगी इत्यादिकका वैयावृत्य करनेतैं बहुत विशुद्धता उच्चताकूं प्राप्त होय हैं ऐसेही श्रावकादिक मुनिका वैयावृत्य करै तथा श्रावक श्राविकाका करैं औषधदानकरि वैयावृत्य करैं अर भक्तिपूर्वक युक्तिकरि देहका आधार आहारदानकरि वैयावृत्य करैं अर कर्मके उदयतैं दोष लगि गया होय ताका ढांकना तथा श्रद्धानसूं चलायमान भया होय ताकूं सम्यग्दर्शन ग्रहण करावना तथा जिनेंद्रके मार्गसूं चलि गया होय ताकूं मार्गमें स्थापन करना इत्यादिक उपकारकरि वैयावृत्य है । बहुरि जो आचार्यादि गुरु शिष्यकूं श्रुतका अंग पढावै तथा व्रत संयमादिककी शुद्धिको उपदेश करै सो शिष्यका वैयावृत्य है अर शिष्यहू गुरुनिकी आज्ञाप्रमाण प्रवर्तता गुरुनिका चरणनिका सेवन करै सो आचार्यका वैयावृत्य है बहुरि अपना चैतन्यस्वरूप आत्माकूं रागद्वेषादिक दोषनिकरि लिप्त नाहीं होने देना सो

अपने आत्माका वैयावृत्य है तथा अपने आत्माकूं भगवानके परमागममें लगाय देना तथा दशलक्षणरूप धर्ममें लीन होना सो आत्मवैयावृत्य है। तथा काम क्रोध लोभादिकके अर्थ अर इंद्रियनिके विषयनिके आधीन नाहीं होना सो अपना आत्माका वैयावृत्य है। बहुरि इहां औरहू विशेष जानना जो रोगी मुनिका तथा गुरुनिका प्रातःकाल अर अथणने शयन आसन कमंडलु पीछी पुस्तक नेत्रनिसूं देखि मयूरपीच्छिकातैं शोधना तथा असक्तरोगीमुनिका आहार औषधादिकरि संयमके योग्य उपकार करना तथा शुद्ध ग्रंथनिके वाचनेकरि धर्मका उपदेशकरि परिणामकूं धर्ममैं लीन करना तथा उठावना बैठावना मलमूत्र करावना कलोट लिवाना इत्यादिककरि वैयावृत्य करै तथा कोऊ साधु मार्गकरि खेदित होय तथा भील म्लेक्ष दुष्टराजा दुष्टतिर्यंचनिकरि उपद्रवरूप हुआ होय दुर्भिक्ष मारी व्याधि इत्यादिक उपद्रवकरि पीडा होनेतैं परिणाम कायर भया होय ताकूं स्थान देय कुशल पूछिकरि आदरकरि सिद्धांततैं शिक्षाकरि स्थितीकरण करना सो वैयावृत्य है। बहुरि जो समर्थ होय करकेहू अपना बलवीर्यकूं छिपाय वैयावृत्य नाहीं करै है सो धर्मरहित है। तीर्थंकरनिकी आज्ञाभंग करी श्रुतकरि उपदेश्या धर्मकी विराधना करी आचार विगिड्या प्रभावना नष्ट करी धर्मात्माकी आपदाहूमैं उपकार नाहीं किया तदि धर्मतैं परांमुख भया श्रुतकी आज्ञा लोपनेतैं परमागमतैं परांमुख भया अर जाके ऐसा परिणाम होय जो अहो मोह अग्निकरि दग्ध होता जगतमैं एक दिगम्बर मुनि ज्ञानरूप जलकरि मोहरूप अग्निकूं बुझाय आत्मकल्याणकूं करै है धन्य हैं, जे कामकूं मारि रागद्वेषका परिहारकरि इंद्रियनिकूं जीत आत्माके हित मैं उद्यमी भए हैं ये लोकोत्तर गुणनिके धारक हैं मेरे ऐसे गुणवंतनिका चरणनिका ही शरण होहु ऐसे गुणनिमैं परिणाम वैयावृत्यतैं ही होय हैं अर जैसे जैसे गुणनिमैं परिणाम राचै हैं तैसैं तैसैं श्रद्धान बधै है श्रद्धान बधै तदि धर्ममैं प्रीति बधै अर धर्ममैं प्रीति बधै तदि धर्मके नायक अरहंतादिक पंच परमेष्ठीके गुणनिमैं अनुरागरूप भक्ति बधै है कैसीक भक्ति होय है जो मायाचाररहित मिथ्याज्ञानरहित भोगनि-

की वांछारहित अर मेरुकी ज्यों निष्कंप अचल ऐसी जिनभक्ति जाके होय ताके संसारके परिभ्रमणका भय नाहीं रहै है सो भक्ति धर्मात्माकी वैयावृत्यतैं होय है। बहुरि पंच महाव्रतनिकरि युक्त अर कषाय करि रहित रागद्वेषका जीतनेवाला श्रुतज्ञानरूप रत्ननिका निधान ऐसा पात्रका लाभ वैयावृत्य करनेवालेके होय है जो रत्नत्रयधारीका वैयावृत्य किया सो रत्नत्रयसूं अपना जोड बांधि आपकूं अर अन्यकूं मोक्षमार्गमैं स्थापै है। बहुरि वैयावृत्य अंतरंग बहिरंग दोऊ तपनिमैं प्रधान कर्मकी निर्जराका प्रधान कारण है जो आचार्यको वैयावृत्य कीयो सो समस्तसंघको सर्व धर्मको वैयावृत्य कीयो भगवानकी आज्ञा पाली अर आपके अर परके संयमकी रक्षा शुभध्यानकी वृद्धि अर इंद्रियनिका निग्रह किया रत्नत्रयकी रक्षा अर अतिशयरूप दान दीया निर्विचिकित्सा गुणकूं प्रगट दिखाया जिनेंद्रधर्मकी प्रभावना करी धन खरच देना सुलभ है रोगीकी टहल करना दुर्लभ है अन्यका औगुण ढाकना गुण प्रकट करना इत्यादिक गुणनिके प्रभावतैं तीर्थंकर नाम प्रकृतिका बंध करै है यो वैयावृत्य जगतमैं उत्तम ऐसी जिनेन्द्रकी शिक्षा है जो कोऊ श्रावक वा साधु वैयावृत्य करै है सो सर्वोत्कृष्ट निर्वाणकूं पावै है। बहुरि जो अपना सामर्थ्यप्रमाण छःकायकी जीवनिकी रक्षामैं सावधान है ताके समस्त प्राणीनिका वैयावृत्य होय है ऐसैं वैयावृत्य नाम नवमी भावना वर्णन करी ॥ ९ ॥

अब अरहंतभक्ति नाम दशमीभावना वर्णन करै हैं। जो मनवचनकाय करिकै जिन ऐसे दोय अक्षर सदाकाल स्मरण करै है सो अरहंतभक्ति है। भावार्थ—अरहंतके गुणनिमैं अनुराग सो अरहंतभक्ति है जो पूर्वजन्ममैं षोडशकारण भावना भाई है सो तीर्थंकर होय अरहंत होय है ताके तो षोडशकारण नाम भावनातैं उपजाया अद्भुतपुण्य ताके प्रभावतैं गर्भमैं आवनेके छह महीने पहली इंद्रकी आज्ञातैं कुवेर है सो बारहयोजन लम्बी नवयोजन चौडी रत्नमय नगरी रचै है तिसके मध्य राजाके रहनेका महलनिका वर्णन अर नगरीकी रचना अर बडे द्वार अर कोट खाई पडकोटा इत्यादिक रतन-

मई जो कुबेर रचै है ताकी महिमा तो कोऊ हजार जिह्वानिकरि वर्णन करनेकूं समर्थ नाहीं है तहां तीर्थंकरकी माताका गर्भका शोधना अर रुचकद्वीपादिकमैं निवास करनेवाली छप्पन कुमारिका देवी माताकी नाना प्रकारकी सेवा करनेमैं सावधान होय हैं अर गर्भके आवनेके छह महिना पहली प्रभात मध्याह्न अर अपराह्न एक एक कालमैं आकाशतैं साढा तीनकोटि रतननिकी वर्षा कुवेर करै है अर पाछैं गर्भमैं आवतैं ही इंद्रादिक च्यारि निकायके देवनिका आसन कंपायमान होनेतैं च्यारिप्रकारके देव आय नगर की प्रदक्षिणा देय मातापिताकी पूजा सत्कारादिकरि अपने स्थान जाय हैं अर भगवान तीर्थंकर स्फटिकमणिका पिटारासमान मलादिरहित माताका गर्भमैं तिष्ठै है अर कमलवासिनी छहदेवी अर छप्पन रुचिकद्वीपमैं वसनेवाली अर और अनेकदेवी माताकी सेवा करै हैं अर नवमहीना पूर्ण होतैं उचित अवसरमैं जन्म होते ही च्यारो निकायके देवनिका आसन कम्पायमान होना अर वादित्रनिका अकस्मात बाजनेतैं जिनेन्द्रका जन्म जानि बडा हर्षतैं सौधर्म नामा इन्द्र लक्षयोजन प्रमाण ऐरावत हस्ती ऊपरि चढि अपना सौधर्म स्वर्गका इकतीसमा पटलमैं अठारमां श्रेणीबद्ध नाम विमानतैं असंख्यातदेव अपने परिकरनिकरि सहित साढा बाराकोडिजातिका वादित्रनिकी मिष्टध्वनि अर असंख्यात देवनिका जयजयकार शब्द अर अनेक ध्वजा अर उत्सवसामिग्री अर कोड्यां अप्सरानिका नृत्यादिक उत्सव अर कोड्यां गंधर्वदेवनिका गावनेकरि सहित असंख्यात योजन ऊंचा इहांतैं इंद्रका रहनेका पटल अर असंख्यातयोजन तिर्यक् दक्षिणदिशामैं है तहां ते जंबूद्वीपपर्यंत असंख्यात योजन उत्सव करते आय नगरकी प्रदक्षिणा देय इंद्राणी प्रसूतिगृहमैं जाय माताकूं मायानिद्राके वशिकरि वियोगके दुःखके भयतैं अपनी देवत्वशक्तितैं तहां बालक और रचि तीर्थंकरकूं बडी भक्तितैं ल्याय इंद्रकूं सौंपे है तिसकालमैं देखतां देखतां इंद्र तृप्तताकूं नाहीं प्राप्त होता हजार नेत्र रचिकरि देखै है फिर तहां ईशानादिक स्वर्गनिके इंद्र अर भवनवासी व्यंतर ज्योतिषीनिके इंद्रादिक असंख्या-

तदेव अपनी अपनी सेना बाहन परिवार सहित आवैं हैं तहां सौधर्म इंद्र ऐरावति हस्ती ऊपरि चढ्या भगवानकूं गोदमें लेय चालै तहां ईशानइंद्र छत्र धारण करै अर सनतकुमार महेंद्र चमर ढारते अन्य असंख्यातदेव अपने अपने नियोगमें सावधान बडा उत्सवतें मेरुगिरीका पांडुकवनमें पांडुकशिला-ऊपरि अकृत्रिम सिंहासन है तिसऊपरि जिनेंद्रकूं पधराय अर पांडुकवनतें क्षीर समुद्र पर्यंत दोऊतरफ देवांकी पंकति बंध जाय है सो क्षीरसमुद्र मेरुकी भूतितें पांचकोड दशलाख साढागुणचासहजार योजन परै है तिस अवसरमें मेरुकी चूलिकातें दोऊ तरफ मुकट कुंडल हार कंकणादि अद्भुत रत्ननिके आभरण पहरें देवनिकी पंकति मेरुकी चूलिकातें क्षीरसमुद्रपर्यंत श्रेणी बंधे हैं अर हाथूंहाथ कलश सौंपें हैं तहां दोऊ तरफ इंद्रके खडे रहनेके अन्य दोय छोटे सिंहासन ऊपरि सौधर्म ईशान इंद्र कलश लेय अभिषेक एकहजार आठ कलशनिकरि करै है तिन कलशनिका मुख एकयोजनका उदर चारियोजन चौडा आठयोजन ऊंचा तिन कलशनितें निकसी धारा भगवानके वज्रमय शरीर ऊपरि पुष्पनिकी वर्षा समान बाधा नहीं करै है अर पाछै इंद्राणी कोमलवस्त्रतें पूंछ अपना जन्मकूं कृतार्थ मानती स्वर्गतें ल्याये रतनमय समस्त आभरण वस्त्र पहरावैं है तहां अनेकदेव अनेक उत्सव विस्तारे हैं तिनकूं लिखनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं फिर मेरुगिरतें पूर्ववत् उत्सव करते जिनेंद्रकूं ल्याय माताकूं समर्पण करि इंद्र वहां तांडव-नृत्यादिक जो उत्सव करै है तिन समस्त उत्सवनिकूं कोऊ असंख्यातकालपर्यंत कोटि जिह्वानिकरि वर्णन करनेकूं समर्थ नाहीं है। जिनेंद्र जन्मतें ही तीर्थंकर प्रकृतिके उदयके प्रभावतें दश अतिशय जन्मतें लिये ही उपजें हैं पसेवरहित शरीर होय, मल मूत्र कफादिकरहितपना, अर शरीरमें दुग्धवर्ण रुधिर, समचतुरस्रसंस्थान, वज्रर्षभनाराचसंहनन, अद्भुत अप्रमाणरूप, महासुगंध शरीर, अप्रमाणबल, एक हजार आठ लक्षण, प्रियहितमधुरवचन ये समस्त पूर्वजन्ममें षोडशकारण भावना भाई ताका प्रभाव है बहुरि इंद्र अंगुष्ठमें स्थाप्या अमृत ताकूं पान करता माताका स्तनतें उपज्या दुग्धपान नाहीं

करैं हैं फिर अपनी अवस्थाके समान बने देवकुमारनिमैं क्रीडा करते वृद्धिकूं प्राप्त होय है अर स्वर्गलोकतैं आये आभरण वस्त्र भोजनादिक मनोबांछित देव लीयें सासता रात्रिदिन हाजिर रहैं हैं पृथ्वीलोकका भोजन आभरण वस्त्रादिक नाहीं अंगीकार करैं हैं स्वर्गतैं आये ही भोगैं हैं । बहुरि कुमारकाल व्यतीत करि इंद्रादिकनिकरि कीये अद्भुत उत्साह करि भक्तिपूर्वक पिताकरि समर्पण कीया राज्य भोगि अवसर पाय संसार देह भोगनितैं विरागता उपजै तदि अनित्यादिक बारह भावना भावते ही लोकांतिकदेव आय वंदना स्तवनरूप संबोधनादिक करैं हैं अर जिनेंद्रका विराग भाव होतेही च्यारिनिकायके इंद्रादिकदेव अपने आसन कंपायमान होनेतैं जिनेंद्रके तपका अवसर अवधिज्ञानतैं जानि बडे उत्सवनैं आय अभिषेककरि देवलोकके वस्त्राभरणतै भक्तितैं भूषितकरि रत्नमयी पालकी रचि जिनेंद्रकूं चढाय अप्रमाण उत्सव अर जयजयकार शब्दसहित तपके योग्य वनमैं जाय उतारैं तहां वस्त्र आभरण समस्त त्यागैं देव अधर झेलि मस्तक चढावैं अर पंचमुष्टी लोंच सिद्धनिकूं नमस्कारकरि करैं तदि केशनिकूं महा उत्तम जाणि इंद्र रत्ननिके पात्रमें धारणकरि क्षीरसमुद्रमैं बडी भक्तितैं क्षेपै है जिनेंद्र केतक कालमें तपके प्रभावतैं शुक्लध्यानके प्रभावतैं क्षपकश्रेणीमैं घातियाकर्मनिका नाशकरि केवलज्ञानकूं उत्पन्न करैं है तदि अरहंतपना प्रगट होय है तदि केवलज्ञान रूप नेत्रकरि भूत भविष्यत वर्तमान त्रिकालवर्ती समस्त द्रव्यनिकी अनंतानंत परणतिसहित अनुक्रमतैं एकसमयमैं युगपत समस्तकूं जानै है देखै है । तदि च्यारिनिकायके देव ज्ञानकल्याणककी पूजा स्तवन करि भगवानका उपदेशके अर्थि समवसरण अनेक रत्नमय रचैं हैं तिस समवसरणकी विभूतिका वर्णन कौन कर सकै ? पृथ्वीतैं पांच हजार धनुष ऊंचा जाके बीस हजार पैडी तीऊपरि इंद्रनीलमणिमय गोल भूमि बारह योजन प्रमाण तिसऊपरि अप्रमाणमहिमासहित समवसरण रचना है । जहां समवसरण रचना होय है अर भगवानका विहार होय है तहां आंधेनिकूं दीखने लगि जाय बहरे श्रवण करने लगि

जांय लूले चालने लगि जांय हैं गूंगे बोलने लगि जांय हैं वीतरागकी अद्भुत महिमा है जाके धूलिशालादिक रत्नमय कोट मानस्तंभ अर बावड्या अर जलकी खातिका अर पुष्पवाडी फिर रत्नमय कोट दरवाजे नाट्यशाला उपवन वेदी भूमि फिर कोट फिर कल्पवृक्षनिका वन रत्नमयस्तूप फिर महलनिकी भूमि फिर स्फटिकका कोटमैं देवच्छद नाम एक योजनका मंडप सर्व तरफ द्वादश सभा तिनकरि सेवित रत्नमय तीन कटनी गंधकुटीमैं सिंहासन ऊपरि च्यारि अंगुल अंतरीक्ष विराजमान भगवान अरहंत हैं जिनकी अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखमयी अंतरंग विभूतिकी महिमा कहनेकूं च्यारिज्ञानके धारक गणधर समर्थ नाहीं अन्य कौन कहि सकै अर समवसरणकी विभूति ही वचनके अगोचर है अर गंधकुटी तीसरा कटणी उपरि है तहां चउसठि चमर बत्तीस युगल देवनिके मुकट कुंडल हार कडा भुजबंधादिक समस्त आभरण पहिरे ढालि रहैं हैं तीन छत्र अद्भुत कांतिके धारक जिनकी कांतितैं सूर्य चंद्रमा मंदज्योति भासैं हैं अर जिनकी देहका प्रभामंडलको चक्र बँध रह्या जाकरि समवसरणमैं रात्रिदिनको भेद नाहीं रहै है सदा दिवस ही प्रवर्तै है अर महासुगंध त्रैलोक्यमैं ऐसा सुगंध और नाहीं ऐसी गंधकुटीके ऊपर देवनिकरि रच्या अशोकवृक्षकूं देखते ही समस्तलोकनिका शोक नष्ट होय जाय है अर कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी वर्षा आकाशतैं होय है अर आकाशमैं साढाबारकोटि जातिके वादित्रनिकी ऐसी मधुर ध्वनि होय है जिनके श्रवणमात्रतैं क्षुधातृष्णादिक समस्तरोग वेदना नष्ट हो जाय है अर रत्नजडित सिंहासन सूर्यकी कांतिकूं जीतै है। बहुरि जिनेंद्रकी दिव्यध्वनिकी अद्भुत महिमा त्रैलोक्यवर्ती जीवनिके परम उपकार करनेवाली मोहअंधकारका नाश करै है अर समस्त जीव अपनी अपनी भाषामैं शब्द अर्थ ग्रहण करै हैं अर समस्तजीवनिके संशय नाहीं रहै है स्वर्गमोक्षका मार्गकूं प्रगट करै है दिव्यध्वनिकी महिमा वचन द्वारै गणधर इंद्रादिक कहनेकूं समर्थ नाहीं है जिनके समवसरणमैं जातिविरोधी जीवनिकै बैर विरोध नाहीं रहै है समवसरणमैं सिंह अर गज, व्याघ्र अर गो मार्जारी अर हंस

इत्यादिक जातिविरोधी जीव वैरबुद्धि छांडि परस्पर मित्रताकूं प्राप्त होय हैं । वीतरागताकी अद्भुत महिमा है जिनके असंख्यात देव जयजयकार शब्द करै हैं जिनके निकटताकूं प्राप्तकरिके देवनिकरि रचे कलश झारी दर्पण ध्वजा ठोंणो छत्र चमर बीजणा ये अचेतन द्रव्यहू लोकमैं मंगलताकूं प्राप्त होय हैं। अर केवलज्ञान उत्पन्न भये पीछे दश अतिशय प्रगट होय हैं चारों तरफ सो सो योजन सुभिक्षता, अर आकाशगमन भूमिका स्पर्श नाहीं करे, अर कोऊ प्राणीका वध नाहीं होय, अर भोजनका अभाव अर उपसर्गका अभाव, अर चतुर्मुख दीखै, अर समस्त विद्याका ईश्वरपना, छायारहितपणा अर नेत्र टिमकारै नाहीं, अर केश नख वधैं नाहीं ए दश अतिशय घातियाकर्मका नाशतैं स्वयं प्रगट होय हैं। अर तीर्थंकर प्रकृतिका प्रभावतैं चौदह अतिशय देवनिकरि किये होय हैं । अर्द्धमागधी भाषा, समस्त जनसमूहमैं मैत्रीभाव, समस्त ऋतुके फूल फल पत्रादिकसहित वृक्ष होय हैं पृथ्वी दर्पणसमान रत्नमयी तृण-कंटक-रज-रहित होय है, शीतल मंद सुगंध पवन चले है, समस्त जनोंके आनंद प्रगट होय है, अनुकूल पवन सुगंध जलकी वृष्टिकरि भूमि रजरहित होय है, चरण धरैं तहां सात आगे सात पाछे एक बीच ऐसे पंदरा पंदराकरि दोयसै पचीस कमल देव रचैं हैं, आकाश निर्मल, दिशा निर्मल, च्यार निकायके देवनिकरि जयजय शब्द, एक हजार आरांकरिसहित किरणनिका धारक अपना उद्योतकरि सूर्यमंडलकूं तिरस्कार करता धर्मचक्र आगे चालै, अष्ट मंगलद्रव्य ये चौदह देवकृत अतिशय प्रगट होय हैं। क्षुधा तृषा जन्म जरा मरण रोग शोक भय विस्मय राग द्वेष मोह अरति चिंता स्वेद खेद मद निद्रा इन अष्टादश दोषनिकरि रहित अरहंत तिनको वंदना स्तवन ध्यान करो। या अरहंतभक्ति संसारसमुद्रका तारनेवाली निरंतर चिंतवन करो । सुखका करनेवाला अरहंत ताका स्तवन करो याका गुणनिके आश्रय तो अनंत नाम हैं। अर भक्तिका भऱ्या इंद्र भगवानका एक हजारआठ नामकरि स्तवन किया है अर जे अल्पसामर्थ्यके धारक हैं ते हू अपनी शक्ति-

प्रमाण पूजन स्तवन नमस्कार ध्यान करो अरहंतभक्ति संसारसमुद्रको तारनेवाली है सम्यग्दर्शनमें अरहंतभक्तिमें नामभेद है अर अर्थभेद नाहीं है। अरहंतभक्ति नरकादिगतिकूं हरनेवाली है या भक्तिकौ पूजन स्तवनकरि अर्घ उतार करें हैं सो देवांका सुख फिर मनुष्यका सुख भोगि अविनाशी सुखका धारक अक्षय अविनाशीसुखकूं प्राप्त होय है ऐसे अरहंतभक्ति नाम दशमी भावना वर्णन करी ॥ १० ॥

अब आचार्य भक्ति नाम ग्यारमीभावना वर्णन करें हैं। सोही गुरुभक्ति है धन्यभाग जिनका होय तिनके वीतराग गुरुनिके गुणनिमें अनुराग होय है धन्यपुरुषनिके मस्तकऊपरि गुरुनिकी आज्ञा प्रवर्ते है आचार्य हैं सो अनेकगुणनिकी खानि हैं श्रेष्ठतपका धारक हैं यातैं इनका गुण मनविषै धारणकरि पूजिए अर्घ उतारण करिए पुष्पांजलि अग्रभागमें क्षेपिए जो मेरे ऐसे गुरुनिका चरणनिका शरण ही होहू कैसेक हैं आचार्य जिनके अनशनादिक बारहप्रकारका उज्ज्वल तपनिमें निरंतर उद्यम है अर छह आवश्यकाक्रिया में सावधान हैं अर पंचाचारके धारक हैं अर दशलक्षणधर्मरूप है परणति जिनकी अर मनवचनकायकी गुप्तिकरि सहित हैं ऐसे छत्तीसगुणनिकरि युक्त आचार्य होय हैं अर सम्यग्दर्शनाचारकूं निर्दोष धारै हैं अर सम्यग्ज्ञानकी शुद्धताकरि युक्त हैं अर त्रयोदशप्रकार चारित्रकी शुद्धताके धारक अर तपश्चरणमें उत्साहयुक्त अर अपने वीर्यकूं नाहीं छिपावतें बाईसपरिषहनिके जीतनेमें समर्थ ऐसे निरंतर पंचआचारके धारक हैं अंतरंग बाहिरंग ग्रंथकरि रहित निर्ग्रंथ मार्गके गमन करनेमें तत्पर हैं अर उपवास बेला तेला पंचोपवास पक्षोपवास मासोपवास करनेमें तत्पर हैं अर निर्जनवनमें अर पर्वतानिके दराडे अर गुफानिके स्थानमें निश्चल शुभध्यानमें निरंतर मनकूं धारै हैं अर शिष्यनिकी योग्यताकूं आछीरीति सूं जानि दीक्षा देनेमें अर शिक्षाकरनेमें निपुण हैं अर युक्तितैं नव प्रकार नयके जाननेवाले हैं अर अपने कायसूं ममत्व छांडि रात्रिदिन तिष्ठै हैं संसारकूपमें पतन हो जानेतैं भयवान हैं मनवचनकायकी शुद्धतायुक्त नासिकाका

अग्रमें स्थापित करिये है नेत्रयुगल जिनूंने ऐसे आचार्यनिकूं समस्त अंगनिकूं नमाय पृथ्वीमें मस्तकधारि वंदना करिये है तिन आचार्यनिका चरणनिकरि स्पर्शनभई पवित्ररजकूं अष्टद्रव्यनिकरि पूजिए सो संसारपरिभ्रमणका क्लेश पीडाकूं नष्ट करनेवाली आचार्यभक्ति है अब यहां ऐसा विशेष जानना जो आचार्य हैं सो समस्तधर्मके नायक हैं आचार्यनिके आधार समस्त धर्म है यातैं एते गुणनिके धारक ही आचार्य होय बडा राजानिका वा राजाके मन्त्रीनिका वा महान श्रेष्ठीनिका कुलमें उपज्या होय अर जाके स्वरूपकूं देखतेही शांतपरिणाम हो जांय ऐसा मनोहररूपका धारक होय जिनका उच्चआचार जगतमें प्रसिद्ध होय पूर्वें गृहचारामें भी कदे हीणआचार निंद्यव्यवहार नाहीं किया होय अर वर्तमान भोगसंपदा छांडि विरक्तताकूं प्राप्त भया होय अर लौकिक व्यवहार अर परमार्थके ज्ञाता होय अर बुद्धि की प्रबलता अर तपकी प्रबलताका धारक होय अर संघके अन्य मुनीश्वरनितैं ऐसा तप नाहीं बनि सके तैसा तपका धारक होय बहुत कालका दीक्षित होय बहुत काल गुरुनिका चरण सेवन किया होय वचनका अतिशयसहित होय जिनका वचन श्रवण करतें ही धर्ममें दृढता अर संशयका अभाव अर संसार देहभोगनितैं विरागता जाके निश्चल होय सिद्धांतसूत्रके अर्थका पारगामी होय इंद्रियनिका दमनकरि इसलोक परलोकसंबन्धी भोगविलासरहित देहादिकमें निर्ममत्व होय महाधीर होय उपसर्गपरीषहनिकरि कदाचित् जाका चित्त चलायमान नहीं होय जो आचार्य ही चलि जाय तो सकलसंघ भ्रष्ट होजाय धर्मका लोप होजाय स्वमत परमतका ज्ञाता होय अनेकांतविद्यामें क्रीडा करनेवाला होय अन्यके प्रश्नादिकतैं कायरतारहित तत्काल उत्तर देनेवाला होय एकांतपक्षकूं खंडनकरि सत्यार्थधर्मकूं स्थापन करनेका जाका सामर्थ्य होय धर्मकी प्रभावना करनेमें उद्यमी होय गुरुनिके निकट प्रायश्चित्तादिकसूत्र पढि छत्तीस गुणनिका धारक होय है सो समस्त संघकी साखिसूं गुरुनिकरि दिया आचार्य पद प्राप्त होय एते गुणनिका धारक होय तिसहीकूं आचार्यपना होय है एतें गुणनि विना आचार्य होय तो धर्म तीर्थका

लोप होजाय उन्मार्गकी प्रवृत्ति होजाय समस्तसंघ स्वेच्छाचारी होजाय सूत्रकी परिपाटी अर आचारकी परिपाटी टूटि जाय। बहुरि आचार्यपनाके अन्य अष्ट गुण हैं तिनका धारक होय। आचारवान, आधारवान, व्यवहारवान, प्रकर्ता, अपायोपायविदर्शी, अवपीडक, अपरिश्रावी, निर्यापक ए आठ गुण हैं। तिनमैं पंचप्रकारका आचार धारण करै ताकूं आचारवान कहिये है जीवादिकतत्त्व भगवान सर्वज्ञ वीतराग दिव्य निरावरणज्ञानकरि प्रत्यक्ष देखि कह्या तिनमैं श्रद्धानरूप परणति सो दर्शनाचार है स्वपरतत्त्वनिकूं निर्बाध आगम अर आत्मानुभव करि जाननारूप प्रवृत्ति सो ज्ञानाचार है हिंसादिक पंच पापनिका अभावरूप प्रवृत्ति सो चारित्राचार है अंतरंग बहिरंग तपमैं प्रवृत्ति सो तपाचार है परीषहादिक आए अपनी शक्तिकूं नहीं छिपाय धीरतारूपप्रवृत्ति सो वीर्याचार है तथा औरहू दश प्रकार स्थित कल्पादिक आचारमैं तथा समितिगुप्त्यादिकनिका कथन करिए तो बहुत कथन बधि जाय। पंचप्रकार-आचार आप निर्दोष आचरै अर अन्य शिष्यादिकनिकूं आचरण करावनेमैं उद्यमी होय सो आचार्य है आप हीणाचारी होय सो शिष्यनिकूं शुद्धआचरण नाहीं कराय सकै हीणाचारी होय सो आहार विहार उपकरण वस्तिका अशुद्ध ग्रहण कराय दे अर आपही आचारहीण होय सो शुद्ध उपदेश नाहीं करि सकै तातैं आचार्य आचारवान ही होय ॥ १ ॥ बहुरि जाके जिनेन्द्रका प्ररूप्या च्यार अनुयोगका आधार होय स्याद्वादविद्याका पारगामी होय शब्दविद्या न्यायविद्या सिद्धांतविद्याका पारगामी होय प्रमाणनय निक्षेपणिकरि स्वानुभवकरि भले प्रकार तत्त्वनिका निर्णय किया होय सो आधारवान है जाके श्रुतका आधार नाहीं सो अन्य शिष्यनिका संशय तथा एकांतरूप हठ तथा मिथ्याचरणकूं निराकरण नाहीं करि सकै। बहुरि अनंतानंतकालतैं परिभ्रमण करता जीवके अतिदुर्लभ मनुष्यजन्मका पावना तामैं हू उत्तम देश जाति कुल इंद्रियपूर्णता दीर्घायु सत्संगति श्रद्धान ज्ञान आचरण ए उत्तरोत्तर दुर्लभ संयोग पाय तो अल्पज्ञानी गुरुके निकट वसनेवाला शिष्य सो सत्यार्थ उपदेश नाहीं पावनेतैं यथार्थ आपका स्वरूप

नाहीं पाय संशयरूप होजाय तथा मोक्षमार्गकूं अतिदूर अतिकठिन जानि रत्नत्रयमार्गसूं चालि जाय तथा सत्यार्थ उपदेशविना विषयकषायनिमें उरझ्या मनकूं निकासनेमें समर्थ नाहीं होय तथा रोगकृत वेदनामें तथा घोरउपसर्गपरीषहानितें चल्या हुआ परिणामकूं श्रुतका अतिशयरूप उपदेशविना थांभनेकूं समर्थ नाहीं होय है। बहुरि मरण आजाय तदि संन्यासका अवसरमें आहारपानका त्यागका यथाअवसर देशकाल सहाय सामर्थ्यका क्रमकूं समझेविना शिष्यका परिणाम चालि जाय वा आर्त्तध्यान होजाय तो सुगति विगडि जाय धर्मका अपवाद हो जाय अन्य मुनि धर्ममें शिथिल हो जाय तो बडा अनर्थ है तथा यो मनुष्य आहारमय है आहारतें जीवै है आहारहीकी निरंतर वांछा करै है अर जब रोगके वशतें तथा त्याग करनेतें आहार छूटि जाय तदि दुःखकरि ज्ञानचारित्रमें शिथिल होय धर्मध्यानरहित हो जाय तो बहुश्रुत गुरु ऐसा उपदेश करै जाकरि क्षुधातृषाकी वेदनारहित होय उपदेशरूप अमृतकरि सींचा हुआ समस्त क्लेशरहित भया धर्मध्यानमें लीन हो जाय है क्षुधातृषारोगादिककी वेदनासहित शिष्यकूं धर्मका उपदेशरूप अमृतका पान अर शिक्षारूप भोजनकरि ज्ञानसहित गुरुही वेदनारहित करै बहुश्रुतीका आधारविना धर्म रहै नाहीं तातैं आधारवान आचार्य होय ताहीका शरण ग्रहण करना योग्य है बहुरि जो शिष्य वेदनाकरि दुःखित होय ताके हस्त पाद मस्तकका दाबना स्पर्शनादि करना मिष्टवचन कहना इत्यादिककरि दुःख दूर करै तथा पूर्वं जे अनेकसाधु घोरपरीषह सहकरि आत्मकल्याण किया तिनकी कथाके कहनेकरि तथा देहतैं भिन्न आत्माका अनुभव करावनेकरि वेदनारहित करै तथा भो मुने! अब दुःखमें धैर्य धारण करो संसारमें कौन कौन दुःख नाहीं भोगे अर वीतरागताका शरण ग्रहण करोगे तो दुःखनिका नाशकरि कल्याणकूं प्राप्त होवोगे इत्यादिक बहुत प्रकार कहि मार्गसूं नाहीं चलने देवै तातैं आधारवान गुरुनिहीका शरण योग्य है ॥ २ ॥

बहुरि जो व्यवहार प्रायश्चितसूत्रनिका ज्ञाता होय जातैं प्रायश्चितसूत्र आचार्य होनेयोग्य होय तिसहीकूं

पढावे है औरनिके पढने योग्य नाहीं जो जिनआगमका ज्ञाता अर महाधैर्यवान प्रबलबुद्धिका धारक होय सो प्रायश्चित देवै है अर द्रव्य क्षेत्र काल भाव क्रिया भाव परिणाम उत्साह संहनन पर्याय जो दीक्षा का काल अर शास्त्रज्ञान पुरुषार्थादिक आछी रीति जाणि रागद्वेषरहित होय प्रायश्चित देवै है भावार्थ जामैं ऐसी प्रवीणता होय जो याकूं ऐसा प्रायश्चित दिये याका परिणाम उज्वल होयगा अर दोषका अभाव होयगा व्रतनिमैं दृढता होयगी ऐसा ज्ञाता होय जाके आहारकी योग्यता अयोग्यताका ज्ञान होय तथा या क्षेत्रमैं ऐसा प्रायश्चितका निर्वाह होयगा वा या क्षेत्रमैं निर्वाह नाहीं होयगा तथा इसक्षेत्रमैं वात पित्त कफ शीत उष्णताकी अधिकता है कि हीनता है कि समपना है अथवा इसक्षेत्रमैं मिथ्यादृष्टिनिकी अधिकता है कि मंदता है तथा धर्मात्मानिकी हीनता अधिकताकूं जांणि प्रायश्चितका निर्वाह देखै बहुरि शीत उष्ण वर्षा कालकूं तथा अवसर्पिणीउत्सर्पिणीका तृतीय चतुर्थ पंचम कालादिकके आधीन प्रायश्चितका निर्वाह देखै बहुरि परिणाम देखै तथा तपश्चरणमैं याके तीव्र उत्साह है कि मंद है ताकूं देखै। बहुरि संहननकी हीनता अधिकता तथा बलकी मंदता तीव्रता देखै तथा ये बहुतकालका दीक्षित है कि नवीन दीक्षित है तथा सहनशील है कि कायर है सो देखै तथा बाल युवा वृद्ध अवस्थाकूं देखै बहुरि आगमका ज्ञाता है कि मंदज्ञानी है सो देखै तथा पुरुषार्थी है कि निरुद्यमी है इत्यादिकका ज्ञाता होय प्रायश्चित देवै जैसे दोषरूप फिर आचार्य नाहीं करै पूर्वकृत दोष दूरि होय तैसे सूत्रके अनुकूल प्रायश्चित देवै जो गुरुनिके निकट प्रायश्चितसूत्र शब्दतैं अर्थतैं पढ्या नाहीं अर औरनिकूं प्रायश्चित देवै है सो संसाररूप कर्दममैं डूबै है अर अपयशकूं उपार्जन करै है तथा उन्मार्गका उपदेशकरि सम्यक् मार्गका नाशकरि मिथ्यादृष्टि होय है जो एते गुणका धारक होय ताकूं प्रायश्चितसूत्र पढाय गुरु अपना आचार्यपद दे है जो महाकुलमैं उपज्या व्यवहारपरमार्थका ज्ञाता होय कोऊ कालमैंहू अपनें मूलगुणनिमैं अतीचार नाहीं लगाया होय च्यारि अनुयोगसमुद्रका पारगामी होय धैर्य-

वान होय कुलवान होय परीषह जीतनेमैं समर्थ होय देवनिकरि कीया उपसर्गतैंहू जो चलायमान नाहीं होय वक्तापनाकी शक्तिका धारक होय वादीप्रतिवादीनिकं जीतनेमैं समर्थ होय विषयनितैं अत्यंत विरक्त होय बहुतकाल गुरुकुल सेया होय सर्वसंघके मान्य होय पहिलां ही समस्त संघ जाकूं आचार्यपनाकी योग्यता जाणै सोही गुरुनिका दिया प्रायश्चितसूत्रका ज्ञाता होय आचार्यपना पावे सो प्रायश्चित देवे है एते गुणनिविना जैसें मूढ वैद्य देश काल प्रकृत्यादिक नाहीं जाने तो रोगीकूं मारे है तैसैं व्यवहार सूत्ररहित मूढ गुणसंयुक्त होय है संघमें कोऊ रोगी होय वा वृद्ध होय अशक्त होय कोऊ बाल होय कोऊ सन्यास धारण किया होय तिनकी वैयावृत्यमें युक्त किये जे मुनि ते तो टहल करैं ही परंतु आप आचार्य हू संघके मुनीश्वरनिमें जो अशक्त हो जाय ताका उठावना वैठावना शयन करावना तथा मलमूत्रकफादिक तथा राधिरुधिरादिक शरीरतैं दूरि करना धोवना उठाय प्राशुकभूमिमें स्थापना धर्मोपदेश देना धर्म ग्रहण करावना इत्यादिक आदरपूर्वक भक्तितैं वैयावृत्य करैं तिनकूं देखि समस्तसंघके मुनि वैयावृत्यमें सावधान होय विचारै हैं अहो धन्य है ये गुरु भगवान परमेष्ठी करुणानिधान जिनके धर्मात्मामें ऐसा वात्सल्य है हम महानिंद्य हैं आलसी होय रहे हैं हमकूं होते हू सेवा करैं हैं यह हमारा प्रमादीपना धिकार योग्य है बंधका कारण है ऐसा विचार समस्त संघ वैयावृत्यमें उद्यमी होय है जो आचार्य आप प्रमादी होय तो सकल संघ वात्सल्यरहित हो जाय यातैं आचार्यका कर्तृत्वगुण मुख्य है समस्तसंघका वैयावृत्य करनेका जाका सामर्थ होय सो आचार्य होय है कोऊ हीणाचारी ताकूं शुद्ध आचरण ग्रहण करावै कोऊ मंदज्ञानी होय तिनकूं समझाय चारित्रमें लगावै केईनिकूं प्रायश्चित देय शुद्ध करै कोऊकूं धर्मोपदेश देय दृढता करै। धन्य है आचार्य जिनके शरणे प्राप्त हो गया तिनकूं मोक्षमार्गमैं लगाय उद्धार करै हैं यातैं आचार्यका प्रकर्ता नामा गुण प्रधान है ॥४॥ बहुरि अपायोपायविदर्शी नाम पांचमो गुण है कोऊ साधु क्षुधा तृषा रोगवेदनाकरि पीडित हुआ क्लेशित परिणामरूप हो जाय तथा तीव्र राग-

द्वेषरूप हो जाय तथा लज्जाकरि भयकरि यथावत आलोचना नाहीं करै तथा रत्नत्रयमैं उत्साहरहित हो जाय धर्मतैं सिथिल हो जाय तो ताकूं अपाय मानि रत्नत्रयका नाश अर उपाय रत्नत्रयकी रक्षानिका प्रगट गुण दोष ऐसा दिखावै जो रत्नत्रयका नाश होनेतैं कंपायमान हो जाय अर रत्नत्रयका नाशतैं अपना नाश अर नरकादि कुगतिमैं पतन साक्षात दिखावै अर रत्नत्रयकी रक्षातैं संसारतैं उद्धार होय अनंत सुखकी प्राप्ति उपदेशकरि साक्षात दिखाय देय ऐसा उपदेशका सामर्थ्य जामैं होय सो अपयोपायविदर्शी नाम गुणका धारक आचार्य होय है इहां उपदेश दिखाये कथन बहुत हो जाय तातैं नाहीं लिख्या ॥ ५ ॥ अब अवपीडक नाम छठा गुण कहिये है कोऊ मुनि रत्नत्रय धारण करकै हू लज्जाकरि भयकरि अभिमानगौरवादिकरि अपना आलोचना यथावत शुद्ध नाहीं करै तो आचार्य ताकूं स्नेहकी भरी कर्णनिकूं मिष्ट अर हृदयमैं प्रवेश करनेवाली शिक्षा करै जो हे मुने! बहुत दुर्लभ रत्नत्रयका लाभ ताकूं मायाचारकरि नष्ट मति करो माता पिता समान गुरुनिके निकट अपने दोष प्रगट करनेमैं कहा लज्जा है अर वात्सल्यके धारक गुरु हू अपने शिष्यके दोष प्रगटकरि शिष्यका अर धर्मका अपवाद नाहीं करावै हैं तातैं शल्य दूरिकरि आलोचना करो जैसैं रत्नत्रयकी शुद्धता अर तपश्चरणका निर्वाह होयगा तैसैं द्रव्य क्षेत्र काल भावके अनुसार प्रायश्चित तुमकूं दिया जायगा तातैं भय त्यागि आलोचना निर्दोष करहू ऐसे स्नेहरूप वचन करिकेहू जो माया शल्य नाहीं त्यागै तो तेजका धारक आचार्य शिष्यकी शल्यकूं जबरीतैं निकासै जिस काल आचार्य शिष्यकूं पूछैं हैं जो हे मुने ऐ दोष ऐसैं ही हैं सत्यार्थ कहो तदि उनके तेजतपके प्रभावतैं जैसैं सिंहकूं देखते ही स्याल खाया हुआ मांसकूं तत्काल उगलै है तथा जैसैं महान प्रचंडतेजस्वी राजा अपराधीकूं पूछै तदि तत्काल सत्य कहता ही बणै तैसैं शिष्यहू माया शल्यकूं निकासै है अर मायाचार नाहीं छांडै तो गुरु तिरस्कारके वचन हू कहैं हैं हे मुने हमारे संघतैं निकस जाहु हमकरि तुम्हारे कहा प्रयोजन है जो अपना शरीरादिकका मेल धोया चाहैगा सो निर्मल

जलके भरे सरोवरकूं प्राप्त होयगा जो अपना महान रोगकूं दूरि किया चाहैगा सो प्रवीण वैद्यकूं प्राप्त होयगा तैसैं जो रत्नयरूप परमधर्मका अतीचार दूरिकरि उज्वलता किया चाहैगा सो गुरुनिका आश्रय करैगा तुम्हारे रत्नत्रयकी शुद्धता करनेमैं आदर नाहीं तातैं ये मुनिपणा व्रत धारण नग्न होय क्षुधादि परीषह सहनेकी विडंबनाकरि कहा साध्य है संवर निर्जरा तो कषायनिके जीतनेतैं है मायाकषायका ही त्याग नाहीं किया तदि व्रत संयम मौन धारण वृथा है नग्नता अर परिषह सहनता मायाचारीका वृथा है तिर्यंच हू परिग्रहरहित नग्न रहै ही है यातैं तुम दूरभव्य हो हमारे वंदने योग्य नाहीं हो अर तुम्हारे परिणाम ऐसे हैं जो हमारा दोष प्रगट होय तो हम निंद्य होय जावैं हमारा उच्चपणा घटि जाय सो मानना बंधका कारण है श्रमण तो स्तुति निंदामैं समानपरिणामी होय है ऐसे गुरु कठोरवचन कहि-करिके हू मायाचारादिका अभाव करावैं कैसा होय अवपीडक आचार्य जो बलवान होय उपसर्ग परिषह आये कायर नाहीं होय प्रतापवान होय जाका वचन कोऊ उलंघन करने समर्थ नाहीं होय अर प्रभाव-वान होय जाकूं देखतप्रमाण दोषका धारक साधू कांपने लगि जाय जाकूं बडे बडे विद्याके धारक नम्री-भूत होय बंदना करैं जाकी उज्ज्वलकीर्त्ति विख्यात होय जाकी कीर्ति सुनता ही जाके गुणनिमैं दृढ श्रद्धा हो जाय जाका वचन जगतमैं देख्या विना ही दूरदेशनिमैं प्रमाण करैं सिंहकी ज्यों निर्भय होय ऐसा अवपीडक गुणका धारक गुरु होय सो जैसैं शिष्यका हित होय तैसे उपकार करै है जैसैं बालकका हितने चिंतवन करती माता रुदन करताहू बालककूं दाबकरि मुख फाडि जबरीतैं घृत दुग्धादि पान करावै है। ऐसे शिष्यका हितकूं चिंतवन करता आचार्य हू मायाशल्यसहित क्षपकका बलात्कारकरि दोष दूरि करै है अथवा कटुक औषधि ज्यों पश्चात् हित करै है जो जिह्वाकरिके मिष्ट बोले अर शिष्यकूं दोषतैं नाहीं छुडावै सो गुरु भला नाहीं अर जो आचरणकरि ताडनाहूकरि दोषनितैं भिन्न करै है सो गुरु पूजने योग्य है यातैं अवपीडकगुणका धारक ही आचार्य होय है ॥ ६ ॥ अब अपरश्रावीगुणकूं कहैं

हैं जो शिष्य गुरुनिकूं दोष आलोचना करै सो दोष अन्यकूं गुरु प्रकाश नाहीं करै जैसे तप्तायमानलोह करि पीया जल सो बाह्य प्रगट नाहीं होय तैसैं शिष्यकरि श्रवणकिया दोष आचार्य हू किसकूं नाहीं जणावे है सो ही अपरश्रावी नाम गुण है शिष्य तो गुरुका विश्वासकरके कहै अर गुरु जो शिष्यका दोष प्रगट करै अन्यकूं जनावे तो वा गुरु नाहीं अधम है विश्वासघाती है कोउ शिष्य अपना दोषकी प्रकटता जानि दुखित होय आत्मघात करै है वा कोधी होय रत्नत्रयका त्याग करै है तथा गुरुकी दुष्टता जानि अन्य संघमें जाय तथा जैसैं हमारी अवज्ञा करी तैसैं तुमारी हू अवज्ञा करैगा ऐसैं समस्तसंघमें घोषणा प्रगट होय समस्तसंघ आचार्यनिका प्रतीतिरहित होजाय आचार्य सबके त्याज्य होजांय इत्यादिक बहुत दोष आवैं बहुत कहे कथनी बधि जाय तातैं अपरश्रावी गुणका धारक ही आचार्य योग्य है ॥ ७ ॥ अब आचार्य निर्यापक होय जैसैं नावकूं खेवटिया समस्त उपद्रवनिकूं टालि नावकूं पार उतारि ले आय तैसैं आचार्य हू शिष्यकूं अनेक विघ्नसूं बचाय संसारसमुद्रके पार करै सो निर्यापक है ॥ ८ ॥ ऐसे आचारवान ॥ १ ॥ आधारवान ॥ २ ॥ व्यवहारवान ॥ ३ ॥ प्रकर्ता ॥ ४ ॥ अपायोपायविदर्शी ॥ ५ ॥ अवपीडक ॥ ६ ॥ अपरश्रावी ॥ ७ निर्यापक ॥ ८ ॥ यह आचार्यनिके अष्टगुणकूं धारणकरतेनिके गुणनिमैं अनुराग सो आचार्यभक्ति है ऐसैं आचार्यनिके गुणनिकूं स्मरण करके आचार्यनिका स्तवन वंदना करता जो पुरुष अर्घ उतारण करै है सो पापरूप संसारकी परिपाटीकूं नष्टकरि अक्षयसुखकूं प्राप्त होय है ऐसैं वीतराग गुरु कहे हैं। ऐसे आचार्यभक्ति वर्णन करी ॥ ११ ॥

अब बहुश्रुतभक्ति नाम बारमी भावनाकूं कहे हैं ॥ जो अंगपूर्वादिकका ज्ञाता तथा च्यार अनुयोगनिका पारगामी जो निरंतर आप परमागमकूं पढ़ैं अन्य शिष्यनिकूं पढावे ते बहुश्रुती हैं तथा जिनके श्रुतज्ञान ही दिव्यनेत्र है अर अपना अर परका हित करनेमैं प्रवर्तैं ते अर अपने जिनसिद्धांत अर अन्य एकांतीनिके सिद्धांतनिका विस्तारतैं जाननेवाले स्याद्वादरूप परमविद्याके धारक तिनकी जो

भक्ति सो बहुश्रुतभक्ति है बहुश्रुतीकी महिमा कौन कहनेकूं समर्थ है जे निरंतर श्रुतज्ञानका दान करे हैं ऐसे उपाध्याय तिनकी भक्ति विनयकरि सहित करें हैं ते शास्त्ररूप समुद्रका पारगामी होय हैं जे अंगपूर्व प्रकीर्णक जिनेंद्र वर्णन किये तिन समस्त जिनागमकूं निरंतर पढे पढावैं ते बहुश्रुती हैं इहां प्रथम आचारांग तामैं अठारहहजार पदनिमैं मुनिधर्मका वर्णन है ॥ १ ॥ सूत्रकृतांगका छत्तीसहजार पद हैं तिनमैं जिनेंद्रके श्रुतके आराधन करनेके विनयक्रियाका वर्णन है ॥ २ ॥ स्थानांगका ब्यालीसहजार पद तिनमैं षद्द्रव्यनिका एकादि अनेक स्थानका वर्णन है ॥ ३ ॥ समवायांग एकलाख चौसठिहजार पदनिमैं है तिनमैं जीवादिक पदार्थनिका द्रव्य क्षेत्र काल भावके आश्रित समानता वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्ति अंगके दोयलक्ष अट्ठाईस हजार पदनिमैं जीवका अस्तिनास्ति इत्यादिक गणधरनिकरि कीये साठिहजार पदनिका वर्णन है ॥ ५ ॥ ज्ञातृधर्मकथांगके पांचलक्ष छप्पनहजार पदनिमैं गणधरनि करि कीये प्रश्ननिके अनुसार जीवादिकनिका स्वभावका वर्णन है ॥ ६ ॥ उपासकाध्ययन नाम अंगके ग्यारहलक्ष सत्तर हजार पदनिमैं श्रावकके व्रत शील आचार क्रियाका तथा याका मंत्रनिका उपदेशका वर्णन है ॥ ७ ॥ अंतकृतदशांगके तेईसलक्ष अट्ठाइसहजार पदनिमैं एक एक तीर्थंकरके तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर उपसर्गसहित निर्वाण प्राप्त भये तिनका कथन है ॥ ८ ॥ अनुत्तरोपपादकदशांगके बाणवै लक्ष चौवालीस हजार पदनिमैं एक एक तीर्थंकरके तीर्थमैं दश दश मुनीश्वर महाभयंकर घोरउपसर्गसहित देवनितैं पूजापाय विजयादिक अनुत्तर विमाननिमैं उपजे तिनका वर्णन है ॥ ९ ॥ प्रश्नव्याकरण नाम अंगके त्र्यानवेलक्ष षोडससहस्र पदनिमैं नष्ट मुष्टि लाभ अलाभ सुख दुःख जीवित मरणादिकके प्रश्नका वर्णन है ॥ १० ॥ विपाकसूत्रांगके एककोटि चौरासीलक्ष पदनिमैं कर्मनिका उदय उदीर्णा सत्ताका वर्णन है ॥ ११ ॥ अर दृष्टिवाद नाम बारमअंगका पांच भेद है परिकर्म, सूत्र, प्रथमानुयोग, पूर्व, चूलिका तिनमैं परिकर्मकाहू पांच भेद है तिनमैं चंद्रप्रज्ञप्तिके छह लक्ष पांचहजार पदनिमैं चंद्रमाका आयु गति

श्रावकाचार ३१३

अर कलाकी हानिवृद्धि अर देवीविभव परिवारादिकका वर्णन है ॥ १ ॥ अर सूर्यप्रज्ञप्तिके पांचलक्ष तीनहजार पदनिमें सूर्यका आयु गति विभवादिकका वर्णन है ॥ २ ॥ जंबूद्वीपप्रज्ञप्तिके तीनलक्ष पचीसहजार पदनिमें जंबूद्वीपसंबंधी क्षेत्र कुलाचल द्रह नदी इत्यादिकनिका निरूपण है ॥३॥ द्वीपसागरप्रज्ञप्तिके बावनलक्ष छत्तीसहजार पदनिमें असंख्यातद्वीप समुद्रनिका अर मध्यलोकके जिनभवननिका अर भवनवासी व्यंतर ज्योतिष्क देवनिके निवासनिका वर्णन है ॥ ४ ॥ व्याख्याप्रज्ञप्तिके चौरासीलक्ष छप्पनहजार पदनिमें जीव पुद्गलादि द्रव्यका निरूपण है ॥ ५ ॥ ऐसे पंच प्रकार परिकर्म कह्या अब दृष्टिवाद अंगका दूजा भेद सूत्रके अट्ठासीलक्ष पदनिमें जीव अस्तिरूप ही है नास्तिरूप ही है कर्ता ही है भोक्ता ही है इत्यादि एकांतवादिकरि कल्पित जीवका स्वरूपका वर्णन है ॥ २ ॥ बहुरि प्रथमानुयोगके पांचहजार पदानिमें त्रेसठि महापुरुषनिके चरित्रका वर्णन है ॥ ३ ॥ अब दृष्टवादअंगका चतुर्थभेदमें चौदहपूर्व हैं तिनमें उत्पादपूर्वके एककोटि पदनिमें जीवादिक द्रव्यनिका उत्पादादि स्वभावका निरूपण है ॥ १ ॥ अग्रायणीपूर्वके छिनवैकोटि पदानिमें द्वादशांगका सारभूत सप्ततत्त्व नवपदार्थ षट् द्रव्य सातसै सुनय दुर्नयादिकका स्वरूपका वर्णन है ॥२॥ वीर्यानुवादके सप्तलक्ष पदनिमें आत्मवीर्य परवीर्य कामवीर्य कालवीर्य भाववीर्य तपोवीर्यादि समस्त द्रव्यगुण पर्यायकनिका वीर्यका निरूपण है ॥३॥ अस्तिनास्तिप्रवाद नाम पूर्वके साठिलक्ष पदानिमें जीवादि द्रव्यनिका स्वद्रव्यादिचतुष्टयकी अपेक्षा आस्ति और परद्रव्यादि चतुष्टयकी अपेक्षा नास्ति इत्यादिक सप्तभंगादिक तथा नित्यअनित्य एक अनेकादिकनिका विरोधरहित वर्णन है ॥४॥ ज्ञानप्रवाद पूर्वके एक घाटि कोटि पदनिमें मति श्रुत अवधि मनःपर्यय केवल ये पांच ज्ञान अर कुमति कुश्रुति विभंग ये तीन अज्ञान इनका स्वरूप संख्या विषयफलनिके आश्रय प्रमाणपना अप्रमाणपनाका वर्णन है ॥ ५ ॥ सत्यप्रवादपूर्वके छह अधिक एककोटि पदानिमें वचनगुप्ति अर वचनके संस्कारका कारण अर द्वादश भाषा अर वक्तानिके भेद अर बहुत प्रकार असत्य अर दशप्रकारके सत्यका वर्णन है ॥ ६ ॥

आत्मप्रवादपूर्वके छव्वीसकोटि पदनिमें आत्मा जीव है कर्ता है भोक्ता है प्राणी है वक्ता है पुद्गल है वेद है विष्णु है स्वयंभू है शरीरी मान वक्ता शक्ता जंतु मानी मायी वियोगी असंकुट क्षेत्रज्ञ इत्यादि स्वरूप का वर्णन है ॥ ७ ॥ कर्मप्रवादपूर्वके एककोटी अस्सीलाख पदनिमें कर्मनिका बंध उदय उदीर्णा सत्व उत्कर्षण उपशमन संक्रमणविधि निकाचितादि अवस्था अर ईर्यापथ तपस्या अधःकर्मादिकनिका वर्णन है ॥ ८ ॥ प्रत्याख्यानपूर्वके चौरासीलक्ष पदनिमें नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र काल भावनिकूं आश्रय करि पुरुषनिका संहनन अर बलादिकानिके अनुसार प्रमाणीककाल वा अप्रमाणीककाल लिये त्याग अर पापसहित वस्तुतें निराला होना अर उपवासकी विधि अर उपवासकी भावना अर पंचसमिति अर तीनगुप्तिका वर्णन है ॥ ९ ॥ विद्यानुवादके एक कोटि दशलक्ष पदनिमें अंगुष्टप्रसेनादिक सातसै अल्पविद्या अर रोहणी आदि पांचसै महाविद्यानिका स्वरूप सामर्थ्य अर इनका साधन मंत्र तंत्र पूजा विधानका अर सिद्ध भई तिनका फलका अर अंतरिक्ष भौम अंग स्वर स्वप्न लक्षण व्यंजन छिन्न ये अष्टप्रकार निमित्तज्ञानका वर्णन है ॥ १० ॥ कल्याणानुवादपूर्वके छव्वीसकोटि पदनिमें तीर्थंकर चक्रधर बलदेव प्रतिवासुदेवादिकनिका गर्भकल्याणादि महाउत्सवनिका अर इन पदनिका कारण षोडश भावना वा तपविशेष आचरणादिकनिका अर चंद्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्रनिका गमन तथा ग्रहण शकुनादिकके फलका वर्णन है ॥ ११ ॥ प्राणप्रवाद पूर्वके तेरहकोटि पदनिमें कायकी चिकित्साका अष्टांग आयुर्वेद जो वैद्यविद्या ताका भूतकर्मका अर जांगलिका अर इला पिंगलादिक स्वासोच्छ्वासका अर गतिके अनुसार दशप्राणनिके उपकारक अनुपकारक द्रव्यनिका वर्णन है ॥ १२ ॥ क्रियाविशालके नवकोटि पदनिमें संगीत शास्त्र छंद अलंकार बहत्तरि कला अर स्त्रीके चोसठिगुण अर शिल्पादिज्ञान अर चौरासी गर्भाधानादि क्रिया अर एकसौआठ सम्यग्दर्शनादिक्रिया अर पचीस देववंदनादिक नित्यनैमित्तक क्रियाका वर्णन है ॥१३॥ त्रैलोक्यबिंदुसारपूर्वके साढाबाराकोटि पदनिमें त्रैलोक्यको स्वरूप छव्वीस

पारिकर्म अष्ट व्यवहार च्यारि बीज मोक्षका स्वरूप मोक्षगमनका कारण क्रिया अर मोक्षसुखका वर्णन है ॥ १४ ॥ ऐसे पिच्याणवै कोडि पचासलाख पांच पदनिमैं चौदह पूर्व वर्णन किया । अब दृष्टिवादांगको पांचमो भेद चूलिका पांच प्रकार है एक एक चूलिकाके दोयकोटि नवलक्ष निवासीहजार दोयसै पद हैं तिनमैं जलगताचूलिकामैं जलका स्तंभन जलमैं गमन अग्निका स्तंभन भक्षण अग्निऊपरि आसन अग्निमैं प्रवेशनादिकका कारण मन्त्र तंत्र तपश्चरणका वर्णन है ॥ १ ॥ अर स्थलगताचूलिकामैं मेरु कुलाचलादिकनिमैं भूमिमैं प्रवेश करनेकूं अर शीघ्रगमनके कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चरणका वर्णन है ॥ २ ॥ अर मायागताचूलिकामैं मायारूप इंद्रजालादि विक्रियाका मन्त्र तन्त्र तपश्चरणादिकका वर्णन है ॥ ३ ॥ आकाशगतचूलिकामैं आकाशगमनका कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चरणादिका वर्णन है ॥ ४ ॥ रूपगताचूलिकामैं सिंह हस्ती तुरंग मनुष्य वृक्ष हरिण शशा बलधि व्याघ्रादिनके रूप पलटनेके कारण मन्त्र तन्त्र तपश्चरणका वर्णन है तथा चित्राम माटी पाषाण काष्ठकादिक इनका खोदना तथा धातुवाद रसवाद खान्यवादादिककी रचनाके अर्थ हैं ॥ ५ ॥ पंचचूलिकाके दशकोटि गुणचासलाख छयालीसहजार पद हैं इहां ऐसा जानना समस्त द्वादशांगके एकघाटि एकठी प्रमाण अक्षर हैं । १८४४६७४४०७३७०९५५१६१५ एते अपुनरुक्त अक्षर हैं एकबार आया अक्षर दूसरां नाहीं आवै इनमैं चोसठि संयोगाताई अक्षर हैं अर आगममैं कह्या ऐसा मध्यपदका प्रमाण सोलासै चौंतीसकोडि तीयासीलक्ष सात हजार आठसै अठासी १६३४८३०७८८८ अपुनरुक्त अक्षर हैं इन अक्षरानिका प्रमाणका भाग दीए एकसौ बाराकोटि तीयासीलक्ष अठावनहजार पांचपद आए तिनमैं समस्त द्वादशांग है अर अवशेष अक्षर आठकोटि एकलक्ष आठहजार एकसो पचेतरि आंक रहे ८०१०८१७५ इनि अक्षरानिका पूर्ण एक पद होय नाहीं तातैं इनकूं अंगवाह्य कह्या तिन अक्षरानिका सामायिकादि चौदह प्रकीर्णक हैं सामायिक नाम प्रकीर्णकमैं मिथ्यात्व कषायादिकके क्लेशका अभावरूप नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र काल भावके भेदतैं छहभेदरूप सामा-

यिकका वर्णन है ॥१॥ बहुरि चौंतीस अतिशय अष्टप्रातिहार्य परमौदारिक दिव्य देह समवशरण सभा धर्मोपदेशादिक तीर्थंकरनिका माहात्म्यका प्रकाशरूप स्तवन नाम प्रकीर्णक है ॥२॥ एक तीर्थंकरके आलंबन रूप चैत्यालय प्रतिमाका स्तवनरूप प्रकीर्णक है ॥ ३ ॥ बहुरि पूर्वकृत प्रमादजनित दोषका निराकरणके अर्थि दैवसिक, रात्रिक, पाक्षिक, चातुर्मासिक, सांवत्सरिक, ऐर्यापथिक, उत्तमार्थ ऐसे सप्त प्रकार प्रतिक्रमणका जामैं वर्णन ऐसा प्रतिक्रमण नाम प्रकीर्णक है ॥ ४ ॥ बहुरि सम्यग्दर्शन ज्ञान चारित्र तप उपचार स्वरूप पंचप्रकार विनयका वर्णनरूप विनय नाम प्रकीर्णक है ॥ ५ ॥ बहुरि नवदेवतानिकी बंदनाके अर्थि तीन प्रदक्षिणा चतुःशिरोनती तीनशुद्धता द्वादश आवर्त इत्यादिक नित्यनैमित्तकक्रियाका जामैं वर्णन ऐसा कृतकर्म प्रकीर्णक है ॥ ६ ॥ बहुरि जामैं साधुका आचारके गोचर आहारकी शुद्धताका वर्णनरूप दश वैकालिक प्रकीर्णक है ॥ ७ ॥ बहुरि च्यारप्रकार उपसर्ग तथा बाईसपरीषहनिके सहनेके विधान अर इनके फलका वर्णनरूप उत्तराध्ययन प्रकीर्णक है ॥ ८ ॥ बहुरि साधुके योग्य आचरणका विधान अयोग्यसेवनका प्रायश्चित्तका वर्णनरूप कल्पव्यवहार नाम प्रकीर्णक है ॥ ९ ॥ बहुरि द्रव्य क्षेत्र काल भावके आश्रय साधुकूं ये योग्य हैं ये अयोग्य हैं ऐसा विभागका वर्णनरूप कल्पाकल्प नाम प्रकीर्णक है ॥ १० ॥ बहुरि उत्कृष्टसंहननादिसंयुक्त द्रव्य क्षेत्र काल भावके प्रभावतैं उत्कृष्टचर्याकरि वर्तते ऐसे जिनकल्पी साधुनिके योग्य त्रिकालयोगादिआचरणका अर स्थविरकल्पनिका दीक्षा शिक्षा गण पोषण आत्मसंस्कार सल्लेखना अर उत्कृष्टस्थानगत उत्कृष्टआराधनाका वर्णनरूप महाकल्प नाम प्रकीर्णक है ॥ ११ ॥ जामैं भवन व्यंतर ज्योतिष्क तथा कल्पवासीनिके विमाननिमैं उत्पत्तिका कारण दान पूजा तपश्चरण अकामनिर्जरा सम्यक्त्व संयमादिकका विधान तिनके उपजनेका स्थान वैभवका वर्णनरूप पुंडरीक नाम प्रकीर्णक है ॥ १२ ॥ बहुरि महर्द्धिक देवनिमैं इंद्र प्रतींद्रादिकनिमैं उत्पत्तिका कारण तपोविशेषादिक आचरणका कहनेवाला महापुंडरीक प्रकीर्णक है ॥ १३ ॥ जामैं प्रमादसूं उपज्या दोषनिका

त्यागरूप निषिद्धका प्रकीर्णक है ॥ १४ ॥ जैसे द्वादशांगरूप सूत्रका ज्ञान है सो तपका प्रभावतैं उपजे है सो आप पढै है अन्यकी बुद्धिप्रमाण शिष्यनिकूं पढावै है तिन बहुश्रुतनिकी भक्ति है सोहू बहुश्रुतभक्ति है जो गुणनिमैं अनुराग करना ताकूं भक्ति कहिये है जो शास्त्रनिमैं अनुरागकरि पढै तथा शास्त्रके अर्थकूं अन्यकूं कहै जो धनकूं लगाय शास्त्रनिको लिखावै तथा अपने हस्तकरि शास्त्र लिखै तथा हीन अधिक-अक्षरकूं मात्राकूं शोधन करै तथा पढनेवालेनिकूं शास्त्र लिखाय देवै तथा व्याख्यान करै पढावने वचावने वालेनिकी आजीविकाकी थिरताकरि शास्त्रनिके ज्ञानाभ्यासका प्रवर्तन करावै स्वाध्याय करनेके अर्थि निराकुल स्थान देवै सो ज्ञानावरण कर्मके नाश करनेवाली बहुश्रुतिभक्ति है । बहुरि बहुमूल्य वस्त्रनिमैं पूठा लगाय पट्टमय डोरि करि शास्त्रनिकूं बांधै जो देखने श्रवण पठन करनेवालेनिका मनकूं रंजायमान करै सो समस्त बहुश्रुतिभक्ति है । बहुरि सुवर्णकरि मनोहर घडे भये अर पंचप्रकार रत्ननिकरि जटित सैकडां पुष्पनिकरि शास्त्रकी सारभूत पूजा करै सो श्रुतिभक्ति संशयादिकरहित सम्यग्ज्ञान उपजाय अनुक्रमतैं केवलज्ञान उपजावै है जो पुरुष अपने मनकूं इंद्रियनिके विषयनितैं रोकि अर बारंबार श्रुत-देवताका गुण स्मरण करके भली विधिसूं बनाया पवित्र अर्घ श्रुतदेवताका उतारै है सो समस्त श्रुतका पारगामी होय केवलज्ञान उपजाय निर्वाणकूं प्राप्त होय है । ऐसे बहुश्रुतिभक्ति नाम बारमी भावना वर्णन करी सो निरंतर भावो ॥ १२ ॥

अब प्रवचनभक्तिनाम तेरमी भावनाकूं वर्णन करैं हैं । प्रवचननाम जिनेंद्र सर्वज्ञ वीतरागकरि प्ररूपण किया आगमका है । जिसमें षट्द्रव्यनिका पंचास्तिकायका सप्ततत्वनिका नवपदार्थनिका वर्णन है अर कर्मनिकी प्रकृतीनिका नाश करनेका वर्णन सो आगम है जाका प्रदेश बहुत होय ताकी अस्तिकाय संज्ञा है । अर गुणपर्यायनिकूं निरंतर प्राप्त होय तातैं द्रव्यसंज्ञा है वस्तुपनाकरि निश्चय करिये तातैं पदार्थसंज्ञा है स्वभावरूपपनातैं तत्त्वसंज्ञा है सो इनकी विशेष कथनी आगे प्रकरण पाय कहसी । जैसे

अंधकारसंयुक्त महलमें दीपक हस्तमें लेकरि समस्तपदार्थ देखिये है तैसें त्रैलोक्यरूप मंदिरमें प्रवचनरूप दीपककरि सूक्ष्म स्थूल मूर्तीक अमूर्तीक पदार्थ देखिये है। प्रवचनरूप ही नेत्रनिकरि मुनीश्वर चेतनादि गुणनिके धारक समस्तद्रव्यनिका अवलोकन करे जिनेंद्रके परमागमकूं योग्यकालमें बहुत विनयतैं पढिये सो प्रवचनभक्ति है कैसाक है प्रवचन जामें षट्द्रव्य सप्ततत्त्व नवपदार्थनिका भेद समस्तगुणपर्यायनिका वर्णन है जामें भूतकाल अनंत भया अर भाविष्यत अनंत होयगा अर वर्तमान तिनका स्वरूप वर्णन है। जामें अधोलोककी सप्तपृथ्वी अर नारकीनिका वसनेका उत्पत्ति होनेका स्थानानिकूं अर आयु काय वेदना गत्यादिक समस्तका अर भवनवासी देवनिका सातकरोड बहत्तरलाखभवनानिका अर तिनका आयु काय विभव विक्रिया भोगादिकानिका अधोलोकमें वर्णन किया है। जामें मध्यलोक संबंधी असंख्यात द्वीप समुद्रानिका अर तिनमें मेरु कुलाचल नदी द्रहादिकानिका अर कर्मभूमिके विदेहादिक क्षेत्रानिका अर भोगभूमिका अर छिनवे अंतरद्वीपसंबंधी मनुष्यनिका अर कर्मभूमिके भोगभूमिके मनुष्यनिका कर्तव्यका अर आयु काय सुख दुःखादिकानिका अर तिर्यंचनिका व्यंतरानिके निवास विभव परिवार आयु काय सामर्थ्य विक्रियाका वर्णन है। तथा मध्यलोकमें ज्योतिष्कदेव हैं तिनके विमान विभव परिवार आयु कायादिकका तथा सूर्य चंद्रमा ग्रह नक्षत्रानिका च्यारक्षेत्रगत संयोगादिकका वर्णन है। बहुरि ऊर्ध्वलोकके त्रेसठपटलानिका स्वर्गके अहमिंद्रके पटलानिका इंद्रादिक देवनिका विभव परिवार आयु काय शक्ति गति सुखादिकका वर्णन है। ऐसें सर्वज्ञकरि प्रत्यक्ष देखा त्रिलोकवर्ती समस्त द्रव्यनिके उत्पाद व्यय ध्रौव्यपना समस्त प्रवचनमें वर्णन किया है। बहुरि कर्मनिकी प्रकृतिनिका बंध होनेका उदयका सत्वका संक्रमणादिकनिका समस्त वर्णन आगममें है। बहुरि संसारतें उद्धार करनेवाला रत्नत्रयका स्वरूप प्राप्त होनेका उपाय परमागमहीमें है बहुरि गृहस्थपणामें श्रावकधर्मका जघन्य मध्यम उत्कृष्ट चर्याका तथा श्रावकानिके व्रत संयमादिक व्यवहार परमार्थरूप प्रवृत्तिका वर्णन प्रवचनतैंही जानिये है बहुरि

गृहका त्यागी मुनिनिके महाव्रतादि अट्ठाईस मूलगुण अर चौरासीलाख उत्तरगुण अर स्वाध्याय ध्यान आहार विहार सामायिकादि चारित्र चर्याका धर्मध्यान शुक्लध्यानादिकका सल्लेखनामरणका समस्तचर्याका वर्णन प्रवचनमें है। बहुरि चौदह गुणस्थाननिका स्वरूप तथा चौदह जीवसमासनिका अर चौदह मार्गणानिका वर्णन प्रवचनतें जानिये है तथा जीवनिके एकसो साढानिन्याणवें लक्ष कुलकोड अर चौरासीलाख जातिका योनिस्थान प्रवचनहीतें जानिये है तथा च्यार अनुयोग च्यार शिक्षाव्रत तीनगुणव्रत आगमतेंही जानिये है। तथा च्यार गतिनिका भेद अर सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रका स्वरूप भगवानका प्ररूप्या आगमहीतें जानिये है। बहुरि द्वादशभावना अर द्वादशतप अर द्वादश अंग अर चौदहपूर्व चौदहप्रकीर्णकानिका स्वरूप प्रवचनहीतें जानिये है। बहुरि उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालकी फिरणि अर यामें छह छह भेदरूप कालमें पदार्थकी परणतिका भेदनिका स्वरूप आगमतें जानिये है। बहुरि कुलकर तीर्थंकर चक्रधर बलदेव वासुदेव प्रतिवासुदेव इत्यादिकानिकी उत्पत्ति प्रवृत्ति धर्म तीर्थका प्रवर्तन चक्रीका साम्राज्य वासुदेवादिकानिके विभव परिवार ऐश्वर्यादिक आगमहीतें जानिये है। बहुरि जीवादिक द्रव्यनिका प्रभाव आगमहीतें जानिये है जातें आगमकूं भक्तिपूर्वक सेवनविना मनुष्यजन्ममें हू पशु समान है भगवान सर्वज्ञ वीतराग समस्त लोकअलोककूं अनंतानंत भूत भविष्यत वर्तमान कालवर्ती पर्यायनिकरि संयुक्त एकसमयमें युगपत् क्रमरहित हस्तकी रेखावत् प्रत्यक्ष जान्या देख्या ताकरि प्ररूपण किया स्वरूपकूं सप्तऋद्धि च्यार ज्ञानधारी गणधरदेव द्वादशांगरूप रचना प्रगट करी। इहां ऐसा विशेष जानना जो देवाधिदेव परमपूज्य धर्मतीर्थके प्रवर्तन करनेवाले अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखरूप अंतरंगलक्ष्मी अर समवशरणादि बाहिरंगलक्ष्मीकरि मंडित अर इंद्रादिक असंख्यात देवनिके समूह करि वंदनीक चौंतीसअतिशय अष्टप्रातिहार्यादि अनुपम ऋद्धिकरि सहित अर क्षुधा तृषादि अष्टादशदोषरहित समस्तजीवनिका परमोपकारक अर लोकअलोकके अनंतगुण पर्यायनिका क्रमरहित

युगपत् ज्ञानका धारक अर अनंतशक्तिका धारक संसारमें डूबते प्राणीनिकूं हस्तावलम्बन देनेवाला समस्त जीवनिका दयालु परमात्मा परमेश्वर परमब्रह्म परमेष्ठी स्वयंभू शिव अजर अमर अरहंतादि नाम करि विख्यात अशरण प्राणिनिकूं परमशरण अन्तका परमौदारिक देहमें तिष्ठता गणधरादिक मुनीश्वरनिकरि बंदनीक हैं चरण जिनका अर कण्ठ तालुवो ओष्ट जिह्वादिक चलनहलनरहित इच्छाविना अनेक प्राणीनिका पुण्यके प्रभावतैं उपज्या अर आर्य अनार्य समस्त देशके प्राणीनिका ग्रहणमें आवता समस्त पापका घातक दिव्यध्वनिकरि भव्य जीवनिका मोह अन्धकारकूं नष्ट करता चमरनिकरि वीज्यमान छत्रत्रयादि प्रातिहार्यके धारक रत्नमयसिंहासन अर च्यार अंगुल अंतरीक्ष विराजमान भगवान सकलपूज्य परमभट्टारक श्रीवर्धमानदेवाधिदेव मोक्षमार्गके प्रकाशनेके आर्थि समस्तपदार्थनिका स्वरूप सातिशय दिव्यध्वनिकरि प्रगट किया तिस अवसरमें निकटवर्ती निर्ग्रंथ ऋषीश्वरनिकरि बंदनीक सप्तऋद्धि समृद्धि च्यारिज्ञानके धारक श्रीगौतम नाम गणधरदेव कोष्ठबुद्धि आदिक ऋद्धिके प्रभावतैं भगवानभाषित अर्थकूं नाहीं विस्मरण होता भगवानभाषित अर्थकूं धारणकरि द्वादशांगरूप रचना रची जब चतुर्थ कालका तीनवर्ष साढाआठ महीना बाकी रह्या तदि श्रीवर्धमानस्वामी निर्वाण गये पाछे गौतम स्वामी, सुधर्माचार्य, जम्बूस्वामी ए तीन केवली बासठवर्ष पर्यंत केवलज्ञानकरि समस्त प्ररूपणा करी। पाछें केवलज्ञानका अभाव भया। ता पाछें अनुक्रमकरि विष्णु, नंदिमित्र, अपराजित, गोवर्धन, भद्रबाहु ये पांच मुनि द्वादशांगके धारक श्रुतकेवली भए तिनका एकसौ वर्षका अवसर क्रमतैं भया तिनके अवसरमें भगवान केवलीतुल्य पदार्थनिका ज्ञान अर प्ररूपणा रही। बहुरि विशाखाचार्य, प्रौष्ठिलाचार्य, क्षत्रिय, जयसेन, नागसेन, सिद्धार्थ, धृतिषेण, विजय, बुद्धिमान, गंगदेव, धर्मसेन ये दश पूर्वके धारक एकादश परम निर्ग्रंथ मुनीश्वर अनुक्रमतैं एकसो तीयासी वर्षमें भये ते हू यथावत प्ररूपणा करी बहुरि नक्षत्र, जयपाल, पांडुनाम, ध्रुवसेन, कंसाचार्य ये पांच महामुनि एकादशांग विद्याका पारगामी

अनुक्रमतैं दोयसौवीस वर्षमैं भये तेहू यथावत प्ररूपणाकरी। बहुरि सुभद्र, यशोभद्र, भद्रबाहु, महायश, लोहाचार्य ये पंच महामुनि एक प्रथमअंगका पारगामी एकसौअठारा वर्षमैं अनुक्रमतैं भये। ऐसैं भगवान वीरजिनेंद्रकूं निर्वाण गये पाछैं छहसौ तिरासी वर्ष पर्यंत अंगका ज्ञान रह्या पाछैं ऐसै कालके निमित्ततैं बुद्धिवीर्यादिककी मंदता होते श्रीकुन्दकुन्दादि अनेकमुनि निर्ग्रंथ वीतरागी अंगके वस्तुनिका ज्ञानी होते भए तथा उमास्वामी भये ऐसे पापतैं भयभीत ज्ञानविज्ञानसपन्न परमसंजमगुणमण्डित गुरुनिकी पारिपाटीतैं श्रुतका अव्युछिन्न अर्थके धारक वीतरागीनिका परम्परा चली आई तिनमैं श्रीकुंदकुन्दस्वामी समयसार प्रवचनसार पंचास्तिकाय रयणसार अष्टपाहुडकूं आदि लेय अनेकग्रन्थ रचे ते अवार प्रत्यक्ष वाचने पढनेमैं आवैं हैं। इन ग्रन्थनिका जो विनयपूर्वक आराधन सो प्रवचन भक्ति है। बहुरि दशअध्यायरूप तत्त्वार्थसूत्र श्रीउमास्वामी रच्या तिस तत्त्वार्थसूत्र ऊपरि सर्वार्थसिद्धि नाम टीका पूज्यपादस्वामी रची है। अर तत्त्वार्थसूत्रऊपरि ही राजवार्तिक सोलहहजार श्लोकनिमैं श्रीअकलंकदेव रच्या अर श्लोकवार्तिक वीसहजार श्लोकनिमैं विद्यानंदिस्वामी रच्या अर गंधहस्ति नाम महाभाष्य चौरासीहजार श्लोकनिमैं समन्तभद्रस्वामी बडी टीका रची सो अवार इस अवसरमैं मिले है नाहीं अर इस गंधहस्तिमहाभाष्यको आदि मंगलाचरण एकसौ पन्दरा श्लोकनिमैं देवागमस्तोत्र किया ताकी आठसौ श्लोकनमैं टीका अष्टशती तो अकलंकदेव रची अर देवागमअष्टशती ऊपरि आप्तमीमांसा नामा जाकूं अष्टसहस्री कहिये सो आठहजार श्लोकनिमैं विद्यानंदिजी रची तिस अष्टसहस्री ऊपरि सोलहहजार टिप्पण है अर विद्यानंदिस्वामीकृत आप्तकी परीक्षारूप तीनहजार श्लोकानिमैं आप्तपरीक्षा नाम ग्रन्थ है तथा परीक्षामुख माणिक्यनंदि रच्या अर याकी बडी टीका प्रभाचन्द्र आचार्य प्रमेयकमलमार्तंड बाराहजार श्लोकानिमैं रची अर छोटी टीका प्रमेयचन्द्रिका अनंतवीर्य नाम आचार्य रची। अर अकलंकदेवकृत लघुत्रयी ऊपरि न्यायकुमुदचन्द्रोदय सोलहहजार श्लोकानिमैं प्रभाचन्द्र नाम आचार्य रच्या

तथा औरहू न्यायके केई ग्रन्थ प्रमाणपरीक्षा प्रमाणनिर्णय प्रमाणमीमांसा तथा बालावबोधन्यायदीपिका इत्यादिक जिनधर्मके स्तंभ द्रव्यनिका प्रमाणकरि निर्णय करते अनेकांतका भन्या हुआ द्रव्यानुयोग ग्रंथ जयवंते प्रवर्तैं हैं अर करणानुयोगका गोम्मटसार लब्धिसार क्षपणासार त्रिलोकसारादि अनेक ग्रंथ हैं। तथा चरणानुयोगके मूलाचार आचारसार रत्नकरंडश्रावकाचार भगवतीआराधना स्वामिकार्तिकेयानुप्रेक्षा आत्मानुशासन पद्मनंदिपचीसी इत्यादिक अनेक ग्रन्थ हैं तथा जैनेन्द्रव्याकरण अनेकांतका भन्या है तथा प्रथमानुयोगके जिनसेनाचार्यकृत आदिपुराण तथा गुणभद्राचार्यकृत उत्तरपुराण इत्यादिक जिनेन्द्रके परमागमके अनुसार उपदेशीग्रन्थ तथा पुराण चरित्र आचारके अनेक ग्रन्थ हैं तिनकूं बडी भक्तितैं पठन करना तथा श्रवण करना तथा व्याख्यान करना तथा वंदना करना लिखना लिखावना शोधना सो समस्त प्रवचनभक्ति है मेरे शास्त्रका अभ्यासमैं जो दिन जाय सो दिन धन्य है परमागमका अभ्यासविना हमारे जो काल जाय सो वृथा है। स्वाध्याय विना शुभध्यान नाहीं होय स्वाध्यायविना पापसूं नाहीं छूटै कषायनिकी मंदता नाहीं होय शास्त्रका सेवन विना संसार देह भोगनितैं विरागता नाहीं उपजै है समस्त व्यवहारकी उज्ज्वलता परमार्थका विचार आगमका सेवनहीतैं होय है श्रुतका सेवनतैं जगतमैं मान्यता उच्चता उज्ज्वलयश आदरसत्कारकूं प्राप्त होय है सम्यग्ज्ञान ही परमबांधव है उत्कृष्टधन है परममित्र है सम्यग्ज्ञान ही अविनाशी धन है स्वदेशमैं परदेशमैं सुखअवस्थामैं दुखमैं आपदामैं संपदामैं परमशरणभूत सम्यग्ज्ञान ही है स्वाधीन अविनाशी धन ज्ञान ही है यातैं शास्त्रनिके अर्थहीका सेवन करना अपना आत्माकूं नित्य ज्ञानदान करो अपना संतानकूं तथा शिष्यनिकूं ज्ञानदान ही करो। ज्ञानदान देने समान कोटिधनका दान नाहीं है धन तो मद उपजावै है विषयनिमैं उरझावै दुर्ध्यान करै संसाररूप अंधकूपमैं डबोवै तातैं ज्ञानदान समान दान नाहीं। एक श्लोक अर्धश्लोक एकपद मात्राहूका जो नित्य अभ्यास करै तो शास्त्रार्थका परिगामी होजाय। विद्या है सो परमदेवता है जो

माता पिता ज्ञानाभ्यास करावे हैं ते कोट्यां धन दिया। जे सम्यग्ज्ञानके दाता गुरु हैं तिनका उपकार समान त्रैलोक्यमैं कोऊ उपकारक नाहीं अर ज्ञानके देनेवाला गुरुका उपकारकूं लोपे है तिससमान कृतघ्नी नाहीं पापी नाहीं। ज्ञानका अभ्यासविना व्यवहार परमार्थ दोउनिमैं मूढ हैं यातैं प्रवचनभक्तिही परमकल्याण है। प्रवचनका सेवनविना मनुष्य पशुसमान है। या प्रवचनभक्ति हजारां दोषानिका नाश करनेवाली है याका भक्तिपूर्वक अर्घ उतारण करो याहीतैं सम्यग्दर्शनकी उज्ज्वलता होय है। ऐसे प्रवचनभक्ति नामा तेरमी भावना वर्णन करी॥ १३॥

अब आवश्यकापरिहाणि नाम चौदमी भावना वर्णन करैं हैं। अवश्य करनेयोग्य होय ताकूं आवश्यक कहिये है। आवश्यकनिकी जो हानि नाहीं करनेका चिंतवन सो आवश्यकापरिहाणीनाम भावना है। अथवा इंद्रियनिके वश नाहीं सो अवश्य कहिये अवश्य जे मुनि तिनकी जो क्रिया सो आवश्यक है आवश्यककी हानि नाहीं करना सो आवश्यकापरिहाणि कहिये ते आवश्यक छहप्रकार हैं। सामायिक, स्तव, वंदना, प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, कायोत्सर्ग ये छह आवश्यक हैं सो कहिये हैं। जे देहतैं भिन्न ज्ञानमय ही जाके देह ऐसा परमात्मस्वरूप कर्मरहित चैतन्यमात्र शुद्धजीवकूं एकाग्रकार ध्यावता मुनि है सो सर्वोत्कृष्ट निर्वाणकूं प्राप्त होय है अर जो विकल्परहित शुद्धआत्माके गुणनिमैं आपका मन नाहीं तिष्ठै तो तपस्वीमुनि षट् आवश्यकक्रिया हैं तिनको पुष्ट करो अंगीकार करो अर आवते अशुभकर्मके आस्रवकूं निराकरण करो टालो प्रथम तो सुंदर असुंदर वस्तुमैं तथा शुभ अशुभ कर्मके उदयमें रागद्वेष मति करो तथा आहार वस्तिकादिकनिका लाभमैं वा अलाभमैं समभाव करो जातैं स्तुतिमैं निंदामैं आदरमैं अनादरमैं पाषाणमैं रत्नमैं जीवनमैं मरणमैं वैरीमैं मित्रमैं सुखमैं दुःखमैं स्मशानमैं महलमैं रागद्वेषरहित परिणाम होना सो समभाव है। जातैं साम्यभावके धारक हैं ते बाह्य पुद्गलनिकूं अचेतन अर आपतैं भिन्न अर अपने आत्मस्वभावमैं हानि वृद्धिके अकर्ता जानि रागद्वेष छांडे हैं अर आपकूं

शुद्ध ज्ञाताद्रष्टारूप अनुभव करता रागद्वेषादिविकार रहित तिष्ठै है ताके साम्यभाव होय है सोही सामायिक है बहुरि भगवान जिनेंद्रके अनेकनामनिकरि स्तवन करना सो स्तवन नाम आवश्यक है। जो कर्मरूप वैरीकूं आप जीते तातैं जिन हो अर अपने स्वरूपमैं आपकरि आप तिष्ठो हो तातैं स्वयंभू हो अर केवलज्ञानरूप नेत्रकरि त्रिकालवर्ती पदार्थनिकूं जानो हो तातैं त्रिलोचन हो अर आप मोहरूप अंधासुरकूं मारया तातैं अंधकांतक हो आप घातियाकर्म रूप अर्धवैरीनिका नाशकरके ही अद्वितीय ईश्वरपना पाया तातैं अर्धनारीश्वर हो आप शिवपद जो निर्वाणपद तामैं बसे तातैं आप शिव हो पापरूप वैरीका संहार करो हो तातैं आप हर हो लोकमैं सुखका कर्त्ता तातैं आप शंकर हो शं जो परमआनंदरूप सुख तामैं उपजै तातैं संभव हो वृष जो धर्म ताकरि दिपो हो तातैं आप वृषभ हो अर जगतके सकल प्राणीनिमैं गुणनिकरि बडे तातैं जगज्ज्येष्ठ हो क जो सुख ताकरि समस्तजीवनकी पालना करी तातैं आप कपाली हो केवलज्ञानकरि समस्त लोक अलोकमैं व्याप्त हो रहे तातैं आप विष्णु हो अर जन्मजरामरणरूप त्रिपुरकूं मारया तातैं आप त्रिपुरांतक हो ऐसैं एकहजारआठनामकरि आपका स्तवन इंद्र किया है। अर गुणनिकी अपेक्षा आपका अनंत नाम है। ऐसैं भावनिमैं गुणचिंतवनकरि जो चौबीस तीर्थंकरनिका स्तवन करै है सो स्तवन नाम आवश्यक है ॥ २ ॥ बहुरि चतुर्विंशति तीर्थंकरनिमैं एक तीर्थंकरकी वा अरहंत सिद्ध आचार्य उपाध्याय सर्वसाधुनमैं एककूं मुख्यकरि स्तुति करना सो वंदना आवश्यक है ॥ ३ ॥ बहुरि जो समस्त दिनमैं प्रमादके वश होय तथा कषायनिके वश होय वा विषयनिमैं रागद्वेषी होय कोऊ एकेन्द्रियादिक जीवनिका घात किया तथा अनर्थक प्रवर्तन किया वा सदोषभोजन किया वा किसी जीवका प्राणपीडित किया तथा कर्कश कठोर मिथ्यावचन कह्या वा किसीकी निंदा अपवाद किया वा अपनी प्रशंसा करी वा स्त्रीकथा भोजनकथा देशकथा राज्यकथा करी तथा अदत्तधन ग्रहणकिया वा परका धनमैं लालसाकरी तथा परकी स्त्रीमें राग किया तथा धनपरिग्रहादिक

में लालसा करी ते समस्त पाप खोटे किये बंधके कारण किये, अब ऐसा पापरूप परिणामनिकूं भगवान पंच परमगुरू हमारी रक्षा करहु अब ऐ परिणाम मिथ्या होहू पंच परमेष्ठीके प्रसादतैं हमारे पापरूपपरिणाम मति होहू ऐसे भावनिकी शुद्धतावास्ते कायोत्सर्गकरि पंच नमस्कारके नव जाप्य करे ऐसे समस्त दिनकी प्रवृत्तिकूं संध्याकाल चिंतवनकरि पापपरिणामनिकूं निंदना सो दैवसिक प्रतिक्रमण है। अर रात्रिसंबंधी पापका दूरिकरनेके अर्थ प्रभात प्रतिक्रमण करना सो रात्रिक प्रतिक्रमण है। बहुरि मार्गमें चालनेमैं दोष लाग्या ताकी शुद्धिका जो प्रतिक्रमण सो ऐर्यापथिक प्रतिक्रमण है एक पक्षके दोष निराकरण करनेके अर्थ पाक्षिक प्रतिक्रमण है च्यार महीनेके दोष निराकरणके अर्थ प्रतिक्रमण करना चातुर्मासिक प्रतिक्रमण है एक वर्षके दोष निराकरणके अर्थ सांवत्सरिक प्रतिक्रमण है समस्त पर्यायके कालका दोष निराकरणके अर्थ अंत्यसंन्यासमरणकी आदिमैं प्रतिक्रमण है सो उत्तमार्थ प्रतिक्रमण है ऐसैं सप्त प्रकार प्रतिक्रमण है तिनमैं गृहस्थकूं संध्या अर प्रभात तो अपना नफा टोटा अवश्य देखना योग्य है। इहां जो सौ पचास रुपयाका व्यवहार करनेवाला हू आथणनै ठिगाई जिताई देखै है तो इस मनुष्य जन्मकी एक एक घडी कोटिधनमैं दुर्लभ गयां पाछैं नहीं मिलै है याका विचार हू अवश्य करना जो आज मेरे परमेष्ठीका पूजनमैं स्तवनमैं केता काल गया अर स्वाध्यायमैं पंचपरमगुरुके शास्त्रश्रवणमैं तत्वार्थकी चरचामैं धर्मात्माकी वैयावृत्तिमैं केता काल गया अर घरके आरंभमैं कषायमैं तथा विकथा करनेमैं विसंवादमैं भोजनादिकमैं वा अन्य इंद्रियनिके विषयनिमैं प्रमोदमैं निद्रामैं शरीरके संस्कारमैं हिंसादिक पंच पापनिमैं केता काल गया है ऐसा चिंतवनकरि पापमैं बहुत प्रवृत्ति भई होय तो आपकूं धिक्कार देय पापबंधके कारणनिकूं घटाय धर्म कार्यमैं आत्माकूं युक्त करना योग्य है पंचमकालमैं प्रतिक्रमण ही परमागममैं धर्म कह्या है। आत्माका हित अहितका विचारमैं निरंतर उद्यमी रहना योग्य है। यो प्रतिक्रमण आत्माकी बडी सावधानी करनेवाला है अर पूर्वले किये पापकी निर्जरा

करै है ॥ ४ ॥ बहुरि आगामी कालमैं आपके आस्रवके रोकनेके अर्थ पापनिका त्याग करना जो आगे मैं ऐसा पाप कबहू मन वचन कायस्यों नाहीं करूंगा सो प्रत्याख्यान नाम आवश्यक सुगतिका कारण है ॥ ५ ॥ बहुरि च्यार अंगुलके अंतरालै दोऊ पग बरोबरकरि खडा रहै दोऊ हस्तनिकूं लंबायमानकरि देहस्यों समता छांडि नासिकाका अग्रमैं दृष्टि धारि देहतैं भिन्न शुद्ध आत्माकी भावना करना सो कायोत्सर्ग है । सो निश्चय पद्मासनतैं हू होय अर खडा देहकरि हू होय दोऊनिमैं शुद्ध ध्यानका अवलम्बनतैं सफल है ॥ ६ ॥ ए छह आवश्यक परमधर्मरूप हैं इनकूं पूजि पुष्पांजलि क्षेपि अर्घ उतारण करना योग्य है । बहुरि ए छह आवश्यक परमागममैं छह छह प्रकार कह्या है । नाम स्थापना द्रव्य क्षेत्र काल भाव करि षट्प्रकार जानना । शुभ अशुभ नामकूं श्रवणकरि राग द्वेष नाहीं करना सो नाम सामायिक है । कोऊ स्थापना प्रमाणादिककरि सुंदर है कोऊ प्रमाणादिककरि हीनाधिककरि असुंदर है तिनके विषै राग द्वेषका अभाव सो स्थापना सामायिक है । सुवर्ण रूपा रत्न मोती इत्यादिक अर मृत्तिका काष्ठ पाषाण कंटक छार भस्म धूल इत्यादिकनिकमैं रागद्वेषरहित सम देखना सो द्रव्यसामायिक है । महल उपवनादि रमणीक श्मशानादिक अरमणीक क्षेत्रमैं रागद्वेष छांडना सो क्षेत्र सामायिक है हिम शिशिर वसंत ग्रीष्म वर्षा शरत ये ऋतु अर रात्रि दिवस अर शुक्लपक्ष कृष्णपक्ष इत्यादिक काल विषैं रागद्वेषको वर्जन सो काल सामायिक है । अर समस्त जीवनिके दुःख मति होहू ऐसा मैत्रीभावकरि अशुभ परिणामनिका अभाव करना सो भावसामायिक है ऐसैं छहप्रकार सामायिक कह्या । अब छहप्रकार स्तवन कहै हैं चतुर्विंशति तीर्थंकरनिका अर्थ सहित एकहजार आठ नामकरि स्तवन करना सो नामस्तवन है अर कृत्रिम अकृत्रिम अपरिमाण तीर्थंकर अरहंतनिके प्रतिबिंबनिका स्तवन सो स्थापना स्तवन है अर समवसरणस्थित काल देह प्रभा प्रातिहार्यादिकनिकरि स्तवन सो द्रव्यस्तवन है । अर कैलाश संमेदाचल ऊर्जयंत (गिरनार) पावापुर चंपापुरादि निर्वाण क्षेत्रनिका तथा समवसरणमैं धर्मोपदेशक क्षेत्रका स्तवन सो

क्षेत्र स्तवन है। अर स्वर्गावतरण जन्म तप ज्ञान निर्वाणकल्याणकके कालका स्तवन सो कालस्तवन है अर केवलज्ञानादि अनंतचतुष्टयभावका स्तवन सो भावस्तवन है ऐसैं छहप्रकार स्तवन कह्या। ए तीर्थंकर वा सिद्ध तथा आचार्य उपाध्याय साधु इनमैं एकका नामका उच्चारण करना सो नामवंदना है। अर अरहंत सिद्ध आचार्यादिकनिमैं एकका प्रतिबिंबादिककी वंदना सो स्थापना वंदना है। तिनके शरीरकी वंदना सो द्रव्यवंदना है। अरहंत सिद्ध आचार्यादिकनिकरि व्याप्त जो क्षेत्र ताकी वंदना सो क्षेत्रवंदना है। तिन ही पंचपरमगुरुनिमैं कोऊ एककरि व्याप्त जो काल ताकी वंदना सो कालवंदना है। एक तीर्थंकरका वा सिद्धका वा आचार्यका वा उपाध्यायका वा साधुके आत्मगुणनिकूं वंदना करना सो भाववंदना है। ऐसैं छहप्रकार वंदना कही।

अब छहप्रकार प्रतिक्रमण कहे हैं। अयोग्य नामके उच्चारणमैं कृतकारितअनुमोदनारूप मनवचनकायतैं उपज्या दोषका निराकरणके अर्थि प्रतिक्रमणकरना सो नामप्रतिक्रमण है। कोऊ शुभ अशुभ स्थापनाका निमित्ततैं मनवचनकायतैं उपज्या दोषतैं आत्माकूं निवृत्त करना सो स्थापनाप्रतिक्रमण है। अर द्रव्य जो आहार पुस्तक औषधादिकके निमित्ततैं मनवचनकायतैं उपज्या दोषका निराकरणके अर्थ द्रव्यप्रतिक्रमण है। क्षेत्रमें गमनस्थानादिकके निमित्ततैं उपज्या अशुभपरिणामजनित दोषनिका निराकरणके अर्थ क्षेत्रप्रतिक्रमण है। अर दिवस रात्रि पक्ष ऋतु शीत उष्ण वर्षाकाल इनके निमित्ततैं उपज्या अतीचारका दूर करनेकूं प्रतिक्रमण करना सो कालप्रतिक्रमण है। अर रागद्वेषादिभावनितैं उपज्या दोषके दूर करनेकूं भावप्रतिक्रमण है। बहुरि अयोग्य पापके कारण जे नाम उच्चारण करनेका त्याग सो नामप्रत्याख्यान है अर अयोग्य मिथ्यात्वादिकके प्रवर्तावनेवाली स्थापना करनेका त्याग सो स्थापना प्रत्याख्यान है। पापबंधका कारण सदोषद्रव्य वा तपके निमित्त निर्दोषद्रव्यका हू मनवचनकाय करि त्याग सो द्रव्यप्रत्याख्यान है। बहुरि असंजमका कारण क्षेत्रका त्याग सो क्षेत्रप्रत्याख्यान है।

असंजमका कारण कालका त्याग सो काल प्रत्याख्यान है मिथ्यात्व असंजम कषायादिकनिका त्याग सो भावप्रत्याख्यान है। ऐसे छहप्रकार प्रत्याख्यान वर्णन किया। अब छहप्रकार कायोत्सर्गकूं कहे हैं। पापके कारण कठोर कटुक नामादिकतैं उपज्या दोषका दूर करनेके अर्थ कायोत्सर्ग करना सो नाम कायोत्सर्ग है। पापरूप स्थापनाका द्वारकरि आया अतीचार दूरकरनेकूं कायोत्सर्ग करना सो स्थापनाकायोत्सर्ग है। सदोषद्रव्यके सेवनतैं तथा सदोषक्षेत्रकालके सेवनतैं संयोगतैं उपज्या दोष दूर करनेकूं कायोत्सर्ग करना सो द्रव्यक्षेत्रकालकायोत्सर्ग है। मिथ्यात्व असंजमादिक भावनिकरि कीया दोष दूर करनेकूं कायोत्सर्ग करना सो भाव कायोत्सर्ग है। ऐसे छह प्रकार छहआवश्यक वर्णन किये। अब गृहस्थके और हू छहप्रकारके आवश्यक हैं। भगवान जिनेंद्रका नित्य पूजन करना, निर्ग्रंथगुरुनिका सेवन स्तवन चिंतवन नित्य करना, अर जिनेंद्रके प्ररूपे आगमका नित्य स्वाध्याय करना, इंद्रियनिकूं विषयनितैं रोकना छहकाय जीवनकी दया पालना सो संयम है, शक्ति प्रमाण नित्य तप करना, शक्ति प्रमाण नित्य दान देना ये षट्प्रकारहू आवश्यक गृहस्थकूं नित्य नियमतैं अंगीकार करना योग्य है। ऐसे समस्तपापका नाशकरनेवाली भावनिकूं उज्ज्वल करनेवाली आवश्यकनिकी हानिका अभावरूप चौदमी भावना वर्णन करी॥ १४॥

अब सन्मार्ग प्रभावना नाम पंद्रमीभावना वर्णन करै हैं। इहां सन्मार्ग जो मोक्षका सत्यार्थमार्ग ताका प्रभाव प्रगट करना सो मार्ग प्रभावना है। सो सन्मार्ग रत्नत्रय है रत्नत्रय आत्माका स्वभाव है वाकूं मिथ्यात्व राग द्वेष काम क्रोध मान माया लोभ ये अनादितैं मलीन विपरीत करि राख्या है अब परमागमका शरण पाय मोकूं मिथ्यात्वादिक दोषनिकूं दूरिकरि रत्नत्रयस्वभावकूं उज्ज्वल करना। यो मनुष्यजन्म अर इंद्रियपूर्णता अर ज्ञानशक्ति अर परमागमका शरण अर साधर्मीनिका समागम अर रोगादिकरहितपना अर अतिक्लेशरहितजीविका इत्यादिक पुण्यरूप सामग्री पायकरके हू जो आ-

त्माकूं मिथ्यात्वकषायविषयादिक तैं नाहीं छुडाया तो अनंतानंत दुःखनिका भऱ्या संसारसमुद्रतैं मेरा निकसना अनंतकालहूमें नाहीं होयगा जो सामग्री अबार मिली है सो अनंतकालमैंहू अति दुर्लभ है अर अंतरग बहिरंग सकलसामग्री पायकरके हू जो आत्माका प्रभाव नाहीं प्रगट करूंगा तो अचानक काल आय समस्त संयोग नष्ट करदेगा तातैं अब में रागद्वेष मोह दूरकरि जैसें मेरा शुद्ध वीतरागस्वरूप अनुभवगोचर होय तैसें ध्यान स्वाध्यायमें तत्पर होना। बहुरि बाह्यप्रवृत्ति भी मेरी उज्ज्वलकरि अंतर्गतधर्मका प्रभाव प्रगटकरि मार्गप्रभावना करना जाकूं देखि अनेक जीवानिके हृदयमें धर्मकी महिमा प्रवेश करि जाय। जिनेन्द्रका उत्सव ऐसा करना जाकूं देखि हजारां लोकनिका भाव जिनेन्द्रके जन्म कल्याणसमय जैसें इंद्रादिक देव अभिषेककरि अपना जन्म सफल किया तैसें जयजयकार शब्दकरि हजारां स्तवनका उच्चारणकरि लोक आपकूं कृतार्थ मान तन मन प्रफुल्लित हो जाय तैसें अभिषेककरि प्रभावना करना तथा जिनेंद्रकी बडी भक्ति अर बडी विनय अर निश्चल ध्यानकरि ऐसे पूजन करो जाकूं करते देखते अर शुद्धभक्तिके पाठ पढते तथा श्रवण करते हर्षके अंकूरे प्रगट होंय आनंद हृदयमें नाहीं समावता बाह्य उछलने लगजाय जिनकूं देखि मिथ्यादृष्टिनिकाहू ऐसा परिणाम हो जाय अहो जैनीनिकी भक्ति आश्चर्यरूप है जामें ये निर्दोष उत्तम उज्ज्वल प्रमाणीक सामग्री अर ये उज्ज्वल सुवर्णके रूपाके तथा कांशी पीतलमय मनोहर पूजनके पात्र अर ये भक्तिके रसकरि भरे अर्थसहित कर्णनिकूं अमृतरूप सींचते शुद्ध अक्षरनिका उच्चारण अर एकाग्ररूप विनयसहित शब्दानिके अनुकूल उज्ज्वल द्रव्यका चढावना अर ये परमशांतमुद्रारूप वीतरागके प्रतिबिंब प्रातिहार्यनिकरि भूषितका पूजना स्तवन करना नमस्कार करना धन्य पुरुषनिकरि होय है। धन्य इनकी भक्ति धन्य इनका जन्म अर धन्य इनका मनवचनकाय अर धन्य इनका धन जो निर्वांछक होय ऐसे सन्मार्गमें लगावें है। ऐसा प्रभाव व्याप्त हो जाय। अर देखनेतैं अर श्रवण करनेतैं निकटभव्यानिके आनंदके अश्रुपात झरने लगिजांय। भक्ति ही संसारसमुद्रमें

डूबतेनिकूं हस्तावलंबन देनेवाली है हमारे भवभवमैं जिनेंद्रकी भक्ति ही शरण होहू ऐसा जिनेन्द्रका नित्य पूजन करना तथा अष्टाह्निक पर्वमैं तथा षोडशकारण दशलक्षण रत्नत्रय पर्वमैं समस्त पापके आरंभ छांडि जिनपूजन करना आनंदसहित नृत्य करना कर्णनिकूं प्रिय ऐसे वादित्र बजावना तथा स्वर ताल मूर्छनादिसहित जिनेंद्रके गुण गावने ते समस्त सन्मार्ग प्रभावना है । सो जिनके हृदयमैं सत्यार्थ धर्म बसै है तिनके प्रभावना होय है । बहुरि जिनेंद्रके प्ररूपे च्यार अनुयोगनिके सिद्धांतनिका ऐसा व्याख्यान करना जाकूं श्रवण करनेतैं एकांतका हठ नष्ट होय अनेकांत हृदयमैं रचि जाय पापनितैं कांपने लगिजाय व्यसन छूटिजाय दयारूपधर्ममैं प्रवर्तन होजाय अभक्ष्यभक्षणका त्याग होजाय ऐसा व्याख्यान करना जाके श्रवण करनेतैं हजारां मनुष्यनिके कुदेव कुगुरु कुधर्मके आराधनका त्याग होयके अर वीतराग देव दयारूपधर्म आरंभपरिग्रहरहित गुरुनिके आराधनमैं दृढश्रद्धान होजाय तथा ऐसा व्याख्यान करना जो श्रवणकरि बहुत मनुष्य रात्रिभोजन अयोग्यभोजन अन्यायका विषय परधनमैं राग छांडि व्रतनिमैं शीलमैं संयमभावमैं संतोषभावमैं लीन होय जाय । तथा ऐसा उपदेश करना जाकरि देहादिक परद्रव्यनितैं भिन्न अपने आत्माका अनुभव होना पर्यायमैं आपा छूटना जीव अजीवादिक द्रव्यनिका प्रमाणनयनिक्षेपनिकरि निर्णय होय संशयरहित द्रव्यगुणपर्यायनिका सत्यार्थ स्वरूप प्रगट हो जाना मिथ्या अंधकार दूर होना ऐसा आगमका व्याख्यानतैं सन्मार्गकी प्रभावना होय है । बहुरि घोर तपश्चरण करना जो कायरनिकरि नाहीं धारण किया जाय ऐसैं तपकरि प्रभावना होय है । क्योंकि विषयानुराग छांडि निर्वांछक होनेकरि आत्माका प्रभाव भी प्रगट होय है अर धर्मका मार्ग भी तपहीतैं दिपै है । यो तप ही दुर्गतिका मार्गका नष्ट करनेवाला है । तप विना कामादिकविषय ज्ञानकूं चारित्रकूं नष्ट करि देहैं तपके प्रभावतैं कामका क्षय होय रसनाइंद्रियकी चपलता नष्ट होय लालसाका अभाव होय है यातैं रत्नत्रयकी प्रभावना तपहीतैं दृढ होय है । बहुरि जिनेंद्रका प्रतिबिंबकी प्रतिष्ठा करना जिनेंद्रका

मंदिर करावना यातैं सन्मार्गकी प्रभावना है जातैं प्रतिष्ठा करावनेकरि जहांतांई जिनबिंब रहेगा तहांतांई दर्शन स्तवन पूजनादिकरि अनेकभव्य पुण्यउपार्जन करैंगे अर जिनमंदिर करावैंगे तिन गृहस्थनिका ही धनपावना सफल होयगा । पूजन रात्रिजागरण शास्त्रनिका व्याख्यान श्रवण पठन जिनेंद्रका स्तवन सामायिक प्रतिक्रमण अनशनादिकतप नृत्य गान भजन उत्सव जिनमंदिर होय तदि ही होय जिनमंदिर विना धर्मका समस्त समागम होय ही नाहीं यातैं बहुत कहा लिखिये अपना अर परका परम उपकारका मूल प्रतिष्ठा करना अर मंदिर करावना है उत्कृष्टधर्मका मार्ग तो समस्तपरिग्रह छांडि वीतरागता अंगीकार करना है परंतु जाके प्रत्याख्यान वा अप्रत्याख्यान नाम कषायका उपशम भया नाहीं तातैं गृहसंपदा छांडि जाय नाहीं अर धनसंपदा बहुत होय तो प्रथम तो जिनका आप अन्यायसूं धन लिया होय ताके निकट जाय क्षमा ग्रहण कराय उनका धन लोटा देना बहुरि धन बहुत होय तद नवीनधन उपार्जनका त्याग करना बहुरि तीव्ररागके बधावनेवाले इंद्रियनिके विषानिकी लालसा छांडि त्यागकरि संवररूप होना फिर जो धन है तामैंसूं अपने मित्र हितू पुत्री बहण भूवा बंधुजननिमैं जे निर्धन रोगी दुःखित होंय तिनको वा अनाथ विधवा होंय तिनको यथायोग्य देय संतोषित करना बहुरि अपने आश्रित सेवकादिक वा समीप बसनेवाले तिनको यथायोग्य संतोषित करकैं बहुरि पुत्रको स्त्रीको विभागादिक निरालो करि पीछैं जो द्रव्य होय ताकूं जिनबिंबके करावनेमैं वा जिनबिंबकी प्रतिष्ठा करावनेमैं तथा जिनेन्द्रके धर्मका आधार सिद्धांतनिके लिखावनेमैं कृपणता छांडि उदारमनतैं परके उपकार करनेकी बुद्धितैं धन लगावै है तिस समान कोऊ प्रभावना नाहीं है अर जे मंदिरप्रतिष्ठा तो करावैगा अर अनीतिकरि परधन राखि मेलैगा अन्यायका धनकूं ग्रहण करेगा तो ताकी समस्त प्रभावना नष्ट होजायगी तथा प्रतिष्ठा करावनेवाला मंदिर करावनेवाला खोटा बनिज व्यवहार करै तथा हिंसादिक महापापनिमैं निंद्य अयोग्य वचननिमैं तथा तीव्रलोभमैं प्रवर्तैं कुशीलमैं प्रवर्तैं तथा अतिकृपणताकरि परिणाममैं संक्ले-

शरूप हुआ धनकूं खरच करे तो समस्त प्रभावना नष्ट होजाय यातैं प्रतिष्ठाका करावनेवाला मंदिर करावनेवालाकी बाह्य प्रवृत्ति भी शुद्ध होय है ताकी प्रभावना होय है तथा शिखर कलश घंटा चढावनेकरि क्षुद्रघंटिका बांधनेकरि प्रभावना करै तथा मंदिरानिमैं चंदोवा घंटा सिंहासनादि उत्तमउपकरण चढावनेकरि अर स्वाध्यायमैं प्रवृत्ति इत्यादिकरि प्रभावना दुःखका नाश करनेवाली होय है प्रभावना शुद्ध आचरण करि होय है यातैं जिनवचनका श्रद्धानी होय सो धर्मकी प्रभावना ही करै जैनीनिका गाढ देखि मिथ्यादृष्टीनिकैं हृदयमैं हू बडी महिमा दीखै जैनीनिका धर्म जो प्राण जातैं हू अभक्षण नाहीं करै हैं तीव्र रोग वेदना आवतैं हू रात्रिमैं औषधि जलादिकका पान नाहीं करै है धनअभिमानादिक नष्ट होतैं हू असत्य वचनादि नाहीं बोलैं हैं महा आपदा आवतैं हू परधनमैं चित्त नाहीं चलावै हैं । अपना प्राण जातैं हू अन्य जीवका घात नाहीं करैं हैं तथा शीलकी दृढता परिग्रहपरिमाणता परमसंतोष धारण करनेतैं आत्मप्रभावना होय अर मार्गकी प्रभावना हू होय तातैं समस्त धन जाते हू अर प्राण जातैं हू अपने निमित्ततैं धर्मकी निंदा हास्य कदाचित् नाहीं करावै ताकै सन्मार्ग प्रभावना अंग होय है। इस प्रभावनाकी महिमा कोट जिह्वानितैं वर्णन करनेको कोऊ समर्थ नाहीं है यातैं भो भव्यजन हो त्रिलोकमैं पूज्य जो प्रभावनाअंग ताकूं दृढ धारणकरि याहीकूं भक्ति करि पूजो याका महाअर्घ उतारण करो जो प्रभावनाकूं दृढ धारण करै है सो इंद्रादिक देवनिकरि पूज्य तीर्थंकर होय है ऐसे सन्मार्गप्रभावना नामा पंद्रमी भावना वर्णन करी ॥ १५ ॥

अब प्रवचनवत्सलत्व नाम सोलमी भावना वर्णन करै हैं । प्रवचन जो देव गुरु धर्म इनिमैं जो वात्सल्य कहिये प्रीतिभाव सो प्रवचनवत्सलत्व नाम कहिये है। जे चारित्रगुणयुक्त हैं शीलके धारक हैं परम साम्यभावकरि सहित बाईसपरीषहनिके सहनेवाले देहमैं निर्ममत्व समस्तविषय वांछारहित आत्महितमैं उद्यमी परके उपकार करनेमैं सावधान ऐसे साधुजननिके गुणनिमैं प्रीतिरूपपरिणाम सो वात्सल्य

है तथा व्रतानिके धारक अर पापसूं भयभीत न्यायमार्गी धर्ममें अनुरागके धारक मंदकषायी संतोषी ऐसे श्रावक तथा श्राविका तिनके गुणानिमें तिनकी संगतिमें अनुराग धारण करना सो वात्सल्य है तथा जे स्त्रीपर्यायमें व्रतनिकी हदकूं प्राप्त भये अर समस्त गृहादिक परिग्रह छांडि कुटुम्बका ममत्व तजि देहमें निर्ममत्वता धार पंच इंद्रियानिके विषय त्यागि एकवस्त्रमात्र परिग्रहकूं अवलम्बनकरि भूमिशयन क्षुधा तृषा शीतउष्णादि परिषहनिकरि सहनेकरि संयमरहित ध्यान स्वाध्याय सामायिकादिक आवश्यकानि-करि युक्त अर्जिकाकी दीक्षा ग्रहणकरि संयमसहित काल व्यतीत करै हैं तिनके गुणनिमें अनुराग सो वात्सल्यभाव है तथा मुनीश्वरनिकी ज्यों वनमें निवास करते बाईस परीषह सहते उत्तम क्षमादि धर्मके धारक देहमें निर्ममत्व आपके निमित्त किया औषध अन्न पानादि नाहीं ग्रहण करते एकवस्त्र कोपीन-विना समस्तपरिग्रहके त्यागी उत्तमश्रावकानिके गुणनिमें अनुराग सो वात्सल्य है तथा देव गुरु धर्मका सत्यार्थ स्वरूपकूं जानि दृढश्रद्धानी धर्ममें रुचिके धारक अव्रतसम्यग्दृष्टीमें वात्सल्यता करहु। इस संसारमें अपने स्त्री पुत्र कुटुम्बादिकनिमें तथा देहमें इंद्रियनिके विषयनिमें विषयनिके साधकनिमें अना-दितैं अति अनुरागी होय याहीके अर्थि करै हैं मरै हैं अन्यकूं मारै हैं ऐसा कोऊ मोहका अद्भुत माहा-त्म्य है। ते धन्यपुरुष हैं जे सम्यग्ज्ञानतैं मोहकूं नष्टकरि आत्माके गुणनिमें वात्सल्यता करै हैं संसारी तो धनकी लालसाकरि अति आकुल भए धर्ममें वात्सल्यता त्यागैं हैं अर संसारीनिके धन बधै है तदि अतितृष्णा बधै है। समस्त धर्मका मार्ग भूलजाय धर्मात्मानिमें दूरहीतैं वात्सल्यता त्यागै है रात्रिदिन धनसंपदाके बधावनेमें ऐसा अनुराग बधै है लाखनिका धन होजाय तो कोटिनिमें वांछा करता आरंभ परिग्रहकूं बधावता पापनिमें प्रवीणता बधावता धर्ममें वात्सल्यनियमतैं छांडै है जहां दानादिकनिमें परो-पकारमें धन लगावता दीखै तहां दूरहीतैं टलि निकलै है अर बहु आरम्भ बहुपरिग्रह अतितृष्णातैं समीप आया नरकका वास ताकूं नाहीं देखै है तामें पंचमकालका धनाढ्यां तो पूर्व मिथ्याधर्म कुपात्र-

दान कुदाननिमें रचि ऐसा कर्म बांधि आया है सो नरक तिर्यंचगतिकी परिपाटी असंख्यातकाल अनंतकालपर्यंत नाहीं छूटे उनका तन मन वचन धन धर्मकार्यमें नाहीं लागे है। रात्रिदिन तृष्णा अर आरंभकरि क्लेशित रहै तिनके धर्मात्मामें अर धर्मके धारणमें कदाचित् वात्सल्यता नाहीं होय है अर धनरहित धर्मात्मा हू होय ताकूं नीचा मानै है तातैं भो आत्माहितके वांछक हो धनसंपदाकूं महामदकी उपजावनेवाली जानि अर देहकूं अस्थिर दुःखदायी जानि कुटुम्बकूं महाबंधन मानि इनसूं प्रीति छांडि अपने आत्मासूं वात्सल्य करो। धर्मात्मामें व्रतीनिमें स्वाध्यायमें जिनपूजनमें वात्सल्यता करो जे सम्यग्चारित्ररूप आभरणकरि भूषित साधूजन हैं तिनको स्तवन करै हैं गौरव करै हैं तिनके वात्सल्य नाम गुण है सो सुगतिकूं प्राप्त करै है कुगतिका नाश करै है वात्सल्यगुणके प्रभाव करकै ही समस्त द्वादशांग विद्या सिद्ध होय है जातैं सिद्धांतसूत्रमें अर सिद्धांतका उपदेश करनेवाला उपाध्यायमें सांची भक्तिके प्रभावतैं श्रुतज्ञानावरणकर्मका रस सूकिजाय है तदि सकलविद्या सिद्ध होय है। वात्सल्यगुणके धारककूं देव नमस्कार करै हैं अर वात्सल्य करकै ही अठारह प्रकार बुद्धि ऋद्धि अर आकाशगामनी क्रिया ऋद्धि दोय प्रकार चारणऋद्धि अनेकप्रकार अर अष्टप्रकार विक्रियाऋद्धि तीन प्रकार बलऋद्धि सप्तप्रकार तपऋद्धि छहप्रकार रसऋद्धि छहप्रकार औषधऋद्धि दोय प्रकार क्षेत्रऋद्धि इत्यादिक अनेकशक्ति प्रगट होय है। इहां ऋद्धिनिका स्वरूप कहिये तो कथनी बधि जाय तातैं नाहीं लिख्या है अर्थप्रकाशिकादिनिमें लिख्या है तहांतैं जानना। वात्सल्य करके ही मंदबुद्धिनिकै हू मतिज्ञान श्रुतज्ञान विस्तीर्ण होय है वात्सल्यके प्रभावतैं पापका प्रवेश नाहीं होय है वात्सल्यकरके तप हू भूषित होय है तपमें उत्साह विना तप निरर्थक है। यो जिनेन्द्रको मार्ग वात्सल्यकरिही शोभाकूं प्राप्त होय है। वात्सल्यकरिही शुभ ध्यान वृद्धिकूं प्राप्त होय है वात्सल्यतैं ही सम्यग्दर्शन निर्दोष होय है। वात्सल्य करके ही दान दिया कृतार्थ होय है। पात्रमें प्रीतिविना तथा देनेमें प्रीतिविना दान निंदाका कारण है जिनवाणीमें वात्सल्य

जाके होयगा ताहीके प्रशंसा योग्य सांचा अर्थ उद्योतरूप होयगा जाके जिनवाणीमैं वात्सल्य नाहीं विनय नाहीं ताकूं यथावत अर्थ नाहीं दीखैगा विपरीत ग्रहण करैगा इस मनुष्यजन्मका मंडन वात्सल्य ही है वात्सल्यरहित बहुत मनोज्ञ आभरण वस्त्र धारण करना हू पदपदमें निंद्य होय है। अर इसलोकका कार्य जो यशको उपार्जन धर्मको उपार्जन धनको उपार्जन सो वात्सल्यहीतैं होय है। अर परलोक जो स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देवपना सो हू वात्सल्यहीतैं होय है वात्सल्यविना इसलोकका समस्त कार्य नष्ट हो जाय अर लोकमैं देवादिगति नाहीं पावै है। बहुरि अर्हंतदेव निर्ग्रंथगुरू स्याद्वादरूप परमागमदया रूपधर्ममैं वात्सल्य है सो संसारपरिभ्रमणका नाशकरि निर्वाणकूं प्राप्त करै है तथा वात्सल्यतैं ही जिन-मन्दिरका वैयावृत्य जिनसिद्धांतका सेवन साधर्मीनिका वैयावृत्य तथा धर्ममैं अनुराग दान देनेमैं प्रीति ये समस्तगुण वात्सल्यतैं ही होय हैं जे षटकायके जीवनिमैं वात्सल्य किया है ते ही त्रैलोक्यमैं अतिशय रूप तीर्थंकर प्रकृतिका उपार्जन करै है यातैं जे कल्याणके इच्छक हैं ते भगवान जिनेन्द्रका उपदेश्या वात्सल्यगुणकी महिमा जानि षोडशमा अंग जो वात्सल्य ताका स्तवनकरि पूजनकरि याका महान अर्घ उतारण करै है। सो दर्शनकी विशुद्धता पाय बहुरि तप आचरणकरि अहमिंद्रादि देवलोककूं प्राप्त होय फिरि जगतका उद्धारक तीर्थंकर होय निर्वाणकूं प्राप्त होय है। षोडश कारण धर्मका महिमा अचिंत्य है जातैं त्रैलोक्यमैं आश्चर्यकारी अनुपम विभवके धारक तीर्थंकर होय हैं ऐसे षोडशभावनाका संक्षेप-विस्ताररूप वर्णन किया ॥ १६ ॥

अब धर्मका स्वरूप दशलक्षण रूप है इन दश चिह्ननिकरि अंतर्गतधर्म जानिये है। उत्तमक्षमा, उत्तममार्दव, उत्तमआर्जव, उत्तमसत्य, उत्तमशौच, उत्तमसंयम, उत्तमतप, उत्तमत्याग, उत्तमआकिंचन्य, उत्तमब्रह्मचर्य ए दश धर्मके लक्षण हैं। जातैं धर्म तो वस्तुका स्वभावहीकूं कहिये है लोकमैं जेते पदार्थ हैं तितने अपने स्वभावकूं कदाचित् नाहीं छांडे हैं। जो स्वभावका नाश हो जाय तो वस्तुका अभाव होय

नाहीं आत्मानामवस्तुका स्वभाव क्षमादिकरूप है अर क्रोधादिक कर्मजनित उपाधि हैं आवरण हैं क्रोध नाम धर्मका अभाव होय तदि क्षमा नाम आत्माका स्वभाव स्वयमेव रहै है ऐसैं ही मानका अभावतैं मार्दवगुण अर मायाके अभावतैं आर्जवगुण लोभके अभावतैं शौचगुण इत्यादिक आत्माके गुण हैं ते कर्मके अभावतैं स्वयमेव प्रगट होय हैं तातैं ये उत्तमक्षमादिक आत्माका स्वभाव हैं मोहनीय कर्मके भेद क्रोधादिक कषायनिकरि अनादिका आच्छादित होय रहे हैं कषायके अभावतैं क्षमादिक स्वाभाविक आत्माका गुण उघडै है।

अब उत्तमक्षमागुणकूं वर्णन करै हैं—क्रोध वैरीका जीतना सो ही उत्तमक्षमा है कैसाक है क्रोध-वैरी इस जीवके निवास करनेका स्थान जे संयमभाव संतोषभाव निराकुलताभाव ताकूं दग्ध करनेकूं अग्नि समान है सम्यग्दर्शनादिरूप रत्ननिका भण्डारकूं दग्ध करै है यशकूं नष्ट करै है अपयशरूपकालिमाकूं बधावै है धर्मअधर्मका विचार नष्ट होय जाय है क्रोधीके अपना मन वचन काय आपके वश नाहीं रहै है। बहुत कालहूकी प्रीतिकूं क्षणमात्रमैं बिगाडि महान वैर उत्पन्न करै है क्रोधरूप राक्षसके वश होय सो असत्यवचन लोकनिंद्य भीलचांडालादिकनिके बोलनेयोग्य वचन बोलै है। क्रोधी समस्त धर्म लोपै है क्रोधी होय तब पिताने मारि नाखै माताकूं पुत्रकूं स्त्रीकूं बालककूं स्वामीकूं सेवककूं मित्रकूं मारि प्राणरहित करै है। अर तीव्रक्रोधी आपका हू विषतैं शस्त्रतैं मरण करै है ऊंचे मकान तथा पर्वतादिकतैं पतन करै है कूपमैं पडै है क्रोधीकी कोऊप्रकार प्रतीति नाहीं जाननी। क्रोधी है सो यमराजतुल्य है क्रोधी होय सो प्रथम तो अपना ज्ञानदर्शन क्षमादिक गुणनिकूं घातै है पीछे कर्मके वशतैं अन्यका घात होय वा नाहीं होय क्रोधके प्रभावतैं महातपस्वी दिगम्बरमुनि धर्मतैं भ्रष्ट होय नरक गये हैं। यो क्रोध है सो दोऊ लोकका नाश करै है महा पापबन्ध कराय नरक पहुंचावै है; बुद्धि भ्रष्ट करै है निर्दयी करदे है अन्यकृत उपकारकूं भुलाय कृतघ्न करै है तातैं क्रोधसमान पाप नाहीं इसलोकमे क्रोधादिकषाय समान

अपना घात करनेवाला अन्य नाहीं है। जो लोकमैं पुन्यवान है महाभाग्य है जिनका दोऊलोक सुधरना है तिनहीके क्षमा नाम गुण प्रगट होय है क्षमा जो पृथ्वी ताकी ज्यों सहनेका स्वभाव होय सो क्षमा है अर सम्यक् स्वपरकूं हित आहितकूं समझकरि जो असमर्थनिकरि किया हू उपद्रवनिकूं आप समर्थ होय करके रागद्वेषरहित हुआ सहै है विकारी नाहीं होय है ताकूं उत्तमक्षमा कहिये है। इहां उत्तमशब्द सम्यग्ज्ञानसहित होनेकूं कह्या है। उत्तमक्षमा त्रैलोक्यमैं सार है उत्तमक्षमा संसारसमुद्रतैं तारनेवाली है उत्तमक्षमा है सो रत्नत्रयकूं धारण करनेवाली है उत्तमक्षमा दुर्गतिके दुःखनिकूं हरनेवाली है जाके क्षमा होय ताके नरक अर तिर्यंच दोऊ गातिनमैं गमन नाहीं होय है उत्तमक्षमाकी लार अनेकगुणनिके समूह प्रगट होय है मुनीश्वरनिकूं तो अति प्यारी उत्तमक्षमा है उत्तमक्षमाका लाभकूं ज्ञानीजन चिंतामणिरत्न मानैं है अर उत्तमक्षमा ही मनकी उज्ज्वलता करै है क्षमागुणविना मनकी उज्ज्वलता अर स्थिरता कदाचित ही नाहीं होय है वांछित सिद्ध करनेवाली एक क्षमा ही है। इहां क्रोधके जीतनेकी भावना ऐसी जाननी—कोऊ आपकूं दुर्वचनादिकरि दुःखित करै गाली दे चोर कहै अन्यायी पापी दुराचारी दुष्ट नीच वा दोगलो चांडाल पापी कृतघ्नी ऐसैं अनेक दुर्वचन कहै तो ज्ञानी ऐसी भावना करै जो याका मैं अपराध किया है कि नाहीं किया है। जो मैं याका अपराध किया तथा रागद्वेष मोहका बशतैं कोई बातकरि दुखाया है तदि तो मैं अपराधी हूं मोकूं गाली देना धिकार देना नीच चोर कपटी अधर्मी कहना न्याय है। मोकूं इस सिवाय भी दण्ड देना सो भी ठीक है मैं अपराध किया है मोकूं गाली सुनि रोष नाहीं करना ही उचित है। अपराधीकूं नरकमैं दण्ड भोगना पडै है तातैं मेरा निमित्तसूं याके दुःख भया तदि क्लेशित होय दुर्वचन कहै है ऐसा विचारकरि क्लेशित नाहीं होय क्षमाही करै है अर जो दुर्वचन कहनेवाला मंदकषायी होय तो आप जाय क्षमा ग्रहण करावनेकूं कहै भो कृपाल! मैं अज्ञानी प्रमादके बश वा कषायके बश होय आपका चित्तकूं दुखाया सो अब मैं अपराध माफ कराऊं हूं आगानै

ऐसा कार्य चूककरि नाहीं करूंगा एकबार चूकिजाय ताकी चूककूं महंतपुरुष माफ करै हैं अर जो आ-गलो न्यायरहित तीव्रकषायी होय तो वासूं अपराध माफ करावनेको जाय नाहीं कालांतरमैं क्रोध उप-शांत हुवा पाछैं माफ करावै अर जो आप अपराध नाहीं किया अर ईर्षाभावतैं केवल दुष्टतातैं आपकूं दुर्वचन कहै तथा अनेक दोष लगावै तो ज्ञानी किंचित्संक्लेश नाहीं करै ऐसा विचारै जो मैं याका धन हरया होय तथा जमी जायगा खोसी होय तथा याकी जीविका बिगाडी होय चुगली खाईहोय तथा याका दोष कहणादि करकै जो मैं अपराध किया होय तो मोकूं पश्चाताप करना उचित है अर जो मैं अपराध नाहीं किया तदि मोकूं कुछ फिकर नाहीं करना यो दुर्वचन कहै है सो नामकूं कहै है तथा कुलकूं कहै है सो नाम मेरा स्वरूप नाहीं जातिकुलादि मेरा स्वरूप नाहीं मैं तो ज्ञायक हू जाकूं कहै सो मैं नाहीं। मैं हूं ताकूं वचन पहुंचै नाहीं तातैं मोकूं क्षमा ग्रहण करना ही श्रेष्ठ है। बहुरि जो यो दुर्वचन कहै है सो मुख याका, अभिप्राय याका, जिह्वा दंत ओष्ठ याका अर शब्द अर पुद्गल याका परिणामनिकरि शब्द उपज्या ताकूं श्रवणकरि मैं जो विकारकूं प्राप्त होऊं तो या मेरी बडी अज्ञानता है । बहुरि जो ईर्षावान दुष्ट पुरुष मोकूं गाली देहै सो स्वभावकरि देखिए तो गाली कुछ वस्तु ही नाहीं है मेरे कहां हू गाली लगी नाहीं दीखै है अवस्तुमैं देने लेनेका व्यवहार ज्ञानी होय सो कैसै संकल्प करै । बहुरि जो मोकूं चोर कहै अन्यायी कपटी अधर्मी इत्यादिक कहै तहां ऐसा चिंतवन करै जो हे आत्मन् ! तू अनेकवार चोर हुआ अनेक जन्ममैं व्यभिचारी ज्वारी अभक्ष्यभक्षी भील चांडाल चमार गोला बांदा कूकर शूकर गधा इत्यादिक तिर्यंच तथा अधर्मी पापी कृतघ्नी होय होय आया अर संसारमैं भ्रमण करता अनेकवार होऊंगा अब तो कूकर शूकर चोर चांडाल कहै ताकूं श्रवणकरि ताकूं क्लेशित होना बडा अनर्थ है अथवा ये दुष्टजन दुर्वचन कहै हैं सो याको अपराध नाहीं हमारा बांध्या पूर्वजन्मकृत कर्मका उदय है सो याके दुर्वचन कहनेके द्वारकरि हमारे कर्मकी निर्जरा होय है सो हमारे बडा लाभ है इनका यह

हू उपकार है जो ये दुर्वचन कहनेवाले अपना पुण्यका समूहका तो दोष कहनेकरि नाश करे हैं अर मेरे किये पापकूं दूरि करें हैं ऐसे उपकारीतैं जो मैं रोष करूं तो मो समान कोऊ अधम नाहीं है। बहुरि यो तो मोकूं दुर्वचन ही कह्या है मार्‍या तो नाहीं रोषकरि मारने लगिजाय है क्रोधी तो अपने पुत्र पुत्री स्त्री बालादिककूं मारै है सो मोकूं मार्‍या नाहीं यो भी लाभ है अर जो दुष्ट आपकूं मारै तो ऐसा विचारै जो मोकूं मार्‍या ही प्राणरहित तो नाहीं किया दुष्ट तो आपका मरण नाहीं गिन करके भी अन्यकूं मारै है यो भी मेरे लाभ है। अर जो प्राणरहित करै तो ऐसा विचारै एक बार मरणो ही छो कर्मका ऋण चुक्यो। हम इहां ही कर्मके ऋणरहित भये हमारा धर्म तो नाहीं नष्ट भया। प्राणधारण तो धर्महीतैं सफल है ये द्रव्यप्राण तो पुद्गलमय हैं मेरा ज्ञान दर्शन क्षमादिधर्म ये भावप्राण हैं इनका घात क्रोधकरि नाहीं भया इस समान मेरे लाभ नाहीं है। बहुरि जो कल्याणरूप कार्य हैं तिनमें अनेक विघ्न आवै ही हैं जो मेरे विघ्न आया सो ठीक ही है। मैं तो अब समभावकूं आश्रय करूं अर जो उपद्रव आवते मैं क्षमा छांडि विकारकूं प्राप्त हूंगा तो मोकूं देखि अन्य मंदज्ञानी तथा कायर त्यागी तपस्वी धर्मतैं शिथिल होजांयगे तो मेरा जन्म केवल अन्यके क्लेशके अर्थि ही भया तथा मैं वीतरागधर्म धारण करके हू क्रोधी विकारी दुर्वचनी होऊं तो मोकूं देखि अन्य हू क्रोधमैं प्रवर्तने लगिजाय तदि धर्मकी मर्यादा भंगकरि पापकी परिपाटी चलानेवाला मैं ही प्रधान भया तातैं क्षमागुण प्राण जाते हू धन अभिमान नष्ट होते हू मोकूं छांडना उचित नाहीं। बहुरि पूर्वै मैं अशुभकर्म उपजाया ताका फल मैं ही भोगूंगा अन्य जे जन हैं ते तो निमित्तमात्र हैं इनके निमित्ततैं पाप उदय नाहीं आता तो अन्यके निमित्ततैं आता। उदयमैं आया कर्म तो फल दिये विना टलता नाहीं बहुरि ये लौकिक अज्ञानी मेरेविषै क्रोधित होय दुर्वचनादिक करि उपद्रव करे हैं अर जो मैं भी यातैं दुर्वचनादिकरि उत्तर करूं तो मैं तत्त्वज्ञानी अर ये अज्ञानी दोऊ समान भया हमारा तत्त्वज्ञानीपना निरर्थक भया। न्यायमार्गतैं उदयमैं आया मेरा पापकर्म ताकूं सन्मुख

होतें कोन विवेकी अपना आत्माकूं क्रोधादिकानिके वश करै। भो आत्मन्! पूर्वै बांध्या जो असाताकर्म ताका अब उदय आया ताकूं इलाजरहित अरोकजानि करकै समभावनितैं सहो जो क्लेशित होय भोगोगे तो असाताकूं तो भोगोहीगे अर नवीन बहुत असाताका बंध और करोगे तातैं होनहार दुःखतैं निःशंकित होय समभावतैं ही सहो ये दुष्टजन बहुत हैं अपना सामर्थ्य करकै मेरे रोषरूप अग्निकूं प्रज्वलितकरि मेरा समभावरूप संपदाकूं दग्ध किया चाहैं हैं अब इहां जो असावधान होय क्षमाकूं छांड धूंगा तो अवश्य ही साम्यभाव नष्ट करकै धर्म अर अपयशका नाश करनेवाला होय जाऊंगा तातैं दुष्टानिका संसर्गमैं सावधान रहना उचित है। ज्ञानी मनुष्य तो नाहीं सह्या जाय ऐसा क्लेशकूं उत्पन्न होतें हू पूर्वकर्मका नाश होना जानि हर्षित ही होय है जो वचनकंटकानिकरि बेध्या जो मैं क्षमा छांड दूंगा तो क्रोधी अर मैं समान भया अर जो वैरी नानाप्रकारका दुर्वचन मारण पीडन करकैं मेरा इलाज नाहीं करै तो मैं संचय किये अशुभकर्म तिनतैं कैसे छूटता तातैं वैरी हू हमारा उपकार ही किया है अथवा तातैं विवेकी होय जो जिनआगमके प्रसादतैं साम्यभावका अभ्यास किया ताकी परीक्षा लेनेकूं ये वैरीरूप परीक्षा स्थान प्रगट भया है सो मेरे भावनिकी परीक्षा करि ये परीक्षाकरनेके ही कर्म उदय भये हैं जो समभावकी मर्यादाकूं भेदिकरि जो मैं वैरीनिमैं रोष करूं तो ज्ञाननेत्रका धारक हू मैं समभावकूं नाहीं प्राप्त होय क्रोधरूप अग्निमैं भस्म होय जाऊं। मैं वीतरागके मार्गमैं प्रवर्तन करनेवाला संसारकी स्थिति छेदनेमैं उद्यमी अर मरा ही चित्त जो द्रोहकूं प्राप्त हो जाय तो संसारके मार्गमैं प्रवर्त्तते मिथ्यादृष्टीनिके समान मैं हू भया अर जो दुष्ट जननिकूं न्याय धर्मरूप मार्ग समझाया। अर क्षमा ग्रहण कराया जो नाहीं समझै अर क्षमा ग्रहण न करै तो ज्ञानीजन वासूं रोष नाहीं करै। जैसे विषदूरि करनेवाला वैद्य कोऊका विष दूरि करनेकूं अनेक औषधादि देय विष दूरि कर्‍या चाहे अर वाका जहर दूरि नाहीं होय तो वैद्य आप जहर नाहीं खाय है जो याका विष दूर नाहीं भया तो मैं हू विष भक्षणकरि मरूं ऐसा

न्याय नाहीं है तैसें ज्ञानीजनहू दुष्टजनकी पहली दुष्टताकी जाति पिछानै जो यो दुष्टता छांडैगा वा नाहीं छांडैगा वा अधिक दुष्टता धरैगा ऐसा विचारि जो विपरीत परणमता देखि ताकूं तो उपदेश ही नाहीं देना अर कुछ समझने लायक योग्यता दीखै तो न्याय वचन हितमितरूप कहना अर दुष्टता नाहीं छाडे तो आप क्रोधी नाहीं होना जो यो मोकूं दुर्वचनादि उपद्रवकरि नाहीं कंपायमान करै तो मैं उपशम भावकरि धर्मका शरणा कैसें ग्रहण करता तातैं जो मोकूं पीडा करनेवाला है मोकूं पापतैं भयभीत करि धर्मसूं संबंध कराया है तातैं पीडा करनेवाला हू मेरा प्रमादीपना छुडाय बडा उपकार किया है। बहुरि जगतमैं केतक उपकारी तो ऐसे हैं जो अन्यजनके सुख होनेके निमित्त अपना शरीरकूं छांडै हैं अर धनकूं छांडै हैं तो मेरे दुर्वचनबंधनादिक सहनेमैं कहा जायगा मोकूं दुर्वचन कहे ही अन्यके सुख हो जाय तो मेरे क्या हानि है ? बहुरि जो अपनेकूं पीडा करनेवालेतैं रोष नाहीं करूं तो वैरीके पुण्यका नाश होय है अर मेरे आत्माके हितकी सिद्धि होय है अर पीडा करनेवालेतैं रोष करूं तो मेरा आत्माका हितका नाश होय दुर्गति होय यातैं प्राणनिका नाश होते हू दुष्टनिप्रति क्षमाकरना ही एक हित सत्पुरुष कहै हैं तातैं आतमकल्याणकी सिद्धिकै अर्थि क्षमा ही ग्रहण करूं अथवा दुष्टनिकरि दुर्वचनादिक पीडा करनेतैं मेरे जो क्षमा प्रगट भई है सो मेरे पुण्यकी उदयतैं या परीक्षाभूमि प्रगट भई है जो मैं इतना कालतैं वीतरागका धर्म धारण किया सो अब क्रोधादिकके निमित्ततैं साम्यभाव रह्या कि नाहीं रह्या ऐसी परीक्षा करूं। बहुरि सोई साम्यभाव प्रशंसा योग्य है अर सो ही कल्याणकों का कारण है जो मारनेके इच्छक निर्दयीनिकरि मलीन नाहीं किया गया। बहुरि चिरकालतैं अभ्यास किया शास्त्र करके अर स्वभाव करके कहा साध्य है जो प्रयोजन पड्यां व्यर्थ हो जाय है धैर्य वो ही प्रशंसा योग्य है जो दुष्टनिके कुवचनादि होते नाहीं छूटै दृढ रहे उपद्रव आये विना तो समस्तजन सत्य शौच क्षमाके धारक बन रहे हैं जैसें चंदनवृक्षकूं कुहाडा काटै तो हू कुहाडेका

मुखकूं सुगंधही करै तैसैं जाकी प्रवृत्ति होय सोही सिद्धिकूं साध्या है । बहुरि अन्यकरि किया उपसर्गतैं वा स्वयमेव आया उपसर्ग तिनकरि जाका चित्त कलुषित नाहीं होय सो अविनाशी संपदाकूं प्राप्त होय है । अज्ञानी हैं ते अपने भावनिकरि पूर्वे किया पापकर्म ताके अर्थि तो नाहीं रोष करैं अर जो कर्मके फल देनेके वाह्यनिमित्त तिनप्रति क्रोध करै हैं जिसकर्मका नाशतैं मेरा संसारका संताप नष्ट हो जाय सो कर्म स्वयमेव भोग्या तौ मेरे वांछित सिद्ध भया । बहुरि यो संसाररूप वन अनंत संक्लेशनिकर भर्या है इसमैं बसनेवालाकै नानप्रकारके दुःख नाहीं सहने योग्य हैं कहा ? संसारमें तो दुख ही है जो इस संसारमैं सम्यग्ज्ञान विवेककरिरहित अर जिनसिद्धांततैं द्वेष करनेवाले अर महानिर्दयी अर परलोकका हितके अर्थि जिनके बुद्धि नाहीं अर क्रोधरूप अग्निकरि प्रज्वलित अर दुष्टताकरि सहित विषयनिकरि लोलुपताकरि अंध हठग्राही महाअभिमानी कृतघ्नी ऐसे बहुत दुष्टजन नाहीं होते तो उज्ज्वल बुद्धिके धारक सत्पुरुष व्रत तपश्चरणकरि मोक्षके अर्थि उद्यम कैसैं करते ? ऐसे क्रोधी दुर्वचनके बोलनेहारे हठग्राही अन्यायमार्गीनिकी अधिकता देखि करके ही सत्पुरुष वीतरागी भये हैं अर जो मैं बडे पुण्यके प्रभावतैं परमात्माका स्वरूपका ज्ञाता भयो अर सर्वज्ञकरि उपदेश्या पदार्थनिकूं हू निर्णयरूप जाण्या अर संसारके परिभ्रमणादिकतैं भयभीत होय वीतरागमार्गमैं हू प्रवर्तन किया अब हू जो क्रोधके बस हूंगा तो मेरा ज्ञान चारित्र समस्त निष्फल होयगा अर धर्मका अपयश करावनवारा होय दुर्गतिका पात्र हूंगा । बहुरि और हू पद्मनंदमुनि कह्या है जो मूर्खजनकरि बाधा पीडा अर क्रोधके वचन अर हास्य अर अपमानादिक होते हू जो उत्तमपुरुषनिका मन विकारकूं प्राप्त नाहीं होय ताकूं उत्तमक्षमा कहिये है सो क्षमा मोक्षमार्गमैं प्रवर्तते पुरुषके परम सहायताकूं प्राप्त होय है । विवेकी चिंतवन करै है हम तो रागद्वेषादि मलरहित उज्ज्वल मनकरि तिष्ठां अन्यलोक हमकूं खोटा कहो तथा भला कहो हमकूं कहा प्रयोजन है । वीतरागधर्मके धारकनिकूं तो अपने आत्माका शुद्धपना साधने

योग्य है। जो हमारा परिणाम दोषसहित है अर कोऊ हितू हमकूं भला कह्या तो भला नाहीं हो जावैंगे अर हमारा परिणाम दोषरहित है अर कोऊ हमकूं वैरबुद्धितैं खोटा कह्या तो हम खोटा नाहीं होजावैंगे फल तो अपनी जैसी चेष्टा आचरण होयगा तैसा प्राप्त होयगा जैसे कोऊ काचकूं रत्न कहदिया अर रत्नकूं काच कहदिया तो हू मोल तो रत्नका ही पावैगा काचखण्डका बहुतधन कौन देवै। बहुरि दुष्टजन है ताका तो स्वभाव परके दोष कहां हू नाहीं होय तो हू परके दोष कह्यांविना सुखकूं प्राप्त नाहीं होय तातैं दुष्टजन हैं सो मेरे माहीं अविद्यमान हू दोष लोकमैं घरघरमैं समस्तमनुष्यनिप्रति प्रगटकरि सुखी होहू अर जो धनका अर्थी है सो मेरा सर्वस्व ग्रहणकरि सुखी होहू अर जो वैरी प्राणहरणका अर्थी है सो शीघ्र ही प्राण हरो अर स्थानको अर्थी है सो स्थान हरो मैं मध्यस्थ हूं रागद्वेषरहित हूं समस्त जगतके प्राणी मेरे निमित्ततैं तो सुखरूप तिष्ठो मेरे निमित्ततैं किसीप्राणीके कोऊ प्रकार दुःख मति होहू या मैं घोषणाकरि कहूं हूं क्योंकि मेरा जीवित तो आयुकर्मके आधीन अर धनका अर स्थानका जीवना रहना पापपुण्यके आधीन है हमारे किसी अन्यजीवसे वैर विरोध नाहीं है समस्तके प्रति क्षमा है। बहुरि हे आत्मन् जे मिथ्यादृष्टि अर दुष्टतासहित अर हितअहितका विवेकरहित मूढ ऐसे मनुष्यनिकरि किया जे दुर्वचनादिक उपद्रवनितैं अस्थिर हुआ बाधाकूं मानि क्लेशित होय रह्या है सो तीनलोकका चूडामणि भगवान वीतराग है ताहि नाहीं जान्या कहा? तथा वीतरागका धर्मकी उपासना नाहीं कीई कहा? तथा लोकनिकूं मूर्ख नाहीं जान्या कहा? मोही मिथ्यादृष्टि मूढनिके ज्ञान तो विपरीत ही होय है कषायनिके वास हैं तातैं इनमैं क्षमा ही ग्रहण करना योग्य है। क्षमा हैं सो इसलोकमैं परमशरण है माताकी ज्यों रक्षा करनेवाली है बहुत कहा कहिये जिनधर्मका मूल क्षमा है याके आधार सकलगुण हैं कर्मनिर्जराको कारण है हजारां उपद्रव दूरि करनेवाली है यातैं धन जाते जीवितव्य जाते हू क्षमाकूं छांडना योग्य नाहीं। कोऊ दुष्टताकरि आपकूं प्राणरहित करे तिसकालमैं हू कटुवचन मति कहो जो मारने

वालेकूं भी अन्तर्गत वैर छांडि ऐसे कहो जो आप तो हमारे रक्षक ही हो परन्तु हमारा मरण आय पहुंच्या तादि आप कहा करो हमारे पापकर्मका उदय आयगया तो हू हमारा बडा भाग्य है जो आप सारिखे महान् पुरुषनिके हस्तादिकतैं हमारा मरण होय अर जो हम सारिखा अपराधीकूं आप दण्ड नाहीं द्यो तो मार्ग मलीन होजाय अर हम अपराधको फल नरक तिर्यंच गतिमैं आगें भोगते सो आप हमकूं ऋणरहित किया। मैं आपसूं वैर विरोध मन वचन कायतैं छांडि क्षमा ग्रहण करूं हूं अर आप भी मूनैं अपराधको दण्ड देय क्षमा ग्रहण करो। मैं रोगादिक कष्टकूं भोगि करकैं अति दुःखतैं मरण करतो सो धर्मका शरणसूं ऋणरहित होय सज्जनकी कृपासहित मरण करस्यूं ऐसैं मारनेवालेसूं हू वैर त्यागि समभाव करना सो उत्तमक्षमा है। ऐसैं उत्तमक्षमा नामा धर्मकूं कह्या ॥ १ ॥

अब उत्तममार्दव नाम गुणकूं कहै हैं—मार्दवका स्वरूप ऐसा है जो मानकषायकरि आत्मामैं कठोरता होय है सो कठोरताका अभाव होनेतैं जो कोमलता होय सो मार्दवनाम आत्माका गुण है अर जो आत्माका अर मानकषायका भेदकूं अनुभवकरि मान मदका छांडना सो उत्तमार्दव नाम गुण है। मानकषाय तो संसारका बधावनेवाला है अर मार्दव संसारपरिभ्रमणका नाश करनेवाला है। यो मार्दवगुण दयाधर्मका कारण है अभिमानीकै दयाधर्मका मूलहीतैं अभाव जानना कठोरपरिणामी तो निर्दयी ही होय है मार्दवगुण समस्तके हित करनेवाला है। जिनके मार्दवगुण है तिनहीका व्रतपालना संयमधारणो ज्ञानका अभ्यास करना सफल है अभिमानीका निष्फल है। मार्दवनामगुण कषायका नाश करनेवाला है अर पंचइंद्रिय अर मनकूं दण्ड देनेवाला है। मार्दवधर्मके प्रसादतैं चित्तरूप भूमिमैं करुणारूप बेल नवीन फैले है मार्दवकरके ही जिनेंद्रभगवानमैं तथा शास्त्रनिमैं भक्तिका प्रकाश होय है मदसहितके जिनेंद्रके गुणनिमैं अनुराग नाहीं होय है मार्दवगुणकरि कुमतिज्ञानके प्रसारका नाश होय है कुमति नाहीं फैले है अभिमानीके अनेक कुबुद्धि उपजै है। मार्दवगुणकरि बडा विनय प्रवर्तै है मार्दव करकैं बहुत

कालका वेरी हू वेर छांडै है। मान घटै तदि परिणामनिकी उज्ज्वलता होय कोमल परिणाम करकें ही दोऊं लोककी सिद्धि होय कोमल परिणामीकूं इस लोकमें सुयश होय है परलोकमें देवलोककी प्राप्ति होय है कोमल परिणाम करकै ही अंतरंग बहिरंग तपभूषित होय है अभिमानीका तप हू निंदवे योग्य है कोमलपरिणामीतैं तीनजगतके लोकानिका मन रंजायमान होय है मार्दव करकै ही जिनेंद्रका शासन जानिये है मार्दव करकै अपना परका स्वरूपका अनुभव करिये है कठोर परिणामीके आपा परका विवेक नाहीं होय है मार्दव करकै ही समस्तदोषनिका नाश होय है मार्दवपरिणाम संसारसमुद्रतैं पार करै है। यातैं मार्दवपरिणामकूं सम्यग्दर्शनका अंग जानि निर्मल मार्दवधर्मका स्तवन करो। संसारी जीवनिके अनादिकालका मिथ्यादर्शनका उदय रहा है ताका उदयकरि पर्यायबुद्धि हुआ जातिकूं कुलकूं विद्याकूं बलकूं ऐश्वर्यकूं रूपकूं तपकूं धनकूं अपना स्वरूप मानि इनका गर्वरूप होय रहा है। ताकूं ये ज्ञान नाहीं है जो ये जातिकुलादिक समस्त कर्मका उदयके आधीन पुद्गलके विकार हैं विनाशीक हैं मैं अविनाशी ज्ञानस्वभाव अमूर्तीक हूं मैं अनादिकालतैं अनेक जाति कुल बल ऐश्वर्यादिक पाय पाय छांडे हैं मैं अब कौनमैं आपा धारूं समस्त धन यौवन इंद्रियजनित ज्ञानादिक विनाशीक है क्षणभंगुर है इनका गर्व करना संसारपरिभ्रमणका कारण है। इस संसारमैं स्वर्गलोकका महाऋद्धिका धारक देव मरिकरि एकसमयमैं एकेंद्रिय आय उपजै है तथा कूकर शूकर चांडालादिक पर्यायकूं प्राप्त होय है तथा चक्रवर्ती नवनिधि चौदहरत्ननिका धारक एकसमयमें मरि सप्तमनरकका नारकी होजाय है तथा बलभद्र नारायणका ऐश्वर्य नष्ट होयगया अन्यकी कहा कथा है जिनकी हजारां देव सेवा करैं तथा तिनकै पुण्यका क्षय होते कोऊ एकमनुष्य पानी पावनेवाला हू नाहीं रह्या अन्य पुण्यरहित जीव कैसैं मदोन्मत्त बन रहे हैं। बहुरि जे उत्तमज्ञानकरि जगतमैं प्रधान हैं अर उत्तमतपश्चरण करनेमैं उद्यमी हैं अर उत्तमदानी हैं ते हू अपने आत्माकूं अतिनीचा मानै हैं तिनके मार्दवधर्म होय है। विनयवानपना मदरहितपना समस्त धर्मका मूल

है समस्त सम्यग्ज्ञानादि गुणको आधार है जो सम्यग्दर्शनादि गुणनिका लाभ चाहो हो अर अपना उज्ज्वल यश चाहो हो अर वैरका अभाव चाहो हो तो मदानिकूं त्यागि कोमलपना ग्रहण करो मदनष्ट हुवा विना विनयादिक गुण वचनकी मिष्टता पूज्यपुरुषनिका सत्कार दान सन्मान एक हू गुण नाहीं प्राप्त होयगा। अभिमानीका विना अपराध समस्त वैरी होजाय हैं अभिमानीकी समस्त निन्दा करै हैं अभिमानीका समस्त लोक पतन होना चाहैं हैं स्वामी हू अभिमानी सेवककूं त्यागै हैं अभिमानीकूं गुरुजन विद्या देनेमें उत्साहरहित होय है अपना सेवक परांमुख होजाय मित्र भाई हितू पडौसी याका पतन ही चाहै हैं पिता गुरु उपाध्याय तो पुत्रकूं शिष्यकूं विनयवन्त देख करि ही आनन्दित होय हैं। अविनयी अभिमानी पुत्र वा शिष्य बडे पुरुषनिके मनहूकूं संतापित करै है जातैं पुत्रका तथा शिष्यका तथा सेवकका तो ये ही धर्म है जो नवीन कार्य करना होय सो पिता गुरु स्वामीकूं जनायकरि करै आज्ञा मांगि करै तथा आज्ञाको अवसर नाहीं मिलै तो अवसर देखि शीघ्र ही जनावै यो ही विनय है या ही भक्ति है जाका मस्तकऊपरि गुरु विराजते धन्यभाग हैं विनयवन्त मदरहित पुरुष हैं ते समस्तकार्य गुरुनिको जनाय दे हैं धन्य हैं जे इसकलिकालमैं मदरहित कोमल परिणामकरि समस्तलोकमैं प्रवर्तै हैं। उत्तमपुरुष हैं ते बालकमैं वृद्धमैं निर्धनमैं रोगीनिमैं बुद्धिरहित मूर्खनिमैं तथा जातकुलादिहीनमें हू यथा योग्य प्रियवचन आदर सत्कार स्थानदान कदाचित नाहीं चूकै हैं प्रियवचन ही कहै उत्तमपुरुष उद्धतताका वस्त्र आभरण नाहीं पहरै उद्धतपणाका परके अपमानका कारण देनलेन विवाहादि व्यवहारकार्य नाहीं करै हैं उद्धत होय अभिमानीपनाका चालना बैठना झांकना बोलना दूरहीतैं छांडै ताकै लोकमैं पूज्य मार्दवगुण होय है। धनपावना रूपपावना ज्ञानपावना विद्याकलाचतुराईपावना ऐश्वर्य पावना बलपावना जातकुलादि उत्तमगुण जगन्मान्यता पावना जिनका सफल है जो उद्धततारहित अभिमानरहित नम्रतासहित विनयसहित प्रवर्तै हैं अपने मनमैं आपकूं सबतैं लघु मानता कर्मके परबस जानै है सो कैसैं गर्वकरै

नाहीं करे है। भव्यजन हो सम्यग्दर्शनका अंग इसमार्दवअंगकूं जाणि चित्तकेविषे ध्यान करो स्तवन करो। ऐसें मार्दवधर्मको वर्णन कीयो ॥ २ ॥

अब आर्जवधर्मकूं वर्णन करे हैं— धर्मका श्रेष्ठ लक्षण आर्जव है आर्जव नाम सरलताका है मनवचनकायकी कुटिलताका अभाव सो आर्जव है। आर्जव धर्म है सो पापका खंडन करनेवाला है अर सुख उपजानेवाला है। तातैं कुटिलता छाडि कर्मका क्षय करनेवाला आर्जवधर्म धारण करो। कुटिलता है सो अशुभकर्मका बंध करनेवाली है जगतमैं अतिनिंद्य है यातैं आत्माका हितका इच्छकनिकूं आर्जवधर्मका अवलंबन करना उचित है। जैसा आपका चित्तमैं चिंतवन करिये तैसा ही अन्यकूं कहना अर तैसा ही वाह्यकायकरि प्रवर्तन करिये सो सुखका संचय करनेवाला आर्जवधर्म कहिये है। मायाचाररूप शल्य मनतैं निकालो उज्वल पवित्र आर्जवधर्मका विचार करो मायाचारीका व्रत तप संयम समस्त निरर्थक है आर्जवधर्म निर्वाणके मार्गका सहाई है जहां कुटिलवचन नाहीं बोलै तहां आर्जवधर्म प्राप्त होय है। यो आर्जवधर्म है सो दर्शनज्ञानचारित्रको अखंडस्वरूप है अर अतींद्रिय सुखका पिटारा है आर्जवधर्मका अभावकरि अतीन्द्रिय अविनाशी सुखकूं प्राप्त होय है संसाररूप समुद्रके तरनेकूं जिहाजरूप आर्जव ही है। मायाचार जान्या जाय तदि प्रीतिका भंग होय है। जैसे कांजीतैं दुग्ध फटिजाय है अर मायाचारी अपना कपटकूं बहुत छिपावते हू प्रगट हुयां विना नाहीं रहै है। परजीवनिकी चुगली करै वा दोष प्रकाशै ते आपही प्रगट हो जाय है मायाचार करना है सो अपनी प्रतीतका बिगाडना है धर्मका बिगाडना है मायाचारीका समस्त हित विना किये वैरी होय हैं जो व्रती होय त्यागी तपस्वी होय अर जाका कपट एकबार किया हू प्रगट हो जाय ताकूं समस्तलोक अधर्मी मानि कोऊ प्रतीत नाहीं करे है कपटीकी माता हू प्रतीति नाहीं करे है कपटी तो मित्रद्रोही स्वामिद्रोही धर्मद्रोही कृतघ्नी है अर यो जिनेन्द्रको धर्म तो कपटरहित छलरहित है जैसे बांका म्यानमैं सूधो खड्ग प्रवेश नाहीं करे

तैसें कपटकरि वक्रपरिणामीका हृदयमें जिनेन्द्रका आर्जव काहिये सरलधर्म प्रवेश नाहीं कर सके है। कपटीका दोऊलोक नष्ट होजाय है यातैं जो यश चाहो हो धर्म चाहो हो प्रतीत चाहो हो तो मायाचारका त्यागकरि आर्जवधर्म धारण करो कपटरहितकी वैरी हू प्रशंसा करे है कपटरहित सरलचित्त जो अपराध भी किया होय तो दंड देने योग्य नाहीं होय है आर्जवधर्मका धारक तो परमात्माका अनुभवनमें संकल्प करे है कषाय जीतनेका संतोष धारनेका संकल्प करे है जगतके छलनेका दूरहीतैं परिहार करे है आत्माकूं असहाय चैतन्यमात्र जाने है जो धनसंपदा कुटुंबादिककूं अपनावे सो ही कपट छलकरि ठिगाई करे तातैं जो आत्माकूं संसार परिभ्रमणतैं छुटाय परद्रव्यानितैं आपकूं भिन्न असहाय जानै सो धनजीवितव्यके अर्थि कपट कदाचित् नाहीं करे तातैं जो आत्माकूं संसारपरिभ्रमणतैं छुडाया चाहो तो मायाचारका परिहार करि आर्जव धर्म धारण करो। ऐसैं आर्जवधर्मका वर्णन कीया ॥ ३ ॥

अब सत्यधर्मका वर्णन करे हैं—जो सत्यवचन है सो ही धर्म है यो सत्यवचन दयाधर्मको अब मूल कारण है अनेक दोषनिका निराकरण करनेवाला है इसभवमें तथा परभवमें सुखका करनेवाला है समस्तके विश्वास करनेका कारण है समस्तधर्मके मध्य सत्यवचनप्रधान है सत्य है सो संसारसमुद्रके पार उतारनेकूं जहाज है समस्त विधानानिमैं सत्य है सो बडा विधान है समस्तसुखका कारण सत्य ही है सत्यतैं ही मनुष्यजन्म भूषित होय है सत्यकरके समस्त पुण्यकर्म उज्ज्वल होय है जे पुण्यके ऊंचे कार्य करिये हैं तिनकी उज्ज्वलता सत्य विना नाहीं होय है सत्यकरि समस्तगुणानिका समूह महिमाकूं प्राप्त होय है सत्यका प्रभावकरि देव हैं ते सेवा करैं हैं सत्यकरकैं ही अणुव्रत महाव्रत होय हैं सत्यविना व्रत संजम नष्ट होजाय हैं सत्यकरि समस्त आपदाको नाश होय है यातैं जो वचन बोलो सो अपना परका हितरूप कहो प्रमाणीक कहो कोऊके दुःख उपजे ऐसा वचन मति कहो परजीवानिके बाधाकारी सत्य हू

मति कहो गर्वरहित कहो, परमात्माको अस्तित्व कहनेवाला वचन कहो नास्तिकनिके वचन पापपुण्यका स्वर्गनरकका अभाव कहनेवाला वचन मति कहो। यहां ऐसा परमागमका उपदेश जानना यो जीव अनंतानंतकाल तो निगोदमैं ही रह्या तहां वचनरूप कर्मवर्गणा ही ग्रहण नाहीं करी क्योंकि पृथ्वीकाय अपकाय तेजकाय वायुकाय वनस्पतिकाय इनके मध्य अनंतकाल असंख्यातकाल रह्यो तहां तो जिह्वा इंद्रिय ही नाहीं पाई बोलनेकी शक्ति ही नाहीं पाई अर जो विकल चतुष्कमें उपज्या तथा पंचेन्द्रियतिर्यंचनमैं उपज्या तहां जिह्वा इन्द्रिय पाई तो हू अक्षरस्वरूप शब्द उच्चारण करनेका सामर्थ्य नाहीं भया एक मनुष्यपनामैं वचन बोलनेकी शक्ति प्रगट होय है। ऐसा दुर्लभवचनकूं असत्य बोलि बिगाडि देना सो बडा अनर्थ है मनुष्यजन्मकी महिमा तो एक वचनहीतैं है नेत्र कर्ण जिह्वा नासिका तो ढोर तिर्यंचके हू होय है खावना पीवना कामभोगादिक पुण्यपापके अनुकूल ढोरनिकूं हू प्राप्त होय हैं आभरण वस्त्रादिक कूकरा वानरा गधा घोडा ऊंट बलध इत्यादिकनिकूं हू मिलै हैं परंतु वचन कहनेकी शक्ति श्रवण करनेकी शक्ति तथा उत्तरदेनेकी शक्ति तथा पढने पढावनेका कारण वचन तो मनुष्यजन्ममैं ही है अर मनुष्यजन्म पाय जो वचन बिगाडि दिया सो समस्त जन्म बिगाड दिया। बहुरि मनुष्यजन्ममें जो लेनादेना कहनासुनना चीज प्रतीत धर्मकर्म प्रीतवैर इत्यादिक जे प्रवृत्तिरूप अर निवृत्तिरूप कार्य हैं ते वचनके आधीन हैं अर वचनकूंही दूषितकरदिया तदि समस्तमनुष्यजन्मका व्यवहार बिगाड दूषित कर दिया। तातैं प्राण जाते हू अपना वचनकूं दूषित मति करो। बहुरि परमागममें कह्या जो च्यारप्रकारका असत्यवचन ताका त्याग करो जो विद्यमान अर्थका निषेध करना सो प्रथम असत्य है जैसे कर्मभूमिका मनुष्य तिर्यंचका अकाल मृत्यु नाहीं होय ऐसा वचन असत्य है जातैं देव नारकी तथा भोगभूमिका मनुष्यतिर्यंचका तो आयुकी स्थिति पूर्ण भयां ही मरण है बीच आयु नाहीं छिदै है जितनी स्थिति बांधी तितनी भोग करके ही मरण करै हैं अर कर्मभूमिका मनुष्यतिर्यंचनिका आयु है

सो विषका भक्षणकरि तथा ताडन मारण छेदन बंधनादिक वेदनाकरि तथा रोगकी तीव्रवेदनाकरि तथा देहतैं रुधिरका नाश होनेकरि तथा दुष्ट मनुष्य दुष्ट तिर्यंच भयंकर देवकरि उपज्या भयकरि तथा वज्रपातादिकका स्वचक्र परचक्रादिकके भयकरि तथा शस्त्रका घातकरि तथा पर्वतादिकतैं पतनकरि तथा अग्नि पवन जल कलह विसंवादादिकतैं उपज्या क्लेशकरि तथा सास उस्वासका धूमादिकतैं रुकनेकरि तथा आहारपानादिका निरोध करि आयुका नाश होय है। आयुकी दीर्घस्थिति हू विषभक्षण रक्तक्षय भय शस्त्रघात संक्लेश सासोस्वास निरोधकरि अन्नपानका अभावकरि तत्काल नाशकूं प्राप्त होय ही है। केते लोक कहैं हैं आयु पूरी हुआ विना मरण नाहीं होय ताका उत्तर करे हैं जो बाह्य निमित्तसूं आयु नाहीं छिदै तो विषभक्षणतैं कौन परान्मुख होता अर विष खानेवालेकूं उकाली काहेकूं देते अर शस्त्रघात करनेवालेतैं काहेकूं भयकरि भागते अर सर्प सिंह व्याघ्र हस्ती तथा दुष्टमनुष्य तिर्यंचादिकनिकूं दूरहीतैं काहेकूं छांडते अर नदी समुद्र कूप बावडीमैं तथा अग्निकी ज्वालामैं पडनेतैं कौन भय करता अर रोगका इलाज काहेकूं करते तातैं बहुत कहनेकरि कहा जो आयुघात होनेका बहिरंग कारण मिलजाय तो आयुका घात हो जाय यह निश्चय है। बहुरि आयुकर्मकी ज्यों अन्य हू कर्म बहिरंगकारण मिले उदय आवै ही हैं समस्त जीवानिके पापकर्म पुण्यकर्म सत्तामैं विद्यमान हैं बाह्य द्रव्य क्षेत्र काल भावादि परिपूर्ण सामग्री मिले कर्म अपना रस देवैही है बाह्य निमित्त नाहीं मिलै तो उदयमैं नाहीं आवै तथा रस दियां विनाही निर्जरै है बहुरि जो असद्भूतकूं प्रगट करना सो दूजा असत्य है जैसैं देवनिकै अकालमृत्यु कहना देवनिकूं भोजन ग्रासादिरूप करना कहे वा देवनिकूं मांसभक्षी कहना तथा मनुष्यनीकै देवकरि कामसेवन तथा देवांगनातैं मनुष्यका कामसेवन इत्यादिक कहना दूजा असत्य है। बहुरि वस्तुका स्वरूपकूं अन्य विपरीत स्वरूप कहना सो तीसरा असत्य है। बहुरि गर्हितवचन कहना सो चौथा असत्य वचन है। गर्हित वचनका तीन भेद हैं गर्हित, सावद्य, अप्रिय। तिनमैं पैशून्य, हास्य, कर्कश, असमंजस, प्रलपित इत्यादिक

अन्य हू सूत्रविरुद्धवचन सो गर्हितवचन हैं तिनमैं जो परके विद्यमान तथा अविद्यमान दोषनिकूं पूठ पाछैं कहना तथा परका धनका विनाश जीविकाका विनाश प्राणनिका नाश जिसवचनतैं होजाय तथा जगतमैं निंद्य होजाय अपवाद होजाय ऐसा वचन कहना सो गर्हित नाम असत्यवचन है। बहुरि हास्य लीयां भंडवचन तथा श्रवणकरनेवालोनिके अशुभराग उपजावनेवाले वचन सो हास्यनामा गर्हित वचन है। बहुरि अन्यकूं कहै तू ढांढा है तू मूर्ख है अज्ञानी है इत्यादिक कर्कश वचन है। बहुरि देश कालके योग्य नाहीं जातैं आपकै अन्यके महासंताप उपजै सो असमंजसवचन है। बहुरि प्रयोजनरहित धीठपनातैं बकवाद करना सो प्रलपित वचन है। बहुरि जिस वचनकरि प्राणीनिका घात होजाय देशमैं उपद्रव होजाय देश लुटिजाय तथा देशका स्वामीनिकै महा वैर होजाय तथा ग्राममैं अग्नि लगिजाय घर बलजाय वनमैं अग्नि लगजाय तथा कलह विसंवाद युद्ध प्रगट हो जाय तथा विषाद करि मरिजाय तथा मारिजाय वैर बंध जाय तथा छहकायके जीवनिके घातका प्रारंभ हो जाय महाहिंसामैं प्रवृत्ति हो जाय सो सावद्यवचन है तथा परकूं चोर कहना व्यभिचारी कहना सो समस्त सावद्यवचन दुर्गतिके कारण त्यागने योग्य हैं अब अप्रियवचन त्यागने योग्य प्राण जाते हू नाहीं कहना अप्रियवचनके भेद ऐसे जानने—कर्कशा, कटुका, परुषा निष्ठुरा, परकोपनी, मध्यकृशा, अभिमानिनी, अनयंकरि, छेदंकरी, भूतबधकरी ये महापापके करनेवाली महानिंद्य दश भाषा सत्यवादी त्याग करै हैं। तू मूर्ख है बलद है ढोर है रे मूर्ख तू कहा समझै इत्यादिक कर्कशा भाषा है बहुरि तू कुजाति है नीच जाति है अधर्मी महापापी है तू स्पर्शन करने योग्य नाहीं तेरा मुख देखणां बडा अनर्थ है इत्यादिक उद्वेग करनेवाला कटुका भाषा है तू आचारभ्रष्ट है भ्रष्टाचारी है महा दुष्ट है इत्यादिक मर्म छेदनेवाली परुषाभाषा है। ताकूं मारनाखिस्यूं थारो नाक काटिस्यूं थारै डाह लगास्यूं थारो मस्तक काटिस्यूं तनै खायजास्यूं इत्यादिक निष्ठुरा भाषा है। रे निर्लज्ज वर्णसंकर तेरा जातिकुल आचारका ठिकाना नाहीं तेरा कहा तप तू कुशील है तू

हंसने योग्य है महानिंद्य है अभक्ष्यभक्षण करनेवाला है तेरा नामलियां कुल लजित होय है इत्यादिक परकोपनी भाषा है। बहुरि जिस वचनके सुनते ही हाडानिकी शक्ति नष्ट हो जाय सो मध्यकृषा भाषा है। बहुरि लोकानिमें अपना गुण प्रगट करना परके दोष कहना अपना कुल जाति रूप बल विज्ञानादिक मद लिये जो वचन बोलना सो अभिमानिनी भाषा है। बहुरि शीलखंडन करनेवाली अर विद्वेष करनेवाली अनयंकरी भाषा है। बहुरि जो वीर्य शील गुणादिकानिके निर्मूल करनेवाली असत्यदोष प्रगट करनेवाली जगतमें झूंठा कलंक प्रगट करनेवाली छेदंकरी भाषा है। जिस वचनकरि अशुभ वेदना प्रगट हो जाय वा प्राणनिका नाशकरनेवाली भूतबधकरी भाषा है। ए दश प्रकार निंद्यवचन त्यागने योग्य हैं। बहुरि स्त्रीनिके हावभाव विलासविभ्रमरूप क्रीडा व्यभिचारादिकानिकी कथा कामके जगाने वाली ब्रह्मचर्यका नाश करनेवाली स्त्रीनिकी कथा तथा भोजनपानमें राग करावनेवाली भोजनकी कथा तथा रौद्रकर्म करनेवाली राजकथा तथा चोरनिकी कथा तथा मिथ्यादृष्टी कुलिंगीनिकी कथा तथा धन उपार्जन करनेकी कथा तथा वैरीदुष्टनिके तिरस्कार करनेकी कथा तथा हिंसाकूं पुष्ट करनेवाली वेद स्मृति पुराणादिक कुशास्त्रनिकी कथा कहने योग्य नाहीं श्रवण करने योग्य नाहीं पापका आस्रवको कारण अप्रिय भाषा त्यागनेयोग्य है। भो ज्ञानी हो ये चारप्रकारकी निंद्यभाषा हास्यकरि क्रोधकरि लोभकरि मदकरि भयकरि द्वेषकरि कदाचित मति कहो अपना परका हितरूप ही वचन बोलो इस जीवके जैसा सुख हितरूप अर्थसंयुक्त मिष्ट वचन करै है निराकुल करै है आताप हरै है तैसा सुखकारी आताप हरनेवाली चंद्रकांतिमणि जल चंदन मुक्ताफलादिक कोऊ पदार्थ नाहीं है अर जहां अपने बोलनेतैं धर्मकी रक्षा होती होय प्राणीनिका उपकार होता होय तहां विना पूछे हू बोलना अर जहां आपका अन्यका हित नाहीं होय तहां मौनसहित ही रहना उचित है। बहुरि सत्य वचनतैं सकलविद्या सिद्ध होय है जहां विद्या देनेवाला सत्यवादी होय अर सीखनेवाला हू सत्यवादी होय ताके सकल विद्या सिद्ध

होय कर्मकी निर्जरा होय सत्यका प्रभावसे अग्नि जल विष सिंह सर्प दुष्ट देव मनुष्यादिक बाधा नाहीं कर सकें हैं। सत्यका प्रभावतैं देवता वशीभूत होय है प्रीति प्रतीति दृढ होय है सत्यवादी मातासमान विश्वास करने योग्य होय हैं गुरुका ज्यों पूज्य होय हैं मित्र ज्यों प्रिय होय है उज्ज्वल यशकूं प्राप्त होय हैं तपसंयमादि समस्त सत्यवचनतैं सोहैं हैं। जैसें विष मिलनेकरि मिष्टभोजनका नाश होय अन्याय-करि धर्मका यशका नाश होय तैसें असत्यवचनतैं अहिंसादि सकलगुणनिका नाश होय है तथा असत्य वचनतैं अप्रतीति, अकीर्ति अपवाद, अपने वा अन्यके संक्लेश, अरति कलह, वैर, शोक, बध, बंधन, मरण, जिह्वाछेद, सर्वस्वहरण बंदीग्रहमैं प्रवेश दुर्ध्यान, अपमृत्यु व्रत तप शील संयमका नाश, नरकादि दुर्गतिमैं गमन, भगवानकी आज्ञाको भंग, परमागमतैं परान्मुखता, घोरपापका आस्रव इत्यादि हजारां दोष प्रगट होय हैं। यातैं भो ज्ञानीजन हो लोकमैं प्रिय हित मधुर वचन बहुत भरया है सुंदरशब्दनिकी कमी नाहीं फिर निंद्यवचन क्यों बोलो हो ? रे तू इत्यादिक नीच पुरुषनिके बोलनेके वचन प्राण जातैं हू मति कहो अधमपना अर उत्तमपना तो वचनहीतैं जाण्या जाय है नीचनिके बोलनेके निंद्यवचनकूं छांडि प्रिय हित मधुर पथ्य धर्मसहितवचन कहो जे अन्यकूं दुःखका देनेवाला वचन कहैं हैं तथा झूठा कलंक लगावैं हैं तिनके पापतैं इहांही बुद्धि भ्रष्ट होय है जिह्वा गलि जाय आंधा हो जाय पग नष्ट हो जाय दुर्ध्यानतैं मरि नरक तिर्यंचादि कुगतिका पात्र होय है अर सत्यका प्रभावतैं इहां उज्ज्वल यश वचनकी सिद्धि द्वादशांगादि श्रुतका ज्ञान पाय फिर इंद्रादिक महर्द्धिकदेव होय तीर्थंकरादि उत्तम पद पाय निर्वाण जाय है यातैं उत्तम सत्यधर्महीकूं धारण करो ऐसैं सत्यनामा धर्मका वर्णन किया॥ ४॥

अब शौचधर्मका स्वरूप वर्णन करिये हैं–शौच नाम पवित्रताका–उज्ज्वलताका है जो बहिरात्मा देहकी उज्ज्वलता स्नानादिक करनेकूं शौच कहैं हैं सो सप्त धातुमयको मलमूत्रको भरया जलतैं धोया शुचिपनाकूं प्राप्त नाहीं होय है जैसैं मलका बनाया घट मलका भरया जलतैं शुद्ध नाहीं होय तैसैं शरीर

हैं उज्ज्वल जलतैं शुद्ध नाहीं होय शुचि मानना वृथा है। बहुरि शौचधर्म तो आत्माकूं उज्ज्वल किए होय आत्मा लोभकरि हिंसाकरि अत्यन्त मलिन होय रह्या है सो आत्माके लोभमलका अभाव भये शुचिता होय है जो अपने आत्माकूं देहतैं भिन्न ज्ञानोपयोग दर्शनोपयोगमय अखंड अविनाशी जन्मजरामरण रहित तीन लोकवर्ती समस्तपदार्थनिका प्रकाशक सदा काल अनुभव करे है ध्यावे है ताकै शौचधर्म होय है। बहुरि मनकूं मायाचारलोभादिकरहित उज्ज्वल करना ताकै शौचधर्म होय है जाका मन कामलो-भादिककरि मलीन होय ताकै शौचधर्म नाहीं होय है धनकी गृद्धिता जो अतिलंपटता ताका त्यागतैं शौचधर्म होय है। बहुरि परिग्रहकी ममताकूं छांडि इंद्रियनिका विषयनिको त्यागकरि तपश्चरणका मार्गमैं प्रवर्तन करना सो शौचधर्म है। बहुरि ब्रह्मचर्य धारण करना सो शौचधर्म है बहुरि अष्टमदकारिरहित विनयवानपना भी शौचधर्म है अभिमानी मदसहित होय सो महामलीन है ताकै शौचधर्म कैसैं होय। बहुरि वीतरागसर्वज्ञका परमागमका अनुभव करनेकरि अंतर्गत मिथ्यात्व कषायादिक मलका धोवना सो शौचधर्म है। उत्तमगुणनिका अनुमोदनाकरि शौचधर्म होय है। परिणामनिमैं उत्तम पुरुषनिका गुण-निका चिंतवनकरि आत्मा उज्वल होय है कषाय मलका अभावकरि उत्तम शौचधर्म होय है। आत्माकूं पापकरि लिप्त नाहीं होने देना सो शौचधर्म है जो समभाव संतोषभावरूप जलकरि तीव्र लोभरूप मलका पुंजकूं धोवै है अर भोजनमैं अति लंपटतारहित है ताकै निर्मल शौचधर्म होय है जातैं भोजनका लंपटी अति अधर्म है अर अखाद्यवस्तुकूं भी खाय है हीनाचारी होय है भोजनका लंपटीके लज्जा नष्ट होजाय है जातैं संसारमैं जिह्वाइंद्रिय अर उपस्थइंद्रियके वशीभूत भये जीव आपा भूलि नरकके तिर्यं-चगतिके कारण महानिंद्य परिणामनिकूं प्राप्त होय हैं। संसारमैं परधनकी वांछा परस्त्रीकी वांछा अर भोजनकी अतिलंपटता ही परिणामकूं मलीन करनेवाली है इनकी वांछातैं रहित होय अपने आत्माकूं संसारपतनतैं रक्षा करो। आत्माकी मलीनता तो जीवहिंसातैं अर परधन परस्त्रीकी वांछातैं है जे पर-

जी परधनका इच्छक अर जीवघातके करनेवाले हैं ते कोटितीर्थनिमें स्नान करो समस्त तीर्थनिकी समस्त वंदना करो तथा कोटि दान करो कोटिवर्ष तप करो समस्त शास्त्रनिका पठन पाठन करो तो हू उनके शुद्धता कदाचित नाहीं होय। अभक्ष्य भक्षण करनेवालेनिका अर अन्यायका विषय तथा धनके भोगनेवालेनिका परिणाम ऐसे मलीन होय है जो कोटिबार धर्मका उपदेश अर समस्तसिद्धांतनिकी शिक्षा बहुत वर्ष श्रवण करते हू कदाचित् हृदयमें प्रवेश नाहीं करै है सो देखिये है जिनकूं पचासवरस शास्त्र श्रवणकरते भये हैं तो हू धर्मका स्वरूपका ज्ञान जिनकूं नाहीं है सो समस्त अन्याय धन अर अभक्ष्य भक्षणका फल है तातैं जो अपना आत्माका शौच चाहो हो तो अन्यायका धन मति ग्रहण करो अर अभक्ष्यभक्षण मतिकरो परकी स्त्रीकी अभिलाषा मति करो। बहुरि परमात्माके ध्यानतैं शौच है अहिंसा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य और परिग्रहत्यागतैं शौचधर्म है। जे पंचपापनिमें प्रवर्तनेवाले हैं ते सदाकाल मलीन हैं जे परके उपकारकूं लोपै हैं ते कृतघ्नी सदा मलीन हैं जे गुरुद्रोही धर्मद्रोही स्वामिद्रोही मित्रद्रोही उपकारकूं लोपनेवाले हैं तिनके पापका संतान असंख्यात भवनिमें कोटितीर्थनिमें स्नानकरि दानकरि दूर नाहीं होय है विश्वासघाती सदामलीन है यातैं भगवानके परमागमकी आज्ञा प्रमाण शुद्ध सम्यग्दर्शन-ज्ञानचारित्रकरि आत्माकूं शुचि करो क्रोधादि कषायका निग्रहकरि उत्तमक्षमादिगुण धारणकरि उज्ज्वल करो समस्तव्यवहार कपटरहित उज्ज्वल करो परका विभव ऐश्वर्य उज्ज्वलयश उत्तमविद्यादिकप्रभाव देखि अदेखसकाभावरूप मलीनता छांडि शौचधर्म अंगाकार करो परका पुण्यका उदय देखि विषादी मति होहु इस मनुष्यपर्यायकूं तथा इंद्रिय ज्ञान बल आयु संपदादिकनिकूं अनित्य क्षणभंगुर जानि एकाग्र चित्तकरि अपने स्वरूपमें दृष्टि धारि अशुभभावनिका अभावकरि आत्माकूं शुचि करो। शौच ही मोक्षका मार्ग है शौच ही मोक्षका दाता है। ऐसैं शौच नाम पंचमधर्मको वर्णन कीयो॥ ५॥

अब संयम नाम धर्मका स्वरूप कहिये है—संयमका ऐसा लक्षण जानना जो अहिंसा कहिये हिंसा-

को त्याग दयारूप रहना हितमित पथ्य प्रिय सत्यवचन बोलना परके धनमें वांछाका अभाव करना कुशीलका छांडना परिग्रहत्यागना ए पांच व्रत हैं तिनमें पंचपापनिका एक देश त्याग सो अणुव्रत है सकलत्याग सो महाव्रत है इन पंचव्रतनिकूं दृढ धारण करना अर पंचसमितिका पालना तिनमें गमनकी शुद्धता ईर्यासमिति है वचनकी शुद्धता सो भाषासमिति है निर्दोष शुद्धभोजन करना सो ऐषणासमिति है शरीरके उपकरणादिक नेत्रनितैं देखि सोधि उठावना धरना सो आदाननिक्षेपणा समिति है मलमूत्र कफादिक मलनिकूं अन्य जीवनके ग्लानि दुःख बाधादिक नाहीं उपजै ऐसे क्षेत्रमैं क्षेपना सो प्रतिष्ठापनासमिति है इन पंचसमितिनिका पालना अर क्रोध मान माया लोभ इन च्यार कषायनिका निग्रह करना अर मनवचनकायकी अशुभप्रवृत्ति ए दंड हैं इन तीन दंडनिका त्याग अर विषयनिमैं दौडती पंचइंद्रियनिकूं वश करना जीतना सो संयम है। भावार्थ—पंचव्रतनिका धारण पंच समितिका पालन कषायनिका निग्रह दंडनिका त्याग इंद्रियनिका विजयकूं जिनेंद्रके परमागममैं संयम कह्या है। सो संयम बहुत दुर्लभ है जिनके पूर्वके बांधे अशुकर्मनिका अतिमंदपना होते मनुष्य जन्म उत्तमदेश उत्तमकुल उत्तमजाति इंद्रियपरिपूर्णता नीरोगता कषायनिकी मंदता होय अर उत्तमसंगति अर जिनेंद्रका आगमनिका सेवन अर सांचे गुरुनिका संयोग सम्यग्दर्शनादि अनेक दुर्लभसामग्रीका संयोग होय तदि संसार देहभोगनितैं अति विरक्तताके धारक मनुष्यकै अप्रत्याख्यानावरणका क्षयोपशमतैं तो देशसंयम होय अर जाकै अप्रत्याख्यान अर प्रत्याख्यान दोऊ कषायनिका क्षयोपशम होय ताके सकल संयम होय है तातैं संयम पावना महादुर्लभ है। नरकगतिमैं तिर्यंचगतिमैं देवगतिमैं तो संयम होय नाहीं कोऊ तिर्यंचकै देशव्रत अपनी पर्यायमाफिक कदाचित् होय है अर मनुष्यपर्यायमें भी नीचकुलादिकमें अधमदेशनिमें इंद्रियविकल अज्ञानी रोगी दरिद्री अन्यायमार्गी विषयानुरागी तीव्रकषायी निंद्यकर्मी मिथ्यादृष्टीनिकै संयम कदाचित् नाहीं होय है तातैं अति दुर्लभ संयमका पावना है ऐसे दुर्लभ संयमकूं हू पाय कोऊ मूढ-

बुद्धी विषयनिका लोलुपी होय छांडे है तो अनन्तकाल जन्म मरण करता संसारमें परिभ्रमण करै है। संयमपाय छांडे है संयमकूं बिगाडे है ताके अनंतकाल निगोदमें परिभ्रमण त्रसस्थावरानिमें भ्रमण करना होय सुगति नाहीं होय संयम पाय बिगाडने समान अन्य अनर्थ नाहीं है विषयनिका लोभी होय करि जो संयमकूं बिगाडे है सो एककौडीमें चिंतामणिरत्न बेचे है तथा ईंधनके अर्थि कल्पवृक्षकूं छेदे है विषयनिका सुख है सो सुख नाहीं सुखाभास है क्षणभंगुर है नरकनिके घोर दुःखनिका कारण है किंपाकफल जैसें जिह्वाका स्पर्शमात्र मिष्ट लागे है पाछै घोरदुःख महादाह संताप देय मरणकूं प्राप्त करै है तैसें भोग किंचिन्मात्र काल तो अज्ञानी जीवनिकूं भ्रमतैं सुखसा भासै है फिर अनंतकाल अनतभवनिमें घोर दुःखका भोगना है यातैं संयमकी परमरक्षा करो पांच इंद्रियनिकूं विषयनिके संबंधतैं रोकनेतैं संयम होय है कषायनिका खंडनकरि संयम होय है दुर्द्धरतपका धारणकरि संयम होय है रसनिका त्यागकरि संयम होय है मनके प्रसरके रोकनेकरि संयम होय है महान कायक्लेशनिके सहनेकरि संयम होय है उपवासादिक अनशनतपकरि संयम होय है मनमें परिग्रहकी लालसाका त्यागकरि संयम होय है त्रसस्थावर जीवनिकी रक्षा करना सो ही संयम है मनके विकल्पनिके रोकनेकरि तथा प्रमादतैं वचनकी प्रवृत्तिके रोकनेकरि संयम होय है। शरीरके अंगउपांगनिका प्रवर्तनकूं रोकनेकरि संयम होय है। बहुत गमनके रोकनेकरि संयम होय है। बहुरि दयारूप परिणामकरि संयम होय है परमार्थका विचारकरके तथा परमात्माका ध्यान करके संयम होय है संयमकरके ही सम्यग्दर्शन पुष्ट होय संयम ही मोक्षका मार्ग है संयमविना मनुष्यभव शून्य है गुणरहित है संयम विना यो जीव दुर्गतिनिकूं प्राप्त भया संयम विना देहका धारना बुद्धिका पावना ज्ञानका आराधन करना समस्त वृथा है संयमविना दीक्षा धारणा व्रतधारना मुंड मुडावना नग्न रहना भेष धारणा ये समस्त वृथा है जातैं संयम दोयप्रकार है इंद्रियसंयम अर प्राणसंयम जाकी इंद्रियां विषयनितैं नाहीं रुकीं अर जाके छहकायके जीवनिकी विराधना नाहीं टली ताके बाह्य

परीषहसहना तपश्चरण करना दीक्षा लेना वृथा है संसारमैं दुःखितजीवनिकूं संयमविना कोऊ अन्य-शरण नाहीं है ज्ञानीजन तो ऐसी भावना भावैं हैं जो संयम विना मनुष्य जन्मकी एक घटिका हू मति जावो संयमविना आयु निष्फल है यो संयम है सो इस भवमैं अर परभवमैं शरण है दुर्गतिरूप सरोवरके शोषण करनेकूं सूर्य है संयमकरके ही संसाररूप विषमवैरीका नाश होय संसार परिभ्रमणका नाश संयम विना नाहीं होय ऐसा नियम है अर जो अंतरंगमैं तो कषायनिकरि आत्माकूं मलीन नाहीं होने देहै अर बाह्य यत्नाचारी हुआ प्रमादरहित प्रवर्तै है ताकै संयम होय है ऐसैं संयमधर्मका वर्णन किया ॥ ६ ॥

अब तपधर्मका वर्णन करै हैं,—इच्छाका निरोध करना सो तप है तप च्यार आराधनानिमैं प्रधान है जैसैं सुवर्णकूं तपावनेकरि शोलाताव लगै समस्त मल छांडि करके शुद्ध होय है तैसैं आत्मा हू द्वादश प्रकार तपके प्रभावकरि कर्ममलरहित शुद्ध होय है अज्ञानी मिथ्यादृष्टि तो देहकूं पंचअग्निकरि तपावैं है तथा अनेक प्रकार कायके क्लेशकूं तप कहैं हैं सो तप नाहीं है। कायकूं दग्धाकिये अर मारलिये कहा होय। मिथ्यादृष्टि ज्ञानपूर्वक आत्माकूं कर्मबन्धतैं छुडावना नाहीं जानै है। कर्ममलकलंकरहित आत्मा तो भेदविज्ञानपूर्वक अपने आत्माका स्वभावकूं अर रागद्वेष मोहादिरूप भावकर्मरूप मैलकूं भिन्न देखै है जैसैं रागद्वेष मोहरूप मल भिन्न होजाय अर शुद्धज्ञान दर्शनमय आत्मा भिन्न होजाय सो तप है याहीतैं कहैं हैं मनुष्यभव पाय जो स्वपरतत्त्वकूं जाण्या है तो मनसहित पंच इंद्रियनिकूं रोकि विषयनितैं विरक्त होय समस्त परिग्रहकूं छांडि बंधका करनेवाली रागद्वेषमई प्रवृत्तिकूं छांडि पापका आलम्बन छूटनेके अर्थि ममता नष्टकरनेकूं वनमैं जाय तप करिये। ऐसा तप धन्यपुरुषनिकै होय है संसारीजीवके ममतारूप बडी फांसी है सो ममतारूप जालमैं फंसाहुआ घोरकर्मकूं करता महापापका बन्धकरि रोगादिकका तीव्रवेदना अर स्त्रीपुत्रादि समस्तकुटुम्बका तथा परिग्रहका वियोगादिकतैं उपज्या

तीव्र आर्तध्यानतैं मरण पाय दुर्गतिनिके घोर दुःखनिकूं जाय प्राप्त होय है। तपोवनकूं प्राप्त होना दुर्लभ है तप तो कोऊ महाभाग्य पुरुष पापनितैं विरक्त होय समस्त स्त्रीपुत्रधनादिकपरिग्रहतैं ममत्वछांडि परम धर्मके धारक वीतराग निर्ग्रंथ गुरुनिका चरणनिका शरण पावै है अर गुरुनिको पायकरि जाकै अशुभ कर्मका उदय अति मन्द होय सम्यक्त्वरूप सूर्यका उदय प्रगट होय संसारविषयभोगनितैं विरक्तता जाकै उपजी होय सो तप संयम ग्रहण करै है अर जो ऐसा दुर्द्धरतपकूं धारण करके हू कोऊ पापी विषयनिकी वांछाकरि विगाडै ताके अनंतानंत कालमैं फिर तप नाहीं प्राप्त होय है यातैं मनुष्यभव पाय तत्त्वनिका स्वरूपजानि मनमाहित पंच इंद्रियनिकूं रोकि वैराग्यरूप होय समस्तसंगकूं छांडि वनमैं एकाकी ध्यानमैं लीनहुआ तिष्ठै सो तप है। जहां परिग्रहमैं ममता नष्ट होय वांछारहित तिष्ठना तथा प्रचंड कामका खंडन करना सो बडा तप है। जहां नग्न दिगम्बररूप धारि शीतकी पवनकी आतापकी वर्षाकी तथा डांस माछर माक्षिका मधुमक्षिका सर्प विच्छू इत्यादिकतैं उपजी घोरवेदनाकूं कोरे अंगपरि सहना सो तप है अर जो निर्जनपर्वतनिकी निर्जनगुफानिमैं भयंकर पर्वतनिके दराडेनिमें तथा सिंहव्याघ्र रींछ स्याली चीता हस्तीनिकरि व्याप्त घोरवनमैं निवास करना सो तप है। तथा दुष्ट वैरी म्लेच्छ चोर शिकारी मनुष्य अर दुष्टव्यंतरादिक देवनिकृत घोर उपसर्गनितैं कंपायमान नाहीं होना धीर वीरपनातैं कायरता छांडि वैरविरोध छांडि समताभावतैं परमात्माका ध्यानमैं लीन हुआ सहना सो तप है। बहुरि समस्त जीवनिकूं उलझानेवाले रागद्वेषनिकूं जीतना नष्ट करना सो तप है। बहुरि यो याचनारहित भिक्षाके अवसरमैं श्रावकका घरमैं नवधाभक्तिकरि हस्तमैं धरया खारा अलूणा कडवा खाटा लूखा चीकना रस नीरस तिसमैं लोलुपता अर संक्लेशरहित निर्दोष प्रासुक आहार एकवार भक्षण करना सो तप है। बहुरि जो पंचसमितिका पालना अर मनवचनकायकूं चलायमान नाहीं करना अपना रागद्वेषरहित आत्मानुभव करना सो तप है। जो स्वपर तत्त्वकी कथनीका निर्णय करना

ध्यार अनुयोगका अभ्यासकरि धर्मसहित काल व्यतीत करना सो तप है। बहुरि अभिमान छांडि विनय रूप प्रवर्तना कपट छांडि सरलपरिणाम धारना क्रोध छांडि क्षमा ग्रहण करना लोभत्याग निर्वांछक होना सो तप है। जाकरि कर्मका समूहका नाशकरि आत्मा स्वाधीन होजाय सो तप है। जो श्रुतका अर्थका प्रकाश करना व्याख्यान करना आप निरंतर अभ्यास करै अन्यकूं अभ्यास करावै सो तप है। तपस्वीनिका देवनिका इंद्र स्तवन करै भक्तिका प्रकाश करै तपकरि केवलज्ञान उत्पन्न होय है तपका अचिंत्य प्रभाव है तपके मांहि परिणाम होना अतिदुर्लभ है। नरक तिर्यंचदेवनिमैं तपकी योग्यता ही नाहीं एक मनुष्यगतिमैं होय मनुष्यमैं हू उत्तम कुल जाति बल बुद्धि इंद्रियनिकी पूर्णता जाकै होय तथा रागादिकनिकी मंदता जाकै होय तथा विषयनिकी लालसा जाकै नष्ट भई ताकै होय है अर तप द्वादशप्रकार है जाकी जैसी शक्ति होय तिसप्रमाण धारण करो। बालक करो वृद्ध करो धनाढ्य करो निर्धन करो बलवान करो निर्बल करो सहायसहित होय सो करो सहायरहित होय सो करौ भगवानको प्ररूप्यो तप किसीकै हू करनेकूं अशक्य नाहीं है। जैसैं वायुपित्तकफादिकनिका प्रकोप नाहीं होय रोगकी वृद्धि नाहीं होय जैसैं शरीर रत्नत्रयको सहकारी बन्यो रहै तैसैं अपना संहनन बल वीर्य देखि तप करो। तथा देशकालआहारकी योग्यता देखि तप करो। जैसैं तपमैं उत्साह बधतो रहै परिणामनिमैं उज्ज्वलता बधती जाय तैसैं तप करो तथा जो इच्छाका निरोधकरि विषयनिमैं राग घटावना सो तप है। तप ही जीवका कल्याण है तप ही कामकूं निद्राकूं प्रमादकूं नष्ट करनेवाला है यातैं मदछांडि बारहप्रकार तपमैं जैसा २ करनेकूं सामर्थ्य होय तैसा ही तप करो सो बारहप्रकार तपकूं आगैं न्यारो लिखेंगे। ऐसैं तपधर्मकूं वर्णन किया ॥ ७ ॥

अब त्यागधर्मका वर्णन करैं हैं। त्याग ऐसैं जानना जो धन संपदादि परिग्रहकूं कर्मका उदयजनित पराधीन अर विनाशीक अर अभिमानको उपजावनेवाली तृष्णाकूं बधावनेवाला रागद्वेषकी तीव्रता

करनेवाला आरम्भकी तीव्रता करनेवाला हिंसादिक पंचपापनिका मूल जानि उत्तमपुरुष याकूं अंगीकार ही नाहीं किया ते धन्य हैं। केई याकूं अंगीकार करि याकूं हलाहलविषसमान जानि जीर्णतृणकी ज्यों त्याग किया तिनकी अचिंत्यमहिमा है। अर केई जीवनिके तीव्ररागभाव मन्द हुआ नाहीं यातैं सकलत्यागनेकूं समर्थ नाहीं अर सरागधर्ममैं रुचि धारैं हैं अर पापतैं भयभीत हैं ते इस धनकूं उत्तमपात्रनिके उपकारके अर्थि दानमैं लगावै हैं अर जे धर्मके सेवन करनेवाले निर्धनजन हैं तिनके अन्नवस्त्रादिककरि उपकार करनेमैं धन लगावै हैं तथा धर्मके आयतन जिनमन्दिरादिकमैं जिनसिद्धांत लिखाय देनेमैं तथा उपकरणमैं पूजनादिक प्रभावनामैं लगावै हैं तथा दुःखित दरिद्री रोगीनिके उपकारमैं तन मन धन करुणावान होय लगावै हैं ते धन जीतव्यकूं सफल करै हैं। दान है सो धर्मका अंग है यातैं अपनी शक्तिप्रमान भक्तिकरि गुणनिके धारक उज्ज्वलपात्रनिको दान देना है सो परलोककूं जीवनें महान सुखसामग्रीकूं लेजावै है सो निर्विघ्न स्वर्गकूं तथा भोगभूमिकूं प्राप्त करनेवाला जानो। दानकी महिमा तो अज्ञानी बालगोपाल हू कहै हैं जो पूर्व दान दिया है सो नानाप्रकार सुखसामग्री पाई है अर देगा सो पावैगा तातैं जो सुखसंपदाका अर्थी होय सो दानहीमैं अनुराग करो। अर जे दानकरनेमैं उद्यमी हैं ते इहां हू तीव्रआर्तपरिणामतैं मरि सर्पादिक दुष्ट तिर्यंचगति पाय नरक निगोदकूं जाय प्राप्त होय हैं। धन कहा लार जायगा धन पावना तो दानहीतैं सफल है दानरहितका धन घोर दुःखनिकी परिपाटीका कारण है अर इहां हू कृपण घोरनिंदाकूं पावै हैं कृपणका नाम भी लोक नाहीं कहै हैं कृपण सूमका नामकूं लोक अमंगल मानै हैं जामें औगुण दोष हू होय तो दानीका दोष ढकि जाय है। दानीका दोष दूरि भागै है दानकरि ही निर्मलकीर्ति जगतमैं विख्यात होय है। देनेकरि वैरी हू चरननिमैं नमै है दानदेनेतैं वैरी वैर छांडै हैं अपना हित करनेवाला मित्र होजाय है जगतमैं दान बडा है थोडासा दान हू सत्यार्थ भक्तिकरि करनेवाला भोगभूमिका तीन पल्यपर्यंत भोग भोगि देवलोकमैं जाय है देना ही जगतमैं

ऊंचा है दान देना विनयसंयुक्त स्नेहका वचनकारिसहित होय देना अर दानी हैं ते ऐसा अभिमान नाहीं करे हैं जो हम इसका उपकार करे हैं। दानी तो पात्रकूं अपना महाउपकार करनेवाला माने हैं जो लोभरूप अन्धकूपमैं पडनेका उपकार पात्र विना कौन करे पात्रविना लोभीनिका लोभ नाहीं छूटता अर पात्रविना संसारके उद्धारकरनेवाला दान कैसैं बणता। यातैं धर्मात्मा जनानिके तो पात्रके मिलनेसमान अर दानके देनेसमान अन्य कोऊ आनंद नाहीं है बडापना धनाढ्यपना ज्ञानीपना पाया है तो दानमैं ही उद्यम करो। छहकायके जीवनिकूं अभयदान देहू अभक्ष्यका त्यागकरि बहुआरंभके घटावनेकरि देखि सोधि मेलना धरना यत्नाचारविना निर्दयी होय नाहीं प्रवर्तना किसी प्राणीमात्रकूं मनवचनकायतैं दुःखित मति करो। दुःखीनिकी करुणा ही करो यो ही गृहस्थके अभयदान है यातैं संसारमें जन्म मरण रोग शोक दारिद्र वियोगादिक संतापका पात्र नाहीं होओगे।

बहुरि संसारके बधावनेवाले हिंसाकूं पुष्ट करनेवाले तथा मिथ्याधर्मकी प्ररूपणा करनेवाले तथा युद्धशास्त्र शृंगारशास्त्र मायाचारके शास्त्र वैद्यकशास्त्र रस रसायण मंत्र जंत्र मारण वशीकरणादिकशास्त्र महापापके प्ररूपक हैं इनकूं अति दूरतैं ही त्यागि भगवान वीतराग सर्वज्ञका कह्या दयाधर्मकूं प्ररूपणा करनेवाला स्याद्वादरूप अनेकांतका प्रकाश करनेवाले नयप्रमाणकरि तत्त्वार्थकी प्ररूपणा करनेवाले शास्त्रनिकूं अपने आत्माकूं पढनेपढावनेकरि आत्माका उद्धारकेअर्थि अपनेअर्थि दान करो। अपनी संतानकूं ज्ञानदान करो तथा अन्य धर्मबुद्धि धर्मके रोचक इच्छक तिनकूं शास्त्रदान करो ज्ञानके इच्छक हैं ते ज्ञानदानके अर्थि पाठशाला स्थापन करें हैं जातैं धर्मका स्तंभ ज्ञान ही है। जहां ज्ञानदान होयगा तहां धर्म रहैगा यातैं ज्ञानदानमैं प्रवर्तन करो। ज्ञानदानके प्रभावतैं निर्मल केवलज्ञानकूं पावै है। बहुरि रोगका नाश करनेवाला प्रासुक औषधिका दान करो औषधदान बडा उपकारक है अर रोगीकूं सीधी तयार औषध मिलै है ताका बडा आनंद है अर निरधन होय तथा जाके टहल करनेवाला नाहीं होय

ताकूं औषध जो करी हुई तय्यार मिल जाय तो निधानका लाभसमान मानै है औषध लेय नीरोग होय है सो समस्त व्रत तप संयम पालै है ज्ञानका अभ्यास करै है औषधदान है ताकै वात्सल्यगुण स्थितिकरणगुण निर्विचिकित्सागुण इत्यादिक अनेक गुण प्रगट होय हैं औषधदानके प्रभावतैं रोगरहित देवनिका वैक्रियिक देह पावै है । बहुरि आहारदान समस्तदाननिमैं प्रधान है प्राणीका जीवन शक्ति बल बुद्धि ये समस्तगुण आहारविना नष्ट होजाय हैं आहार दिया सो प्राणीकूं जीवन बुद्धि शक्ति समस्त दीना। आहारदानतैं ही मुनि श्रावकका सकलधर्म प्रवर्तै है आहारविना मार्ग भ्रष्ट होजाय आहार है सो समस्तरोगका नाश करनेवाला है जो आहारदान दे है सो मिथ्यादृष्टि हू भोगभूमिमैं कल्पवृक्षनिका दशांग भोगकूं असंख्यातकाल भोगै अर क्षुधातृषादिककी बाधारहित हुआ आंवलाप्रमाण तीन दिनके आंतरै भोजन करै। समस्तदुःखक्लेशरहित असंख्यातवर्ष सुखभोगि देवलोकनिमैं जाय उपजै है। यातैं धनकूं पाय च्यारप्रकारके दान देनेमैं प्रवर्तन करो । अर जो निर्धन है सो हू अपना भोजनमैंतैं जेता बने तेता दान करो आपकूं आधा भोजन मिलै तीमैंतैं हू ग्रास दोयग्रास दुःखित बुभुक्षित दीनदरिद्रीनिके अर्थ दवो। बहुरि मिष्टवचन बोलनेका बडा दान है आदरसत्कार विनयकरना स्थानदेना कुशलपूछना ये महादान हैं । बहुरि दुष्टविकल्पनिका त्याग करो पापनिमैं प्रवृत्तिका त्याग करो च्यार कषायनिका त्याग करो विकथा करनेका त्याग करो परके दोष सत्य असत्य कदाचित् मति कहो। बहुरि अन्यायका धन ग्रहण करनेका दूरहीतैं त्याग करो भो ज्ञानीजन हो जो अपना हितके इच्छक हो तो दुःखितजननिकूं तो दान करो अर सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञानादि गुणनिके धारकनिका महाविनय सन्मान करो समस्तजीवनिमैं करुणा करो मिथ्यादर्शनका त्याग करो रागद्वेषमोहके धारक कुदेव अर आरंभपरिग्रहके धारक भेषधारी अर हिंसाके पोषक रागद्वेषकूं पुष्ट करनेवाले मिथ्यादृष्टीनिके शास्त्र इनकूं बंदना स्तवन प्रशंसा करनेका त्याग करो क्रोध मान माया लोभ इनके निग्रह करनेमैं बडा उद्यम करो

क्लेश करनेके कारण अप्रियवचन गालीके वचन अपमानके वचन मदसहित वचन कदाचित मति कहो इत्यादिक जो परके दुःखके कारण तथा अपना यशकूं नष्ट करनेवाला धर्मकूं नष्ट करनेवाला मनवचन कायके प्रवर्तनका त्याग करो ऐसे त्यागधर्मका संक्षेप वर्णन किया ॥ ८ ॥

अब आकिंचन्यधर्मका स्वरूप कहिये है,—जो अपना ज्ञानदर्शनमय स्वरूपविना अन्य किंचिन्मात्र हू हमारा नाहीं है मैं किसी अन्यद्रव्यका नाहीं हूं मेरा कोऊ अन्यद्रव्य नाहीं है ऐसा अनुभवनकूं आकिंचन्य कहिये है। भो आत्मन् अपना आत्माकूं देहतैं भिन्न अर ज्ञानमय अन्यद्रव्यकी उपमारहित अर स्पर्शरसगंधवर्णरहित अर अपना स्वाधीन ज्ञानानंदसुखकरि पूर्ण परम अतींद्रिय भयरहित ऐसा अनुभव करो। भावार्थ—ये देह है सो मैं नाहीं देह तो रस रुधिर हाड मांस चाममय जड अचेतन है। मैं इसदेहतैं अत्यंत भिन्न हूं ये ब्राह्मण क्षत्रियादिक जातिकुल देहके हैं मेरे ये नाहीं हैं स्त्री पुरुष नपुंसक लिंग देहके हैं मेरे नाहीं यो गोरापना सांवलापना राजापना रंकपना स्वामीपना सेवकपना पंडितपना मूर्खपणा इत्यादि समस्त रचना कर्मका उदयजनित देहके हैं मैं तो ज्ञायक हूं ये देहका संबंधी मेरा स्वरूप नाहीं है मेरा स्वरूप अन्य द्रव्यका उपमारहित है ताता ठंडा नरम कठोर लूखा चीकना हलका भारी अष्टप्रकार स्पर्श है ते हमारा रूप नाहीं पुद्गलके रूप हैं ये खोटा मीठा कडवा कसायला चिरपरा पंचप्रकार रस अर सुगंध दुर्गंध दोयप्रकार का गंध अर काला पीला हरया स्वेत रक्त ये पंचवर्ण मेरा स्वरूप नाहीं पुद्गलका है मेरा स्वभाव तो सुखकरि परिपूर्ण है परंतु कर्मके आधीन दुखकरि व्याप्त होय रह्या हूं मेरा स्वरूप इंद्रियरहित अतींद्रिय है इंद्रियां पुद्गलमय कर्मरहित की हुई हैं मैं समस्त भयरहित अविनाशी अखंड आदिअंतरहित शुद्ध ज्ञान स्वभाव हूं परंतु अनादिकालतैं जैसे सुवर्ण अर पाषाण मिल रह्या है तैसे तथा क्षीरनीर ज्यों कर्मनिकरि अनादि कालतैं मिलरह्या हूं तिनमैं हू मिथ्यात्वनाम कर्मका उदयकरि अपना स्वरूपका ज्ञानरहित होय देहादिकपरद्रव्यनिकूं आपका स्वरूप जानि

अनंतकाल मैं परिभ्रमण करया अब कोऊ किंचित आवरणादिकके दूर होनेतैं श्रीगुरुनिका उपदेश्या परमागमके प्रसादतैं अपना अर परका स्वरूपका ज्ञान भया है जैसे रत्ननिका व्यवहारी जडेहुए पंचवर्ण रत्ननिके आभरणनिमैं गुरुकी कृपातैं अर निरंतर अभ्यासतैं मिल्यहुवा हू डाकका रंग अर माणिक्य का रंगकूं अर तोलकूं अर मोलकूं भिन्न भिन्न जानै है तैसे परमागमका निरतर अभ्यासतैं मेरा ज्ञान स्वभावमें मिल्या हुआ राग द्वेष मोह कामादिक मैलकूं भिन्न जाण्या है अर मेरा ज्ञायक स्वभावकूं भिन्न जाण्या है तातैं अब जैसे रागद्वेषमोहादिकभाव कर्मनिमैं अर कर्मनिके उदयतैं उपजे विनाशीक शरीर परवार धन संपदादि परिग्रहमैं ममता बुद्धि मेरे जैसे फिर अन्य जन्ममें हू नाहीं उपजै तैसे आकिंचन्य भाऊं वा आकिंचन्य भावना अनादिकालतैं नाहीं उपजी समस्तपर्यायनिकूं अपना रूप मान्या तथा रागद्वेषमोहक्रोधकामादिकभाव कर्मकृत विकार थे तिनकूं आपरूप अनुभवकरि विपरीत भावनितैं घोरकर्मबंधकूं कीया अब मैं आकिंचन्य भावनामैं विघ्नका नाश करनेवाला पंच परमगुरुनिका शरणतैं आकिंचन्य ही निर्विघ्न चाहूं हूं और त्रैलोक्यमैं कोऊ अन्यवस्तुकूं नाहीं वांछूं हूं। यो आकिंचन्यपणा ही संसारसमुद्रतैं तारणेकूं जिहाज होहू जो परिग्रहकूं महाबंध जानि छांडना सो आकिंचन्य है आकिंचन्यपणा जाके होय है ताके परिग्रहमैं बांछा रहै नाहीं है आत्मध्यानमैं लीनता होय है देहादिकनिमैं बाह्यभेषमैं आपो नाहीं रहै है अर अपना स्वरूप जो रत्नत्रय तामैं प्रवृत्ति होय है इंद्रियनिके विषयनिमैं दौडता मन रुकि जाय है देहतैं स्नेह छूटि जाय है सांसारिकदेवनिका सुख इंद्र अहमिंद्र चक्रवर्तीनिका सुख हू दुख दीखै है। इनमैं वांछा कैसैं करैं परिग्रह रत्न सुवर्ण राज्य ऐश्वर्य स्त्री पुत्रादिकनिकूं जीर्णतृणमैं जैसैं ममतारहित छांडनेमैं विचार नाहीं तैसैं परिग्रह छांडै है। आकिंचन्य तो परम वीतरागपणा है जिनकै संसारको अंत आगयो तिनकै होय है जाकै आकिंचन्यपणा होय ताकै परमार्थ जो शुद्धआत्मा ताका विचारनेकी शक्ति प्रगट होय ही अर पंचपरमेष्ठीमैं भक्ति होय ही अर दुष्टविकल्पनिका

नाश होय ही अर इष्टअनिष्टभोजनमें रागद्वेष नष्ट होजाय है केवल उदररूप खाडा भरना अन्य रसनीरसभोजनमें विचार जाता रहै है समस्तधर्मनिमें प्रधानधर्म आकिंचन्य ही मोक्षका निकट समागम करावनेवाला है अनादिकालतैं जेते सिद्ध भये हैं ते आकिंचन्यतैं ही भये हैं अर आगैं जो जो ताथकरादि सिद्ध होयंगे ते आकिंचन्यपणाहीतैं होयंगे । यद्यपि आकिंचन्यधर्म प्रधानकरि साधुजननिंके ही होय है तथापि एकदेश धर्मका धारक गृहस्थ उस धर्मके ग्रहण करनेकी इच्छा करै है अर गृहचारामें मंदरागी होय अतिविरक्त होय है प्रमाणीकपरिग्रह धारै है आगामी वांछारहित है अन्यायका धन परिग्रह कदाचित् ग्रहण नाहीं करै है अल्पपरिग्रहमें अतिसंतोषी होय रहै है परिग्रहकूं दुःखका देनेवाला अर अत्यंतअस्थिर मानै है ताकै ही आकिंचन्यभावना होय है। ऐसें आकिंचन्यधर्मका वर्णन कीया ॥ ९ ॥

अब उत्तमब्रह्मचर्यका स्वरूप कहिए है—समस्त विषयनिमें अनुराग छांड करकै ब्रह्म जो ज्ञायकस्वभाव आत्मा तामें जो चर्या कहिये प्रवृत्ति सो ब्रह्मचर्य है। भो ज्ञानीजन हो यो ब्रह्मचर्य नाम व्रत बडो दुर्द्धर है हरेक बापडा विषयनिके बस हुआ आत्मज्ञान रहित हैं ते याकूं धारवेकूं समर्थ नाहीं है जे मनुष्यनिमें देवके समान हैं ते धारवेकूं समर्थ हैं अन्य रंक विषयनिकी लालसाके धारक ब्रह्मचर्य धारनेकूं समर्थ नाहीं हैं यो ब्रह्मचर्यव्रत महादुर्द्धर है जाकै ब्रह्मचर्य होय ताकै समस्त इंद्रिय अर कषायनिका जीतना सुलभ है। भो भव्य हो स्त्रीनिका सुखमें रागी जो मनरूप मदोन्मत्त हस्ती ताकूं वैराग्यभावनामें रोक करकै अर विषयांका आशाका अभाव करकैं दुर्द्धर ब्रह्मचर्य धारण करो। यो काम है सो चित्तरूप भूमिमें उपजै है याकी पीडाकरि नाहीं करने योग्य ऐसे पाप करै है जातैं यो काम मनकूं मथन करै है मनका ज्ञानकूं नष्ट करै है याहीतैं याकूं मनमथ कहिये है ज्ञान नष्ट हो जाय तदि ही स्त्रीनिका महादुर्गंध निंद्यशरीरकूं रागी हुआ सेवै है अर कामकरि अंध होजाय तदि महाअनीतिकूं प्राप्त होय अपनी परकी नारिका विचार ही नाहीं करै है । जो इस अन्यायतैं मैं इहां ही मारया जाऊंगा राजाका तीव्रदंड

होयगा यश मलिन होयगा धर्म भ्रष्ट होजाऊंगा सत्यार्थबुद्धि नष्ट होजायगी मरणकरि नरकानिके घोर-दुःख असंख्यातकाल पर्यंत भोगि फिर असंख्यात तिर्यंचनिके दुःखरूप अनेकभव पाय कुमानुषनिमैं अंधा लूला कूबडा दरिद्री इंद्रियविकल बहरा गूंगा चांडाल भील चमारानिके नीचकुलनिमैं उपजि फिर त्रसस्थावरनिमैं अनंतकाल परिभ्रमण करूंगा। ऐसा सत्यविचार कामीके नाहीं उपजै है। इस कामके नाम ही जगतके जीवनिकूं प्रगट करै हैं। कं कहिये खोटा दर्प अर्थात् गर्व उपजावै तातैं कंदर्प कहिये है। अति कामना जो बांछा उपजाय दुःखित करै तातैं याकूं काम कहिये है। याकरि अनेक तिर्यंचनिके तथा मनुष्यनिके भवनिमैं लडिलडि मरिये तातैं मार कहिये है। संवरको वैरी तातैं संवरारि कहिये। ब्रह्म जो तपसंयम तातैं सुवति कहिये चलायमान करै तातैं ब्रह्मसू कहिये इत्यादिक अनेक दोषनिकूं नाम ही कहे हैं या जानि मनवचनकायतैं अनुरागकरि ब्रह्मचर्य व्रत पालो। ब्रह्मचर्यकरिसहित ही संसारके पार जावैंगे ब्रह्मचर्यविना व्रत तप समस्त असार है ब्रह्मचर्य विना सकल कायक्लेश निष्फल हैं बाह्य जो स्पर्शनइंद्रियका सुखतैं विरक्त होय अभ्यन्तर परमात्मस्वरूप आत्मा ताकी उज्ज्वलता देखहु जैसे अपना आत्मा कामके रागकरि मलीन नाहीं होय तैसैं यत्न करो। ब्रह्मचर्यकरि ही दोऊं लोक भूषित होय है। बहुरि जो शीलकी रक्षा चाहो हो अर उज्ज्वल यश चाहो हो अर धर्म चाहो हो अर अपनी प्रतिष्ठा चाहो हो तो चित्तमैं परमागमकी शिक्षा इसप्रकार धारण करो स्त्रीनिकी कथा मति श्रवण करो मति कहो स्त्रीनिका रागरंग कुतूहल चेष्टा मति देखो ये मेला देखना परिणाम बिगाडै है। व्यभिचारी पुरुषनिकी संगतिका त्याग करना भांग जरदा मादकवस्तु भक्षण नाहीं करना तांबूल तथा पुष्पमाला अत्तर फुलेलादि शीलभंग व्रतभंगके कारण दूरतैं टालो गीतनृत्यादि कामोद्दीपनके कारणनिका परिहार करो रात्रिभक्षण टालो विकार करनेका कारण लोकविरुद्ध वस्त्र आभरण मति पहरो एकांतमैं कोऊ ही स्त्रीमात्रका संसर्ग मति करो रसनाइंद्रियकी लंपटता छांडो जिह्वाकी लंपटताकी लार हजारां

दोष आवे हैं यातैं समस्त ऊंचापणो यशधर्म नष्ट होजाय है जिह्वाइंद्रियका लंपटीके संतोष नष्ट होजाय समभावकूं स्वप्नमैं हू नाहीं जानै लोकव्यवहार भ्रष्ट होजाय ब्रह्मचर्य भंग होजाय यातैं आत्माके हितका इच्छक एक ब्रह्मचर्यकी ही रक्षा करो ऐसैं धर्मके दशलक्षण सर्वज्ञ भगवान कहे हैं । जाके ये दशचिह्न प्रगट होय ताके धर्म है उत्तमक्षमादिकानिके घातक धर्मके वैरी क्रोधादिक हैं तिनतैं अनेक दोष उपजै हैं तिनकी भावना करो अर क्षमादिकनिमैं अनेक गुण हैं तिनकी भावना बारम्बार सदैव भावो । जो क्षमा है सो अपना प्राणीनिकी रक्षा है धनकी रक्षा है यशकी रक्षा है धर्मकी रक्षा है व्रतशीलसंयमसत्यकी रक्षा एक क्षमातैं ही है कलहके घोरदुःखतैं अपनी रक्षा एक क्षमा ही करै है समस्त उपद्रव तथा वैरतैं क्षमा ही रक्षा करै है । बहुरि क्रोध है सो धर्मअर्थकाममोक्षका मूलतैं नाश करै है अपना प्राणनिका नाश करै है क्रोधतैं प्रचण्ड रौद्रध्यान प्रगट होय है क्रोधी एक क्षणमात्रमैं आप मरि जाय है कूवामैं वावडीमैं तलाव नदी समुद्रमैं डूबि मरै है शस्त्रघात विषभक्षण झंपापातादि अनेक कुकर्मकरि आत्मघात करै है । अन्यके मारनेकी क्रोधीकै दया नाहीं होय है क्रोधी होय सो अपने पिताकूं पुत्रकूं भ्राताकूं मित्रकूं स्वामीकूं सेवककूं गुरुकूं एक क्षणमात्रमें मारै है । क्रोधी घोर नरकका पात्र है क्रोधी महाभयंकर है समस्तधर्मका नाश करनेवाला है । क्रोधीके सत्यवचन नाहीं होय है आपकूं अर धर्मकूं अर समभावकूं दग्ध करनेवाला कुवचनरूप अग्निकूं उगलै है क्रोधी होय सो धर्मात्मा संयमी शीलवान मुनि अर श्रावकनिकूं चोरी अन्याईके झूठे दोष कलंक लगाय दूषित करै है । क्रोधके प्रभावतैं ज्ञान कुज्ञान होय है आचरण विपरीत होजाय है श्रद्धान भ्रष्ट होजाय है अन्यायमैं प्रवृत्ति होजाय है नीतिका नाश होय है अति हठी होय विपरीतमार्गका प्रवर्तक होय है धर्म अधर्म उपकार अपकारका विचाररहित कृतघ्नी होय है यातैं वीतरागधर्मके अर्थी हो तो क्रोधभावकूं कदाचित् प्राप्त मति होहु । बहुरि मार्दव जो कठोरतारहित कोमलपरिणामी जीवमैं गुरुनिका बडा अनुराग वर्तै है मार्दवपरिणामीकूं साधुपुरुष हू साधु मानै है

तातैं कठोरतारहित पुरुष ही ज्ञानका पात्र होय है मानरहित कोमलपरिणामीकूं जैसा गुण ग्रहण कराया चाहे तथा जैसी कला सिखाया चाहे तैसी कला गुण प्राप्त होजाय है समस्त धर्मका मूल समस्तविद्याका मूल विनय है विनयवान समस्तके प्रिय होय है अन्यगुण जामें नाहीं होय सो पुरुष हू विनयतैं मान्य होय है विनय परम आभूषण है कोमल परिणामीमें ही दया बसे है मार्दवतैं स्वर्गलोककी अभ्युदयसंपदा निर्वाणकी अविनाशीक संपदा प्राप्त होय है अर कठोरपरिणामीकूं शिक्षा नाहीं लागे है साधुपुरुष हैं तिनका परिणाम हू अविनयी कठोरपरिणामीकूं दूरहीतैं त्याग्या चाहे है जैसैं पाषाणमैं जल नाहीं प्रवेश करै तैसैं सद्गुरुनिका उपदेश कठोरपुरुषका हृदयमैं प्रवेश नाहीं करै है जातैं जो पाषाणकाष्ठादिक हू नरमाई लिए होय ताका जो बालबालमात्र हू जहां घड्या चाहे छील्या चाहे तहां बालमात्र ही उतरि आवै तदि जैसी सूरत मूरत बनाया चाहे तैसैं ही बनै है अर कोमलतारहितमैं जहां टांची लगावै तहां चिडक उतरि दूरि पडै शिल्पीका अभिप्रायमाफिक घडाईमैं नाहीं आवै तैसैं कठोरपरिणामीकूं यथावत शिक्षा नाहीं लागै अभिमानी कोऊकूं प्रिय नाहीं लागै अभिमानीका समस्तलोक बिनाकिया बैरी होय है अर परलोकमैं अतिनीच तिर्यंचमनुष्यनिमैं असंख्यातकाल नाना तिरस्कारका पात्र होय है यातैं कठोरतात्यागि मार्दवभावना ही निरंतर धारण करो। बहुरि कपट समस्तअनर्थनिका मूल है प्रीति अर प्रतीतिका नाश करनेवाला है कपटीमैं असत्य छल निर्दयता विश्वासघातादि समस्त दोष वसैं हैं कपटीमैं गुण नाहीं समस्तदोष ही दोष वास करै हैं मायाचारी यहां अपयशकूं पाय तिर्यंचनरकादिकगतिनिमैं असंख्यातकाल भ्रमण करै है मायाचाररहित आर्जवधर्मका धारकमैं समस्तगुण बसैं हैं समस्तलोकनिकूं प्रीतिका अर प्रतीतिका कारण है परलोकमैं देवनिकरि पूज्य इंद्र प्रतींद्रादिक होय है यातैं सरलपरिणाम ही आत्माका हित है। बहुरि सत्यवादीमैं समस्तगुण तिष्ठैं हैं सदाकाल कपटादिदोषरहित जगतमैं मान्यताकूं हू प्राप्त होय है अर परलोकमैं अनेकदेवमनुष्यादिक जाकी आज्ञा मस्तक ऊपरि धारैं हैं अर

असत्यवादी इहां ही अपवाद निंदा करनेयोग्य होय है। समस्तके अप्रतीतिका कारण है बांधवमित्रादिक हू अवज्ञाकरि छांडे हैं राजानिकरि जिह्वाछेद सर्वस्वहरणादिक दण्ड पावे हैं अर परलोकमैं तिर्यंचगतिमैं वचनरहित एकेंद्रिय विकलत्रयादि असंख्यातपर्याय धारैं हैं यातैं सत्यधर्मका धारण ही श्रेष्ठ है। बहुरि जाका शुचिआचरण होय सो ही जगतमैं पूज्य है शुचि नाम पवित्रता उज्ज्वलताका है जाकी आहारविहारादिक समस्तप्रवृत्ति हिंसारहित हिंसाका भयतैं यत्नाचारसहित होय अर अन्यके धनमैं अन्यकी स्त्रीमैं कदाचित् स्वप्नमैं बांछा नाहीं होय सो ही उज्ज्वलआचरणको धारक है तिसकूं ही जगत पूज्य माने है निर्लोभीका समस्तलोक विश्वास करै है सो ही लोकमैं उत्तम है ऊर्ध्वलोकका पात्र है लोभरहितका बडा उज्ज्वल यश प्रगटै है लोभी महामलीन समस्तदोषनिका पात्र है निंद्यकर्ममैं लोभीकी प्रीति होय है लोभीके ग्राह्यअग्राह्य खाद्यअखाद्य कृत्यअकृत्यका विचार ही नाहीं होय है इहां हू लोकमैं निंदा धर्मतैं परांमुखता निर्दयता प्रगट देखिये है लोभी धर्म अर्थ कामकूं नष्टकरि कुमरणकरि दुर्गति जाय है लोभीका हृदयमैं गुण अवकाश नाहीं पावै है इसलोक परलोकमैं लोभीकूं अचिंत्य क्लेश दुःख प्राप्त होय है यातैं शौचधर्मका धारण ही श्रेष्ठ है बहुरि संयम ही आत्माका हित है इसलोकमैं संयमका धारक समस्त लोकनिके बंदनेयोग्य होय है समस्तपापनिकरि नाहीं लिपै है याकी इसलोकमैं परलोकमैं अचिंत्यमहिमा है अर असंयमी है सो प्राणनिका घात अर विषयनिमैं अनुरागकरि अशुभकर्मका बन्ध करै है यातैं संयम धर्म ही जीवका हित है। बहुरि तप है सो कर्मका संवर निर्जरा करनेका प्रधान कारण है तप ही आत्माकूं कर्ममलरहित करै तपका प्रभावतैं यहां ही अनेक ऋद्धि प्रगट होय है तपका अचिंत्यप्रभाव है तपविना कामकूं निद्राकूं कौन मारै तपविना बांछाकूं कौन मारै इंद्रियनिके विषयनिको मारनेमैं तप ही समर्थ है आशारूप पिशाचणी तपहीतैं मारी जाय है कामका विजय तपहीतैं होय है तपका साधन करनेवाला परीषह उपसर्ग आवते हू रत्नत्रयधर्मतैं नाहीं छूटै यातैं तपधर्म ही धारण करना उचित है तपविना

संसारतैं छूटना नाहीं है जातैं चक्रीपनाका हू राज्य छांडि तप धारै सो त्रैलोक्यमैं बंदनेयोग्य पूज्य होय है अर तपकूं छांडि राज्य ग्रहण करै सो अतिनिंद्य थुथुकार करने योग्य होय तृणतैं हू लघु होय यातैं त्रैलोक्यमैं तपसमान महान् अन्य नाहीं।

बहुरि परिग्रहसमान भार नाहीं जेते दुःख दुर्ध्यान क्लेश वैर वियोग शोक भय अपमान हैं ते समस्त परिग्रहके इच्छकके हैं जैसैं जैसैं परिग्रहतैं परिणाम निराला होय तैसैं तैसैं खेदरहित होय है जैसैं बडाभारकरि दुःखित पुरुष भाररहित होय तदि सुखित होय तैसैं परिग्रहकी वासना मिटै सुखित होय है समस्त दुःख अर समस्तपापनिका उपजावनेका स्थान ये परिग्रह हैं जैसैं नदीनिकरि समुद्र तृप्त नाहीं होय अर इंधनकरि अग्नि तृप्त नाहीं होय है आशारूप खाडा बडा अगाध है जाका तलस्पर्श नाहीं दिनदिनं यामैं भरो त्यौंत्यौं खाडा बधता जाय जो आशारूप खाडा निधिनितैं नाहीं भरै सो अन्यसंपदातैं कैसैं भरै अर ज्यौंज्यौं परिग्रहकी आशाका त्याग करो त्यौंत्यौं भरतो चल्या जाय तातैं समस्तदुःख दूरि करनेकूं त्याग ही समर्थ है त्यागहीतैं अंतरंग बहिरंग बंधनरहित होय अनंतसुखके धारक होहुगे परिग्रहके बंधनमैं बँधे जीव परिग्रह त्यागतैं ही छूटि मुक्त होंय तातैं त्यागधर्म धारण ही श्रेष्ठ है। बहुरि हे आत्मन् यो देह अर स्त्री पुत्र धन धान्य राज्य ऐश्वर्यादिकानिमैं एक परमाणुमात्र हू तुम्हारा नाहीं है ये पुद्गलद्रव्य हैं जड हैं विनाशीक हैं अचेतन हैं इन परद्रव्यानिमैं 'अहं' ऐसा संकल्प तीव्र दर्शनमोहकर्मका उदयविना कौन करावै इस परद्रव्यमैं आत्मसंकल्प मेरे कदाचित् मति होहू मैं आकिंचन हूं। या आकिंचन्यभावनाके प्रभावतैं कर्मका लेपरहित यहां ही समस्त बंधरहित हुआ तिष्ठै है साक्षात् निर्वाणका कारण आकिंचन्यधर्म ही धारण करो बहुरि कुशील महापाप है संसारपरिभ्रमणका बीज है ब्रह्मचर्यके पालनेवालेतैं हिंसादिक पापनिका प्रचार दूरि भागै है समस्तगुणनिकी संपदा यामैं बसे है जितेंद्रियता प्रगट होय है ब्रह्मचर्यतैं कुलजात्यादि भूषित होय हैं परलोकमैं अनेक ऋद्धिका धारक महर्द्धिक देव होय

है। ऐसैं भगवान अरहंत देवाधिदेवके मुखारविंदतैं प्रगटहुवा दशलक्षणधर्म आत्माका स्वभाव है परवस्तु नाहीं है क्रोधादिक कर्मजनित उपाधि दूरि होतैं स्वयमेव आत्माका स्वभाव प्रगट होय है क्रोधके अभावतैं क्षमागुण प्रगट होय है मानके अभावतैं मार्दवगुण प्रगट होय है मायाके अभावतैं आर्जवगुण प्रगट होय है लोभके अभावतैं शौचधर्म प्रगट होय है असत्यके अभावतैं सत्यधर्म प्रगट होय है कषायानिके अभावतैं संयमगुण प्रगट होय है इच्छाके अभावतैं तपगुण प्रगट होय है परमैं ममताके अभावतैं त्यागधर्म प्रगट होय है परद्रव्यनितैं भिन्न अपने आत्मानुभवन होनेतैं आकिंचन्यधर्म प्रगट होय है वेदानिके अभावतैं आत्मस्वरूपमैं प्रवृत्तितैं ब्रह्मचर्यधर्म प्रगट होय है यो दशप्रकारधर्म आत्माका स्वभाव है यो धर्म किसीतैं खोस्या खुसै नाहीं लुट्या लुटै नाहीं चोर चोरि सकै नाहीं राजाका लूट्या लुटै नाहीं स्वदेशमैं परदेशमैं सदा याका स्वरूप छूटै नाहीं किसीका बिगाड्या बिगडै नाहीं धनकरि मोल आवै नाहीं आकाशमैं पातालमैं दिशामैं विदिशामैं पहाडमैं जलमैं तीर्थमैं मंदिरमैं कहीं धर्‌या नाहीं आत्माका निजस्वभाव है याका लाभ सम्यग्ज्ञानश्रद्धानतैं होय है अर ऐसा सुगम है जो बालक वृद्ध युवा धनवान निर्धन बलवान निर्बल सहायसहित असहाय रोगी निरोगी समस्तके धारण करनेमैं आवनेयोग्य स्वाधीन है धर्मके धारनेमैं कुछ खेद क्लेश अपमान भय विषाद कलह शोक दुःख कदाचित है नाहीं दुर्लभ है नाहीं बोझ ठावना नाहीं दूरदेश जावना नाहीं क्षुधा तृषा शीत उष्णताकी वेदनाका आवना नाहीं किसीका विसंवाद झगडा है नाहीं अत्यंत सुगम समस्तक्लेश दुःखरहित स्वाधीन आत्माका ही सत्यपरिणमन है। यातैं समस्तसंसारपरिभ्रमणतैं छूटि अनंतज्ञान दर्शन सुख वीर्यका धारक सिद्ध अवस्था याका फल है। ऐसैं दशलक्षणधर्मको संक्षेप करि वर्णन कीयो॥

अब शल्यनिका जाकै अभाव होय सो व्रती होय है शल्यसहितकै व्रत कदाचित नाहीं होय यातैं तीनशल्यका स्वरूप श्रावककूं हू जाणना चाहिये। निदानशल्य, मायाशल्य, मिथ्यादर्शनशल्य ये तीनो

ही शल्य व्रतके घात करनेवाली हैं तिन तीन शल्यमैं निदान है सो तीनप्रकार है एक प्रशस्तनिदान, अप्रशस्तनिदान, भोगार्थनिदान ये तीनप्रकार ही निदान संसारका कारण हैं इहां निदाननाम आगामी वांछाका है तिनमैं जो संयम धारनेकेअर्थि उत्तमकुल उत्तमसंहनन बलवीर्य शुभसंगति तथा बंधुजननिकी धर्ममैं सहायता उज्जलबुद्धिआदिककूं चाहना सो प्रशस्तनिदान है। बहुरि अभिमानकेअर्थि उत्तमकुल जाति भलीबुद्धि प्रबलशक्ति तथा आचार्यपना गणधरपना तीर्थंकरपना इत्यादिक अपनी आज्ञा तथा आदर उच्चता प्रवर्तनेकेअर्थि चाह करना सो अप्रशस्तनिदान है तथा क्रोधी होय अन्यके मारनेके अर्थि बांछा करना परके स्त्री पुत्र राज्य ऐश्वर्यका नाशके अर्थि बांछा करना सो हू अप्रशस्तनिदान है। बहुरि जो संयमधारणकरि घोरतपश्चरणकरि ताका फल इंद्रियनिका विषय राज्य ऐश्वर्य तथा देवपना तथा अनेकअप्सरानिका स्वामीपना तथा जातिकुलमें उच्चपना तथा चक्रीपना चाहना सो भोगकेअर्थि निदान जानना सो यो निदान दीर्घकाल संसारपरिभ्रमण करावनेवाला जानना। संयमका प्रभावकरि समस्तकर्मका नाशकरि अतींद्रियअविनाशी निर्वाणका अनंतसुख पाईये है तिस संयमकूं पालि भोगनिकी बांछा करै है सो एककौडीमें चिंतामणिरत्नकूं बेचैं है तथा अपनी रत्ननिकी भरी समुद्रमैं दौडती नावकूं ईंधनकेअर्थि तोडै है तथा मणिमय हारकूं सूतके अर्थि तोडै है तथा गोशीर जो चंदन ताकूं भस्मके अर्थि दग्ध करै है जो बांछा करै है ताके पुण्य हू नष्ट होजाय पापका बंध होजाय है पुण्यका बंध तो निर्वांछक भावतैं होय है सम्यग्दृष्टी तो भोगनिकी बांछारहित है सम्यग्दृष्टीकूं तो इंद्र अहमिंद्रलोकका सुख हू सुखाभास विनाशीक पराधीनताकरि दुःखरूप दीखै है वाकूं तो आत्मीक स्वाधीन अतींद्रियसुखका अनुभव है यातैं इंद्रियजनित आतापतैं महाक्लेशका भरया तृष्णारूप आतापकूं बधावता विषयनिके आधीनकूं कैसैं सुख मानै जैसैं जो अमृत आस्वादन किया सो कटुक महादुर्गंध आताप उपजावनेवाली कडवी खालिकूं कैसैं बांछा करै सम्यग्दृष्टीके तो ऐसी बांछा है—

दुक्खक्खयकम्मक्खयसमाहिमरणं च बोहिलाहो य। एयं पत्थे दव्वं ण पत्थणीयं तदो अण्णं ॥ १ ॥

अर्थ—हमारे शरीरधारणादिक जन्म मरण क्षुधा तृषादिक दुःखनिको क्षय होहु आत्मगुणकूं नष्ट करनेवाला मोहनीय ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय कर्मको क्षय होहु तथा इस पर्यायमैं च्यार आराधनाका धारणसहित समाधिमरण होहु बोधि जो रत्नत्रय ताका लाभ होहु सम्यग्दृष्टीकै ऐती ही प्रार्थना करने योग्य है। इनतैं अन्य इस भवमैं परभवमैं प्रार्थना करने योग्य नाहीं है संसारमैं परिभ्रमण करता जीव उच्चकुल नीचकुल राज्य ऐश्वर्य धनाढ्यता निर्धनता दीनता रोगीपना नीरोगपना रूपवानपना विरूपपना बलवानपना निर्बलपना पंडितपना मूर्खपना स्वामीपना सेवकपना राजापना रंकपना गुणवानपना निर्गुणपना अनंतानंत बार पाया है अर छांड्या है तातैं इस क्लेशरूप संयोगवियोगरूप संसारमैं सम्यग्दृष्टी निदान कैसैं करै है इस संसारमैं अनंत पर्याय दुःखरूप पावै तादि एक पर्याय इंद्रियजनित सुखकी पावै फिर अनंतवार दुःखकी पावै सो ऐसैं परिवर्तन करते इंद्रियजनित सुख हू अनंतवार पाया अब सम्यग्दृष्टी इंद्रियनिके सुखकी कैसैं वांछा करै। इस संसारमैं स्वयंभूरमणसमुद्रका समस्त जलप्रमाण तो दुःख है अर एक बालकी अणीके जल लागै ताका अनंतभाग करिये तिनमैं एकभाग प्रमाण इंद्रियजनित सुख है इसतैं कैसैं तृप्ति होयगी अर भोगनिका त्याग तथा इष्ट संपदाका संयोगका जेता सुख है तिसतैं असंख्यातगुणा वियोगकालमैं दुःख है अर संयोग होय ताका वियोग नियमसूं होयगा जैसैं सहतकरि लिप्त खड्गकी धाराकूं जो जिह्वाकरि चाटै ताके स्पर्शमात्र मिष्टताका सुख अर जिह्वा कटि पडै ताका महादुःख तैसैं विषयनिके संयोगका सुख जानो तथा जैसैं किंपाकफल दीखनेमैं सुंदर खावनेमैं मिष्ट पीछैं प्राणनिका नाश करै है तथा जहरतैं मिल्या मोदक खातां तो मीठा परिपाककालमैं प्राणनिका महादुखतैं नाश करनेवाला है तैसैं भोगजनित सुख जानहु। बहुरि जैसैं कोऊ पुरुष कनैं बहुत धन होय अल्पमोल लीया चाहै तो बहुत धनके साटै थोरा धन मिलि जाय अर आपकनै अल्पधन होय अर वाका

मोल बहुत चाहे तो नाहीं मिले तैसें जो स्वर्गकी संपदा पावनेयोग्य पुण्यबंध कीया होय अर पीछे निदान करे तो राज्यसंपदा मिलि जाय तथा व्यंतरादिकदेवनिमें जाय उपजे निदान करनेतें अपना अधिकपुण्य होय ताकूं घाति तुच्छसंपदा जाय पावे है पाछें संसारपरिभ्रमण याका फल है। जैसें सूतकी लांबी डोरी करि बंधा पक्षी दूरि उडि गया हू उसी स्थानकूं प्राप्त होय है जातें दूर उडि चल्या तो कहा पग तो सूतकी डोरितें बंधा है जाय नाहीं सकैगा तैसें निदान करनेवाला अतिदूरि स्वर्गादिकमें महर्द्धिकदेव हुवा हू संसारहीमें परिभ्रमण करेगा देवलोक जाय करके हू निदानके प्रभावतें एकेंद्रिय तिर्यंचनिमें तथा पंचेंद्रियतिर्यंचनिमें तथा मनुष्यमें आय पापसंचयकरि दीर्घकाल परिभ्रमण करे है अथवा जैसें ऋणसहित-पुरुष करारकरि बंदीगृहतें छूटिकरि अपनेघरमें सुखसूं आय वस्या तो हू करार पूर्ण भये फिर बंदीगृहमें जाय बसे तैसें निदानकरिसहित पुरुषहू तपसंयमतें पुण्य उपजाय स्वर्गलोक जाय करकें हू आयु पूर्ण भये स्वर्गतें चय संसारहीमें परिभ्रमण करे है यहां ऐसा जानना जो मुनिपनामें वा श्रावकपनामें मंद-कषायके प्रभावतें वा तपश्चरणके प्रभावतें अहमिंद्रानिमें तथा स्वर्गमें उपजनेका पुण्यसंचय कीया होय अर पाछें भोगनिकी बांछादिरूप निदान करे तो भवनत्रिकादिक अशुभदेवनिमें जाय उपजे जाके पुण्य अधिक होय अर अल्पपुण्यका फलके योग्य निदान करे तो अल्पपुण्यवाला देव मनुष्य जाय उपजे अधिक पुण्यवाला देव मनुष्यनिमें नाहीं उपजे जो निर्वाणका तथा स्वर्गादिकनिके सुखका देनेवाला मुनिश्रावकका उत्तमधर्म धारणकरि निदानतें बिगाडे है सो ईंधनके अर्थ कल्पवृक्षकूं छेदे है ऐसें निदानशल्यका दोष वर्णन किया। अर मायाशल्यका दोष कौन वर्णन करिसके। पूर्वे मायाचारके दोष कहे ही मायाचारीका व्रतशीलसंयम समस्त भ्रष्ट है जो भगवान जिनेन्द्रका प्ररूप्या धर्म धारण करो अर आत्माकूं दुर्गतिनिके दुखतें रक्षा करी चाहो हो तो कोटिउपदेशनिका सार एक उपदेश यह है जो मायाशल्यकूं हृदयमेंसूं निकास्यो यश अर धर्म दोऊनिका नाश करनेवाला मायाचार त्यागि सरलता अंगीकार

करो । बहुरि मिथ्यात्वका पूर्वै वर्णन किया सो समस्त संसारपरिभ्रमणका बीज है मिथ्यात्वके प्रभावतैं अनंतानंत परिपवर्तन किया मिथ्यात्वविषकूं उगलेविना सत्यधर्म प्रवेश ही नाहीं करै मिथ्यात्वशल्य शीघ्र ही त्यागो । माया मिथ्या निदान इन तीन शल्यका अभाव हुवाविना मुनिका श्रावकका धर्म कदाचित् नाहीं होय निश्शल्य ही व्रती होय है । बहुरि दुष्टमनुष्यनिका संगम मति करो जिनकी संगतितैं पापमें ग्लानि जाती रहै पापमें प्रवृत्ति होजाय तिनका प्रसंग कदाचित मति करो जुवारी चोर छली परस्त्रीलंपट जिह्वा इंद्रियका लोलुपी कुलके आचारतैं भ्रष्ट विश्वासघाती मित्रद्रोही गुरुद्रोही धर्मद्रोही अपयशके भयरहित निर्लज्ज पापक्रियामैं निपुण व्यसनी असत्यवादी असंतोषी अतिलोभी अतिनिर्दयी कर्कशपरिणामी कलहप्रिय विसंवादी वा कुचाल प्रचण्डपरिणामी अतिक्रोधी परलोकका अभाव कहनेवाला नास्तिक पापके भयरहित तीव्रमूर्छाका धारक अभक्ष्यका भक्षक वेश्यासक्त मद्यपानी नीचकर्मी इत्यादिकनिकी संगति मति करो जो श्रावकधर्मकी रक्षा किया चाहो हो जो अपना हित चाहो हो तो अग्निसमान विषसमान कुसंग जानि दूरतैं ही छांडो जातैं जैसाका संसर्ग करोगे तिसमैं ही प्रीति होयगी अर प्रीति जामैं होय ताका विश्वास होय विश्वासतैं तन्मयता होय है तातैं जैसी संगति करोगे तैसा हो जावोगे जातैं अचेतन मृत्तिका हू संसर्गतैं सुगन्ध दुर्गंध होय है तो चेतन मनुष्य संगतिकरि परके गुणरूप कैसैं नाहीं परिणमैगा जो जैसेकी मित्रता करै है सो तैसा ही होय है दुर्जनकी संगतिकरि सज्जन हू अपनी सज्जनता छांडि दुर्जन होजाय है जैसैं शीतल हू जल अग्निकी संगतितैं अपना शीतलस्वभाव छांडि तप्ततानैं प्राप्त होय है उत्तमपुरुष हू अधमकी संगति पाय अधमताकूं प्राप्त होय है जैसैं देवताके मस्तक चढनेवाली सुगंधपुष्पनिकी माला हू मृतकका हृदयका संसर्गकरि स्पर्शनेयोग्य नाहीं रहै है दुष्टकी संगतितैं त्यागी संयमीपुरुष हू दोषसहित शंका करिये है जैसैं कलालका हस्तमैं दुग्धका घडा हू मदिराकी शंका उपजावै है तथा कलालका घरमैं दुग्धपान करता हू ब्राह्मण लोकनिकै मदिरापीवनेकी शंका

उपजावै है लोक तो परके छिद्र देखनेवाले हैं परके दोष कहनेमें आसक्त हैं जो तुम दुष्टनिकी दुराचारी-
निकी संगति करोगे तो तुम लोकनिन्दाने प्राप्त होय धर्मका अपवाद करावोगे तातैं कुसंग मति करो
खोटे मनुष्यकी संगतितैं निर्दोष हू दोषसहित मिथ्यामार्गी शीघ्र होय है जातैं मिथ्यात्वका अर कषाय-
निका परिचय तो अनादिकालका है अर वीतरागभाव कदाचित् कोई महाकष्टतैं उपज्या सो कुसंग पाय
क्षणमात्रमैं जाता रहैगा अनादिकालका मोहकर्म बडा प्रबल है। याका उदयतैं विषयकषायनिमैं विना-
सिखाया स्वयमेव प्रवर्तै है फिर कुसंगतितैं तो पवनकी संगतितैं अग्निका ज्यो अतिप्रज्वालित होय है यातैं
कुसंग छांडि शुभसंगति करो सज्जननिकी संगतितैं दुष्ट हू अपना दोषकूं छांडै हैं। बहुरि सतसंगतितैं
निर्गुणपुरुष हू जगतके मान्य होय हैं जैसैं निर्गंध हू पुष्प देवतानिका संगतितैं लोक मस्तकविषैं चढावैं
हैं यद्यपि कोऊके धर्ममैं प्रीति नाहीं है अर परीषह सहनेमैं अर इंद्रियनिके विषय त्यागनेमैं अतिपरां-
मुखपना है तो हू संयमी त्यागी व्रती पुरुषनिकी संगतिरहनेके प्रभावतैं लज्जाकरि भयकरि अभिमान-
करि अन्यायके विषयकषायतैं विरक्त होय ही है अर जो प्रकृतिकरि ही मन्दकषायी धर्मानुरागी पापतैं
भयभीत होय अर ताकूं उत्तमसंगति मिले ताकैं परमधर्मका ग्रहण होय संसारके पारकूं पावै ही है बहुरि
जिनतैं सम्यक्धर्मकी प्रवृत्ति होय जिनकी संगतितैं अनेकजन विषयकषायतैं विरक्त होय त्यागसंयम-
तपमैं लीन होजाय ऐसा न्यायमार्गी धर्मचर्याका धारक धर्मात्मा एक पुरुषकरि ही जगत भूषित है कृतार्थ
है धर्मरहित विषयी कषायी बहुतकरि कहा साध्य है। कल्पवृक्ष तो एक ही समस्त वेदनारहित करि
वांछित सुख दे है अर विषके बहुत वृक्ष केवल मूर्छा संताप मरणके कारणकरि कहा साध्य है इसलोकमैं
जो अनर्थ पैदा होय सो कुसंगतैं होय है कुसंगविना ज्वारी चोर परस्त्रीलंपट वेश्यासक्त अभक्ष्यभक्षक
मद्यपानी होय नाहीं बडे बडे अनर्थ दोष कुसंगतैं ही होय हैं यातैं दोऊलोकमैं अपना हित चाहो हो तो
कुसंग मति करो। प्रत्यक्ष देखिए है जे उत्तमकुल उत्तमउज्वलधर्म पाया है फिर हू कुदेव कुगुरु कुधर्म

पाखण्डीनिकी उपासना करै हैं भांग पीवै हैं जरदा खाय हैं अमल खाय हैं बहुरि हुक्का पीवे हैं रात्रि-भक्षण करैं हैं वेश्याकी उच्छिष्ट खाय हैं जुवा खेलै हैं चोरी करैं हैं चुगली करैं हैं परधन परस्त्रीकी ओर तृष्णा करैं हैं जिह्वाइंद्रियके लोलुपी हैं निर्दयपरिणामी कुवचन बोलनेमें रक्त परविघ्नसंतोषी उक्तसंगति विना कुसंगतैं ही होय है महा पुण्याधिकारी मनुष्य होय सो इस विषम कलिकालमें कुसंगछांडि शुभ-संगति पावै हैं अर जो जिनेंद्रधर्म धारण किया है सो अपनी प्रशंसा अर परकी निंदा मति करो जो अपने मुखतैं अपनी प्रशंसा करै है सो अपने यशका नाश करैं हैं अतिमानी मदवान विना अपनी प्रशंसा अन्य नाहीं करै हैं अपनी प्रशंसा करता पुरुष तृणसमान लघु होय है अवज्ञायोग्य होय है विद्य-मान हू गुण अपने मुखतैं कहि गुणरहित होय दोषनिका पात्र होय है जामैं और कछू हू दोष नाहीं होय ताकै बडाभारी दोष आपकी प्रशंसा करना है अपने मुखतैं अपनी प्रशंसा नाहीं करना सो बडागुण है अपना गुणकी प्रशंसा नाहीं करता पुरुषका विद्यमानगुण नाशकूं नाहीं प्राप्त होय है जैसैं अपना तेजकी नाहीं प्रशंसा करता सूर्यका तेज जगतमैं विख्यात होय है आपमैं गुण नाहीं अर आपकी प्रशंसा करता पुरुषकै गुणवानपना प्रगट नाहीं होय है जैसैं स्त्रीकी ज्यों हावभाव विलासविभ्रम शृंगार अंजन वस्त्रा-दिक धारण कर स्त्रीकी ज्यों आचरण करता नपुंसक स्त्री नाहीं होयगा नपुंसक ही रहैगा आपमैं गुण विद्यमान हू होय अर कोऊ कीर्तनकरै प्रशंसा करै तदि उत्तम पुरुष तो अपनी कीर्ति श्रवणकरि लोक-निमैं लज्जाकूं प्राप्त होय हैं सत्पुरुषनकूं अपनी कीर्ति नाहीं रुचै है अपनी कीर्ति श्रवणकरि अतिलज्जित हुवा आत्मनिंदा करै है जो मैं संसारी अनेकदोषनिकरि भरया मेरी प्रशंसाकरि लोक मेरेऊपरि बडाभार आरोपण करैं हैं प्रशंसायोग्य तो जे आत्माकी परमविशुद्धि ताके इच्छक होय मोह काम क्रोधादिकका विजयकूं प्राप्त भये हैं हम संसारी रागद्वेषकरि व्याप्त इंद्रियनिके विषयनिकरि तार्जित परिग्रहासक्त अति-निंदनेयोग्य हैं जिनके एक घडी हू प्रमादीपनातैं धर्मरहित व्यतीत होय हैं ते जगतमैं महामूढ हैं निंद्य

हैं यो मनुष्यजन्म अतिदुर्लभ अर जामैं जिनधर्मका पावना अतिदुर्लभतर ऐसे अवसरमैं भी जे धर्मछांडि विषयनिमैं रचैं हैं ते अपने गृहमैं उपज्या कल्पवृक्षकूं काटि विषका वृक्ष लगावे हैं तथा चिंतामणिरत्नकूं काक उडावनेकूं क्षेपैं हैं तथा चिंतामणिरत्नकूं कांचका खंडमैं बेचैं है इस मनुष्यजन्मकी एक एक घडी कोटि धनमैं दुर्लभ सो वृथा जाय है लोकानिकी कथामैं तथा लोकनकी रागद्वेषपरणति देखि मैं हू कषाय-सहित हुवा दुर्ध्यानतैं मनुष्य जन्म व्यतीत करूं हूं सो मुझ समान निंदने योग्य अन्य नाहीं इत्यादिक अपनी निंदा गर्हा करता उत्तमपुरुषकूं अपनी प्रशंसा कैसैं रुचै नाहीं रुचै आपकूं नीचा देखे है जो वचन-करि अपनी प्रशंसा करै सो नीचगोत्रनामकर्मका बन्ध करै है अर इहां लोकनिमैं महानिंद्य होय है सत्पुरुष अपने गुण आप प्रगट नाहीं करै तो हू उज्वल आचरणकरि जगतमैं गुण विख्यात होय हैं जैसैं चन्द्रमाका उद्योत अर शीतलपना अर आल्हादकपना विना कह्या जगतमैं विख्यात होय है।

बहुरि परकी निंदा कदाचित मति करो परकी निंदा करनेसमान जगतमैं दोष नाहीं है परकी निंदा महावैरका कारण है दुर्ध्यानका कारण है कलहका कारण है भयका कारण है दुःखका तथा पश्चा-त्तापका तथा शोकका तथा विसंवादका तथा अप्रतीतिका कारण है जगमैं निंदा होय है परकी निंदा करनेवाला अपना धर्म अर यश अर बडापनाका अत्यंत नाश करै है जे परके दोष प्रगटकरि आप निर्दोष बण्या चाहैं हैं सो परकूं औषधि भक्षणकरनेतैं अपना नीरोगपना चाहैं हैं कोटिदोषनिका शिरो-मणि एक अन्यकी निंदा करना है यातैं जो जिनेंद्रधर्म धारण करो हो तो परके दोष मति कहो सत्पुरुष तो परमैं दोष देखि आप लज्जित होय है अर परका दोषकूं अपना सामर्थ्य प्रमाण ढांकैं है जैसैं अपना अपवादका भय करै तैसैं परके अपवाद होनेका बडाभय करै है जो संसारी जीवनिकै ज्ञानावरण दर्शना-वरण कर्मका उदय प्रबल है जाकरि जीव अज्ञानकूं प्राप्त होय रहे हैं अर मोहनीयकर्मके उदयतैं रागी द्वेषी कामी क्रोधी लोभी मानी कपटी होय रहे हैं भयवान शोकवान ग्लानिवान रतिके वश अरतिके वशी-

भूत होय नाना विकाररूप कुचेष्टा करै हैं जैसैं मदिरा पीय परबस होय आपा भूलैं हैं तथा धतूरा खाय उन्मत्तचेष्टा करता परवश हुवा आपाभूलि निंद्यचेष्टा करैं है तथा जैसैं वातपित्तकरि उन्मत्त भया परबस बकवाद करैं हैं तैसैं संसारीजीव विषयकषायके बस होय निंद्यचेष्टा करैं हैं इनकी तो करुणाधारि दोषनितैं छुडाऊं निंदा अपवाद कैसैं करूं परका अपवादकरि अनेक निंद्यपर्याय दुर्गतिनिमैं तिरस्कार पाया है सम्यग्दृष्टी तो नित्य ही ऐसी प्रार्थना करैं है जो मेरे परके दोष कहनेमैं मौन होहू मेरा समस्तजीवनिप्रति वचन ही प्रवर्तो जिनधर्मी तो गुणग्राही ही होय हैं। मिथ्यादृष्टीनिके तीव्र कषायीनिके मिथ्या आचरण देखि बैरबुद्धि करि निंदा नाहीं करै है जो याका अपवाद होय तो अच्छा है ऐसा अभिप्राय नाहीं धारै है दोषनिकूं मिथ्यात्वकूं अनंतकाल दुखनिका देनेवाला जानि करुणाबुद्धितैं मंदकषायी जीवनिकूं गुण दोष हानिवृद्धिका स्वरूप दिखावै है। बहुरि निद्रा आलस्य प्रमादका विजय करो निद्रा समस्तधर्मका अभाव करै है जाकैं निद्राका विजय नाहीं हुवा ताकै छहआवश्यक स्वाध्याय ध्यान जाप्य समस्त उत्तम कार्य नष्ट होजाय हैं मुनीश्वरनिके तो तप ही निद्राका विजयके अर्थि है निद्रा है सो दर्शनावरणका उदयजनित सर्वघाती है आत्माकूं अचेतन करै है जो निद्राकूं नाहीं जीती ताकैं समस्त हितरूप कार्य नष्ट हो जायगा। शास्त्र पठन करैगा अथवा जिनसूत्रका श्रवण करैगा अर निद्रा ऊंग आजायगी तदि श्रवण करना नाहीं होयगा जिनसूत्रके श्रवणपठनमैं अरुचि होजायगी ध्यानसामायिक करते निद्रा आजायगी तदि ध्यान जाप्य सामायिक आत्मध्यान भावना समस्त नष्ट हो जायगा निद्रामैं एकेन्द्रीसमान होय है समस्तज्ञानकूं निद्रा नष्टकरि देय है अबुद्धिपूर्वक अनेकविकल्प आत्मामैं उपजै हैं बुद्धिपूर्वक आत्माका हित होनेकी भावनाका अभाव होय है दिवसमैं निद्रातैं दर्शनावरणकर्मका आस्रव होय है मुनीश्वर तो प्रहररात्रि गये पाछैं खेदप्रमादादि दूरि करनेकूं मध्यमरात्रिके दोयप्रहरमैं शयन करैं सो अल्पनिद्रा लेय फिर जाग्रित हुआ द्वादशभावनादिक चिंतवन करैं हैं फिर क्षणमात्र निद्रा आवै फिर जाग्रित होय धर्म-

ध्यानमें लीन होय हैं ऐसें वीचली दोयप्रहरमें हू अनेकबार जाग्रित होय धर्मध्यान करता रहै हैं अर जो कदाचित मुहूर्तप्रमाण भी निद्रामें अचेत होजाय तो निद्राके जीतनेके अर्थि उपवास दोयउपवास तीन चार पांच इत्यादिक उपवास तथा रसपरित्यागादिक महान अनशनादिक तपकरि निद्राका अभाव करैं हैं निद्राके जीतनेकूं अर कामके जीतनेकी सावधानीकेअर्थि अनशनादि तप निरंतर आचरैं हैं। निद्रामें तो समस्तपरिणामनिकी सावधानीको अर वचनकायकी सावधानीको अभाव होय है जाकूं उत्तममनुष्य-जन्म अर उत्तमधर्मका नाशकरि एकेन्द्रीसमान होय मनुष्यआयुकूं पूर्ण करना होय तो बहुत निद्रा ले है दिवसमें निद्रा ले ताका तो व्रतसंयम ही गलि जाय है खेदआलस्यादिक दूरि करनेकूं रात्रिविषैं अल्प-निद्रा ग्रहण करैं हैं निद्राआलस्यादिक तो जीवका अंतर्गत महावैरी है निद्रामें हेयउपादेय कार्यअकार्य हितअहित योग्य अयोग्यका विचाररहित होय है निद्रा जीते विना इसलोकहीके समस्तकार्य नष्ट हो जाय तदि परमार्थरूप कार्य कैसें बनै यातैं जो विद्या विनय तप संयम स्वाध्याय ध्यान जापकी सिद्धि चाहो हो तो निद्राकूं जीति खेद ग्लानिके दूरि करनेकूं अल्पनिद्रा ग्रहण करो।

अब अष्ट शुद्धिका वर्णन करैं हैं। यद्यपि ये अष्ट शुद्धता मुनीश्वर परमवीतरागी साधुनिकै होय हैं तथापि साधुपना धारण करनेका इच्छक अर साधुका धर्ममें भावना भावनेका इच्छक जो गृहस्थ ताकूं अष्टशुद्धता जाननेयोग्य हैं। भावशुद्धि, कायशुद्धि, विनयशुद्धि, ईर्यापथशुद्धि, भिक्षाशुद्धि, प्रति-ष्ठापनाशुद्धि, शयनासनशुद्धि, वाक्यशुद्धि ये अष्टप्रकार शुद्धि हैं तिनमें मोहनीयकर्मका क्षयोपशमतैं उपजी जो मोक्षमार्गमें रुचि ताकरि परिणामनिमें ऐसी उज्ज्वलता होय जो रत्नत्रय ही मार्ग है अन्य है सो संसारमें उलझावनेवाले कुमार्ग हैं आत्माका हित मोक्ष है सो मोक्ष कर्मके बंधनरहित है अर कर्म-बंधनका छूटना रत्नत्रयतैं ही है ऐसा दृढश्रद्धानज्ञानतैं उपजी संसारदेहभोगनितैं विरागतारूप समस्त-रागद्वेषादि मलरहित उज्ज्वलता सो भावशुद्धि है। जातैं भावनिमैंतैं विषयनिकी इच्छा रागद्वेषादि उप-

द्रव मिथ्यात्वरूप महामल दूरि हुवाविना मुनिका आचार तथा श्रावकका आचार प्रकाशकूं प्राप्त नाहीं होय है जैसें अतिशुद्ध भींतिऊपरि चित्राम उघडे है कर्दमादिकरि लिप्त भूमिऊपरि अतिचतुर हू चित्रकार सुंदर रंगावली नाहीं कर सके है तैसें मिथ्यात्व कषायादिकरि लिप्तपुरुषके हू सम्यग्ज्ञानचारित्र नाहीं होय है ऐसें भावशुद्धता कही। साधुनिके कायशुद्धि कैसें होय है। जाके आचरण तो सूतके रेशमके मणके घासके रोमके चामके वृक्षनिके वकलके वस्त्रादिक आच्छादन तथा भस्मादिक लगावनेकरि रहित हैं बहुरि समस्तआभरणादिकरहित अर स्नानगंधलेपनादिसंस्काररहितैं जैसें रेत धूल पसेव तृणादि शरीरउपरि आय चिपके तिनका संस्काररहित अर नासिका नेत्र ललाट ओष्ठ भृकुटी मस्तक स्कंध हस्त अंगुली इत्यादिकनिका हलावने चलावनेके विकाररहित अर सर्वत्र क्रियामें यत्नाचारसहित प्रशमसुख की मूर्तीकूं दिखावै ही है कहा मानूं ऐसा कायकूं होतेसंते आपके परतैं भय नाहीं होय है अर परके आपतैं भय नाहीं होय है ऐसी कायकी विशुद्धता साधुनिकै ही होय है अर श्रावक हू एकदेश शुद्धताका धारक जे वस्त्राभरण पहरैं हैं ते ऐसे पहरे जिनकरि आपके तथा परके काम नाहीं उपजै अभिमान नाहीं उपजै भय नाहीं उपजै लोकनिकै मान्य अपना पदस्थके योग्य तथा अवस्थाके योग्य पहरणा तथा अंगकी चेष्टा नेत्रनिकरि अवलोकन वचनका कहना बैठना सोवना चालना रागादि अभिमानादि दोष-रहित प्रवर्तन करना सो कायशुद्धि होय है। अब विनयशुद्धता ऐसी जानो अरहंतादिक परमगुरुनिकी यथायोग्य पूजामें लीनता अर सम्यग्ज्ञानादिकमें यथाविधि भक्तिकरि युक्त रहना अर सर्वकाल गुरुनिके अनुकूल प्रवर्तना अर प्रश्नकरनेमें स्वाध्यायमें वाचनामें कथनीमें वीनती करनेमें निपुणपना तथा देशकालभावनिकूं जानि निपुणताकरि आचार्यादिकनिके अनुकूल प्रवर्तना आचरण करना सो विनय-शुद्धता है विनय है सोही समस्तचारित्र संपदाको मूल है विनय ही पुरुषका आभूषण है विनय ही संसार समुद्र तिरनेकूं नाव है याहीतैं गृहस्थ है सो मनकरि वचनकरि कायकरि प्रत्यक्ष परोक्ष विनयहीकूं धारण करो सो आगैं तपके कथनमें हू वर्णन करसी।

अब साधुनिके ईर्यापथशुद्धता ऐसी जानहू नानाप्रकारके जीवानिके स्थान अर जीवनके उत्पत्तिरूप योनि अर जे जे जीवनिके रहनेके आश्रय तिनके जाननेकरि उपज्या यत्नाचार तातैं जीवांके पीडाकूं दूरहीतैं त्यागकैं गमन करे हैं बहुरि अपना ज्ञान अर सूर्यका प्रकाशकरि नेत्रादिक इंद्रियनिका प्रकाश करि देखा हुवा मार्गमें गमन करै हैं अर मार्गमें उतावला शीघ्रगमन अर विलंबकरता गमन अर संभ्रमकरि गमन विस्मयरूप आश्चर्यसहित गमन अर क्रीडाकरता गमन अर शरीरकूं विकारसहितकरता गमन अर दिशानिकूं अवलोकनकरता गमन यह गमनके दोष हैं इन दोषनिकरिरहित च्यारहस्तप्रमाण भूमिको अग्रभागविषैं देखि अनेकमनुष्य गाडा गाडी बलद गर्दभादिक अनेक जिस मार्गकरि गमन कीया होय अर प्रातःकालकी पवन मार्गकूं स्पर्शन कीया होय तथा सूर्यकी किरणनिका संचार जिस मार्गमें भया होय तिस मार्गमें दिवसविषै गमन करे तिस साधुकै ईर्यासमिति होय है । ईर्यासमितिकूं होते संतेही संयमप्रतिष्ठित होय है जैसैं सुनीति होतेही विभव होय है अर याहीका एकदेशधर्म अंगीकार करता गृहस्थकूं हू ईर्यापथकी शुद्धतारूप गमन करनेकी भावना राखणा अर अपनी शक्तिप्रमाण मार्गमें कीडाकींडी हरित अंकुर घास दूब कर्दम नील इत्यादिककूं टालि दयापरिणामतैं गमन करना उचित है अर देखि शोधिकरि गमन करता गृहस्थकै हू इमलोकमैं हू खाडामें पडनेकी ठोकर लागनेकी सर्पादिक दुष्टजीवनिकी बाधा नाहीं होय है जिनेंद्रकी आज्ञाका पालन होय है । अब मुनीश्वरनिके भिक्षाशुद्धता वर्णन करे हैं—साधु जब वनतैं भिक्षा वास्तै नगरग्रामादिकमें जाय तदि देशकी रीतितैं कालकूं जानि अर नगरग्रामादिककूं उपद्रवरहित जानिकरि जाय हैं जो अग्निका उपद्रव तथा परचक्रका उपद्रव तथा राजादि महंतपुरुषनिके मरणका उपद्रव होय तथा धर्ममें उपद्रव जानै तो भिक्षाकूं नाहीं जाय है तथा महान हिंसा होती जाने तो नाहीं जाय जिसकालमें चाक्कीनिका मूसलनिका बहुत शब्द होतैं मंद रहि जाय तथा अनेक भेषधारी भिक्षा लेय आवतैं होय तिस कालमें मलमूत्रकी बाधा होय तो बाधा

मेटि पाछैं पीछेतैं अपना अंगका आगलापीछला भागकूं शोध करि कमंडलु पीछी लेय करके गमन करै। मार्गमैं अतिशीघ्र गमन नाहीं करै है विलम्ब करते गमन नाहीं करै किसीसूं मार्गमैं वचनालाप नाहीं करै मार्गमैं वनकी भूमिकी नगरग्रामादिककी शोभा नाहीं देखै जहां कलह विसंवाद कौतुक नृत्य गीतादिक होय तिनकूं दूरि छांडि गमन करै मार्गमैं दुष्टतिर्यंच दुष्टमनुष्य उन्मत्तमनुष्य तथा स्त्री तथा पत्र फल कर्दमादिक जिस भूमिमैं होय ताकूं दूरिहीतैं छांडि गमन करै है आचारांगसूत्रमैं कह्या देशकाल ताके जाननेमैं निपुण अर मार्गमैं गमन करता दातारका चिंतवन नाहीं करै जो मोकूं कौन दातार भोजन देगा तथा मोकूं शीघ्र भोजन मिलै तो अच्छा है तथा मिष्टभोजनका लाभ वा लवणादिकका लाभ तथा उष्णभोजन शीतभोजन स्वादिष्ट वेस्वाद इत्यादिक भोजनका विकल्प नाहीं करै अंतरायकर्मके क्षयोपशमके आधीन लाभअलाभकूं जानि भोजनका लाभमैं अलाभमैं मानमैं अपमानमैं मनकी वृत्तिकूं समान करता धर्मध्यानरूप चिंतवन करता चार आराधनाका शरण सहित क्षुधातृषादिक वेदनाका चिंतवन नाहीं करता भिक्षाके अर्थि गमन करै हैं लोकनिंद्य कुलमें गमन नाहीं करै हैं तथा ऐसे उत्तमकुलके गृहनिमैं हू प्रवेश नाहीं करै हैं जहां दानशाला होय जहां विवाहादिक होय मृतकका सूतक होय गानगीत होरहे होंय नृत्यके वादित्र वजनेका समाज होरह्या होय रुदन होरह्या होय अनेक भिक्षाके अर्थ भेल होरहे होंय कलह विसंवाद द्यूतक्रीडादि होरहे होंय किवाड जुडे होंय जावतेकूं कोऊ मनै करता होय घोडा हाथी ऊंट बलध इत्यादि मार्गमैं खडे होंय वा बंधि रहे होंय तथा अनेकमनुष्यनिका संघट होरह्या होय तथा साकडेमार्गमैं बहुत लोकनिका सकडाईतैं आवना जावना होय तथा नाभितैं अधिक नीचे द्वार होय करि जाना होय अर गोडेनतैं ऊंची भूमिका उलंघन होय ऐसैं गृहनिमैं तो साधु भोजनके अर्थ प्रवेशहू नाहीं करै हैं चन्द्रमाकी चांदनी ज्यों धनाढ्यनिर्धनादिक समस्तगृहनिमैं जाय है दीन अनाथ निंद्यकर्मकरि जीविका करनेवाले इत्यादि अयोग्य गृहनिकूं छांडि भिक्षाके अर्थि गृहनिमैं

जहां ताईं अन्यभिक्षुकनिका तथा हरेक जनके आवनेका आड नाहीं तहांताईं जाय आशीर्वादादिक धर्मलाभादिक मुखतैं कहैं नाहीं हुंकारा भृकुटीकी समस्या करै नाहीं उदरका कृशपना दिखावै नाहीं हस्ततैं याचनाकी समस्या करै नाहीं दातारके देखनेकूं भोजनके देखनेकूं ऊंचा तथा दिशाविदिशामांहि अवलोकन करै नाहीं खडा रहै नाहीं वीजलीके चमत्कारवत् अर्द्ध अगणेमैं जाय बाहुडे है तिष्ठ तिष्ठ तिष्ठ ऐसैं आदरपूर्वक तीन बार उच्चारणकरि खडा राखैं तो खडा रहै एकबार निकसे पाछैं फिर उस गृहमैं प्रवेश करै नाहीं फिर अन्यगृहमैं प्रवेश करै अन्तराय हो जाय तो अन्यगृहमैं हू नाहीं जाय पाछा वनहीकूं जाय है दानव्रतरहित याचनारहित प्रासुक आहार आचारांगमैं कह्या तिसप्रमाण छियालीस दोष चौदहमल बत्तीसअन्तरायरहित भोजन अंगीकारकरि प्राणनिकी रक्षामात्र फल अंगीकार करता सुंदररसमैं नीरसमैं लाभमैं अलाभमैं समान संतोषी होय सो भिक्षा है। इस भिक्षाकी शुद्धताकरि चारित्रकी उज्ज्वलसंपदा प्राप्त होय है जैसैं साधुपुरुषनिकी सेवा करि गुणनिकी संपदा होय है। अब या भिक्षा मुनीश्वरनिके पंचप्रकार होय है। गोचरीवृत्ति, अक्षम्रक्षणवृत्ति, उदराग्निप्रशमनवृत्ति, भ्रामरी वृत्ति, गर्तपूर्णवृत्ति ऐसैं पंचप्रकार आहारमैं साधुनिकी प्रवृत्ति जानना। जैसें लीला विकार वस्त्र आभरणादि सहित रूपयौवनकरियुक्त स्त्रीका लाया घासकूं गऊ चरै है तिस स्त्रीका अंगनिका सौंदर्य तथा आभरण वस्त्रकूं नाहीं अवलोकन करै है केवल घास चरनेका प्रयोजन है तैसैं साधु हू दातारका रूप आभरणादि सौंदर्यकूं नाहीं अवलोकन करता नवधाभक्तिकरि प्रतिग्रहपूर्वक हस्तमैं धारण किया ग्रासकूं भक्षण करै है सो गोचरीवृत्ति है। अथवा जैसैं गऊ वनके नाना स्थाननिमैं तिष्ठता तृणकूं जैसैं लाभ हो जाय तैसैं भक्षण करै है वनकी शोभा वृक्षनिकी शोभा देखनेमैं परिणाम नाहीं धारै है तैसैं साधु हू गृहस्थनिके घरमैं जाय तदि गृहस्थका महल मकान शय्या आसनादिकनिके देखनेमैं तथा सुवर्णके रूपाके कांसीके पीतलके मृत्तिकाके पात्रादिकनिके देखनेमैं परिणाम नाहीं करै है तथा अनेक भोजन परिवारके देखने

में परिणाम नाहीं लगावते केवल अपने हस्तमें धन्या ग्रासकूं भक्षण करनेमें दृष्टि राखे है परिकरजननिके कोमल ललित रूप वेष विलासनिके देखनेमें वांछारहित भये शुष्क तथा गीला आहार ताकूं नाहीं देखता गोका ज्यों भोजन करै तातैं गोचरीवृत्ति वा गवेषणा कहिये है । जैसैं वणिक् रत्ननिका भन्या गाडाकूं घृतादिकतैं वांगि धुरके घृत लगाय अपने वांछित देशांतरकूं लेजाय तैसैं साधु हू गुणरत्ननिकरि भन्या देहरूप गाडाकूं निर्दोष भिक्षाभोजन देय अपने वांछित समाधिरूप पत्तनकूं प्राप्त करै हैं यातैं अक्षम्रक्षणवृत्ति कहिये है । बहुरि जैसैं अनेकवस्त्रआभरणादिकनिकरि भन्या भण्डारविषै उठी अग्निकूं शुचि अशुचि जलतैं बुझाय अपनीवस्तुनिकी गृहस्थी रक्षा करै है तैसैं साधु हू उदररूप भण्डारमें उपजी क्षुधातृषादिरूपआग्निकूं सुन्दरअसुन्दरभोजनतैं बुझावता सो उदराग्निप्रशमनवृत्ति है । बहुरि जैसैं भ्रमर पुष्पकूं किंचित्मात्र बाधा नाहीं करता पुष्पकी गंध हरै है तैसैं साधु हू दातारकै किंचित् बाधा नाहीं होय तैसैं भोजन करै सो भ्रमराहारवृत्ति है । बहुरि जैसैं गृहस्थका गृहमैं गर्त जो खाडा होगया तो ताकूं धूलिपाषाणादिकतैं पूर्ण करै है तैसैं साधु हू उदररूप खाडाकूं रसनीरसभोजनकरि भरै तातैं गर्तपूर्णवृत्ति कहिये है । ऐसैं पंचवृत्तिकरि भोजन करता साधुकै भिक्षाशुद्धि होय है । श्रावक हू अन्यायछांडि बहुत हिंसाके कारण व्यवहारछांडि कर्मके दीयेमैं संतोषधारणकरि अन्यके पीडादुःख नाहीं करि न्यायकै वित्तकूं मद विषाद दीनतारहित दानकूं विभागकरि भोगै है तथा अभक्ष्यादिक सदोषभोजनका परिहारकरि दिवसमैं भोगांतराय लाभांतरायका क्षयोपशम प्रमाण रसनीरस मिल्या तामैं कुटुम्बका विभाग तथा दानका विभागकरि भोजनादिक करै गृहस्थकै लालसा गृद्धतारहित ही भोजनकी शुद्धता है । बहुरि संयमी है सो अपना शरीरका नखकेशकफनासिकामलमूत्रपुरीषादिकनिकूं देशकाल जानि विरोधरहित जीवनिके बाधा न होय परके परिणाम मलीन नाहीं होय ऐसैं क्षेत्रमैं खेपै ताकै प्रतिष्ठापनशुद्धि होय है अर गृहस्थ है सो हू अपना देहका मल तथा जल कजोडा भस्म मृत्तिका पाषाण काष्ठादिक

जतनतैं क्षेपै जैसैं छोटे बडे जीवानिकी विराधना नाहीं होय किसीके साथ कलह विसंवाद नाहीं होय आपका अंगमैं बाधा नाहीं आवै अन्य जनानिके ग्लानि नाहीं उपजै तैसैं क्षेपण करना बहुरि शयनासनशुद्धता साधुका प्रधान आचरण है जहां स्त्री नपुंसक चोर मद्यपानी शिकारी इत्यादिक पापी जनांका आरजारस्थान (आनेजानेकास्थान) नाहीं होय जहां शृंगार शरीरविकार उज्ज्वलवस्त्र आभरण धारती स्त्री विचरै तथा वेश्यानिका क्रीडावन बाग गीतनृत्यवादित्रकरि व्याप्त ऐसे स्थानका दूरहीतैं परिहारकरि तिष्ठै हैं अकर्तृम पर्वतनिकी गुफा वृक्षांका कोटर तिनमैं तथा कृत्रिमशून्यगृहादिक आपके अर्थ नाहीं किया आरंभरहित ऐसे स्थाननिमैं तथा शुद्धभूमिमैं शयन आसन करै हैं। अर गृहस्थ भी विषयानिके विकाररहित स्त्री नपुंसक दुष्ट कलह विसंवाद विकथादि रहित परिणामानिकी उज्ज्वलता जहां नाहीं बिगडै ऐसे स्थानमैं शयन आसन करै स्थानके दोषतैं परिणाममैं दुर्ध्यान रहै दुष्ट चिंतवन होय तातैं अपनी जीविकादिकका न्यायमार्गतैं साधन करके अर स्थान शयन निराकुलस्थानहीमैं करै है। बहुरि साधु है सो पृथ्वीकायिकादिक जीवानिकी विराधनाकी प्रेरणारहित कठोर कटुकादिक परपीडाका कारण वचनरहित व्रतशील संयम उपदेशरूप वचन कहता हितमित मधुरमनोहर वचन कहै सो वाक्यशुद्धता है गृहस्थ भी जेता वाक्य कहै सो विवेकसहित कहै लोकविरुद्ध धर्मविरुद्ध हिंसाका प्रेरक असत्य कटुक कर्कशादिक कदाचित नाहीं कहै है। ऐसैं अष्टप्रकार शुद्धता संयमीनिकी है गृहस्थ अष्टशुद्धताकूं चिंतवन करता रहै भावना राखै तो बहुत पापनितैं लिप्त नाहीं होय धर्मभावनाकी वृद्धि होय।

अब तपभावना हू गृहस्थकूं भावने योग्य है। यद्यपि तपकी प्रधानता मुनीश्वरानिकै है तथापि गृहस्थ हू तपभावना भावता रहै तो रोगादिक कष्ट आये चलायमान नाहीं होय। इंद्रियनिकी विकलताकूं जीतै वृद्धअवस्थामैं जराकरि बुद्धि चलित नाहीं होय खानपानमैं विकलताका अभाव होय संतोषवृत्ति प्रगट होय दीनताका अभाव होय लौकिकमैं यश उज्ज्वल होय परलोकमैं स्वर्गकी प्राप्ति होय तातैं

तप ही करना उचित है। सो तप दोयप्रकार है एक बाह्य एक अभ्यंतर। तिनमैं बाह्यतपका छह भेद है अनशन, अवमोदर्य, वृत्तिपरिसंख्यान, रसपरित्याग, विविक्तशयनाशन, कायक्लेश ऐसे छहप्रकार बाह्य तप है। तिनमैं अनशन तपका स्वरूप कहिये है—अनशन जो भोजन ताका त्याग करिये सो अनशनतप है जो दुष्टफलकी अपेक्षा रहित होय करै सो अनशनतप है जो इहां यशके वास्तै करै विख्यातता वास्तै करै जगतके लोकनितैं पूजा नमस्कारादिवास्तै वा मंत्र साधनवास्तै करै ऋद्धि संपदा वैरीनिको घात परलोकमैं राज्यसंपदावास्तै करै कषायतैं वैरतैं करै दुःखित हुवा अपना घातवास्तै करै सो अनशनतप सम्यक् नाहीं केवल संसारपरिभ्रमणका कारण है जो इंद्रियनिकी विषयनिमैं लालसा घटावनेकेअर्थ तथा छहकायके जीवनिकी दयाकेअर्थ रागभावके घटनेके अर्थ निद्राके जीतनेकेअर्थ कर्मकी निर्जराकेअर्थ ध्यानकी सिद्धिकेअर्थ देहका सुखियापनाको मेटनेके अर्थ जो उपवासादि करै सो अनशनतप है। सो अनशनतप दोयप्रकारका है—एक तो कालकी मर्यादाकरि है एक यावज्जीव है। एकदिनमैं दोयबार भोजन होय है तिनमैं एकवार भोजन करना एकबारका भोजनका त्याग करना सो अनशन है अर पहलेदिन एकबार भोजनकरि एकबारका त्याग अर दूसरेदिनके दोय भोजनका त्याग अर पारणाके दिन एक भोजनका त्यागकरि एकबार जीमना सो च्यारभोजनका त्यागरूप चतुर्थ है याहीकूं उपवास कहिये है अर छहभोजनका त्याग ताहि दोय उपवास कहिये है अष्टभोजनका त्यागकूं तेला दशभोजनका त्यागकूं चौला इत्यादि ऐसैं कालकी मर्यादारूप अनशनतप जानना। अर आयुका अंतमैं यावज्जीव भोजन त्यागना सो यावज्जीव अनशन है इंद्रियनिका उपशमकेअर्थ भगवान उपवास कह्या है तातैं इंद्रियनिकूं जीतनेवाला मुनि भोजन करता हू उपवासीक जानना अर जो उपवास करता इंद्रियनिकूं विषयनितैं नाहीं रोके है आरंभ करै है कषायरूप प्रवर्तै है ताका अनशनतप निष्फल होय है कर्मकी निर्जरा नाहीं करै है ऐसा अनशनतपका स्वरूप कह्या सो जैसैं बात पित्त कफादिक विकारकूं प्राप्त नाहीं होय रोगका

उपशम होय उत्साह बधता जाय तैसैं अपना परिणामकी विशुद्धताकी वृद्धि चाहता देशके अनुकूल कालके अनुकूल आहारपानकी योग्यताके अनुकूल कुटुंबादिकका सहायके अनुकूल संहननप्रमाण जैसैं देह नाहीं बिगडै तैसैं श्रावकानिकूं हू शक्तिप्रमाण अनशनतप अंगीकार करना ही श्रेष्ठ है॥ १॥

अब अवमोदर्यतपका स्वरूप ऐसा जानना अवम कहिये ऊन उदर जामैं होय सो अवमोदर्य कहिये जेता प्रमाणरूप ओदनादिकतैं उदर भरिये तितना प्रमाणतैं ऊनभोजन करिये सो अवमोदर्यतप है अवमोदर्यतपतैं इंद्रियनिका संयम होय है भोजनकी गृद्धिताका अभाव होय है अल्पआहार करनेतैं वातपित्तकफ प्रकोपकूं प्राप्त नाहीं होय है रोगनिका उपशम होय है निद्रा आलस्यका जीतना होय है स्वाध्यायमैं सामायिकमैं,कायोत्सर्गमैं ध्यानमैं खेद नाहीं होय सुखकरि ध्यान स्वाध्याय आवश्यकादिक होय है अवमोदर्य करनेतैं उपवासका खेद गरमी नाहीं व्यापै है उपवास सुखसूं होय है जातैं बहुत भोजन करे तदि आवश्यक ध्यान कायोत्सर्ग सुखतैं नाहीं होय आलस्य निद्रा प्रबल होजाय तृषाका प्रकोप होय है गरमी आताप रोग बधै है यातैं इंद्रियांकी लालसादि घटनेकूं मनके रोकनेकूं ज्ञानी मुनि तो, अर्द्धभोजन चतुर्थभागभोजन तथा एकग्रास वा दोयग्रास इत्यादिक एकग्रास घाटिपर्यंत अवमोदर्यतपका भेद करैं हैं अर जो मिष्टभोजनका लाभके अर्थ वा कीर्ति प्रशंसा होनेके अर्थ अल्प भोजन करै सो अवमोदर्यतप नाहीं है अवमोदर्य तो भोजनमैं लालसाघटनेके अर्थ है गृहस्थश्रावककूं हू अंतरायकर्मका क्षयोपशमप्रमाण प्राप्त हुवा भोजनतैं संतोषकरि भोजनमैं लालसा छांडि इच्छाका निरोधके अर्थ अवमोदर्यतप करना श्रेष्ठ है।

अब वृत्तिपरिसंख्यान नाम तप मुनीश्वरनिकै होय है सो कहैं हैं। मुनीश्वर भोजनकूं जावतां प्रतिज्ञा करै जो आज एकघरमैं जावना वा दोय तीन पांच सात घरनिका प्रमाणकरि जाय तथा आज सूधे मार्गमैं ही मिलै तथा वक्रमार्गमैं ही तथा ऐसादातार ऐसाभोजन तथा ऐसापात्रमैं ऐसीविधितैं मिले

तो ग्रहण करना अन्यप्रकार नाहीं करना ऐसी कठिन २ प्रतिज्ञाकरि भोजनके अर्थ गमन करै ताकै वृत्तिपरिसंख्यान तप होय है यो दुर्द्धरतप मुनीश्वरानितैं ही होय है अन्य गृहस्थ धारणकरनेकूं समर्थ नाहीं होय है अर गृहस्थ है सो हू वीतरागगुरुनिके प्रसादतैं ऐसी प्रतिज्ञा धारै है जो मैं जिनेंद्रधर्म पाय उज्ज्वल धर्मका घात जामैं नहीं होय ऐसी रीति ही जीविका करूं जामैं श्रद्धान ज्ञान व्रत नष्ट होजाय सो जीविका नाहीं करूं बहुतहिंसा झूठ मायाचारकरिसहित ऐसी सेवा नाहीं करूं खोटे पापके बिणज व्यवहार नाहीं करूं उज्ज्वल बिणज बहुत आरंभरहित कपटरहित असत्यरहित जो जीविका होय सो ही मोकूं करना अन्य नाहीं करना इत्यादि आजीविकामैं नियम करै तथा एताधन एतापरिग्रह एतावस्रतैं भोगउपभोग करना तथा रोगादिक होजाय तो एती औषध ही भक्षण करूं इन औषधिनितैं अन्य भक्षण नाहीं करूं तथा आज मेरे गृहमैं तयारभोजन पावैगा सो ही भक्षण करूंगा मैं मुखसूं कहिकरि कराऊं नाहीं मंगाऊं नाहीं तथा आज मेरे गृहमैं मेरा घरका ग्रासलीये पहली एकबार जो पात्रमैं घालदेगा सो ही भोजन करूंगा फेर मांगूं नाहीं इत्यादिक इच्छाका रोकनेके अर्थ गृहस्थ प्रतिज्ञा करै है।

अब रसपरित्यागतपका ऐसा स्वरूप है दुग्ध, दही, घृत, लवण, गुड, तेल ये छहप्रकारके रस हैं तिनमैं जिह्वादिक इंद्रियानिकूं दमनके अर्थ मनकी लोलुपता मेटनेके अर्थ कामके जीतनेके अर्थ निद्राके घटावनेके अर्थ संयमके अर्थ रसनिका त्याग करना कदे एकरसका त्याग कदे दोयतीनका त्याग कदे छहूं रसनिका त्याग करना सो रसपरित्यागतप है संसारीजीव मिष्टरसादि भक्षण करनेके लोलुपी होय अभक्ष्यभक्षण करैं हैं लज्जा छांडै हैं व्रततप बिगाडैं हैं भोजनकी लोलुपतातैं शूद्रादिकानिके अयोग्य कुलमैं भोजन करैं हैं दीनहुवा तरसैं हैं रसादिक भक्षण करनेकूं लडैं हैं मरैं हैं पडैं हैं बहुधाकरि रसनिके लोभी हुये भ्रष्ट हो रहे हैं कोऊ धन्यपुरुषनिके रसरूप भोजन करनेकी लालसा नाहीं रहै है उत्तम गृहस्थ है सो प्रथम ही नानाप्रकारके घृत मिष्ट रसादिकनिमैं लालसाका त्यागकरि जो अपने गृहमैं खारा

अलूणा लूखा सचिक्कण इत्यादिक जो स्वाभाविक कर्म विधि मिलाय दे ताकूं संतोषसहित भक्षण करै है अर रसरूप भोजनकी कथा स्वप्नांमैं हू नाहीं करै है रसनिकी लंपटता दोऊलोकमैं भ्रष्ट करनेवाली है तातैं लालसा छूटनेके अर्थ इंद्रियनिकूं वशीभूत करनेके अर्थ परमसंवर अर निर्जराके अर्थ दीनताका अभावके अर्थ संतोष धारणके अर्थ रसपरित्याग नामा तप ही श्रेष्ठ है ।

अब विविक्तशयनासन नामा तपका ऐसा स्वरूप जानना शून्य गृह एकांतस्थान विकलत्रयादि जीवनिकी बाधारहित स्त्रीनिपुंसक असंयमीनिका आरजाररहित स्थानमें वा पर्वतनिकी गुफा वनखंडादिकनिमें ध्यान अध्ययन करना शयन आसन करना सो विविक्तशयनाशन नाम तप है। जातैं एकांतमें तिष्ठता साधुकै हिंसाका अभाव ममत्वका अभाव विकथाको अभाव होय है कामका अभाव होय ध्यान अध्ययनकी सिद्धि होय है दूजाको प्रसंग होय तब वचनालाप होय वचनालाप होय तदि मनमैं संकल्प होय तादि ध्यानतैं चलायमानता होय रागभावकी वृद्धि होय तातैं संयमी एकांतमैं ही शयन आसन करै है अर गृहस्थ धर्मात्मा भी पापसूं भयभीत होय अपना गृहचाराके आजीवकादि कार्य न्यायमार्गतैं अल्पआरम्भादिकरूप पापकार्यतैं भयभीत हुवा तथा शरीरके स्नानभोजनादि कार्यकरके एकांतमकान अपने गृहमैं वा जिनमन्दिरमैं वा धर्मशालामैं वा वनके चैत्यालयादिकनिमैं साधर्मीलोकनिकी संगतिमैं धर्मचरचा करता स्वाध्याय करता जिनागमका पठनपाठन व्याख्यान करता जिनागमश्रवण करता पंच नमस्कारका स्मरण करता दिनरात्रि व्यतीत करै स्त्रीकथा राजकथा भोजनकथा देशकथा कदाचित हू नाहीं करता काल व्यतीत करै है तथा कामविकारका बधावनेवाला रागका उपजावनेवाला शय्याशनका परिहार करै गृहस्थकै हू विविक्तशयनाशन निर्जराको कारण है ।

बहुरि मुनीश्वरनिके कायक्लेश नामा बडा तप है जो एक आसनकरि बैठना एक पसवाडै शयन करना मौन धारण करना तथा ग्रीष्मऋतुमैं पर्वतनिके शिखर शिलातलनि ऊपरि सूर्यके सन्मुख कायो-

त्सर्गादिक धारणकरि ग्रीष्मका घोर आताप तप्तपवनादिककी घोर वेदना होते हू धर्मध्यानमें बारा भावनाका चिंतवनमें परिणामकूं स्थिरकरि परिणामकूं क्लेशरूप नाहीं होने दे है। तथा वर्षाऋतुमें वृक्षके नीचे योगधारण करते घोरअन्धकारकी भरी रात्रिमें अखंड धाररूप वर्षता मेघकरि धरती आकाश जलमय होरह्या होय अर पर्वतनितैं पडती नदीनका घोर कोलाहल होरह्या होय अर वृक्षनिमें एकट्ठा जल होय बहुतरस्थूल धार पडती होय अर बिजुलीनिका झक्झकाट अर घोरगर्जना अर बज्रपातनिका पडना तिस अवसरमें धन्य मुनि आछादनरहित नग्नअंग ऊपरि घोरवेदना भोगते हू संक्लेशरहित धर्म ध्यानशुक्लध्यानसूं जुडेहुये तिष्ठें हैं सो समस्त वीतरागताकी महिमा है तथा शीतऋतुमें नदीके तीर वा चौहटे नग्नअंग ऊपरि बरफका पडना महान घोरशीतलपवनका चलना तिसअवसरमें दुखरहित धर्मध्याननतैं शीतकालकी रात्रि व्यतीत करे हैं तथा दुष्टजीवनिकरि किया घोरउपद्रवनिकूं भोगि समभावरखना सो कायक्लेशतप है सो परवस दुख आए चलायमान नाहीं होनेके अर्थ तथा देहजनित सुखकी अभिलाषाका अभावके अर्थ रोगनितैं चलायमान नाहीं होनेके अर्थ भयके जीतनेके अर्थ परीषह सहनेके अर्थ कर्मकी निर्जराके अर्थ कायक्लेशतप धारण करे है अर गृहस्थके ये आतापनयोगादिक नाहीं होय यो तप तो दिगम्बरसाधुनितैं ही होय गृहस्थ है सो आप तो चलायकरि कायक्लेश करे नाहीं अर सामायिकादिकके अवसरमें ही आयजाय तो चलायमान होय नाहीं अर कर्मके उदयतैं अपनी रक्षा करते हू शीतज्वर दाहज्वर वातशूलादिक आजाय वा दुष्टवैरी धर्मद्रोही म्लेच्छादिक आय उपद्रव करे वा वन्दिगृहादिकमें रोकदे वा ताडन मारन करे तो गृहस्थ है सो मुनीश्वरनिका कायक्लेशतपकी भावनाकरि सम भावनिकरि सहे कायरता धारण नाहीं करे दारिद्र्यका दुःखजनित क्षुधातृषाशीतउष्णादिककी वेदना कर्मके उदयतैं आवे तहां कायर नाहीं होय धर्मके शरणतैं सहना सो ही कायक्लेश है मुनीश्वर तो ऐसा कायक्लेशतप उत्साहकरि धारण करे है हम कायक्लेशतैं अतिदूरि वर्तें हैं तो हू असाताकर्मका उदयकरि

दुःख आयगया तो भयवान हुवा कौन छांडैगा अब जो धैर्य धारणकरि सहूंगा तो कर्म रस देय जरूर निर्जरैगा अर कायरता करूंगा क्लेश करूंगा तो हू भोगना पडैगा कर्मका उदयके दया है नाहीं कायर होय दुख करनेतैं उदयमैं आया सो भी भोगूंगा अर यातैं बहुतगुणां आगानै बंध करूंगा तातैं जिनेंद्रका वचनांका शरण ग्रहणकरके कर्मका उदयमैं धैर्य धारण करना ही श्रेष्ठ है अर गृहस्थके अंतरायकर्मका उदय आवै है तदि उदरभर भोजन हू पूरा नाहीं मिलै वा घृतादिक रस नाहीं मिलै अतिअल्प मिलै तदि जो अल्पमैं संतोषित रहै परका विभव देखि वांछा नाहीं करै समभावरूप रहै तो सहज ही कायक्लेश तप होय है बडी निर्जरा करै है ऐसैं छहप्रकारका बाह्यतप कह्या। बाह्य अन्यके प्रत्यक्ष जाननेमैं आवै वा बाह्य भोजनादिकके त्यागतैं होय वा अन्य गृहस्थ परमती हू धारलें तातैं याकूं बाह्य तप कह्या तथा जैसैं अग्नि बहुत संचय किया तृणादिककूं दग्ध करै तैसैं पूर्वसंचितकर्मकूं दग्ध करै है तातैं तप कह्या तथा शरीर इंद्रियानिकूं संतापितकरि विषयादिकनिमैं मग्न नाहीं होने दे तातैं तप कहिये तथा जैसैं तपायाहुवा सुवर्णपाषाण है सो कीटिका छांडि शुद्ध सुवर्ण हो जाय है तैसैं आत्मा याके प्रभावतैं कर्ममलरहित होजाय तातैं याकूं भगवान तप कह्या है।

अब छहप्रकार अभ्यन्तरतप है सो कहिये है—प्रायश्चित्त, विनय, वैयावृत्य, स्वाध्याय, व्युत्सर्ग और ध्यान ऐसैं छहप्रकार हैं। तिनमैं प्रायश्चित्तका नव भेद अर संख्यात असंख्यात भेद है सो इहां आलोचनादिकका कथन लिखे कथनी बहुत होजाय तातैं संक्षेप कहिए है जो धर्मात्मा है सो अपने व्रतधर्ममैं कदाचित दोषरूप आचरण नाहीं करै अन्यको सदोष आचरण नाहीं करावै दोषरहित आचरण करै ताकूं मनवचनकायकरि भला नाहीं कहै अर जो कदाचित् प्रमादकरि भूलकरि दोष लगि जाय तो निर्दोषसाधुके निकट जाय सरलपरिणामतैं दशदोषरहित अलोचना करकैं जो गुरुनिकरि दिया प्रायश्चित्त ताहि परमश्रद्धातैं आदरपूर्वक ग्रहण करै हृदयमैं ऐसी शंका नाहीं करै जो मोकूं बहुत प्रायश्चित्त दिया

वा अल्पप्रायश्चित्त दीया प्रमादतैं एकबार दोष लगिगया ताकूं प्रायश्चित्त लेय दूरि किया फिर ऐसी सावधानी राखै जो अपना शतखंड होजाय तो हू फिर दोष नाहीं लागने देवै ताकै प्रायश्चित्त लेना सफल होय है। बहुरि प्रायश्चित्त लेवै सो अनेकगुणानिका धारक सिद्धांतरहस्यका पारगामी प्रशांतमनका धारक अपरश्रावीगुणका धारक जैसैं तप्तलोहका गोला जल पीगया ताका फिर बाहिर प्रकाश नाहीं तैसैं जो शिष्यकरि आलोचना किया दोषका कदाचित प्रकटना बाह्य नाहीं करनेवाला देशकालका ज्ञाता एकांतमें तिष्ठता पूर्वै कह्या आचार्यनिके अनेक गुण तिनका धारक तिनके निकट अंजुली जोडि महाविनयपूर्वक बालक ज्यों सरलचित्त होय आत्मनिंदा करता आलोचना करै है। बहुरि जैसैं रुधिरसूं लिप्त वस्त्र रुधिरकरि नाहीं धुवै कर्द्दम कर्द्दमकरि नाहीं धुवै तैसैं दोषनिकरिसहित साधु हू शिष्यकूं निर्दोष नाहीं करि सकै है जैसैं मूढवैद्य रोगीका विपरीत इलाजकरि प्राणरहित करै तैसैं अज्ञानीगुरु हू शिष्यकूं संसारसमुद्रमैं डबोय दे है तातैं निर्दोषगुरु प्रायश्चित्त देय शुद्ध करै संयमी पुरुष तो एकगुरु एकशिष्य दोय ही एकांतमैं आलोचना करै आर्यिकादिक प्रगत प्रकाशस्थानमैं एकगुरु दोयअर्यिका एकगणिनी होय एक दोष लाग्यो होय सो होय ऐसैं तीन होय जो लज्जातैं वा तिरस्कार वा प्रायश्चित्तका भयतैं वा अभिमानतैं दोषकूं शुद्ध नाहीं करै तो जैसैं लाभ अर खरचका ज्ञानरहित वणिककी ज्यों कर्मरूप ऋणवान होय भ्रष्ट होय है अथवा आलोचनाविना महान हू तप अंगीकार कियाहुवा वांछितफल नाहीं देवै है अर आलोचना करकै हू गुरुका दीया प्रायश्चित्त नाहीं करै तो वैद्यका कह्या औषधकूं नाहीं भक्षण करता रोगीकी ज्यों शुद्ध नाहीं होय है वा हलादिककरि नाहीं सुधार्‍या क्षेत्रमैं धान्यवत् महाफल नाहीं फलै है अथवा जैसैं विना मंजन किया दर्पणमैं रूपका ज्यों चित्तकी शुद्धता विना आत्मामैं चारित्रकी उज्ज्वलता नाहीं भासै है। अब इस कलिकालके प्रभावकरि निर्दोषगुरु प्रायश्चित्त देनेवाले दीखै नाहीं जो आप ही अनेक पापनिकरि लिप्त सो अन्यकूं कैसैं शुद्ध करै रुधिरसूं रुधिर कैसैं धोवै सो ही आत्मानुशासनजीमैं कह्या है,—

कलौ दंडो नीतिः स च नृपतिभिस्ते नृपतयो नयन्त्यर्थार्थं तं न च धनमदोऽस्त्याश्रमवताम्।
नतानामाचार्या न हि नतिरताः साधुचरितास्तपस्थेषु श्रीमन्मणय इव जाताः प्रविरलाः ॥ १४९ ॥

अर्थ—कोऊ शिष्य गुणभद्र स्वामीसूं पूछ्या जो हे स्वामिन् इस कालमैं तपस्वी मुनिनिविषै हू सत्य आचरणके धारक अत्यंत विरले रहगये ताका कारण कहा है ताका उत्तर देनेरूप काव्य कह्या ताका अर्थ लिखिये है—इस कलिकालमैं नीति मार्ग है सो तो दंड है दंडका भय विना न्यायमार्गमैं कोऊ स्वयं नाहीं प्रवर्तै है अर दंड है सो राजानिकरि दिया जाय क्योंकि कलिकालमें जोरावर विना अन्य साधर्मीनिकरि तथा वृद्धपुरुषनिकरि तथा लोकनि करि दीया दंड कोऊ ग्रहण करै नाहीं कोऊ कह्या मानै नाहीं तातैं बलवान राजाकरि दीया दंड ही ग्रहण करै अर इस कलिकालमें राजा ऐसे होने लगे जातैं धन आवता देखें ताकूं दंड देवैं निर्धनिकूं दंड नाहीं देवैं अर आश्रमवान संयमी तिनके कुछ धन नाहीं तातैं संयम लेयकरि कुमार्ग चालै तिनके राजाका दंड तो है नाहीं जातैं कुमार्गतैं रुकै अर आचार्यनिका दंड हुवा चाहिये सो कलिकालमैं आचार्यनिका शिष्यनिमैं अनुराग होगया जो आपकूं नमिजाय ताकूं दंड दे नाहीं अपना संप्रदाय बधावनेका अर्थि जो आपकूं नमोऽस्तु नमस्कार करले ताकूं अपना जानि दंड देवे नाहीं तदि दंडका भयरहित सूत्रविरुद्ध आचरण करने लगि जाय तातैं कलिकाल विषै तपस्वी जननिमैं हू सत्य आचारके धारक अति विरले देखिये है केवल भेषधारी ही बहुत दीखे हैं। तातैं प्रायश्चित्त नाम ही कल्याणका कारण है तातैं गृहस्थनिकै प्रायश्चित्तकी प्रवृत्ति कैसैं होय तातैं परमेष्ठीका प्रतिबिंबके सन्मुख होय करके ही अपना अपराधकूं आलोचनाकरि ऐसा यत्न करना जो फेर अपराध स्वप्ननिमैं हू नाहीं बने।

अब विनयनामा दूजा अभ्यंतर तप है ताका पांच भेद है दर्शन विनय, ज्ञानविनय, चारित्रविनय तपविनय उपचार विनय। तहां जे पदार्थनिका श्रद्धानविषै शंकादिदोषरहित निशंक रहना सो दर्शन-

विनय है। सम्यग्दर्शन परिणाम होनेमें हर्ष अर सम्यक्त्वकी विशुद्धतामें उद्यमी रहना सम्यग्दृष्टीनिका संगम चाहना सम्यक्त्वके परिणामकी भावना भावना, मिथ्याधर्मकी प्रशंसा नाहीं करना मिथ्यादृष्टीनिका तप ज्ञान दानकी प्रशंसा नाहीं करना क्योंकि मिथ्यादृष्टिका आचरण है सो इसलोक परलोकमें यश विख्यातता विषयसुख धन संपदाकी चाहपूर्वक आत्मज्ञानरहित है बंधको कारण है यातैं प्रमाण नाहीं अर वीतराग सर्वज्ञने पदार्थनिका स्वरूप कह्या है सो प्रमाण है यो दर्शनविनय है। बहुरि ज्ञानविनय ऐसा है जो आलस्यरहित विक्षेपरहित विषयकषायमलरहित शुद्धमनकरके देशकालकी विशुद्धताका विधानमें विचक्षण पुरुष बहुत सन्मानतैं यथाशक्ति मोक्षका अर्थी हुवा वीतराग सर्वज्ञकरि प्ररूपण कीया परमागमका ज्ञान ग्रहण अभ्यास स्मरणादि करना सो ज्ञानविनय जानना। ज्ञानका अभ्यास ही जीवका हित है ज्ञानविना पशु समान है मनुष्याचार ही ज्ञानका सेवनतैं है कामसेवन भक्षणादिक इंद्रियविषय तो तिर्यंचके हू होय है ज्ञानविनयका धारक निरंतर सम्यग्ज्ञान हीकी वांछा करे है ज्ञानहीके लाभकूं परमनिधानका लाभ मानै है यो ज्ञानविनय महानिर्जराको कारण है जाके ज्ञानविनय होय ताके ज्ञानका धारकनिका विनय विशेषता करि होय है। अब चारित्र विनयका स्वरूप कहैं हैं ज्ञानदर्शनवानपुरुषके पंचाचारका श्रवण करतां प्रमाण समस्तशरीरमें रोमांच प्रगट होय अंतरंगमें भक्तिका प्रगट होना अर कषायविषयनिका निग्रहरूप परमशांतभावके प्रसादतैं मस्तकऊपरि अंजुलि करणादिकरि भावनितैं चारित्ररूप अपना होना सो चारित्रविनय है बहुरि जाके भावनिमैं संसारका दुःख छेदनेवाला आत्माकूं बाधारहित सुखकूं प्राप्त करनेवाला विषय कषाय रोग उपद्रवका जीतनेवाला एक तप ही परमशरण दीखै हैं ताके तप भावना होय है ताहीके तपका विनय होय है तपस्वीनिकूं उच्च सर्वोत्कृष्ट समझना तपस्वीनिकी सेवा भक्ति वैयावृत्य स्तुति करना सो तप विनय है शक्तिप्रमाण इंद्रियनिका निग्रहकरि देशकालकी योग्यता प्रमाण अनशनादि तपमें उद्यमी होय धारण करना

सो समस्त तप विनय है। अब उपचार विनय ऐसा जानना जो आचार्यादिक पूज्यपुरुषानिकूं देखतप्रमाण उठि खडा होना सप्तपैंड सन्मुख जावना अंजुलि मस्तक चढावना उनकूं आगेकरि आप पाछैं गमन करना पठन पाठन तपश्चरण आतापनयोगादिक सिद्धांतका नवीन अभ्यासका ग्रहण विहारवंदनादिक समस्तकार्य गुरुनिको जणाय करना गुरुनिके होते ऊंचासन छांडना सो समस्त उपचारविनय है। तथा आचार्यादिक परोक्ष होय तो मनवचनकायकी शुद्धतापूर्वक नमस्कार करना अंजुली करना गुणनिका स्मरण करना गुणनिका कीर्तन करना जो वाकी आज्ञा धारण करो ताका पालना सो समस्त उपचारविनय है विनयके प्रभावतैं सम्यग्ज्ञानका लाभ होय है अनेकविद्या सिद्ध होय हैं मदका अभाव होय है आचारकी उज्ज्वलता होय है सम्यक आराधना होय है यशकी उज्ज्वलता होय है कर्मकी निर्जरा होय है। बहुरि अन्य साधर्मीनिका शिष्यनिका मंदज्ञानके धारकनिहूका यथायोग्य विनय करना मिथ्यादृष्टिनिका हू तिरस्कार नाहीं करना मिष्टवचन आदरपूर्वक वचन बोलना संतोष करनेवाला दुःख दूर करनेवाला वचन कहना सो ही विनय है उद्धतचेष्टा दोऊलोक नष्ट करै है। बहुरि उपचारविनय मनवचन कायके मार्गकरि अनेक प्रकार होय है गुरुनिका तथा सम्यग्दर्शनादिगुणनिके धारकनिका शय्याका स्थान बैठनेका स्थान शोधना आसनतैं नीचा बैठना नीचा स्थानमैं शयन करना अनुकूल पादस्पर्शन करना दुःखरोग आजाय तो शरीरकी टहल करके अपना जन्म सफल मानना पूज्य पुरुषानिके निकट थूकना नाहीं आलस्य नाहीं लेना उवासी नाहीं लेना अंगुलादिक मंजन नाहीं करना हास्य नाहीं करना पांव नाहीं पसारणा हस्तताल नाहीं देना अंगका विकार भ्रकुटीका विकार अंगका संस्कार नाहीं करना विनयवान है सो उच्चस्थानमें स्थित रह वंदना नाहीं करै जठै जठै संयमी तिष्ठै, तठै तठै वंदना करै जो आवते संयमीनिकूं देखि खडा होना आसन त्याग करना वंदना करना तिनकैं ही विनय है जो गुरुनिकी आज्ञा हमकूं होय तिस प्रमाण अंगीकार करना तो हमारे समान कोऊ पुण्यवान विरले हैं विनयरहितके

व्रत शील संयम विद्या समस्त निष्फल है विनयका प्रभावतैं क्रोध मानवैरादिक समस्त दोषनिका अभाव होय है विनय विना संसारसंबंधी लक्ष्मी सौभाग्य यश मित्रता गुणग्रहण सरलता मान्यता समस्त नष्ट होय है तातैं साधुनिकूं अर गृहस्थानिकूं समस्तधर्मका मूल विनय ही धारण करना श्रेष्ठ है।

अब वैयावृत्यतप हू जिनकै गुणनिमैं प्रीति धर्ममैं श्रद्धान धर्मात्मामैं वात्सल्य निर्विचिकित्सतादि- गुण होंय तिनहीके होय है कृतघ्नके आचार्यादिकनिका वैयावृत्यमैं परिणाम नाहीं होय है दशप्रकारके साधुनिका वैयावृत्य आगममैं कह्या है। आचार्य, उपाध्याय, तपस्वी, शैक्ष्य, ग्लान, गण, कुल, संघ, साधु, मनोज्ञ इन साधुनका दशप्रकार वैयावृत्य कह्या है। तिनमैंतैं जिनके सम्यग्ज्ञानादिकगुणनिकूं तथा स्वर्गमोक्षके सुखरूप अमृतका बीज व्रत संयम अपना हितके अर्थ आचरण करते आचार्य हैं तिनका अपना कायकरि तथा अन्य क्षेत्र शय्या आसनादिकरि सेवा करिये सो आचार्यवैयावृत्य है। आचार्य- निका वैयावृत्य है सो समस्तसंघको वैयावृत्य है समस्तसंघ समस्तधर्म आचार्यनिके प्रभावतैं प्रवर्तै है। बहुरि जिनव्रतशीलके धारकनिका समीपकूं प्राप्त होय परमागमका अध्ययन पठन करिये सो उपाध्याय है। महान अनशनादितपमैं प्रवर्तन करैं ते तपस्वी हैं। श्रुतज्ञानके शिक्षणमैं तथा व्रतशील भावनामैं निरंतर तत्पर होय ते शैक्ष्य हैं। रोगादिककरि क्लेशित जिनका शरीर होय ते ग्लान हैं। वृद्ध मुनिनिकी संगति सो गण है। आपको दीक्षा देनेवाला आचार्यनिका शिष्य होय सो कुल कहिये है। च्यारप्रकारके मुनीश्वरनिका समुदाय सो संघ है। बहुत कालका दीक्षित होय सो साधु है। लोकमैं पंडितपणाकरि मान्य होय तथा वक्तृत्वगुणकरि मान्य होय महा कुलीनपनाकरि लोकनिमैं मान्य होय सो मनोज्ञ है जातैं प्रवचनका धर्मका गौरवपणा प्रगट होय है ऐसैं दशप्रकारके मुनीनिकै कदाचित शरीरमें उपाधि प्रगट होय जाय तथा परीषह आजाय तथा मिथ्यात्वादिकनिका भावनिमैं उदय हो जाय तो प्रासुक- औषधि भोजन पान वस्तिका संस्तरणादिकरि धर्मोपदेशकरि श्रद्धानकी दृढता करावनेकरि पुस्तक-

पिच्छिकाकमंडलादि धर्मोपकरणानिका दानकरि इलाज करना धर्ममैं दृढता करावना संतोष धैर्यादि धारण करावना वीतरागताका बधावना सो वैयावृत्य है बाह्य औषधि भोजनपानादिक द्रव्यका असंभव होतैं अपना कायकरि कफ नाशिकामल मूत्र पुरीषादिक दूर करना रात्रि जागरण करना सो वैयावृत्य तप परमनिर्जराका कारण है तिनमैं केतेक उपकार तो मुनीश्वरनिका मुनीश्वर ही करैं हैं उठावना बैठावना शयन करावना कलोटलिवावना हस्तपादादिकनिका पसारना समेटना उपदेश देना कफमलादि दूर करना धैर्य धारण करावना मुनीश्वरनिका मुनीश्वर ही करैं हैं अर केतेक प्रासुक औषधि आहार पान उपकरणादिकानिकरि गृहस्थ धर्मात्मा श्रावकतैं ही बनै है गृहस्थ है सो साधुनिका वैयावृत्य करै अर आर्जिकाका वैयावृत्य श्राविका हू करै जातैं गृहस्थ है सो गृहस्थधर्मात्माका वैयावृत्य करै तथा करुणाबुद्धिकरि दुःखित रोगी वेवारिस बाल वृद्ध पराधीन वंदिगृहमैं पडेनिका करुणाबुद्धितैं उपकार करै तथा माता पिता विद्यागुरु स्वामी मित्रादिकनिका उपकार स्मरणकरि कृतघ्नताछांडि सेवासनमानदान प्रशंसादिकरि आदर सन्मानादिकरि सुख उत्पन्न करै दुःख होय ताकूं दूर करै अपनी शक्तिप्रमाण दान-सन्मानकरि वैयावृत्य करै ताकै वैयावृत्यतप महानिर्जरा करै है। वैयावृत्यतैं ग्लानिको अभाव होय है प्रवचनमैं वात्सल्यता होय है आचार्यादिक अनेक वात्सल्यके स्थान हैं तिनमैं कोऊको भी वैयावृत्य बनि जाय ताहीकरि समस्त कल्याणकूं प्राप्त होजाय है।

अब स्वाध्याय नामा तपकूं वर्णन करैं हैं—स्वाध्याय पंचप्रकार है—वाचना, पूछना, अनुप्रेक्षा, आम्नाय-धर्मोपदेश ऐसे पंच प्रकार स्वाध्याय है। निर्दोषग्रंथ कहिए पाठ तथा आगमका अर्थ तथा पाठ अर अर्थ दोऊ इनकूं पात्र मनुष्यनै पढावना जनावना समझावना सो वाचनास्वाध्याय है जातैं परमागमका शब्द पढावनेसमान अर्थसमझावनेसमान कोऊ अपना परका उपकार है नाहीं तथा परमागमको पढाय योग्य शिष्यकूं प्रवीण करना है सो धर्मका स्तंभ खडा करना है जातैं जिनधर्म तो शास्त्रज्ञानतैं ही है प्रतिमा

अर मंदिर तो मुखतैं बोलैं नाहीं साक्षात बोलता देवसमान हितमैं प्रेरणा करनेवाला अर अहिततैं रक्षा करनेवाला भगवान सर्वज्ञका परमागम ही है तातैं शास्त्र पढावनेमैं पढनेमैं परम उद्यमी रहना । बहुरि अपना संशयका नाशके अर्थ बहुज्ञानीसूं विनयपूर्वक प्रश्न करना जातैं प्रश्नकरि संशय दूर कियेबिना ज्ञान सम्यक् प्रकट नाहीं होय यातैं पूछना है अथवा आप जो आगमका शब्द अर्थ समझ राख्या होय सो बहुज्ञानीनिके मुखतैं श्रवण करले तो बहुत ज्ञान दृढ होजाय ज्ञानकी शिथिलता दूर होजाय तातैं बहुज्ञानीनितैं प्रश्न करना अथवा आप संक्षेप समझ्या होय ताकूं विस्तारतैं जाननेके अर्थ बडी विनयतैं सम्यग्ज्ञानीनितैं प्रश्न करना अपनी उच्चता तथा अपना पंडितपना दिखावनेकेअर्थ तथा परका तिरस्कार करनेकेअर्थ तथा परका हास्यके अर्थ सम्यग्दृष्टी प्रश्न नाहीं करै है शब्दमैं हू प्रश्न करै अर्थमैं हू प्रश्न करै शब्दअर्थ दोऊनिकूं हू प्रश्नादिककरि निर्णय करना सो पृच्छनानामा स्वाध्याय है। बहुरि परमागमका जाण्या हुआ शब्दअर्थकूं अपना हृदयमैं धारणकरि बारंबार मनकरि अभ्यासकरना चिंतवन करना तथा आगममैं आज मैं पठनश्रवण किया तिसमैं ये दोष मेरे त्यागनेयोग्य है ये गुण मेरे ग्रहण करनेयोग्य हैं ये हमारे स्वरूपतैं अन्य द्रव्यलोकक्षेत्रादिक जाननेयोग्य ही हैं ऐसे मनकरि वारंबार चिंतवन करना सो अनुप्रेक्षा नाम स्वाध्याय है। यातैं अशुभभावनिका नाश होय है शुभधर्मध्यान प्रकट होय है। बहुरि अतिशीघ्रतातैं पढना वा अतिविलंबतैं पढना इत्यादिक वचनके दोष टालि धैर्यसहित एकएक अक्षरकी स्पष्टतासहित अर्थका प्रकाशसहित पढना पाठ करना मिष्टस्वरतैं उच्चारण करना तथा सिद्धांतकी परिपाटीतैं आगमतैं विरोधरहित लोकविरुद्धतारहित पढना सो आम्नाय नामा स्वाध्याय है। बहुरि लौकिकप्रयोजनलाभपूजाअभिमानमदादिकनिकूं छांडि उन्मार्गके दूर करनेकूं सन्मार्ग दिखावनेकूं संशय निराकरणकरनेकूं अपुर्वपदार्थ प्रगटकरनेकूं धर्मका उद्योत होनेकूं मोहअंधकार दूर करनेकूं संसारदेहभोगनतैं लोकनिकूं विरक्त करनेकूं विषयानुराग तथा कषाय घटावनेकूं अज्ञान निराकरण करनेकूं

भेदविज्ञान प्रगटकरनेकूं पापक्रियातैं भयभीत होनेकूं भव्यानिकूं धर्मकथनीका उपदेश करना सो धर्मोपदेश नाम स्वाध्याय है। जहां अनेकभव्यजीवनिको धर्मका उपदेश देना होय है तहां मनवचनकाय समस्त धर्मके स्वरूपमैं लीन होजाय है अर ऐसा अभिप्राय उपदेशदाताका होय है जो कोऊरीति अनेकांतधर्मका यथावतस्वरूप श्रोतानिका हृदयमैं प्रवेश करै कोऊप्रकार संसारदेहभोगनिमैं राग घटै कोऊप्रकार भेद विज्ञान प्रगट होय ऐसा अभिप्राय जाका होय सो सत्यार्थ धर्मका उपदेश करै है जाका आत्मा धर्ममैं रचि जायगा सो ही अन्यश्रोतानिकूं धर्ममैं रचावैगा। धर्मोपदेश देनेवालाके आत्मानुशासनमैं ऐसे गुण कहे हैं जाकी बुद्धि त्रिकालविषयी होय जो पाछली अनेकरीत परमागमतैं नाहीं जानै सो यथावत वस्तुका स्वरूप नाहीं कहि सके है जाकूं वर्तमानवस्तुका स्वरूपको ज्ञान नाहीं होय सो विरुद्धकथनी करदे जाकूं आगाने परिपाकका ज्ञान नाहीं होय सो अयोग्य कह दे यातैं वक्ता होय सो बुद्धिका बलतैं आगमका बलतैं लौकिकरीति प्रत्यक्षदेखनेतैं त्रिकालकी रीति जानै। बहुरि समस्तशास्त्र जे च्यारअनुयोगके शास्त्र तिनका रहस्यका जाननेवाला होय जो च्यारअनुयोगनिका रहस्य नाहीं जानै अर वक्तापना करै तो श्रोतानिकूं यथावत् नाहीं समझाय सकै जातैं प्रमाणका कथन आजाय नयनिका तथा निक्षेपनिका तथा गुणस्थान मार्गणास्थानका तथा तीनलोकका तथा कर्मप्रकृतिनिका तथा आचारका कथन आजाय तो जाण्याविना यथावत् निःशंक संशयरहित नाहीं व्याख्यान करसकै। यातैं समस्तशास्त्रनिका रहस्यका ज्ञाता होय बहुरि लोकरीतका ज्ञाता होय जो लौकिकरचनामैं मूढ होय सो लोकविरुद्ध व्याख्यान करै बहुरि जाके भोजन वस्त्र स्थान धन अभिमानकी आशा वांछा होय सो वक्ता यथार्थ व्याख्यान नाहीं करै लोकनिकूं रंजायमान किया चाहै लोभीके सत्यार्थ वक्तापनो नाहीं होय है बहुरि जाकी बुद्धि तत्काल उत्तर देनेवाली होय जो वक्ताकूं तत्काल उत्तर नाहीं उपजै तो सभामैं क्षोभ होजाय वक्ताकी दृढप्रतीति सभानिवासीनिकै नाहीं आवै बहुरि वक्ता होय सो मंदकषायी होय मंदकषायीविना लोभीका कपटीका

क्रोधीका अभिमानीका दिया उपदेश कोऊ अंगीकार नाहीं करे है बहुरि वक्ता ऐसा होय जो श्रोतानिका प्रश्नहुआं पहले ही उत्तरकूं दिखावनेवाला होय जो थे या कहो तो या है अर या कहो तो या है। इसप्रकार व्याख्यान ही ऐसा करे जो श्रोतानिकूं प्रश्न नाहीं उपाजिसके अगाऊ ही प्रश्नका मार्ग मुद्रित करता व्याख्यान करे जो बहुत प्रश्न होजाय तो सभामें क्षोभ मचिजाय बहुरि प्रबलप्रश्न हू कोऊ आय करे तो सहनशील होय क्रोधित नाहीं होय जो प्रश्न श्रवणकरि क्रोधित होजाय तो कोऊ प्रश्न नाहीं कर सके बहुरि जामें प्रभुत्वगुण होय जातें जाकूं आपतें ऊंचा जाने ताहीकी शिक्षा ग्रहण करे दीनकी नीचकी शिक्षा कौन ग्रहण करे यातें यामें जगतके मान्य प्रभुत्वगुण होय बहुरि परके मनका हरनेवाला होय जो समस्तके प्रिय होय जो मनकूं अप्रिय होय ताकी शिक्षा ग्रहण नाहीं होय है।

बहुरि जाकूं आप आछीरीति आगमतें वा गुरुपरिपाटीतें नीका समझलिया होय ताकूं ही व्याख्यान करे जाकूं आप ही पूरा नाहीं समझ्या होय सो अन्यकूं कैसें समझावैगा जो आप ही अंधाराःरूप होय सो परपदार्थनिकूं कैसें उद्योत करेगा दीपक आप प्रकाशरूप है सो ही घटपटादिकनिकूं प्रकाशे है बहुरि जाकी प्रवृत्ति व्यवहारमें परमार्थमें धर्ममें लेनेमें देनेमें बोलनेमें बिणजादिक जीविकामें भोजन वस्त्रादिकनिमें उज्ज्वल यशसहित होय सो ही वक्ता होय जाकी प्रवृत्ति मलीन होय ताके वक्तापना सोहै नाहीं मलीन होजाय सो जगतमें मान्य नाहीं रहै। बहुरि जाकी अन्यलोकनिके ज्ञानउपजावनेमें परणति होय जाकी अन्यके समझावनेमें परणति नाहीं होय सो काहेकूं कहै। बहुरि रत्नत्रयमार्गका प्रवर्तावनेमें जाके उद्यम होय सो ही धर्मकथाका वक्ता होय इसमें अन्यलौकिक प्रयोजन है ही नाहीं। बहुरि जाकी बडा ज्ञानीजन स्तुति करता होय क्योंकि बडे बडे ज्ञानी जाकी प्रशंसा करैं ताका वचन जगतके दृढश्रद्धानमें आजाय है। बहुरि उद्धतताकरि रहित होय जातें उद्धत होय सो समस्तके अप्रिय होय है। बहुरि लोकरीति देश काल श्रोतानिकी सुष्ठता दुष्टता प्रवीणता मूढता शक्तता अशक्तता-

दिक समस्त जानि ऐसो उपदेशकरै जो समस्तजन बडा आदरतैं ग्रहण करै लौकिकज्ञाताविना यथायोग्य उपदेश नाहीं होय । बहुरि कोमलतागुण जामैं होय कठोरपरिणामीका कठोरवचन आदरनेयोग्य नाहीं होय सो श्रोता श्रवणकरनेतैं परांमुख होजाय है बहुरि जाके वक्तापनाकरि धन भोगादिककी बांछा नाहीं बहुरि जाका मुखतैं अक्षर स्पष्ट उच्चारण होय स्पष्टअक्षर विना समझमैं आवै नाहीं बहुरि मिष्टअक्षर होय जातैं श्रोता जाने कि कर्णनिके द्वारकरि समस्तअंगनिकूं अमृतकरि सींचदिया बहुरि श्रोताजन जाका स्वामित्व समझैं बहुरि सम्यग्दर्शनचारित्र वात्सल्यादि अनेकगुणनिका निधान होय ऐसे वक्तापनाके अनेकगुणनिकरि सहित होय सो धर्मकथाका वक्ता होय सो ऐसे गुणनिका धारक वक्ता को उपदेश कोऊ महाभाग्य पुण्यवान जननिकूं मिलै है । सम्यग्देशनालब्धिका पावना अनन्तकालमैं हू दुर्लभ है बहुरि धर्मोपदेश हू मिलै तो योग्य श्रोतापनाविना धर्मग्रहण नाहीं होय है जैसैं योग्यपात्र-विना वस्तु ठहरै नाहीं अयोग्यपात्रमैं धरै तो पात्रका अर वस्तुका दोऊनिका नाश होय है तैसैं योग्यश्रो-तापनाविना हू धर्मका उपदेश ठहरै नाहीं याहीतैं श्रोताका लक्षण हू संक्षेपतैं ऐसैं जानना प्रथम तो भव्य होय जो उपदेश देते हू सम्यक्श्रद्धानादिक ग्रहण करनेयोग्य नाहीं होय ताकूं उपदेश देना वृथा है बहुरि मेरा कल्याण कहा है मेरा हित कहा है ऐसा जाकै सासता विचार होय जाके अपना हितकी बांछा नाहीं सो विना प्रयोजन धर्म कथा काहेको श्रवणकरै वे तो विषयका लाभ जातैं सधै ताकी बांछा करै हैं । बहुरि दुःखतैं अत्यन्त भयभीत होय जो मेरे अब नरकातिर्यंचादिक पर्यायका दुःख मति होहू ऐसैं जाके भय नाहीं होय सो पाप छोडिवाका विषयकषायत्यागिवाका शास्त्र काहेकूं श्रवण करै तातैं दुखतैं भयभीत होय बहुरि सुखका इच्छक होय जाके सुखकी चाह नाहीं होय सो धर्मका श्रवण नाहीं करै अर जाके कर्णइंद्रिय होय कर्ण विगडगये होंय तो काहेतैं श्रवण करै बहुरि जाके धर्म कथा श्रवण करनेकी इच्छा होय इच्छाविना परिपूर्ण श्रवण होय नहीं अर इच्छा भी होय अर प्रमाद आलस कुसंगकरि श्रवण

नाहीं करे तो इच्छा वृथा है अर जो श्रवण हू करै अर ये गुरु ऐसें कहै हैं एती सावधानतारूप ग्रहण-विना श्रवण वृथा है अर ग्रहण हू होय अर जो धारण नाहीं होय श्रवणकरते ही विस्मरण होजाय तो ग्रहणकरना वृथा है बहुरि जो विचारपूर्वक प्रश्नउत्तरकरि निर्णय नाहीं करै तो श्रवणमैं संशयादिक ही रहै तदि कैसें आत्महितके सन्मुख होय। बहुरि श्रोता है सो ऐसा धर्मकूं श्रवण करै जो दयामय होय अर सुखका करनेवाला होय अर युक्तितैं प्रमाणनयतैं जामैं बाधा नाहीं आवै अर भगवानसर्वज्ञवीत-रागके आगमतैं प्रवर्त्या होय ऐसा धर्मकूं श्रवणकरि बारंबार विचारकरि ग्रहण करै जो विचाररहित होय मिथ्यात्वरूप हिंसाका कारण धर्म ग्रहण करले तो दुःख करनेवाला नरकादिकमैं प्राप्त करै अर जामैं युक्तितैं तथा सर्वज्ञवीतरागके आगमतैं बाधा आजाय सो धर्म नाहीं है अधर्म है यातैं श्रवण करनेयोग्य नाहीं बहुरि हठग्रहादिकदोषरहित होय हठग्राहीकूं शिक्षा लगै नाहीं इत्यादिक अनेकगुणनिका धारक होय सो श्रोता धर्मका उपदेश श्रवणकरि आत्मकल्याण करै है। अब इहां प्रकरणपाय श्रोतानिकी केती-कजाति दृष्टांतकरि कहै हैं केतेक श्रोता मृत्तिकाका स्वभाव लिए हैं जैसें मृत्तिका पानी पडै जब तो नरम होजाय पाछैं कठोर होय तैसें धर्मश्रवणकरते भावनिमैं भीजजाय पाछै कठोर होय है। केतेक चालनी जैसें कणछांडि तुष ग्रहण करै तैसें धर्मकथामैं सारगुण तो छांडदे अर औगुण ग्रहण करै हैं ते चालनीवत् जानना। बहुरि केतेक भैंसातुल्य श्रोता होय हैं जैसें उज्ज्वलजलका भरया सरोवरमैं भैंसा प्रवेशकरि समस्त सरोवरकूं कर्द्दममय करै तैसें समस्तसभाके लोकनिका परिणाम मलीन करै हैं। बहुरि केतेक हंस-तुल्य श्रोता है जैसें हंस जलदुग्धका भेदकरि दुग्ध ग्रहण करै तैसें निःसारछांडि आत्महित ग्रहण करै हैं। बहुरि केतेकश्रोता सूवातुल्य हैं जिनकूं रामबुलावो तो राम बोलैं अर अन्य सिखावो तो अन्य बोलैं जाकूं रामका हू ज्ञान नाहीं अर रहीमका हू ज्ञान नाहीं तैसें पापपुण्यका विचाररहित जो पढावो सो ग्रहणकरैं विचाररहित आपनास्वरूप परस्वरूपका ज्ञानरहित सूवापक्षीसमान श्रोता होय हैं। बहुरि केतेक मार्जार-

समान श्रोता हैं जैसैं मार्जार सूता हू अपना शिकारकी तरफ जाग्रित रहै है तैसैं कोऊ श्रोता अपना-विषयकषाय वार्णामैं छलग्रहण करता तिष्ठै हैं। बहुरि कोऊ बुगला जातिका श्रोता ध्यानीसा बन्या रहै अपना विषयकषायकूं ग्रहण करै है। बहुरि कोऊ डांससमान श्रोता होय हैं वक्ताकूं बारम्बार बाधा उपजावै है। बहुरि कोऊ बकराजातका श्रोता जैसैं बकराकूं अतर फुलेल सुगंध पान करावते हू दुर्गंध ही प्रगट करै है तैसैं उज्ज्वलधर्म श्रवण करके हू पापही उगलै है। बहुरि कोऊ जलौकासमान श्रोता है जैसे जोककूं स्तनऊपर लगावैं तो हू मलिनरुधिर ही ग्रहणकरै। कोऊ फूटाघटसमान श्रोता है धर्मश्रवणकरता हू चित्तमैं लेशमात्र भी धारण नाहीं करै है। कोऊ सर्पसमान श्रोता है जो दुग्धमिश्रीकूं पान करावते हू प्रबलजहर बधै है। कोऊ गायसमान उत्तमश्रोता है जो तृणभक्षणकरि दुग्ध दे है। बहुरि कोऊ पाषाणकी शिलासमान जाकूं बहुत धर्मोपदेशदेते हू हृदयमैं प्रवेश नाहीं करै है। कोऊ कसोटीसमान श्रोता परीक्षाप्रधानी हैं कोऊ ताखडीकी डांडी समान घाटबाध जानै हैं। ऐसे श्रोतानिका उत्तम मध्यम अधम अनेक जाति है जाका जैसा स्वभाव है तैसा धर्मका उपदेश परिणमै है ऐसैं धर्मोपदेश नाम स्वाध्यायका प्रकरणमैं वक्ताश्रोताका लक्षण कह्या है। ऐसे पंचप्रकार स्वाध्याय वर्णन करा। स्वाध्याय करनेतैं बुद्धि तो अतिशयवान होय है अभिप्राय उज्ज्वल होय है जिनधर्मकी स्थिति दृढ होय है संशयका अभाव होय है परवादीकी शंकाका अभाव होय है परमधर्मानुराग होय है तपकी वृद्धि होय है आचारकी उज्ज्वलता होय है अतीचारको अभाव होय पापक्रियाका परिहार होय कुधर्ममैं रागका अभाव होय है परमेष्ठीमैं अतिशयरूप भक्ति होय सम्यग्दर्शन प्रकट होय है संसारदेहभोगनितैं विरागता होय कषायांकी मंदता होय दयाभावकी वृद्धि होय शुभध्यान होय आर्तरौद्रका अभाव होय जगतके मान्य होय उज्ज्वल यश प्रकट होय दुर्गतिका अभाव होय स्वर्गके उत्तम सुख तथा निर्वाणका अतींद्रियसुखकी प्राप्ति होय इत्यादि अनेकगुणनिका उत्पन्न करनेवाला जानि वीतरागसर्वज्ञका प्रकाश्या आगमका अभ्यास विना मनुष्यजन्म व्यतीत मति करो। ऐसे स्वाध्यायनामा अंतरंगतपका पांचप्रकार स्वरूप कह्या।

अब कायोत्सर्ग नाम तपका स्वरूप कहिये हैं—जो बाह्य अभ्यंतर उपाधिको त्याग सो कायोत्सर्ग है बाह्य जो शरीर धनधान्यादिकको त्याग सो बाह्य उपाधित्याग है अर अभ्यंतर मिथ्यात्व क्रोध मान माया लोभ हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा वेद परिणामनिका अभाव सो अभ्यंतर उपाधित्याग है। बहुरि बाह्यत्यागमैं आहारादिकका हू त्याग है संन्यासका अवसरमैं आयुकी पूर्णता होय तहां यावज्जीव त्याग है सो आगै क्रमतैं सल्लेखनामैं वर्णन करसी। तातैं इहां विशेष नाहीं लिख्या है।

अब ध्यान नामा तप छठा है ताकूं वर्णन करिये है—सो याका ऐसा स्वरूप जानना जो एक पदार्थकै सन्मुख चिंतवनका रुकना सो ध्यान उत्तमसंहननवालेके अंतर्मुहूर्त रहै है। एकाग्र चिंतवनका रुक जाना अंतर्मुहूर्ततैं अधिक काल उत्तमसंहननवालेकै भी नाहीं रहै है। वज्रवृषभनाराचसंहनन, वज्रनाराचसंहनन, नाराचसंहनन ये तीन उत्तम संहनन हैं। उत्तम संहननवालेकै ही मुख्यपनाकरि चित्तका रुकना होय है जो संसारमैं गमन भोजन शयन अध्ययनादिक अनेक क्रिया हैं तिनमैं नियमरहित वर्तै है तहां ध्यान नाहीं जानना जहां एकके सन्मुख होय चित्तका रुकना सो ध्यान है अर जहां एकाग्रता नाहीं तहां भावना है इहां प्रशस्तसंकल्पतैं तो शुभध्यान होय है अर अप्रशस्तकल्पनातैं अशुभध्यान है तिनमैं शुभध्यान दोयप्रकार है एक धर्मध्यान एक शुक्लध्यान अर अशुभध्यान हू दोयप्रकार है एक आर्तध्यान दूजा रौद्रध्यान ऐसैं ध्यान च्यारप्रकार है। तिनमैं अशुभध्यान तो विना यत्नतैं ही जीवनिकै होय है जातैं अशुभध्यानका संस्कार तो जीवनिकै अनादिकालतैं चला आवै है कोऊ शास्त्र भी अशुभध्यान सिखावनेका नाहीं है बिना शिक्षा ही जीवनिकै होय है अशुभध्यानका अभाव भये शुभध्यान होय है तातैं अशुभध्यानका अभावके अर्थ प्रथम च्यारप्रकारका आर्तध्यानकूं प्ररूपण करिये है—एक अनिष्टसंयोगज, दूजा इष्टवियोगज, रोगजनित, निदानजनित ए च्यारप्रकार आर्तध्यान है ऋत जो दुःख तातैं उपजै सो आर्तध्यान है। जो अनिष्ट वस्तुका संयोगतैं महादुःख उपजै तिस अवसरमैं जो चिंतवन सो

अनिष्टसंयोगज आर्तध्यान होय है। जो अपना शरीरका नाश करनेवाले तथा धनका नाश करनेवाले तथा आजीविकाकूं विगाडनेवाले तथा अपने स्वजनमित्रादिकके नाश करनेवाले ऐसे दुष्ट वैरी तथा दुष्टराजा तथा राजाका दुष्ट अधिकारी तथा अपना दुष्ट पडोसीनिका संयोग मिलना तथा रोगीशरीर घोर दरिद्र नीचजाति नीचकुलमैं जन्म निर्बलता असमर्थता अंगहीनता इत्यादिक पावना तथा सिंह व्याघ्र सर्प स्वान मूसा तथा अग्नि जलादिक तथा दुष्टराक्षसादिकनिका संयोग मिलना तथा दुष्टबांधव तथा दुष्टकलत्र पुत्रादिकनिका संयोग बडा अनिष्ट है इनका संयोगका दुःखमैं जो संक्लेशरूप परिणाम होय इनका वियोगके अर्थ चिंतवन होना सो अनिष्टसंयोगज नाम आर्तध्यान है जातैं अतिशीत अति उष्णता अतिवर्षा डांस मांछर कीडी ऊदकण दुष्टनके दुर्वचन श्रवणकरि चिंतवनकरि स्मरणकरि परिणाममैं बडी पीडा उपजै है अनिष्टका संयोगतैं दिवसमैं रात्रिमैं घरमैं बारैं कोऊ स्थानमें कोऊ कालमैं क्लेश नाहीं मिटै है तातैं आर्तपरिणामतैं घोर कर्मका बंध होय है सो समस्त अनिष्टसंयोगज आर्तध्यानका प्रथम भेद है याकूं परिणाममैं नाहीं होने दे है तिन सम्यग्दृष्टीनिके बहुत कर्मकी निर्जरा है। जो ज्ञानी महासत्पुरुष हैं ते अनिष्टके संयोगमैं आर्तकूं नाहीं प्राप्त होय हैं ऐसा चिंतवन करै हैं जो हे आत्मन्! ये तेरे जो अनिष्ट दुःख देनेवाली सामग्री उपजी है सो समस्त तेरा उपार्जन किया पापकर्मका फल है कोऊ अन्यकूं दूषण नाहीं है अन्यकूं अपना घात करनेवाला मति जानो जो पूर्वैं परका धन हरया है अन्याय कीया है अन्य निर्बलानिकूं संताप उपजाया है अन्यके कलंक लगाया है मिथ्याधर्मकी शिक्षा करी है शीलवंतत्यागीतपस्वीनिकूं दूषण लगाया है खोटामार्ग चलाया है विकथामैं राच्या है अन्यायविषय सेये हैं निर्माल्य देवद्रव्य खाया है ते कर्म अवसरपाय उदय आया है अब याका उदयमैं दुःखित क्लेशत होय भोगोगे तो नवीन अधिकपापका बंध और करोगे अर दुःखित हुवा कर्म नाहीं छांडेगा और अधिक दुख बधैगा बुद्धि नष्ट हो जायगी धर्मका लेशहू नाहीं रहैगा पापका बंध दृढ होयगा तातैं अब धैर्य-

धारणकरि समभावनितैं सहो अर जो संक्लेशरहित समभावनितैं सहोगे तो शीघ्र ही पापकर्मका नाश होयगा यातैं परिणाममैं ऐसा चिंतवन करो जो मेरे बडा लाभ है जो कर्म इस अवसरमैं उदय आय रसदेय निर्जरै है मेरे बडालाभ है जो जिनधर्मधारण होरह्या है इस अवसरमैं बडी समतासूं कर्मका प्रहारकूं सहि कर्मके ऋणरहित होस्यूं जो यो कर्म अन्यअवसरमैं उदय आवतो तो यातैं अधिक बंधकरि असंख्यातभवनिमैं याका उलझाडतैं नाहीं छूटतो । ऐसा विचार हू करो जो ये अनिष्टके संयोग जैसैं मोकूं अनिष्ट लागैं हैं तैसैं अन्यजीवनिके हू बाधा करनेवाला है तातैं मैं अब किसी अन्यजीवके अयोग्यवचनकरि अर अयत्नाचाररूप कायकरि अन्यजीवनिके दुःखहानि होनेके चिंतवनकरि कदाचित दुख करनेकी बांछा नाहीं करूं अर ये इस अवसरमैं जो मेरे अनिष्टसंयोग मिले हैं तिनतैं असंख्यातगुणे नरकतिर्यंचपर्यायमैं तथा मनुष्यपर्यायमैं अनेकबार भोगे हैं अनेकदुर्वचन भोगे हैं अनेक मारनिकरि नित्य दुख भोगे हैं अनेकजन्म दारिद्र भोग्या है बहुरि बोझ लादनेका दुख मर्मस्थानमैं मारनेका दुख हस्तपगनाशिका छेदनेका दुख नेत्र उपाडनेका दुख क्षुधाका तृषाका शीतका उष्णताका तावडामैं पडारहनेका पवनका दुष्टजीवनिकरि खावनेका चिरकालपर्यंत बन्दीगृहमैं पराधीन पडनेका हस्त पांव नाक छेदनका बंधनेका घोरदुःख भोगे हैं तथा अनेक बार अग्निमैं दग्ध होय बल्या हूं मऱ्या हूं अनेकबार जलमैं डूबिमऱ्या कर्दममैं फांसिमऱ्या इसप्रकार तिर्यंचनिमैं मनुष्यनिमैं उपाजि उपाजि अनिष्टका संयोग अनंतबार भोग्या है नरकगतिका तो दुख प्रत्यक्षज्ञानी जाननेकूं समर्थ हैं अन्य नाहीं । इससंसारमैं वास करैगा जेत तो अनिष्ट संयोग ही रहैगा तातैं मैं पापकर्मकरि पंचमकालका मनुष्य भया हूं यामैं अनिष्टके संयोगका भय कहा है यामैं जो अनंतकालमैं जाका लाभ दुर्लभ ऐसा धर्मरूप परमनिधान पाया इसका लाभका आनन्दकरि मोकूं अनिष्टसंयोगजनित दुखका अभावकरि परमसमता भावतैं कर्मका उदयकूं जीतना योग्य है ऐसे अनिष्टसंयोगजनित आर्तध्यानका अभाव करना ।

अब आर्तध्यानका दूजा भेद इष्टवियोगज है। इष्टके वियोगतैं बडी आर्ति उपजै है जो अपने चित्तकूं आनन्द देनेवाला अनेकसुखनिकूं उपजावनेवाला ऐसा पुत्रका मरण होजाय वा आज्ञाकारिणी स्त्रीका वियोग होजाय तथा प्राणनिसमान मित्रका वियोग होजाय वा बहुतसंपदा राज्यऐश्वर्यभोगनिका देनेवाला स्वामीका वियोग होजाय तथा सुखतैं जीवनेकी कारण आजीविका नष्ट होजाय तथा राज्यका भंग पदस्थका भंग संपदाका भंग होजाय तथा सुखतैं विश्राम करनेका कारण जायगां गृह स्थान नष्ट होजाय वा सौभाग्य यश नष्ट होजाय प्रीतिके करनेवाले भोग नष्ट होजांय सो समस्त इष्टका वियोग है ऐसे इष्टके वियोग होते जो शोक भ्रम भय मूर्छादिक होना बारंबार तिनका संयोगके अर्थ चिंतवनकरना रुदन करना दुखमैं अचेतहुवा विलापकरना बारंबार पीडित होना हाहाकार करना सो तिर्यंचगतिमैं गमनका कारण इष्टवियोगज नाम आर्तध्यान है इष्टके वियोगतैं बडेबडे शूरवीरनिका धैर्य छुटि जाय है महान पुरुष दीन होजाय है हृदय फटि जाय है मरणकर जाय है उन्मत्त बावला होजाय है कूपबावडीमैं जायपडै है ऊंचे मकानतैं तथा पर्वततैं पडि मरै है विषका भक्षण करै है शस्त्रादिककरि आत्मघात करै है इस इष्टके वियोगकी आर्तिसमान कोऊ आर्ति नाहीं है इष्टवियोगकी आर्ति करि दोऊलोक नष्ट होजाय है कोऊ उत्तमपुरुष संसारदेहभोगनितैं विरक्त श्रद्धानी सम्यग्ज्ञानी वीतराग सर्वज्ञके वचननिका अवलम्बन करनेवाला वस्तुका सत्यार्थ स्वरूपकूं जाननेवाला पुरुष ही इष्टका वियोगजनित दुःखकूं जीतै है ते पुरुष ऐसी भावना करै हैं जो हे आत्मन् संसारमैं जेते तेरे संयोग भया है तिनका नियमतैं वियोग होयगा वियोगके रोकनेकूं कोऊ देवता इंद्र मन्त्र जंत्र औषधि सेना बल परिकर बुद्धि मित्र धन संपदा कोऊ समर्थ नाहीं है इस अपना देहका ही वियोग अवश्य होयगा तदि इस देहका संबन्धीनिकी कहा कथा है जो ये स्त्री पुत्र पुत्री माता पितादिककूं अपना मानि प्रीति करै है सो तेरा सबन्ध इनके आत्मातैं नाहीं है जो ये मुखऊपर चामडा वा दुर्गंधनासिका तथा चामडाके नेत्र इनके विषैं मोह

बुद्धिकरि परस्पर अपना समान राग करे है सो इनका तो अग्निमें एकादिन भस्म होना है तुम्हारा चामडाका अर इनका चामडाका अनन्तकालमें हू कैसें सबन्ध मिलेगा जिनका संयोग भया है तिनका नियमतें वियोग होयगा माताका पिताका प्यारीस्त्रीका सपूतपुत्रका भ्राताका राज्यका ऐश्वर्यका धन संपदाका महलमकानका देशनगरग्रामका मित्रनिका स्वामीका सेवकका अवश्य वियोग होयगा तातैं इष्टका वियोगकी आर्तिकरि अशुभबंध मति करो। जो ये तुमारे इष्ट है तो तुमकूं दुःख उपजावनेकूं कैसे मरैं तातैं जो सम्यग्ज्ञानी हो तो परमधर्मरूप भावकूं इष्ट मानो जातैं संसारके दुःखतैं छूटना होय। अर ये स्त्री पुत्र कुटुम्ब धन परिग्रहादिक इष्ट नाहीं हैं जो ममता उपजाय पापकर्ममें इंद्रियनिके विषयनिमें प्रवृत्ति करावै अनीतिमें प्रवर्ताय दुर्गति पहुंचावै ते काहेका इष्ट? इष्ट तो परमहितरूप धर्ममें प्रवर्तन करानेवाले धर्मात्मा गुरुजन हैं वा साधर्मी हैं अन्य नाहीं ये कुटुम्बके जन तो तुम्हारे पुण्यका उदयतैं धन संपदा है तेते सब अपने इष्ट दीखैं है विनाधन कोऊ अपना इष्ट मानै नाहीं अर धन है सो पुन्यके आधीन है तातैं पुन्यके प्रभावकूं ही इष्ट मानो जो पुन्यका उदय आवै तो स्वर्गलोककी महान् इष्ट सामग्री असंख्यातदेवांकरि वंदनीक इंद्रपना अर महाप्रेमकी भरी हुई हजारां देवांगना अद्भुत भोग सामग्री मिले है अर पापका उदयतैं अपना घना प्यारापुत्र तथा यत्नतैं पाल्या देहादिक ही घोर दुखके देनेवाले वैरी होजाय हैं। अर संसारमें अज्ञानभावतैं जो स्त्रीपुत्रादिकांनै इष्ट मानो हो सो संसारमें अनन्त जीवानितैं अनेक नाते भए एती माताका दुग्ध पिया है जाका एकएकबूंद एकट्ठी करिये तो अनन्तसमुद्र भरि जाय अर एते देह धारणकरि छांडे है जो एकदेहका एकएक रोम एकट्ठे करिये तो सुमेरुसमान अनन्तढेर हो जाय अर एते कुटुम्बके तोकूं रोये अर कुटुम्बीनके अर्थि तू रोया जो अश्रुपात एकट्ठा करिये तो अनंत समुद्र भरिजांय तातैं सत्यार्थ विचार करो कौनकौनसे इष्टके वियोग गिनोगे अनेक इष्ट ग्रहणकरि छांडे हैं। बहुरि इष्ट विद्यमान हैं तिनकूं हू छांडनेका अवसर सन्मुख जरूर आया अवसरका ठिकाना

नाहीं कौनप्रकार मृत्यु आवैगी मृत्यु तो प्राप्तहुवा विना किसीकूं नाहीं रहै समस्त इष्टसामग्री जो थानैं दीखै है अर जामैं राग करो हो तिनतैं वियोग होनेका अवसर अचानक आया जानो जिनमैं ममता-धरि फसे रहे हो अर जिनके निमित्त पांचप्रकारके पाप करो हो ते अवश्य बिछुरैंगे अर समस्त सामग्री है सो कोऊ हू वियोगके दिन कुछ करनेकूं समर्थ नाहीं है तातैं तिर्यंचगतिका कारण इष्टवियोगमैं क्लेश मति करो। अर ऐसी भावना करो जो यो शरीर है सो जलमैं बुदबुदावत् है क्षणमैं विनष्ट होयगा अर या लक्ष्मी इंद्रजालकी रचनातुल्य है अर ये स्त्रीपुत्रकुटुंबादिक हैं ते प्रचण्डपवनका घातकरि प्रेरित समुद्रकी कल्लोलवत चलायमान हैं अर विषयनिका सुख संध्याकालका बादलांका रागवत् विनाशीक है तातैं इनका वियोगमैं शोक करना वृथा है जो देहधारण है ताकै दुःख अर मरण तो अवश्य प्राप्त होय-होगा तातैं दुखका अर मरणका भय छांडिकरि ऐसा उपाय चिंतवन करो जो देहका धारणकरनेहीका अभाव होजाय अर हे आत्मन् किसी देव दानव मंत्र तंत्र औषधादिकनिकरि नाहीं रुकै ऐसा कर्मका वश करिकैं जो अपने इष्टका मरण होते जो शोककरि दुर्ध्यान करना है सो तो उन्मत्त बावलाको आचरण है जातैं शोक किये रुदन विलाप किये कौन करुणाकरि जिवायदेगा शोककरि कुछ भी सिद्ध नाहीं केवल धर्म अर्थ काम मोक्ष समस्त नष्ट होयगा जो कोऊ उपज्या है सो मरणके अर्थ ही उपज्या है ज्यों समय व्यतीत होय है त्यों मरणका दिन नजीक आवै है जैसैं वृक्षके पुष्प फल पत्र उदय भये हैं ते पतन ही करैं हैं तैसैं कुलरूप वृक्षमैं माता पिता पुत्र पौत्र जे उपजे हैं ते विनसैंगे यातैं शोक करना वृथा है या भवितव्यता है सो दुर्लंघ्य है पूर्वं उपार्जनकीया कर्मके उदयआये पाछैं फल नाहीं रुकै है अब जो उदयके आधीन इष्ट वस्तुका नाश भया ताका विलापकरि शोक करै है सो अंधकारमैं नृत्यका आरंभ करै है कौन देखैगा पूर्वं उपार्जन कीया कर्मका उदयका अवसरमैं जाका आयुका अंत आगया तथा वियोगका अवसर आ गया तिस कालमैं ताकूं कौन रोकैगा तातैं दुःखछांडि परमधर्ममैं यत्न करो प्रथम तो जे धनका उपा-

जैनके अर्थ परिग्रह बधावनेके अर्थ बहुत जीवनेके अर्थ महा संक्लेश दुर्ध्यान करैं हैं ते महामूढ हैं वांछा-कीये क्लेशित भये पुन्यका उदय विना कैसैं प्राप्त होयगा अर जो आपका इष्ट मरगया-ताकूं दग्धकरि दिया अर एक एक परमाणु धूम्रादिक भस्म होय उडगये ताके प्राप्तिके अर्थ जो शोककरै तिससमान मूर्ख और कौन देखिये इस जगतकूं इंद्रजालसमान प्रत्यक्ष देखता हू शोक कैसे करै है जो मरणका वियोगको हानिको जो दिन आजाय ताकूं एकक्षण हू टालनेकूं कोऊ इंद्र जिनेंद्र समर्थ नाहीं हैं ऐसैं जानता हू जो रुदनविलाप करै है सो निर्जनवनमैं बहुतपुकारकरि रोवै है कौना दया करैगा पूर्वोपार्जितकर्म अचेतन वाकै दया है नाहीं जो अपना इष्टवस्तु विनाशिजाय ताका तदि तो शोककरना उचित है जो शोककीयेतैं वस्तुका लाभ होजाय तथा आपके सुख होय तथा जगतमैं बडायश कीर्तन होजाय तथा धर्मका उपार्जन होजाय तथा धनकी प्राप्ति होजाय तो इष्टके वियोगका शोक हू करना ठीक है अर जो कुछ भी लाभ नाहीं होय अर केवल शोकतैं धर्मका नाश होय बुद्धिका नाश होय शरीरका नाश होय इंद्रियां नष्ट होय नेत्रनिकी जाति नष्ट होय प्रकट घोरदुख होय परलोकमैं दुर्गति होय अन्य श्रवणकरनेवालेनिकै क्लेश होय आपके रोगकी उत्पत्ति होय बलवीर्यका नाश होय व्यवहार परमार्थ दोऊंका नाश होय धीरता नष्ट होय ज्ञान नष्ट होय इत्यादिक अनेक दुःखनिका कारण शोक है तातैं तिर्यंचगातिमैं अनेक जन्म उपार्जन करनेवाला इष्टवियोगज नाम आर्तध्यान कदाचित मति करो। बहुरि जो इष्टका वियोग है सो पापका फल है सो अब याका शोक कीये कहा होयगा पापकर्मके नाश करनेमैं यत्न करो जो फिर इष्ट वियोगादिकके दुखका पात्र नहीं होवोगे। जो इष्टवियोगकरि दुःखरूप क्लेशित होरहे हैं तो ऐसा असाताकर्मका बंध करै है जो आगानैं संख्यात असंख्यातभव पर्यंत दुःखकी परिपाटीतैं नाहीं छूटैगा। जो यो क्षणक्षणमैं आयु नष्ट होय है सो कालका मुखमैं प्रवेश है कोऊ ऐसा अनंतकालमैं हुवा न होसी जो देहधारणकरि मरणकूं नाहीं प्राप्त होय सूर्यचंद्रमादिक देवता तथा पक्षी ये तो आकाशहीमैं

विचरैं हैं अर मनुष्यतिर्यंचादिक पृथ्वीमैं ही विचरैं मच्छकच्छादिक जलहीमैं विचरैं अर यो काल स्वर्गमैं नरकमैं आकाशमैं पातालमैं जलमैं थलमैं सर्वत्र विचरै है यातैं कौन ऊबरै है ? जो दिन निरंतर व्यतीत होय है सो आयुका बडाबडा खंड प्रत्यक्ष टूटता चल्या जाय है सागरनिका जिनका आयु ऐसा अणिमादिकहजारां ऋद्धिके धारक जिनकी असंख्यातदेव सेवा करैं तिनका ही विनाश होय है तो कीटसमान मनुष्य कैसैं स्थिर रहैगा। जिसपवनतैं पहाड उडिगये तातैं तृणपुंज कैसैं ठहरैगा ऐसा चिंतवनकरि इष्टका वियोग होतैं आर्तध्यान कदाचित मति करो। ऐसे इष्टवियोग आर्तध्यानका अर याके जीतनेकी भावनाका वर्णन कीया।

अब रोगजनित आर्तध्यानका स्वरूप कहिये है—इस शरीरमैं रोग आय उपजै है तहां जो रोगका नाश होनेके अर्थ बारंबार संक्लेशरूप परिणाम होय सो रोगजनितआर्तध्यान है जो कास स्वास ज्वर वात पित्त कफ उदरशूल मस्तकशूल नेत्रशूल कर्णशूल दंतशूल जलोदर स्फोदर कोढ खाज दाद संग्रहणी कठोदर अतीसार इत्यादिक प्राणनिका नाशकरनेवाला घोरवेदना देनेवाला रोगनिका उदयकरि घोरदु:ख उपजै है रोगनिकी पीडाकरि एकस्वास भी लेणा महासंकटतैं होय है बैठ्या ऊभा वा शयन करतां कहां हू परिणाममैं थिरता नाहीं लेनेदे है तिस अवसरमैं परिणामनिमैं बडादु:खकरि उपज्या पीडाचिंतवन नाम आर्तध्यान होय है। या रोगजनितवेदना ऐसी है जो बडेबडे कोटीभट महाशूरवीर अनेकशस्त्रनिके सन्मुख होय घातखानेवाले शूरवीरनिका हू धैर्य चलायमान होजाय है बडेबडेत्यागी तपस्वी परीषहनिके सहनेवालेनिका हू धैर्य चलायमान करदे है ऐसा रोगवेदनाजनित आर्तध्यानके जीतनेका सामर्थ्य बडादुर्धर है रोगजनितवेदनामैं आर्तपरिणामका जीतना भगवान जिनेंद्रका शरणतैं जानो मोटाशरणबिना ऐसी दुर्धरवेदनामैं धैर्य नाहीं रहता है तातैं ही ज्ञानी सर्वज्ञका शरण ग्रहणकरि चिंतवन करै है जो हे आत्मन् यह भयानक घोर आसाताकर्म उदय आया है अब जो यामैं विलाप करोगे तो

दुख कौन दूरि करैगा अर तडफडाहट करोगे तो ये वेदना छांडनेकी नाहीं धीर होय भोगोगे तो भोगोगे अर कायर होय भोगोगे तो भोगोगे रोग देहमैं आया है सो देहकूं मारैगा तुम्हारा आत्माकूं नाहीं मारैगा तुम्हारा आत्मा तो ज्ञायकस्वभाव अविनाशी है परंतु इसदेहके फंदमैं आय फँस्या सो अब धैर्यधारणकरि कायरता छांडो जो इस संसारमैं कोटिनि रोगका उदय तथा ताडन-मारणादि त्रास नरकमैं भोगा अर तिर्यंचगतिमैं प्रत्यक्षघोरदुख रोगनितैं उपज्या देखो हो औरसैं तो भाग भी जाय परंतु कर्मसैं नहीं भागसकोगे यो कर्ममयशरीर तुम्हारा एकएक प्रदेशकूं अनंतकर्मके परमाणुनिकरि बांधि अपने आधीन करिराख्या है सो कैसैं भागने देगा अर जो कर्म है सो तो मरणकीये हू नाहीं छांडैगा देह छूटैगा कर्म तो अन्य देह धारोगे तहां हू लार ही रहैगा रोगमैं धैर्य धारण करैं हैं तिनकै कर्मकी बडी निर्जरा होय है। बहुरि ऐसा हू विचार करो जो मुनीश्वर तो ग्रीष्ममें आतापकी वेदना अर शीतऋतुमें शीतवेदना कर्मनिके जीतने वास्ते बडा उत्साहधारि सहैं हैं तुमारे कर्म आप ही उदयआया तो यामैं शूरपणो अंगीकारकरि कर्मकूं जीतो अर ऐसा हू देखो जो केतेक मनुष्य निर्धन हैं अर एकाकी हैं स्थानरहित हैं खानपान मिलै नाहीं है अर कोऊ पूछनेवाला नाहीं कोऊका सहाय नाहीं अर शरीरमें उपरांऊपरि रोगनिका क्लेश आवै है कोऊ पाणी पावनेवाला हू नाहीं ताका विलाप कौन सुनै ? ऐसा दुखका धारक अज्ञानी हू आपकूं असहाय एकाकी निर्धन समझि आपकी आप भोगै है तुम्हारे तो शयन करनेकूं स्थान है खावनेकूं भोजन है रोगकी औषधि है ताता ठंडा समस्त सामग्री है चाकरी करनेवाला सेवक है स्त्री है पुत्र है मित्र है मलमूत्रादिक धोवनेवाला है अब तोकूं समभावतैं वेदना सहना कायरता छांडना धैर्यधारि आर्त छांडना ही योग्य है धर्मधारणका येही फल है जिनकै कोऊप्रकार सहाय नाहीं सो हू धैर्य धारण करैं हैं तो हे आत्मन् थे जिनधर्म धारण करके हू अर कर्मके उदयकूं अरोक समझ करि कैसैं कायरता धारो हो अर बंदीगृहमें घोररोगवेदना

भोगते केतेक मरैं हैं तथा तिर्यंचमें घोररोगकी वेदना अर रोगी हुवा निर्जनवनमैं पडना कर्दममैं फसना तावडामैं शीतमैं पड्या रहना पड्याकूं अनेक जीव काटि काटि खावना इत्यादिक घोरवेदना संसारमैं भोगिये है संसार तो दुखहीका भर्‍या है ऐसा कौन रोग है जो संसारमें अनेकवार नाहीं भोग्या तातैं रोगमें जिनधर्म ही शरण है जिनेंद्रका वचनहीकूं जन्ममरण जरारोगके नाश करनेवाला जानहु। अन्य औषधि इलाज साताकर्मके सहायतैं असाताकूं मंद होते उपकार करैं हैं असाताका प्रबलउदयमैं समस्त उपायनिकूं निष्फल जानि अशुभ कर्मके नाशका कारण परमसमताभाव ही धारण करना श्रेष्ठ है ऐसैं रोगजनित आर्तध्यानके जीतनेकी भावना कही।

अब निदान नामक चतुर्थ आर्तध्यानका स्वरूप वर्णन करैं हैं—जो देवनिके भोगनिकी वांछा करना तथा अपछरानिका नृत्यादिक देखनेकी वांछा करना अपना सौभाग्य चाहना अद्भुतरूप चाहना अखंड ऐश्वर्य संयुक्तराज्य विभूतिकी वांछा करना सुंदर महल मकान रमनेकूं चाहना रूपवती स्त्रीनिका कोमल सुकुमार अंगको स्पर्श चाहना शय्या आसन आभरण वस्त्र सुगंधमिष्टवांछित भोजन चाहना नानारस सहित क्रीडाविहार चाहना वैरीनिका तिरस्कार वैरीनिका मरण चाहना अपने वांछित विभूति चाहना समस्त जगतके मध्य अपनी उच्चता चाहना अपनी आज्ञावारैं तिनका विजय चाहना तिरस्कार चाहना मदका पुष्टकरनेवाली समस्त पंडितनिकूं तिरस्कार करनेवाली विद्या चाहना राजानिकूं अपने आधीन चाहना आजीविकाकी वृद्धि चाहना परके कुटंबका संपदाका नाश चाहना अपने कुटंबकी वृद्धि धनका लाभ चाहना अपना दीर्घकाल जीवित चाहना अपना वचनकी सिद्धिका चाहना अपना कपटझूठमैं गोप्यता चाहना अन्य जीवनिका आपतैं न्यूनता चाहना आपकी समस्तमैं मध्य उच्चता चाहना समस्त भोगनिकी वांछा अपना निरोगपना अपने अद्भुतरूप संपदा आज्ञाकारी पुत्र चतुर सेवक इत्यादिककी जो आगामी वांछा करना सो निदान आर्तध्यान है। संसारपरिभ्रमणका कारण पुण्यका नाश करने-

वाला जानि कदाचित निदान मति करो जातैं वांछा तो पापका बंध है। भोगनिकी अभिलाषा अर अपना अभिमानकी पुष्टता चाहना है सो अपना संचयकीया पुण्यका नाश करै है जातैं निर्वांछक परिणामहीतैं पुण्यबंध होय है। जातैं अपनी उच्चताकी वांछा अर विषयनिका लाभ तीव्रकषायी पर्यायबुद्धीविना कौन करै अर ये विषय हैं ते अर अभिमान हैं ते केतेदिन रहैगा अनंतानंतपुरुष पृथ्वीमैं संपदावान बलवान रूपवान विद्यावान प्रलयकूं प्राप्त होयगये यहकाल अचानक ग्रसैगा एतेकाल भोग कहा कीया ये भोग अतृप्तिताके करनेवाले हैं दुर्गति लेजानेवाले हैं चाहकीयें कदाचित प्राप्त हू नाहीं होय हैं असंख्यातजीव चाहकी दाहके मारे बलैं हैं मरण निकट आजाय तहांहू चाह ही उपजै है चाहकरि जगत बलै है जगतजीवनिकै ऐसी तृष्णा है जो त्रैलोक्यका राज्यसैं भी तृप्तिता नाहीं आवै तो देखो कौनकौनके समस्तलोकका राज्य आवैगा या खाकसमान अचेतन धनसंपदा है याकरि आत्माके कहा साध्य है। लोकमैं संपदा परिग्रह अभिमान महा दुःखदायी है अपनी अविनाशीक ज्ञानकी संपदा सुखसंपदा स्वाधीनताकूं प्राप्त होनेका यत्न करो संतोषसमान सुख नाहीं संतोषसमान तप नाहीं मिलै विषयनिमैं संतोषधारकरि वांछारहित तिष्ठै हैं तिनकै बडा तप है कर्मकी निर्जरा करै है अर वांछा करै हैं तिनकूं कहा मिलै है अनंतानंतजीव विषयकषायनिकी प्राप्तिकूं तरसते तरसते मरि दुर्गति चले जाय हैं तातैं जो जिनेंद्रधर्म तुम्हारे हृदयमैं सत्यार्थ रच्या है सो गईवस्तुकूं चिंतवन मति करो अर आगामीकी वांछा मति करो अर वर्तमानकालमैं जो कर्मका शुभअशुभ रस उदय आया ताकूं रागद्वेषरहित हुवा भोगो जो यह शुभअशुभका संयोग है सो हमारा स्वभाव नाहीं कर्मका उदय है ऐसा निश्चयकरि आगामी वांछाका अभावकरि निदाननाम आर्तध्यानकूं जीतो ऐसैं च्यारप्रकार आर्तध्यानका स्वरूप कह्या। याका उपजना छट्ठे गुणस्थानपर्यंत है निदान नाम आर्तध्यान पंचमगुणस्थानपर्यंत ही होय है निदान छट्ठा गुणस्थानमैं नाहीं होय है यो आर्तध्यान कृष्ण नील कापोत तीन जो अशुभलेश्या तिनके बलकरि उपजे

है पापरूप अग्निके बधावनेकूं ईंधनसमान है यो आर्तध्यान अनादिकालका अशुभसंस्कारतैं बिनायत्न ही उपजै है याका फल अनंतदुःखनिकर व्याप्त तिर्यंचगतिमैं परिभ्रमण है क्षायोपशमिकभाव है याका अंतर्मुहूर्तकाल है जाका हृदयमैं आर्तध्यान होय है ताका बाह्यशरीर ऊपरि ऐसे चिह्न होय हैं-शोक शंका भय प्रमाद कलह चिंता भ्रम भ्रांति उन्माद बारंबार निद्रा अंगमैं जडता श्रम मूर्छा इत्यादि चिह्न प्रकटैं हैं ऐसैं आर्तध्यानका स्वरूप कह्या।

अब आगै च्यारप्रकारका रौद्रध्यान त्यागनेयोग्य है तिनका स्वरूप दिखावैं हैं-हिंसानंद, मृषानंद, स्तेयानंद, परिग्रहानंद ये च्यारप्रकारके रौद्रध्यान हैं तिनमैं प्रथम हिंसानंदका ऐसा स्वरूप जानना जो प्राणीनिका समूहका आपकरि वा अन्यकरि घात होते जो हर्षका उपजना सो हिंसानंद रौद्रध्यान है जाकै हिंसाके कारणविषयनिमैं अनुराग होय जलयंत्र बन्धावनेमैं तलाब बावडी कूवा नहरि नदी नाले खुदावनेमैं अनुराग होय तथा वन कटनेमैं बागबगीचा लगनेमैं सडक खुदनेमैं बांधबंधनेमैं अनुराग होय तथा ग्रामदग्ध करनेमैं गृहदग्ध होनेमैं पर्वत कटनेमैं अनुराग तथा युद्ध होनेमैं परधनके विध्वंश होनेमैं दारूके ख्याल छूटनेमैं धाडामैं लूटिमैं अनुराग तथा जलचर स्थलचर नभचरानिकी शिकार करनेमैं जीवनिके मारनेमैं जीवनिके पकडनेमैं बंदीगृह देनेमैं अनुराग सो समस्त हिंसानंद रौद्रध्यान है रौद्रध्यानीका निरंतर निर्दयस्वभाव होय है अर क्रोधस्वभावकरि प्रज्वलित रहै है मदकरि उद्धत पापबुद्धि पापमैं प्रवीणतायुक्त है परलोककी नास्ति धर्मअधर्मकी नास्ति माननेवाला है रौद्रध्यानीके पापकर्ममैं महानिपुणता करि अनेक बुद्धि अगाऊ खडी हाजरी दे है अर पापके उपदेशमैं बडी निपुणता है अर नास्तिकमतके स्थापनमैं बडी निपुणता अर हिंसाके कार्यमैं रागकी अधिकता निर्दयनिकी संगतिमैं निरंतर बसना सो समस्त हिंसानंद है। बहुरि जिनतैं अपना विषयकषाय पुष्ट नाहीं होय तिनमैं ऐसा चिंतवन करै-इनका घात कौन उपायकरि होय इनके मारनेमैं कौनकै अनुराग है इनकूं मूलतैं विध्वंस करनेमैं कौनके निपु-

णता है वा ये केतेकदिननिमैं कैसैं मारे जांयगे ये मारेजांयगे तदि ब्राह्मणनिकूं मनोवांछित भोजन कराऊंगा तथा देवतानिका पूजन आराधना करूंगा तथा वैरीनिका नाशके अर्थि धनदेय जाप करावना दुर्गापाठ करावना तथा अपने मस्तकडाढीका क्षौर नाहीं कराय केश बधावना इत्यादिक परिणामनिमैं संक्लेश धारना सो समस्त हिंसानंद है तथा जलके स्थलके विकलत्रय आकाशचारी जीवनिके मारनेमैं बालदेवनेमैं बांधनेमैं छेदनेमैं जाकै बडा यत्न तथा जीवनिके नख नेत्र चाम उपाडनेमैं जीवनिके लडावनेमैं बडा अनुराग जाकै होय ताकै हिंसानंद है याकी जीत याकी हार याका तिरस्कार याका मरण याकै धनका नाश याकै स्त्रीपुत्रका मरण वियोग होहू ऐसा चिंतवन तथा इनके श्रवणकरनेमैं देखनेमैं स्मरणमैं अनुराग सो हिंसानंद है। बहुरि ऐसा विकल्प करै है जो कहा करूं मेरी शक्ति नाहीं कोऊ जबर मेरा सहाई नाहीं वो कौनसा दिन उदयकारी आवै जो नाना त्रास देय मेरा पूर्वला शत्रूनिकूं मारूं वा जो मेरा सामर्थ्य इहां नाहीं होसी तो परलोकतांई मारस्यूं तथा परका निरंतर अपकार चाहै अर परके विघ्न आजाय हानि वियोग अपमान होजाय तदि बडाहर्ष मानना सो समस्त हिंसानंद नाम रौद्रध्यान है ऐसैं अनेकप्रकारके हिंसाके विकल्प करना सो हिंसानंद है। बहुरि हिंसानंदके ये वाह्यचिह्न हैं जो हिंसाके उपकरण खडग छुरी कटारी इत्यादिक शस्त्र ग्रहण करना शस्त्रनितैं मारने विदारनेके दावघात चिंतवन करना मारनेकी कलामैं निपुणता रखना हिंसकजीवनिका पालना हिंसक चीता कूकरा शिकरा (बाज) इत्यादिकजीवनिकूं निकट राखना सो सब हिंसानंदके वाह्यचिह्न हैं।

अब मृषानन्द नाम रौद्रध्यानका दूसराभेद ऐसा जानना—जिनका मन असत्यकी कल्पना करनेमैं निपुण होय अर ऐसा चिंतवन करै तथा ऐसा कोऊ जाल खडा करै जो लोकनिको बसकरि धनग्रहण करै वा ऐसा विद्याका लाभ दिखावै वा रसायणका लाभ दिखावै वा मन्त्रका व्यंतरनिका तथा इंद्रजालकी विद्याका ऐसा चमत्कार दिखावै जो ये लोक अपने आधीन होजांय आपाभूलि हमारे आ-

धीन होजांय तदि मेरी वचनकला सफल है तथा पापी परलोकका भयरहित होय अपना पाण्डितपणाके बलतैं कल्पितशास्त्र बणाय जगतकूं विपरीतधर्म दिखावना हिंसादिक आरम्भमैं यज्ञादिकमैं धर्म बतावना रागी द्वेषीदेवतानितैं वांछितकार्यकी सिद्धि बतावना देवतानिकूं मांसभक्षी मद्यपानी बतावना देवतानिके बकरा भैंसा इत्यादिक जीव मारि चढावनेकरि वांछितकार्यसिद्धि होय वैरीनिका विध्वंश होय राज्यादिकनिकी लक्ष्मी दृढ होय इत्यादिक खोटे शास्त्र रचना परिग्रही आरम्भीनिकूं पापमैं प्रवर्तन करावना अर देवतानिके प्रसन्नकरनेवालेनिकूं मोक्षमार्गी बतावना इत्यादिक बहुत खोटे धर्मशास्त्र रचना तथा रागबधानेवाली कामके पुष्टकरनेवाली तथा राजकथा भोजनकथा स्त्रीकथा देशकथा करनेमैं श्रवणमैं आनन्द मानना परके झूंठे सांचे दोष कहनेमैं अपनी बडाई करनेमैं आनन्द मानना सो मृषानन्द है तथा असत्यका सामर्थ्य झूठेनिकूं सांचे दिखाना सांचेनिकूं झूठे दिखाना सदोषानिकूं निर्दोष कहना निर्दोषनिकूं दोषसहित कहना तथा ऐसा विचार जो ये लोक मूर्ख हैं ज्ञानविचाररहित हैं इनकूं वचनकी प्रवीणतातैं अनर्थकार्यनिमैं प्रवर्तन कराय भ्रष्ट करदेस्यूं धनसंपदा राखि लेस्यूं यामैं संशय नाहीं इत्यादिक अनेक असत्यका संकल्प करना सो नरकगतिका कारण मृषानन्द नामा दूजा रौद्रध्यान जानना।

अब तीजा चौर्यानंद नाम रौद्रध्यानका ऐसा स्वरूप जानना जो चोरीका उपदेशमैं तत्परपणा तथा चोरीकरनेकी कलामैं निपुणपणा सो चौर्यानन्द है तथा जो परधन हरनेकेअर्थि रात्रिदिन चिंतवन करना अर चोरीकरि धन ल्याय बडा हर्ष मानना तथा अन्य कोऊ चोरीकरि धनउपार्जन किया होय ताकूं देखि विचारै जो देखो याके एता धन हाथि लगिगया मेरे परका धन कैसे हाथ आवै कौन उपाय करैं कौनका सहाय लेवैं कैसे धिजावैं कोऊ ऐसा पुण्य कब उदय आवै जो कोऊ गिऱ्या पड्या गड्या भूल्या धन हमारे हाथ लगिजाय अन्य कोऊ चोरीकरि मोकूं सौंपिजाय वा चोरका माल हमारे अल्पमोलमैं आ जाय तथा बहुतमोलके रत्न सुवर्णादिक मोकूं भूलिचूकि वेचि जाय सो बडालाभ है अथवा

कोई अज्ञान तथा बालक मोकूं बहुतमोलकी, वस्तु दे जाय ऐसा चिंतवन करना सो चौर्यानन्द है वा ये रक्षक मरजांय वा धनका धनी मरजाय तो धन हमारे राहिजाय ऐसा चिंतवन स्तेयानन्द है। अथवा कोऊ बलवानका सैन्याका सहाय लेयकैं वा बहुतप्रकार उपायकरकैं इहां बहुतकालका संचय किया धन ग्रहण करूं वा कोई मायाचारकरि वचनकलाकरि पुरुषार्थकरि प्राणनिका संकल्पकरि तथा इनकूं मारकरि याका धन ग्रहणकरूं तादि मेरा पुरुषार्थ सफल है इत्यादिक चौर्यानन्द रौद्रध्यान है सो नरकगतिका कारण है।

अब परिग्रहानंद रौद्रध्यानका स्वरूप कहै हैं—जो बहुतपरिग्रहका बधावनेके अर्थि अर बहुत आरंभके अर्थि जो चिंतवन करिये सो परिग्रहानंद रौद्रध्यान है। जो विषयनिमैं राग तथा अभिमानके वशि हुवा विचार करै जो ऐसा महल मकान रहनेकूं हमारै बनिजाय वा कोऊ हमारा भाग्य फलजाय तो नाना चित्रशाला सुवर्णके खंभ सांकलमैं हींडनेके हिंडोले वा नाना ऋतुके केई महल वा कोट कांगुरे गढ तोप बडे दरवाजे ऐसे सुंदर बणाऊं जो मेरे आंगणकी विभूति देखि लोकनिके आश्चर्य उपजे तथा अनेकबाग लगाऊं बागनिमैं अनेकमहल तथा जलके जंत्र फंवारे चादरि नदीनिका धोरा कुण्ड बावडी कूप द्रह नाना जलक्रीडाके स्थान कामक्रीडाके भोजनकरनेके नाव्यगृहनिके स्थान वणैं तादि मेरे मनोवांछित सफल है नानाऋतुके फल फूल हमारे आगैं नजर करैं तथा मेरे महलमकानमैं सुवर्णमय रूपामय वस्त्रमय ऐसी सामग्री अन्य मनुष्यनिके नाहीं देखिये ऐसी प्राप्ति होय तादि मैं धन्य हूं अथवा मेरे शरीरका अद्भुतरूप देखनेकूं हजारा स्त्रियां पुरुष अति अभिलाषा करैं तथा अपने नखस्यूं लेय शिखपर्यंत हीरानिके आभरणनिका जोड पन्नाके माणिक्यके इंद्रनीलमणिके मोतीनिके बहुमूल्य आभरणनिका चाहना अर इस संपदानै भूषित करनेवाले महान कोमल बहुमूल्य वस्त्रानिका चाहना नानाप्रकारके सुवर्णमय रत्नमय रूपामय उपकरण नानाप्रकारकी वांछा करना तथा कोमल सुकुमारांगी रूपलावण्य

करि देवांगनानिकूं जीतनेवाली शीलवती प्रियहितवचन सहित प्रेमकी भरी स्त्रीनिका संगमचाहना आज्ञाकारी शूरवीर धनवान विद्यावान विनयवान यशस्वी ऐसे पुत्रका चाहना अपने मन समान वांछित कार्यके साधनेवाले महाचतुरतायुक्त प्रवीण स्वामिभक्त ऐसे सेवकनिका चाहना समस्तलोकनितैं अधिक ऐश्वर्य परिवार विभूति होनेका चिंतवनकरि आनन्द मानना तथा आपके जैसैं जैसैं धनसंपदा बधै ताका आनन्द मानना सो परिग्रहानंद है। अथवा अपने गृहमैं सुवर्णका कांशपीतललोहका तामाका पाषाणका काष्ठका चीनीका काचका माटीका कागदका वस्त्रका जो २ कोऊ परिग्रह बधै कोऊ दे जाय वा किसीका रहिजाय वा धनकरि खरीदहोय आ जाय तिसपरिग्रहकूं देख वा चिंतवनकरि हर्षका बधावना आनंदमानना परिग्रह बधनेतैं आपकूं ऊंचा मानना सो समस्त परिग्रहानंद रौद्रध्यान है। तथा ऐसा चिंतवन करै जो कोऊकी जमीनजायगां मेरे आ जाय वा इसकी जीविका मेरे आजाय तथा याकै आगैं कोऊ कार्यकरनेलायक नाहीं है जो यो मरणकरिजाय तो मेराही याकी जीविकामैं वा संपदामैं अधिकार हो जाय तथा याकै बालक पुत्र असमर्थस्त्रीनिका तिरस्कार करि मैं एकाकी निष्कंटक संपदा भोगूं ऐसी अभिलाषा करना परिग्रहानंद है। तथा परके राज्यसंपदा धन जमीन जायगां तथा आजीविका तथा सुंदरपरिग्रह सुंदरस्त्री आभरण हस्ती घोटकादिक जवरीतैं खोसलेनेकी बुद्धिका शरीरका तथा सहाईनिका तथा कपटझूंठउपाय पुरुषार्थ इत्यादिक बल पावनेका अपने बडाआनन्द मानना सो समस्त परिग्रहानन्द रौद्रध्यान है यो रौद्रध्यान अनेक वार नरकमैं प्राप्त करनेवाला तथा अनन्तबार तिर्यंचनिके घोरदुःखनिका तथा अनेक कुमानुषनिके भवनिमैं घोरदारिद्र घोररोगका उपजावनेवाला जानि याका दूरहीतैं त्याग करो। यो रौद्रध्यान कृष्णलेश्याका बलसहित है पञ्चमगुणस्थानपर्यंत होय है परंतु होय सम्यग्दृष्टीअव्रतीके तथा श्रावकव्रतके धारक गृहस्थानिके नरकादिकका कारण रौद्र नाहीं होय है। कोऊकालमैं ऐसा होय है जो अपना पुत्रपुत्रीका विवाह करनेका तथा अपना मकान रहनेका बनावना तथा न्यायमार्गतैं

जीविकामैं लाभ होनेका कार्यनिका चिंतवनमैं हू हिंसा होय है इनकूं पापका कारण खोटा जानि आत्मनिंदा करै है तो हू अपना आरंभ्याकार्यमैं कदाचित् किंचित् हर्ष होय ही है अपने न्यायमार्गका प्रामाणीकपरिग्रह प्राप्त भये हर्ष होय ही है तथा अपनाधनकूं चोरादिक नाहीं हरण करिसकै तातैं अपनी रक्षा वास्ते झूठकपट करतो हू अन्य जीवनिका प्राण धनादिक हरनेमैं प्रवृत्ति नाहीं करै है अपनी रक्षाके अर्थ कपटकी आडी ढाल करै है अन्यका घातके अर्थि कपटझूठकी तरवार नाहीं करै है तातैं श्रावकके नरकादिक कुगतिका कारण ऐसा रौद्रध्यानका भाव नाहीं होय है । रौद्रध्यानीके ये बाह्यलक्षण हैं स्वभावहीतैं क्रूरता परकूं कठोरता दंड देना निर्दयपना अति कपटीपना समस्तके दोष ग्रहण करना इत्यादिक भाव होय हैं अर बाह्य रक्तनेत्र करना भृकुटी चढावना भयानक आकृति वचनमैं दुष्टता इत्यादिक बाह्य चिह्न हैं क्षयोप-शमभाव हैं अंतरमुहूर्तकाल है पाछैं अन्य अन्य हो जाय हैं । ऐसैं चारप्रकार आर्तध्यान च्यारप्रकार रौद्रध्यानकूं त्यागैं तदि धर्मध्यान होय । इनकूं त्यागे विना धर्मध्यानकी वासना अनादितैं भई नाहीं तातैं धर्मका अर्थीनिकूं दोऊ दुर्ध्यानका स्वरूप समझि अपने आत्मामैं ऐसे आर्तरौद्रध्यानके ऐसे भाव कदा-चित मत होने दो ।

अब धर्मध्यानका स्वरूप वर्णन करिये है—इहां यो धर्मध्यान है सो कोऊ सम्यग्दृष्टीके होय है कोऊ विरला महान् पुरुष रागद्वेषमोहरूप पाशीकूं छेदि परमउद्यमी हुवा बडा यत्नतैं धर्मध्यानकूं कदाचित प्राप्त होय है जैसैं सूता बैठा चालता खानपान करता विषयनिकूं भोगता कषायनिमैं प्रवर्ततेके हू विना यत्न ही आर्तरौद्रध्यान होय है तैसैं धर्मध्यान नाहीं होय है धर्मध्यानका अर्थी केतेक स्थान परिणामकूं बिगाडनेवाले हैं तिनका परिहार करै है जातैं स्थानके निमित्ततैं परिणाम शुभ अशुभ होय हैं तातैं परिणामकूं बिगाडनेवाले स्थानका दूरहीतैं परिहार करो खोटे स्थानमैं परिणाम खोटे हो जांय हैं जो दुष्ट हिंसक पापकर्म करनेवाले पापकर्मतैं जीविका करनेवाले तीव्रकषायी नास्तिकमती धर्मके द्रोही जहां

तिष्ठते होंय तहां परिणाम क्लेशित हो जांय तथा जहां दुष्ट राजा होय राजाके दुष्ट मंत्री होय पाखंडी मिथ्यादृष्टी भेषधारीनिका अधिकार होय तहां धर्मध्यानमें परिणाम नाहीं लगैं हैं । बहुरि जहां प्रजा ऊपरि परचक्रादिकका उपद्रव होय दुर्भिक्ष मारी इत्यादिकरि प्रजा उपद्रवसहित होय बहुरि जहां वेश्यानिका संचार होय व्यभिचारिणीनिका संकेत स्थान होय आचरणभ्रष्ट भेषधारीनिका स्थान होय जहां रसकर्म रसायणके कर्म प्रवर्तते होंय मारण उच्चाटन विद्याके साधक होंय जहां हिंसादिक पापकर्मके उपदेशक कामशास्त्र तथा युद्धशास्त्र कपटीधूर्तनिकी प्ररूपी खोटीकथाके शास्त्रकी प्ररूपणा करते होंय तथा जहां द्यूतक्रीडा करनेवाले मद्यपान करनेवाले व्यभिचारी भांड डूंम चारण भाटनिकरि युक्त होंय जहां चांडाल धीवर शिकारी वा कषायी इत्यादिक दुष्टनिका संचार होय तथा दुष्ट तपस्विनी तथा स्त्रीनिका परिचार होय नपुंसकनिका समागम होय दीन याचक रोगी विकल अंगके धारक आंधे लूले बाधिर पीडाके शब्द करनेवाले होंय जहां शिकार करनेवाले हिंसकजीव कलह कामके धारक पशुमनुष्यादिक तिष्ठते होंय जहां जीवनितैं बिल बंबई कंटक तृण विषम पाषाण टीकरे हाड मांस रुधिर मल मूत्र पंचेंन्द्रियजीवानिके कलेवर कर्दमादिकरि दूषित स्थान होंय जहां दुर्गंध आवता होय कूकरा बिलाव श्याल कागला घूघु इत्यादिक दुष्टजीव होंय और हू शुभपरिणामके बिगाडनेवाले ध्यानकूं नष्ट करनेवाले स्थान दूरहीतैं त्यागने योग्य हैं । जातैं खोटेस्थानके योगतैं अवश्य परिणाम बिगडे हैं तातैं जो शुभध्यानके इच्छक होंय ते खोटे स्थाननिमैं स्वप्नविषै हू वास मतिकरो याहीतैं धर्मध्यानके अर्थ सुंदर मनकूं प्यारा शीतऊष्ण आताप वर्षा अतिपवनका बाधारहित डांस मांछर अन्य विकलत्रयादिकनिकी बाधा रहित शुद्ध भूमि तथा शिलातल तथा काष्ठका फलक होय तिनऊपरि तिष्ठकरि शून्यगृह पुरातनबाग वनके जिनमंदिर वा अपनेगृहमैं निराकुल एकांतस्थान बाधारहित होय रागद्वेषादिके उपजावनेकरि रहित कोलाहल शब्दरहित नृत्यगीतवादित्रादिरहित होय कलह विसंवादादिरहित हिंसारहित स्थानमैं धर्म-

ध्यानके इच्छुक होय निश्चल तिष्ठो। जातैं धर्मध्यानमैं स्थानकी शुद्धता आसनकी दृढता प्रधानकारण है जाका आसन दोयप्रहर हू दृढ नाहीं होय ताके सेवा कृशी वाणिज्यादिक ही बिगडिजाय तो धर्मध्यान आसनकी दृढताबिना कैसैं बनै। बहुरि तीन जे उत्तमसंहनन तिनके धारकानिकै ही ध्यानमैं दृढता होय है जिनका वज्रमयसंहनन है अर महाबल पराक्रमके धारक हैं अर जे देवमनुष्यानिके घोरउपद्रव उपसर्गतैं चलायमान नाहीं होय जाका आसन मन दृढ होय सो तो जैसा स्थान वा आसन होय तिसहीतैं ध्यान करिसकै है अर जे हीनसंहननके धारक हैं तिनकूं तो स्थानकी शुद्धता अर आसनकी शुद्धता अवश्य देखि धर्मध्यानमैं प्रवर्तन करना श्रेष्ठ है। जिनका चित्त संसारदेहभोगानितैं विरक्त होय चित्तमैं विक्षिप्तता नाहीं होय संशयरहित आत्मज्ञानी अध्यात्मरसमैं भीजि निश्चल होय ताकै स्थानका हू नियम नाहीं है। जे चारित्रज्ञानसंयुक्त हैं जितेन्द्रिय हैं ते अनेक अवस्थातैं ध्यानकी सिद्धिकूं प्राप्त भये हैं धर्मध्यानीकै ऐसा चिंतवन होय है अहो बडा अनर्थ है जो मैं अनंतगुणनिका धारक हूं संसाररूप वनमैं अनादिकालका कर्मरूपी बैरीनिकरि समस्तपनातैं ठिग्या गया हूं अहो मैं अज्ञानभावतैं कर्मके उदयतैं भये रागद्वेषमोह तिनकूं अपना स्वरूप जानि घोरदुःखरूपसंसारमैं पारिभ्रमण कीया अब मेरे कोऊ कर्मके उपशमतैं परम उपकारक जिनेंद्रका परमागमके उपदेशके लाभतैं रागरूप ज्वर नष्ट भया अर मोहनिद्राके दूर होनेतैं स्वभावका अर परभावका जाणपणाका लाभ भया है अब इस अवसरमैं शुद्धध्यानरूप खडगकरि जो कर्म नाश करल्यूं तो स्वाधीनताकूं पाय दुःखनिका पात्र नाहीं होऊं। जो अज्ञानरूप अंधकारकूं आत्मज्ञानरूप सूर्यके उद्योतकरि अब हू दूर नाहीं करूं तो अन्य कौनपर्यायमैं दूर करूंगा। समस्तजगतके देखनेका एक अद्वितीयनेत्र मेरा आत्मा है ताकूं हू अब अविद्यारूप पिशाचके प्रेरे विषयकषाय मुदित करैं हैं ये इंद्रियविषय अर कषाय मोकूं हितअहितके अवलोकनरहित करनेवाले हैं मैं इन ठगानिके वशी भूतहुवा भूलिगया हूं अहो ये प्राप्त होते रमणीक अर अंतमैं अति नीरस ऐसे पंचेन्द्रियानिके विषय-

निर्तें परम ज्योतिस्वरूप जगतमें महान् परमात्मस्वरूप आत्मा हू ठिग्यो गयो है। मैं अर परमात्मा दोऊं ज्ञानलोचन हैं अर परमात्मस्वरूपकी प्राप्तिकेअर्थि मेरे स्वरूपके जाननेकी इच्छा करूं परमात्माके तो आत्मगुण प्रकट है अर मेरे कर्मनिकरि दबि रहे हैं हमारे अर परमात्माके गुणनिकरि भेद नाहीं है शक्ति व्यक्तिकृत भेद है अर ये कर्मजनित दाह हैं ते जेतेक मैं ज्ञानसमुद्रमैं गरक नाहीं होहूं तितने मेरे संताप दुःख करैं हैं। बहुरि नारक तिर्यंग मनुष्य देव ये कर्मके उदयजनितपर्याय मेरा स्वरूप नाहीं हैं मैं सिद्ध-स्वरूप निर्विकार स्वाधीनसुखरूप हूं मैं अनंतज्ञान अनन्तदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखरूप हूं सो अब मोहरूप विषके वृक्षकूं नाहीं उपाडूं कहा ? अब मैं मेरा सामर्थ्यकूं ग्रहणकरि अपना स्वरूपमैं अचलहोय सकलवांछारहित हुवो मोहरूप विषवृक्षकूं उपाडस्यूं अब मोकूं मेरास्वरूप ही निश्चयकरना जातैं मेरेमांहि फँसीहुई अनादिकी मोहरूप पासि है ताके छेदनेका उपाय करूं जो अपना स्वरूपकूं ही नाहीं जानै सो परमात्माकूं कैसें जानै तातैं ज्ञानीनिकूं प्रथम अपना स्वरूपहीका निश्चय करना योग्य है जो अपना स्वरूपकूं ही नाहीं जानैगा ताकी अपने स्वरूपमैं स्थिति कैसें होयगी अर अनादिका पुद्गलमैं एक होय रह्या है ऐसा आत्माकूं भिन्न कैसें करूंगा अर देहतैं आत्माका भेदविज्ञान हुवाविना आत्माका लाभ कैसें होयगा आत्माका लाभविना अनंतज्ञानादिक आत्मगुणनिका जानना हू नाहीं होय तदि आत्मलाभकी कहा कथा ? तातैं मोक्षाभिलाषीनिकूं समस्तपुद्गलकी पर्यायनिकरि भिन्न एक आत्मस्वरूपका ही निश्चय करना श्रेष्ठ है। इहां आत्मा तीनप्रकारकरि तिष्ठै है बहिरात्मा, अंतरात्मा, परमात्मा। तिनमैं जाकै बाह्य शरीरादिक पुद्गलकी पर्यायनिमैं आत्मबुद्धि है सो बहिरात्मा है जाकी चेतना मोहनिद्राकरि अस्त होयरही पर्यायहीकूं अपना स्वरूप जानै है इंद्रियद्वारनिकरि निरंतर प्रवर्तन करै है अपना स्वरूपकी सत्यार्थपहिचान जाकै नाहीं है देहहीकूं आत्मा मानै है देवपर्यायमैं आपकूं देव, नरकपर्यायमैं आपकूं नारकी, तिर्यंचपर्यायमैं आपकूं तिर्यंच, मनुष्यपर्यायमैं आपकूं मनुष्य जाणि पर्यायके व्यवहारमैं तन्मय

होय रह्या है पर्याय तो कर्मकृत पुद्गलमय प्रत्यक्ष ज्ञानरूपआत्मातैं भिन्न दीखे है तो हू कर्मजनित उदयमैं आपाधारि पर्यायमैं तन्मय हो रह्या है मैं गोरा हूं, मैं सांवला हूं, मैं अन्यवर्ण हूं, मैं राजा हूं, मैं सेवक हूं, मैं बलवान हूं, मैं निर्बल हूं, मैं ब्राह्मण हूं, मैं क्षत्री हूं, मैं वैश्य हूं, मैं शूद्र हूं, मैं मारनेवाला हूं, जिवावनेवाला हूं, धनाढ्य हूं, दातार हूं, त्यागी हूं, गृहस्थी हूं, मुनि हूं, तपस्वी हूं, दीन हूं, अनाथ हूं, समर्थ हूं, असमर्थ हूं, कर्ता हूं, अकर्ता हूं, रूपवान हूं, कुरूप हूं, स्त्री हूं, पुरुष हूं, नपुंसक हूं, पण्डित हूं, मूर्ख हूं, इत्यादिक कर्मके उदयजनित परपुद्गलनिकी विनाशीकपर्यायनिमैं आत्मबुद्धि जाकै होय सो बहिरात्मा मिथ्यादृष्टी है। जो शरीरमैं आत्मबुद्धि है सो इहां हू शरीरका संबंधी जो स्त्री पुत्र मित्र शत्रु इत्यादिक तिनमैं रागद्वेषमोहक्लेशादि उपजाय आर्तरौद्रपरिणामतैं मरण कराय संसारमैं अनंतकाल जन्ममरण करावै है तथा पुद्गलकी पर्यायमैं आत्मबुद्धि है सो पुद्गलमैं जडरूप एकेंद्रियनिमैं अनंतकाल भ्रमण करावै है तातैं अब बहिरात्मबुद्धिकूं छांडि अंतरात्मपना अवलंबनकरि परमात्मपना पावनेमैं यत्न करो। जे जे या जगतमैं रूप देखनेमैं आवैं हैं ते ते समस्त अपने आत्माके स्वभावतैं भिन्न हैं परद्रव्य हैं जड हैं अचेतन हैं मैं ज्ञानस्वरूप हूं इंद्रियनिके ग्रहणमैं नाहीं आऊं अपना अनुभवकरि साक्षात प्रत्यक्ष हूं अब कौनसूं वचनालाप करूं अर अन्यजननिकरि मैं समझावनेयोग्य हूं तथा अन्यजननिकूं मैं संबोधन करूं ऐसा विकल्प हू भ्रम है जातैं अपने अर परके आत्माकूं जानेविना कौनकूं समझावै अर कौन समझै जातैं मैं तो समस्त विकल्परहित ज्ञाता हूं जो अपना स्वरूपकूं जो आपरूप ग्रहण करै अर आपतैं अन्यकूं आत्मरूप ग्रहण नाहीं करै ऐसा निर्विकल्प विज्ञानमय केवल स्वसंवेदनगोचर हूं अंतरात्मा विचारै है जैसैं सांकलमैं सर्पकी बुद्धि हो जाय तदि भयभीत होय मरचा इत्यादिक भयतैं भागवो पडवो इत्यादिक क्रियातैं हू भ्रम होय है तैसैं हमारे हू पूर्वकालमैं शरीरादिकमैं अपना आत्माकी बुद्धि करि शरीरादिकका नाशमैं अपना नाश जाणि बहुत विपरीतक्रियामैं प्रवर्तन भया अर जैसैं सांकलमैं

सर्पका भ्रम नष्टभया सांकलकूं सांकल जानै तदि भ्रमरूप क्रियाका अभाव होय तैसैं मेरे शरीरमैं आत्मा-का भ्रम नष्ट होतैं अब आचरणमैं हू भ्रमका अभाव भया जाका ज्ञानविना मैं सूतो अर जाका ज्ञान होते जाग्रत भया सो चैतन्यमय मैं हूं इस ज्ञानज्योतिमय अपने स्वरूपकूं देखता जो मैं ताकै रागद्वेष नष्ट हुवा है तिसकारणकरि मेरे कोऊ वैरी नाहीं अर कोऊ प्रिय नाहीं । वैरी मित्र तो ज्ञानमैं रागद्वेष-विकारतैं दीखैं हैं जो मेरा ज्ञायक आत्मस्वरूपकूं नाहीं जानै सो मेरे बैरी अर प्रिय नाहीं हैं अर जो साक्षात् मेरा स्वरूप देख्या सो हू मेरा वैरी अर मित्र नाहीं है अब मेरा स्वरूपका ज्ञाता जो मैं ताकूं पूर्वलापूर्वला समस्त आचारण स्वप्नवत् इंद्रजालवत भासै है अहो ज्ञानीपुरुषनिका अलौकिकवृत्तांत कौन वर्णन करि-सकै। जहां अज्ञानी प्रवर्तनकरि कर्मका बंध करै हैं तहां ही ज्ञानी प्रवर्तनकरि कर्मबंधनितैं छूटै हैं जग-तके पदार्थ तो समस्त जैसे हैं तैसे ही हैं और प्रकार नाहीं परन्तु अज्ञानी विपर्ययरूप संकल्पकरि रागी द्वेषी मोही हुवा घोरबन्धकूं प्राप्त होय है ज्ञानी पदार्थनिके सत्यस्वरूप जानि परमसाम्य वीतरागी हुवा प्रवर्तता निर्जरा करै है अर जो मैं पूर्वं दुःखनिकरि व्याप्त संसारवनमैं चिरकाल क्लेशित भया हूं सो केवल अपना अर परका भेदविज्ञानविना भया हूं सो समस्तपदार्थनिका प्रकाश करनेवाला भेदविज्ञान रूपदीपककूं प्रज्वालित होते हू यो मूढलोक संसाररूप कर्दममैं क्यों डूबे हैं यो अपना स्वरूप है सो आप-के मांही आप करकैं प्रकट अनुभवमैं आवै है याकूं छांडि अन्यमैं आपके जाननेकूं वृथा खेद करै है अज्ञानीके इहां जो जो परवस्तु प्रीतिके अर्थि हैं सो समस्त आपदाका स्थान है अर जो आनंदका स्थान है तातैं भय करै हैं अज्ञानभावका कोऊ ऐसा ही प्रभाव है। बंधका कारण तो पदार्थके ज्ञानमैं भ्रम है अर भ्रमरहित भाव है सो मोक्षका कारण है जो बंध है सो परका संबंधतैं है अर परद्रव्यतैं भेदका अभ्यास करि मोक्ष है जो इंद्रियनिकूं विषयनितैं रोकि क्षणमात्र हू अपने आत्मामैं रोकै है सो परमेष्ठीका स्वरू-पकूं स्मरण करै है जो सिद्धात्मा है सो मैं हूं सो परमेश्वर है यातैं मेरारूपतैं अन्य मेरे उपासना करनेयोग्य

नाहीं अर मैं कोऊ अन्यके उपासना करनेयोग्य नाहीं जो भ्रमरहित होय देहतैं भिन्न आत्माकूं नाहीं जानै है सो तीव्रतप करतो हू कर्मके बंधनतैं नाहीं छूटै है अर जो भेदविज्ञानरूप अमृतकरि आनंदित है सो बहुततप करतो हू शरीरतैं उपजे क्लेशनिकरि खेदनै नाहीं प्राप्त होय है जाको चित्त रागद्वेषादिक मलरहित निर्मल है सो ही अपने स्वरूपकूं सम्यक् जानै है अन्य कोऊ हेतुकरि जानै नाहीं अपने चित्तकूं विकल्परहित करना है सो ही परमतत्त्व है अर अनेक विकल्पनिकरि उपद्रित करना है सो अनर्थ है तातैं सम्यक्तत्त्वकी सिद्धिके अर्थि चित्तकूं विकल्परहित करो जो अज्ञानकरि उपद्रितचित्त है सो अपनेस्वरूपतैं छूटिजाय है अर भेदविज्ञान वासितचित्त है सो परमात्मतत्त्वकूं साक्षात् देखै है जो उत्तमपुरुषनिका मन मोहकर्मके वशतैं कदाचित रागादिककरि तिरस्कृत हो जाय तो आत्मतत्त्वके चिंतवनमैं युक्तकरि रागादिकनिको तिरस्कार करै अज्ञानीआत्मा जिस कायमैं रागी होरह्या है तिसकायतैं अपनीबुद्धिके बलकरि उलटा फेऱ्यो हुवो चिदानंदमय निजस्वरूपमैं युक्त कियो हुवो कायमैं प्रीति शीघ्र छांडै है जो अपना आत्मज्ञानके भ्रमतैं उपज्या दुःख सो आत्मज्ञानकरि ही नष्ट होय है आत्मज्ञानरहित संसारका जीवके परिभ्रमण बहुत तपकरि नाहीं छेद्या जाय है बहिरात्मा है सो आपके रूपआयुबलधनादिकनिकी संपदा बांछै है अर अंतरात्मा है सो आयुबलावित्तादिकनितैं अपना छूटना चाहै है अज्ञानी है सो पुद्गलादिकमैं आपकी बुद्धिकरि आपने बांधै है अर अंतरात्मा है सो अपने स्वरूपमैं आत्मबुद्धिकरि बंधनेते छूटै है अज्ञानी है सो तीनलिंग जे पुरुष स्त्री नपुंसकरूप शरीरकूं आत्मा जानै अर सम्यग्ज्ञानी है सो आपकूं तीनलिंगका संगरहित जानै है बहुत कालतैं अभ्यास किया अर आछीतरह निर्णय किया हू विज्ञान अनादिकालका विभ्रमतैं शीघ्र ही छूटि जाय है जो यो मोकूं दीखै है सो अचेतन है अर जो चेतन है सो मेरे देखनेमैं आवै नाहीं तातैं अचेतनपदार्थनिमैं रागभावकरना वृथा है यातैं मोकूं स्वानुभव प्रत्यक्ष आत्माहीका आश्रय करना। अज्ञानी है सो बाह्यपदार्थनिमैं त्याग ग्रहण करै है अर ज्ञानी

है सो अंतरंगमें रागादिक परभावनिकूं त्याग आत्मभावकूं ग्रहण करै है ज्ञानी है सो वचनतैं अर कायतैं भिन्न करके आत्माको अभ्यास मनकरिकैं करै है अर अन्यान्विषयभोगनिका कर्म है सो कोऊ वचनतैं करै है कोऊ कायतैं करै है सांसारिककार्यनिमैं मन नाहीं लगावै है अज्ञानीकै तो विश्वासको अर आनंदको स्थान यो जगत है अर ज्ञानीके इस जगतमें कहां विश्वास अर कहां आनंद अपना स्वभावमैं ही आनंद अर विश्वास है ज्ञानी है सो तो आत्मज्ञानाविना अन्यकार्यकूं हृदयमें धारण नाहीं करै है अर लौकिककार्यके वशतैं जो कुछ करै है सो अनादररूप भया वचनतैं करै वा कायतैं करै मन नाहीं लगावै है जो ये इंद्रियविषयनिका रूप है ते मेरा रूपतैं विलक्षण है मेरा रूप तो आनंदकरि परिपूर्ण ज्ञान ज्योतिमय है ज्ञानीके तो जाकरि भ्रांति दूरिहोय अपनीस्थिति अपने आत्मरूपमें हो जाय सो ही जाननेयोग्य है सो ही कहने योग्य है सो ही श्रवण करनेयोग्य है सो ही चिंतवन करने योग्य है इन इंद्रियनिके विषयनिमैं इस आत्माका हित कोऊप्रकार हू नाहीं है तो हू बहिरात्मा अज्ञानी इन विषयनिमैं ही प्रीति करै है जो कहा हुवा हू आत्मतत्त्वकूं नाहीं कह्या की ज्यों अंगीकार करै है तिस अज्ञानीप्रति कहनेका उद्यम वृथा है अज्ञानीके आत्माका प्रकाश नाहीं तातैं परद्रव्यनिमैं ही संतुष्ट होय रह्या है अर ज्ञानी है सो बहिरवस्तुनिमैं भ्रमरहित अपना स्वरूपमें ही संतुष्ट है जितने मनवचनकायकूं अपना स्वरूप मानै है तितने संसार परिभ्रमण ही है देहादिकनितैं भेदविज्ञानतैं संसारका अभाव है वस्त्र जीर्ण होय वा रक्त होय वा श्वेत होय वा दृढ होय तो आत्मा जीर्णरक्तादिरूप नाहीं होय तैसैं ही देहकूं जीर्णादिक होते आत्मा जीर्णादिक नाहीं होय है अज्ञानी है सो प्रत्यक्ष इस शरीरकूं बिछुरता मिलता परमाणूनिका समूहकी रचनारूप देखै है तो हू याकूं आत्मा जानै है अनादिका ऐसा भ्रम है ये दृढ स्थूल दीर्घ शीर्ण जीर्ण हलका भारी ए धर्म पुद्गलके हैं इनि पुद्गलनिके धर्मकरि संबंधकूं नाहीं प्राप्त होता आत्मा है सो केवलज्ञानस्वरूप है इहां संसारमें मनुष्यनिका संसर्ग होय तदि वचनकी प्रवृत्ति

होय वचन प्रवर्तें तदि मन चलायमान होय मन चलै तदि भ्रम होय ये उत्तरोत्तर कारण हैं तातैं ज्ञानीजन लोकनिका संसर्ग ही छांडै है अज्ञानी बहिरात्मा हैं सो अपना निवास नगरमैं ग्राममैं पर्वत वनादिकनिमैं जानै है अर ज्ञानी तो अंतरात्मा है सो अपना निवास अपने मांहि ही भ्रमरहित मानै है । जो शरीरमैं आत्माकूं जानना सो देह धारण करनेकी परिपाटीका कारण है अर अपने स्वरूपमैं आपका जानना है सो अन्य शरीरके छूटनेका कारण है यो आत्मा आप ही अपनै मोक्ष करै है अर आप ही विपर्ययरूप भया अपनै संसार करै है तातैं अपना गुरु हू आप ही है अर बैरी हू आप ही है अन्य तो बाह्य निमित्तमात्र है अंतरात्मा जो है सो आत्मातैं कायकूं भिन्न जानि अर कायतैं आत्माकूं भिन्न जानि इस कायकूं मलका भरया वस्त्र ज्यों निःशंक त्यागै है शरीरतैं भिन्न आत्माकूं जानै है श्रवण करै है मुखतैं कहै तो हू भेदविज्ञानके अभ्यासमैं लीन नाहीं होय तितने शरीरकी ममतातैं नाहीं छूटै है अपने आत्माकूं शरीरतैं भिन्न ऐसैं भावो जैसैं फेरि देहकरि संगम स्वप्नहूमैं नाहीं होय स्वप्नमैं हू देहतैं भिन्न ही आत्माका अनुभव होय पुरुषनिके जो व्रतनिका अर अव्रतका व्यवहार है सो शुभ अशुभ बंधका कारण है अर मोक्ष है सो बंधका अभावरूप है यातैं व्रतादिक क्रिया हैं ते हू पूर्व अवस्थामैं है प्रथम असंयम भावकूं त्यागि संयममैं लीन होना अर जब शुद्धात्मभाव परमवीतरागरूपमैं अवस्थिति हो जाय तब संयमभाव कहां रहै ये जाति अर मुनिश्रावकका लिंग ये भी दोऊ शरीरके आश्रय वर्तें हैं अर शरीरात्मक ही संसार है तातैं ज्ञानी है सो जाति अर लिंगमैं हू अपना आपा त्यागै है जाके देहमैं आत्मबुद्धि है सो पुरुष जागतो हू पढतो हू संसारतैं नाहीं छूटै है अर अपने आत्मामैं आपका निश्चय जाके है सो शयन करता वा असावधान हू संसारतैं छूटै है ज्ञानी आपकूं सिद्धस्वरूप आराधना करि सिद्धपनाकूं प्राप्त होय है जैसैं बत्ती आप दीपकसूं युक्त होय आप दीपक हो जाय है यो आत्मा है सो आपका आत्माकी आराधनाकरि परमात्मा हो जाय है जैसैं वृक्ष आपतैं घसि-

करि अग्नि होय है तैसें आत्मा हू परमात्मा भावतैं जुडिकर सिद्ध हो जाय है। जैसें काऊ स्वप्नमैं अपना नाश देख्या तो आपका नाश नाहीं भया तैसें जागते हू अपना नाश भ्रमतैं मानै है किंतु आत्माका नाश नाहीं है पर्याय उपजी सो विनस्यां विना रहै नाहीं आत्मस्वरूपका अनुभव विना शरीरकूं आत्मारूप अनुभव करता अनेक शास्त्र पढता हू संसारतैं नाहीं छूटैगा अर अपने स्वरूपमैं अपना अनुभव करता शास्त्रका अभ्यासरहित हू छूटि जायगा अर भो ज्ञानी हो जो यो सुख अवस्थाकरि भया हुवा ज्ञान दुख आयां छूटि जायगा तातैं दुःख अवस्थामैं रोगपरीसहादिक अवस्थामैं हू आत्मज्ञानका दृढ अभ्यास करो इत्यादि चिंतवनके प्रभावतैं बाह्य शरीरादिकनिमैं आत्मबुद्धिरूप जो बहिरात्मबुद्धि ताहि छांडि अर अपने अंतर कहिये आत्मरूपमैं आपारूप अंतरात्मा होय करि परमात्मारूप होनेमैं यत्न करो। परमात्मा दोयप्रकार है जो घातियाकर्मनिका नाश करि अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंत सुखरूप स्वाधीन अठारह दोषनिकरिरहित इंद्रधरणेंद्रनरेंद्रांकरि वंद्यमान अनेक अतिशयांकरि सहित सकल जीवनिका उपकारक दिव्यध्वनिकरि सहित देवाधिदेव परमऔदारिक देहमैं तिष्ठता अरहंत देव हैं ते सकल परमात्मा है कल नाम शरीरका है जो देहसहित आयुका अंत तांई परमोपदेश देता ऐसा अरहंत हैं सो सकलपरमात्मा हैं अरि जो अष्टकर्मरहित होय सिद्धपरमेष्ठी भये तिनके कल जो देह सो नष्ट होगया यातैं सिद्ध भगवान विकलपरमात्मा हैं सो परमात्मपद इस मनुष्यपर्यायमैं रत्नत्रयका आराधनकरि कोऊके प्राप्त होय है याका बीज बहिरात्मपना छांडि अंतरात्मपनामैं लीन होना है बहिरात्माके मिथ्यात्वगुणस्थान ही होय है अर अंतरात्मा जो है सो चतुर्थगुणस्थानकूं आदि लेय बारमागुणस्थानपर्यंत है अर परमात्मा जो है सो देहसहित तो तेरवें चौदहवें गुणस्थानमैं जानना अर देहरहितपरमात्मा सिद्धभगवान हैं सो गुणस्थानकरिरहित हैं जातैं गुणस्थान तो मोह अर योगकी अपेक्षातैं हैं भगवान सिद्धनिके मोहकर्म भी नाहीं अर वचनकायके योगनिका हू अभाव भया तातैं गुणस्थानसंज्ञा रहित हैं।

अब धर्मध्यानका वर्णन करें हैं— यो धर्मध्यान है सो सम्यग्दृष्टीविना मिथ्यादृष्टीके नाहीं होय है ऐसा नियम है तातैं चतुर्थगुणस्थानकूं आदि लेय सप्तमगुणस्थान पर्यंत धर्मध्यान होय है सो धर्मध्यान परमागममें च्यारप्रकार कह्या है आज्ञाविचय, अपायविचय, विपाकविचय, संस्थानविचय । तिनमें आज्ञाविचय धर्मध्यानका संक्षेप कहिये है—जो भगवान सर्वज्ञ वीतरागका कह्या आगमकी प्रमाणतातैं पदार्थनिका निश्चय करना सो आज्ञाविचय धर्मध्यान है। जहां उपदेशदाताका अभाव होय अर कर्मके उदयतैं अपनी बुद्धि मंद होय अर पदार्थनिकै सूक्ष्मपना होय अर हेतु दृष्टांतका अभाव होय तहां सर्वज्ञ करि कह्या आगमकूं प्रमाणकरि ऐसा चिंतवन करै जो यो ही तत्त्व है या प्रकार ही यो तत्त्व है और नाहीं अन्य प्रकार नाहीं सर्वज्ञ वीतराग जिन अन्यथा कहनेवाला नाहीं ऐसैं गहनपदार्थनिमैं श्रद्धानमैं अर्थका निश्चय करना सो आज्ञाविचय है अथवा सम्यग्दर्शनकरि परिणामनिकी विशुद्धिताका धारक अर अपने अर परमतके पदार्थनिका निर्णयका जाननेवाला ऐसा सम्यग्ज्ञानी सर्वज्ञकरि प्ररूपे सूक्ष्मपदार्थनितैं ग्रहणकरि तथा पंचअस्तिकायादिपदार्थनिमैं निश्चयकरि अन्य भव्यनिकूं शिक्षा करै तथा कथनका व्याख्यानका मार्गमैं श्रुतज्ञानका सामर्थ्यतैं अपने सिद्धांतमैं विरोध नाहीं आवै तैसैं अर अन्य एकांतीनिके प्ररूपे मिथ्याप्रमाण हेतु नय तिनका खण्डन करनेमैं समर्थ ऐसे अनेकांतका ग्रहण करनेमैं समर्थ होंय श्रोतानिकूं पदार्थका स्वरूप ग्रहणकरानेमैं समर्थनकरि श्रुतका व्याख्यान करै अर तिनका समर्थनिके अर्थ तर्कनयप्रमाणकूं युक्त करनेमैं तत्पर ऐसा चिंतवन करनेमैं लीनपना सो सर्वज्ञकी आज्ञा प्रकाशनका अर्थीपनातैं आज्ञाविचय धर्मध्यान है। तथा जो जिनसिद्धांतमैं प्रसिद्ध ऐसा सर्वज्ञकी आज्ञातैं वस्तुका स्वरूप चिंतवन करै सो आज्ञाविचय है जगतमैं जो वस्तु है सो अनंतगुण अनंतपर्यायस्वरूप है याहीतैं उत्पादव्ययध्रौव्यरूप है त्रिकालवर्ती है यातैं नित्य है ऐसी वस्तुका कहनेवाला कोऊ आगमका सूक्ष्म-वचन अपनी स्थूलबुद्धिकरि ग्रहणमैं नाहीं आवै अर जो हेतु करि बाधाकूं भी नाहीं प्राप्त होय तहां

सर्वज्ञकी आज्ञा ऐसें है सर्वज्ञ वीतरागाजिन अन्यथा नाहीं कहैं ऐसें प्रमाणरूप चिंतवन सो आज्ञाविचय है अथवा जिनेंद्रका परमआगमका पठन श्रवण चिंतवन अनुभवन सो समस्त आज्ञाविचय है जो श्रुतसर्वज्ञवीतरागकरि कह्या हुवा जाकै श्रवणतैं रागी द्वेषी शस्त्रधारी देवनिकी उपासनातैं पराङ्मुखता होय जाय अर परिग्रहधारी विषयकषायनिके धारक अनेकभेषधारीनिमैं गुरुबुद्धि पूज्यपनाकी बुद्धि नाहीं उपजै अर हिंसामैं प्रवृत्तिरूप धर्म कदाचित नाहीं दीखै अर जाके श्रवणपठनचिंतवनतैं विषयकषाय देहपरिग्रहादिकनितैं परांमुखता उपजि आवै दयाधर्मकी वृद्धि होय जाय तिस आगमका शब्द अर्थका चिंतवन करना सो आज्ञाविचय धर्मध्यान है आगम श्रीसर्वज्ञवीतरागका उपदेश है रत्नत्रयस्वरूपकूं पुष्ट करनेवाला है अनादिनिधन समस्तजीवनिके परम शरण है अनन्तधर्मके धारक पदार्थनिका प्रकाश करनेवाला है प्रमाणनयनिक्षेपनिकरि पदार्थनिका स्पष्ट उद्योत करनेवाला है स्याद्वादरूप याका जीव है याका शरण नाहीं पाय करकैं जीव अनादिकालतैं चतुर्गतिमैं परिभ्रमण किया है सप्ततत्त्व नवपदार्थ पंचास्तिकायका स्वरूप प्रकाशनेवाला है द्रव्यगुणपर्यायनिका स्वरूप दिखावनेवाला है गुणस्थान मार्गणास्थान योनि कुलकोडिनि करि जीवका प्ररूपण करनेवाला है आस्रवबंधउदयउदीरणासत्ताका प्ररूपण करनेवाला है समस्त लोकअलोकका प्रकाशक है अनेकशब्दनिकी रचनारूप अंगप्रकीर्णकादिक रत्ननिकरि रत्नाकरवत गम्भीर है एकांतविद्याके मदकरि उन्मत्त मिथ्यादृष्टीनिका मद नष्ट करनेवाला है मिथ्यात्वरूप अन्धकारके दूरकरनेकूं सूर्य है रागरूप सर्पका विष उतारनेकूं गारुडीविद्या है समस्त अंतरंगपापमल धोवनेकूं पवित्रतीर्थ है समस्तवस्तुकी परीक्षा करनेकूं समर्थ है योगीश्वरनिका तीजा नेत्र है संसारका संतापरूप ज्वरका घातक है इंद्र अहमिंद्रगणधर मुनींद्रनिकरि सेवित ज्ञानीकूं परम अक्षयनिधान आशावांछाभयका नाश करनेवाला आत्मीकसुखरूप अमृतके प्रकटकरनेकूं चन्द्रमाका उदय है अक्षय अविनाशी जीवका निजधन है मुक्तिकूं प्रयाणकरतेके प्रधान गमनका ढोल है विनय न्याय इंद्र-

पद मननशील संयम संतोषादि गुणनिकूं उत्पन्न करनेवाला है ऐसा परमागमका चिंतवन ध्यान अनुभवन सो आज्ञाविचय धर्मध्यान है ऐसें आज्ञाविचय धर्मध्यान कह्या ।

अब अपायविचय धर्मध्यानका ऐसा स्वरूप जानना—तहां एक तो मिथ्यात्वका संयोगतैं सन्मार्गका अपाय कहिये नाशका चिंतवन करना जो—सन्मार्ग कहिये मोक्षमार्ग ताका अभाव करनेवाला मिथ्यात्व ही है ऐसा चिंतवन सो अपायविचय है। मिथ्यादर्शनकरि जिनके ज्ञाननेत्र ढकि रहे हैं तिनका आचारविनयादिक समस्तकार्य हैं ते संसारके वधावनेके अर्थि हैं क्योंकि मिथ्यादृष्टिके अंधेकी ज्यों विपरीतज्ञानकी बहुलता है यातैं जैसैं बलवान हू जन्मका अंधा भलामार्गतैं छूटे हुये सत्यमार्गका उपदेश करनेवालाकरि नाहीं चलाया हुवा नीचा ऊंचा पर्वत अर विषमपाषाण अर कठोर ठूंठ झाड खाडा नाला कंटकनिकरि व्याप्त विषम पृथ्वीमैं पड्या हुवा हलनचलनाक्रिया करता हू उपदेशदाताविना मार्गमैं गमन करनेकूं नाहीं समर्थ होय है तैसैं सर्वज्ञका कह्या मार्गतैं परान्मुख जीव मोक्षका अर्थी है तो हू सन्मार्गका ज्ञानबिना संसारमैं अतिदूर ही परिभ्रमण करै है ऐसैं सन्मार्गका नाश चिंतवन करना अपायविचय धर्मध्यान है अथवा कुमार्गके प्रवर्तनका अभाव तथा नाशका चिंतवन करना सो हू अपायविचय है। अहो ये विपरीत ज्ञानश्रद्धानके धारक मिथ्यादृष्टी कुवादीनिकरि उपदेश्या कुमार्गतैं ये प्राणी कैसैं उबरैं अथवा इन प्राणीनिके कुदेव कुधर्म कुगुरुनिका सेवानितैं कैसैं निरालापणों होय ऐसा चिंतवनकरना सो अपायविचय है अथवा पापका कारणमैं कायका प्रवर्तन वचनका प्रवर्तन मनमैं भावनाका अभावका चिंतवन सो अपायविचय धर्मध्यान है अथवा जामैं उपायसहित कर्मनिका नाश चिंतवन करिये ताकूं ज्ञानीजन अपायविचय कहैं हैं श्रीसर्वज्ञ भगवान करि कह्या जो रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग ताहि नाहीं प्राप्त होय करकैं संसाररूपवनविषैं प्राणी चिरकालतैं नष्ट हो रहे हैं जिनेश्वरका उपदेशरूप जिहाज नाहीं प्राप्त होय करकैं बापडे प्राणी संसारसमुद्रविषैं निरंतर डावक डूबा होता दुःखनिकूं भोगे है महान कष्टरूप

अग्नि करि दग्ध होता संसाररूप बनविषै भ्रमण करता हू मैं सम्यग्ज्ञानरूप समुद्रका तटकूं प्राप्त भया हूं जो अब सम्यग्ज्ञानका शिखरकूं प्राप्त होय यातैं चिगूंगा तो संसाररूप अंधकूपके मध्य मेरा पतन कौन रोकैगा। अनादिके भ्रमतैं उपजे मिथ्यात्व अविरत कषायादिक कर्मबंधके कारण मेरे दुर्निवार हैं यद्यपि मैं तो शुद्ध हूं दर्शनज्ञानमय निर्मलनेत्रका धारक सिद्धस्वरूप हूं तो हू तिन कर्मनिकरि खंडन किया मैं चिरकालतैं संसाररूप कर्दममैं खेदखिन्न भया हूं एकतरफ तो नानाप्रकार कर्मका सैन्य है अर एकतरफ मैं एकाकी आत्मा हूं ऐसा वैरीनिका संकटमैं मोकूं सावधान प्रमादरहित तिष्ठनो योग्य है जो अब प्रमादी होयरहूंगा तो कर्म मेरा ज्ञानदर्शनस्वरूपकूं घातकरि एकेन्द्रियादिरूप पर्यायमैं जड अचेतन करिदेगा अब प्रबलध्यानरूप अग्निकरि मेरे आत्मातैं कर्ममूलकूं नष्टकरि पाषाणमैंतैं सुवर्णकी ज्यों शुद्ध कब करूंगा मेरे प्राप्त होनेयोग्य सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्ररूप मेरा स्वभाव ही है अन्य परभाव पर ही हैं स्वयमेव मोतैं भिन्न हैं मैं कौन स्वरूप हूं मेरे कौन कारणतैं कर्मका आस्रव होय है कैसैं कर्म बंधे है कैसैं कर्म निर्जरैगा अर मुक्ति तो कहा है अर मुक्तिका स्वरूप कहा है अर मुक्तिका बाधारहित निराकुलतालक्षण ऐसा स्वभावतैं उपज्या-सुख मेरे कौन उपाय करि होय मेरा स्वरूपका ज्ञान होतैं सकल भुवनत्रय का ज्ञान होय है जातैं सर्वज्ञ सर्वदर्शी मेरा स्वभाव ही कर्ममलकूं दूर भये मेरेमांहि प्रगट होय है जेते जेते काल मेरे बाह्यवस्तुनिकरि संबन्ध है तितने तितने काल मेरी स्थिति मेरा स्वभावमैं स्वप्नमैं भी दुर्घट है यातैं बाह्यपदार्थनितैं भेदविज्ञानतैं भिन्नहोनेरूप ही उपाय करूं ऐसैं अपायविचय नाम धर्मध्यानका दूजा भेद वर्णन किया।

अब विपाकविचय नाम तीजाभेदकूं निरूपण करै हैं—ज्ञानावरणादिक कर्मका उदयकूं आपतैं भिन्न चिंतवन करै सो विपाकविचय है। भावार्थ—अनादिकालतैं नरकादिगतिमैं उपजि नारकीतिर्यंचमनुष्यादिपर्याय धरना इंद्रियनिका पावना शरीरादि धारणकरना रूपरसगंधस्पर्शादि पावना संहनन बल

पराक्रम राज्यसंपदा विभव परिवारादिक समस्तकर्मका उदयजनित है मेरास्वरूपतैं भिन्न हैं मेरा स्वरूप ज्ञाता द्रष्टा है अविनाशी अखंड है कर्मके उदयजनित परिणतितैं भिन्न है जेते संयोग हैं ते कर्मजनित हैं यातैं कर्मके उदयजनित परिणतितैं आपकूं जुदा अवलोकनिकरि कर्मके उदयजनित रागद्वेष जीवन-मरणादिकतैं हू आपकूं भिन्न अवलोकन करै सो विपाकविचय है। पूर्वकालमैं बंध किया कर्म द्रव्यक्षेत्र-कालभावका संयोग पाय विचित्र रस दे है। कर्मकी मूलप्रकृति आठ हैं अर आठका एकसौ अडतालीस भेद हैं अर एकएकका असंख्यातलोकमात्र भेद है सो समस्त एकेंद्रियादिक जीवनिके भिन्नभिन्न उदय देखिये है। सामान्यकरि जीव ज्ञान स्वभाव है स्वपरका जाननेवाला है असंख्यातप्रदेशी है कर्मजनित देहप्रमाण है सुखदुःखका भोक्ता है तथापि कर्मका बंध अपने भिन्नभिन्न परिणामनिकरि अनेकप्रकार बंध किया है तिस कर्मका रस हू उदयकालमैं जुदाजुदा देखिये है समस्तजीवनिके प्रकृतिरूप लाभ अलाभ सुख दुःख रागद्वेष पुण्य पाप संयोग वियोग आयु काय बुद्धि बल पराक्रम इच्छा इत्यादिक एकएक जीवके कर्मके उदयके अनुसार भिन्न २ देखिये है अन्य किसीतैं नाहीं मिलै है यातैं नानाजीवनिके नाना प्रकार उदयकी जाति देखि रागद्वेषके वश मति होहू। जैसैं वनमैं विहारकरता पुरुष वनमैं लाखां कोड्यां वृक्षबेलि छोटेबडे अनेक देखै है कौनकौनमैं रागद्वेष करै कोऊ ऊंचा वृक्ष है कोऊ नीचा है कोऊ गंभीर छायासहित है कोऊ अल्प है कोऊ फूलफलसहित है कोऊ निष्फल है कोऊ कडवा है कोऊ मीठा है कोऊ खाटा है कोऊ चिरपरा है कोऊ जहरका भर्या है कोऊ अमृतसमान है कोऊ कांटाकरि सहित कोऊ रहित कोऊ वक्र है कोऊ सरल है कोऊ जीर्ण है कोऊ नवीन है कोऊ सुगंध कोऊ दुर्गंध इत्यादिक समस्त रचना पूर्वकर्मके संस्कारतैं एकेन्द्रियजीवनिके भी उदय देखिये है काटिये है फाडिये है कतरिये है छीलिये है रांधिये है छौंकिये है बालिये है चाबिये है रगाडिये है घमीटिये है चींथिये है गालिये है सुखाईये है पीसिये है बांधिये है मोडिये है इत्यादिक एकेन्द्रिय वनस्पतीमैं हू कर्मका उदयकी नानाजाति देखि

अपने वा अन्यके पुण्यपापका उदयकी नानातरंग देखि साम्यभाव धारण करो हर्ष विषाद मति करो कर्मका उदयकी लहरि समय समयमैं भिन्न २ है जो भगवान सर्वज्ञवीतराग जिस क्षेत्रमैं जिस कालमैं जिसप्रकार देख्या है सो ही प्रमाण है तैसैं ही होयगी कर्मके उदयकूं अपना स्वभावतैं भिन्न जानो नाना-जीव पुद्गलनिकी रचना तथा संयोग वियोगादिक देखि रागद्वेषरहित परमसाम्यभाव धारण करो ज्यूं पूर्वबंध कियाकर्मकी निर्जरा हो जाय नवीनबंध नाहीं होय ऐसे तपके प्रकरणमैं विपाकविचय नाम धर्मध्यानका वर्णन किया।

अब संस्थानविचय चौथा धर्मध्यानका वर्णन करिये है–यो अनंतानंत सर्वतरफ आकाश है सो आपके आधार आप है तिसके अत्यंतमध्यविषै जीवपुद्गलधर्मअधर्मकाल जेता आकाशका क्षेत्रमैं तिष्ठै सो लोक है सो लोक किसीका किया नाहीं है अनादिनिधन है अब इहां कोई अन्यवादी कहै है जो–इस जगत्का कर्त्ता कोऊ ईश्वर है जातैं कर्ताविना कोऊ ही सतरूप वस्तु होय नाहीं ताकूं पूछिये जो–किया बिना कोऊ ही सतरूप वस्तु नाहीं है, तो ईश्वरकूं कौननै किया ईश्वर हू सतवस्तु है ईश्वरकूं करनेवाला हू कह्या चाहिये अर जो कहोगे याका कर्ता हू अन्य है तो वाकूं कौन किया वाका अन्य कर्ता कहोगे तो वाकूं कौन किया ऐसैं अनवस्था नाम दोष आवैगा। बहुरि और पूछैं हैं जो–पहली सृष्टिरचना नाहीं थी तो सृष्टिबाहिर ईश्वर कहां था अर कौन स्थानमैं ईश्वर तिष्टि जगतकूं रच्या अर ईश्वर आप जगत-बिना निराधार बहुतकालतैं विद्यमान आप तो कहां तिष्टै था अर इस जगतकूं रचि कहां स्थापन किया अर इसजगतकूं किसीके आधार कहोगे तो वे कौनके आधार है ? उसका अन्य आधार कहोगे तो उस अन्यका कौन आधार है ऐसैं अनवस्था दोष आवैगा। अर जो या कहोगे निराधारमैं अनादिनि-धनमैं तर्क नाहीं तो सृष्टिका हू कर्तापणा कहना बणै नाहीं जैनी तो समस्तपदार्थनिकूं ही अनादिनिधन कहैं हैं जाके मतमें सृष्टिका कर्ता मानैं हैं ताकै ही दोष आवैगा। बहुरि जगत नानारूप है ताकूं एकरूप

ईश्वर करनेमैं कैसैं समर्थ होय ? बहुरि ईश्वर शरीररहित अमूर्तीक है अमूर्तीकतैं शरीरादिक मूर्तीक कैसैं उपजाया जाय अमूर्तीकतैं मूर्तीक कैसैं होय ? बहुरि उपकरणसामग्रीविना लोककूं काहेतैं रच्या जातैं उपादानकारण विना कोऊ वस्तुकी रचना बनती नाहीं देखिये है जैसैं मृत्तिकाविना समर्थ हू कुंभकार घटकी रचना करनेकूं समर्थ नाहीं होय है अर जो या कहोगे ईश्वर है सो पहली सामग्री बणाय पाछैं जगतकूं रच्या तो पूछिये उस सामग्रीकूं काहेतैं रची ऐसैं अनवस्थादोष आवैगा अर जो या कहोगे जो जगतके रचनेयोग्य सामग्री तो स्वभावहीतैं विना किये सिद्ध है तो लोकहूकूं स्वतःसिद्ध माननेका प्रसंग आवैगा। बहुरि जो या कहोगे—ईश्वर समर्थ है सो सामग्री विना ही इच्छामात्रकरि लोककूं रचै है तो ऐसे इच्छामात्र युक्तिकरि रहित तुम्हारा कहना कौनकै श्रद्धान करनेयोग्य होय इच्छामात्र करनेकी और हू कल्पना करो तो तुमकूं कौन रोकै है इच्छामात्र कह्या तहां विचार काहेका रह्या बहुरि ईश्वर कृतार्थ है कृतकृत्य है कि अकृतकृत्य है जो कृतार्थ है जाकै करनेयोग्य कोऊ कार्य बाकी नाहीं रह्या, तो जगतके रचनेकी इच्छा ईश्वरके कैसैं उपजी अर जो अकृतार्थ कहोगे तो जो अकृतार्थ होगया सो समस्त जगतके रचनेकूं कुंभकारकी ज्यों समर्थ नाहीं होयगा जातैं अकृतार्थ कुंभकार एक घटकूं रचि आपकूं कृतार्थ मानो समस्त जगतका रचना तो अकृतार्थ बनैगा नाहीं तैसैं ईश्वरकूं अकृतार्थ मानो हो तो एक एक वस्तुकूं करि खेदित क्लेशित होता अनंतपदार्थनिकूं कैसैं पूर्ण करैगा तातैं हू जगतका कर्तापना ईश्वरकै नाहीं संभवै है। बहुरि ईश्वरकूं अमूर्तीक कहै हैं अर निःक्रिय कहै हैं अर सर्वव्यापी कहै हैं सो ऐसा ईश्वर जगतकूं कैसैं रचै जातैं अमूर्तीकतैं तो मूर्तीक व्यापी समस्त जगतमैं उत्पन्न होय नाहीं अर जो निःक्रिय कहिये क्रियारहित होय ताकै रचनेकी क्रिया कैसैं बनै। बहुरि जो व्याप रह्या ताके लोककी रचना कैसे बनै। समस्तलोकमैं अनादिहीका व्याप्त हो रह्या है। बहुरि ईश्वरकूं विक्रियारहित निर्विकारी कहै ताकै रचनेके अर्थ विकारी होना नाहीं संभवै है।

बहुरि ईश्वर सृष्टिकूं रची सो कहा फल चाहता रची ? ईश्वर तो कृतार्थ है कृतकृत्य है ताके धर्म अर्थ काम मोक्ष इन चारों पुरुषार्थनिमैं कुछ करना बाकी नाहीं रह्या तदि सृष्टिकूं रचि कहा फल चाह्या ? प्रयोजन विना तो मूर्ख हू नाहीं प्रवर्तें है अर जो या कहोगे ईश्वरकै सृष्टि रचनेमें कुछ प्रयोजन तो नाहीं विना प्रयोजन ही रचे है तो अनर्थरूप कार्य करनेका प्रसंग आया अर जो कहोगे ईश्वरके या क्रीडा है तो बडा मोहका संतान आया क्रीडा तो अज्ञानी मोही बालक करै है वा पहले दुःखित होय सो क्रीडा करि दिन व्यतीत करै अपना दुःखका भुलावनेकूं क्रीडा करै बहुरि जो ईश्वर जगतकूं रच्या तो समस्त पदार्थनिकूं उज्ज्वल सुखकारी मनोहर रूपवान ही काहेकूं नाहीं रचे जगतमैं केई दरिद्री केई रोगी केई कुरूप केई कुबुद्धी केई नीच जाति ऐसे काहेकूं रचे अर विषादिक कंटकादि मलमूत्रादिक दुर्गंधादिक काहेकूं बनाये तथा दुष्ट म्लेक्ष भील सर्पादिक चांडालादिक क्यों रचे ? जगतमें भी देखिये है जो महाबुद्धिमान चतुर होय सो बहुत सुंदर ही बनाया चाहै अपना किया कार्यकूं विगाड्या तो नाहीं चाहै यातैं ईश्वर है सो बुद्धिमान अर समर्थ अर स्वाधीन होय ग्लानिरूप भयानक दुःखदायक विडरूप रचना कैसैं करी सो कहो अर जो या कहोगे प्राणी जैसैं कर्मका उपार्जन किया तैसैं उनके शरीरादिक सकल सामग्री रची तो ईश्वरकै ईश्वरपना कहां रह्या जैसैं कोलीकूं महीन सूत दिया तब महीनवस्त्र बुनि दिया मोटा दिया तो मोटा बुनि दिया ईश्वरपना नाहीं रह्या अर और हू पूछिये है संसारमें प्राणी भले वा खोटे कर्म करैं हैं ते ईश्वरके अभिप्रायतैं ईश्वरके कराये करैं हैं कि ईश्वरके अभिप्राय विना अपनी जबरीतैं करैं हैं सो कहो ? जो ईश्वरकी इच्छातैं करैं हैं तो ईश्वर होय करके अपनी प्रजातैं खोटे कृत्य कैसैं करावे है अपना संतानकूं दुराचारी किया कोऊ चाहै नाहीं अर जो ईश्वरकी इच्छा विना ही करै है तो ईश्वरकै ईश्वरपना अर कर्तापना कहां रह्या जगत स्वयं ही कर्मादिक कार्यके कर्त्ता भये। बहुरि कहोगे जो कार्य तो होय है सो जैसा कर्म किया तैसा ही होय है परंतु ईश्वरके निमित्ततैं होय है तो ऐसे सिद्धवस्तुके विना

कारण ईश्वरका कियापना वृथा क्यों कहो हो असत्यकूं पुष्ट करना बडा अनर्थ है। बहुरि पूछैं हैं जो ईश्वर समस्त प्राणीनिमैं वात्सल्य करै है अर जगतके अनुग्रह करनेकूं जगतकूं रचै है तो समस्तसृष्टिकूं सुखमयी उपद्रवरहित रची चाहिये दुःखमय वियोगमय दरिद्रमय रंकमय कैसैं रची ऐसैं भी ईश्वरपना रह्या नाहीं अर जो कहोगे जे ईश्वरके भक्त थे तिनकूं सुखी किये दुष्टनिकूं दुःखी किये तो पूछिये है ईश्वर होय आप दुष्ट कैसैं रचे अपने भक्त ही रचने थे म्लेक्षादिक अपने द्रोहीनिकूं काहेकूं बनाये जो कहोगे ईश्वरकूं पहले ठीक नाहीं था फिर दुष्ट देख तदि तिनकूं दण्ड दिया तो ईश्वरके अज्ञानीपना प्रगट भया अज्ञानीकी कीई सृष्टि भई। बहुरि पूछैं हैं ईश्वर जगतकूं रचै है सो जगत पहले विद्यमान है ताकूं रचै है कि अत्यन्त असतकूं रचै है जो विद्यमानकूं ही रचै है तो पहलीही तो सत्रूप विद्यमान था उसकूं कहा रचैगा अर अत्यन्त असत्कूं रचै है तो आकाशका पुष्पकी रचनासमान अवस्तु ठहऱ्या। बहुरि ईश्वरकूं मुक्त कहो हो तो मुक्तकरने करावनेमैं उदासीन है वाकै सृष्टिरचनेका अभिप्राय कैसैं होय करने करावनेकी चिन्ता मुक्तकै सम्भव नाहीं अर जो ईश्वर संसारी है तो अपने समान है उसका किया समस्तजगत् कैसैं उत्पन्न होय तातैं तुम्हारा यह सृष्टिका ईश्वरकृत कहना कुछ ही नाहीं रह्या। बहुरि पहली तो जगतकूं आप रच्या अर पाछैं आप ही संहार किया ताकैं महान अधर्म भया अर जो कहोगे दैत्यादिक दुष्ट बहुत इकट्ठे भये तिनके मारनेकूं प्रलयकालमैं संहारकरै है तो दैत्यादिक दुष्ट पहली रचे ही क्यों अर पहली आपकूं ज्ञान नाहीं था जो ये दुष्ट हो जांयगे तो ईश्वरकै बडा अज्ञानीपना भया जो अपने कियेका फल नाहीं पहिचान्या अर महादुःखितपना भया जो नवीन रचना करबो करै अर चूकि बाणि जाय तदि मारता फिरै है हेरता फिरै है अर दुःखका माऱ्या आप छिपता फिरै अर दुष्टनिकूं मारनेके अर्थि हजारां उपाय सहाय भेष शस्त्रादिक सामग्रीका चिंतवन करता महाक्लेशतैं जन्म पूरा करै है ऐसे ईश्वरके तो अज्ञान रागद्वेष मोहादिक बहुत दोष दीखैं हैं तातैं मिथ्यादृष्टीनिके रचे

असत्य शास्त्रनिकरि उपज्या क्लेशकूं छांडि वीतराग सर्वज्ञका कह्या अनादिनिधन स्वतःसिद्ध लोकका स्वरूप जाणि श्रद्धान करो, ये छह द्रव्य जीव पुद्गल धर्म अधर्म आकाश काल अनादिनिधन हैं कोऊ असत्कूं सत्करनेकूं समर्थ नाहीं जातैं जो सत्वस्तु है ताका कदाचित नाश नाहीं अर असत्का उत्पाद नाहीं ये उत्पादविनाश है ते पर्यायार्थिकनयतैं कहिये है–जेते चेतन अचेतनपदार्थ हैं ते द्रव्यपना करि कदे ही नाहीं विनशै हैं नाहीं उपजै हैं समयसमय पूर्वपर्यायका नाश अर उत्तरपर्यायका उत्पाद होय रह्या है, द्रव्य ध्रौव्य है उपजै नाहीं उपजना विनशना पर्यायका एकरूप रहै नाहीं द्रव्यनिका नाश कदे नाहीं छहद्रव्यका समुदाय ही लोक है अन्यवस्तुरूप लोक नाहीं है।

अब इस संस्थानविचय धर्मध्यानविषै द्वादशभावना निरंतर चिंतवन करने योग्य है। अनित्य, अशरण, संसार, एकत्व, अन्यत्व, अशुचि, आस्रव, संवर, निर्जरा, लोक, बोधिदुर्लभ, धर्म ये द्वादश भावनाके नाम कहे इनका स्वभाव भगवान तीर्थंकर हू चिंतवनकरि संसार देहभोगनितैं विरक्त भये हैं तातैं ये भावना वैराग्यकी माता हैं समस्त जीवनिके हितकरनेवाली हैं अनेक दुःखनि करि व्याप्त संसारीजीवनिके ये भावना ही भला उत्तम शरण है। दुःखरूप अग्निकरि तप्तायमान जीवनिकूं शीतलपद्मवनका मध्यमैं निवाससमान हैं परमार्थमार्गके दिखावनेवाली हैं तत्त्वनिका निर्णय करावनेवाली हैं सम्यक्त्वकूं उपजावनेवाली हैं अशुभ ध्यानके नष्ट करनेवाली हैं इन द्वादशभावना समान इस जीवका अन्य हित नाहीं है द्वादशांगको सार है यातैं द्वादशभावना भावसहित इस संस्थान विचय धर्मध्यानमैं चिंतवन करो।

अब अनित्यभावनाका ऐसा चिंतवन है देव मनुष्य तिर्यक् ये समस्त देखतेदेखते जलका बुदबुदावत वा झागका पुंजवत विनाशीक हैं देखतेदेखते विलायमान होते चले जाय हैं अर ये समस्तऋद्धिसंपदापरिकर स्वप्नके समान हैं ऐसें विनशै हैं जैसें स्वप्नमैं देख्या फेरि नाहीं देखिये है। इस जगतमैं

वनयौवनजीवनपरिवार समस्तक्षणभंगुर हैं अर संसारीमिथ्यादृष्टी जीव इनहीकूं अपना स्वरूप अपना हित जाणि रहे हैं अपने स्वरूपकी पाहिचान होय तो परकूं अपना कैसें मानैं समस्तइंद्रियजनित सौख्य जो ये दृष्टिगोचर हैं ते इंद्रधनुषके रंगसमान देखतेदेखते विलायजाय हैं यौवनका जोश संध्याकालकी लालीसमान क्षणक्षणमैं विनशै है यातैं ये मेरा ग्राम मेरा राज्य मेरागृह मेरा धन मेराकुटुंब ऐसा विकल्प करना महामोहका प्रभाव है जे जे पदार्थ नेत्रनितैं दीखैं हैं ते ते समस्त विलायजायंगे अर इनकूं देखने जानेवाली इंद्रियां हैं ते अवश्य नष्ट होयंगी तातैं आत्माके हितमें शीघ्र ही उद्यम करो। जैसें एक नावमें अनेकदेशके अनेक जातिके मनुष्य शामिल होय बैठें हैं पाछैं तीरपर जाय नानादेशनिप्रति गमन करै हैं तैसें कुलरूप नावमैं अनेकगतिनितैं आये प्राणी शामिल आय बसें हैं पाछैं आयुपूर्ण भये अपनेअपने कर्मके अनुसार न्यारींगतिमैं जाय प्राप्त होय हैं अर जिसदेहके सबन्धतैं स्त्रीपुत्रमित्रबांधवादिकनिकूं मानि रागी होय रहे हो सो देह अग्निमैं भस्म होयगा वा माटीमें लीन होयगा तथा जीव खायगा तो विष्टा वा कृमिकलेवररूप होय एक एक परमाणु जमीन आकाशमें अनंतविभागरूप होय विखरि जांयगे फिर कहां मिलैगा तातैं इनका संबंध फिर नाहीं प्राप्त होयगा ऐसा निश्चय जानि स्त्रीपुत्रमित्रकुटुम्बादिकमैं ममताधारि धर्मविगाडना बडा अनर्थ है। बहुरि जिन पुत्र स्त्री भ्राता मित्र स्वामी सेवकादिकनिके शामिल रहि सुखस्यूं जीवन चाहो हो ते समस्त कुटुंबके लोग शरदकालके बादलेनिकी ज्यों विखरि जायंगे ये संबन्ध अवार दीखै हैं सो बना नाहीं रहैगा शीघ्र ही विखरैगा ऐसा नियम जानो। बहुरि जिस राज्यके अर्थि वा जमीनके अर्थि तथा हाट हवेली मकान तथा आजीविकाके अर्थि हिंसा असत्य कपट छलमैं प्रवृत्ति करो हो भोलानिकूं ठिगो हो जोरावर होय निर्बलनिकूं मारि खोसो हो तिन समस्त परिग्रहका संबंध तुम्हारे शीघ्र विनशैगा अल्पजीवनके निमित्त नरकातिर्यंच गतिका अनंतकालपर्यंत अनंतदुःखनिका संतान ग्रहण मति करो इनूंका स्वामीपनाका अभिमानकरि अनेक विलायगये अर

अनेक प्रत्यक्ष विनशते देखो हो यातैं अब तो ममताछांडि अन्यायका परिहारकरि अपने आत्माके कल्याण होनेके कार्यमैं प्रवर्तन करो। बंधुमित्रपुत्रकुटुंबादिकसहित वसना है सो जैसैं ग्रीषमऋतुमें चार-मार्गनिके बीच एक वृक्षकी छायामैं अनेकदेशके पथिक विश्रामलेय अपनेअपने स्थान जाय हैं तैसैं कुलरूपवृक्षकी छायामैं ठहरि कर्मके अनुकूल अनेक गतिनिमैं चलेजाय हैं। बहुरि जिनसैं अपनी प्रीति मानो हो सो हू एक मतलबके हैं नेत्रनिका रागकी ज्यों क्षणमात्रमैं प्रीतिका राग नष्ट होय है बहुरि जैसैं एक वृक्षविषैं पक्षी पूर्वैं संकेत किये विना ही आय बसैं हैं तैसैं कुटुंबके जन संकेतविना ही कर्मके वशतैं मेले होय बिखरैं हैं। ये समस्त धन संपदा आज्ञा ऐश्वर्य राज्य इंद्रियनिके विषयनिकी सामग्री देखते देखते अवश्य वियोगनै प्राप्त होयँगे योवन मध्याह्नकी छायाकी ज्यों ढलि जायगा थिर नाहीं रहैगा चन्द्रमा सूर्य ग्रह नक्षत्रादिक तो अस्त होय फिर उदय होय हैं अर हिमवसंतादिकऋतु हू जाय जाय फिर फिर आवै है परन्तु गई हुई इंद्रिययौवनआयुकायादिक फिर उलटै नाहीं आवै हैं जैसैं पर्वततैं पडती नदीकी तरंग अरोक चली जाय है तैसैं आयु क्षणक्षणमैं अरोक व्यतीत होय है अर जिसदेहके आधीन जीवना है तिस देहकूं जरजरा करती जरा समयसमय आवै है कैसीक है जरा यौवनरूप वृक्षके दग्ध करनेकूं दावाग्निसमान है सौभाग्यरूप पुष्पनिकूं ओलानिकी वृष्टि है स्त्रीनिकी प्रीतिरूपहरणीकूं व्याघ्र समान है ज्ञाननेत्रके मूंदनेकूं धूलिकी वृष्टिसमान है तपरूपकमलके वनकूं हिमानीसमान है दीनता उत्पन्न कर-नेकी माता है तिरस्कार बधावनेकूं धाई समान है उच्छाव घटावनेकूं तिरस्कार है रूपधनके चोरनेवाली बलकूं नष्ट करनेवाली जंघाबल बिगाडनेवाली आलस्य बधावनेवाली स्मृति नष्टकरनेवाली या जरा है मौतके मिलावनेकी दूती ऐसी जराके प्राप्त होते हू अपना आत्महितकूं विस्मरण होय स्थिर हो रहे हो सो बडा अनर्थ है बारम्बार मनुष्यजन्मादिक सामग्री नाहीं मिलैगी। बहुरि जेते नेत्रादिकइंद्रियनिका तेज है सो क्षणक्षणमैं नष्ट होय है समस्तसंयोग वियोगरूप जान हू इनि इंद्रियनिके विषयनिमैं रागकरि

कौन कौन नष्ट नाहीं भये यह समस्त विषय भी विलयजायगा अर इंद्रिय हू नष्ट होजायंगीं कोनके अर्थि आत्महित छांडि घोर पापरूप दुर्ध्यान करो हो ? विषयनिमें रागकरि अधिक अधिक लीन हो रहे हो ये समस्ताविषय तुमारा हृदयमें तीव्रदाह उपजाय विनशैंगे इस शरीरको रोगनिकरि निरंतर व्याप्त जानहू अर जीवनिकूं मरणकरि व्याप्त जानहू ऐश्वर्य विनाशके सन्मुख जानहू ये संयोग है तिनका नियमसूं वियोग होयगा ये समस्ताविषय हैं ते आत्माके स्वरूपकूं भुलावनेवाले हैं इनमैंराचि तीनलोक नष्ट होयगया जो विषयनिके सेवनेतैं सुख चाहना है सो जीवनके अर्थि विष पीवना है तथा शीतल होनेके अर्थि अग्निमें प्रवेश करना है तथा मिष्ट भोजनकेअर्थि जहरके वृक्षकूं सींचना है ये विषय महा मोहमदके उपजावनेवाले हैं इनूंका राग छांडि आत्माका कल्याण होनेमें यत्न करो अचानक मरण आवैगा फिर मनुष्यजन्म यो जिनेन्द्रको धर्म गयां पाछैं मिलना अनंतकालमें हू दुर्लभ है जैसैं नदीकी तरंग निरंतर चली जाय है उलटी नाहीं आवै है तैसैं आय कायरूप बल लावण्य इंद्रियशक्ति गये हुवे नाहीं बाहडैंगे अर जो ये प्यारे स्त्रीपुत्रादिक दृष्टिगोचर दीखैं हैं तिनका संयोग नाहीं बणा रहैगा स्वप्नका संयोग समान जानहु इनके अर्थि अनीति पाप छांडि शीघ्र व्रत संयमादिक धारण करो यो जगत इंद्रजालवत लोकानिके भ्रम उपजावनेवाला है इस संसारमें धन यौवन जीवन स्वजन परजनका समागममें जीव अंध होरह्या है सो धनसंपदा चक्रवर्तीनिके स्थिर नाहीं रही है सो अन्य पुन्यहीणनिकै कैसैं स्थिर रहैगी अर यौवन है सो जराकरि नष्ट होयगा जीवना मरणसहित है स्वजन परजन वियोगके सन्मुख हैं कौनमें स्थिरबुद्धि करो हो यो देह है ताकूं नित्य स्नान करावो हो सुगंध लगावो हो आभरणवस्त्रादिककरि भूषित करो हो नानाप्रकार भोजनपान करावो हो बारंबार याहीका दासपनामें काल व्यतीत करो हो शय्या आसन काम भोग निद्रा शीत उष्ण अनेक उपकारकरि याकूं पुष्ट करो हो अर याका रागतैं ऐसे अंध हो रहे जो भक्ष्यअभक्ष्य योग्यअयोग्य न्याय अन्यायका विचाररहित होय अपना धर्म बिगाडना यश विना-

शना मरण होना नरक जावना निगोदवास करना समस्त नाहीं गिणो हो सो यो शरीर जलका भरया काचा घडाकी ज्यों शीघ्र विनशैगा इस देहका उपकार कृतघ्नका उपकारकी ज्यों विपरीत फलैगा सर्प्पकूं दुग्धमिश्रीका पान करानेकी ज्यों अपने महादुःख रोग क्लेश दुर्ध्यान असंयम कुमरण नरकमैं पतनका कारण निश्चयतैं जानो इस शरीरकूं ज्यों ज्यों विषयादिककरि पुष्ट करोगे त्यों त्यों आत्माका नाश करनेमैं समर्थ होयगा एकदिन भोजन नाहीं द्योगा तो बडा दुःख देवैगा जे जे शरीरमैं रागी भये हैं ते ते संसारमैं नष्ट होय आत्मकार्य बिगाडि अनंतानंतकाल नरकनिगोदमैं भ्रमैं हैं अर जे या शरीरकूं तपसंयममैं लगाय कृश किया तिनूंनै अपना हित कीया है अर ये इंद्रियां हैं ते ज्यों ज्यों विषयनिकूं भोगैं हैं त्यों त्यों तृष्णा बधावैं हैं जैसैं अग्नि इंधनकरि तृप्ति नाहीं होय है तैसैं इंद्रियां विषयनिकरि तृप्त नाहीं होयँ हैं एक एक इंद्रियके विषयकी वांछाकरि बडे बडे चक्रवर्ती राजा भ्रष्टहोय नरक जाय पहुंचे अन्यकी कहा कहिये। इन इंद्रियनिकूं दुःखदाई पराधीन करनेवाली नरकपहुंचानेवाली जानि इंद्रियनिका राग छांडि इनकूं वश करो संसारमैं जेते निंद्यकर्म करिये है ते ते समस्त इंद्रियानिके आधीन होय करि ही करैं हैं यातैं इंद्रियरूप सर्पनिके विषतैं आत्माकी रक्षा ही करो। बहुरि या लक्ष्मी है सो हू क्षणभंगुर है या लक्ष्मी कुलीनमैं नाहीं रमै है धीरमैं शूरमैं पंडितमैं मूर्खमैं रूपवानमैं कुरूपमैं पराक्रमीमैं कायरमैं धर्मात्मामैं अधर्मीमैं पापीमैं दानीमैं कृपणमैं कहां हू नाहीं रमै है या तो पूर्वजन्ममैं पुण्य कीयो ताकी दासी है कुपात्रदानादिक कुतप करि उपजी हुई प्राणनिकूं खोटे भोगनिमैं कुमार्गमैं मदनिमैं लगाय दुर्गति पहुंचानेवाली है इस पंचमकालके मध्य तो कुपात्रदानकरि कुतपस्याकरि ही लक्ष्मी उपजै है सो बुद्धिकूं बिगाडि महादुःखतैं उपजै महादुःखतैं भोगै पापमैं लागै वा दानभोगविना छांडि मरणकरि आर्तध्यानमैं तिर्यंचगतिमैं उपजावै है यातैं इस लक्ष्मीकूं तृष्णा बधावनेवाली मद उपजावनेवाली जानि दुःखित दरिद्रीनिके उपकारमैं धर्मके बधावनेवाले धर्मके आयतनानिमैं विद्या पढावनेमैं वीतरागसिद्धांत-

लिखावनेमैं लगाय सफल करो न्यायके प्रामाणीक भोगनिमैं जैसैं धर्म नाहीं बिगडै तैसैं लगावो या लक्ष्मी जलतरंगवत अस्थिर है अवसरमैं दान उपकार कर लो परलोक लार जायगी नाहीं अचानक छांडि मरण करोगे। जो निरंतर या लक्ष्मीकूं संचय करै है दानभोगनिमैं हू नाहीं लगावै है सो आपकूं आप ठिगै है जे पापके आरंभकरि लक्ष्मीकूं संचय करी महामूर्छाकरि उपार्जन करी ताकूं अन्यके हाथ दीनी वा अन्यदेशमैं व्यापारादिकरि बधावनेके अर्थि स्थापन करी तथा जमीनमैं अतिदूरि गाडि मेली अर रातदिन याहीका चिंतवन करता दुर्ध्यानतैं मरणकरि दुर्गतिजाय पहुंचै है कृपणके लक्ष्मीका रखवालापणा वा दासपणा जानना दूर जमीनमैं गाडी तो लक्ष्मीकूं पाषाणसमान करी जैसैं भूमिमैं अन्य पाषाण गडे है तैसैं लक्ष्मी हू जानो तथा राजानिका वा दाई या दारनिका तथा कुटुंबीनिका कार्य साध्या आपका देह तो भस्म होय उडिजायगा सो प्रत्यक्ष नाहीं देखै है कहा? इस लक्ष्मीसमान आत्माकूं ठिग-नेवाली कोऊ अन्य नाहीं है अपना समस्त परमार्थकूं भूलि लक्ष्मीका लोभका मारया रात्रि अर दिन घोरआरंभ करै अवसरमैं भोजन नाहीं करै है शीतउष्ण वेदना सहै है रोगादिकका कष्टकूं नाहीं जानै है चिंतावान हुवा रात्रिकूं निद्रा नाहीं लेवै है लक्ष्मीका लोभी अपना मरण होनेकूं नाहीं गिनै है संग्रा-मके घोर संकटमैं जाय है समुद्रनिमैं जाय है घोरभयानकवनपर्वतानिमैं जाय है धर्मरहित देशनिमैं जाय है जहां अपना कोऊ जातिका कुलका घरका दीखये नाहीं ऐसे स्थानमैं केवल लक्ष्मीका लोभकरि भ्रमण करता करता मरणकरि दुर्गतिमैं जाय पहुंचै है लोभी नाहीं करनेका तथा नीच भील चांडालनिके करने-योग्य कार्यनिकूं करै है तातैं अब जिनेन्द्रके धर्मकूं प्राप्त होय संतोष धारणकरि अपनापुण्यके अनुकुल न्यायमार्गतैं प्राप्त हुआ धनकूं संतोषी हुवा तीव्रराग छांडि न्यायके विषय भोगो। दुखित बुभुक्षित दीन अनाथनिके उपकारके निमित्त दानसन्मानमैं लगावो या लक्ष्मी अनेकनिकूं ठिगि दुर्गति पहुंचाये हैं लक्ष्मीका संगमकरि जगतके जीव अचेत हो रहे हैं अर या पुण्य अस्त होते ही अस्त हो जायगी लक्ष्मीकूं

संग्रहकरि मरजाना ऐसा फल लक्ष्मीका नाहीं है याका फल केवल उपकार करना धर्मका मार्ग चलावना है या पापरूप लक्ष्मीकूं नाहीं ग्रहण करें हैं ते धन्य हैं अर ग्रहण करके हू ममता छांडि क्षणमात्रमैं त्याग दीनी ते हू धन्य हैं ऐसैं बहुत कहा लिखिये। यह धन योवन जीवन कुटुंबसंगमकूं जलके बुदबुदासमान अनित्य जानि आत्माके हितरूप कार्यमैं प्रवर्तन करो संसारके जेते संगम हैं ते ते समस्त विनाशीक हैं ऐसैं अनित्यभावना भावो अर जो पुत्र पौत्र स्त्री कुटुंबादिक हैं ते किसीकी लार परलोक गये नाहीं अर जांयगे नाहीं अपना उपार्जन किया पुण्य पापादिककर्म लार रहैगा अर ये जाति कुल रूपादिक तथा देश नगरादिकनिका समागम देहका लार ही विनशैगा तातैं अनित्यभावना क्षणमात्र हू विस्मरण मति हो हू जातैं परसूं ममत्व छूटि आत्मकार्यमैं प्रवृत्ति होय। ऐसैं अनित्यभावना वर्णन करी ॥ १ ॥

अब अशरणभावना भावो—इस संसारमैं ऐसा कोऊ देव दानव इंद्र मनुष्य कोऊ नाहीं है जाके ऊपरि यमराजकी फांसी नाहीं परी है कालकूं प्राप्त होतैं कोऊ शरण नाहीं है आयु पूर्ण होनेके कालमैं इंद्रका पतन क्षणमात्रमैं होय है जाका असंख्यात देव आज्ञाकारी सेवक अर हजारां ऋद्धिकरि संयुक्त अर स्वर्गका असंख्यातकालतैं निवास अर रोगादिक क्षुधा तृषादिक उपद्रवरहित शरीर अर असंख्यात बलपराक्रमका धारक इंद्रहीका पतन हो जाय तो अन्य शरण कोऊ है नाहीं जैसैं निर्जनवनमें व्याघ्र करि ग्रहणकिया मृगका बचाकूं कोऊ रक्षाकरनकूं समर्थ नाहीं है तैसैं मृत्युकरि ग्रहणकिया प्राणीकूं कोऊ रक्षा करनेकूं समर्थ नाहीं है। इस संसारमैं पूर्वे अनंतानंतपुरुष प्रलयकूं प्राप्त हो गये यहां कौन शरण है कोऊ ऐसा औषध मंत्र तंत्र क्रिया देव दानवादिक है नाहीं जो एक क्षणमात्र हू कालतैं रक्षा करै जो कोऊ देव देवी वैद्य मन्त्र तन्त्रादिक एक मनुष्यकूंहू मरणतैं रक्षा करता तो मनुष्य अक्षय हो जाते तातैं मिथ्याबुद्धिकूं छांडि अशरण भावना भावो मूढलोक ऐसा विचार करै हैं जो मेरा हितूका इलाज नाहीं भया औषध नाहीं दी कोऊ देवताका शरण नाहीं ग्रहण किया विना उपाय मरगया ऐसैं अपना स्वजनका

शोच करै है अर अपना शोच नाहीं करै है जो मैं हू यमकी डाढके बीच बैठा हूं जो काल कोटनि उपायकरि इंद्रनिकरि नाहीं रुक्या ताकूं मनुष्यरूप कीडा कैसैं रोकेगा जैसैं परके मरण प्राप्त होते देखिये है तैसैं मेरे हू अवश्य प्राप्त होयगा जैसैं अन्य जीवानिके स्त्री पुत्रादिकका वियोग देखिये है तैसैं मेरे हू वियोगमें कोऊ शरण नाहीं। बहुरि अशुभकर्मका उदीरण होते ही बुद्धि नष्ट होय है प्रबल कर्मका उदय होते एक हू उपाय नाहीं चलै है अमृत विष होय परिणमैं है तृण हू शस्त्र होय परिणमैं हैं अपने निजमित्र बैरी होय परिणमैं हैं अशुभका प्रबलउदयके वशतैं बुद्धि विपरीत होय आप ही आपका घात करै है अर शुभकर्मका उदय होय तब मूर्खके हू प्रबलबुद्धि प्रकट होय है विना किये अनेक उपाय सुखकारी आपतैं ही प्रगट होय हैं बैरीहू मित्र होय परिणमै है विष हू अमृत मय परिणमै है जब पुण्यका उदय होय तब समस्त उपद्रवकारी वस्तु हू नानाप्रकार सुख करनेवाली होय है तातैं पुण्यकर्म ही शरण है पापके उदयकरि हस्तमैं प्राप्तहुवा हू धन क्षणमात्रमैं नष्ट होय है अर पुण्यके उदयतैं अति दूर तिष्ठती वस्तु हू प्राप्त होय है लाभांतरायका क्षयोपशम होय तदि विना यत्न ही निधि रत्न प्रकट होय हैं बहुरि पापउदय होय तब सुन्दर आचरण करता होय ताकूं हू दोष कलंक लागै है अपवाद अपयश होय है अर यशनामकर्मका उदयकरि समस्तअपवाद दूरि होय दोष हू गुणरूपपरिणमै है। संसार है सो पुण्यपापका उदयरूप है परमार्थादि दोऊ उदयकूं परका किया आपतैं भिन्नजानि ज्ञायक रहो हर्षविषाद मति करो पूर्वे बंध किया सो अब उदय आगया सो अपना किया दूरि होय नाहीं उदय आये पाछै इलाज नाहीं कर्मका फल जो जन्मजरामरण रोगचिंता भयवेदना दुःखकूं प्राप्त होते कोऊ रक्षा करनेवाला मंत्रतंत्र देवदानव औषधादिक समर्थ नाहीं होय है कर्मका उदय आकाशपातालमैं कहां ही नाहीं छांडै है औषधादिक बाह्य निमित्त हू अशुभकर्मका उदयकूं मंद होतैं उपकार करैं हैं दुष्ट चोर भील बैरी तथा सिंह व्याघ्र सर्पादिक तो ग्राममैं बनमैं मारैं जलचरादिक जलमैं मारैं अर अशुभकर्मका उदय जलमैं

स्थलमैं बनमैं समुद्रमैं पहाडमैं गढमैं वा घरमैं शय्यामैं कुटुम्बमैं राजादिकसामंतनिके बीच शस्त्रनिकरि रक्षाकरते हू कहांही नाहीं छांडे है। इसलोकमैं ऐसे स्थान हैं जिनमैं सूर्य चंद्रमाका उद्योत तथा पवन तथा वैक्रियकऋद्धिधारी हू गमन नाहीं कर सकें हैं परन्तु कर्मका उदय तो सर्वत्र गमन करै है प्रबलकर्मका उदय होते विद्या मंत्र बल औषधि पराक्रम निजमित्र सामंत हस्ती घोडा रथ पियादा गढ कोट शस्त्र उपाय साम दाम दण्ड भेदादिक समस्त उपाय शरण नाहीं हैं जैसैं उदय होता सूर्यकूं कौन रोकै तैसैं कर्मका उदयकूं अरोक जानि साम्यभावकी शरण ग्रहण करो तो अशुभकर्मकी निर्जरा होय आगानै नवीनबंध नाहीं होय रागवियोग दरिद्रमरणादिकनितैं भय छांडि परमधैर्य ग्रहण करो यो अपना वीतरागभाव संतोषभाव परमसमताभाव यो ही शरण है अन्य नाहीं इस जीवका उत्तमक्षमादिक भाव आपकूं शरण है क्रोधादिकभाव इसलोक परलोकमैं इस जीवका घातक है इस जीवके कषायनिकी मंदता इसलोकमैं हजारां विघ्नांका नाश करती परमशरण है परलोकमैं नरक तिर्यंचगतिमैं रक्षा करै है मंदकषायीका देवलोकमैं तथा उत्तम मनुष्यनिमैं उपजना होय है अर जो पूर्वकर्मका उदयमैं आर्त्त रौद्र परिणाम करोगे तो उदीरणाकूं प्राप्त हुवा कर्मके रोकनेकूं कोऊ समर्थ है नाहीं केवल दुर्गतिका कारण नवीनकर्म और बंधेगा कर्मके उदय आवनेके कारण बाह्य सहकारी क्षेत्र काल भाव मिलै पाछैं कर्मके उदयकूं इंद्र जिनेंद्र मणि मंत्र औषधादिक कोऊ रोकनेकूं समर्थ है नाहीं रोगनिका इलाज तो जगतमैं औषधादिक देखिये है परंतु प्रबल कर्मका उदयके रोगनेकूं औषधादिक समर्थ नाहीं होय है विपरीत होय परिणमै है। इस जीवके असातावेदनीयकर्मका उदय प्रबल होय तदि औषधादिक विपरीत होय परिणमैं असाताका मंदउदय होय वा उपशम होय तदि औषधादि उपकार करै है क्योंकि मंदउदयके रोकनेकूं समर्थ तो अल्पशक्तिका धारक हू होय है प्रबलबलका धारककूं अल्पशक्तिका धारक रोकनेकूं समर्थ नाहीं होय है अर इस पंचमकालमैं अल्प ही तो बाह्य द्रव्य क्षेत्रादिक सामग्री है अल्प ही ज्ञानादिक है अल्पही पुरुषार्थ है अर अशुभका

उदय आवनेका बाह्य सामग्रीका सहाय प्रबल है तातैं अल्पसामग्री अल्प पुरुषार्थतैं प्रबलअसाताका उदयकूं कैसैं जीतै ? जैसैं प्रबलनदीका प्रवाह ढाहा उपाडता चल्या आवै ताकै सन्मुख तिरणविद्यामैं समर्थ हू पुरुष तिर नाहीं सकै है नदीका प्रवाहका वेग मंद बहता होय तादि तिरणेकी कलाका धारक तिरि करि पार होजाय है तातैं प्रबलकर्मका उदयमैं आपकूं अशरण चिंतवन करो। यहां पृथ्वी अर समुद्र दोऊं बडे हैं सो पृथ्वीके पार होनेकूं अर समुद्रके तिरणेकूं हू समर्थ अनेक देखिए है परंतु कर्मउदयके तिरणेकूं समर्थ होना नाहीं देखिए है। इस संसारमैं एक सम्यग्ज्ञान शरण है तथा सम्यग्दर्शन शरण है तथा सम्यक्चारित्र सम्यक्तपसंयम शरण है इन च्यार आराधना बिना अनंतानंत कालमैं कोऊ शरण नाहीं है तथा उत्तमक्षमादिक दशधर्म प्रत्यक्ष इस लोकमैं समस्त क्लेशदुःख मरण अपमान हानितैं रक्षा करनेवाला है इस मंदकषायका फल तो स्वाधीन सुख अर आत्मरक्षा अर उज्जलयश क्लेशरहितपना उच्चता इसलोकमैं प्रत्यक्ष देखि याका शरण ग्रहण करो अर परलोकमैं याका फल स्वर्गलोक होना है। बहुरि व्यवहारमैं च्यार शरण हैं अरहंत सिद्ध साधु केवलीका प्रकाश्या धर्म ये शरण जानना जातैं इनका शरणविना आत्मा उज्ज्वलताकूं नाहीं प्राप्त होय है ऐसैं अशरणभावना वर्णन करी ॥ २ ॥

अब संसारभावनका स्वरूप वर्णन करैं हैं—इस संसारमैं अनादिकालका मिथ्यात्वके उदयकरि अचेतभया जीव जिनेन्द्र सर्वज्ञवीतरागका प्ररूपण किया सत्यार्थधर्मकूं नाहीं प्राप्त होय च्यारूं गतिनिमैं परिभ्रमण करै है संसारमैं कर्मरूप दृढबंधनकरि बँधा पराधीन हुवा त्रसस्थावरनिमैं निरंतर घोरदुःख भोगता बारंबार जन्ममरण करै है अर जे जे कर्मका उदय जाय रस देहैं तिनके उदयमैं आपा धारणकरि अज्ञानी जीव अपना स्वरूपकूं छांडि नवीन नवीन कर्मका बंधकूं करै है अर कर्मके बंधके आधीन हुवा प्राणीनिकै ऐसी कोऊ दुःखकी जाति बाकी नाहीं रही है जो नाहीं भोगी, समस्तदुःखानिकूं अनंतानंत बार भोगते अनंतानंतकाल व्यतीत हो गया ऐसे अनंतपरिवर्त्तन संसारमैं इस जीवके व्यतीत भये

है ऐसा कोऊ पुद्गल संसारमैं नाहीं रह्या जाकूं जीव शरीररूप आहाररूप ग्रहण नाहीं किया अनंतजाति-के अनंतपुद्गलनिका शरीर धारया आहाररूप भोजनपानरूप हू किये । तीनसैं तीयालीस घनराजू-प्रमाण लोकमैं ऐसा कोऊ क्षेत्रको एकप्रदेश हू नाहीं है जहां संसारीजीव अनंतानंत जन्ममरण नाहीं किये अर उत्सर्पिणी अवसर्पिणी कालका ऐसा कोऊ एकसमय हू बाकी नाहीं रह्या है जिस समयमैं यो जीव अनंतबार नाहीं जन्म्या अर नाहीं मरया अर नरक तिर्यंच मनुष्य देव इनि चारों पर्यायनिमैं यो जीव जघन्यआयुतैं लेय उत्कृष्टआयु पर्यंत समस्तआयुका प्रमाण धारण करि करि अनंतबार जन्म धारया है एक अनुदिशअनुत्तरविमाननिमैं तो नाहीं उपज्या क्योंकि उन चौदह विमाननिमैं सम्यग्दृष्टि विना अन्यका उत्पाद नाहीं सम्यग्दृष्टीकै संसारपारिभ्रमण नाहीं है । बहुरि कर्मकी स्थितिबंधके स्थान तथा स्थितिबंधकूं कारण असंख्यातलोकप्रमाण कषायाध्यवसायस्थान तिनकूं कारण असंख्यातलोकप्रमाण अनुभागबंधाध्यवसायस्थान तथा जगतश्रेणीके संख्यातवें भाग योगस्थान ऐसा कोऊ भाव बाकी नाहीं रह्या जो संसारीके नाहीं भया । एक सम्यग्दर्शनज्ञानचारित्रके योग्य भाव नाहीं भये अन्य समस्तभाव संसारमैं अनंतानंतबार भये हैं जिनेन्द्रके वचनका अवलंबनरहित पुरुषनिकी मिथ्याज्ञानके प्रभावतैं विपरीतबुद्धिअनादिकी हो रही है सो सम्यक्मार्गकूं नाहीं ग्रहण करता संसाररूप वनमैं नष्ट हुआ निगोदमैं जाय प्राप्त होय है कैसीक है निगोद जातैं अनंतानंत कालमैं हू निकसना अतिकठिन है अर कदाचित् पृथ्वीकायमैं जलकायमैं अग्निकायमैं पवनकायमैं प्रत्येक साधारण वनस्पतिकायमैं समस्त ज्ञानकी नष्टतातैं जडरूप हुवा एक स्पर्शनइंद्रियद्वारैं कर्मका उदयके आधीन हुवा आत्मशक्तिरहित जिह्वा घ्राण नेत्र कर्णादिक इंद्रियरहित हुवा दुःखमय दीर्घकाल व्यतीत करै है अर वेंद्री त्रींद्रिय चतुरिं-द्रियरूप विकलत्रयजीव आत्मज्ञानरहित केवल रसनादिक इंद्रियनिका विषयनिकी अतितृष्णाका मारया उछलि उछलि विषयनिके अर्थि पडिपडि मरै है । बहुरि असंख्यातकाल विकलत्रयमैं फिर एकेन्द्रियनिमैं

फिरफिर बारंबार अरहँटकी घडीकी ज्यों नवीननवीन देह धारण करता चारों गतिनिमैं निरंतर जन्म-मरण क्षुधातृषा रोग वियोग संताप भोगता परिभ्रमण अनंतकालतैं करै है याहीका नाम संसार है। जैसैं तप्तायमान आधणमैं तंदुल सर्वतरफ दौडता मंता सीझै है तैसैं संसारीजीव कर्मकरि तप्तायमान हुआ परिभ्रमण करै है आकाशमैं गमन करते पक्षीनिकूं अन्यपक्षी मारैं हैं जलमैं विचरते मच्छादिकनिकूं अन्य मच्छादिक मारै है स्थलमैं विचरते मनुष्यपशुआदिकनिकूं स्थलचारी सिंह व्याघ्र सर्पादिक दुष्ट तिर्यंच तथा भील म्लेक्ष चोर लुटेरा महानिर्दई मनुष्य पशु मारैं हैं इस संसारमैं समस्तस्थाननिमैं निरंतर भयरूप हुआ निरंतर दुःखमय परिभ्रमण करैं हैं जैसैं शिकारीका उपद्रवकरि भयभीत हुआ सूस्या (शशक) फाड्या हुवा अजगरका मुखकूं बिलजानि प्रवेश करै है तैसैं अज्ञानी जीव क्षुधा तृषा कामकोपादिक तथा इंद्रियनिके विषयनिकी तृष्णाकी आतापकरि संतापितहुआ विषयादिकरूप अजगरका मुखमैं प्रवेश करै है विषयकषायनिमैं प्रवेशकरना सो ही संसाररूप अजगरका मुख है यामैं प्रवेशकरि अपने ज्ञानदर्शनसुखसत्तादिक भावप्राणनिकूं नाशकरि निगोदमैं अचेतनतुल्य हुवा अनंताबार जन्ममरण करता अनंतानंतकाल व्यतीत करै है तहां आत्मा अभावतुल्य ही है ज्ञानादिक अभाव भया तदि नष्ट ही भया निगोदमैं अक्षरके अनंतवें भाग ज्ञान है सो सर्वज्ञकरि देख्या है अर त्रसपर्यायमैं हू जेते दुःखके प्रकार हैं ते ते दुःख अनंत बार भोगे हैं ऐसी कोऊ दुःखकी जाति बाकी नाहीं रही जो या जीवनै संसारमैं नाहीं पाई इस संसारमैं यो जीव अनंतपर्याय दुःखमय पावै तदि कोई एकबार इंद्रियजनित सुखकी पर्याय पावै है सो हू विषयनिकी आतापसहित भयशंकासंयुक्त अल्पकाल पावै फिर अनंतपर्याय दुःखकी पाय फिरि कोऊ एक पर्याय इंद्रियजनित सुखकी कदाचित प्राप्त होय है। अब चतुर्गतिका किंचितस्वरूप परमागमके अनुसार चिंतवन करिये है—नरककी सप्तपृथ्वी हैं तिनमैं गुणंचास पटल हैं तिन पटलनिमैं चौरासीलाख बिल हैं तिनहीकूं नरक कहिये है तिनकी वज्रमयभूमि भींति छति है केई बिल संख्यातयोजनके चौडे

लंबे हैं केई असंख्यातयोजनके लंबे चौडे हैं तिन एकएक बिलनिकी छातिविषै नारकीनिके उत्पत्तिके स्थान हैं ते छोटेमुखके उष्ट्रमुखके आकारादिक लिये औंधेमुख हैं तिनमैं नारकी उपाजि नीचैं मस्तक अर ऊंचेपगतैं आय वज्राग्निमय पृथ्वीमैं पडिकरि जैसैं जोरतैं पडी दडी पडकरि झंफा खाय उछलै है तैसैं पृथ्वीमैं पडि उछलते लोटते फिरै हैं कैसी है नरककी भूमि असंख्यातबीछूनिके स्पर्शनितैं असंख्यातगुणी वेदनाकरनेवाली है। तिन नरकनिके बिलनिमैं ऊपरिकी च्यार पृथ्वीमैं अर पंचमपृथ्वीके दोयलक्ष बिल ऐसैं बीयालीसलाख बिलनिमैं तो केवल आताप उष्णताकी वेदना है सो नरककी उष्णताके जणावनेकूं इहां कोऊपदार्थ दीखनेमैं जाननेमैं आवै नहीं जाकी सदृशता कहीजाय, तो हू भगवानके आगममैं ऐसा अनुमान उष्णताका कराया है जो लक्षयोजनप्रमाण मोटा लोहेका गोला छोडिये तो भूमिकूं नहिं पहुंचतप्रमाण नरकक्षेत्रकी उष्णताकरि रसरूप होय बहि जाय है अर पंचमपृथ्वीका तिहाई अर छटी-सातवींका शीतबिलनिमैं शीतकी ऐसी तीव्र वेदना है जो लक्षयोजनप्रमाण लोहका गोला धरिये तो एकक्षण मात्रमैं शीत करि खंडखंड होय बिखरिजाय है ऐसी उष्णवेदना अर शीतवेदनाका भरया नरकमैं कर्मके वश भए जीव घोरदुःख असंख्यातकालपर्यंत भोगैं हैं आयु पूर्णभये विना मरणकूं प्राप्त नाहीं होय हैं ऐसी तो नरकमैं घोर शीत उष्णकी वेदना है अर क्षुधावेदना ऐसी है जो समस्त जगतके पाषाण मृत्तिकादिक भक्षण कीये हू क्षुधावेदना नाहीं मिटै अर एक कणमात्र भक्षणकूं मिलै नाहीं अर तृषावेदना ऐसी है जो समस्त समुद्रनिका जल पीवै तो हू तृषाकी वेदना नाहीं दूर होय अर एक बूंद-मात्र जल जहां मिलै नाहीं अर कोट्यां रोगनिकी घोरवेदना जहां एकही कालमैं उत्पन्न होय है जहां नवीननारकीकूं देखि हजारां नारकी महाभयंकररूप अनेक आयुधनिकरि सहित मारल्यो चीरो फाडो विदारो ऐसा भयंकरशब्द करते चारोंतरफतैं मारनेकूं आवैं हैं कैसे हैं नारकी नग्नरूप अतिलूखा भयंकर श्यामरूप रक्तपात वक्रनेत्रनिकरि क्रूर देखते फाटे हैं मुख जिनके लहलहाट करती विकराल जिह्वाकरि

युक्त करोतसमान तीक्ष्ण वक्र हैं दंत जिनके तथा ऊंचे रक्तपीतकठोरकेशनिकरि भयानक तीक्ष्ण नख महानिर्दय हुंडक संस्थानके धारक आयकरि केई मुदगर मुसंडीनिकरि मस्तकका चूर्ण करैं हैं तथापि नारकीनिका देह जैसैं जलके भरे द्रहमैं जलकूं मूसलादिककरि कूटते जल उछलिकरि उसही द्रहमैं शामिल आय पडे है तैसैं नारकीनिका देह हू खंडखंडरूप होय उछलि उछलि शामिल आय मिलै है आयुपूर्णहुवाविना मरण नहीं होय है तरवारानितैं खंड खंड करैं हैं करोतानितैं चीरैं हैं कुहाडोनितैं फोडैं हैं बसोलेनितैं छीलैं हैं भालानितैं बेधैं हैं शूलीनिमैं पोवैं हैं उदरादिक मरम स्थाननिकूं छेदैं हैं बिदारैं हैं नेत्रनिकूं उपाडैं हैं भाडमैं भूजै हैं कढाहेनिमैं रांधैं हैं घाणीनिमैं पेलैं हैं ऐसे परस्पर नारकीनिकरि मारण ताडन त्रासन जो नरकमैं हैं सो कोऊ कोटि जिह्वानिकरि कोट्यांवर्षपर्यंत एकक्षणके दुःख कहनेकूं समर्थ नाहीं है नरकमैं जो दुःखकारी सामग्री है ताका एक क्षणमात्र हू इसलोकमें नाहीं है जहां नरकभूमिकी सामग्री अर नारकीनिका विकरालरूप जो है जैसा कोऊनै एक क्षण स्वप्नमैं दिखावै तो भयकरि प्राणरहित हो जाय अर नारकीनिके रससामिग्री ऐसी कडवी है इहां कांजीर विष हालाहलमैं नाहीं नारकीनिके देहादिकनिका एककण यहां आवै तो जिनकी कडवी गंधतैं यहांके हजारां पंचेन्द्री जीव मरण कर जांय अर नरककी मृत्तिकाकी दुर्गंध ऐसी है जो सातवां नरककी मृत्तिकाका एककण यहां आ जाय तो साढा चौईसकोसके चारूं तरफके पंचेन्द्री जीव दुर्गंधतैं मरण करजायँ जातैं एक हू एक नरक पटलकी मृत्तिकाकी दुर्गंधमैं आध आध कोसके अधिक अधिक जीव मारणेंकी शक्ति है तातैं गुणंचासमां पटलकी मृत्तिकाकी दुर्गंधिमैं साढाचौईसकोसपर्यंतकी मारणशक्ति कही है। बहुरि नरकमैं वैतरणी नदी है ताका जल कैसाक है जाके स्पर्शमात्रतैं नारकीनिके शरीर फाटि जाय हैं तिनमें क्षार विष अग्निमय तप्ततेलके सींचनतैं हू अपरिमाण बाधाका उपजावनेवाला है अर जहांकी पवन ऐसी है जो यहांके पर्वत स्पर्श होने मात्रतैं भस्म होय उडि करि जगतमैं बिखर जांय अर

नरककी वज्राग्निकूं धारण करनेकूं यहां पृथ्वी पर्वत समुद्र कोऊ समर्थ नाहीं । कहा स्वरूप वर्णन करिये नारकीनिके शब्द ऐसे भयंकर अर कठोर हैं जो यहां श्रवण कर ले तो हस्तीनिके अर सिंहानिके हृदय फाटि जायं तहां नारकीनकूं कर्मरूप रखवाले सागरापर्यंत नाहीं निकसने दे हैं जहां निरंतर मार मार सुनिए हैं रोवैं हैं पकडैं हैं भागैं हैं घसीटैं हैं चूर्णरूप करै हैं अर अंग फिरफिर पारेका ज्यों मिलता चल्या जाय है कोऊ रक्षक नाहीं दयावान नाहीं राजा नाहीं मित्र नाहीं माता नाहीं पिता नाहीं पुत्रस्त्री कुटुम्बादिक नाहीं केवल पापका भोग है कोऊ छिपवाने स्थान नाहीं कोऊसूं अपना दुःखदरद कहिये सो नाहीं केवल क्रूरपरिणामी महाभयंकर पातकी हैं जैसें इहां दुष्टश्वानादिक तिर्यंचनिके देखते प्रमाण बेर है तैसें नारकीनके विनाकारणही परस्पर बेर है दुःखतैं भाग बनमैं जायं तहां शाल्मलीवृक्षादिकनिके पत्र शरीरकूं बसोलेकुहाडेनिकी ज्यों काटनेवाले आय पडैं हैं तिनकरि अंग छिदि जाय कटि जाय है बहुरि वनहीमैं वा गुफानिमैंतैं सिंह व्याघ्रादिक निकसिकरि अंगकूं विदारैं हैं जहां वज्रमई चूंचनिके धारक गृद्धादिकपक्षी नारकीनके अंगकूं फाडैं हैं नेत्रादिक उपाडैं हैं उदर फाडि आंतां काढि ले हैं यद्यपि नरकमें तिर्यंच नाहीं हैं तथापि नारकी जीव विक्रियाकरि तिर्यंचरूप हो जाय हैं नारकीनिके पृथक् जुदा शरीर करनेकी विक्रिया नाहीं है एक शरीर हो सिंह व्याघ्र श्वान घूघू काकादिकनिका देह धारण करै हैं । नारकी शुभ क्रिया चाहैं तो हू शुभ नाहीं होय आपकूं अन्यकूं दुःखदाई ही परिणाम अर देहवेदनाविक्रिया करनेकूं समर्थ हैं, सुखकरनेवाली विक्रिया नाहीं होय परिणाम नाहीं होय देह नाहीं होय वेदना नाहीं होय ऐसा क्षेत्रजनित जीवनिके पापकर्मका उदय है । बहुरि नरकमैं नारकीनिके मारनेके नाना आयुध शूली घाणी जंत्र लोहमय ओटावनेके तलनेके रांधनेके नाना दुःखदायीपात्र क्षेत्रके स्वभावतैं ही है जहां सुखदायीसामग्री तो स्वप्नमैं हू नाहीं है जहां लोहमय पूतली ज्वालाकूं उगलती महा वेदना संताप करनेवाला जिनका अंग ते उछलिकरि नारकीनिकूं पकडैं हैं स्पर्शैं हैं तिनका स्पर्श कोटि-

बीछूनिके स्पर्शसमान तथा वज्राग्निके समान तथा विषमय तीक्ष्णशस्त्रनिका स्पर्शमात्रतैं असंख्यातगुणी वेदना करै है जो नरकनिमैं दुःखदायीसामिग्री है तिनका स्वभावादिक दिखावनेकूं अनुभव करावनेकूं समस्त मध्यलोकमैं कोऊ वस्तु दीखै नाहीं तथापि उनकी अधिकता दिखावनेकूं केतीक वस्तु वर्णन करी है अर नारकीनिका दुःख तो साक्षात भगवानका ज्ञान जानै है तथा नारकी होय भुगतै तदि यो जीव जानै है। नारकीनिका देह रुधिर मांस हाड चाम आदि सप्तधातुमय नाहीं है परंतु उनके देहके पुद्गल ऊंट श्वान मार्जारादिकनिके सिडेहुये कलेवर तिनतैं असंख्यातगुणे दुर्गंध हैं अर असंख्यातगुणे दुर्निरीक्ष्य घृणा करानेवाले हैं जिनका स्वरूप देख्या जाय न श्रवण किया जाय न गंध ग्रहण किया जाय मनुष्यादिक तो देखतप्रमाण दुर्गंधि आवतप्रमाण प्राणरहित होय जायँ। पूर्वजन्ममैं परिणामनितैं खोटे नरकका आयु बांधि उपजै हैं ते असंख्यातकाल पर्यंत दुःख भोगैं हैं। बहुतआरंभ करनेवाले बहुतपरिग्रहमैं आसक्त घोरहिंसकपरिणामी विश्वासघाती धर्मद्रोही गुरुद्रोही स्वामिद्रोही कृतघ्नी परधन परस्त्रीके लोलुपी अन्यायमार्गी धर्मात्माके त्यागीनिकै कलंक लगावनेवाले यतीनिका घात करनेवाले ग्रामनिमैं घास तृणादिक वृक्षनिमैं अग्नि लगावनेवाले देवद्रव्य चोरनेवाले तीव्रकषायी अनंतानुबंधीकषायके धारक कृष्णलेश्याके धारक सुन्दरआहारादिमिलते हू जिह्वाइंद्रियकी लोलुपतातैं मांसके भक्षक मद्यपानी वेश्यानुरागी परविघ्नसंतोषी लंपटी तीव्रलोभी दुराचारके धारक मिथ्यात्वअन्यायअभक्ष्यकी प्रशंसा करनेवालेनिका नरकगमन होय है। विषादिक मिलावना विषादिक उपजावनेवाले वनकटी करावनेवाले वनमैं दावाग्नि लगानेवाले जीवनिकूं बाडामैं बांधि दग्ध करनेवाले हिंसाके तीव्रकर्मकी परिपाटीके चलानेवालेनिका नरकगमन होय है। नरकमैं अंबाबरीसादिक दुष्ट असुरकुमार तीसरीपृथ्वीताईं जाय लडावैं हैं कोऊ नारकीनिकूं तीजी पृथ्वीताईं पूर्वले संबंधी देव आय धर्मका उपदेश भी देय हैं किसीके पूर्वला पापनिकी निंदा भी होय है बडा पश्चात्ताप होय है जो म्हानैं पूर्वैं सत्पुरुषां शिक्षा घणी ही करी अर

अनीतिके मार्ग मति लागो बहुतउपदेश भी दिया परंतु मैं पापी विषयकषायनिमैं मदकरि अंध भया। शिक्षा ग्रहण नाहीं करी अब मैं देवबल पौरुषबलकरि रहित कहा करूं जे पापी दुराचारी पापमैं प्रेरणा करनेवाले व्यसनी अनीतिके पुष्ट करनेवाले हमकूं नरकमैं प्राप्त किये ते पापी न जानिये देहछांडि कहां जांयगे हमारी लार कोऊ दीखे नाहीं हमारे धनभोगानिमैं विषयसेवनमैं सहाई पापके प्रेरक मित्र पुत्र बांधव स्त्री सहायादिक थे अब उनकूं कहां देखूं ऐसैं अवधिज्ञानतैं पूर्वजन्ममैं दुराचार किये तिनका पश्चाताप करता घोरमानसीक दुःखकूं प्राप्त होय है। केई महाभाग्यके सम्यग्दर्शन भी उपजे है परंतु पर्यायसंबंधी कषाय दुःख स्वयमेव उपजै है आप किसीकूं नाहीं मार्या चाहै तो हू कषायनिकी प्रबलता कर्मउदयतैं रुकै नाहीं स्वयमेव हस्तादिक शस्त्ररूप परिणमै हैं। नारकीनिके क्षणमात्र विश्राम नाहीं निद्रा नाहीं भूमिके स्पर्शका दुःख ही केवलीगम्य है अतितीव्रकर्मका उदयमें कोऊ शरण नाहीं शरणका अर्थी हुवा देखे तहां कोऊ दयावान नाहीं समस्त क्रूर निर्दयी भयानक उग्रदेहका धारक अंगारासमान प्रज्वलितनेत्रनिकरि सहित प्रचंड अशुभध्यानके करावनेवाले क्रोधकूं उपजावनेवाले घोरनारकी हैं तिन नारकीनिके महान विलाप अर रुदन मारण त्रासनके घोर शब्द सुनिये हैं। अहो जब मैं मनुष्यपनामैं स्वाधीन होय आत्महित नाहीं किया अब दैव पुरुषार्थ दोऊनिके बलकारिरहित कहा करूं। पूर्वे जे जे निंद्यकर्म मैं किये ते ते अब मेरे याद करते ही मरमनिकूं छेदें हैं जो दुःख एकनिमेष मात्र नाहीं सह्या जाय सो यहां सागरांपर्यंत कैसैं पूर्णकरस्यूं जिनकेअर्थि पापकर्म किये ते सेवक स्त्री पुत्र बांधवनिकूं यहां कहां देखूं वे तो धनके विषयनिके भोगनेमैं शामिल थे अब इनि दुःखनिमैं कहां देखूं ऐसैं दुःखनितैं रक्षा करनेवाला एक दयाधर्मही है सो धर्म मैं पापी उपार्जन नाहीं किया परिग्रहरूप महा पिशाचकरि अचेतन भया था नाहीं जानी जो यमराजरूप सिंहकी चपेटतैं एकक्षणमैं मरि नारकी जाय उपजूंगा इत्यादिक मनका संतापजनित घोर दुःखनिकूं प्राप्त होय है। जो पूर्वजन्ममैं अन्यप्राणीनिका मांस छेदि खाया है तातैं

मेरा मांसकूं काटिकाटि मोकूं खुवावैं हैं पूर्वें मद्यपान किया अभक्ष्य खाया तातैं अनेक नारकी ताम्रलोहमय गल्याहुआ रस सिंडासीनतैं मुखफाडि पावैं हैं जे परस्त्रीलंपटी थे तिनकूं वज्राग्निमय पूतला बलात्कार पकडि बहुतकाल आलिंगन करावैं हैं चक्षुका टिमकारनेमात्र काल हू सुख है नाहीं जो कदाचित कोऊकालमैं क्षणमात्र भूलि जाय तो दुष्ट अधर्म असुर प्रेरणा करैं वा परस्पर नारकी प्रेरणा करैं हैं। बहुत कहा कहिये असंख्यातजातिके दुःख असंख्यातकाल पर्यंत नरकमैं नारकी भोगैं हैं संसारमैं एक धर्मही इस जीवका उद्धार करनेवाला है सो धर्म उपजाया नाहीं तादि नरकमैं कौन रक्षा करै कोऊ धनकुटुंबादिक जीवकी लार नाहीं जाय है अपना भावनितैं उपार्जन किया पापपुण्य कर्म ही लार हैं। ये संसारी उपस्थइंद्रिय अर रसनाइंद्रियके विषयनिके लोलुपी होय नरकादिकनिमैं दुःखका पात्र होय हैं ऐसैं तो अनेकबार नरक जाय घोर दुःख भोगैं हैं। बहुरि तिर्यंचगातिनिमैं गयां पाछैं कुछ भ्रमणका ठिकाना नाहीं दुःखका पार नाहीं दुःखमय ही है, पृथ्वीकायमें खोदना दग्धकरना कूटना रगडना फाडना छेदना कौन रक्षा करै जलकाय धारण किया तहां ओटाया गया बाल्या गया मसल्या गया मल्या गया पिया गया विषनिमैं क्षारनिमैं कटुकनिमैं मिलाया गया तप्तलोहादिक धातु पाषाणादिकमें बुझाया गया घोरशब्द करता बलै है पर्वतनिमैं पडि शिलानिऊपरि घोर पछाडा खाये हैं वस्त्रनिमैं भरि भरि करि शिलानिऊपरि पछाडिये हैं दंडनिकरि कूटिये है जलकायके जीवनिकी कौन दया करै अग्निऊपरि पटकिये ग्रीष्मऋतुमें तप्तभूमि रजादिकऊपरि सींचिये कोऊ दया करै नाहीं क्योंकि पूर्वजन्ममैं दयाधर्म अंगीकार किया नाहीं अब अपनी दया कौन करै। बहुरि अग्निकायमैं हू दाबना बुझावना कूटना छेदना इत्यादिक घोरदुःख भोगै है कौन रक्षा करै। बहुरि पवनकाय पाया तहां पर्वतनिकी कठोर भीतनिकी निरंतर चोट सहै है अग्निमय चर्ममय धवनकरि धमिये है बीजने पंखे वस्त्रनिकरि फटकारे खानेकरि वृक्षनिके पछांटेनिकरि पवनकायमैं घोरदुःख भोगै है। बहुरि वनस्पतिकायमैं साधारण-

निमें तो अनंतानिका एकका घातमें मरण इत्यादिक दुःख तो ज्ञानी ही जाने है परंतु प्रत्येकवनस्पतीका दुःख देखो जो काटिये है छेदिये है छोलिये है बनारिये है रांधिये है चाबिये है तालिये है घृततेलादिकमें छौंकिये है बांटिये है भोभलमें भुलसिये है घसीटिये है रगडिये है घाणीनिमें पेलिये है कूटिये है इत्यादिक घोर दुःख वनस्पतीकायमें यो जीव पावे है यातें एकेंद्रीपर्यायमें बोलनेकूं जिह्वा नाहीं देखनेकूं नेत्र नाहीं श्रवणकरनेकूं कर्ण नाहीं हैं हस्त पादादिकअंग उपंग नाहीं कोऊ रक्षक नाहीं असंख्यात अनंतकालपर्यंत घोरदुःखमय एकेंद्रियपनातैं निकसना नाहीं होय है मिथ्यात्वअन्यायअभक्ष्यादिकनिके प्रभावकरि जीवका समस्तज्ञानादिकगुण नष्ट होय है एकेंद्रियमें किंचित्मात्र पर्यायज्ञान रहे है आत्माका समस्तप्रभाव शक्ति सुख नष्ट हो जाय जड अचेतनकी ज्यों होय है किंचित्मात्र ज्ञानकी सत्ता एक स्पर्शइंद्रियके द्वारे ज्ञानीनके जाननेमें आवे है समस्त शक्तिरहित केवल दुःखमय एकेंद्रियपर्यायमें जन्ममरण वेदना दुख भोगे है।

बहुरि कदाचित् कोऊ त्रसपर्याय पावे तो विकलचतुष्कमें घोरदुःख भोगे है लहलहाट करती जिह्वाइंद्रीका मारचा तीव्र क्षुधातृषामय वेदनाका मारचा निरंतर आहारकूं हेरता फिरै है लट कीडा अपना मुखफाडि आहारके निमित्त चपल भये फिरें हैं मक्षिका मकडी मांछर डांस क्षुधाका मारचा निरंतर आहारकूं हेरता फिरें हैं रसनिमें पडें हैं जलमें अग्निमें पडें हैं पवननिके वा वस्त्रनिके पछांटनिकरि मरें हैं तिर्यंचनिके पूंछनितैं खुरनितैं नाशकूं प्राप्त होय हैं मनुष्यनिके नखनिकरि हस्तपादादिकानिके घात करि चिथैं हैं कटैं हैं दबैं हैं मलकफादिकनिमें उलझैं हैं विकलत्रयकी कोऊ दयाकरै नाहीं चिडी कागला चुगि जाय हैं विसंभरा सर्प इत्यादिक हेर हेर मारैं हैं पक्षी बडी वज्रमय चूंचनिकरि चुगैं हैं चीरैं हैं अग्निमें बालैं हैं इली घुण इत्यादिक कोटनिकरि भरचा हुवा धान्यादिक तिनकूं दलै हैं पीसैं हैं ऊखलीनिमें खंड खंड करैं हैं भाडनिमें भूनैं हैं राधैं हैं तथा बदरीफलादिक फलनिमें शाकपात्रादिकनिमें विदारिये है

छीलिये है कूटिये है छौंकिये है चाबिये है कोऊ दया नाहीं करे है बहुरि मेवेनिके फलनिमें ओषधानिमें पुष्पपल्लवडालीजडबल्कलानिमें तथा मर्यादातैं अधिक कालका समस्त भोजन दधि दुग्धादिक रसनिमें बहुत विकलत्रय वा पंचेंद्रिय जीव उपजैं हैं ते समस्त खाया जाय जीवजन्तु चुगि जाय अग्निमें बल जाय कौन दया करे बहुरि विकलत्रयकी उत्पत्ति वर्षाऋतुमें सर्वभूमि छा जाय ते ढोरनिके पगकरि मनुष्यनिके पगकरि घोडेनिके खुरनिकरि रथ बैल गाडा गाडीनिकरि चिथैं हैं कटे हैं पगकहां टूटि पडैं हैं माथा कटि जाय उदर चीरा जाय कौन दया करे कोऊ देखै ही नाहीं ऐसा विकलत्रयरूप तिर्यंचनिका नाना दुःखनिकरि मरण होय है। क्षुधातृषाकरि शीतउष्णवेदनाकरि वर्षाकी पवनकी गडानिकी बाधाकरि मरण करे है तथा भाठा ठीकरा माटीका ढगला लाकडा मलमूत्र तप्तजल अग्नि इत्यादिक पतनतैं दबिकरि मरैं हैं विकलत्रयजीवनिकी ओर कोऊ देखै तो इनकी दया कोऊ करे नाहीं। घृततेलादिकमें पडकरि दीपक तथा अग्नि इत्यादिकमें पडि मरि घोरदुःख भोगता फिर उपजि फिर मरते असंख्यात काल दुःख भोगै हैं बहुरि कदाचित् पंचेंद्रिय तिर्यंच होय तिनपैं जलचरनिमें निर्बलकूं सबल भक्षण करे हैं धीवरनिके जालमें वा कांटेनिमें फंसि मरे हैं वा जीवतानिकूं भुलसि खाय हैं वनके जीव सदाकाल भयरूप भये क्षुधातृषा शीत उष्ण वर्षा पवन कर्दमादिककी घोर वेदना सहैं हैं प्रातःकालमें कहां भोजन अर बडी क्षुधा वेदना अर कदाचित आहार मिलै है अर जल नाहीं मिलै है तीव्र तृषावेदना भोगै है शिकारी पारधी जाय मारैं हैं वा सबल होय सो निर्बलनिकूं मार खाय हैं बिलनिमैंतैं पारधी खोदि खादि काढि मारैं हैं तथा बलवान तिर्यंच निर्बलनिकूं गुफानिमें पर्वतानितैं वृक्षनिमें छिपे हुयेनिकूं बडा छलतैं जाय पकडि मारैं हैं सिंहव्याघ्रादिक हू सदा भयवान रहैं हैं आहार मिलनेका नियम नाहीं बहुत क्षुधा तृषावान भये पडे रहैं हैं कदाचित किंचित अल्पआहार मिलै दो दिन तीन दिनमें मिलै वा नाहीं मिलै तादि घोरवेदना भोगता मरैं हैं तथा कषायीमनुष्य यंत्रानितैं जालनिके उपायतैं पकडि मारमार बेचैं हैं खाय हैं

जीवतेनिके पग काटि बेचैं हैं जीभे काटि देय हैं इंद्रियां काटि बेचैं हैं पूंछ काटि बेचैं हैं मरमस्थाननिकूं काटैं हैं छेदैं हैं तलैं हैं रांधैं हैं तिस तिर्यंचगतिमैं कोऊ रक्षण नाहीं कोऊ उपाय नाहीं तिर्यंचनिके मध्य माता ही पुत्रका भक्षण करै है तहां अन्य कौन रक्षा करै। बहुरि नभचर पक्षीनिके हू दुःखनिका निरंतर समागम है निर्बल पक्षीनिकूं सबल होय सो पकडि मारैं हैं बाज शिकारी आकाशमैं मारैं हैं खाय हैं बागलि घूघू इत्यादिक रात्रिमैं विचरनेवाले दुष्टपक्षी कंठ जाय तोडैं हैं मार्जार कूकरा पक्षीनिकूं बडाछलतैं मारैं हैं पक्षी भयभीत भये वृक्षनिकी ओटि शाखा पकडि तिष्ठैं हैं सोवना बिछावणा बैठना नाहीं पवनकी जलकी वर्षाकी गडेनिकी शीतकी घोरवेदना भोगि भोगि मरैं हैं दुष्टमनुष्य पकडि पांखडा उपाडैं हैं चोरैं हैं तप्ततेलमैं जीवतेनिकूं तालि खाय हैं रांधैं हैं जहां देखैं तहां तिर्यंचनिके घोर दुःख हैं जातैं हिंसाका फल है। बहुरि हाथी घोडा ऊंट बलध गधा भैंसा इनकी पराधीनताका दुःखकूं कौन कहि सकै है नाक फोडि सांकल जेवडानिकी नाथ घालना पराधीन बंध्या रहना जिनकूं स्वच्छन्द फिरना खाना नाहीं तावडामैं बांधैं हैं वर्षामैं बांधैं हैं शीतमैं बांधैं हैं पराधीन कहा करैं बहुत बोझ लादैं हैं मारमार करैं हैं तीक्ष्ण लोहमय आर कांटनिकरि बेधैं हैं चर्ममय चाबुकनिकरि बारंबार समस्त मार्गमैं मारैं हैं लाठी लकडीनिकी चोट मारि मरमस्थाननिमैं मारैं हैं पीठ गालि जाय है मांस काटि खाडे पडि जाय है कांधे गाले जाय हैं नाक गलि जाय है कीडा पडि जाय हैं तो हू पत्थर लकडी धातुनिका कठोर भार तिनकरि हाडनिका चूर्ण हो जाय है पग टूटि जाय है महारोगी हो जाय है नासिका गलि जाय है उठ्या नाहीं जाय है जराकरि जरजरा हो जाय पीठ गलि जाय तो हू बहुत भार लादैं हैं बहुत दूर ले जाय हैं क्षुधा तृषाकी वेदना तथा रोगकी वेदना तथा तावडाकी वेदनाकूं नाहीं गिनते अर्द्धरात्रि गये बहुत भार लादैं हैं अर दूजे दिनके तीन प्रहर व्यतीत भये भार उतारैं हैं कुछ घास कांटा तुस भुस कणरहित नीरस अल्प आहार मिले है सो उदरभरि मिलै नाहीं पराधीनताका दुःख तिर्यंचगति समान और नाहीं। निरंतर बंधनमैं

पींजरनिमें घोर दुःख भोगें हैं चांडालके बारणें बंध्या रहे चमारके कषायीनिके बारणे बंध्या रहे खावने कूं मिलै नाहीं अन्य पुण्यवानके बारणें तिर्यंचनिकूं भक्षण करते देखि मानसिक दुःखकूं प्राप्त होय है परके आहारघासमें मुख चलावें तो पांसलीनिमें बडे लठनिकरि मारिये है महान घोर क्षुधाका दुःख भोगै है मारग चालनेका भारवहनेका घोरदुःख भोगै है रोगानिके घोर दुःख भोगे हू अर तिर्यंच बलध कूकरा इत्यादिकानिके नेत्रनिमें कर्णनिमें इंद्रियमें पोतानिमें घोरवेदना देनेवाली वुंगा चींचडा पैदा होय है सो समस्त मरमस्थाननिमें तीक्ष्ण मुखनिकरि लोहूकूं खैचें हैं तिनकी घोरवेदना भोगें हैं केते घास खानेकूं जल पीवनेकूं नाहीं मिलै तदि घोरवेदना भुगतता ग्रीषमकूं पूर्ण करे अर श्रावण आ जाय तदां बहुत तृण पैदा होय तहां हू पापके उदयकरि काट्यां डांस माछर पैदा हो जाय जो जहां चरनेकूं जांय तहां ही डांस माछरनिके तीक्ष्ण डंककरि उछलता फिर तृणहूकी तरफ मुख नाहीं करि सके, बैठे सोवै जहां जुवांनिका घोरवेदना भोगै है अर ऊँट बलध घोडा इत्यादिक मार्गमें भारके दुःखकरि तथा जरा करि वा रोगकरि थकि जाय चाल्या नाहीं जाय पडि जाय वा पांव टूटि जाय मारते मारते हू चलनेकूं समर्थ नाहीं होय तदि वनमें जलमें पर्वतमें तहां ही छांडि धनी चल्या जाय निर्जनस्थननिमें कादामें एकाकी पड्या हुवा कोऊ शरण नाहीं कौनकूं कहै पानी कौन पियावै घास कहांतें आवै तावडामें कादामें शीतमें वर्षामें पड्या हुवा घोर क्षुधातृषाकी वेदना भोगै है अर अशक्तजानि दुष्टपक्षी लोहमय चूंचनिकरि नेत्र उपाड लें हैं मरमस्थाननिमेंतें अनेकजीव मांस काटिकाटि खाय हैं नरकसमान घोरवेदना भोगता केईदिन तडफडाट करता कठिनतातें दुःखभोगि मरें हैं ये समस्तकाल अन्याय धन हरनेका कपटी छली होय दानलेनेका विश्वासघात करनेका अभक्ष्यभक्षणका रात्रिभोजन करनेका निर्माल्य देवद्रव्य भक्षणकरनेका फल तिर्यंचयोनिमें भोगें हैं परके कलंकलगावनेका अपनी प्रशंसा करनेका परकी निंदाकरनेका पराये छल हेरनेका परके मिष्टभोजनका लालसाका अति मायाचार करनेका फल तिर्यंचनिमें भोगै है

यहां असंख्याते अनंत भव तिर्यंचगतिमैं बारबार धारण करता अर मायाचारादि तीव्रपापके परिणामतैं नवीन तिर्यंच नरकका कारण कर्मबंध करता अनंतकाल पूर्ण करिये है ये सब मिथ्याश्रद्धान मिथ्याज्ञान मिथ्याआचरणका फल है।

बहुरि यहां मनुष्यगतिमैं हू केई तो तिर्यंचसमान ज्ञानरहित हैं केतेक गर्भमैं आवते ही माता पिता मरजांय तदि परका उच्छिष्टभोजन करता क्षुधातृषाका पीडा सहता परके तिरस्कार सहता बधे है परका दासपना करे है तिर्यंचनिकी ज्यों तीव्र भार बहे है एकसेर अन्नतैं उदर भरनेके अर्थ एकभार मस्तक ऊपरि एकभार पीठऊपरि एकभार हस्तमैं धारण करता बारा कोष गमन करता अन्नका घृतका तेलका लूणका धातुका कठोर भारकूं बहे है केई समस्तदिनमैं जलका भारकूं बहे हैं केई विदेशनिमैं रात्रिदिन गमन करे है गमनसमान दुःख नाहीं तीसकोश बीसकोश उदरभरनेकूं नित्य दोडैं हैं केई पाषाणमृत्तिका-दिकनिका भार निरंतर बहे हैं केई सेवामैं पराधीनताकरि मनुष्य जन्म व्यतीत करैं हैं केई लुहार लोह घडि पेट भरैं हैं केई काठ चीरैं हैं फाडैं हैं तदि अन्न मिले है केई वस्त्र धोवैं हैं केई वस्त्र रंगैं हैं केई छापैं हैं केई सींवैं हैं केई तूमैं हैं केई वस्त्र बुनैं हैं केई तिर्यंचनिकी सेवा करैं हैं तो हू उदर नाहीं भरे है केई तृण निका काष्ठनिका भार बहि जन्म पूरा करे हैं केई मलमूत्रकूं बुहारैं हैं मलमूत्रका भार बहैं हैं केई चमाडानिका छीलना बनावना करैं हैं केई पीसैं हैं केई दलैं हैं केई खोदैं हैं केहे रांधैं हैं केई अग्निसंस्कार करैं हैं केई भट्टी चलावैं हैं केई घृत तेल क्षारलवणादिकनिकरि जीविका करैं हैं केई दीनपनाकरि घरघरमें मांगैं हैं केई रंक भए फिरैं हैं केई रोवैं हैं केई कर्मके आधीन हुए आपाभूलि मनुष्यजन्म वृथा व्यतीत करैं हैं केई चोरी करैं हैं छल करैं हैं असत्य बोलैं हैं व्याभिचार करैं हैं केई चुगली करैं हैं केई गैला मारैं हैं मार्ग लूटैं हैं केई संग्राममैं जाय हैं केई समुद्रनिमैं विषमवनीमैं प्रवेश करैं हैं केई नदी उतरैं हैं कूआ जोतैं हैं खेती करैं हैं नाव चलावैं हैं बोवैं हैं लूनैं हैं केई हिंसाके आरम्भ हिंसाके

व्यापार अभिमानी लोभी हुवा करैं हैं केई आमद खरचके लिखनकर्म करैं हैं केई नानाचित्र करैं हैं केई पाषाण ईंट पकावैं हैं केई घर चुनैं हैं केई द्यूतक्रीडामें रचैं हैं केई वेश्यामें रचैं हैं केई मद्यपायी हैं केई राजसेवा करैं हैं केई नीचनिकी सेवा करैं हैं केई गानविद्यातैं जीविका करैं हैं केई वादित्र बजावैं हैं केई नृत्य करैं हैं कर्मके वश पडे नानाप्रकारके क्लेशतैं मनुष्यपना व्यतीत करैं हैं पुण्यपापके आधीन हुवा नाना मनुष्य नानाप्रकारके कर्म धारैं प्रत्यक्ष नानाफल भोगते दीखैं हैं केई अन्नादिक बेचि जीवैं हैं केई गुड खांड घृत तैलादिकरि जीवैं हैं केई वस्त्रनिकरि केई स्वर्णरूपादिककरि केते हीरामोती माणिमाणिक्यादिकनिका व्यापारकरि आजीविका करैं हैं केई लोहपीतलइत्यादिक धातु केई काष्ठ पाषाण केई मेवा मिठाई पूवा घेवर मोदकादिककरि केई अनेक व्यंजन अनेकऔषध इत्यादिकनिकरि कर्म आधीन नाना प्रकार जीविका करैं हैं केई व्यापारी हैं केई सेवक हैं केई दलाल हैं केई उद्यमी हैं केई निरूद्यमी आलसी हैं केई यथेच्छ वस्त्र आभरण करैं हैं केते कष्टतैं उदर भरैं हैं केई कष्टरहित सुखिया हुवा भोजन करैं हैं केई परघर जाय जाचक होय खाय हैं केई पूज्यगुरु बन खाय हैं केई रंक दीन होय खाय हैं केई नाना रससहित भोजन करैं हैं केई नीरसभोजन करैं हैं केई उदर भरि अनेक बार भोजन करैं हैं केई कनका नीरस भोजनतैं आधा उदर भरैं हैं केईकूं एक दिनके अंतर मिले केईनिकूं दो तीन दिन गये भी कठिनतातैं मिले केईनको नाहीं मिलनेतैं क्षुधा तृषाकी वेदना कर मरण होय है केई बंदीग्रहमें पराधीन पड़े घोर वेदना सहैं हैं केई अपने हितूनका वियोगकी दाहकरि बलैं हैं केई रोगजनित घोर वेदना समस्त पर्यायमें भोगता आर्तितैं मरैं हैं केई ज्वरकी स्वासका कांसका अतीसारका केई प्रकारका वायुकी पित्तकी उदरविकार जलोदर कटोदरादिककी घोर वेदना भुगतैं हैं केई कर्णशूल दंतशूल नेत्रशूल मस्तकशूल उदरशूलकी घोर वेदना भोगि मरैं हैं केई जन्मतैं अंधा केई जन्मतैं बहरा गूंगा केई हस्तपादादिक अंगकरि विकल भये जन्म पूर्ण करैं हैं केई केती आयु व्यतीत भए आंधा भया बहरा भया लूला भया पागला

हुवा पराधीन पड्या मानसीक अर शरीरसंबंधी घोर दुःख भोगे हैं केतेक रुधिरविकारकरि कोढ खाज पांवबीच दाद इत्यादिकनि करि अंगुलि गलि जाय हस्त गलि जाय नासिकापादादिक गलि जाय है कर्मका उदयकी गहन गति है केई अंतरायका उदयकरि निर्धन भये नाना दुःख भोगैं हैं कदाचित उदर भरे कदे नाहीं भरे नीरस भोजन गला हुवा सिडा हुवा बहुत कष्टतैं मिले नाना तिरस्कार भुगतैं हैं घर रहनेकूं महाजीर्ण तिसऊपरि तृणफूंसपत्रकी हू छाया पूरी नाहीं अति सांकडो तामें हू सांप बीछू घोरनिका चारोंतरफ बिल अर महा दुर्गंध अर चांडालादि कुकर्मीनिके घरनिके समीप रहना खावनेकूं पाव भर धान नाहीं भरे अर कलहकारिणी काली कुटुकवचनयुक्त महाभयंकर विडरूप डरावनी पापिणी स्त्रीका संगम अर अनेक रोगी भूखे विलाप करते कुरूप पुत्रपुत्रीनिका संगम पापके उदयतैं पावैं हैं तथा व्यसनी दुष्ट महापातकी पुत्रका संगम बैरीनितैं हू महावैरी जबर दुष्टभाईका संगम तथा दुष्ट अन्यायमार्गी बलवान पापी दुराचारी व्यसनी पडोसीनिका संगम तथा लोभी दुष्ट अवगुणग्राही कृपण क्रोधी मूर्ख स्वामीकी सेवा महाक्लेशकारी पापके उदयतैं पावैं हैं तथा कृतघ्नी दुष्ट छिद्रहेरनेवाला जबर सेवकका मिलना ये समस्त संसारमैं पापके उदयतैं देखिये है। बहुरि धर्मरहित अन्यायमार्गी क्रूर राजाका राजमैं बसना दुष्टमन्त्री प्रधान कोटपालनिका संगम मिलना कलंक लगिजाना अपयश होजाना धनका नष्ट होना ये सब पंचमकालके मनुष्यनिके बहुतप्रकार पाइये है इस दुःखमकालमैं जे मनुष्य उपजैं हैं ते पूर्वजन्ममैं मिथ्यादृष्टि व्रतसंयमरहित होय ते भरतक्षेत्रमैं पंचमकालके मनुष्य होय हैं अर कोऊ मिथ्याधर्मी कुतप कुदान मंदकषायका प्रभावसूं आवैं सो राज्य ऐश्वर्य धन भोग संपदा नीरोगता पाय अल्पआयु इत्यादिक भोगि पापउपार्जन करनेवाले अन्याय अभक्ष्य मिथ्यामार्गमैं प्रवर्तनकरि संसारपरिभ्रमण करैं हैं। कोऊ विरलेपुरुष यहां सम्यग्दर्शन संयम व्रत धारण करैं हैं मंदकषायी आत्मा निंदागर्हायुक्ततैं मनुष्य जन्मकूं सफलकरि स्वर्गमैं महर्द्धिकदेव होय हैं अर यहां कोऊ पूर्वजन्ममैं मंदकषाय उज्ज्वलदानादिक

करनेवाला पुण्यसंयुक्त भी होय ताके हू इष्टका वियोग अनिष्ट संयोग होय ही। संसारके दुःखका स्वभाव देखो जो भरत चक्रवर्तीके हू लघुभ्राता ही महाअनिष्ट होय बलके मदकरि चक्रीको मानभंग कियो न्यायमार्गतैं देखिये तो बडा भाई पिताके पदमें तिष्ठता नमने योग्य था फिर चक्रवर्ती अर कुलमैं बडा ताकी उच्चता लघुभ्राता होय देखि नाहीं सके, भरत बडा सांचाममत्वसूं राज्यकूं शामिल भोगनेकूं बुलाया परंतु भाईतैं बडी ईर्षा करी अपयश कीयो तादि अन्यकी कहा कथा। कोऊके तो स्त्री नाहीं ताकी तृष्णा करि स्त्रीविना अपना जीवन वृथा मानि दुःखित है कोऊके स्त्री है सो दुष्टिनी है व्यभिचारणी है कलहकारिणी मर्मके विदारनेवाली तथा रोगकरि निरंतर संतापकरनेवाली होय ताकरि महा दुःखकूं प्राप्त होय है। बहुरि कोऊके आज्ञाकारिणी भर्तारकी आज्ञानुसार चलनेवाली मर जाय ताके वियोगका महा दुःखकूं प्राप्त होय है। केतेनके वृद्ध अवस्थामैं निर्धनतामैं स्त्रीका मरण होजाय छोटेबालक माताके वियोगकरि रहिजांय तिनकूं देखि संतापकूं प्राप्त होय है बहुरि केते वृद्ध अवस्थामैं अपना विवाहकी वांछा करैं अर मिले नाहीं ताकरि दुःखी होय हैं। केई पुत्ररहित होय दुःखी हैं केई कुपूतपुत्रनिकरि दुःखी हैं कोऊके सुपुत्र यशवान है सो मरण करै ताके वियोगका महा दुःख है केईनिके वैरीसमान मारनेवाला कुवचन बोलनेवाला ऐसा भाईका समागमसमान दुःख नाहीं कोऊ महारोग अर निर्धनताके दुःखकरि क्लेशित होय है केईकैं पुत्री बहुत होय तिनके विवाहादिक योग्य धन नाहीं तातैं दुःखी हैं केईकैं पुत्री वरयोग्य बडी होय अर वरका संयोग नाहीं मिले तादि बडादुःख अर कन्या आंधी लूली गूंगी बावली अंगहीन विडरूप होय ताका महादुःख है अर पुत्रीके कुबुद्धी व्यसनी निर्धन रोगी पापी वरका संयोग होजाय तो घोरदुःख होय अर पुत्री थोरी अवस्थामैं विधवा हो जाय ताका महादुःख पुत्रीकूं निर्धन दुखित देखै तो महादुःख होय है अर पुत्री व्यभिचारणी होय तो मरणतैं भी अधिक दुःख होय है अर विवाही पुत्रीका मरण होय तो दुःख होय है मातापिताके वियोगका दुःख होय है पिता अन्य जोरावर-

निका निर्दयीनिका कर्ज छांडि जाय ताका दुःख होय है जातैं ऋणसमान दुःख नाहीं पिता ऋणकरि जाय तो दुःख माता भगिनी व्यभिचारिणी दुष्ट होय तो महादुःख, कोई जबरीतैं इनूंकूं हर लेजाय खोस ले तो महादुःख, अपना संतानकूं कोऊ चोर ले जाय तथा मारजाय ताका घोर दुःख, दुष्टनिका समागमका दुःख दुष्ट अधर्मी अन्यायमार्गीनिके शामिल आजीविका होय तो महादुःख दुष्ट अन्यायीनिका आधीनपना होय तो दुःख, बहुरि मनुष्यजन्ममें धनवान होय निर्धन होनेका दुःख तथा मानभंगका दुःख है। बहुरि अपना मित्र होयकरि फिर छिद्रप्रगटकरनेवाला असत्यसंभाषणकरि अपराधलगानेवाला शत्रु होय ताका बडा दुःख है यो संसारवास सर्वप्रकार दुःखरूप ही है राजा होय रंक होय है रंकका राजा होय है इत्यादिक मनुष्यपर्यायमें घोरदुःख ही हैं। अर कदाचित देवपर्याय पावै तो तहां हू मानसीकदुःख होय है यद्यपि देवनिकैं निर्धनता नाहीं जरा नाहीं रोग नाहीं क्षुधातृषा मारण ताडन वेदना नाहीं तथापि महानऋद्धिके धारकनिकूं देखि आपकूं नीचा मानता मानसीक दुःखकूं प्राप्त होय है। कोई इष्टदेवदेवांगनाका वियोग होनेका दुःखकूं प्राप्त होय है यद्यपि देवांगनादिक कोऊ मरण करे है ताकी एवज शरीररूप ऋद्ध्यादिक करि तैसाका तैसा अन्य उपजै है तो हू उस जीवका वियोगका दुःख उपजै ही बहुरि पुण्यहीन देव है ते इंद्रादिक महर्द्धिदेवनिकी सभामें प्रवेश नाहीं कर सकें ताका मानसीक बडा दुःख है तथा आयु पूर्ण भये देवलोकतैं अपना पतन दीखै ताके दुःखकूं भगवान केवली ही जानै हैं इस संसारमें स्वर्गका महर्द्धिकदेव मरिकरि एकेन्द्री आय उपजै है तथा मलमूत्रके भरे गर्भमें रुधिरमांसमें आय जन्मै है इस संसारमें परिभ्रमण करता पापपुण्यके प्रभावकरि श्वानादिक तिर्यंच हैं ते तो देव जाय उपजै हैं ब्राह्मण चांडाल होय जाय तिर्यंच हो जाय कर्मनिके आधीन हुवा जीव च्यारूं गतिनिमें परिभ्रमण करे है संसारमें राजा होयके रंक होय है स्वामीका सेवक होय है सेवकका स्वामी होय है पिता होय सो ही पुत्र हो जाय है पुत्रका पिता हो जाय है पिता पुत्र ही माता हो जाय भार्या हो जाय बहिन हो

जाय दासीदास हो जाय दासीदास ही पिता हो जाय माता हो जाय आप ही आपके पुत्र हो जाय देवता होय तिर्यंच हो जाय धनाढ्यका निर्धन निर्धनका धनाढ्यपना पावै है रोगीदरिद्रीनिका दिव्यरूपवान हो जाय दिव्यरूपवान महाविद्रूप देखनेयोग्य नाहीं रहै है। बहुरि शरीर धारण हू बडा भार है भारकूं वहता पुरुष तो कोऊ स्थानमें भारउतारि विश्रामकूं प्राप्त होय है देहके भारकूं वहता पुरुष कहां हू विश्रामकूं प्राप्त नाहीं होय है जहां औदारिक वैक्रियिकका क्षणमात्र भार उतरे तहां आत्मा इनूंतैं अनंतगुणा तैजसकार्माणशरीरका भार धारै है कैसाक है तैजसकार्माण जो आत्माका अनंतज्ञानदर्शनवीर्यकूं दाबि राख्या है जाकरि केवलज्ञान तथा अनंतसुखशक्ति ताका अभावतुल्य हो रह्या है जैसैं बनमें अंधमनुष्य भ्रमण करै है तैसैं मोहकरि अंध चतुर्गतिमें परिभ्रमण करै है संसारीजीव रोगदरिद्रवियोगादिकके दुःखकरि दुःखित होय धन उपजाय दुःख दूर करनेकूं मोहकरि अंधहुवा विपरीत इलाज करै है सुखीहोनेकूं अभक्ष्यभक्षण करै है छलकपट करै है हिंसा करै है धनके वास्तै चोरी करै मार्ग लूटै परंतु धन हू पुण्यहीनके हाथ नाहीं आवै है सुख तो पंचपापनिके त्यागतैं होय मिथ्यात्वी पंचपापकरि अपने धनकी वृद्धि कुटुंबकी वृद्धि सुखकी वृद्धि चाहै इंद्रियनिके विषयकी प्राप्ति होनेमें सुख जानै है सो ही मोहकरि अंधपना है जे संसारीजीवके इहां हू दुःख देखिये हैं ते जीवनिके मारनेतैं असत्यतैं चोरीतैं कुशीलतैं परिग्रहकी लालसातैं क्रोधतैं अभिमानतैं छलतैं लोभतैं अन्यायतैं ही दुःख देखिये है अन्यमार्ग दुःखहोनेका नाहीं है ऐसैं प्रत्यक्ष देखता हू पापनिमें रचै है यो विपरीतमार्ग ही अनंतदुःखनिका कारण संसार है दुःखनितैं दुःख ही उपजै जैसैं अग्नितैं अग्नि उपजै है, ऐसैं संसारका सत्यार्थस्वरूपकूं वारंवार चिंतवन अनुभवन करै ताकै संसारतैं उद्वेग रहै विरक्त होय सो संसारपरिभ्रमण दूर करनेका उद्यममें सावधान होय। ऐसैं तीसरी संसारभावना वर्णन करी॥ ३॥

अब एकत्वभावना अपना स्वरूपकी प्राप्तिकेअर्थ चिंतवन करो। यो जीव कुटुंबस्त्रीपुत्रादिककेअर्थ

तथा शरीरके पालनेके अर्थ वा अपना देहके अर्थ बहुआरंभ बहुपरिग्रह अन्याय अभक्ष्यादिक करे है ताका फल घोरदुःख नरकादिपर्यायनिमें एकाकी आप भोगे है। जिस कुटुंबके अर्थि वा अपना देहके अर्थि पाप करे है ते समस्त तो भस्म होय उडि जायगा कुटुंब कहां मिलैगा अपने उपजाये कर्मनिका उदयकरि आये रोगादिकदुःखवियोग तिनकूं भोगता जीवके समस्त मित्र कुटुंबादिक प्रत्यक्षदेखते हू किंचित दुःख दूरि नाहीं कर सके है तदि नरकादिकुगतिमें कौन सहायी होयगा एकाकी भोगैगा आयुका अंतहोते एकाकी मरे है मरणतें रक्षा करनेकूं कोऊ दूजा सहायी नाहीं है अशुभका फल भोगनेमें कोऊ अपना सहाई नाहीं है परलोकप्रति गमन करते आत्माके स्त्री पुत्र मित्र धन देह परिग्रहादिक सहाई नाहीं हैं कर्म एकाकीकूं ले जायगा इस लोकमें जे बांधव मित्रादिक हैं ते परलोकमें बांधव मित्रादिक नाहीं होंयगे अर जे धन शरीर परिग्रह राज्य नगर महल शय्या आभरण सेवकादि परिकर यहां हैं ते परलोकमें लार नाहीं जांयगे इस देहके संबंधी इस देहका नाश होतें संबंध छांडेंगे ये अपने कर्मके आधीन सुख दुख आपके आपही भोगेंगे जीव एकाकी जायगा तातें संबंधीनिमें ममता करि परलोक बिगाडना महा अनर्थ है यहां जो सम्यक्त्व व्रत संयम दान भावनादिकरि धर्मउपार्जन कीया सो इस जीवके सहाई होय है एकधर्मविना कोऊ सहाई नाहीं एकाकी है धर्मके प्रसादतें स्वर्गलोकमें इंद्रपना महर्द्धिकपना पाय तीर्थंकर चक्रवर्तीपना मंडलेश्वरपना उत्तमरूप बल विद्या संहनन उत्तम जातिकुल जगतपूज्यपना पाय निर्वाणकूं प्राप्त होय है जैसें बंदीगृहमें बंधनिकरि बंध्या पुरुषकूं बंदीगृहमें राग नाहीं है तैसें सम्यग्ज्ञानी पुरुषके देहरूप बंदीगृहमें राग नाहीं है जामें धनकुटुंब अभिमानादिक घोरबंधनमें पराधीन हुवा दुःख भोगे है एकाकी ही अपना स्वरूप छांडि परद्रव्य देहपरिग्रहादिकानिकूं आपा जाणि अनंतकाल भ्रमे है एकाकी अन्यगतितैं आय जन्म धारया है कर्मविना अन्य लार नाहीं आया है पापपुण्यकर्म राजा रंक नीच ऊंचके गर्भादि योनिस्थानमें ले जाय उपजावे अर एकाकी ही आयु पूर्ण भये समस्त कुटुंबादि

छांडि परलोककूं जाय है फिर पाछा आवना नाहीं गर्भमें बसनेका दुःख योनिसंकटका दुःख रोगसहित शरीरका दुःख दारिद्रका घोर दुःख वियोगका महादुःख क्षुधातृषादि वेदनाका दुःख अनिष्टदुष्टनिका संयोगका दुःख यो जीव एकाकी भोगै है अर स्वर्गनिके असंख्यात काल पर्यंत महान् सुख अर अपछरानिका संगम असंख्यात देवनिका स्वामीपना हजारां ऋद्ध्यादिक सामर्थ्य पुण्यके उदयकरि एकाकी जीव भोगै है अर पापके उदयतैं नरकमैं ताडन मारण छेदन भेदन शूलारोहण कुंभीपाचन वैतरणी निमज्जन तथा क्षेत्रजनित शरीरजनित मानसीक तथा परस्परकृत घोरदुःख एकाकी भोगै है तथा तिर्यंचनिके पराधीन बंधना बोझभार लादना कुवचन श्रवण करना मरमस्थानमें नानाप्रकार घात सहन दीर्घ कालपर्यंत भार लेय बहुत दूर चलना क्षुधातृषा सहना रोगानिकी नानावेदना भोगना शीत उष्ण पवन तावडा वर्षा गडा इत्यादि घोरवेदना भोगना नासिकादिकमें जेवडां घालि दृढ बांधना घसीटना चढना समस्तदुःख पापके उदयतैं एकाकी जीव भोगै है कोऊ मित्र पुत्रादि सहाई लार नाहीं रहै है एक धर्म ही सहाई है ऐसैं एकत्वभावना भावनेतैं स्वजननिमैं प्रीति नाहीं बंधै है अन्य परिजनांमें द्वेषका अभाव होय तदि अपने आत्माका शुद्धतामें ही यत्न करै ऐसैं एकत्वभावना वर्णन करी ॥ ४ ॥

अब अन्यत्वभावनाका स्वरूप चिंतवन करना योग्य है । हे आत्मन् ! इस संसारमैं जे जे स्त्री पुत्र धन शरीर राज्य भोगादिकनिका तेरै संबंध है ते ते समस्त तेरा स्वरूपतैं अन्य हैं भिन्न हैं कौनके शोचमैं विचारमैं लगि रहे हो अनंतानंत जीवनिका अर अनंतपुद्गलनिका संबंध तुम्हारे अनंतबार होय २ छूटे है अज्ञानी संसारी आपतैं अन्य जे स्त्रीपुत्रमित्रशत्रुधनकुटुंबादिक तिनका संयोगवियोग सुखदुःखादिकनिका चिंतवनकरि काल व्यतीत करै है अर अपने नजीक आया मरण वा नरक तिर्यंचादिकगतिनिमैं प्राप्त होना ताका चिंतवन विचार नाहीं करै है जो समयसमय यो मनुष्य आयु जाय है यामैं ही जो मैं मेरा हित नाहीं किया पापतैं पराङ्मुख नाहीं भया तथा कुगतिके कारण रागद्वेष मोह काम क्रोध लोभा-

दिक महा छलीतैं आत्माकूं नाहीं छुडाया तो तिर्यंचनरकगतिमैं अज्ञानीपराधीन अशक्त हुवा कहा करूंगा इस पंचपरिवर्तनरूप संसारमैं अनंतानंतकालतैं परिभ्रमण करता जीवके कोऊ अपना स्वजन नाहीं है ये स्वामी सेवक पुत्र स्त्री मित्र बांधवनिकूं जो अपना मानो हो सो यो मिथ्यामोहकी महिमा है याहीकूं मिथ्यात्व कहिये है ये तो समस्तसंबंध कर्मजनित अल्पकाल है अचानक वियोग होयगा ये समस्त संबंध विषयकषाय पुष्ट करनेकूं अपना स्वरूपकी भूलि होनेकूं हैं संसारमैं समस्तजीवनितैं अपना शत्रु-मित्रपना अनेकबार भया है अर आगानै भी इस परद्रव्यनिके संबंधमें आत्मबुद्धिकरि अनंतकाल भोगोगे तहां रागद्वेषबुद्धिकरि शत्रुमित्र बुद्धिहीतैं एकेंद्रीयपना तथा ज्ञान पिछान विचाररहित अज्ञानी भये अनंतकाल भ्रमोगे जैसैं अनेक देशनितैं आए भिन्नभिन्न अनेक पथिक रात्रिमैं एकआश्रममैं बसैं हैं अथवा एकवृक्षके विषैं अनेकदशानितैं आए अनेकपक्षी आय बसैं हैं प्रभातकाल भये नानामार्गनिकरि नानादेशनिकूं जाय हैं तैसैं स्त्री पुत्र मित्र बांधवादिक नानागतिनितैं पापपुण्य बांधि आए कुलरूप आश्रममें शामिल भये हैं आयुपूर्णका काल भये पुण्यपापके अनुसार नरकतिर्यंच मनुष्यादिक अनेकभेद-रूप गतिनिकूं प्राप्त होयंगे कोऊ ही कोऊका मित्र नाहीं पुण्यपापके अनुकूल दोयादिन आपका उपकार अपकारकरि संसारमैं जाय रूलै हैं इस संसारमें जीवनिकी भिन्न २ प्रकृति है कोऊका स्वभाव कोऊसूं मिलै नाहीं है स्वभावमिल्यां विना काहेकी प्रीति है परस्पर कोऊ अपना अपना विषयकषायरूप प्रयो-जन सधता दीखै है तिनकै प्रीति होय है प्रयोजन विना प्रीति नाहीं है ये समस्त लोक वालूरेतका कण-का ज्यों कोऊका कोऊसूं संबंध है नाहीं जैसैं वालूका भिन्न भिन्न कण कोऊ जलादिक सचिक्कणद्रव्यका समागमतैं मूठीमें बंधिजाय चिपि जाय चेप दूर भये कणा कणा भिन्न भिन्न बिखरै है तैसैं समस्त पुत्र स्त्री मित्र बांधव स्वामी सेवकनिका संबंध हू कोऊ अपना विषय वा लोभ अभिमानादि कषाय जेते साधता दीखै है तेते प्रीति जानो, जितने इंद्रियनिके विषय सधै नाहीं अभिमानादिकषाय पुष्ट होय नाहीं तिनके

लूखे परिणामनिमें प्रीति नाहीं अर विनाप्रयोजन हू जगतमें प्रीति देखिये है सो हू लोकलाजका अभि-मानतैं तथा आगामी कुछप्रयोजनकी आशातैं तथा पूर्वकालका उपकारि लोपूंगा तो लोकमें मेरा कृतघ्नपना दीखैगा इस भयतैं मिष्टवचनादिकरूप प्रीति करै है कषायविषयनिका संबंधविना प्रीति है ही नाहीं सो देखिये ही है जिसतैं अपना अभिमान मधता देखै वा धनका लाभ वा विषयभोगनिका लाभ तथा आदरका बडाईका वा अपना पूज्यपना होनेका लाभके अर्थ वा जसके अर्थ अथवा कोऊप्रकार आपदाका भयतैं प्रीति करै है विषयकषायका चेपविना प्रीति है ही नाहीं समस्त अन्य हैं माता हू जो पुत्रका पोषण करै है सो दुःखमें वृद्धपनामें अपना आधारजानि पोषै है अर पुत्र जो माताका पोषण करै है सो ऐसा विचार करै है जो मैं माताका सेवा नाहीं करूंगा तो जगतमें मेरा कृतघ्नीपनाका अपवाद होयगा तथा पांचआदम्यांमें मेरी उच्चता नाहीं रहैगी ऐसा अभिमानतैं प्रीति करै है, बैरी हू उपकारदान सन्मानादिकरि अपना मित्र होय है अर अपना अति प्यारा पुत्र हू विषयनिके रोकनेतैं अपमान तिरस्कारादि करनेकरि अपना क्षणमात्रमें शत्रु होय है तातैं कोऊका कोऊ मित्र हू नाहीं अर शत्रु हू नाहीं है उपकार अपकारकी अपेक्षा मित्रशत्रुपना है अर संसारीनिके जो अपना विषय अर अभिमान पुष्ट करै सो मित्र है अर विषय अर अभिमानकूं रोकै सो बैरी है जगतका ऐसा स्वभाव जानि अन्यमें रागद्वेषका त्याग करो यहां जे घणा प्यारा स्त्रीपुत्रमित्रबांधव तुम्हारे हैं ते समस्त स्वर्गमोक्षका कारण जो धर्मसंयमादिकनिमें वीतरागतामें अत्यन्त विघ्न करैं हैं अर हिंसा असत्य चोरी कुशील परिग्रहादिक महा अनीतिरूप परिणाम कराय नरकादिक कुगति पावनेका बंध करावैं हैं ते अति वैरी हैं इस जीवकूं मिथ्यात्व विषय कषायादिकतैं रोकि संयममें दशलक्षणधर्ममें प्रवृत्ति करावैं हैं ते मित्र हैं ते निर्ग्रंथ गुरू ही हैं बहुरि यो आत्मा स्वभावहीतैं शरीरादिकनितैं विलक्षण है चेतनमय है देह पुद्गलमय अचेतन जड है जो देह ही अन्य है विनाशीक है तो याका संबन्धी स्त्रीपुत्रमित्र कुटुंब धन धान्य स्थानादिक अन्य कैसैं नाहीं

होय । यो शरीर तो अनेक पुद्गलपरमाणूनिका समूह मिलि बन्या है ते शरीरके परमाणु भिन्नभिन्न बिखरिजांयगे अर आत्मा चैतन्यस्वभाव अखंडअविनाशी रहैगा तातैं सकलसंबंधनिमैं अन्यपनाका दृढ निर्णय करो । बहुरि कर्मके उदयजनित रागद्वेषमोहकामक्रोधादिक ही भिन्न हैं विनाशीक हैं तो अन्य शरीरादिकसंबंधी अन्य कैसैं नाहीं होय यातैं अपना ज्ञान दर्शन स्वभावविना अन्य जे ज्ञानावरणादिक जे द्रव्यकर्म अर रागद्वेषादिक भावकर्म शरीर परिग्रहादिक नोकर्म ये समस्त अन्य हैं ये पुत्रादिक हैं ते अन्य गतितैं अन्य पापपुण्य स्वभाव कषाय आयु कायादिकका संबंधरूप देखिए है तुम्हारा स्वभाव पापपुण्य इनतैं अन्य है यातैं अन्यत्वभावना भावो तो इनकी ममता जनित घोरबंधका अभाव होय ऐसैं अन्यत्वभावनाका वर्णन किया ॥ ५ ॥

अब अशुचि भावना वर्णन करैं हैं । भो आत्मन् ! इस देहका स्वरूपकूं चिंतवन करो महामलीन माताका रुधिर पिताका वीर्य करि उपज्या है महादुर्गंध मलिन गर्भकेविषै रुधिरमांसका भर्या हुवा जरायुपटलमैं नवमास पूर्णकरि महादुर्गंध मलीनयोनितैं निकलनेका घोरसंकट सहे है अर सप्तधातुमय देह रुधिर मांस हाड चाम वीर्य मज्जा नसांका जालमय देह धार्या है मलमूत्र लटकीडेनिकरि भर्या महाअशुचि है जाके नवद्वार निरंतर दुर्गंधमलकूं स्रवैं हैं जैसैं मलका बनाया घडा अर मलकरि भर्या अर फूटा चारोंतरफ मल स्रवै सो जलसूं धोये कैसैं शुचि होय जगतमैं कपूर चंदन पुष्प तीर्थनिके जलादिक हैं ते देहके स्पर्शमात्रतैं मलीन दुर्गंध हो जाय सो देह कैसैं पवित्र होय जेते जगतमैं अपवित्र वस्तु हैं ते देहके एक एक अवयवके स्पर्शतैं ही हैं मलके मूत्रके हाडके चामके रमके रुधिरके मांसके वीर्यके नसांके केशके नखके कफके लालके नासिकाके मल दंतमल नेत्रमल कर्णमलके स्पर्शमात्रतैं अपवित्र होय हैं द्विंद्रियादिक प्राणीनिके देहका संबंधविना कोऊ अपवित्र वस्तु ही लोकमैं नाहीं है देहका संबंधविना लोकमैं अपवित्रता कहांतैं होय अर देहके पवित्र करनेकूं त्रैलोक्यमैं कोऊ पदार्थ नाहीं जलादिकानितैं कोटिबार

धोइये तो जल हू अपवित्र होजाय। जैसें कोयलाकूं ज्यों धोवो त्यों कालिमा ही खवे उज्ज्वल नाहीं होय तैसें देहका स्वभावजानि याकूं पवित्र मानना मिथ्यादर्शन है यो देह तो एक रत्नत्रय उत्तमक्षमादिक धर्मकूं धारण करता आत्माका संबंधकरि देवानिकरि वंदनेयोग्य पवित्र होय है बहुरि धनादिकपरिग्रह अर पंचइंद्रियनिके विषय अर मिथ्यात्व अर क्रोधमानमायालोभ ये अमूर्तीक आत्माका स्वभावकूं महा मलीन करें हैं अधर्म करें हैं निंद्य करें हैं दुर्गतिकूं प्राप्त करें हैं यातैं कामक्रोधरागादिछांडि आत्माकूं पवित्र करो देह पवित्र नाहीं होयगा इसप्रकार देहका स्वरूपजानि जे देहतैं रागछांडि आत्मातैं अनादितैं संबंधनै प्राप्तभये रागादिककर्ममल तिनके दूर करनेमैं यत्न करो धनसंपदादिक परिग्रह अर पंचइंद्रियनिके भोग अर देहमैं स्नेह ये आत्माकूं मलीन करनेवाले हैं तातैं इनका अभाव करनेमैं उद्यम करो धर्म है सो आत्माके काम क्रोध लोभ मद कपट ममता वैर कलह महाआरंभ मूर्छा ईर्षा अतृप्तितादिक हजारांदोषनिकूं उपजावे है इसलोकसंबंधी परलोकसंबंधी समस्तदोष आर्तिचिंता दुर्ध्यान महाभय उपजावनेवाला एक धनकूं निर्णयकरि चिंतवन करो अर पंचइंद्रियनिके विषय आत्माकूं आपा भुलाय महानिंद्यकर्म करावे है जो निंद्यकर्म नाहीं करनेयोग्य जगतमैं है तिनकूं इंद्रियनिके विषयनिकी वांछा करावे है अर देहमैं स्नेह है सो मांसमद्यहाडमय महादुर्गंध सिच्याहुआ कलेवरसूं राग है सो महामलिनभावका कारण है ऐसा शरीरकी शुचिता करनेवाला दशलक्षण धर्म ही है। शुचिपना दोयप्रकार है एक लौकिक दूजा लोकोत्तर जो कर्ममलकूं धोय शुद्ध आत्मस्वरूपमैं स्थिर होना सो लोकोत्तर शौच है याका कारण रत्नत्रयभाव है तथा रत्नत्रयके धारक परमसाम्यभावतैं तिष्ठते साधु हैं जिनके संगमकरि शुद्धात्माकूं प्राप्त होइये अर लौकिकशुचि अष्टप्रकार है कोऊ कालशौच जो प्रमाणीककाल व्यतीत भये लोकमैं शुचि मानिये है कोऊ अग्निकरि संस्कार स्पर्शनकरि शुचि मानिये है कोऊकूं पवनकरि कोऊकूं भस्मतैं मांजने करि कोऊकूं मृत्तिकातैं कोऊकूं जलतैं कोऊकूं गोमयतैं कोऊ ज्ञानमैं ग्लानि मिट जानेतैं लौकिकजन

मनमैं शुचिपनाका संकल्प करैं हैं परन्तु शरीरके शुचि करनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं है शरीरके संसर्गतैं तो जलभस्मादिक अशुचि हो जाय हैं यो शरीर आदिमैं अंतमैं मध्यमैं कहां हू शुचि नाहीं याका उपादान कारण रुधिर वीर्य है सो शुचि नाहीं यो आप शरीर शुचि नाहीं याके अभ्यंतर दुर्गंधमलमूत्रादिक बाह्य चाम हाड मांस रुधिर शुचि नाहीं जो याकूं समस्त तीर्थ समस्तसमुद्रनिके जलकरि धोइये है तो समस्त जलकूं हू अशुचि करै है यो देह है सो सर्वकाल रोगनिकरि भरया है अर सर्वकाल अशुचि है अर सर्वथा विनाशीक है दुःखउपजावनेवाला है याके शुचि करनेका इलाज प्रतिकार धूप गंध विलेपन पुष्प स्नान जल चंदन कर्पूरादिक कोऊ है नाहीं याके स्पर्शनमात्रतैं पवित्रवस्तु हू अंगाराके स्पर्शनतैं अंगारा होय तैसैं अपवित्र होय हैं ऐसैं शरीरका अशुचिपना चिंतवनकरनेतैं शरीरका संस्कारकरनेमैं रूपादिकमैं अनुरागका अभावतैं वीतरागतामैं यत्न करै है। ऐसैं अशुचिभावना वर्णन करी ॥ ६ ॥

अब आस्रवभावनाका वर्णन करिये है। कर्मके आवनेके कारणतैं आस्रव है जैसैं समुद्रके बीच जहाजमैं छिद्रनिकरि जल प्रवेश करै है तैसैं मिथ्यात्वभावकरि अर पंचइंद्रिय छठा मनका विषयनिमैं प्रवर्तनिके त्यागका अभावकरि अर छहकायके जीवनिकी हिंसाका त्याग नाहीं करनेकरि अर अनंतानुबंधीकूं आदि लेय पच्चीसकषायनितैं तथा मनवचनकायके भेदतैं पंद्रहप्रकार योग ऐसे सत्तावन द्वार कर्मआवनेका है तिनमैं मिथ्यात्वकषाय अव्रतादिकनिके अनुसार मनवचनकायतैं शुभअशुभकर्मका आस्रव होय है तहां पुण्यपापके संयोगतैं मिले विषयनिमैं संतोष करना विषयनितैं विरक्तता परोपकारके परिणाम दुःखितनिकी दया तत्वनिका चिंतवन समस्तजीवनिमैं मैत्रीभाव इत्यादि भावना, परमेष्ठीमैं भक्ति, धर्मात्मामैं अनुराग, तपव्रतशीलसंयममैं परिणाम इत्यादिकरूप मनकी प्रवृत्ति पुण्यका आस्रव करै है अर परिग्रहमैं अभिलाष, इंद्रियनिके विषयनिमैं अति लोलुपता, परके धन हरनेमैं परिणाम, अन्यायप्रवर्तनमैं अभक्ष्यभक्षणमैं सप्तव्यसन सेवनमैं परके अपवाद होनेमैं अनुराग रखना परके स्त्रीपुत्रधनआजीविकाका

नाश चाहना परका अपमान चाहना आपकी उच्चता चाहना इत्यादिक मनके द्वारे अशुभआस्रव होय है। बहुरि सत्यहितमधुर वचनकरि तथा परमागमके अनुकूल वचनकरि परमेष्ठीका स्तवनकरि सिद्धांतका बांचना तथा व्याख्यानकरि न्यायरूप वचनकरि पुण्यका आस्रव होय है। बहुरि परकी निंदा आपकी प्रशंसा अन्यायका प्रवर्तन जिस वचनकरि होय तथा हिंसाके आरंभ करावनेवाला विषयानुराग बधावनेवाला कषायरूप अग्निके प्रज्वलित करनेवाला तथा कलह विसंवाद शोक भयका बधावनेवाला तथा धर्मविरुद्ध मिथ्यात्व असंयमका पुष्ट करनेवाला अन्यजीवनिके दुःख अपमान धन आजीविकाकी हानिके करनेवाले वचनतैं पापका आस्रव होय है। बहुरि परमेष्ठीका पूजन प्रणाम जिनायतनका सेवन धर्मात्मापुरुषनिका वैयावृत्य यत्नाचारतैं जीवनिपर दयारूप हुवा सोवना बैठना पलटना मेलना धरना सौंपना खावना पीवना बिछावना चालना हालना इत्यादिक कायका योग शुभआस्रवका कारण है। बहुरि यत्नाचार विना करुणारहित स्वच्छंद देहका प्रवर्तावना महाआरंभादिकमैं प्रवर्तन करना देहके संस्कारमैं रहना सो समस्त कायके द्वारे अशुभआस्रव होय है, ये मनवचनकायकी शुभअशुभ प्रवृत्ति तीव्र मंद कषायके योगतैं तीव्र मंद नानाभेदरूप कर्मके बंधके निमित्त होय है इनका चिंतवन करनेतैं आत्मा अशुभप्रवृत्तिसूं रुकि शुभप्रवृत्तिमैं सावधान होय प्रवर्तन करै है। बहुरि कषाय आत्माका समस्तगुणनिका घात करनेवाले हैं क्रोध है सो तो परजीवनके मारनेमैं घात करनेमैं बंधनादि करनेमैं चित्तकूं दौडावै है अर मान है सो इस जीवकूं दर्पकरि ऐसा उद्धत करै है जो पिता गुरु उपाध्याय स्वामीका हू तिरस्कार करना वांछै है विनयका विध्वंस करै है मायाकषाय है सो अनेकछल अनेकधूर्तता अनेकपरकूं भुलाय देना इत्यादि कपट ही विचारै है परिणामकी सरलताका अभाव करै है लोभ कषाय है सो सुखका कारण संतोषकूं छेदै है योग्यअयोग्यके विचारका नाश करै है काम है सो मर्यादाका भंग करै लज्जाका भंग करै है हित अहितका नीचकर्म उच्चकर्मका विचाररहित करै है मोह है सो मदिराकी ज्यों स्वरूपकूं

भुलावे है शोक है सो अतिदुःखतैं हाहाकारशब्द करावे है रुदनादिक आत्मघातादिकमैं प्रवृत्ति करावे है हास्य है सो परकी हास्य अज्ञानता प्रगट कीया चाहै है स्नेह है सो मद्य विना पीये ही अचेतन करै है अर महाबंधनरूप आत्माकूं हितप्रवृत्तिमैं रोकनेवाला है अनर्थका स्थान है निद्रा है सो आत्माका समस्त चैतन्यका घातकरि आत्माकूं जड अचेतन करै है तृषा जो है सो नाहीं पीवनेयोग्य हू पानीकूं पीवाया चाहै है क्षुधा है सो चांडालका घरमें हू प्रवेश करायकै याचना करावै है कुल मर्यादादिककूं नष्ट करै है घोरवेदना देवै है नेत्र है सो रमणीक रूपादिक देखनेकूं झंपापात लेवै है जिह्वाइंद्रिय मिष्टभोजन करनेकूं अतिचंचल भई लज्जा उच्चपना संयमादिक नष्टकरि नीचप्रवृत्ति करावै है घ्राणइंद्रिय सुगंधद्रव्यप्रति अचेत भया झुकै है। स्पर्शनइंद्रिय स्त्रीनिके कोमलअंग कोमल शय्यादिकमें तृष्णा बधावै है कर्णइंद्रिय नाना-रागनिमें झुकि आपा भुलाय पराधीन करै है मन है सो चंचल वानरकी ज्यों स्वच्छंद घोरविकलपकरि शुभध्यान शुभप्रवृत्तिनिमैं नाहीं ठहरे है विषयकषायादिकनिमैं भ्रमै है असत्यवाणी मुखपैतैं अतिरागतैं निकसि अपनी चतुरता प्रगट करै है हस्त हैं ते हिंसाके आरंभ करनेका मुख्य उपकरण हैं चरण हू पाप-करनेका मार्गमैं अति दौडैं हैं कविपना है सो अति रागकरनेवाली कविता रच्या चाहै है पण्डितपना कुतर्क अर असत्यप्रलापपना करि अपनी विख्यातता चाहै है सुभटपना घोर हिंसा चाहै है बालपना अज्ञानरूप है यौवन वांछितविषयनिके अर्थि विषम स्थानमैं हू दौडै है वृद्धपना है सो विकरालकालके निकट वर्तै है उस्वास निस्वास निरंतर देहतैं भागि निकसि जानेका अभ्यास करै है जरा है सो काम-भोग तेज रूप सौंदर्य उद्यम बल बुद्ध्यादिक हरनेकूं तस्करी है रोग हैं ते यमराजके प्रबल सुभट हैं ऐसी सामिग्री इस आत्माकूं आपा भुलावनेवाली है तिनतैं महान्कर्मका आस्रव होय है। ये इंद्रियविषय अर कषायनिके संयोगतैं मनवचनकायद्वारे आस्रव होय है ऐसैं आस्रवभावना वर्णन करी ॥ ७ ॥

अब संवरभावना वर्णन करैं हैं। जैसैं समुद्रके मध्य नावके जल आवनेका छिद्र रोकि दे तो नाव

जलसूं भरि नाहीं डूबे तैसें कर्म आवनेके द्वार रोकै ताकै परमसंवर होय है सम्यग्दर्शनकरि तो मिथ्यात्वनाम आस्रवद्वार रुकै है इंद्रियनिकूं अर मनकूं संयमरूप प्रवर्तावनेतैं इंद्रियद्वारै आस्रव रुकि संवर होय है अर छहकायके जीवनिका घातकरनेवाला आरंभका त्यागतैं प्राणसंयमकरि अविरतानिके द्वारै कर्मके आगमनके रुकनेतैं संवर होय है कषायनिकूं जीति दशलक्षणरूप धर्मके धारनेतैं चारित्र प्रगट होनेतैं कषायनिके अभावतैं संवर होय है ध्यानादिक तपतैं स्वाध्याय तपतैं योगद्वारै कर्म आवते रुकै हैं यातैं संवर है जातैं गुप्तित्रय पंचसमिति दशलक्षणधर्म द्वादशभावना द्वाविंशतिपरीषह सहना पंचप्रकार चारित्र पालना इनकरि नवीनकर्म नाहीं आवे है तिनमें मनवचनकायके योगनिकूं रोकना सो गुप्ति है प्रमादछांडि यत्नतैं प्रवर्तना सो समिति है दया है प्रधान जामैं सो धर्म है स्वतत्त्वका चिंतवन सो भावना है कर्मके उदयतैं आए क्षुधातृषादिपरीषहानिकूं कायरतारहित समभावतैं सहना सो परीषहजय है रागादिदोषरहित अपने ज्ञानस्वभाव आत्मामैं प्रवृत्ति करना सो चारित्र है ऐसें जो विषयकषायतैं पराङ्मुख होय सर्व क्षेत्र कालमैं प्रवर्तै है ताकै गुप्ति समिति धर्म अनुप्रेक्षा परीषहजय चारित्र इनकरि नवीनकर्म नाहीं आवे सो संवर है यो संवरके कारण चिंतवन करता रहै ताकै नवीनआस्रव बंध नाहीं होय है ऐसें संवरभावना वर्णन करी ॥ ८ ॥

अब निर्जराभावनाकूं कहिये है जो ज्ञानी वीतरागी हुवा मदरहित निदानरहित हुवा द्वादशप्रकार तप करै है ताकै महानिर्जरा होय है समस्त कर्मनिका उदयरूपरसकूं प्रगट करि झडना सो निर्जरा है सो दोय प्रकार होय है एक तो अपना उदयकालमें रस देय झडना सो सविपाकनिर्जरा है सो तो चारों गतिनिमें कर्म अपना रसरूप फल देय निर्जरै ही है अर जो व्रततपसंयम धारणकरि उदयका कालविना ही निर्जरा करै है सो अविपाकनिर्जरा है मंदकषायके भावसहित जैसें जैसें तप बंधे है तैसें तैसें निर्जराकी वृद्धि होय है जो पुरुष कषायवैरीकूं जीति दुष्ट जननिके दुरवचन उपद्रव उपसर्ग अनादरादिकानिकूं

कलुषभावरहित सहै है ताकै महानिर्जरा होय है अर जो दुष्टनिकरि कीया उपद्रव अर कर्मके उदयकृत परीषहादिक दरिद्र रोगादिक तथा दुष्टनिका संगमादिक आवतैं ऐसा विचारै है जो पूर्वकालमैं पाप उपार्जन कीया था ताका ये फल है अब समभावतैं भोगो कर्मरूप ऋण छूटैगा नाहीं विषाद करोगे तो कर्म छोडनेका नाहीं संक्लेश करनेमैं संख्यात असंख्यात गुणा नवीन और बांधोगे जो उत्तम पुरुष शरीरकूं तो केवल ममत्वका उपजावनेवाला विनाशीक अशुचि दुःखदेनेवाला जानै है अर सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्रकूं सुखका उपजावनेवाला निर्मल नित्य अविनाशी जानै है अर अपनी निंदा करै है अर गुणवंतनिका बडा सत्कारकरि उच्च मानै है अर मनकूं अर इंद्रियनिकूं जीति अपने ज्ञान स्वभावमैं लीन होय है तिनका मनुष्यजन्म पावना सफल होय है अर तिसहीके पापकर्मकी बडी निर्जरा होय है अर संसारका छेदनेवाला सातिशय पुण्यका बंध होय है अर तिसहीके परम अतीन्द्रिय अविनाशी अनंतसुख होय है जो समभावरूप सुखमैं लीन होय बारंबार अपने स्वरूपकी उज्ज्वलताकूं स्मरण करै है अर इंद्रियनिकूं अर कषायनिकूं महादुःखरूप जानि जीतै है तिस पुरुषकै महानिर्जरा होय है ऐसैं निर्जराभावना वर्णन करी ॥ ९ ॥

अब लोकभावनाका वर्णन करैं हैं। सर्व तरफ अनंतानंत आकाश ताका बहुतमध्यमैं लोक है जो जीव पुद्गल धर्म अधर्म काल याका समुदाय जेता आकाशमैं तिष्टै है लोकिये है देखिये है सो लोक है तीनसै तीयालीस घनराजूप्रमाण क्षेत्र है बारैं अनंतानंत आकाश है ताकी अलोक संज्ञा है। इस लोकमैं अनंतानंत जीव हैं जीवनितैं अनंतगुणा पुद्गल हैं धर्मद्रव्य एक है अधर्मद्रव्य एक है आकाश एक है कालद्रव्य असंख्यात है सो इन द्रव्यनिका स्वरूप तथा लोकका संस्थानादिकका स्वरूप अवगाहनादिक वर्णन करिये तो कथनी बहुत हो जाय ग्रंथका विस्तार थोरा थोरा करता हू बहुत हो जाय अर अब आयुकायका हू रोगके प्रचारतैं बल घटनेतैं अल्प अवसर दीखै है तातैं ग्रंथका संग्रह कीया ताकी पूर्णता रूप फलकी जरूरत है यातैं अन्य ग्रंथतैं जानना ॥ १० ॥

अब बोधिदुर्लभभावनाका संक्षेप कहैं हैं । अनादिकालतैं यो जीव निगोदमैं बसै है एक निगोदके शरीरमैं अतीतकालके सिद्धानितैं अनंतगुणा जीव है अपने अपने कार्माणदेहकरि युक्त अवगाहना सबकी एकदेहमैं है। ऐसैं बादरसूक्ष्म निगोदजीवानिके देहकरि समस्तलोक नीचैऊपरि मांहि बारै अंतररहित भरया है । बहुरि पृथ्वीकायादिक अन्य पंचस्थावरनिकरि निरंतर भरया है यामैं त्रसपना पावना बालूका समुद्रमैं पटकी हीराकी कणिकाका पावनावत् दुर्लभ है अर जो त्रसपना हू कदाचित पावै तो त्रसनिमैं विकलेंद्रियनिकी प्रचुरतामैं पंचेंद्रियपना असंख्यातकाल परिभ्रमण करतैं हू नाहीं पाइये है फिर विकलत्रयमैं मरि निगोदमैं अनंतकाल फिरि पंचस्थावरानिमैं असंख्यात संख्यातकाल फिरि निगोदमैं जाय है ऐसैं परिभ्रमण करते अनंतपरिवर्तन पूर्ण होय हैं पंचेंद्रियपना होना दुर्लभ है पंचेंद्रियपनामैं हू मनसहितपना होना दुर्लभ है सो असंज्ञी हूवा हितअहितका ज्ञानरहित शिक्षाक्रियाउपदेश आलापादि रहित अज्ञानभावतैं नरकनिगोदादिकतिर्यंचगतिमैं दीर्घकाल परिभ्रमण करै है अर कदाचित मनसहित हू होय तो क्रूरतिर्यंचनिमैं रौद्रपरिणामी तीव्रअशुभलेश्याका धारक घोरनरकमैं असंख्यातकाल नाना प्रकारके दुःख भोगै है असंख्यातकाल नरकके दुःखभोगि फिर पापी तिर्यंच होय है फिर नरकमैं तथा तिर्यंचानिमैं अनेकप्रकार घोरदुःख भोगता असंख्यातपर्याय तिर्यंचकी वा नरककी भोगता फिर स्थावर-निमैं परिभ्रमण करता अनंतकाल जन्ममरण क्षुधातृषा शीत उष्णता मारन ताडन सहता अनंतकाल व्यतीत करै है कदाचित चौहटामैं रत्नराशिका पावना होय तैसैं मनुष्यपना दुर्लभ पायकरकै हू म्लेच्छ मनुष्य होजाय तो तहां हू घोरपाप संचयकरि नरकादिकचतुर्गतिमैं परिभ्रमण करतेकैं फिरि मनुष्यजन्म पावना अति ही दुर्लभ है तहां हू आर्यखण्डमैं जन्मलेना अतिदुर्लभ है अर आर्यखण्डमैं हू उत्तमजाति उत्तमकुल पावना अति दुर्लभ है जातैं भील चण्डाल कोली चमार कलाल धोबी नाई खाती लुहार इत्यादि नीचकुल बहुत हैं उच्चकुल पावना दुर्लभ है अर कदाचित उत्तमकुल हू पावै अर धनरहित होय तो तिर्यं-

वनिकी ज्यों भार बहना नीचकुलके धारकानिकी सेवा करनेमें तत्पर रहना तथा अष्टप्रहर अधमकर्मकरि पराधीनवृत्तिकरि उदर भरना ताका उच्चकुल पावना वृथा है। बहुरि जो धनसहित हू होय अर कर्णादिकइंद्रियनकरि विकल होय तो धनपावना वृथा है इंद्रियपरिपूर्णता हू होते रोगरहित देह पावना दुर्लभ है अर रोगरहितकै हू दीर्घआयु पावना दुर्लभ है दीर्घआयु होते हू शील जो सम्यक् मनवचनकायका न्यायरूप प्रवर्तन दुर्लभ है न्याय प्रवर्तन होतै हू सतपुरुषनिका संगतिपावना दुर्लभ है अर सत्संगाति होतैं हू सम्यग्दर्शनका पावना दुर्लभ है सम्यक्त्व होतैं हू चारित्रका पावना दुर्लभ है अर चारित्र होतैं हू याका आयुकी पूर्णतापर्यंत निर्वाहकरि समाधिमरणपर्यंत निर्वाह होना दुर्लभ है रत्नत्रय पायकरके हू जो तीव्रकषायादिकनिकूं प्राप्त होय तो संसारसमुद्रमें नष्ट होजाय हैं समुद्रमें पतन किया रत्नको ज्यों फिर रत्नत्रयका पावना दुर्लभ है अर रत्नत्रयका पावना मनुष्यगतिहीमें है मनुष्यगतिहीमें तपव्रतसंयम करि निर्वाणका पावना होय है ऐसा दुर्लभ मनुष्यजन्म पायकरकैं हू जो विषयनिमें रमे हैं ते दिव्यरत्नकूं भस्मके अर्थ दग्ध करैं हैं। ऐसैं बोधिदुर्लभ भावना वर्णन करी ॥ ११ ॥

अब धर्मभावनाका संक्षेप कहैं हैं। धर्मका स्वरूप दशलक्षणभावनामें कहा ही है धर्म है सो आत्माका स्वभाव है सो भगवान सर्वज्ञ वीतरागकरि प्रकाश्या दशलक्षण रत्नत्रय तथा जीवदयारूप है ताका वर्णन यथाअवसर संक्षेपतैं इस ग्रन्थमें लिख्या ही है इस संसारमें धर्मके जाननेकी सामग्री ही अतिदुर्लभ है धर्मश्रवण करना दुर्लभ, धर्मात्माकी संगति दुर्लभ, धर्ममें श्रद्धाज्ञान आचरण कोऊ विरले पुरुषनिके मोहकी मंदतातैं कर्मनिकी उपशमतातैं होय है जो यो जीव जैसें इंद्रियानिके विषयनिमें स्त्रीपुत्रधान्यादिकमें प्रीति करे है तैसें एक जन्ममें हू जो धर्मसूं प्रीति करे तो संसारके दुःखनिका अभाव हो जाय यो संसारी अपने सुखकूं निरंतर बांछे है अर सुखका कारण धर्म है तामें आदर नाहीं करे ताके सुख कैसें प्राप्त होयगा बीजविना धान्यकी प्राप्ति कैसें होय इस संसारमें हू जो इंद्रपना अहमिंद्रपना तीर्थंकरपना

चक्रीपना तथा बलभद्रनारायणपना भया है सो समस्त धर्मके प्रभावतैं भया है तथा यहां हू उत्तम कुल रूप बल ऐश्वर्य राज्य संपदा आज्ञा सपूतपुत्र सौभाग्यवती स्त्री हितकारी मित्र वांछितकार्य साधनेवाला सेवक निरोगता उत्तमभोग उपभोग रहनेका देवविमानसमान महल सुंदरसंगतिमें प्रवृत्ति क्षमा विनयादिक मंदकषायता पण्डितपना कविपना चतुरता हस्तकला पूज्यपना लोकमान्यता विख्यातता दातारपना भोगीपना उदारपना शूरपना इत्यादिक उत्तमगुण उत्तमसंगति उत्तमबुद्धि उत्तमप्रवृत्ति जो कुछ देखनेमें श्रवणमें आवे है सो समस्त धर्मका प्रभाव है धर्मके प्रसादतैं विषम हू सुगम होय है महाउपद्रव हू दूर भागे है उद्यमरहितक हू लक्ष्मीका समागम होय है। धर्मके प्रभावतैं अग्निका जलका पवनका वर्षाका रोगका मारीका सिंहसर्पगजादिक क्रूरजीवनिका नदीका समुद्रका विषका परचक्रका दुष्टराजाका दुष्ट वैरीनिका चोरनिका समस्त उपद्रव दूर होय सुखरूप आत्माके अनेकविभव प्राप्त होय है तातैं जो सवज्ञके परमागमके श्रद्धानी ज्ञानी हो तो केवल धर्मका शरण ग्रहण करो। ऐसैं धर्मभावनाका संक्षेप वर्णन किया ॥ १२ ॥ ऐसैं संस्थानविचय धर्मध्यानमें द्वादशभावनाका संक्षेप वर्णन किया ॥

धर्मध्यानका कथन ध्याननामा तपमैं वर्णन किया है। अब धर्मध्यानका वर्णनमैं ज्ञानार्णवादिक ग्रंथनिमें पिंडस्थध्यान, रूपस्थध्यान, रूपातीतध्यान ऐसैं च्यारप्रकार कह्या है तिनका संक्षेप इस ग्रंथमैं हू जनाइए है। पिंडस्थध्यानमैं भगवान पंचधारणा वर्णन करी है तिनकूं सम्यक् जाननेवाला संयमी संसाररूप पाशीकूं छेदे है। पार्थिवीधारणा, आग्नेयीधारणा, पवनधारणा, वारुणीधारणा, तत्त्वरूपवतीधारणा ऐसैं पंच धारणा जाननेयोग्य हैं। तिनमैं पृथ्वीसंबंधी पार्थिवी धारणाका ऐसा स्वरूप जानना— इस मध्यलोकसमान गोल एक राजूका विस्ताररूप क्षीरसमुद्र चिंतवन करना कैसाक क्षीरसमुद्र चिंतवन करना शब्दरहित अर कल्लोलरहित अर पाला बरफसमान उज्ज्वल तिस क्षीरसमुद्रके मध्यमैं ताया सुवर्ण समान अप्रमाणप्रभाका धारक एक हजार पत्रपांखडीयुक्त अर पद्मरागमणिमय उदयरूप केसरावली

एक कमल चिंतवन करना कैसाक है कमल जम्बूद्वीपसमान एकलक्ष योजनका अर जाके बीच चित्तरूप भ्रमरके रंजायमान करती मेरुसमान कर्णिका जाकी कांतिकरि दशदिशाकूं पीतकरती तिसकर्णिकाके मध्य शरदके चंद्रमाकी कांतिसमान उज्ज्वल उच्च एक सिंहासन तिसमैं आप बैठा हुवा सुखरूप रागद्वेषादिरहित संसारमैं उपज्या कर्मसमूहके नष्ट करनेमें उद्यमी ऐसा आपकूं चिंतवन करै।

भावार्थ—ऐसा ध्यान करै जो एक उज्ज्वल क्षोभरहित शब्दरहित मध्यलोकप्रमाण विस्तीर्ण क्षीर-समुद्र है ताके बीच जंबूद्वीपप्रमाण तायेसुवर्णसमान कांतिका पुंज पद्मराग मणिमय केसरयुक्त एकहजार पांखडीका एक कमल है तिस कमलके बीच मेरुसमान महाकांतिका पुंज कर्णिका, तिस कर्णिकाके मध्य शरदके चंद्रमासमान कांतिका पुंज, उन्नत एक सिंहासन, ताके मध्य क्षोभरहित रागद्वेषरहित अर कर्मके नाश करनेमैं उद्यमी निश्चल बैठ्या अपने आत्माका चिंतवन करना सो पार्थिवी धारणा है। याका दृढ अभ्यास हो जाय तदि तिस स्फटिकमय सिंहासनमैं तिष्ठता आपका नाभिमंडलमैं मनोहर षोडश उन्नतपत्रका धारक एक कमल चिंतवन करै तिस कमलका एकएकपत्र ऊपर तिष्ठती षोडशस्वरानिकी पंक्ति अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः ऐसैं स्थापनकरि चिंतवन करै तिस कमलकी कर्णिकामैं तिष्ठता एक शून्य अक्षर रेफ बिंदु अर्धचंद्राकार कलायुक्त बिंदुमैंतैं कोटिकांतियुक्त दशादिशाकूं व्याप्त करता 'र्हं' ऐसा मंत्रकूं चिंतवन करना फिर तिस मंत्रके रेफतैं मंदमंद निकलता धूम चिंतवन करना। पाछैं अग्निके स्फुलिंगकी पंक्ति चिंतवन करै पाछैं महामंत्रका ध्यानतैं उपज्या ज्वालाका समूह ऊंचा बढता हुआ चिंतवनकरके अपनाहृदयमैं तिष्ठता अधोमुख अष्टकर्ममय अष्टपांखडीका कमलकूं दग्ध करै पाछैं बाह्य निकसि त्रिकोणअग्नि मंडल अग्निका बीजाक्षर रकारसहित स्वस्तिकचिह्नसहित ज्वालाका समूहकरि अग्नि शरीरकूं दग्ध करै पाछैं निर्धूम सुवर्णसमान प्रभाका धारक अग्नि धगधगाट करता मांही तो मंत्रका अग्नि कर्मनिकूं दग्ध करै अर बारैं आग्निपुर शरीरकूं दग्धकरैं फिर दग्ध करने-

योग्य कुछ नाहीं रह्या तदि धीरैंधीरैं अग्नि स्वयमेव शांत होय शीतल होजाय यहांपर्यंत अग्निधारणा वर्णन करी। अब पवनधारणाका वर्णन करैं हैं। कैसा है पवन महावेगयुक्त अर महाबलवान अर देवनिके समूहकूं चलायमान करता अर मेरुकूं कंपायमान करता अर मेघानिके समूहकूं विदारता अर महासमुद्रकूं क्षोभरूप करता अर भुवनानिके मध्य गमन करता अर दिशानिके मुखमैं संचार करता अर जगतके मध्य फैलता अर पृथ्वीतलमैं प्रवेश करता ऐसा पवन आकाशमैं भर करि विचरता स्मरण करै तिस प्रबलपवनकरि वह कर्मका रज अर देहका रजकूं उडाय धीरैंधीरैं पवन शांतताने प्राप्त होय ऐसैं पवनधारणा वर्णन करी। बहुरि वारुणीधारणामैं मेघका समूहकरि व्याप्त आकाशकूं चिंतवन करै कैसाक है मेघ इंद्रधनुष अर बिजुलीनिके चमत्कार महागर्जनासहित स्मरण करै बहुरि अमृततैं उपजी सघन मोतीसमान उज्ज्वल स्थूल धाराकरि निरंतर वरसता स्मरण करै तीठां पाछैं वरुण बीजाक्षरकरि चिह्नित अर अमृतमयजलका पूरकर आकाशमैं व्याप्त होता अर्द्धचंद्रमाके आकार वरुणपुरकूं चिंतवन करै तिस अचिंत्यप्रभावरूप दिव्यध्वनिरूप जलकरि कायतैं उपज्या समस्त रजकूं प्रक्षालन करै ऐसैं वारुणीधारणा वर्णन करी। तीठां पाछैं सिंहासनमैं तिष्ठता अर दिव्यअतिशयनिकरि संयुक्त अर कल्याणनिकी महिमायुक्त अर च्यारप्रकार देवनिकरि पूजित समस्तकर्मकरि रहित अतिनिर्मल प्रगटपुरुषाकार अपना शरीरके मध्य सप्तधातुरहित पूर्णचंद्रसमान कांतिका पुंज सर्वज्ञसमान अपने आत्माकूं चिंतवन करै या तत्त्वरूपवतीधारणा वर्णन करी। ऐसैं पंचधारणास्वरूप पिंडस्थ ध्यानके चिंतवनमैं निश्चल अभ्यासकरता योगी अल्पकालमैं संसारका अभाव करै है। ऐसैं इस पिंडस्थध्यानमैं महाकांतिकरि जगतकूं आल्हादन करता सर्वज्ञ तुल्य मेरुके शिखरऊपरि सिंहासनमैं तिष्ठता समस्तदेवनिकरि वंद्य अपने आत्माकूं निश्चल चिंतवनकरता जिनागमरूप महा समुद्रका पारगामी होय है इस ध्यानहीके प्रभावतैं दुष्टनिकरि कीया विद्यामंडल मंत्रयंत्रादिक क्रूरक्रियाका नाश होय सिंह सर्प शार्दूल व्याघ्र गेंडा हस्ती इत्यादिक क्रूरजीव

शांत होय निःसार होय भूत राक्षस पिशाच ग्रह शाकिन्यादिक दुष्टदेवानिके क्रूरवासनाका अभाव होय है। ऐसैं पिंडस्थध्यानका वर्णन किया ॥ १ ॥

अब पदस्थधर्मध्यानका वर्णन करैं हैं। जे पूर्वले आचार्यनिकरि प्रसिद्ध सिद्धांतमैं मंत्रपद है तिनका ध्यान करना सो पदस्थध्यान है अनादिसिद्धांतमैं प्रसिद्ध समस्तशब्दरचनाकी जन्मभूमि जगतके वंदने-योग्य वर्णमातृका ध्यान करना नाभिविषैं एक षोडशपांखडीका कमल चिंतवन करो ताका पत्रपत्रप्रति षोडशस्वरनिकी पंक्ति भ्रमणकरती चिंतवन करै अ आ इ ई उ ऊ ऋ ॠ ऌ ॡ ए ऐ ओ औ अं अः ऐसैं षोडशस्वरनिकी पंक्ति चिंतवन करै। बहुरि अपने हृदयमैं चौवीसपांखडीका कमल चिंतवन करै ताकी कर्णिकासहित पचीस स्थाननिमैं पंचवर्गके पचीसअक्षर क ख ग घ ङ, च छ ज झ ञ, ट ठ ड ढ ण, त थ द ध न, प फ ब भ म, ऐसैं चिंतवन करै। बहुरि मुखकेविषैं अष्टपांखडीका कमल विषैं य र ल व श ष स ह ये अष्ट अक्षर प्रदक्षिणारूप परिभ्रमण करते चिंतवन करै इस प्रकार अनादिप्रसिद्ध वर्णमातृकाकूं स्मरण करता ज्ञानी श्रुतज्ञान समुद्रका पारगामी होय है। बहुरि इस वर्णमातृका ध्यानतैं नष्ट भई वस्तुका ज्ञान होय तथा क्षयरोग अरुचिरोग मंदाग्नि कोढ उदररोग कास स्वासादिक रोगको विजय करै तथा असदृशवचनकला तथा महंतपुरुषनितैं पूजा पाय उत्तमगतिकूं प्राप्त होय है। बहुरि परमागम करि उपदेश्या पैंतीस अक्षरका मंत्र जपै "णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आयरियाणं, णमो उव-ज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं" तथा 'अर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यो नमः' ऐसैं षोडश अक्षर-निका मंत्रपदका ध्यान करै। तथा 'अरहंतसिद्ध' ऐसैं छह अक्षरनिका मंत्र जाप करै तथा 'णमोसिद्धाणं' ऐसा पंच अक्षरनिके मंत्रका ध्यान करै तथा 'अरहंत' इन चार अक्षरनिका तथा 'सिद्ध' इन दोय अक्ष-रनिका तथा 'ॐ' इस एक अक्षरका तथा 'अ'कारका ध्यान करै तथा 'णमोअरहंताणं' ऐसैं सप्तअक्षरनिके मंत्रका तथा 'असिआउसा' ऐसे पंचअक्षररूप इत्यादिक पंचपरमेष्ठीके वाचक अनेक मंत्र परमगुरुनिके उप-

देशकरि ध्यान करना तथा चत्तारिमंगलं अरहंतमंगलं सिद्धमंगलं साहूमंगलं केवलिपण्णत्तो धम्मोमंगलं, ए मंगलपद अर चत्तारिलोगुत्तमा अरहंतलोगुत्तमा सिद्धलोगुत्तमा साहूलोगुत्तमा केवलिपण्णत्तो धम्मोलोगुत्तमा ये च्यार उत्तमपद अर चत्तारिसरणं पव्वजामि अरहंतसरणं पव्वजामि सिद्धसरणं पव्वजामि साहूसरणं पव्वजामि केवलिपण्णत्तो धम्मोसरणं पव्वजामि ये च्यार शरणपद हैं इनका कर्मपटलके नाश करनेके अर्थ नित्य ही ध्यान करना त्रैलोक्यमैं य चार ही मंगल हैं चार ही उत्तम हैं चार ही शरण हैं इनका ध्यानकूं निरंतर विस्मरण मत होहू इत्यादिक अनेक मंत्र इस जीवके रागद्वेषमोहमूर्छाके नाशकरनेकूं वैरविरोध दूरकरनकूं दुर्ध्यानका नाशकरनेकूं परमशांतभाव उपजावनेकूं विषयनिमैं राग नष्ट करनेकूं पंचइंद्रियनिके जीतनेकूं वीतरागतावर्धन करनेकूं सकलपरवस्तुमैं वांछाममतारहित होय गुरुनिका उपदेशतैं जाप्य करैं हैं ध्यान करैं हैं तिनके कर्मनिकी बडी निर्जरा होय है क्रमकरि संसारपरिभ्रमणका अभाव होय है अर जे रागी द्वेषी मोही होय परका मारण उच्चाटन वशीकरण इत्यादिकके अर्थि तथा विषयभोगनिके अर्थि वैरीनिका विध्वंसके अर्थि राज्यसंपदा ग्रहण करनेके अर्थि मंत्र जाप करैं हैं ध्यान मुद्रा तप इत्यादिक दृढ भये करैं हैं ते घोर संसारपरिभ्रमणका कारण मिथ्यादर्शनादि अशुभकर्मका बंध करैं हैं खोटी वासना खोटा ध्यान तथा व्यंतर देवदेवी यक्षयक्षणी इत्यादिक कुदेवनिका ध्यानकरि अपने परिणामकूं श्रद्धान ज्ञानतैं भ्रष्टकरि घोर संसारपरिभ्रमण करैं हैं अर कदाचित् कोऊके चित्तका एकाग्रपणारूप तपके प्रभावतैं वा मंदकषायके प्रभावतैं वा शुभकर्मका उदयतैं खोटीविद्या सिद्ध हो जाय तो विषयकषाय अभिमानकी वृद्धिने प्राप्त होय सम्यक्श्रद्धानज्ञानआचरणका घातकरि पापमैं प्रवर्तनकरि दुर्गतिका पात्र होय ऐसा जानि वीतरागताकूं नष्टकरनेवाले खोटे मंत्र यंत्र मुद्रा मंडलनिका त्याग करो। महा मोहरूप अग्निकरि दग्ध होता इस जगतविषैं कषायनिकूं छांडिकरि केई परमयोगी ऊवरैं हैं या हजारां कष्ट आधिव्याधिकरि व्याप्त महा पराधीन रागद्वेष मोहरूप विषकरि व्याप्त अतिनिंद्य गृह-

वासमें बडेबडे बुद्धिमान हू प्रमादादिकनिकूं जीति चंचलमनके वशकरनेकूं नाहीं समर्थ होइए है। बहुरि इस गृहस्थाश्रममें अनेक धनपरिग्रहादिकनिका संयोगमें एकएक वस्तुकी ममतारूप पाशी अर खोटी आशारूप पिशाचणीकरि ग्रस्याहुवा अर स्त्रीनिके रागकरि अंधभये ये जीव आत्माका हितकूं जाननेकूं असमर्थ हैं। बहुरि इसगृहस्थपणामें निरंतर आर्तध्यानरूप अग्निकरि प्रज्वलित अर खोटीवासनारूप धूमकरि ज्ञानरूप नेत्र जिनका मुद्रित भया अर अनेक चिंतारूपज्वरकरि जिनका आत्मा अचेत हो रह्या है तिनके स्वप्नमें भी ध्यानकी सिद्धि नाहीं होय है। आपदारूप महाकर्दममें फँसि रह्या अर प्रबल रागरूप पिंजरमें पीडित हो रह्या अर परिग्रहरूप विषकरि मूर्छित गृहस्थी आत्माका हितरूप ध्यान करनेकूं असमर्थ है। अपनी ही आरंभ परिग्रहमें ममतारूप बुद्धिकरि आप ही आपकूं बांधि पराधीन होय रहे हैं रागादिकरूप वैरीनिकूं गृहका त्यागी संयमीविना नाहीं जीतिये है अर गृहका त्यागी हू विपरीत तत्त्वकूं ग्रहण करते मिथ्यादृष्टीनिके स्वप्नमें हू ध्यानकी सिद्धि नाहीं यतीपणामें हू पूर्वापरविरुद्ध अर्थकी सत्ताके अवलंबन करनेवाले पाखंडीनिके ध्यान नाहीं संभवे है सर्वथा एकान्त ग्रहण करनेवाले पाखंडी अनेकांतस्वरूप वस्तुकूं जाननेकूं ही समर्थ नाहीं तिनके ध्यान कैसें होय जिनेंद्रकी आज्ञातैं प्रतिकूल प्रवर्तनेवाले मुनिलिंग धारण करते हू मनवचनकायकी कुटिलताके धारक अर शिष्यादिक परिग्रहतैं आपकी उच्चताके माननेवाले अपनी कीर्त्ति अभिमान पूजा सत्कार वंदनाका इच्छक अर लोकनिके रंजायमान करनेमें चतुर अर ज्ञाननेत्रकरि अंध अर मदनिकरि उद्धत अर मिष्टभोजनके लोलुपी पक्षपाती तुच्छशीली तिनके मुनिभेष धारण करते हू कदाचित् धर्मध्यान नाहीं होय है अर ऐसे पाखंडी भेषी अन्य भोलेलोकनिकूं कहैं यो काल दुःखम है यामें ध्यानकी सिद्धि नाहीं या कहि अपने अर अन्यके ध्यानका निषेध करैं हैं। तथा काम भोग धनका लोलुपी मिथ्याशास्त्रनिके सेवक तिनके ध्यान कैसें होय। बहुरि रागभावसहित इंद्रियनिके विषयनिमें करुणारहित हास्य कौतुक मायाचार युद्ध काम शास्त्र-

निके व्याख्यान करनेवालेनिके ध्यान स्वप्न हू मैं नाहीं होय है। बहुरि जिनेश्वरकी दीक्षा धारण करिकैं हू अपना गौरवका अर्थी होय करिकैं वशीकरण आकर्षण मारण उच्चाटन जलस्थंभन अग्निस्थंभन विषस्थंभन रसकर्म रसायण पादुकाविद्या अंजनविद्या पुरक्षोभ इंद्रजाल बलस्थंभन जीति हारि विद्याछेदभेद वैद्यक विद्या जोतिष्कविद्या यक्षणीसिद्धि पातालसिद्धि कालवंचना जांगुलि सर्प मंत्र भूत पिशाच क्षेत्रपालादि साधन जल मंत्रन सूत्रबंधन इत्यादि कर्मनिके अर्थि ध्यान करै हैं मंत्रसाधन करै हैं घोर तप करै हैं तिनके बीचि मिथ्यात्व कषायके वशतैं घोरकर्मका बंधका कारण दुर्ध्यान जानना ताके प्रभावतैं नरक तिर्यंचादिक कुगतिमैं अनंतकाल परिभ्रमण होय है अर ऐसे पाखंडीनिका उपासना करनेवाले अनुमोदना करवाले दुर्गतिमैं परिभ्रमण करैं हैं ऐसा दृढ श्रद्धानधारि खोटे मंत्र यंत्रनिका त्याग दूरिहीतैं करो। इहां कोऊ कहै जो खोटे मारण उच्चाटनादि अनेक विद्या मंत्र तंत्रादिक द्वादशांगमैं कहैं हैं कि नाहीं ताकूं कहिए है—जो द्वादशांगमैं तो समस्त त्रैलोक्यमैं वर्त्तते द्रव्य क्षेत्र काल भाव विष अमृत समस्त कहैं हैं परंतु विषादिककूं त्यागनेयोग्य कह्या अमृतकूं ग्रहण करने योग्य कह्या तैसैं खोटे मन्त्र खोटी विद्या त्यागने योग्य कही है तातैं अयोग्य विद्याका दुर्ध्यानादिकका त्याग करिकैं कर्मका निर्जरा करनेवाली वीतरागताका कारण पंच परमेष्ठीके वाचक मन्त्र पदनिहीका ध्यान करो। ऐसैं धर्मध्यानके भेदनिमैं पदस्थ ध्यान वर्णन किया॥ २ ॥

अब रूपस्थध्यानमैं भगवान अरहंत परमेष्ठी समवसरणमैं तिष्ठते असंख्यात इंद्रियादिक करि वंद्यमान द्वादश सभाके जीवनिकूं परम धर्मका उपदेशकरतेंनिका ध्यान करनेका उपदेश करैं हैं। भगवान अरहंतके धर्मोपदेश देनेका सभास्थान है सो भूमिसूं पांच हजार धनुष ऊंचा आकाशमैं बीस हजार पैडीनिकरि युक्त है। अर हरित नील मणिमय जाकी भूमिका समवृत्त झालरिके आकार गोल है मानूं तीन लोककी लक्ष्मीके मुख अवलोकन करनेका दर्पण ही है। इस सभास्थानका वर्णन करनेकूं कौन समर्थ है

जाका सूत्रधार कुवेर है जो अनेक रचना करनेमैं समर्थ ताका वर्णन हम सारिखे मंदबुद्धी कहनेकूं कैसैं समर्थ होय तो हू शुभध्यान होनेके अर्थि तथा श्रवण चिंतवन करि भव्य जीवनिके अति आनंद होनेके अर्थि किंचित् वर्णन करिये है। तिस द्वादश योजन प्रमाण इंद्रनीलमणिकी समवृत्त भूमिका पर्यंत अनेक वर्णके रत्ननिकी धूलिकरि रच्या धूलीशाल कोट है। कहूं तौ हरितमणिनिकी कांतिकरि आकाश हरित किरणमय सोहै है कहूं पद्मराग मणिनिकी प्रभाकरि व्याप्त है कहूं मेचक मणिनिकी प्रभाकरि व्याप्त है कहूं चद्रकांतमणिनिकरि व्याप्त चंद्रमाकी ज्योत्स्ना चानणीकूं धारण करै है। इत्यादिक अनेक कांतिके धारक रत्ननिका महाप्रभाकरि यो धूलीशालकोट आकाशमैं बलयाकार इंद्रधनुषकी शोभाकूं विस्तारना सोहै है कहूं सुवर्णमय धूलिकी कांतिकरि देदीप्यमान है इत्यादिक अनेक रत्ननिकी प्रभाका पुंज जो धूलीशाल ताकी चारि दिशानिमैं सुवर्णमय दोय दोय स्तंभ हैं तिन स्तंभनिके अग्रभागमैं लूंबते मकराकृत तोरण तिनमैं रत्ननिकी माला सोहै है तिस धूलिशालकोटकै च्यारूं तरफ महावीथी एक एक कोष चौडी मांही प्रवेश करनेकी है तिन महावीथीनिकै मांही केतीक दूरि जाइए तहां वीथीनिके बीच सुवर्ण मानस्तंभ हैं ते महा ऊचे हैं तिन मानस्तंभनिके च्यारूंतरफ च्यार च्यार द्वारनिकरि युक्त तीन कोट हैं और तीन तीन कोटनिकै मध्य षोडश सोपान जो सिवाणनिकरि युक्त पीठ हैं तिन पीठनिके मध्यविषैं बडे ऊंच मानस्तंभ हैं ते पीठ सुर असुर मनुष्यनिकरि पूज्य हैं। तिन स्तंभनिकूं दूरिहीतैं देखत प्रमाण मिथ्यादृष्टीनिका मान जाता रहै है तिन मानस्तंभनिके मूल विषैं पीठ ऊपरि सुवर्णमय जिनेंद्र प्रतिमा विराज हैं तिनकूं क्षीरसमुद्रके जलतैं इंद्रादिक देव अभिषेक करै हैं तिस जलकरि वह पीठ पवित्र है अर तहां शाश्वते देव मनुष्यनि करि कीये नृत्यवादित्र जिनेंद्रके मंगलरूप गान प्रवर्तैं हैं पृथ्वीके मध्य पीठ ताके ऊपरि पीठनिका तीन कटिनी तिन तीन पीठनिके ऊपरि सुवर्णमय मानस्तंभ तिनके मस्तक ऊपरि तीन क्षेत्र हैं मिथ्यादृष्टीनिके मान स्तंभन करनेतैं तथा त्रिलोकवर्त्ती सुर असुर मनुष्यादिकानिके माननेतैं

पूजनेतैं इनका मानस्तंभ सार्थक नाम है इन मानस्तंभनिका च्यारूं तरफ च्यार बावडी हैं तिन बावडीनिमैं निर्मल जल भर्‌या है नानाप्रकारके कमल प्रफुलित होय रहे हैं तिनका स्फटिकमणिमय तट है तिनके तटनि ऊपरि नाना प्रकारके पक्षीनिके शब्द होय रहे हैं वा पक्षीनिके शब्दनिकरि तथा भ्रमरनिके गुंजनकरि जिनके गुणनिका स्तवन ही करैं हैं। पूर्वके मानस्तंभके च्यारूं तरफ नंदा नन्दोत्तरा नंदवती नंदघोषा ये चार बावडी हैं अर दक्षिणमैं विजया वैजयंती अपराजिता हैं अर पश्चिममैं अशोका सुप्रभा सिद्धा कुमुदा पुंडरीका है उत्तरके मानस्तंभके च्यारूं तरफ प्रदक्षिणारूप नंदा महानंदा सुप्रबुद्धा प्रभंकरी ऐसैं च्यारदिशानिके च्यार मानस्तंभनिके च्यारतरफ षोडश बावडी हैं अर एक एक बावडीके दोय तटानिके निकट दोय दोय-पादप्रक्षालन करनेकूं कुण्ड हैं उन कुण्डानिके जलतैं चरण धोय मानस्तंभनिकी पूजाकूं मनुष्यादिक जाय हैं अर इहांतैं कछुक आगैं जाइए तहां महावीथिका मार्गकूं छांडि च्यारतरफ कमलनिकरि व्याप्त जलकी भरी खातिका कहिये खाई हैं सो मानूं प्रभुके सेवनकूं गंगा ही च्यारतरफ आई है तिस खाईरूप आकाशमैं तारानक्षत्रानिके प्रतिबिम्बसमान पुष्प सोहै हैं तिस खाईके रत्नमयतटविषैं नानाप्रकार पक्षीनिके समूह शब्द करि रहे हैं अर अद्भुत तरंगनिकरि व्याप्त हैं तिस खातिकापर्यंत एक योजन बलयनिष्कंभ है तिस खातिकाका अभ्यंतरभूमिका भागविषैं च्यारूंतरफ बल्लीनिका बन है तिसमैं नानाप्रकार बल्ली छोटेगुल्म वृक्ष समस्तऋतुनिके पुष्पकरि व्याप्त हैं जिसमैं नानाप्रकारके पुष्पनिकी बल्ली उज्ज्वलपुष्पानिकरि व्याप्त मानूं देवांगनानिके मंदहास्यकी लीलाकूं धारण करै हैं जिनऊपरि भ्रमर गुंजार करै हैं अर मंदसुगंधपवनकरि बेलवृक्ष घूम रहे हैं तिस बेलनिका बनमैं अनेकक्रीडाकरनेके क्षुद्रपर्वत हैं रमणीक शय्यानिकरि सहित ठौरठौर लतानिके मंडप बन रहे हैं। तिनमैं अनेकदेवांगना जिनेंद्रका यश गावैं हैं अर अनेक लताभवननिमैं हिमालयसमान शीतल चंद्रकांतिमाणिमय शिला देवनिका विश्रामके अर्थ तिष्ठै हैं धूलीशालतैं लेय पुष्पबाडीपर्यंत दोययोजनप्रमाण बलयवि

ष्कंभ है सो दोऊतरफ च्यारयोजनप्रमाण क्षेत्र भया इहांतैं महावीथीके मध्य कितने दूर जाइए तहां च्यारूं तरफ ताया सुवर्णमय प्रथमकोट तिस भूमिकूं बेढैं हैं जैसैं मानुष्यलोककूं मनुषोत्तरपर्वत बेढै हैं सो यो सुवर्णमय प्रथमकोट अनेक रत्ननिकरि चित्रविचित्र है कहूं हस्तीनिके मिथुन कहूं व्याघ्रसिंहनिके मनुष्यनिके हंसमयूर सूवा इत्यादिकनिके युगलनिके रूपनिकरि नानाप्रकार रत्ननिके जडावकरि व्याप्त है कहूं रत्नमय बेल पुष्प पल्लव वृक्षनिके सुंदररूपकरि व्याप्त है अर ऊपरिनीचैं कांगुरेनिमैं मोतीनिकी तथा पंचवर्णमय रत्ननिकी माला तथा झालरीनिका जालकरि व्याप्त है तिसकोटकी अप्रमाणकांतिकरि आकाश इंद्रधनुषकरि व्याप्त हो रह्या है तिस सुवर्णमय प्रथमकोटके च्यारूं दिशानिमैं महानऊंचे रूपामय उज्ज्वल च्यार गोपुर कहिये दरवाजे हैं ते गोपुर वियार्द्धके शिखरसमान ऊँचे तीनतीन खणके ज्योतिके पुंज मानूं तीनजगतकी लक्ष्मीकूं हँसैं ही हैं तिन रूपामई तीनखणके गोपुरनिके ऊपरि पद्मरागमणिमय दिशानिनैं आकाशनैं कांतिकरि व्याप्त करते ऊंचेशिखर आकाशमैं जाय रहे हैं तिन गोपुरनिमैं गान करनेवाले कई देव जगतका गुरु जो जिनेंद्र ताके गुण गाय रहे हैं कई जिनेंद्रके गुण श्रवण करैं हैं कई जिनेंद्रके गुणनिके भरे नृत्य करि रहे हैं। बहुरि एक एक दरवाजेनि प्रति एकसोआठ आठ झारी कलश दर्पण ठोणा चमर छत्र ध्वजा बीजणा ये रत्नमय मंगल द्रव्य सोहैं हैं बहुरि एक एक गोपुर प्रति रत्ननिका आभरणकी कांतिकरि व्याप्त किया है आकाश जानें ऐसे सौ सौ तोरण दिपैं हैं मानूं स्वभावहीतैं अतिकांतिका धारक जिनेंद्रका देह तामैं अपना अवकाश नाहीं जानिकरि ते आभरण गोपुरनिके तोरणतोरण प्रति लूंबे हैं। बहुरि एकएक द्वारनिके वाह्यभूमिविषैं नवनव निधि तीनभुवनकूं उलंघन करनेवाली जिनेंद्रका प्रभावकी प्रशंसा करैं हैं मानूं वीतराग भगवानकरि तिरस्कार करी नवनिधि हैं ते द्वारका वहिर्भाग सेवन करैं हैं। बहुरि द्वारके अभ्यन्तर जो एककोष चौडी महावीथी ताका दोऊ भागमैं दोय नाट्यशाला हैं ऐसे च्यारदिशानिके द्वारप्रति दोयदोय नाट्यशाला हैं ते नाट्यशाला तीन २

स्वनकी ऐसी सोहैं हैं मानूं जीवनकूं त्रयात्मक मोक्षमार्ग जनावनेकूं उद्यमी हैं तिन नाट्यशालानिकी उज्ज्वल स्फटिकमणिमय भींत हैं अर सुवर्णमय स्तंभ हैं अर स्फटिकमणिमय भूमिका है अर अनेक रत्नमयशिखरनिकरि आकाशकूं रोकती शोभै है तिन नाट्यशालानिमैं विजलीकी प्रभावत् नृत्य करती गान करती मोहकर्मका विजयकरि जिन नाम सार्थक पाया है ऐसा भगवानका यश गावती केतीक देवांगना पुष्पनिकी अंजुली क्षेपैं हैं केतकि देवांगना वीण बजावैं हैं मृदंगादिक अनेकवादित्रनिकी ध्वनिकी साथ नानाप्रकार जिनेंद्रस्तवन उच्चारण करती नाट्यके रसमैं जिनेंद्रका गुणानिमैं तन्मय भई नृत्य करे हैं वीणाके नादसमान सुंदर शब्दकरि गावते जे किन्नरदेव ते आवते जावते देवादिकानिके मनकूं आसक्त करैं हैं। बहुरि नाट्यशालानितैं आगैं महावीथीके दोऊं पसवाडेनिमैं दोय दोय धूपघडे हैं तिनतैं निकसता धूपका धूम आकाशके आंगनमैं फैलता दिशानिकूं सुगंध करे है आकाशतैं उतरते देवनिके मेघकी शंका उपजावै है तिस महावीथीके दोऊ पसवाडेनिका अंतरालमैं च्यारतरफ वनवीथी है तिनका एक योजन चौडी वलयविष्कंभ है तामैं एक श्रेणी अशोकवृक्षनिकी दूजी सप्तपर्णवनकी तीजी चंपकवनकी चौथी आम्रवनकी श्रेणी है ते वन पत्र पुष्प फलनिकरि शोभित मानूं जिनेंद्रकूं अर्थ ही दे हैं सो या वनश्रेणी दोऊतरफ दोय योजनमैं है तिनमैं रत्नमय अनेकपक्षी शब्द करैं हैं भ्रमरनिके नाद हो रहे हैं नंदनवनवत् कोट्यां देव देवांगना नानाआभरणनिके धारक उद्योतके पुंज विचरैं हैं तिन वनानिमैं कहूं तो कोकिलानिके शब्द ऐसे हो रहे हैं मानूं जिनेन्द्रके सेवनकूं देवेंद्रनिकूं बुलावै ही हैं जहां शीतलमंदसुगंध पवनकरि वृक्षनिकी शाखा नृत्य करैं हैं तिस वनकी भूमिका सुवर्णमय रजकरि व्याप्त है इन वनानिमैं रत्नमय वृक्षनिकी ज्योतिकरि रात्रिदिनका भेद नाहीं निरंतर उद्योतरूप है अर वृक्षनिकी शीतलताके प्रभावकरि सूर्यके किरण आताप नाहीं करैं तिन वननिमैं कहूं त्रिकोण चतुष्कोण निर्मल निर्जंतु जलकी भरी वापिका हैं तिनबावडीनिके रत्ननिके सिवाण हैं सुवर्णरत्नमय तट हैं कहूं रत्नमय अनेकक्रीडापर्वत

हैं कहूं रमणीक अनेकरत्नमय महल हैं कहूं अनेकप्रकारके क्रीडामंडप हैं कहूं प्रेक्षागृह हैं कहूं एकशाला कहूं द्विशाला कहूं त्रिशाला अनेकमहलनिकी रचना है कहूं हरितभूमि इंद्रगोपरूपरत्ननिकरि व्याप्त है कहूं महानिर्मल सरोवर हैं कहूं मनोज्ञ नदी हैं प्राणीनिका शोक दूरकरनेवाला अशोकवृक्षनिका वन मानूं जिनेन्द्रका सेवनतैं अपने रक्तपुष्पपल्लवनिकरि रागकूं वमन ही करै है अर सप्तच्छदनामा वन मानूं अपने सप्तपत्रनिकरि भगवानके सप्त परमस्थाननिकूं दिखावै ही है अर चंपकवन अपने दीपकसमान पुष्पनिकरि मानूं दीपांगजातिके कल्पवृक्षनिका वन प्रभूकी सेवा ही करै है बहुरि सुंदर आम्रवन सो कोकिलनिके शब्दनिकरि जिनेन्द्रका स्तवन करै है बहुरि अशोकवनके मध्य एक अशोकनामा चैत्यवृक्ष है तीन सुवर्णमय पीठ ताके ऊपरि है तिस पीठके चौगिरद तीनकोट हैं एकएक कोटके चारचार द्वार हैं ते द्वार छत्र चमर झारी कलश दर्पण बीजणो ठोणो ध्वजा इसप्रकार मंगलद्रव्य मकराकृत तोरण मोतिनिकी मालादिककरि भूषित हैं जैसैं जम्बूद्वीपकी स्थलीमध्य जम्बूवृक्ष सोहै तैसैं वनकी स्थलीमध्य तीनपीठ ऊपरि अशोकनामका चैत्यवृक्ष सोहै है शाखाका अग्र दशादिशानिमैं विस्तरता देखतप्रमाण शोककूं नष्ट करै है अपने पुष्पनिकी सुगंधिकरि समस्त आकाशकूं व्याप्त करता अपना विस्तारकरि आकाशकूं रोकै है मरकतमणिमय हरितकांतिसंयुक्त पत्रनिकरि भरया है पद्मरागमणिमय पुष्पनिके गुच्छेनिकरि वेष्टित है सुवणमय ऊंची शाखा हैं वज्र जे हीरा तिनकरि रच्या पेड है अपनी प्रभाका मंडलकरि समस्तदिशाकूं उद्योतरूप करै है रणत्कार करते घंटानिके नादकरि भगवानका विजयकी घोषणाकूं त्रैलोक्यमैं व्याप्त करै है ध्वजानिके चलायमान वस्त्रनिकरि दर्शन करते लोकनिके अपराध पापरूपरजकूं दूर करै है मुक्ताजालनिकरि युक्त मस्तकऊपरि लूमते तीनछत्रकरि जिनेन्द्रका तीन भवनका ईश्वरपणानैं वचनविना ही कहैं हैं अर वृक्षका पेडके मूलभाग च्यारादिशानिमैं च्यारजिनेन्द्रके प्रतिबिंब करि युक्त है अर तिन प्रतिबिंबनिका इंद्रादिकदेव आभिषेक करैं हैं अर गंधमाला धूप दीप नैवेद्य फल अक्षतनिकरि देव पूजन

करैं हैं ते अरिहंतकी प्रतिमा क्षीरसमुद्रके जलकरि प्रक्षालित हैं सुवर्णमय हैं नित्य ही सुरअसुर देवलोकके उत्तमद्रव्यनिकरि इंद्रादिकदेव पूजैं हैं स्तवन करैं हैं वंदना नमस्कार करैं हैं केतेक देव अरिहंतके गुणस्मरणकरि निश्चयकरि आनंदतैं गावैं हैं जैसैं अशोकवनमैं एक अशोक नाम चैत्यवृक्ष है तैसैं चंपक सप्तच्छद आम्रनामके धारक वननिमैं एकएक चंपकादि नामधारक चैत्यवृक्ष जानना चैत्य जे जिनेन्द्रकी प्रतिमा तिनकरि युक्त इनका मूल है तातैं चैत्यवृक्ष सार्थकनामकूं धारै हैं तिन वननिका पर्यंतभागविषैं चौगिरद वेदी है जो कांगुरेसंयुक्त होय ताकूं कोट कहिये कांगुरेरहित चौगिरद भीत होय ताहि वेदी कहिए है सो वनका पर्यंतमैं सुवर्णमय वेदी है ताके महान ऊंचे चारतरफ रूपामय च्यार द्वार हैं सो वेदी अर दरवाजे अनेकरत्ननिकरि व्याप्त हैं जिन द्वारनिके घंटानिके समूह लूम रहे हैं मोतीनिकी माला झालरी पुष्पमाला लंबायमान हैं ते द्वार एकसौआठ अष्टमंगलद्रव्य अर रत्ननिके आभरणसहित रत्नमय तोरणनिकरि भूषित हैं तिन तीनखणनिके द्वारनिमैं अनेकदेव गीत वादित्र नृत्य करि जिनेन्द्रके यशमैं लीन हो रहे हैं तिनद्वारनिके आगैं वेदीके लगता ही रत्नमय पीठनिके ऊपरि सुवर्णमय स्तंभनिके अग्रमैं नानाप्रकारकी ध्वजानिकी पंक्ति हैं ते मणिमय पीठनिके ऊपरि सुवर्णमय अनुपमकांतिके धारक स्तंभ हैं ते अठ्यासी अंगुल मोटे हैं स्थूल हैं पचीस धनुषका अंतराल परस्पर धारण करैं हैं इनकी ऊंचाईका प्रमाण ऐसा जानना समवसरणमैं तिष्ठते सिद्धार्थवृक्ष चैत्यवृक्ष कोट वन वेदी अर स्तूप अर तोरणनिसहित मानस्तंभ अर ध्वजानिकी अर वनके वृक्षनिकी प्रासाद जे महल पर्वतादिकनिकी उच्चता तीर्थंकरका देहकी उच्चतातैं बारहगुणी जाननी बहुरि पर्वतनिकी चौडाई है सो अपनी ऊंचाईतैं अष्टगुणी है अर स्तूपनिकी चौडाई उच्चतातैं किंचित् अधिक है अर कोट वेदिकादिकनिकी चौडाई अपनी ऊंचाईके चौथे भाग जाननी ते ध्वजा दशप्रकार हैं माला वस्त्र मयूर कमल हंस गरुड सिंह बलध हस्ती चक्रनिके चिह्नकी ध्वजा दशप्रकार हैं ते ध्वजा प्रत्येक एकएक प्रकारकी एकसौआठ एकदिशामैं हैं समस्त दश-

प्रकारकी धुजा एकहजारअस्सी एकादिशामैं भई च्यारूं तरफकी च्यार हजारतीनसैबीस हैं समुद्रकी तरंगनिकी ज्यों पवनकरि तिनके वस्त्र लहलहाट करैं हैं मालाकी ध्वजामैं मालाके आकार वस्त्र लूमते हाल रहे हैं ऐसैं वस्त्रकी ध्वजा मयूराकार मयूरध्वजा सहस्रपांखडीका कमलके आकार कमलध्वजा हंसध्वजा गरुडध्वजा सिंहध्वजा वृषभध्वजा गजध्वजा चक्रध्वजा ये दशप्रकार एकादिशाप्रति एकसोआठ एकसोआठ हैं ऐसे च्यार दिशामैं च्यारहजारतीनसैबीस हैं मोहकर्मका विजयकरि उपार्जन कीई जिनेंद्रका त्रिभुवनेशपनाकी प्रशंसा करैं हैं सो या ध्वजा भूमिका वलयविष्कंभ एकयोजनका दोऊतरफ दोययोजन चौडा है तिसकूं उलंघनकरि दूजाकोट अर्जुन कहिये सुवर्णका है इस द्वितीयकोटके हू प्रथमकोटवत् रूपामई च्यार तरफ महा द्वार हैं ते द्वार हू प्रथमकोटके द्वारवत् मंगलद्रव्य तोरण रत्नानिके आभरणानिकी संपदा धारैं हैं ये द्वार हू तीनतीन खणके अर अभ्यंतर दोऊतरफ नाट्यशाला धूपघट को युग्म महावीथिके दोऊं पसवाडेनिमैं तिष्ठैं हैं। बहुरि आगैं महावीथीकी दोऊ कक्षाविषैं एकयोजन चौडा वलयविष्कंभ धारता अनेक रत्नमय कल्पवृक्षानिका च्यारू तरफ वन है ते उन्नत छाया फल पुष्पनिकरि युक्त है दश जातिके कल्पवृक्षानिके वनका रूपकरि देवकुरु उत्तरकुरु भोगभूमि ही जिनेंद्रका सेवन करैं हैं जिन कल्पवृक्षानिके आभरण वस्त्रादिक फलपुष्पनिकी महान् महिमा है वृक्षानिके अधोभागमैं देव बैठे हुये अपने स्वर्गनिके स्थानकूं भूलि चिरकाल तहां ही बसैं हैं ज्योतिरंग जातिके कल्पवृक्षानिमैं ज्योतिष्कदेव अर दीपांगनिमैं कल्पवासीदेव अर स्रगांगनिमैं भावनेंद्र यथायोग्य सुखित तिष्ठैं हैं इन च्यार तरफके वनमैं एकएक सिद्धार्थवृक्ष मध्यमैं है तिनका मूलमैं सिद्धप्रतिमा विराजे हैं जैसैं चैत्यवृक्षानिका पूर्वैं वर्णन कीया तैसैं इनका वर्णन जानना एता विशेष है ये कल्पवृक्ष संकल्परूप कीया फलका देनेवाला है कल्पवृक्षानिका वनमैं हू कहूं बावडी कहूं नदी कहूं बालूके टीबेवत रत्नमय धूलके पुंज हैं कहूं सभागृह प्रासाद इत्यादिक अनेक सुखरूप स्थाननिकूं धरैं हैं बहुरि इस वनवीथीके अभ्यंतर वनवेदी रूपामई है उन्नत तीन तीन खणके च्यार द्वारानि·

करि युक्त हैं अर पूर्ववेदीवत तोरण आभरण मंगलद्रव्यनि करि युक्त है तिन द्वारानिके अभ्यंतर जाय च्यार तरफ प्रासाद जे महल तिनकी पंक्ति है सुरशिल्पीकरि रचे नानाप्रकारके च्यारूं तरफ है तिन प्रासादनिके सुवर्णमय स्तंभ हैं वज्रमणि जे हीरा तिनमई भूमिका बंधन है चन्द्रकांतिमणिमय भींति है नाना रत्ननिकरि चित्रित है केते दोयखणके केते तीनखणके केते च्यारखणके हैं केई प्रासाद चंद्रशाला युक्त हैं ऊपरला ऊंचा चंद्रशाला कहिये है केई बलभीछद च्यारूं तरफ भींतिनिकरि सहित हैं ते प्रासाद अपनी उज्ज्वल प्रभामैं डूबि रहे हैं केई अपने उज्ज्वलशिखरनिकरि चंद्रमाकी चानणीकरि ही मानूं रचे है कहूं बहुत झिरखानिके महल हैं कहूं सभागृह हैं कहूं नाट्यशाला हैं कहूं शय्यागृह हैं जिनके चंद्रकांति मणिमय ऊंचे सोपान हैं तिनमैं देव विद्याधरजातिके देव सिद्धजातिके देव गंधर्वदेव पन्नगदेव किन्नरदेव बहुत आदरसहित जिनेंद्रके गुण गावैं हैं केई बजावैं हैं अनेक जातिके वादित्रनिकरि शब्दमय हैं केई संगीत नृत्य करै हैं केई जयजयकार शब्द करै हैं केई जिनेंद्रके गुणनिका स्तवन करै हैं । बहुरि तिस हर्म्यावलीकी भूमिका मध्यभागनिविषैं नवस्तूप हैं ते स्तूप पद्मरागमणिमय पुंजके आकार उतंग आकाशका अग्रकूं उलंघन करते ऐसे हैं मानूं समस्तदेव मनुष्यानिका चित्तका अनुराग ही स्तूपके आकारकूं प्राप्त भया है कैसेक हैं स्तूप सिद्धनिके अर अरहंतानिके प्रतिबिंबनिके समूहकरि समस्त तरफ व्याप्त हो रहे हैं अपनी ऊंचाईकरि आकशकूं रोकै हैं ते स्तूप देव विद्याधरनिकरि सुमेरुकी ज्यों पूज्य हैं उच्चदेवनिकरि चारणऋद्धिके धारीनिकरि आराध्य हैं तथा ये नवस्तूप जिनेंद्रकी नवकेवललब्धि ही स्तूपाकार भए हैं तिन स्तूपनिके अंतरालविषैं रत्ननिके तोरणनिकी पंक्ति ऐसी शोभै हैं मानूं इंद्रधनुषमय ही है अर अपनी ज्योतिकरि आकाशरूप अंगणकूं चित्ररूप करै हैं ते स्तूप छत्रनिकरि सहित हैं पताकाध्वजाकरि सहित हैं समस्त मंगलद्रव्यनिकरि भरया है तिन स्तूपनिविषैं जिनेंद्रकी प्रितमानिका अभिषेक करके अर पूजन स्तवन करके पाछैं प्रदक्षिणा करिके भव्यजीव हर्षकूं प्राप्त होय हैं ऐसैं अर्द्धयोजनप्रमाण बलयविष्कंभरूप

चौडी प्रासाद अर स्तूपनिकी भूमिकूं उलंघन करके आगें आकाश स्फटिकमणिमय तीजा कोट है सो आकाशस्फटिक मणिमय आकाशसमान निर्मल कोट है सो जिनेंद्रकी समीपताका सेवनतैं निकटभव्यका आत्माकी ज्यों उज्ज्वल उतंग सद्वृत्ततांकरि युक्त है तिस स्फटिकमणिमय कोटके च्यार दिशानिमैं पद्मरागमणिमय च्यार महाउतंग महाद्वार हैं मानूं भव्यनिका रागपुंज हैं इन द्वारानिके हू पूर्ववत मंगलद्रव्यनिकी संपदादिक समस्त है अर द्वारनिका समीपभागविषैं देदीप्यमान गंभीर नौ निधि हैं बहुरि तीनकोटनिके द्वारनिविषैं गदादिक हस्तनिमैं धारण करते देव तिष्ठैं प्रथमकोटके द्वारपाल तो व्यंतरदेव हैं दूजे कोटके द्वारपाल भवनवासीदेव हैं तीजा स्फटिक मणिमयकोटके द्वारपाल कल्पवासीदेव हैं। बहुरि तिस स्फटिकमणिमय कोटतैं गंधकुटीका पहला अधस्तलका पीठपर्यंत लंबी षोडश भींति हैं ते भींति अकाशस्फटिकमणिनिकी रची हैं तिनकी निर्मल कांति है आदिकी पीठतलतैं लगाय स्फटिककोटतैं लगी षोडश भींति ते अपनी स्वच्छताके प्रभावतैं नेत्रनितैं नाहीं दीखैं हैं आकाश ही दीखै हस्तादिक शरीरके स्पर्शनते ही भींति जानिये है स्वच्छताके प्रभावतैं दीखनेमैं नाहीं आवै हैं निर्मल अर समस्तवस्तुनिके बिंब दिखावनेवाली भूमि जिनेंद्रकी ज्ञानविद्या ज्यों सोहै हैं इन षोडश भींतनिके मध्य षोडश ही दर तिनमैं च्यार महावीथी हैं अर महावीथीनिके मध्य द्वादश सभास्थान हैं सो भींतनिकी आकाश समान स्वच्छताकरि न्यारापना नाहीं दीखै हैं सब एक दीखै हैं तिन षोडशभींतनिके ऊपरि रत्नमय षोडश स्तंभनिकरि धारण किया अकाशस्फटिकमणिमय श्रीमंडप महाउच्च है एक योजनचौडा लंबा गोल है महान शोभायुक्त है जाकेविषैं समस्त सुरअसुरनिकरि वंद्यमान परमेश्वर तिष्ठैं हैं तातैं यो सत्य ही है श्रीमंडप है यो श्रीमंडप आकाशस्फटिकमणिमय है तातैं आकाश दीखै हैं अर तीन जगतके जनसमूहकूं निर्बाध स्थान देनेतैं बडा वैभवकूं प्राप्त है तिस श्रीमंडपऊपरि गुह्यके देवनिकरि छोटे पुष्पनिके समूह हैं ते श्रीमंडपके अधोभागमैं तिष्ठते देवमनुष्यनिके तारानिका शंकाकूं उपजावै हैं एकयोजनप्रमाण यो

श्रीमंडप तामैं समस्त देव मनुष्य परस्पर बाधारहित सुखरूपतिष्ठै हैं सो जिनेंद्रको माहात्म्य है तिसका मध्यभागमैं तिष्ठता प्रथम पीठ है सो बैडूर्यमणि जो मयूरकंठवर्ण हरित है अष्ट धनुष ऊंचा है तिसपीठकै षोडश अंतर है तिन षोडश अंतरके षोडश षोडश पैंडाचढने उतरनेके सिवाण हैं पहला पीठके च्यार तरफ तो महावीथी एककोश चौडी अर धूलीशालतैं प्रथमपीठपर्यंत लंबी सूधी है तिस पीठके षोडश-पैडीनिके ऊपरचाढि प्रथम पीठके ऊपरि जाय अपने अपने सभाके स्थानप्रति देवमनुष्यादि षोडश पैडी उतरि अपनी अपनी सभामैं जाय बैठे हैं तिस प्रथमपीठकूं च्यारूंतरफ अष्टमंगलद्रव्य भूषित करै हैं अर तिस प्रथमपीठऊपरि ऊंचे यक्षनिके मस्तकऊपरि धर्मचक्र च्यारतरफ हैं ते धर्मचक्र एकहजार रत्नमय किरणनिके समूहकरि मानूं प्रथमपीठकारूप उदयाचल पर्वतऊपरि सूर्यके बिंबही उदय भये हैं तिस प्रथमपीठऊपरि सुवर्णमय द्वितीयपीठ है सो पीठ सूर्यकी किरणनिसमान अपनी कांतिकरि आकाशकूं उद्योतरूप करै है तिस द्वितीयपीठ ऊपरि अष्टप्रकारकी ध्वजा है ते ध्वजा १ चक्र, २ हस्ती, ३ वृषभ, ४ कमल, ५ वस्त्र, ६ सिंह, ७ गरुड, ८ माला इनकी ध्वजा हैं ये पवनकरि हालते वस्त्रनिकरि पापरूप रजकूं उडावैं ही हैं कहा मानूं, तिस द्वितीयपीठ ऊपरि अपने रत्ननिकी कांतिकरि अंधकारकूं दूर करता सर्व रत्नमय तृतीयपीठ है ऐसैं त्रिमेखलमय पीठ समस्तरत्नमय भगवानकी उपासनाके अर्थि मानूं सुमेरु ही आया है और समवसरणका ऐसा विस्तार जानना धूलीशालतैं खातिका पर्यंत बलयव्यास योजन एक, पुष्पबावडीको वेदीपर्यंत बलयव्यास योजन एक, अशोकादि वनको बलयव्यास योजन एक, ध्वजानिकी भूमिको बलयव्यास योजन एक, कल्पवृक्षनिका वनको बलयव्यास योजन एक, प्रासाद पंक्तिको बलव्यास योजन अर्द्ध, ऐसे साढापांच योजन एक दिशाको भयो दोऊं दिशाको ग्यारह योजन भयो अर आकाशस्फटिककोटके बीच श्रीमंडपका विस्तार एकयोजनका ऐसैं बारहयोजन प्रमाण सम-वसरणभूमिका है अर श्रीमंडपमैं स्फटिकमय कोटतैं गंधकुटीका नीचला पीठपर्यंत सभाकी भूमि एक

कोश दोऊं तरफकी दोय कोश मध्यमैं तीन कटनीका पीठ चौडा कोश दोय तीमैं ऊपरला तीसरा पीठकी चौडाई धनुष १००० हजार एक, दूजा पीठकी धनुष ७५० साढा सातसैकी चौडी कटनी दोऊ तरफका धनुष १५०० डेढ हजार, अर तीजा नीचला पीठका चौगिरद कटनी धनुष ७५० साढा सातसे, दोऊं तरफका धनुष १५००, ऐसैं तीनपीठका धनुष ४००० च्यार हजार तींका दोय कोश ऐसैं मध्यका विस्तार योजन एक जानना ।

बहुरि प्रथम पीठ भूमितैं आठ धनुष ऊंचा ताके ऊपरि च्यार धनुष ऊंचा द्वितीय पीठ है ताके ऊपर च्यार धनुष ऊंचा तृतीय पीठ है अर एक कोश चौडी च्यारूं तरफकी महावीथी है तिसके दोऊं पसवाडेनिकी भींति प्रथम पीठकी ऊंचाईप्रमाण आठ धनुषकी ऊंची है अर भींतिनिकी मोटाई ऊंचाईके आठमैं भाग एक धनुषकी है बारह सभाकी बारह भींतिनिकी ऊंचाई भी आठ धनुषकी अर चौडाई एक धनुषकी है अब तीसरा पीठऊपरि नाना रत्ननिके समूहकरि इंद्रधनुष हो रहे हैं तहां इंद्रके हस्तकरि क्षेपे नाना प्रकारके पुष्प सोहैं हैं तिस एक हजार धनुष प्रमाण गोल तीसरा पीठके मध्य छहसै धनुष चौडा लंबी चौकोर अनेक रत्नमय गंधकुटी कुवेर रची हैं सो चौडाईतैं अधिक ऊंचाई मान अनुमानप्रमाणकरि युक्त हैं उत्तंग कोटकरि भूषित हैं नाना रत्ननिकी प्रभायुक्त कूट शिखर तिनकरि आकाशमैं व्याप्त हैं अर उन्नति शिखरनिके बंधी जे जयरूप ध्वजा तिनकरि मानूं देवनिकूं बुलावै ही हैं स्थूल मोतीनिके जाल च्यारूं तरफ लूमे हैं कहूं सुवर्ण रत्ननिके जालकरि भूषित हैं च्यारों तरफ अनेक रत्नमय आभरण अर महासुगंध कल्पवृक्षनिके पुष्पनिकी मालाकरि भूषित हैं अनेक सुगंध पुष्प अर महासुगंध धूप तिनतैं अधिक जिनेन्द्रके शरीरकी सुगंधकरि समस्त दिशानिकूं सुगंधित करैं हैं तातैं याकूं गंधकुटी कहिये है सुगंधकी अर कांतिकी अर शोभाकी त्रैलोक्यमैं परम हद है छहसै धनुष प्रमाण चौकोर गंधकुटीके मध्य एक योजन ऊंचा सिंहासन है ताकी कांति किरणसमूह अर सौंदर्यवर्णन करनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं है

तिस सिंहासनऊपरि च्यार अंगुलि प्रमाण अंतर छांडि अपनी महिमाकरिकैं ही सिंहासनकूं नाहीं स्पर्शन करता जिनेंद्र तिष्ठे हैं तहां तिष्ठता जिनेंद्रकूं इंद्रादिक देव अति भक्ति संयुक्त पूजन स्तवन वंदना करैं हैं देवरूप मेघकरि कल्पवृक्षनिके अति सुगंध पुष्पनिकी वृष्टि द्वादश योजन प्रमाण समस्त समवसरणमें होय है बहुरि एक योजन प्रमाण श्रीमंडपके ऊपरि रत्ननिमय अशोकवृक्ष सर्व तरफ सोहैं हैं जाके मरकतमणिमय हरित पत्र हैं नाना प्रकार मणिमय पुष्पनिकरि भूषित हैं पवनकरि मंदमंद हालती शाखाकरि मानूं नृत्य करैं हैं मदोन्मत्त कोकिल अर भ्रमर तिनका शब्दकरि जिनेन्द्रका गुणनिका स्तवन करैं हैं एकयोजनप्रमाण अपनी शाखाकरि समस्त जीवनिका शोक दूर करैं हैं समस्त दिशाकूं अपने डाहलाकर आच्छादित करैं हैं हीरामई पेड हैं पुष्पसमान रत्ननिके पुष्प वरषैं हैं बहुरि तीन छत्र अपनी कांतिकी उज्ज्वलताकरि सूर्य चंद्रमा दोऊनिकी प्रभाका तिरस्कार करता अद्भुत त्रैलोक्यके पदार्थनिकी प्रभाकूं जीतता मोतीनिकी झालरी करि युक्त हैं सो त्रिलोककी लक्ष्मीको हास्यको पुंज है कि धर्मरूप राजाको तीनलोकके आनंदकरनेवाला हर्ष है कि मोहके विजयतैं उपज्या प्रभुका यशका पुंज है ऐसैं तर्कना उपजावता तीन छत्र सोहै है बहुरि जिनेन्द्रका पर्यंतकूं सेवन करते यक्ष देवनिके हस्तनिके समूह करि चलायमान कीये चौसठ चमर प्रकट शोभैं हैं ते चामर मानूं क्षीरसमुद्रकी लहरनिकी पंकतिही हैं तथा अमृतके खंडनकरि ही रचे हैं तथा चन्द्रमाकी किरणनिका समूह ही है तथा जिनेन्द्रके सेवनकूं चमरनिके रूप करि गंगा ही आई है तथा जिनेन्द्रका अंगकी द्युति ही है वा क्षीरसमुद्रके झागनिकी पंकति पवनकरि हाले है तथा आकाशतैं पडती हंसनकी पंकति ही है तथा भगवानके उज्ज्वल यश ही च्यारों तरफ विस्तरे है ऐसे शोभनिक चौसठि चमर ढरै हैं बहुरि जिनेन्द्रके देवदुंदुभि आकाशमैं मेघके आगमनकी शंका करते कर्णनिकूं अमृतकी ज्यों सींचते मधुर शब्द करै हैं देव लोकके अनेक जातिके वादित्र नाना प्रकारकी ध्वनिकरि समस्त दिशाकूं पूर्ण करते मेघकी गर्जनावत् समस्त लोकमैं व्याप्त होता

भगवान मोहका विजय कीया ताका आनंदशब्द लोकनिके हृदयमें प्रकट करे हैं। बहुरि जिनेन्द्रका देहकी अद्भुत प्रभा समस्त समवसरणमैं व्यापै है तिस प्रभाकरि समस्त सुर असुर मनुष्यनिके महा आश्चर्य उपजै है जो प्रभा सूर्यका तेजकूं आच्छादन करे है कोट्यां कल्पवासी देवनिकी द्युतिकूं आच्छादती जगतमैं एक अद्भुत महाउदयकूं प्रगट करती फैली है जिनेन्द्रका देहरूप अमृतका समुद्रविषैं देव दानव मनुष्य अपने अपने सप्त भव देखे हैं चन्द्रमाकी कांति तो जडता करे है अर सूर्यकी प्रभा आताप करे है अर जिनेंद्रका देहकी प्रभा जडताकूं दूर करि ज्ञानका प्रकाश करे है अर समस्त संतापकूं दूरकरि सुखित करे है बहुरि जिनेंद्रका मुख कमलतैं मेघकी गर्जना समान दिव्यध्वनि प्रगट होय है सो भव्यजीवनिके मनतैं मोहअंधकारकूं दूर करता सूर्यवत् अनेकांतस्वरूप वस्तुकूं उद्योत करे है अर एकरूप भी जिनेंद्रका ध्वनि समस्त मनुष्यनिकी भाषारूप होय करणनिके अभ्यंतर प्रवेश करे है अर तिर्यंचनिके हृदयमैं हू प्रवेश करे है अर विपरीत ज्ञानकूं दूरि करि सम्यक्तत्वके ज्ञानकूं प्रगट करे है जैसैं एकरूप भी जलका समूह नाना प्रकारके वृक्षनिमैं नानारूप परिणमै है तैसैं सर्वज्ञकी ध्वनि हू अनेक श्रोतारूप पात्रनिके विशेषतैं नाना रूप प्राप्ति होय है जैसैं एकरूप भी स्फटिकमणि नाना प्रकार डाकके संयोगतैं नानारूप परिणमै है तैसैं एक प्रकार हू सर्वज्ञकी ध्वनि स्वच्छताके प्रभावकरि पात्रके प्रभावतैं नानारूप परिणमै है। केई नानाभाषास्वभावपरिणमन देवनिकृत गुण कहैं हैं सो यामैं देवकृतपणा संभवै नाहीं अर दिव्यध्वनि अक्षरसहित ही है अक्षरसमूह विना अर्थज्ञान कैसैं होय ऐसैं अष्ट प्रातिहार्यनिकी विभूतिसहित गंधकुटीमैं अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखके धारक गंधकुटीमैं पूर्वदिशाके सन्मुख अथवा उत्तर दिशाके सन्मुख तिष्ठै हैं अर गंधकुटीकी प्रदक्षिणारूप सन्मुख पहली सभामैं गणधरादिक मुनीश्वर तिष्ठैं हैं द्वितीय सभामैं कल्पवासीदेवनिकी स्त्री तीसरी सभामैं गणनीयुक्त अर्जिका अर मनुष्यणी चौथी सभामें चक्रवर्त्यादिसहित मनुष्य पंचमी सभामें ज्योतिष देवनिकी स्त्री छठी सभामें

व्यंतरनिकी देवी सप्तमी सभामें भवनवासिनी देवी अष्टमी सभामें भवनवासी देव नवमी सभामें व्यंतर-देव दशमी सभामें ज्योतिष्कदेव ग्यारमी सभामें कल्पवासी देव बारमी सभामें तिर्यंच है ऐसे ये द्वादश सभाके जीव जिनेंद्रके चरणनिकी भक्तिकरि नम्रीभूत भये भगवान जिनेंद्रका उपदेशरूप धर्मरूप अमृतका पान करे हैं अर घातिया कर्मनिका नाश होनेतैं अष्टादश दोषनिका अभाव भया है—क्षुधा १, तृषा २, जन्म ३, मरण ४, जरा ५, रोग ६, शोक ७, भय ८, विस्मय ९, अरति १०, चिंता ११, स्वेद १२, खेद १३, मद १४, मोह १५, निद्रा १६, राग १७, द्वेष १८, ये अष्टादश दोष समस्त संसारी जीवनिमें व्याप्त हो रहे हैं भगवान अरहंतनिके घातिया कर्मनिका अभावतैं ये समस्त दोष नष्ट भये तातैं अनंतसुखरूप परमात्मा परमपूज्य परमेश्वर अनंतगुणनिकरि भूषित कोट सूर्य समान उद्योतका धारक अनेक अतिशयनिकरि युक्त अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखरूप तिष्ठै हैं ऐसे अरहंतस्वरूपका ध्यान करना सो रूपस्थध्यान है। जो पुरुष वीतराग हुवा संता वीतरागकूं स्मरण करे है सो कर्मबंधनतैं छूटै है अर आप रागी हुवा सरागीको अवलम्बन करै है सो दुष्टकर्मनिकरि बंधै है क्रोधी हुवा हू अनेक विकारकरि असार ध्यानके मार्गकूं अवलम्बन करे है तथा मंत्र मंडल मुद्रादि अनेक प्रयोगकरि ध्यान करनेकूं उद्यमी हैं तिनका आत्माका एकाग्र होय जुडनेमें ऐसा सामर्थ्य प्रगट होय है जो क्षण-मात्रमें सुर असुर मनुष्यनिके समूहकूं क्षोभने प्राप्त करै हैं विद्यानुवादमें अनेक विद्या मंडल मंत्र अक्षरा-दिकनिका सामर्थ्य आत्माके भावजुडनेतैं प्रकट होतैं वर्णन कीये हैं जातैं अनादि वस्तुनिके संयोगमें ऐसा ही सामर्थ्य है सो वस्तुनिका स्वभाव कोऊका दूर किया दूर होय नाहीं है जैसे केतेक पुद्गलनिका संयोग मिलि विष हो जाय केते अमृत हो जाय हैं केते शरीरके लगानेतैं विकार दूर करैं अर भक्षण करनेतैं प्राण हरैं तथा वचनके पुद्गलनिमें हू अचिंत्य सामर्थ्य है जिनतैं आत्मामें क्रोधादिक विकार प्रगट हो जाय तथा आजन्मके कषाय दूर हो जांय तथा मंत्रादिकनितैं जहर उतरि जाय अर जहर व्याप्त हो

जाय ऐसे ही मनके एकाग्र जुडनेमें ध्यानका अचिंत्य सामर्थ्य है नरक स्वर्ग मोक्ष होनेका कारण ध्यान है। केते असंख्यात ध्यान कुतूहलके अर्थि कुमार्गमें प्रवर्तन करावनेवाले कुमतके कारण कुध्यान हैं क्योंकि आत्मामें अनंत सामर्थ्य स्वभावहीतैं हैं जैसा जैसा बाह्य निमित्त मिले तैसा तैसा परिणमन होय है यातैं जिनेन्द्रधर्मके धारक हैं ते खोटे ध्यान कुमंत्र मंडलादिसाधन कौतुक करके हू स्वप्नहूमें कदाचित सेवन मत करो कुध्यानादिकके प्रभावतैं सम्यक् मार्गतैं भ्रष्ट हो जाय फिर कुबुद्धि प्रगट हो जाय है सांची उज्ज्वल बुद्धि नष्ट होय फेरि अनेक भवनिमें बुद्धिका शुद्धता नाहीं आवे है मिथ्यामार्ग नाहीं छूटै है सन्मार्ग छूटे पाछैं संख्यात असंख्यात भवपर्यंत सम्यक्बुद्धि प्रगट नाहीं होय जिनसिद्धांतको उपदेश प्रवेश नाहीं करे बुद्धि विपरीत हो जाय यातैं असत् ध्यान खोटे मंत्रादिक केवल आत्माके नाशके अर्थि हैं रागादिकका वर्द्धन करे हैं प्रहीतमिथ्यात्व है जे पुरुष नीचे ध्यान खोटे मंत्र मुद्रा मंडल यंत्र प्रयोगादिककरि रागी द्वेषी कामी क्रोधी नीचे व्यंतरदेव भवनवासी ज्योतिषी देव देवी यक्ष यक्षणीनिका आराधना करे हैं संसारके विषय तथा धन तथा कषायनिकी खोटी आशाका अर्थी हुवा ते भोगांकी आर्त्तिकरि अपना पूर्व पुण्यका घातकरि नरक भूमिकूं प्राप्त होय है ये विषय कषायनिकी वांछा ही दुर्गति करे है फिर इनके अर्थि खोटी विद्या खोटे मंत्रादिकरि ध्यान करना आत्मामें मिथ्यात्व कषायनिकी दृढ आरोपण करणा है सो निगोदादिकमें अनंतकाल परिभ्रमण करावे ही बुद्धिमानकूं तो ऐसा ध्यान करना तथा ऐसा चिंतवन करना तथा ऐसा आचरण करना जातैं जीवके कर्मबंधका विध्वंस होय अर जे शांतचित्त हैं मंदकषायी हैं निर्वांछक हैं संतोषी हैं मोक्षमार्गके अवलम्बी हैं तिनके विद्याका साधन देवताका आराधन विना ही स्वयमेव अनेक सिद्धि अनेक ऋद्धि प्राप्त होय हैं अर नीच वांछाके धारक हीनपुण्यके धारकनिकै वांछित भी नाहीं होय अर अनेक मंत्रादिक साधन करते हू अनेक आपदा ही प्राप्त होय हैं तातैं वीतरागधर्मका श्रद्धानी स्वप्नहूमें नीचे ध्यान मंत्रादिककी प्रशंसा हू मत करो। बहुरि जो शरीरादिक

नोकर्म अर ज्ञानावरणादिकर्मरहित चैतन्यस्वरूप निजानंदमय शुद्ध अमूर्त अविनाशी अजन्मा स्पर्शरसगंधवर्णादिपुद्गलविकाररहित अनंतदर्शन अनंतज्ञान अनंतसुख अनंतशक्ति स्वभावस्वाधीन निराकुल अतींद्रिय सिद्ध कृतकृत्य ऐसा शुद्ध आत्माका स्वभाव चिंतवन करना सो रूपातीतध्यान है। यद्यपि चित्तका एकाग्रपना ध्यान है तथापि सिद्धपरमेष्ठीका गुणसमूह तथा स्वरूप ध्यानमैं अवलोकनकरि अनन्यशरण होय अर तिस स्वरूपमैं लीन होजाना सोई धर्मध्यान है सिद्धपरमेष्ठीके गुणसमूहके स्वभावरूप अपना स्वरूपकूं करना सो ही परमात्मामैं युक्त होना है परमात्माके अर हमारे गुणनिकरि तो समानता है परंतु हमारे गुण कर्मनिकरि आच्छादित हैं सिद्धपरमेष्ठीके कर्मके अभावतैं समस्त गुण प्रगट भये हैं ऐसैं निरंतर अभ्यासतैं आत्मा ऐसा निश्चल होय जो स्वप्नादिक अवस्थामैं हू सिद्धनिका स्वभाव प्रत्यक्ष दीखै ताकै रूपातीत ध्यान होय है। ऐसैं रूपातीत ध्यानकूं वर्णन करि धर्मध्यानका वर्णन समाप्त कीया ॥ ४ ॥

अब शुक्लध्यानके वर्णन करनेका अवसर आया यद्यपि शुक्लध्यानके परिणामनिका एकदेशमात्र हू अपने साक्षात् नाहीं है तथापि आगमकी आज्ञाके अनुकूल किंचित लिखिये है। शुक्लध्यान चार प्रकार है तिनमैं आदिके दोय शुक्लध्यान तो पूर्वके ज्ञाता द्वादशांगके धारक मुनीश्वरनिके होय है अर पाछले दोय शुक्लध्यान केवली भगवानके होय हैं। पृथक्त्ववितर्कवीचार १, एकत्ववितर्कअवीचार २, सूक्ष्मक्रियाप्रतिपाति ३, व्युपरतक्रियानिवर्ति ४ ये चार नाम हैं तिनमैं प्रथम शुक्लध्यान तो मनवचनकायके तीनूं योगनिमैं होय है दूजा शुक्लध्यान एक योगहीमैं होय है तीजा शुक्लध्यान एक काययोगहीमैं होय है चौथा शुक्लध्यान अयोगीहीकैं होय है तिनमैं प्रथमशुक्लध्यान तो सवितर्क कहिये श्रुतज्ञानका शब्द अर्थका अवलंबनसहित है अर सवीचार कहिये अर्थका पलटना शब्दका पलटना अर योगका पलटना तिनकरि सहित है तातैं सवितर्कसवीचार है अर नानाशब्दअर्थयोगका पलटना सो पृथक्त्ववितर्कवीचार है अर

दूजा शुक्लध्यान श्रुतका एक शब्द एक अर्थ एक योगका अवलंबनकरि होय है अर अवलंबन किया तातैं परिणाम पलटै नाहीं तातैं एकत्ववितर्कअवीचार नाम दूजा शुक्लध्यान है इहां वितर्क नाम श्रुतज्ञानका है वीचार नाम अर्थका व्यंजनका अर योगका संक्रांति कहिये पलट जानेका है, अर्थ नाम तो ध्यानकरने योग्य ध्येयका है सो ध्येय द्रव्य हैं वा पर्याय है व्यंजन नाम वचनका है योग नाम मनवचनकायका हलन चलनरूप क्रियाका है संक्रांतिनाम परिवर्तनका है द्रव्यकूं छांडि पर्यायकूं प्राप्त होना पर्यायकूं छांडि द्रव्यकूं प्राप्त होना सो अर्थसंक्रांति है एक श्रुतका शब्दकूं ग्रहणकरि अन्य श्रुतका वचनकूं अवलंबन करना ताकूं छांडि अन्यका अवलंबन करना सो व्यंजनसंक्रांति है काययोगने छांडि अन्य योगकूं ग्रहण करना सो योग्यसंक्रांति है ऐसे परिवर्तनकूं वीचार कहिये है सो ये सामान्य विशेष कह्यो जो चार प्रकार शुक्लध्यान अर धर्मध्यान अर पूर्वे कहे बहुत प्रकार गुप्त्यादिक उपाय संसारका अभावके अर्थि महामुनिके धारने योग्य हैं यहां ध्यानके आरंभमैं एता परिकर होय है जिसकालमैं उत्तम तीन शरीरके संहननपना करि परीषहानिकी बाधा सहनेकी शक्तियुक्त आत्माकूं प्राप्त होय तिस कालमैं ध्यानके संयोगका परिचयके अर्थि आरंभ करे, कैसें करे सो कहै हैं—पर्वत गुफा कंदर दरी वृक्षनिके कोटर नदीके तट श्मशान जीर्णउद्यान शून्य गृहादिकनिमैं कोऊ एक अवकाशस्थान होय सो कैसा स्थान होय सर्प मृग पशु पक्षी मनुष्यनिके अगोचर होय अर आगंतुक कीडा कीडी बीछू डांस मांछर मधुमक्षिकादिक जीवनिकरि रहित होय अर जहां अति ऊष्मा नाहीं होय अति शीत नाहीं होय अति पवन नाहीं होय वर्षा तावडाकी बाधारहित होय समस्त प्रकार बाह्य शरीरमैं अर अभ्यंतर मनविषैं विक्षेपनिका कारणनिकरि रहित पवित्र अनुकूल स्पर्शरूप भूमितलमैं सुखरूप तिष्ठता बाध्या है पल्यंकासन जाने अर सम सरल कठोरतारहित शरीरयष्टिकूं निश्चलकरि अपने अंकमैं बामहस्ततलके ऊपरि दक्षिण हस्ततल सीधो स्थापनकरि अर नेत्रनिकूं अति नाहीं उघाडता अर अति नाहीं निमीलन करता दंतानिकरि दंतानिके अग्र-

भाग स्पर्शन न करता अर किंचित् उन्नतमुख धारैं सरल मध्य हृदय उदरादि धारैं अंगका करडापनाने छांडि परिणाम मस्तक ओष्ठकी गंभीरता सरलताकूं धारता प्रसन्नमुखका वर्ण धारैं अर निमेषरहित स्थिर सौम्यदृष्टिसहित हुवा नष्ट भया है निद्रा आलस्य काम राग रति अरति शोक हास्य भय द्वेष ग्लानि जाके अर मंद मंद है स्वासउश्वासका प्रचार जाके इत्यादिक परिकरकूं धारता साधु है सो नाभिके ऊपर अथवा हृदयमैं तथा मस्तकमैं वा अन्य स्थानमैं मनकी प्रवृत्तिकूं जैसैं पूर्वैं परिचय होय तैसैं निश्चल करके मोक्ष जो कर्मबंधनतैं छूटनेका अभिलाषी हुवा प्रशस्तध्यानकूं ध्यावे, तिस ध्यानमैं एकाग्रमन हुवा अर रागद्वेष मोहकी उपशमताकूं प्राप्त हुआ निपुणपणातैं शरीरका हलनचलनक्रियाकूं निग्रह करता मंद २ उश्वासनिश्वासरूप सम्यक् निश्चल अभिप्रायकूं धारता क्षमावान हुवा बाह्य अभ्यंतर द्रव्यपर्यायनिनैं ध्यावता श्रुतका सामर्थ्यकूं अंगीकार करता साधु है सो अर्थनै अर व्यंजननै अर कायनै अर वचननै भिन्नपणाकरि परिवर्तन करता मनकरिकै जैसैं कोऊ पुरुष परिपूर्णबलका उत्साहरहित निश्चलतारहित हुवा तीक्ष्णतारहित भोंटा शस्त्र करिकै बहुतकालमैं सचिकण काष्ठकूं छेदै है तैसैं अष्टम नवम दशम गुणस्थानके भावका धारक साधुहू संज्वलनकषायका उदयतैं परिपूर्ण परिणामनिका बलके उत्साहकूं नाहीं प्राप्त हुवा अर भावनिके कषायके उदयके धक्कातैं दृढ निश्चलताकूं प्राप्त नाहीं होनेतैं अर मोहिनीका समस्त उदयका नाश नाहीं होनेतैं धीरैं धीरैं करणरूप परिणामनिके सामर्थ्यतैं मोहनीयकर्मकी प्रकृतिनिनै उपशम करता वा क्षय करता पृथक्त्ववितर्कवीचार नाम ध्यानका धारक होय है। फेरि वीर्यविशेषकी हानितैं योगतैं योगांतरनै शब्दतैं शब्दांतरनै अर्थतैं अर्थांतरनै आश्रयकरता ध्यानके प्रभावतैं समस्त मोहरजका अभावकरि ध्यानका योगतैं निमडै है ऐसैं पृथक्त्ववितर्कवीचार नाम ध्यानका स्वरूप कह्या। बहुरि इसही विधिकरि समस्त मोहनीयकूं दग्ध करनेका इच्छुक अनन्तगुण विशुद्ध योगविशेषकूं आश्रयकरि बहुत ज्ञानावरणकी सहाईभूत प्रकृतिनिका बंधकूं रोकता अर स्थितिकूं घटावता वा क्षय करता

श्रुतज्ञानका उपयोगवान दूरि भया है अर्थ व्यंजन योगका पलटना जाकै अर अविचलित है मन जाका अर क्षीण भया है कषाय जाकै वैडूर्यमणिकी ज्यों निरुपलेप हुवा ध्यानकरिकै फेर नाहीं बाहुडै है ऐसैं एकत्ववितर्कध्यान कह्या। ऐसैं एकत्ववितर्कशुक्लध्यानरूप अग्निकरि दग्ध किया है घातिकर्मरूप ईंधन जानैं अर प्रज्वलित भया है केवलज्ञानरूप सूर्यमंडल जाकै मेघपंजरका अभावतैं निकस्या सूर्यकी ज्यों कांतिकरि देदीप्यमान भगवान तीर्थंकर वा अन्य केवली सो तीन लोकके ईश्वरके जे इंद्र धरणेंद्रादिकनिके वंदनीय पूजनीय हुवा उत्कृष्टकरि देशोनकोटिपूर्व विहार करै हैं अर सो ही केवली जो अंतर्मुहूर्त आयु बाकी रहि जाय अर वेदनीनाम गोत्रकर्मका स्थिति हू आयुके समान ही होय तादि तो समस्त वचन मनोयोगकूं अर बादर काययोगकूं छांडि करिकै सूक्ष्मकाययोगका अवलंबन करै सो सूक्ष्मक्रियाप्रतिपातिध्याननैं प्राप्त होनेकूं योग्य होय है अर जो अतंर्मुहूर्त आयु शेष रही होय अर वेदनीनामगोत्रका स्थिति अधिक होय तो सयोगी समस्त कर्मके रजकूं नाश करनेकी शक्ति स्वभावतैं दंड कपाट प्रतर लोकपूरण समुद्घात अपने आत्मप्रदेशानिके प्रसरणतैं च्यारि समयनिमैं करि बहुरि च्यारि समयमैं आत्मप्रदेशनिकूं संकोच करि समस्त कर्मनिकी स्थितिकूं समान करि पूर्वशरीरपरिमाण होय सूक्ष्मकाययोगकरि सूक्ष्मक्रियाअप्रतिपाति ध्यानकूं प्राप्त होय है तहां पाछैं समुच्छिन्नक्रियानिवृत्तिध्यानका आरम्भ करै है समुच्छिन्न कहिये नष्ट भया है श्वासोच्छ्वासका प्रचार अर समस्त कायवचनमनका योगरूप समस्तप्रदेशनिका हलन चलनरूप क्रियाका व्यापार जामैं यातैं याकूं समुच्छिन्नक्रियानिवृत्तिध्यान कहिये है तिस समुच्छिन्नक्रियानिवृत्तिध्यानके होते समस्त बंधका कारण समस्त आस्रवका निरोध अर समस्त कर्मका नाश करनेका सामर्थ्यकी उत्पत्तितैं अयोगकेवलीभगवानकै सम्पूर्ण संसारका दुखनिका संगमके छेदन करनेका कारण सम्पूर्ण यथाख्यातचारित्र ज्ञान दर्शन साक्षात् मोक्षका कारण उपजै है सो अयोगकेवलीभगवान तादि ध्यानरूप अग्निकरि दग्ध किया है समस्त कर्ममलकलंकबंध जानैं नष्ट भया

है कीटधातु पाषाण जातैं ऐसा सुवर्णकी ज्यों अपनी आत्माकी शुद्धता पाय निर्वाणकूं प्राप्त होय है ऐसे शुक्लध्यानका संक्षेपस्वरूप वर्णन करि ध्यान नामा तपका वर्णन समाप्त किया। ऐसैं तपभावना वर्णन करी॥

अब इहां अनेकांतभावना अर समयसारादिभावना वर्णन करी चाहिये परंतु आयु कायका अब शिथिलपणातैं ठिकाना नाहीं तातैं सूत्रकारका कह्या कथनकूं समेटना उचित विचारि मूलग्रंथका कथन लिखिये है। यहां श्रावकके बारा व्रत तो वर्णन किया अब अंतकालमैं सलेखना विना व्रत सफल नाहीं होय बारह व्रतरूप सुवर्णका मंदिर खडा किया अब या ऊपर सलेखना है सो रत्नमयी कलश चढावना है यातैं सलेखनाका स्वरूप कहिये है तिसमैं प्रथम सलेखनाका अवसरका वर्णन करनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

उपसर्गे दुर्भिक्षे जरासि रुजायां च निःप्रतीकारे। धर्माय तनुविमोचनमाहुःसल्लेखनामार्याः॥ १२२॥

अर्थ—जाका इलाज नाहीं दीखै मिटनेका प्रतीकार नाहीं दीखै ऐसा उपसर्ग होतैं दुर्भिक्ष होतैं जरा होतैं रोग होतैं जो धर्मकी रक्षाके अर्थि शरीरका त्याग करना ताहि गणधरदेव सल्लेखना कहैं हैं जातैं देहमैं रहना अर देहकी रक्षा करना तो धर्मके धारनेके अर्थि है मनुष्यपणा इंद्रिय अर मन इत्यादिक पावना सो समस्त धर्मके पालनेतैं सफल है अर जहां धर्महीका नाश दीखै जो अब धर्म नाहीं रहैगा श्रद्धान ज्ञान चरित्र नष्ट हो जायगा ऐसा निश्चय हो जाय तहां धर्मकी रक्षाके अर्थि देहका त्याग करना सो सल्लेखना है कोऊ पूर्वजन्मका बैरी असुर पिशाचादिक देव उपसर्ग आय करै तथा दुष्ट बैरी वा भील म्लेच्छादिक तथा सिंह व्याघ्र गज सर्पादिक दुष्ट तिर्यंचनिकृत उपसर्ग आया होय अथवा प्राणनिका नाश करनेवाला पवन वर्षा गडा तथा शीत उष्णता धूप अग्नि पाषाण जलादिकृत उपसर्ग आया होय तथा दुष्ट कुटुंबके बांधवादिक स्नेहतैं वा मिथ्यात्वकी प्रबलतातैं तथा अपने भरणपोषणके लोभतैं चारित्र धर्मके नाश करनेकूं उद्यमी होय तथा दुष्ट राजा राजाका मंत्री इत्यादिकनिकृत उपसर्ग आवै तो तहां सल्लेखना करै। बहुरि निर्जन वनमैं दिशा भूल होजाय मार्ग नाहीं पावै बहुरि अन्नपान जामैं मिलनेका

नाहीं ऐसा दुर्भिक्ष आ जाय बहुरि समस्त देहकूं जीर्ण करनेवाली नेत्रकर्णादिक इंद्रियानिकूं नष्ट करनेवाली जंघाबल नष्ट करनेवाली हस्तपादादिकानिकूं शिथिल असमर्थ करनेवाली जरा आजाय तिस कालमैं सल्लेखना करना उचित है बहुरि असाध्य रोग आय गया होय प्रबल ज्वर अतीसार तथा स्वास कास कफका बधना तथा वातपित्तादिककी प्रबलता होय तथा अग्निकी मंदताकरि क्षुधाका घटना होय रुधिरका नाश होना होय तथा कठोदर सोजा इत्यादिक विकारकी प्रबलता होय तथा रागकी दिन दिन वृद्धि होय तदि शीघ्र ही धैर्य धारणकरि उत्साहसहित सल्लेखना करना योग्य है ये अवश्य मरणके कारण आय प्राप्त होंय तहां च्यारि आराधनाका शरण ग्रहण करि समस्त देह गृह कुटुंबादिकतैं ममत्व छांडि अनुक्रमतैं आहारादिकानिका त्यागकरि देहकूं त्यागना देह विनशि जाय अर आत्माका स्वभाव दर्शन ज्ञान चारित्र जैसैं नाहीं विनशै तैसैं यत्न करना। यो देह तो विनाशीक है अवश्य विनशैगा कोट्यां यत्नतैं देव दानव मंत्र तंत्र मणि औषधादिक कोऊ रक्षा नाहीं करैगा देह तो अनंत भवधारण करि छांडे हैं यो रत्नत्रय धर्म अनंत भवनिमैं नाहीं प्राप्त हुवा यातैं दुर्लभ है संसार परिभ्रमणतैं रक्षा करनेवाला है ऐसा धर्म मेरे परलोकपर्यंत मति मलीन होहू ऐसा निश्चय धरि देहतैं ममता छांडि पण्डितमरणके अर्थि उद्यम करै।

अब समाधिमरणकी महिमा कहनेकूं सूत्र कहैं हैं,—

अंतःक्रियाधिकरणं तपःफलं सकलदर्शिनः स्तुवते। तस्माद्यवद्विभवं समाधिमरणे प्रयतितव्यं॥ १२३॥

अर्थ—अंतक्रिया जो सन्यासमरण सो ही जाका आधार होय तिस तपके फलकूं सकलदर्शी सर्वज्ञ भगवान स्तुवते कहिये प्रशंसा करते हैं जिस तप करनेवालेके तपके फलतैं अंतमैं सन्यासमरण नाहीं भया सो तप निष्फल है तातैं जेता आपका सामर्थ्य होय तेता समाधिमरण करनेमैं प्रकृत यत्न करने योग्य है। भावार्थ—तप व्रत संयम करनेका फल लोकमैं अनेक हैं तप करनेका फल देवलोक है तथा

मिथ्यादृष्टीके तपके प्रभावतैं नवग्रैवेयक पर्यंतमें अहमिंद्र होना हू है महान ऋद्धि संपदा हू है तपका फल चक्रवर्तीपणा नारायणपणा बलभद्रपणा राजेंद्रपणा विभव संपदारूप निरोगपणा बलवानपणा अनेक प्रकार है अखंड आज्ञा ऐश्वर्य ऋद्धि विभव परिवार समस्त ये तपका फल है सो अंतसमाधिमरण विना समस्त देवादिकनिकी संपदा अनेक वार भोगि भोगि संसारमें परिभ्रमण ही कीया परंतु तप करके जो अंतसमाधि मरणकी विधितैं आराधनाका शरणसहित भयरहित मरण कीया तिस तपका फलकूं सर्व-दर्शी भगवान प्रशंसा करै हैं जातैं कोटिपूर्वपर्यंत तप कीया अर अंतकालमें जाका मरण विगडि गया ताका तप प्रशंसा योग्य नाहीं तप करनेतैं देवलोक मनुष्यलोककी संपदा पा जाय परंतु मरणकालमें आराधनामरणके नष्ट होनेतैं संसारपरिभ्रमण ही करैगा जैसैं अनेक दूर देशनिमें बहुत भ्रमणकरि बहुत धन उपार्जन कीया परंतु अपने नगरके समीप आय धन लुटाय दरिद्री होय है तैसें समस्त पर्यायमें तप व्रत संयम धारण करके हू जो अंतकालमें आराधना नष्ट करि दीनी तो अनेक जन्ममरण करनेका ही पात्र होयगा।

अब संन्यास करनेका प्रारंभमें कहा करै सो कहनेकूं सूत्र कहैं हैं—

स्नेहं वैरं संगं परिग्रहं चापहाय शुद्धमनाः। स्वजनं परिजनमपि च क्षान्त्वा क्षमयेत्प्रियैर्वचनैः ॥ १२४ ॥

अर्थ—अब स्नेह अर वैर संग अर परिग्रह इनूंका त्यागकरि शुद्ध मन होय स्वजन अर परिकरके जन तिनमें क्षमा ग्रहण करिके अर समस्त परिकरके जनकूं आप हू प्रिय हित वचन करके क्षमा ग्रहण करावै सम्यग्दृष्टीकै स्नेह अर वैर दोऊनका अभाव होय है सम्यग्ज्ञानी ऐसा विचारै है जो इस पर्यायमें कर्मके वशतैं मैं आय उपज्या अब जो पर्यायका उपकारक तथा अपकारक द्रव्यनिकूं पुण्य पाप कर्मका उदयके आधीन जे बाह्य स्त्री पुत्रादिक थे तिनमें पर्यायके उपकारका अर्थि दान सन्मानादिकरि स्नेह किया अर जे इस पर्यायके उपकारक द्रव्यनिकूं नष्ट करनेवाले थे तिनकूं चारित्रमोहके उदयकरि वैरी

मानि उनतैं हू परान्मुख होय रह्या अब इस पर्यायका विनाश होनेका अवसर आया अब कौनसा स्नेह करूं अर कौनसूं वैर करूं मेरा इनका आत्माके संबंध तो है ही नाहीं मैं इनूंका आत्माकूं जानूं नाहीं ये लोक हमारे आत्माकूं जाने नाहीं केवल हमारा इनूंका चामडा दीखनेमैं आवे है यातैं चमडाहीसूं मित्र शत्रुका संबंध है सो ये चाम भस्म होय एक एक परमाणु उडि जायँगे अब कौनसूं स्नेह वैरका संकल्प करिये अर जे कोऊ आपसूं विनाकारण अभिमानसूं वैर करनेवाले हैं तिनसूं नम्रीभूत होय क्षमा ग्रहण करावे जो मेरी चूक भूल भई है जो मैं आप सारिखनतैं अपूठा होय रह्या मैं अब आपसूं प्रार्थना करूं हूं मेरा अपराध क्षमा करो आप सारिखे सज्जनानि विना कौन बकसीस करै अर जो आप किसीका धन धरती दाब लई होय तो उनकूं देय राजी करे जो मैं दुष्टताकरि आपका धन राख्या तथा जमी जायगा खोसी सो अब ये आपकी ग्रहण करो मैं पापी हूं दुष्टताकरि छलकरि लोभकरि अंध भया दुराचार किया अब मैं अंतरंगमैं पश्चात्ताप करूं हूं आपकूं वडा दुःख उपजाया अब जो अपराध किया सो तो कोऊ प्रकार उलटा आवे नाहीं अब मैं कहा करूं आप माफ करो इत्यादिक सरल भावनितैं क्षमा ग्रहण करावे अर जे अपने कुटुंब मित्रादिक स्नेहवान होय तिनसूं कहै तुम हमारे संबंधी स्नेही हो परंतु तुमारे हमारे इस पर्यायका संबंध है सो थैं इस देहका उपजावनेवाला माता पिता हो, इस देहतैं उपजे पुत्र पुत्री हो, इस देहके रमावनेवाली स्त्री हो, इस देहके कुलके संबंधी बंधुजन हो तुमारे हमारे इस विनाशीक पर्यायका संबंध येते काल रह्या अर यो पर्याय आयुके आधीन है अब अवश्य विनशैगा अब विनाशीकतैं स्नेह करना वृथा है इस देहतैं स्नेह करो तो यो रहनेकी नाहीं यो तो अग्नि आदिकतैं भस्म होय समस्त बिखर जायगा अर मेरा आत्मा ज्ञानस्वरूप है अविनाशी है अखंड है मेरा निजरूप है निज स्वभावका विनाश नाहीं जाका संयोग है ताका अवश्य वियोग है अर जो अनेक पुद्गलपरमाणु मिलकरि उपज्या ताका अवश्य विनाश होय ही तातैं इस विनाशीक अज्ञान जडस्वरूप मेरे पुद्गलतैं स्नेह छांडि मेरे

अविनाशी ज्ञायक आत्माका उपकार करनेमें उद्यमी होना योग्य है जैसें मेरा ज्ञान दर्शन स्वभाव आत्माका रागद्वेषमोहादिकतैं घात नाहीं होय अर ज्ञानादिककी उज्वलता प्रकट होय वीतराग निज स्वभावकी प्राप्ति होय तैसें यत्न करना ये पर्याय तो अनंतानंत धारण करि करि छांडि हैं मैं दर्शन ज्ञान चारित्रकी विपरीततातैं विपर्ययश्रद्धान विपरीत ज्ञान विपरीत आचरनतैं च्यारि गतिनिमें परिभ्रमण किया कहां मेरा सकलका ज्ञाता सर्वज्ञस्वरूप अर कहां एकेन्द्रिय पर्यायमें अक्षरके अनंतवें भाग ज्ञानका रहना तथा अनंत शक्ति अंतराय कर्मके उदयतैं नष्ट होय पृथ्वी पाषाण जल अग्नि पवन वनस्पतिरूप पंचस्थावररूप धरना विकलत्रय होना ये समस्त मिथ्याश्रद्धानज्ञानआचरणका प्रभाव है अब अनंतानंतकालमें कर्मके बडे क्षयोपशमतैं वीतरागका स्याद्वादरूप उपदेशतैं मेरे किंचित् स्वरूप पररूपका जानना भया है तातैं भो सज्जनजन हो, अब ऐसा स्नेह करो जैसें मेरा आत्मा रागद्वेषमोहरहित हुवा निर्भय हुवा देहका त्याग आराधनाका शरणसहित करे जातैं अनादिकालतैं अनंतानंत मिथ्यात्वसहित बालमरण किया जो एक बार भी पण्डितमरण करता तो फेर मरणका पात्र नाहीं होता तातैं अब देहतैं स्नेहादिक छांडि जैसें मेरा आत्मा रागादिकनिके वश होय संसार समुद्रमें नाहीं डूबे तैसें यत्न करना उचित है ऐसे स्नेहवैरादिक छांडि अर देह परिग्रहादिकका राग छांडि शुद्ध मन करो। बहुरि समाधिमरणका इच्छक कहा करै सो सूत्र कहैं हैं।

आलोच्य सर्वमेनः कृतकारितमनुमतं च निर्व्याजं। आरोपयेन्महाव्रतमामरणस्थायि निःशेषं ॥ १२५॥

अर्थ—बहुरि जो पाप अपराध आप किया तथा अन्यतैं कराया होय तथा करतेकूं आछा जाना होय तिस अपराधकूं एकांतमें निर्दोष वीतरागी ज्ञानी गुरुनितैं कपटरहित आलोचना करके अर मरण पर्यंत समस्त महाव्रत आरोपण करै ग्रहण करै। भावार्थ—वीतराग निर्दोष गुरुनिका संयोग प्राप्त होजाय अर अपना रागादिकषाय घटि जाय अर परीषहादिक सहनेमें अपना शरीर मन समर्थ होय धैर्यादि

गुणका धारक होय निर्ग्रंथ वीतराग गुरु निर्वाह करनेकूं समर्थ होय देशकालसहायादिकका शुद्ध संयोग होय तो महाव्रत अंगीकार करै अर बाह्य अभ्यंतर सामग्री नाहीं होय तो अपने परिणाममैं ही भगवान पंचपरमेष्ठीका ध्यान करि अरहंतादिकतैं आलोचना करै अपनी योग्यताप्रमाण समस्त पंच पापनिका त्यागकरि गृहमैं तिष्ठा ही महाव्रती तुल्य हुवा रोगादिक वेदनाकूं कायरता रहित बडा धैर्यतैं सहता दुःखरूप वेदनाकूं बाह्य नाहीं प्रकट करता सहै कर्मके उदयकूं अपना स्वभावतैं भिन्न जानता समस्त शत्रु मित्र संयोग वियोगमैं साम्यभाव धारता परिग्रहादिक उपाधिकूं त्यागि करि विकल्परहित तिष्ठै हैं जातैं ऐसा जानना जो सन्यासका अवसर जानि परिग्रहका त्याग करै तहां जो प्रथम तो किसीका देना ऋण होय तो ताकूं देय ऋणरहित होजाय बहुरि किसीका धनादिक तथा जमीं जायगा आप अनीतिसूं ली होय तो ताकूं पाछी देय वाकै संतोष उपजाय अपना अपराध क्षमा कराय आपकी निंदा गर्हा करै। बहुरि जो धन परिग्रह होय ताका विभागकरिकै देय निराकुल होजाय स्त्रीको विभागकरि स्त्रीनै देवै पुत्रनिका विभाग पुत्रनिको देवै पुत्रीका विभाग योग्य पुत्रीकूं देवै दुःखित दीन अनाथ विधवा ऐसैं आपके आश्रय बहिण भुवा बंधु इत्यादिक होय तिनकूं देय समस्त परिग्रह त्यागि ममतारहित होय देहका संस्कारको त्याग करै स्त्रीपुत्र गृहादिक समस्त कुटुम्बमैं शय्या आसन वस्त्रादिकनिमैं ममताकूं छोडै॰ जो हमारा इनका अब केताक संबंध है जिस देहका संबंधतैं संबंध था उस देहकू ही अब हम छांडैं हैं तब देहका संबधीनितैं हमारै काहेकी ममता अब हमारा आत्माका संबंध तो अपने स्वभावरूप सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्र है ते हमारा निजस्वभाव है देह तो चाम हाड मांस रुधिरमय कृतघ्न है जड है ये हमारा नाहीं हम इनका नाहीं देह विनाशीक है हमारा रूप अविनाशी है हमारे तो अज्ञान भावतैं यामैं ममता रही ताकरि अशुभकर्मनिका बंध किया अब ऐसा देहका संबंधका नाशकूं वांछा करूं हूं देहका ममत्वतैं ही अनंत जन्म मरण भये हैं अर संसारके जितने दुःखनिके प्रकार हैं ते समस्त

देहके संगमतैं ही मेरे हैं रागद्वेषमोहकामक्रोधादिकानिका उत्पत्तिका कारण हू एक देहका संबंध ही है ऐसैं देहतैं विरागताकूं प्राप्त होय समस्तव्रतनिकी दृढता धारण करे बहुरि कहा करे सो कहैं हैं,—

शोकं भयमवसादं क्लेदं कालुष्यमरतिमपि हित्वा । सत्त्वोत्समुदीर्य च मनःप्रसाद्यं श्रुतैरमृतैः ॥ १२६ ॥

अर्थ—सन्यासके अवसरमैं शोक भय विषाद स्नेह कलुषपना अरति इत्यादिकनिकूं छांडि करिकैं कायरपणाका अभाव करो अपना आत्मसत्त्वका प्रकाश करिकैं अर श्रुतरूप अमृतकरि मन जो है ताहि प्रसन्न करे । भावार्थ—अनादिकालतैं ही पर्यायमैं संसारीकै आत्मबुद्धि लागि रही है अर पर्यायका नाशकूं ही अपना नाश माने है जब पर्यायका नाश होना अर धन परिग्रह स्त्री पुत्र मित्र बांधवादिक समस्त संयोगका वियोग होना दीखै है तब मिथ्यादृष्टिकै बडा शोक उपजै है सम्यग्दृष्टीकै शोक नाहीं उपजै है ऐसा विचार करै है, जो हे आत्मन् ! पर्याय तो अनंतानंत ग्रहण होय होयकैं छूटीं हैं यो देह रोगनिका उत्पत्तिका स्थान है अर नित्य ही क्षुधा तृषा शीत उष्ण भयादिक उपजावनेवाला है महा कृतघ्न है अवश्य विनाशीक है आत्माकै समस्त प्रकार दुःख क्लेशका उपजावनेवाला है दुष्टके संगमकी ज्यों त्यागने योग्य है समस्त दुःखनिका बीज है महा संतापउद्वेगका उपजावनेवाला है सदा काल भयका उपजावनेवाला है बंदीगृहसमान पराधीन करनेवाला है जेती दुःखनिकी जाती हैं ते समस्त याके संगमतैं भोगिये है आत्मस्वरूपकूं भुलावनेवाला है चाहकी दाहका उपजावनेवाला है महा मलीन है कृमिनिका समूहकरि भरया महादुर्गंधमय है दुष्ट भ्राताकी ज्यों नित्य क्लेशके उपजावनेकूं समर्थ अनमारण शत्रु है ऐसे देहका वियोग होनेका कहा शोक है यातैं ज्ञानी शोककूं छांडैं हैं मरणका भय नाहीं करैं हैं विषाद स्नेह कलुषपना तथा अरतिभावकूं त्यागकरि अर उत्साह साहस धैर्य प्रकट करकैं श्रुतज्ञानरूप अमृतका पानकरि मनकूं तृप्ति करैं हैं। अब इसही सूत्रका अर्थकी दृढता करनेकूं मृत्युमहोत्सवका पाठ अठारह श्लोकनिमैं यहां उपकार जानि अर्थ सहित लिखिए है—

मृत्युमार्गे प्रवृत्तस्य वीतरागो ददातु मे । समाधिबोधौ पाथेयं यावन्मुक्तिपुरी पुरः ॥

अर्थ—मृत्युके मार्गमें प्रवर्त्यो जो मैं ताकूं भगवान वीतराग जो हैं सो समाधि कहियें स्वरूपकी सावधानी अर बोध कहिये रत्नत्रयका लाभ सोही जो पर्याय कहिये परलोकके मार्गमें उपकारक वस्तु सो देहु जितनेकमें मुक्ति पुरी प्रति जाय पहुंचूं या प्रार्थना करूं हूं । भावार्थ—मैं अनादिकालतैं अनंत कुमरण किये जिनकूं सर्वज्ञ वीतराग ही जानैं हैं एकबार हू सम्यक्मरण नाहीं किया जो सम्यक्मरण करता तो फिर संसारमैं मरणका पात्र नाहीं होता जातैं जहां देह मर जाय अर आत्माका सम्यग्दर्शन ज्ञानचारित्र स्वभाव है सो विषय कषायनिकरि नाहीं घात्या जाय सो सम्यक्मरण है अर मिथ्याश्रद्धान-रूप हुवा देहका नाशकूं ही अपना आत्माका नाश जानना संक्लेशतैं मरण करना सो कुमरण है सो मैं मिथ्यादर्शनका प्रभाव करि देहकूं ही आपा मानि अपना ज्ञानदर्शनस्वरूपका घात करि अनंत परिवर्तन किये सो अब भगवान वितराग सौं ऐसी प्रार्थना करूं हूं जो मेरे मरणके समयमैं वेदना मरण तथा आत्मज्ञान रहित मरण मत होहू क्योंकि सर्वज्ञ वीतराग जन्ममरणरहित भये हैं तातैं मैं हू सर्वज्ञ वीत-रागका शरणसहित संक्लेशरहित धर्मध्यानतैं मरण चाहता वीतरागहीका शरण ग्रहण करूं हूं अब मैं अपने आत्माकूं समझाऊं हूं——

कृमिजालशताकीर्णे जर्जरे देहपञ्जरे । भज्यमानेन भेतव्यं यतस्त्वं ज्ञानविग्रहः ॥

अर्थ—भो आत्मन् ! कृमिनिके सैकडां जालकरि भर्‍या अर नित्य जर्जरा होता यो देहरूप पींजरा इसकूं नष्ट होतैं तुम भय मत करो जातैं तुम तो ज्ञान शरीर हो । भावार्थ—तुमारा रूप तो ज्ञान है जिसमें ये सकल पदार्थ उद्योतरूप हो रहे हैं अर अमूर्तीक ज्ञान ज्योतिःस्वरूप अखंड अविनाशी ज्ञाता द्रष्टा है अर यह हाड मांस चमडामय महादुर्गंध विनाशीक देह है सो तुमारा रूपतैं अत्यंत भिन्न है कर्मके वशतैं एक क्षेत्रमें अवगाहन करि एकसे होय तिष्ठै है तो हू तुमारे इनके अत्यंत भेद है अर यो देह पृथ्वी जल

अग्नि पवनके परमाणुनिका पिंड है सो अवसर पाय विखर जायगा हम अविनाशी अखंड ज्ञायकरूप होय इसके नाश होनेतैं भय कैसैं करो हो। अब और हू कहैं हैं--

ज्ञानिन् भयं भवेत्कस्मात्प्राप्ते मृत्युमहोत्सवे। स्वरूपस्थः पुरं याति देही देहान्तरस्थितिः ॥

अर्थ—भो ज्ञानिन्! कहियें हो ज्ञानी तुमको वीतरागी सम्यग्ज्ञानी उपदेश करैं हैं जो मृत्युरूप महान् उत्सवको प्राप्त होतैं काहेतैं भय करो हो यो देही कहिये आत्मा सो अपने स्वरूपमैं तिष्ठता अन्य देहमैं स्थितिरूप पुरकूं जाय है यामैं भयका हेतु कहा है भावार्थ—जैसे कोऊ एक जीर्णकुटीमैंतैं निकसि अन्य नवीन महलकूं प्राप्त होय सो तो बडा उत्सवका अवसर है तैसैं यो आतमा अपने स्वरूपमैं तिष्ठता ही इस जीर्ण देहरूप कुटीकूं छांडि नवीन देहरूप महलको प्राप्त होतैं महा उत्साहका अवसर है यामैं कुछ हानि नाहीं जो भय करिये अर जो अपने ज्ञायकस्वभावमैं तिष्ठते परका अपणास करि रहित परलोक जावोगे तो बडा आदर सहित दिव्य धातु उपधातु रहित वैक्रियकदेहमैं देव होय अनेक महर्द्धिकनिमैं पूज्य महान देव होवोगे अर जो यहां भयादिक करि अपना ज्ञानस्वभावकूं बिगाडी परमैं ममता धारि मरोगे तो एकेन्द्रियादिकका देहमैं अपने ज्ञानका नाश करि जडरूप होय तिष्ठोगे ऐसैं मलिन क्लेशसहित देहकूं त्यागि क्लेशरहित उज्ज्वल देहमैं जाना तो बडा उत्सवका कारण है—

सुदत्तं प्राप्यते यस्मात् दृश्यते पूर्वसत्तमैः। भुज्यते स्वर्भवं सौख्यं मृत्युभीतिः कुतः सताम् ॥

अर्थ—पूर्वकालमैं भए गणधरादि सत्पुरुष ऐसैं दिखावैं हैं जो जिस मृत्युतैं भले प्रकार दिया हुवाका फल पाइये अर स्वर्गलोकका सुख भोगिये तातैं सत्पुरुषकै मृत्युका भय काहेतैं होय । भावार्थ—अपना कर्तव्यका फलतो मृत्यु भये ही पाइये है जो आप छहकायके जीवनिकूं अभयदान दिया अर रागद्वेष काम क्रोधादिकका घातकरि असत्य अन्याय कुशील परधनहरणका त्यागकरि परम संतोष धारणकरि अपने आत्माकूं अभयदान दिया ताका फल स्वर्गलोक विना कहां भोगनेमैं आवै सो स्वर्गलोकके सुख

तो मृत्यु नाम मित्रके प्रसादतैं ही पाइए तातैं मृत्यु समान इस जीवका कोऊ उपकारक नाहीं यहां मनुष्य पर्यायका जीर्ण देहमैं कौन २ दुःख भोगता कितने कालतक रहना आर्तध्यान रौद्रध्यानकरि तिर्यंच नरकमैं जाय परता तातैं अब मरणका भय अर देह कुटुंब परिग्रहका ममत्वकरि चिंतामणि कल्पवृक्ष समान समाधिमरणकूं बिगाडि भयसहित ममतावान हुवा कुमरण करि दुर्गति जावना उचित नाहीं और हू विचारै है–

आगर्भाद्दुःखसंतप्तः प्रक्षिप्तो देहपंजरे। नात्मा विमुच्यतेऽन्येन मृत्युभूमिपतिं विना ॥

अर्थ–यो हमारो कर्म नाम वैरी मेरा आत्माकूं देहरूप पींजरमैं क्षेप्या सो गर्भमैं आया तिस क्षणमैं सदाकाल क्षुधा तृषा रोग वियोग इत्यादि अनेक दुःखनिकरि तप्तायमान हुवा पड्या हूं अब ऐसे अनेक दुःखनिकरि व्याप्त इस देहरूप पींजरातैं मोकूं मृत्यु नाम राजा विना कोन छुडावै। भावार्थ–इस देहरूप पींजरमैं कर्मरूप शत्रुकरि पटक्या मैं इंद्रियनिके आधीन हुवा नाना त्रास सहूं हूं नित्य ही क्षुधा अर तृषाकी वेदना त्रास देवै है अर सासती स्वास उच्छ्वासकी पवनका खैंचना अर काढना अर नानाप्रकार रोगनिका भोगना अर उदर भरने वास्ते नाना पराधीनता अर सेवा कृषि वाणिज्यादिकनिकरि महा क्लेशित होय रहना अर शीत उष्ण दुष्टनिकरि ताडन मारन कुवचन अपमान सहना कुटुंबके आधीन होना धनके राजाके स्त्री पुत्रादिकके आधीन रहना ऐसा महान बंदीगृह समान देहमैंतैं मरण नाम बलवान राजा विना कौन निकासै इस देहकूं कहां तांई वहता जाकूं नित्य उठावना बैठावना जलपावना स्नान करावना निद्रा लिवावना कामादिक विषयसाधन करावना नाना वस्त्र आभरणादिकरि भूषित करावना रात्रि दिन इस देहहीका दासपना करता हू आत्माकूं नाना त्रास देवै है भयभीत करै है आपा भुलावै है ऐसा कृतघ्न देहतैं निकसना मृत्यु नाम राजा विना नाहीं होय जो ज्ञानसहित देहमां ममता छांडि सावधानीतैं धर्मध्यानसहित संक्लेशरहित वीतरागतापूर्वक जो समाधिमृत्यु नाम राजाका सहाय

ग्रहण करूं तो फेरि मेरा आत्मा देह धारण ही नाहीं करे दुःखनिका पात्र नाहीं होय समाधिमरण नामा बडा न्यायमार्गी राजा है मोकूं याहीका शरण होहू। मेरे अपमृत्युका नाश होहू। और हू कहैं हैं—

सर्वदुःखप्रदं पिण्डं दूरीकृत्यात्मदर्शिभिः। मृत्युमित्रप्रसादेन प्राप्यन्ते सुखसम्पदः॥

अर्थ—आत्मदर्शी जे आत्मज्ञानी हैं ते मृत्युनाम मित्रका प्रसादकरि सर्व दुःखका देनेवाला देहपिंडकूं दुर छांडकरि सुखकी संपदाकूं प्राप्त होय हैं। भावार्थ—जो इस सप्तधातुमय महा अशुचि विनाशीक देहकूं छांडि दिव्य वैक्रियक देहमें प्राप्त होय नाना सुख संपदाको प्राप्त होय है सो समस्त प्रभाव आत्मज्ञानीनिके समाधिमरणका है समाधिमरण समान इस जीवका उपकार करनेवाला कोऊ नाहीं है इस देहमें नाना दुःख भोगना अर महानरोगादि दुःख भोगि करि मरना फिर तिर्यंच देहमें तथा नर्कमें असंख्यात अनंतकालतांई असंख्यात दुःख भोगना अर जन्ममरणरूप अनंत परिवर्तन करना तहां कोऊ शरण नाहीं इस संसार परिभ्रमणसो रक्षा करनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं कदाचित् अशुभकर्मका मंद उदयतें मनुष्यगति उच्चकुल इंद्रियपूर्णता सत्पुरुषनिका संगम भगवान् जिनेंद्रका परमागमका उपदेश पाया है अब जो श्रद्धान ज्ञान त्याग संयमसहित समस्त कुटुंब परिग्रहमें ममत्वरहित देहतें भिन्न ज्ञान स्वभावरूप आत्माका अनुभवकरि भयरहित च्यार आराधना शरण सहित मरण हो जाय तो इस समान त्रैलोक्यमें तीन कालमें इस जीवका हित है नाहीं जो संसार परिभ्रमणतें छूट जाना सो समाधिमरण नाम मित्रका प्रसाद है—

मृत्युकल्पद्रुमे प्राप्ते येनात्मार्थो न साधितः। निमग्नो जन्मजम्बाले स पश्चात् किं करिष्यति॥

अर्थ—जो जीव मृत्यु नाम कल्पवृक्षकूं प्राप्त होतें हू अपना कल्याण नाहीं सिद्ध किया सो जीव संसाररूप कर्दममें डूबा हुवा पाछैं कहा करसी। भावार्थ—इस मनुष्य जन्ममें मरणका संयोग है सो साक्षात् कल्पवृक्ष है जो वांछित लेना है सो लेहु जो ज्ञानसहित अपना निज स्वभाव ग्रहणकरि आरा-

भनासहित मरण करो तो स्वर्गका महार्द्धिकपणा तथा इंद्रपणा अहमिंद्रपणा पाय पीछें तीर्थंकर तथा चक्रीपणा होय निर्वाण पावो मरणसमान त्रैलोक्यमें दाता नाहीं ऐसे दाताकूं पायकरि भी जो विषयकी वांछाकषायसहित ही रहोगे तो विषयवांछाका फल तो नरक निगोद है मरण नाम कल्पवृक्षकूं बिगाडोगे तो ज्ञानादि अक्षय निधानरहित भए संसाररूप कर्दममें डूब जाओगे अर भो भव्य हो जो ये वांछाका मारचा हुवा खोटे नीच पुरुषनिका सेवन करो हो अतिलोभी भए विषयनिके भोगनेकूं धनके वास्ते हिंसा चोरी कुशील परिग्रहमें आसक्त भये निंद्यकर्म करो हो अर वांछित पूर्ण हू नाहीं होय अर दुःखके मारे मरण करो हो कुटुंबादिकनिकूं छांडि विदेशमें परिभ्रमण करो हो निंद्य आचरण करो हो अर निंद्यकर्म करिके हू अवश्य मरण करो हो अर जो एकबार हू समता धारणकरि त्यागव्रतसहित मरण करो तो फेरि संसारपरिभ्रमणका अभावकरि अविनाशीसुखकूं प्राप्त हो जावो तातैं ज्ञानसहित पंडितमरण करना ही उचित है।

जीर्णं देहादिकं सर्वं नूतनं जायते यतः। स मृत्युः किं न मोदाय सतां सातोत्थितिर्यथा ॥

अर्थ—जिस मृत्युतैं जीर्ण देहादिक सर्व छूटि नवीन हो जाय सो मृत्यु सत्पुरुषनिके साताका उदय की ज्यों हर्षके अर्थि नाहीं होय कहा? ज्ञानीनिके तो मृत्यु हर्षके अर्थि ही है। भावार्थ—यो मनुष्यनिको शरीर भोजन करावना नित्य ही समय समय जीर्ण होय है देवनिका देह ज्यों जरारहित नाहीं है दिन दिन बल घटे है कांति अर रूप मलीन होय है स्पर्श कठोर होय है समस्त नसानिके हाडनिके बंधान शिथिल होय है चाम ढीली होय मांसादिकनिका छांडि ज्वरलीरूप होय है नेत्रनिकी उज्वलता बिगडे है कर्णनिमें श्रवण करनेकी शक्ति घटे है हस्तपादादिकनिमें असमर्थता दिन दिन बधे है गमनशक्ति मंद होय है चालते बैठते उठते स्वास बधै है कफकी अधिकता होय है रोग अनेक बधैं हैं ऐसी जीर्ण देहका दुःख कहां तक भोगता अर कैसे देहका घींसणा कहांतक होता मरण नाम दातार विना ऐसे निंद्य

देहकूं छुडाय नवीन देहमैं वास कोन करावै जीर्ण देह है तिसमैं बडा असाताका उदय भोगिये हैं सो मरण नाम उपकारी दाता विना ऐसी असाताकूं दूर कोन करै अर जे सम्यग्ज्ञानी हैं तिनकै तो मृत्यु होनेका बडा हर्ष है जो अब संयमव्रत त्याग शीलमैं सावधान होय ऐसा यत्न कर जो फेरि ऐसे दुःखका भऱ्या देहको धारण नाहीं होय सम्यग्ज्ञानी तो याहीकूं महा साताका उदय मानै है।

सुखं दुःखं सदा वेत्ति देहस्थश्च स्वयं व्रजेत्। मृत्युभीतिस्तदा कस्य जायते परमार्थतः॥

अर्थ—यो आत्मा देहमैं तिष्ठतो हू सुखकूं तथा दुःखकूं सदाकाल जानै ही है अर परलोकप्रति हू स्वयं गमन करै है तो परमार्थतैं मृत्युका भय कौनकै होय। भावार्थ—जो अज्ञानी बहिरात्मा है सो तो देहमैं तिष्ठता हू मैं सुखी मैं दुखी मैं मरूं हूं मैं क्षुधावान मैं तृषावान मेरा नाश हुवा ऐसा मानै है अर अंतरात्मा सम्यग्दृष्टी ऐसैं मानै है जो उपज्यो है सो मरैगा पृथ्वीजलअग्निपवनमय पुद्गलपरमाणुनिके पिंडरूप उपज्यो यो देह है सो विनशैगो मैं ज्ञानमय अमूर्तीक आत्मा मेरा नाश कदाचित् नाहीं होय ये क्षुधातृषावातपित्तकफादिरोगमय वेदना पुद्गलके है मैं इनका ज्ञाता हूं मैं यामैं अहंकार वृथा करूं हूं इस शरीरकै अर मेरे एक क्षेत्रमैं तिष्टनेरूप अवगाह है तथापि मेरा रूप ज्ञाता है अर शरीर जड है मैं अमूर्तीक, देह मूर्तीक, मैं अखंड एक हूं, शरीर अनेक परमाणुनिका पिंड है, मैं अविनाशी हूं, देह विनाशीक है अब इस देहमैं जो रोग तथा तृषादि उपजै तिसका ज्ञाता ही रहना मेरा तो ज्ञायक स्वभाव है परमैं ममत्व करना सो ही अज्ञान है मिथ्यात्व है अर जैसैं एक मकानको छांडि अन्य मकानमैं प्रवेश करै तैसैं मेरे शुभ अशुभ भावनिकरि उपजाया कर्मकरि रच्या अन्य देहमैं मेरा जाना है इसमैं मेरा स्वरूपका नाश नाहीं अब निश्चयकरि विचारतैं मरणका भय कौनकै होय।

संसारासक्तचित्तानां मृत्युर्भीत्यै भवेन्नृणां। मोदायते पुनः सोऽपि ज्ञानवैराग्यवासिनां॥

अर्थ—संसारमैं जिनका चित्त आसक्त है अपना रूपकूं जे जानै नाहीं तिनकै मृत्यु होना भयके

अर्थि है अर जे निजस्वरूपके ज्ञाता हैं अर संसारतैं विरागी हैं तिनकै तो मृत्यु है सो हर्षके अर्थिही है। भावार्थ—मिथ्यादर्शनके उदयतैं जे आत्मज्ञानकरि रहित देहहीकूं आपा माननेवाले अर खावना पीवना कामभोगादिक इंद्रियनिके विषयनिकूं ही सुख माननेवाले बहिरात्मा हैं तिनके तो अपना मरण होना बडा भयके अर्थि है जो हाय मेरा नाश भया फेरि खावना पीवना कहां नाहीं है नाहीं जानिये मरे पीछैं कहा होयगा कैसैं मरूंगा अब यह देखना मिलना कुटुंबका समागम सब मेरे गया अब कौनका शरण ग्रहण करूं कैसैं जीऊं ऐसे महा संक्लेशकरि मरैं हैं अर जे आत्मज्ञानी हैं तिनके मृत्यु आए ऐसा विचार उपजै है जो मैं देहरूप बंदीगृहमैं पराधीन पड्या हुवा इंद्रियनिके विषयनिकी चाहनाकी दाहकरि अर मिले विषयनिकी अतृप्तिताकरि अर नित्य ही क्षुधा तृषा शीत रोगनिकरि उपजी महा वेदना तिन-करि एक क्षण हू थिरता नाहीं पाई महान दुःख पराधीनता अपमान घोर वेदना अनिष्टसंयोग इष्ट-वियोग भोगतां ही संक्लेशतैं काल व्यतीत किया अब ऐसैं क्लेश छुडाय पराधीनतारहित मेरा अनंत-सुखस्वरूप जन्ममरणरहित अविनाशी स्थानकूं प्राप्त करनेवाला यह मरणका अवसर पाया है यो मरण महासुखको देनेवालो अत्यंत उपकारक है अर यो संसारवास केवल दुःखरूप है यामैं एक समाधिमरण ही शरण है और कहूं ठिकाना नाहीं है इस विना च्यारों गतिनिमैं महा त्रास भोगी है अब संसारवासतैं अति विरक्त मैं समाधिमरणका शरण ग्रहण करूं।

पुराधीशो यदा याति सुकृतस्य बुभुत्सया। तदासौ वार्यते केन प्रपञ्चैः पाञ्चभौतिकैः॥

अर्थ—जिस कालमैं यो आत्मा अपना कियाका भोगनेकी इच्छाकरि परलोककूं जाय है तदि पंचभूत संबंधी देहादिक प्रपंचनिकरि याकूं कौन रोकै। भावार्थ—इसजीवका वर्तमान आयु पूर्ण हो जाय अर जो अन्य परलोकसंबंधी आयुकायादिक उदय आ जाय तदि परलोककूं गमन करते आत्माकूं शरीरादिक पंचभूत कोऊ रोकने समर्थ नाहीं हैं तातैं बहुत उत्साहसहित चार आराधनाका शरण ग्रहणकरि मरण करना श्रेष्ठ है।

मृत्युकाले सतां दुःखं यद्भवेद्व्याधिसंभवं । देहमोहविनाशाय मन्ये शिवसुखाय च ॥

अर्थ—मृत्युका अवसर विषैं जो पूर्वकर्मका उदयतैं रोगादिक व्याधिकरि दुःख उत्पन्न होय है सो सत्पुरुषनिके देहके विषैं मोहका नाशके अर्थि है अर निर्वाणका सुखके अर्थि है। भावार्थ—यो जीव जन्म लीयो तिस दिनतैं देहसौं तन्मय हुवा यामैं बसनेकूं ही बडा सुख मानै है या देहकूं अपना निवास जानै है यासूं ममता लग रही है यामैं वसने सिवाय अपना कहूं ठिकाना नाहीं देखै है अब ऐसा देहमैं जो रोगादिककरि दुःख उपजै है जब सत्पुरुषनिकै यासूं मोह नष्ट हो जाय है अर साक्षात दुःखदाई अथिर विनाशीक दीखै है अर देहका कृतघ्नपना प्रकट दीखै है तदि अविनाशी पदके अर्थि उद्यमी होय है वीतरागता प्रगट होय है तदि ऐसा विचार उपजै है जो इस देहकी ममताकरि मैं अनंतकाल जन्ममरण नाना वियोग रोग संतापादिक नरकादिक गतिनिमैं दुःख भोगे अब भी ऐसे दुःखदाई देहमैं ही फेरि हू ममत्व करि आपाको भूलि एकेंद्रियादि अनेक कुयोनिमैं भ्रमणका कारण कर्म उपार्जन करनेकूं ममता करूं हूं जो अब इस शरीरमैं ज्वर काम श्वास शूल वात पित्त अतीसार मंदाग्नि इत्यादिक रोग उपजैं हैं सो इस देहमैं ममत्व घटावनेके अर्थि बडा उपकार करैं हैं धर्ममैं सावधानता करावैं हैं जो रोगादिक नाहीं उपजता तो मेरी ममता हू देहतैं नाहीं घटती अर मद हू नाहीं घटता मैं तो मोहकी अंधेरी करि आंधा हुवा देहकूं अजर अमर मान रहा था सो अब यो रोगनिकी उत्पत्ति मोकूं चेत कराया अब इस देहकूं अशरण जानि ज्ञान दर्शन चारित्र तपहीकूं एक निश्चय शरण जानि आराधनाका धारक भगवान परमेष्ठीकूं चित्तमैं धारण करूं हूं अब इस अवसरमैं हमारे एक जिनेंद्रका वचनरूप अमृत ही परम औषधि होहू जिनेंद्रका वचनामृत विना विषय कषायरूप रोगजनित दाहके मेटनेकूं कोऊ समर्थ नाहीं बाह्य औषधादिक तो असाता कर्मके मंद होते किंचित काल कोऊ एक रोगकूं उपशम करै अर यो देह अनेक रोगनिकरि भरया हुवा है अर कदाचित एक रोग मिट्या तो हू अन्य रोगजनित घोर

वेदना भोगि फेर हू मरण करना ही पडैगा तातैं जन्मजरामरणरूप रोगकूं हरनेवाला भगवानका उपदेशरूप अमृतहीका पान करूं अर औषधादिक हजारां उपाय करते हू विनाशीक देहमैं रोग नाहीं मिटैगा तातैं रोगतैं आर्ति उपजाय कुगतिका कारण दुर्ध्यान करना उचित नाहीं रोग आवते हू बडा ही मानो जो रोगहीके प्रभावतैं ऐसा जीर्ण गल्या हुवा देहतैं मेरा छूटना होयगा रोग नाहीं आवे तो पूर्व कृत कर्म नाहीं निर्जरै अर देहरूप महा दुःखदाई बंदीगृहतैं मेरा शीघ्र छूटना हू नाहीं होय है अर यो रोगरूप मित्रको सहाय ज्यों २ देहमैं बधै है त्यों त्यों मेरा रागबंधनतैं अर कर्मबंधनतैं अर शरीरबंधनतैं छूटना शीघ्र होय है अर यो रोग तो देहमें है इस देहकूं नष्ट करैगा मैं तौ अमूर्तीक चैतन्यस्वभाव अविनाशी हूं ज्ञाता हूं अर जो यो रोगजनित दुःख मेरे जाननेमैं आवे है सो मैं तो जाननेवाला ही हूं याकी लार मेरा नाश नाहीं है जैसे लोहेका संगतिमैं अग्नि हू घणनिका घात सहै है तैसैं शरीरकी संगतितैं वेदनाका जानना मेरे हू है अग्नितैं झूंपडी बलै है झूंपडीके मांहि आकाश नाहीं बलै है तैसैं अविनाशी अमूर्तीक चैतन्य धातुमय आत्मा ताका रोगरूप अग्निकरि नाश नाहीं है अर अपना उपजाया कर्म आपकूं भोगना ही पडैगा कायर होय भोगूंगा तो कर्म नाहीं छाडैगा अर धैर्य धारण करि भोगूंगा तो कर्म नाहीं छाडैगा तातैं दोऊ लोकका बिगाडनेवाला कायर पनाकूं धिकार होहू कर्मका नाश करनेवाला धैर्य ही धारण करना श्रेष्ठ है अर हे आत्मन् ! तुम रोग आये एते कायर होउ हो सो विचार करो नरकनिमैं यो जीव कौन कौन त्रास भोगी असंख्यातबार अनंतबार मारे विदारे चीरे फाडे गये हो इहां तो तुमारे कहा दुःख है अर तिर्यंचगतिके घोर दुःख भगवान ज्ञानी हू वचनद्वारकरि कहनेकूं समर्थ नाहीं अर मैं तिर्यंच पर्यायमें पूर्व अनंतबार अग्निमैं बालि बालि मरचा हूं अनंतबार जलमैं डूबि डूबि मरचा हूं अनंतबार विष भक्षण कर मरचा हूं अनंतबार सिंह व्याघ्र सर्पादिकनिकरि विदारचा गया हूं शस्त्रनिकरि छेद्यागया हूं अनंतबार शीतवेदनाकरि मरचा हूं अनंतबार उष्णवेदनाकरि मरचा हूं अनंतबार

अनंतबार क्षुधाकी वेदनाकरि मर्‍या हूं अनंतबार तृषाकी वेदना करि मर्‍या हूं अब यह रोगजनित वेदना केतीक है रोग ही मेरा उपकार करे है रोग नाहीं उपजता तो देहतैं मेरा स्नेह नाहीं घटता अर समस्ततैं छूटि परमात्माका शरण नाहीं ग्रहण करता तातैं इस अवसरमैं जो रोग है सो हू मेरा अराधना-मरणमैं प्रेरणा करनेवाला मित्र है ऐसैं विचारता ज्ञानी रोग आये क्लेश नाहीं करे है मोहके नाश करनेका उत्सव ही मान है।

ज्ञानिनोऽमृतसंगाय मृत्युस्तापकरोऽपि सन्। आमकुम्भस्य लोकेऽस्मिन् भवेत्पाकविधिर्यथा ॥

अर्थ—यद्यपि इस लोकमैं मृत्यु है सो जगतके आताप करनेवाली है तो हू सम्यग्ज्ञानीके अमृत-संग जो निर्वाण ताके अर्थि है जैसैं काचा घडाकूं अग्निमैं पकावना है सो अमृतरूप जलके धारणके अर्थि है जो काचा घडा अग्निमैं नाहीं पके तो घडामैं जल धारण नाहीं हो है। अग्निमैं एकबार पकि जाय तो बहुतकाल जलका संसर्गकूं प्राप्त होय तैसैं मृत्युका अवसरमैं आताप समभावनिकरि एकबार सहि जाय तो निर्वाणको पात्र हो जाय। भावार्थ—अज्ञानीकै मृत्युका नामतैं भी परिणाममैं आताप उपजै है जो मैं अब चाल्या अब कैसैं जीऊं कहा करूं कौन रक्षा करै ऐसैं संतापको प्राप्त होय है क्योंकि अज्ञानी तो बहिरात्मा है देहादिकका बाह्य वस्तुकूं ही आत्मा मानै है अर ज्ञानी जो सम्यग्दृष्टि है सो ऐसा मानै है जो आयु कर्मादिकका निमित्ततैं देहका धारण है सो अपनी स्थिति पूर्ण भये अवश्य विनशैगा मैं आत्मा अविनाशी ज्ञानस्वभाव हूं जीर्ण देह छांडि नवीनमैं प्रवेश करते मेरा कुछ विनाश नाहीं है।

यत्फलं प्राप्यते सद्भिर्व्रतायासविडंबनात्। तत्फलं सुखसाध्यं स्यान्मृत्युकाले समाधिना ॥

अर्थ—यहां सत्पुरुष हैं ते व्रतनिका बडा खेदकरि जिस फलकूं प्राप्त होइये सो फल मृत्यु अवसरमैं थोरे काल शुभध्यानरूप समाधिमरणकरि सुखतैं साधने योग्य होय है। भावार्थ—जो स्वर्गमैं इंद्रादिक पद वा परंपराय निर्वाणपद पंच महाव्रतादिक वा घोर तपश्चरणादिककरि सिद्ध करिये है सो पद मृत्युका

अवसरमैं जो देह कुटंबादिसूं ममता छांडि भयरहित हुवा वीतरागता सहित च्यारि आराधानाका शरण ग्रहणकरि कायरता छांडि अपना ज्ञायक स्वभावकूं अवलंबनकरि मरण करै तो सहज सिद्ध होय तथा स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक देव होय तहांतैं आय बडा कुलमैं उपजि उत्तम संहननादि सामग्री पाय दीक्षा धारणकरि अपने रत्नत्रयकी पूर्णताकूं प्राप्त होय निर्वाण जाय है।

अनार्तः शांतिमान्मर्त्यो न तिर्यग् नापि नारकः। धर्मध्यानी पुरो मर्त्योऽनशनीत्वमरेश्वरः॥

अर्थ—जाके मरणका अवसरमैं आर्त्त जो दुःखरूप परिणाम नाहीं होय अर शांतिमान कहिये राग-रहित द्वेषरहित समभावरूप चित्त होय सो पुरुष तिर्यंच नाहीं होय नारकी नाहीं होय अर जो धर्मध्यान सहित अनशनव्रत धारण करकैं मरै सो तो स्वर्गलोकमैं इंद्र होय तथा महर्द्धिक देव होय अन्य पर्याय नाहीं पावै ऐसा नियम है। भावार्थ—यो उत्तम मरणका अवसर पाय करिकैं आराधनासहित मरणमैं यत्न करो अर मरण आवतैं भयभीत होय परिग्रहमैं ममत्व धारि आर्त्त परिणामनिसौं मरणकरि कुगतिमैं मत जावो यो अवसर अनंतभवनिमैं नाहीं मिलैगा अर मरण छांडैगा नाहीं तातैं सावधान होय धर्म-ध्यानसहित धैर्य धारण करि देहका त्याग करो।

तप्तस्य तपसश्चापि पालितस्य व्रतस्य च। पाठितस्य श्रुतस्यापि फलं मृत्युः समाधिना॥

अर्थ—तपका संताप भोगनेका अर व्रतनिके पालनेका अर श्रुतके पढनेका फल तो समाधि जो अपने आत्माकी सावधानीसहित मरण करना है। भावार्थ—हे आत्मन्! जो तुम इतने काल इंद्रियनिके विषयनिमैं वांछारहित होय अनशनादि तप किया है सो अनंतकालमैं आहारादिकनिका त्यागसहित संयमसहित देहका ममतारहित समाधिमरणके अर्थि किया है अर जो अहिंसा सत्य अचौर्य ब्रह्मचर्य परिग्रहत्यागादि व्रत धारण किये हैं सो हू समस्त देहादिक परिग्रहमैं ममताका त्याग करि समस्त मन-वचनकायतैं आरंभादिक त्यागकरि समस्त शत्रुमित्रनिमैं बैर राग छांडकरि उपसर्गमैं धीरता धारणकरि

अपना एक ज्ञायकस्वभावका अवलम्बनकरि समाधिमरण करनेके अर्थि किये हैं अर जो समस्त श्रुतज्ञानका पठन किया है सो हू मंक्लेशरहित धर्मध्यानसहित होय देहादिकनितैं भिन्न आपकूं जानि भयरहित समाधिमरणके निमित्त ही विद्याका आराधनकरि काल व्यतीत किया है अर मरणका अवसरमैं हू ममता भय राग द्वेष कायरता दीनता नाहीं छांडोगे तो इतने काल तप कीने व्रत पाले श्रुतका अध्ययन किया सो समस्त निरर्थक होंयगे तातैं इस मरणके अवसरमैं कदाचित् सावधानी मत बिगाडो।

अतिपरिचितेष्ववज्ञा नवे भवेत्प्रीतिरिति हि जनवादः। चिरतरशरीरनाशे नवतरलाभे च किं भीरुः॥

अर्थ—लोकनिका ऐसा कहना है जो जिस वस्तुका अतिपरिचय अतिसेवन हो जाय तिसमैं अवज्ञा अनादर होजाय है रुचि घटि जाय है अर नवीनका संगममैं प्रीति होय है यह बात प्रसिद्ध है अर हे जीव तू इस शरीरको चिरकालसे सेवन किया अब याका नाश होतैं अर नवीन शरीरका लाभ होतैं भय कैसे करो हो भय करना उचित नाहीं। भावार्थ—जिस शरीरकूं बहुत काल भोगि जीर्ण कर दीना साररहित बलरहित हो गया अर नवीन उज्ज्वल देह धारण करनेका अवसर आया अब भय कैसैं करो हो यो जीर्ण देह तो विनसैहीगो इसमैं ममता धारि मरण बिगाडि दुर्गतिका कारण कर्मबंध मत करो।

शार्दूलविक्रीडितम्।

स्वर्गादेत्य पवित्रनिर्मलकुले संस्मर्यमाणा जनैर्दत्वा भक्तिविधायिनां बहुविधं वाञ्छानुरूपं धनं।
भुक्त्वा भोगमहर्निशं परकृतं स्थित्वा क्षणं मंडले पात्रावेशाविसर्जनामिव मृतिं सन्तो लभन्ते स्वतः॥

अर्थ—ऐसैं जो भयरहित होय समाधिमरणमैं उत्साहित च्यारि आराधनानिको आराधि मरण करे है ताके स्वर्गलोक विना अन्य गति नाहीं होय है स्वर्गनिमैं महर्द्धिक देव ही होय है ऐसा निश्चय है बहुरि स्वर्गमैं आयुका अंतपर्यंत महासुख भोगि करिके इस मनुष्यलोकविषैं पुण्यरूप निर्मल कुलमैं अनेक

लोकनिकरि चिंतवन करते करते जन्म लेय अपने सेवकजन तथा कुटुंब परिवार मित्रादि जनानिकूं नानाप्रकारके वांछित धन भोगादिरूप फल देय अर पुण्यकरि उपजे भोगनिकूं निरंतर भोगि आयुप्रमाण थोडे काल पृथ्वीमंडलमें संयमादिसहित वीतरागरूप भये तिष्ठ करके जैसें नृत्यके अखाडेमें नृत्य करने-वाला पुरुष लोकनिके आनंद उपजाय निकल जाय है तैसें वह सत्पुरुष सकल लोकनिके आनंद उपजाय स्वयमेव देह त्यागि निर्वाणकूं प्राप्त होय है ॥ १८ ॥

दोहा।

मृत्युमहोत्सववचनिका, लिखी सदा सुखकाम। शुभ आराधनमरण करि, पाऊं निज सुखधाम ॥ १ ॥
उगणीसे ठारा शुकल, पंचमि मास असाढ। पूरण लिखि वांचो सदा, मन धरि सम्यक गाढ ॥ २ ॥

ऐसें सल्लेखनाका वर्णनमें उपकारक जानि मृत्युमहोत्सव यामें लिख्या है। यद्यपि याकी वचनिका संवत उगणीससै अठारामें लिखी थी सो अब इहां सल्लेखनाके कथनके शामिल हुआ बिना और विशेष लिख्यां ही सवक होय यातें तयार कथनी लिख दीनी। अब इहां सल्लेखना दोय प्रकार है एक कायसल्लेखना एक कषायसल्लेखना इहां सल्लेखना नाम सम्यक्प्रकारकरि कृश करनेका है तहां जो देहका कृश करना सो तो कायसल्लेखना है क्योंकि इस कायकूं ज्यों पुष्ट करो सुखिया राखो त्यों इंद्रियनिके विषयांकी तीव्र लालसा उपजावै है आत्माविशुद्धताकूं नष्ट करै है काम लोभादिककी वृद्धि करै है निद्रा प्रमाद आलस्यादिक बधावै है परीषह सहनेमें असमर्थ होय है त्याग संयमके सन्मुख नाहीं होय है आत्माकूं दुर्गतिमें गमन करावै है वात पित्त कफादि अनेक रोगानिकूं उपजाय महा दुर्ध्यान कराय संसारपरिभ्रमण करावै है यातें अनशनादि तपश्चरण करि इस शरीरकूं कृश करना। रोगादिक वेदना नाहीं उपजे परिणाम अचेतन नाहीं होय यातें प्रथम कायसल्लेखना करनेका सूत्र कहै हैं—

आहारं परिहाप्य क्रमशः स्निग्धं विवर्द्धयेत्पानं । स्निग्धं च हापयित्वा खरपानं पूरयेत्क्रमशः ॥ १२७ ॥

खरपानहापनामपि कृत्वा कृत्वोपवासमपि शक्त्या । पञ्चनमस्कारमनास्तनुं त्यजेत्सर्वयत्नेन ॥ १२८ ॥

अर्थ—कायसल्लेखना करै सो अनुक्रमतैं करै अपना आयुका अवसर दीखै तिस प्रमाण देहसूं इंद्रियांस्यूं ममत्वरहित हुवा आहारके आस्वादनतैं विरक्त होय विचार करै जो हे आत्मन्! संसार परिभ्रमण करता तू एता आहार किया जो एक एक जन्मका एक एक कणकूं एकठा करिये तो अनंत सुमेरु प्रमाण हो जाय अर अनंत जन्मनिमैं एता जल पिया जो एक एक जन्मकी एक एक बूंद ग्रहण करिये तो अनंत समुद्र भरि जांय एते आहार जलसूं ही तृप्ति नाहीं भया तो अब रोग जरादिककरि प्रत्यक्ष मरण नजीक आया अब इस अवसरमैं किंचित् आहारतैं तृप्ति कैसैं होयगी अर इस पर्यायमैं भी जन्म लिया तो दिनतैं नित्य आहार ही ग्रहण किया अर आहारका लोभी होयके ही घोर आरंभ किया अर आहारहीका लोभतैं हिंसा असत्य परधनलालसा अब्रह्म अर परिग्रहका बहुत संगमकरि अर दुर्ध्यानादिककरि कुकर्म उपार्जन किये आहारकी गृद्धतातैं ही दीनवृत्ति करि पराधीन भया अर आहारका लोभी होय भक्ष्य अभक्ष्यका विचार नाहीं किया रात्रिका दिनका योगका अयोगका विचार नाहीं किया आहारका लोभी होय क्रोध अभिमान मायाचार लोभ याचनाकूं प्राप्त हुवा आहारकी चाहकरि अपना बडापना अभिमान नष्ट किया आहारका लोभी होय अनेक रोगनिका घोर दुःख सह्या आहारका लोभी होय करके ही नीच जाति नीच कुलीनिकी सेवा करी आहारका लोभी होय स्त्रीके आधीन होय रह्या पुत्रके आधीन होय रह्या आहारका लंपटी निर्लज्ज होय है आचारविचाररहित होय है आहारका लंपटी कटि कटि मरै है दुर्वचन सहै है आहारके अर्थि ही तिर्यंच गतिमैं परस्पर मरैं हैं भक्षण करैं हैं बहुत कहनेकरि कहा अब अल्पकाल इस पर्यायमैं हमारे बाकी रह्या है तातैं रसनिमैं गृद्धिता छांडि अर रसनाइंद्रियकी लालसा छांडि आहारका त्याग करनेमैं उद्यमी नाहीं होऊंगा तो व्रत संयम धर्म यश परलोक

इसकूं विगाडि कुमरणकरि संसारमैं परिभ्रमण करूंगो अर ऐसा निश्चय करकैं ही अतृप्तताका करनेवाला आहारका त्यागके अर्थि कोऊ कालमैं उपवास करै बेला करै तेला करै एक बार आहार करना करै नीरस आहार अल्प आहार इत्यादिक क्रमतैं अपनी शक्ति प्रमाण अर आयुकी स्थिति प्रमाण आहारकूं घटाय अर दुग्धादिकहीकूं पीवै। बहुरि क्रमतैं दुग्धादिक सचिक्कणका हू त्यागकरि छाछि वा तप्तजलादिक ही ग्रहण करै पाछै क्रमतैं जलादिक समस्त आहारका त्यागकरि अपनी शक्तिप्रमाण उपवास करता पंच नमस्कारमैं मनकूं लीनकरि धर्मध्यानरूप हुवा बडा यत्नतैं देहकूं त्यागै सो सल्लेखना जाननी। ऐसैं कायसल्लेखना वर्णन करी॥

अब इहां कोऊ प्रश्न करै यो आहारादिक त्यागकरि मरण करना सो आत्मघात है आत्मघात करना अयोग्य कह्या है ताकूं उत्तर करैं हैं—जाकै बहुत काल सुखकरिकै मुनिपना वा श्रावकपना तथा महाव्रत अणुव्रत पलता दीखै अर स्वाध्याय ध्यान दान शील तप व्रत उपवासादि पलता होय तथा जिनपूजन स्वाध्याय धर्मोपदेश धर्मश्रवण चार आराधनाका सेवन आछीतरह निर्विघ्न सधता होय अर दुर्भिक्षादिकनिका भय हू नाहीं आया होय असाध्य रोग शरीरमैं नाहीं आया होय तथा स्मरणनैं ज्ञानने नष्ट करनेवाली जरा हू नाहीं प्राप्त भई होय अर दशलक्षण रत्नत्रयधर्म देहसूं पलता होय ताकूं आहार त्यागि संन्यास करना योग्य नाहीं धर्म सधता हू आहार त्यागि मरण करै है सो धर्मतैं पराङ्मुख भया त्याग व्रत शील संयमादिकरि मोक्षका साधक उत्तम मनुष्य पर्यायतैं विरक्त हुवा अपनी दीर्घ आयु होते हू अर धर्मसेवन बनते हू आहारादिकका त्याग करै सो आत्मघाती होय है। जातैं धर्मसंयुक्त शरीरकी बडा यत्नतैं रक्षा करना ऐसी भगवानकी आज्ञा है अर धर्मके सेवनेका सहकारी ऐसा देहकूं आहार त्यागकरि छांडि देगा तदि कहा देव नारकी तिर्यंचनिका देह संयमरहित तिनतैं व्रत, तप, संयम सधेगा? रत्नत्रयका साधक तो मनुष्यदेह ही है अर धर्मका साधक मनुष्यदेहकूं आहारादिक त्याग करि छांडै

है ताके कहा कार्य सिद्ध होय है इस देहकूं त्यागनेतैं हमारा कहा प्रयोजन सधैगा नवीन देह व्रतधर्मरहित और धारण करैगा परंतु अनंतानंत देह धारण करावनेका बीज जो कार्माण देह कर्ममय है ताकूं मिथ्यात्व असंयम कषायादिकका परिहार करि मारो आहारादिकका त्यागतैं तो औदारिक हाड्मांसमय शरीर मरि नवीन अन्य उपजैगा अष्टकर्ममय कार्माणदेह मरैगा तदि जन्ममरणतैं छूटोगे। यातैं कर्ममय देहके मारनेकूं इस मनुष्य शरीरकूं त्यागि व्रत संयममैं दृढता धारणकरि आत्माका कल्याण करो.अर जब धर्म रहता नाहीं दीखै तब ममत्व छांडि अवश्य विनाशीककूं त्यागनेमैं ममता नाहीं धरना॥

अब जैसैं कायका तपश्चरणकरि कृश करना तैसैं रागद्वेषमोहादिक कषायका हू साथ ही कृशपना करना सो कषायसल्लेखना है कषायनिकी सल्लेखना विना कायसल्लेखना वृथा है कायका कृशपना तो रोगी दरिद्री पराधीनतातैं मिथ्यादृष्टिकै हू होय है जो देहकी साथि रागद्वेषमोहादिकनिकूं कृश करि इसलोक परलोक संबंधी समस्त वांछाका अभावकरि देहमैं मरणमैं कुंटुंब परिग्रहादिक समस्त परद्रव्यनितैं ममता छांडि परम वीतरागतातैं संयमसहित मरण करना सो कषायसल्लेखना है। इहां विशेष जानना जो विषयकषायनिका जीतनेवाला होयगा तिसहीके समाधिमरणकी योग्यता है विषयनिके आधीन अर कषाययुक्तके समाधिमरण नाहीं होय है संसारी जीवनिके ये विषय कषाय बडे प्रबल हैं बडे बडे सामर्थ्यधारीनिकरि नाहीं जीते जाय हैं अर बडे प्रबलके धारक चक्री नारायण बलभद्रादिकनिकूं भ्रष्ट करि आपके आधीन किये तातैं अति प्रबल हैं संसारमैं जेते दुःख हैं तितने विषयके लंपटी अभिमानी तथा लोभीकैं होय हैं केतैं जीव जिनदीक्षा धारण करकैं हू विषयनिकी आतापतैं भ्रष्ट होय हैं अभिमान लोभ नाहीं छाडि सकैं हैं अनादिकालतैं विषयनिकी लालसा करि लिप्त अर कषायनिकरि प्रज्वलित संसारी आपा भूलि स्वरूपतैं भ्रष्ट होय रहे हैं यातैं विषय कषायनितैं वीतरागका कारण श्रीभगवती-आराधनाजीमैं विषय कषायनिका स्वरूप विस्तार सहित परम निर्ग्रंथ श्रीशिवायन नाम आचार्यने प्रगट

दिखाया है सो वीतरागका इच्छक पुरुषानिकूं ऐसा परम उपकार करनेवाला ग्रंथका निरंतर अभ्यास करना। समाधिमरणका अवसरमैं जीवका कल्याण करनेवाला उपदेशरूप अमृतकूं सहस्रधाररूप होय वर्षा करता भगवतीआराधना नाम ग्रंथ है ताका शरण अवश्य ग्रहण करने योग्य है याहीतैं इहां आराधना मरणका कथन अवसर पाय भगवतीका अथका लेश लेय लिखिये है। इहां ऐसा विशेष जानना जो साधु मुनीश्वरनिके तो रत्नत्रयधर्मकी रक्षा करनेका सहायी आचार्यादिकनिका संघ तथा वैयावृत्य करनेवाले धर्मके उपदेश देनेवाले निर्यापकनिका बडा सहाय है तादि कर्मनिका विजयकरि आराधनाकूं प्राप्त होय है याहीतैं गृहस्थीनिकूं हू धर्मवृद्धि श्रद्धानी ज्ञानी ऐसे साधर्मीनिका समागम अवश्य मिलाया चाहिये परंतु यो पंचमकाल अति विषम है यातैं विषयानुरागीनिका तथा कषायीनिका संगम सुलभ है तथा रागद्वेष शोकभयका उपजावनेवाला आर्तध्यानका वधावनेवाला असंयममैं प्रवृत्ति करावनेवालेनिका ही संगम बनि रह्या है जातैं स्त्री पुत्र मित्र बांधवादिक समस्त अपने रागद्वेष विषयकषायनिमैं लगाय आपा भुलावनेवाले हैं समस्त अपना विषय कषाय पुष्ट करनेका इच्छक हैं धर्मानुरागी धर्मात्मा परोपकारी वात्सल्यताका धारी करुणारसकरि भीजेनिका संगम महा उज्ज्वल पुण्यके उदयतैं मिलै है तथा अपना पुरुषार्थतैं उत्तम पुरुषनिका उपदेशका संगम मिलावना अर स्नेह मोहकी पासीनिमैं उलझावने वाले धर्मरहित स्त्रीपुरुषनिका संगमका दूरहीतैं परित्याग करना अर अवशतैं कुसंगती आजाय तो तिनसौं वचनालापका त्यागकरि मौनी होय रहना अर अपना कर्मके आधीन देशकालके योग्य जो स्थान होय तीमैं शयन आसन करना अर जिन सूत्रनिका परम शरण ग्रहण करना जिनसिद्धांतका उपदेश धर्मात्मानितैं श्रवण करना त्याग संयम शुभध्यान भावनाकूं विस्मरण नाहीं होना अर धर्मात्मा साधर्मी हू अपने अर परके धर्मकी पुष्टता चाहता अर धर्मकी प्रभावना बांछता धर्मोपदेशादिरूप वैयावृत्यमैं आलसी नाहीं होय त्याग, व्रत, संयम, शुभध्यान शुभभावनामैं ही आराधक साधर्मीकूं लीन करै अर

कोऊ आराधक ज्ञानसहित हू कर्मकैं तीव्र उदयतैं तीव्र रोगादिक क्षुधा तृषादिक परिषहनिके सहनेमैं असमर्थ होय व्रतनिका प्रतिज्ञातैं चलि जाय तथा अयोग्य वचनहू कहने लगि जाय तथा रुदनादिकरूप विलापरूप आर्तपरिणामरूप हो जाय तो साधर्मी ताका तिरस्कार नाहीं करै कटुवचन नाहीं कहै कठोर वचन नाहीं कहै जातैं वेदनाकरि दुःखित होय अर पाछैं तिरस्कारका अवज्ञाका वचन सुन तदि मानसीक दुःखतैं दुर्ध्यानकूं प्राप्त होय चलायमान हो जाय विपरीत आचरण करै तथा आत्मघात करै तातैं आराधकका तिरस्कार करना योग्य नाहीं उपदेशदाता है सो महान धीरता धारण करि आराधककूं स्नेह भरचा वचन कहै मिष्ट वचन कहै हृदयमैं प्रवेश करि जाय श्रवण करते ही समस्त दुःख विस्मरण हो जाय करुणारसतैं उपकारबुद्धितैं भरचा वचन कहै। हो धर्मके इच्छक ! अब सावधान होहु पूर्वकर्मके उदयतैं रोग वेदना तथा महा व्याधि उपजी है तथा परीषहनिका संताप उपज्या है अर शरीर निर्बल भया है आयु पूर्ण होनेका अवसर आया है तातैं अब दीन मति होहू अब कायरता छांडि शूरपना ग्रहण करो कायर भये दीन भये असाता कर्म नाहीं छांडैगा कोऊ दुःख हरनेकूं समर्थ नाहीं है असाता कर्मकूं दूरिकरि साताकर्म देनेकूं कोऊ इंद्र धरणेंद्र जिनेन्द्र अहिमिंद्र समर्थ है नाहीं यातैं अब कायरता है सो दोऊ लोक नष्ट करनेवाला धर्मसूं पराङ्मुखता करै है तातैं धैर्य धारि क्लेशरहित होय भोगोगे तो पूर्व कर्मकी निर्जरा होयगी नवीन कर्मबंधका अभाव होयगा बहुरि तुम जिनधर्मके धारक धर्मात्मा कहावो हो समस्त तुमकूं ज्ञानवान समझैं हैं धर्मके धारकनिमैं विख्यात हो अर व्रती हो अर व्रतसंयमकी यथाशक्ति प्रतिज्ञा ग्रहण करी है अब त्याग संयममैं शिथिलता दिखावोगे तो तुमारा यश अर परलोक तो विगडैहीगा परंतु अन्य धर्मात्मानिका अर धर्मकी बडी निंदा होयगी अर अनेक भोले जीव धर्मके मार्गमें शिथिल हो जांयगे जैसैं कुलवान मानी सुभट लोकनिकैं मध्य भुजास्फालन करि पाछैं वैरीकूं सन्मुख आवतैं ही भयवान होय भागै तो अन्य लघुकिंकर कैसैं थिरता धारै अर दोय दिन जीया तो

हू ताका जीवना हू विकार होय है तैसैं तुम त्यागव्रतसंयमकी प्रतिज्ञा ग्रहणकरि अब शिथिल होवोगे तो निंद्यताके पात्र होवोगे अर अशुभकर्म हू नाहीं छांडेगा अर आगामें बहुत दुःखनिका कारण नवीन कर्मका ऐसा दृढ बंध करोगे जो असंख्यातकालपर्यंत तीव्ररस देगा अर जो तुम्हारे पूर्वे ऐसा अभिमान था जो मैं जिनेन्द्रका भक्त जैनी हूं आज्ञाका प्रतिपालक हूं जिनेन्द्रके कहे व्रतशील संयम धारण करूं हूं जो श्रद्धान ज्ञान आचरण अनंत भवनिमैं दुर्लभ है सो वीतरागगुरुनिके प्रसादतैं प्राप्त भया हूं ऐसा निश्चय करके हू अब किंचित रोगजनित वेदना वा परीषह कर्मके उदय करि आवनेतैं कायर होय चलायमान होना अति लज्जाका कारण है वेदनाका येता भय करो हो सो वेदनातैं मरण ही होयगा मरण तो एकवार अवश्य होना ही है जो देह धारचा है सो अवश्य मरण करेहीगा।

अब जो वीतराग गुरूनिका उपदेशशा व्रतसंयमसहित कायरतारहित उत्साह करि च्यारि आराधनाका शरणसहित जो मरण हो जाय तो इस समान त्रैलोक्यमैं लाभ नाहीं तीन लोककी राज्यसंपदा तो विनाशीक है पराधीन है आराधनाकी संपदा अनंतसुखदेनेवाली अविनाशी है अर जिस भयरहित धीरतासहित मरणकूं मुनीश्वर आचार्य उपध्याय चाहैं हैं अर समस्त व्रती संयमी सम्यग्दृष्टी चाहैं अर तुम हू निरंतर वांछा करे थे सो मनोवांछित समाधिमरण नजीक आगया इस समान आनंद कोऊ ही नाहीं है अर या वेदना बधे है सो तुम्हारा बडा उपकार करे है वेदनातैं देहमैं राग नष्ट हो जायगा पूर्वे कर्म असातादिक बांधे थे तिनकी अल्पकालमैं निर्जरा होयगी दुःख रोगनितैं भरचा देहरूप बंदीगृहतैं जरूर निकसना होयगा विषय भोगनितैं विरक्तता होयगी परद्रव्यनितैं ममता घटैगी मरणका भय नाहीं रहेगा मित्र पुत्र स्त्री बांधवादिकनितैं ममता नष्ट होयगी इत्यादिक अनेक अनेक उपकार वेदनातैं हू जान हू अर कायर हूयां वेदना बधैगी संक्लेश बधैगा कर्मका उदय है सो अब टलैगा नाहीं यातैं अब दृढता ही धारण करनेका अवसर है अर कर्मका जीतना तो शूरपना धारण करे ही होयगा कायर होय

घोसोगे तडफडाट करोगे तो कर्म तुमकूं मारि तिर्यंचादिक कुगतिकूं प्राप्त करेगा अनेक दुःखनिकूं प्राप्त होवोगे जैसैं कुलका साधर्मीनिका धर्मका यशवृद्धिकूं प्राप्त होय अर तुम दुःखके पात्र नाहीं होउ तैसैं प्रवर्तन करा जैसैं शूरवीर क्षत्रियकुलमैं उपजैं हैं ते संग्राममैं शस्त्रनिकरि दृढ संतापित भये भृकुटीसहित मरण करैं हैं परंतु बैरीनितैं मुखकूं उलटा नाहीं फेरैं हैं तैसैं परमवीतरागीनिका शरण ग्रहण करता पुरुष अशुभकर्मनिके अति प्रहारतैं देहका त्याग करैं हैं परंतु दीनता कायरताकूं प्राप्त नाहीं होय है । केई जिनलिंगके धारक उत्तम पुरुषनिके दुष्ट बैरी चारों तरफ आग्नि लगाय दीनी ताकी घोरवेदना वचनके अगोचर तिस अग्निमैं सर्वतरफमैं दग्ध होतैं हू अपना ऋण चुकने समान जानि पंच परमगुरुनिका शरणसहित धीरताकूं धारते दग्ध होय गये हैं परंतु कायरताकूं नाहीं धारी है ऐसा आत्मज्ञानकी प्रभावना है जो इस कलेवरतैं भिन्न अविनाशी अखंड ज्ञानस्वभावकूं अनुभव किया है तिस अनुभव करनेका फल अकंपपना भयरहितपना ही है । बहुरि मिथ्यादृष्टी अज्ञानी हू परलोकके सुखका अर्थी होय धैर्य धारण करै है वेदनामैं कायर नाहीं होय है तदि संसारके समस्त दुःखनिके नाश करनेका इच्छक जिनधर्मके धारक तुम कायर होय आत्माका हितकूं बिगाडी तथा उज्ज्वल यशकूं मलीनकरि दुर्गतिके पात्र कैसैं बनो तातैं अब सावधान होय धर्मका शरण ग्रहणकरि कर्मजनित वेदनाका विजय करो ऐसा अवसर अनंतभवनिमैं हू नाहीं मिल्या है या तीरां लागी नाव है अब प्रमादी रहोगे तो डूब जायगी समस्त पर्यायमैं जो ज्ञानका अभ्यास किया श्रद्धानकी उज्ज्वलता करी तप त्याग नियम धारया सो इस अवसरके अर्थ धारे थे अब अवसर आये शिथिल होय भ्रष्ट होओगे तो भ्रष्ट हुवा अर समता छाडे रोग तथा मरण तो टलैगा नाहीं अपना आत्माकूं केवल दुर्गतिरूप अंध कीचमैं डबोवोगे । बहुरि जो लोकमैं मारी रोग आ जाय तथा दुर्भिक्ष आ जाय तथा भयानक गहनवनमैं प्रवेश हो जाय तथा दृढ भय आ जाय तथा तीव्ररोग वेदना आ जाय तो उत्तम कुलमैं उपजे पूज्य पुरुष संन्यास मरण करे परंतु निंद्य

आचरण नीच पुरुषनिकी ज्यों कदाचित् नाहीं करे मारीके भयतें मदिरा नाहीं पीवे है दुर्भिक्ष आ जाय तो मांस भक्षण नाहीं करे कांदा नाहीं खाय नीच चांडलादिकनिकी उच्छिष्ट नाहीं भक्षण करे है भय आ-जाय तो म्लेक्ष भील नाहीं हो जाय है कुकर्म हिंसादिक नाहीं करे है तैसैं रोगादिकनिकी प्रबल त्रास होतैं हू श्रावकधर्मका धारक जिनधर्मी कदाचित् अपने भावनिकूं विकाररूप नाहीं करे है अर धर्मकी अर त्यागकी व्रतकी साधर्मीनिकी प्रभावनाका इच्छक होय अंतकालमैं अपना श्रद्धान ज्ञान आचरणकी उज्ज्वलता ही प्रगट करे है तिनका जन्मसफल होय है व्रत तप धर्म सफल होय है जगतमैं प्रशंसाकूं प्राप्त होय है मरणकरि उत्तम देवनमैं उपजै है अर मनुष्य पर्यायमैं उत्तमपना भी येही है जो घोर आपदा वेदना आवतैं हू सुमेरकी ज्यों अचल होय है अर समुद्रकी ज्यों क्षोभरहित होय है अर भो धर्मके आराधक ! तुम अति घोर वेदनाके आवनैकरि आकुल मत होहू इस कलेवरतैं भिन्न अपना ज्ञायकभावकूं अनुभव करो अर वेदना तीव्र आवतैं पूर्वै भये वेदनाके जीतनेवाले उत्तम पुरुषनिका ध्यान करो। अहो आत्मन् ! पूर्वैं जो साधुपुरुष सिंह व्याघ्रादि दुष्ट जीवनिकी डाढनिकरि चाबे हुये हू आराधनामैं लीन होते भये तुम्हारे कहा वेदना है।

बहुरि अति कोमलअंगका धारक अर तत्कालका दीक्षित ऐसे सुकुमाल स्वामीकूं स्यालनी अपना दोय बच्चानि करि सहित तीनरात्रि तीनदिन पर्यंत पगनितैं भक्षण करने लगी सो उदर विदारया तादि मरण किया ऐसा घोरउपसर्गकूं सहकरि परम धैर्यधारण करि उत्तम अर्थ साध्या तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि सुकोमल स्वामी माताका जीव जो व्याघ्री ताकरि भक्षण किया हुवा उत्तमार्थतैं नाहीं चिगे तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि भगवान गजकुमार स्वामीके समस्त अंगमैं दुष्ट बैरी कीले ठोक दिये तो हू उत्तमार्थ साध्या तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि सनत्कुमार नाम महामुनिके देहमैं खाज ज्वर काश शोष तीव्र क्षुधाकी वेदना तथा वमन नेत्रशूल उदरशूलादिक अनेक रोग उपजे तिनकी घोर वेदनाकूं सौवर्ष

पर्यंत साम्यभावतैं भोगी धैर्य नाहीं छांड्या तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि राणिकपुत्र गंगा नदीमैं नावमैं डूब गये परंतु आराधनातैं नाहीं चिगे तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि भद्रबाहुनामा मुनिके तीव्रक्षुधाका रोग उपज्या तो हू अवमोदर्य नाम तपकी प्रतिज्ञा करि आराधनातैं नाहीं चिगे तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि ललितघटा नामकरि प्रसिद्ध बत्तीस मुनि कौसांबीमैं नदीके प्रवाहकरि बहे हुए हू आराधना मरण किया तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि चंपानगरीके बाह्य गंगाके तटविषैं धर्मघोष नाम मुनि एक महीना-का उपवासकी प्रतिज्ञाकरि तीव्र तृषावेदनातैं प्राण त्यागे परंतु आराधनातैं नाहीं चिगे तुम्हारे कहा वेदना है। पूर्व जन्मका वैरी देव अपनी विक्रियाकरि शीतकी घोर वेदनाकरि व्याप्त किया हू श्रीदत्त नाम मुनि क्लेशरहित हुवा उत्तमार्थकूं सिद्ध किया तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि वृषभसेन नाम मुनि उष्ण-शिलातल अर उष्ण पवन अर उष्ण सूर्यका घोर आताप होते हू आराधनाकूं धारण करी तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि रोहेडनगरमैं अग्नि नाम राजपुत्र क्रौंच नाम वैरीकरि शक्ति नाम आयुधतैं हत्या हू आराधना धारण करी तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि काकंदी नाम नगरीविषैं अभयघोष नाम मुनिका समस्त अंगकूं चंडवेग नाम वैरी छेद्या तो हू घोरवेदनामैं उत्तमार्थ साध्या तुम्हारे कहा वेदना है। विद्यु-च्चर नाम चोर डांस अर मच्छरनिकरि भक्षण किया हुवा हू संक्लेशरहित मरणतैं उत्तमार्थ साध्या तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि चिलातिपुत्र नाम मुनिकूं पूर्वला वैरी शस्त्रनिकरि घात्या पाछैं घावनिमैं स्थूल कीडे बहुत प्रवेशकरि चालिनीवत् छिद्र किये तो हू समभावनितैं प्रचुरवेदनासहित उत्तमार्थ साध्या तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि दंड नामा मुनिकूं यमुनावक्र पूर्वला वैरी बाणनिकरि वेध्या ताकी घोर वेदना होते हू समभावनितैं आराधनाकूं प्राप्त भया तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि कुंभकारकट नाम नग-रमैं अभिनंदनादि पांचसै मुनि घाणानिमैं पेलेहुए हु साम्यभावतैं नाहीं चिगे तुम्हारे कहा वेदना है। बहुरि चाणिक्यनामा मुनिकूं गायानिके रहनेके घरमैं सुबंध नाम वैरी अग्नि लगाय दग्ध किये परंतु प्रायोप-

गमन सन्यासतैं नाहीं चले तुम्हारे कहा वेदना है। कुलालनाम ग्रामका बहिर्भागविषैं वृषभसेन नाम मुनि संघसहितकूं रिष्टाम नाम बैरी अग्नि लगाया दग्ध किये ते परम वीतरागतातैं आराधनाकूं प्राप्त भये तुम्हारे कहा वेदना है। भो आराधनाका आराधक हो, हृदयमैं चिंतवन करो एते मुनि असहाय एकाकी इलाज प्रतीकाररहित वैयावृत्यरहित हू परम धैर्य धारणकरि कायरतारहित समभावनितैं घोर उपसर्ग सहित आराधना साधी इहां तुम्हारे कहा उपसर्ग है समस्त साधर्मी जन वैयावृत्यमैं तत्पर हैं तो हू तुम कैसैं क्लेशित हो रहे हो ये सब बडे बडे पुरुष भये तिनके कोऊ सहाई नाहीं था अर कोऊ वैयावृत्य करने वाला नाहीं था असहाय था तिन ऊपरि दुष्ट बैरी घोर उपसर्ग किये अग्निमैं दग्ध किये पर्वततैं पटक शस्त्रनितैं विदारे तथा तिर्यंचनिकरि विदारे गये खाए गये जलमैं डबोये गये कुवचनके घोर उपद्रव किये तो हू साम्यभाव नाहीं तज्या तुम्हारे उपसर्ग नाहीं आया अर धर्मके धारक करुणावान धैर्यके धारक परमहितोपदेशमैं उद्यमी समस्त परिकर हाजिर हैं अब आकुलताका कारण नाहीं तथा शीत उष्ण पवन वर्षादिकनिका उपद्रव नहीं ऐसे अवसरमैं हू कैसैं शिथिल भए हो अर जो तुम्हारे रोगजनित अशक्तता जनित क्षुधा तृषादिक वेदना भई है तिसमैं परिणाम मत लगावो साधर्मी जनके मुखतैं उच्चारण किये जिनेंद्रका वचनरूप अमृतका पान करो तातैं समस्त वेदनारूप विषका अभाव होय परिणाम उज्ज्वल होय परमधर्ममैं उत्साह होय पापकी निर्जरा होय कायरताका अभाव होय है अर वेदना आवतैं चतुर्गतिनिमैं जो दुःख भोगे तिनकूं चिंतवन करो इस संसारमैं परिभ्रमण करता जीव कौन कौन वेदना नाहीं भोगी अनेक बार क्षुधा वेदनातैं तृषावेदनातैं मर्‍या है अनेकबार अग्निमैं दग्ध होय मरे जलमैं डूबि अनेक बार मरे विषभक्षणतैं मरे अनेक बार सिंह सर्प श्वानादिकनिकरि मारे गए हो शिखरतैं पडि पडि मरे हो शस्त्रनिके घाततैं मरे हो अब कहा दुःख है अर जो दुःख नरक तिर्यंचगतिमैं दीर्घ काल भोग्या है तिनकूं ज्ञानी भगवान जाने हैं इहां अब किंचित् वेदना अति अल्पकाल आई तातैं धैर्य मत छाडो जो

घोर वेदना कर्मनिके वश होय चारों गतिनिमैं भोगी है तिनकूं कोटि जिह्वानिकरि असंख्यातकालपर्यंत कहनेकूं समर्थ नाहीं नरकमैं जो दुःखकी सामग्री है तिनकी जात इस लोकमैं है नाहीं कैसैं दिखाई जाय भगवान केवलज्ञानी ही जानैं हैं जहां पंचम नरकताईंका उष्ण बिलानिमैं उष्णता तो ऐसी है जो सुमेरु-परिमाण लोहेका गोला छोडिये तो भूमि ऊपरि पहुंचता पहुंचता पाणी होय बहि जाय इहां तुम्हारे रोग-जनित कहा उष्णता है अर पंचम नरकका तीसरा भाग अर छठी सप्तमी पृथ्वीका बिलानिमैं ऐसा शीत है जो सुमेरुप्रमाण लोहमय गोलाका शीततैं खंड खंड हो जाय ऐसी वेदना यो जीव चिरकालपर्यंत भोगी है यहां मनुष्यजन्ममैं ज्वरादिक रोगजनित तथा तृषातैं उपजी तथा ग्रीष्मकालतैं उपजी उष्णवेदना तथा शीतज्वरादिकतैं उपजी वा शीतकालतैं उपजी शीतवेदना केती है अल्पकाल रहैगी सो धर्मके धारक ममत्वके त्यागी तिनकूं समभावनितैं नाहीं भोगनी कहा ? यो अवसर समभावनितैं परीसह सहनेको है अर क्लेशभाव करोगे तो कर्मका उदय छोडनेका नाहीं कहां हू भोगोगे अर अपघातादिकतैं मरोगे तो नरकनिमैं अनंतगुणी असंख्यातकाल वेदना भोगोगे अर पापके उदयतैं नारकीनिके स्वभावहीतैं शरीरमैं कोट्यां रोग सासता है नरककी भूमिका स्पर्श ही कोटि बिच्छूनिका डंकतैं अधिक वेदना करनेवाली है नारकीनिके क्षुधा वेदना ऐसी है जो समस्त पृथ्वीके अन्नादिक भक्षण किए उपशम होय नाहीं अर एक कणमात्र मिलै नाहीं अर तृषावेदना ऐसी है जो समस्त समुद्रका जल पिये हू बुझै नाहीं अर एक बूंद मिलै नाहीं अर नरकधराकी पहली पटलकी महा कडी दुर्गंध मृत्तिका ऐसी है जो एक कण इस मनुष्यलोकमैं आ जाय तो आध आध कोश पर्यंतके पंचेंद्री मनुष्य तिर्यंच दुर्गंधतैं मरण करि जांय दूजा पटलकीतैं एक कोशका ऐसैं पटल पटल प्रति आध आध कोश बधता सप्तम पृथ्वीका गुणचासमां पट-लकी मृत्तिकामैं ऐसी दुर्गंध है जो एक कण यहां आ जाय तो साढा चौईस कोशतांईंका पंचेन्द्री मनुष्य तिर्यंच दुर्गंधकरि प्राणरहित हो जाय अर ऐसा ही रसरूप शब्दके अनुभवनिका दुःख वचनके अगोचर

केवली ही जानैं हैं ऐसैं दुःखनिकूं बहुत आरम्भ बहुपरिग्रहके प्रभावतैं सप्तव्यसन सेवनतैं अभक्ष्यनिके भक्षणतैं हिंसादिक पंचपापनिमैं तीव्ररागतैं निर्माल्यभक्षणतैं घोर दुःखनिका पात्र नारकी होय है नारकीनिका मानसिक दुःख अपार है नारकीनिकै शरीर दुःख क्षेत्रजनित दुःख परस्पर कीये दुःख असुरनिकरि उपजाये दुःख वचनके कहनेके गोचर नाहीं हैं सो चिंतवन करो अर नरकमैं आयु पूर्ण भये विना मरण नाहीं अर तिर्यंचनिके अर रोगी दरिद्री मनुष्यनिके पापका उदयतैं जे तीव्र दुःख होय हैं सो प्रत्यक्ष देखो ही हो वर्णन कहा करिये पराधीन तिर्यंचगतिके दुःख वचनरहितपना अर तिनके क्षुधाका तृषाका शीतका उष्णताका ताडनाका अतिभारलादनेका नाशिकाछेदन रज्जूनिकरि बांधनेका घोर दुःख है अर स्वाधीन खान पान चालना बैठना उठना जिनके नाहीं अर कोऊकूं सुखदुःखरूप अभिप्राय जनाय कुछ उपाय उद्यम करना सो नाहीं इमके घर रहूं इसके नाहीं रहूं सो अपने आधीन नाहीं चांडाल म्लेक्षनिर्दयीनिके आधीन हू रहना अर ब्राह्मणादिकनिके आधीन होना कोऊ नाना मारनिकरि मारै कोऊ आहार नाहीं देवै अर अल्प देवै अर भार बधता बहावै तो कोऊ राजादिकनिके निकट जाय पुकार करनेका सामर्थ्य नाहीं कोऊ दयाकरि रक्षा कर सकै नाहीं नासिका गलि जाय स्कंध गलि जाय पीठ कट जाय हजारां कीडा पड जांय तो हू पाषाणादिकनिका कर्कश भार लादना अर भार नाहीं बह्या जाय चाल्या नाहीं जाय तदि मर्म स्थाननिमैं चामटीनिका तथा लोहमय तीक्ष्ण आरानिका तथा लाठी लठनिका घात अर दुर्वचननि करि संतापित करि बडी जबरीतैं चलावना नाशिकादि मर्मस्थाननिमैं ऐसा जेवडा सांकल चाममय नाडीनिकरि बांधै जो हलन चलन नाहीं कर सकै ऐसे तिर्यंच गतिके प्रत्यक्ष दुःख देखो हो तुम्हारै कहा दुःख है। जलचर नभचर वनचर जीव परस्पर भक्षण करैं हैं छिपे हुएनिकूं हेरि हेरि निर्बलकूं सबल भक्षण करैं हैं शिकारी भील धीवर वागुरा देखत प्रमाण जहां जांय तहांतैं पकडि लावैं हैं मारैं हैं चीरैं हैं बिदारैं हैं राधैं हैं भुलसैं हैं कौन दया करै पूर्व जन्ममैं दया धर्म धारचा नाहीं

धनका लोभी होय अनेक झूंठ कपट छल कीया ताका फल तिर्यंच गतिमैं उदय आवै है सो अब चिंतवन करो अर मनुष्यनिमैं इष्टका घोर दुःख है अर दुष्टनिका संयोगका अर निर्धन होनेका पराधीन बंदीगृहमैं पडनेका अपमान होनेका मारन ताडन त्रासन भोगनेका अर रोगानिकी घोर वेदनाका अर जराकरि जर्जरा होनेका अर आंधा बहिरा गूंगा लूला पांगला होनेका क्षुधा तृषा भोगनेका शीत उष्ण आतापादि भोगनेका नीचकुल नीच क्षत्रादिकमैं उपजनेका अंग उपांग गल जानेका सिडजानेका वांछित आहार नाहीं मिलनेका घोर दुःख भोगे तिनकूं चिंतवन करो यहां तुम्हारे कहा दुःख है। बहुरि नरक तिर्यंचगतिके दुःख तो अपार हैं परंतु पापके उदयतैं मनुष्यगतिमैं भी मानसिक दुःख हू अज्ञान भावतैं कषाय अभिमानके वश पड्या जीवके अपार हैं कर्म बडा बलवान है जिनका वचन हू मस्तकमैं तीक्ष्णशूल समान वेदना करै ऐसे महा दुष्ट निर्दयी महावक्र अन्यायमार्गी तिनके शामिल कर्म उपजाय दे तिनकी रात दिन त्रास भोगना भयवान रहना अर जे उपकारी इष्ट प्राणनि समान जिनके संगम करि अपना जीवन सफल मानै था ऐसे स्त्री पुत्र मित्र स्वामी सेवकादिकनिका वियोग होनेका बाल्य अवस्थामैं पुत्रीका विधवा होनेका तथा आजीविका भ्रष्टहोनेका धन लुटिजानेका अति निर्धन होनेका उदर भर भोजन नाहीं मिलनेका दुष्ट स्त्री कपूत पुत्र पावनेका बांधवनिमैं तिरस्कार होनेका गुणज्ञस्वामीके वियोग होनेका तथा अपना अपवाद होने कलंक चढनेका बडा दुःख भोगे है यातैं हे धीर यहां सन्यासके अवसरमैं किंचितमात्र उपजी कहा वेदना है कर्मके उदयतैं मनुष्यजन्ममैं अग्निमैं दग्ध हो जाय है सिंह व्याघ्र सर्प्प दुष्ट गजादिककरि भक्षण करिये है हस्त पाद कर्ण नाशिका छेदै है शूली चढावै है नेत्र पाडै है जिह्वा उपाडै है पापकर्मका उदयतैं मनुष्य जन्महूमैं घोर दुःख भोगै है तथा दुष्ट वैरीनिके प्रयोगतैं दंडनिकरि वेदानिकरि मुसंडीनिकरि मुद्गरनिकरि चामठीनकरि लोहडीनिकरि मारे गये हो शस्त्रनतैं विदारे गये लात घमूका ठोकरनिका मार पादताडानिकी मार तथा दलना बालना

सब पराधीन होय भोगे हैं जो स्वाधीन होय कर्मके उदयजनित त्रासकूं साम्यभावनितैं एकबार भोगै तो दुःखनिका पात्र नाहीं होय समस्त रोग अनेकबार भोगे हैं अब तुम्हारे ये रोग शीघ्र निर्जरैगा अर रोग विना ऐसा जीर्ण दुष्ट कलेवरतैं छूटना नाहीं होय देहतैं ममता नाहीं घटै धर्ममैं प्रीति नाहीं बधै तातैं रोगजनित वेदनाकूं हूं उपकार करनेवाली जानि हर्ष ही करो । हे धीर जो दुःख तुम संसारमैं भोगे हैं तिनके अनंतवें भाग हू तुम्हारे दुःख नाहीं है अब इसअवसरमैं कायर होय धर्मकूं मलीन कैसैं करो हो जो तुम कर्मके वश होय चतुर्गतिमैं घोरवेदना भोगी तो इहां धर्मरूप तप व्रत संयम धारण करते वेदना भोगने का कहा भय करो हो कर्मके वश होय जो वेदना अनंतबार भोगी सो वेदना धर्मकी रक्षाके अर्थि जो एक बार समभावनितैं सहो तो बडी निर्जरा हो जाय, भो धीर तुम भय रहित होहू वा भयसहित होहू इलाज करो वा मत करो प्रबल उदय आया कर्म तो नाहीं रुकैगा इलाज हू कर्मका मंद उदय भये कार्य करे है पापका प्रबल उदय होतैं अति शक्तिवान हू औषधि बहुत यत्नतैं युक्त किया हुवा हू वेदनाका नाश नाहीं करि सकै है जे असंयमी योग्य अयोग्य समस्त भक्षण करनेवाला त्यागव्रतरहित रात्रि दिन समस्त प्रतीकार करे तो हू कर्मके प्रबल उदयतैं रोगकरि रहित नाहीं होय तो तुम संयम व्रत सहित अयोग्यका त्यागी कैसैं आकुल भये प्रतीकार वांछो हो इहां राजा समान सामग्री अन्य कौनके होय अर जिनके भक्ष्य अभक्ष्य योग्य अयोग्यका विचार नाहीं हिंसाके कारण महान आरंभ करनेका जिनके भय नाहीं दया नाहीं अर बडे बडे धन्वंतरि सारिखे अनेक वैद्य अर अनेक ही औषधि होय तो हू कर्मका उदयजनित वेदनाकूं उपशम नाहीं करै तदि त्यागी व्रती तुम अर दयावान् व्रती वैयावृत्य करनेवाले कैसैं तुम्हारा रोग हरैंगे समस्त वेदनाका उपशम करनेवाला जिनेंद्रका वचनरूप औषध ग्रहण करि परम साम्यभावरूप अभेद्य चक्रकूं धारण करो पूर्वकर्मका उदयरूप रसकूं समभावनितैं भोगो ज्यूं अशुभकी निर्जरा हो जाय अर नवीनकर्मका बंध नाहीं होय मरण तो एक पर्यायमैं एकबार होना ही है परंतु संयमरहित मरणका

अवसर तो इहां प्राप्त भया है तातैं बडा हर्ष सहित मरण करो जातैं अनेक जन्म धारि धारि अनेक मरण नाहीं करो अर अति अल्प जीवनिमैं धर्म छांडि आर्तपरिणामी मति होहू अशुभकर्मके उदयके रोकनेकूं इंद्रादिकसहित समस्त देव समर्थ नाहीं ताहि ये अल्पशक्ति धारी कैसैं रोकेंगे जिस वृक्षके भंग करनेकूं गजेंद्र समर्थ नाहीं तिस वृक्षकूं दीन निर्बल सूमा कैसे भंग करै ? जिस नदीके प्रबल प्रवाहमैं महानदेहका धारक अर महा बलवान हस्ति बहता चल्या जाय तिस प्रवाहमैं सूमाका बहनेका कहा आश्चर्य, जा कर्मका उदयकूं तीर्थंकर चक्रवर्ति नारायण बलभद्र अर देवनिसहित इंद्र हू रोकनेकूं समर्थ नाहीं तिस कर्मकूं अन्य कोऊ रोकनेकूं समर्थ है कहा ? तातैं कर्मके उदयकूं अरोक जानि असाताका उदयमैं क्लेशरूप मत होहू शूरपना ग्रहण करो अर साम्यभावतैं कर्मकी निर्जरा करो अर कर्मके उदयतैं दुःखित होहुगे रोवोगे विलाप करोगे दीनता करोगे तो वेदना नाहीं मिटैगी अर नाहीं घटैगी वेदना वधैहीगी धर्म अर व्रत संयम यश नष्ट होय आर्तध्यानतैं घोर दुःखके भोगनेवाले तिर्यंच जाय उपजोगे यामैं संशय नाहीं है जो असाताका उदयमैं सुखके अर्थि रोवना है विलाप करना है दीनता भाषण करना है सो तेलके अर्थ बालू रेतका पेलना है तथा घृतके निमित्त जलकूं विलोवना है तथा तंदुलके निमित्त परालकूं खोटना है सो केवल खेदके निमित्त है आगामै तीव्रबंधके निमित्त है। बहुरि जैसैं कोऊ पुरुष अज्ञानभावतैं पूर्व अवस्थामैं किसीमौं धन करज लेय भोग्या अब करार पूर्ण भये आय मांगे तदि न्यायमार्गी तो हर्ष मानि ऋण चुकायकरि अपना भार ज्यौं उतारि सुखी होय तैसैं धर्मके धारक पुरुष तो कर्मके उदयतैं आया रोग दरिद्र उपसर्ग परीषह तिनके भोगनेतैं ऋण दूर होनेकी ज्यों मानि सुखी होय है जो अवार हमारे पूर्वकृतकर्म उदय आया है भला अवसरमैं आया अवार हमारे ज्ञानरूप प्रचुर धन है भगवान पंचपरमेष्ठीका शरण है साधर्मीनिका बडा सहाय है सो सहज ऋणका भार उतारि निराकुल सुखतैं प्राप्त होस्यूं अपना कषायादि भावनितैं उपजाया कर्म ऐसा बलवान है जो ऋद्धिका विद्याका बंधुजनका धनसंपदाका शरीरका

मित्रनिका देवदानवनिका सहायका बलकूं आधीक्षणमैं नष्ट करै है कर्मरूप ऋण छूटै नाहीं। बहुरि रोग शोक जीवन मरण अन्य किसीहीके नाहीं उदय आया होय अर तुम्हारे ही उदय आया होय तो दुःख करना उचित है क्षुधा तृषा रोग वियोग जन्म जरा मरण कौनके उदयके अवसरमैं त्रास नहीं देवैं हैं समस्त संसारी जीवनिके उदय आवैं हैं मरण समस्तकूं प्राप्त होय है च्यारूंगतिनिमैं कर्मका उदय आवै है तातैं जो पूर्व अवस्थामैं बंध किया ताका उदयमैं आकुलता त्यागि परम धैर्य धारण करि समभावनितैं कर्मका विजय करो समस्त दुःखनिका विजय करनेका अवसरमैं अब काहेका विषाद करो हो सम्यग्दृष्टी तो आजन्मतैं समाधिमरणहीकी वांछा करै है सो यो अवसर महा कठिन प्राप्त भयो है समस्त दुःखनिका नाशका अवसर कठिनतातैं पाया है उत्साहका अवसरमैं विषाद करना उचित नाहीं यो अवसर चूक्यां फिर अनंतकालमैं नाहीं मिलैगो। बहुरि अरहंत सिद्ध आचार्यादिक भगवान परमेष्ठी अर समस्त साधर्मीनिकी साखतैं जो त्याग संयम ग्रहण किया तिस त्यागका भंग करनेतैं पंचपरमेष्ठीनितैं पराङ्मुखता भई समस्त धर्मको लोप भयो धर्मके दूषण लगायो धर्मका मार्गकी विराधना करी अपना दोऊलोक नष्ट किया अर मरण तो अवश्य होयहीगा मरण अर दुःख तो व्रत संयम भंग किये हू नाहीं दूर होयगा जो कार्य राजकूं अर पंचांकूं साक्षी करि करै अर फेर वाकूं लोपै तो तीव्रदंडनै महा अपराधनै प्राप्त होय अर समस्त लोकमैं धिकार अर तिरस्कारकूं प्राप्त होय है अर परलोकमैं अनंतकाल पर्यंत अनंत जन्ममरण रोग शोक वियोग होनेका पात्र होय है जो त्याग करि भंग करना है सो महा अपराध है जो त्याग नाहीं करै सो तो अनादिका संसारी है ही बाने तो त्याग संयमव्रत पाया ही नाहीं अर जो त्याग करि व्रत संयम संन्यास बिगाडै है ताकै धर्मवासना अनंतानंतकालमैं दुर्लभ है। बहुरि आहारकी गृद्धिता है सो तो अति निंद्य है जे उत्तम पुरुष हैं ते तो क्षुधा वेदनाकूं प्राणापहारिणी जानि क्षुधाका इलाज मात्र आहार करैं हैं सो हू बडी लज्जा है आहारकी कथा हू दुर्ध्यानकूं करनेवाली जानि

त्याग करै है यो हाड मांसमय देह आहार विना रहै नाहीं अर देह विना तप वृत संयमरूप रत्नत्रय मार्ग पलै नाहीं तातैं रत्नत्रयका पालनके अर्थि रस नीरस जैसा कर्म विधि मिलावै तैसा निर्दोष उज्ज्वल भोजनतैं उदर पूर्ण करै है रसना इंद्रियकी लंपटतानै कदाचित प्राप्त नाहीं होय है मनुष्यजन्मकी सफलता तो आहारकी लंपटताके जीतनेतैं ही है तिर्यंच गतिमैं तो आहारकी लंपटतातैं बलवान होय सो निर्बलनै तथा परस्पर भक्षण करै है आहारकी गृद्धितातैं माता पुत्रकूं भक्षण करै है मनुष्य गतिमैं हू नीच उच्च जातिका भेद समस्त आचारका भेद भोजनके निमित्ततैं ही है इसलोकमैं जेता निंद्य आचरण हैं तितना भोजनका विचाररहितकै ही है अर भोजनमैं जिनके लंपटीपना नाहीं ते उज्ज्वल हैं वांछारहित हैं ते उत्तम हैं अर नीच उच्च जाति कुलका भेद भी भोजनके निमित्ततैं ही है आहारका लंपटी घोर आरंभ करै है बाग बगीचेनिमैं एक अपने जीमनेकेअर्थि कोट्यां त्रस जीवनिकूं मारै है महापापकी अनुमोदना करै है अभक्ष्य भक्षण करै है असत्य वचन हिंसादिक महापापके वचन आहारका लंपटी बोलै है आहारका लंपटी सुंदर भोजन वास्तै चोरी करै है कुशील सेवन करै है भोजनका लंपटी धन परिग्रहमैं महामूर्छावान होय है अन्य लोकनिकूं मारि झूठ बोलै चोरी करकै हू मिष्ट भोजनवास्तै धन संग्रह करै है मिष्ट भोजन वास्तै क्रोध करै है मान करै है कपट छल करै है चोरी करै है कुलका क्रम नष्ट करै है नीच जातिके शामिल हो जाय है नीच कुलके मद्यमांसके भक्षकनिका दासपना अंगीकार करै है भोजनका लंपटी निर्लज्ज होय जाय है भोजनका लंपटी अपना पदस्थ उच्चता जाति कुल आचार नाहीं देखै है स्वादिष्ट भोजन देखि मन बिगाड दे है बहुत धनका धनी अर अपने गृहमैं सुंदर भोजन नित्य मिलता हू नीचनिकै रंकनिकै शूद्रनिकै म्लेक्ष मुसलमानकै घर हू भोजन जाय करै है भोजनका लोलुपी ग्राम नगरमैं विकता नीच वृत्तिकरि कीया अर समस्त मुसलमानादिक जिनकूं स्पर्श कर जाय बेच जाय ऐसे अधम भोजनकूं खरीद ल्यावै है भोजनका लंपटी तपश्चरण ज्ञानाभ्यास श्रद्धान आचरण समस्त शील संयमकूं

दूरितैं ही छांडै है अपना अपमान होना नाहीं देखै है अभक्ष्यमैं उच्छिष्टमैं मांसादिकनिमैं आशक्त हो जाय है अयोग्य आचरणकरि अपने कुलका क्रमकूं नष्ट करै है मलीन करै है जिह्वा इंद्रियकी लंपटता कहा कहा अनर्थ नाहीं करै ? शोधना देखना तो आहारके लंपटीकै है ही नाहीं अर ये आहार कैसा है कहांतैं आया है ऐसा बिचार आहारका लंपटीकै नाहीं रहै है जो आहारका लंपटी है ताकी तीक्ष्णबुद्धि हू मंद हो जाय है बुद्धि विपरीत हो जाय सुमार्ग छांडि कुमार्गमैं प्रवीण हो जाय है धर्मतैं पराङ्मुख हो जाय है सो देखिये है केई पुरुष अनेक शास्त्र पढ्या है वांचनादिकरि अनेक जीवानिकूं शुभमार्गका उपदेश करै है तथा बहुत कालतैं सिद्धांत श्रवण करै है तो हू तिनकै सत्यार्थ श्रद्धान ज्ञान आचरण नाहीं होय है विपरीत मार्गतैं नाहीं छूटै है सो समस्त अन्याय अभक्ष्य भोजन करनेका फल है मुनीश्वरनिकै तो प्रधान आहारकी शुद्धता हो है अर श्रावककै हू समस्त बुद्धिकी शुद्धताका कारण एक भोजनकी शुद्धता ही जानो आहारका लंपटीकै योग्यका अयोग्यका शोधनेका नेत्रनितैं देखनेका थिरपना नाहीं होय धैर्यरहित शीघ्रतातैं भक्षण ही करै है जिह्वाका लंपटी मान सन्मान सत्कार अपना उच्च पदस्थ नाहीं देखता मिष्ट भोजन मिलै तहां परम निधानका लाभ गिनै है भोजनका लंपटी मिष्ट भोजन देनेवालेके आधीन होय माताका पिताका स्वामीका गुरुका उपकार लोपि अपकार ग्रहण करै है भोजनके लंपटीका विनय अपना स्त्रीपुत्र हू नाहीं करै है भोजनका लंपटीकै धर्मका श्रद्धान भी नाहीं होय है जातैं सम्यग्दृष्टी आत्मीक सुखकूं सुख जानै ताकै तो इंद्रियनिका विषयजनित सुखमैं अत्यंत अरुचि होय है जाकूं सुंदर भोजन ही सुख दीख्या सो तो विपरीत ज्ञानी मिथ्यादृष्टी ही है जिह्वाका लंपटी है सो महा अभिमानी हू उच्चकुली हू नीचनिका चाटुकार स्तवन करै है तथा भोजनका लंपटी दीन हुवा परका मुख देखता फिरै है याचना करै है नाहींकरने योग्य कर्म करै है एक भोजनकी चाहतैं शालिमच्छ सप्तम नरक जाय है अर अनेक जन्तु भक्षणकरि महामच्छ हू सप्तम नरक जाय है देखहु

सुभौम नाम चक्रवर्ती देवोपुनीत भी दशांग भोगनितैं तृप्ति नाहीं भया अर कोऊ विदेशीका लाया फलके रसकी गृद्धताकरि कुटुंबसहित समुद्रमैं डूबि समस्त नरक गयो औरनिकी कहा कथा अर ऐसा जिनेंद्रका वचनरूप अमृतपान करनेतैं हू जो तुम्हारे आहारमैं रसवान भोजनमैं गृद्धता नाहीं नष्ट भई तो जानिये है तुम्हारै अनंतकाल असंख्यातकाल संसारमैं परिभ्रमण करना अर क्षुधा तृषा रोग वियोग जन्म मरण अनंत बार भोगना है अर जो तुम या विचारो हो जो मैं भोजनपान कर तृषाकूं मेटि तृप्ति होऊंगा सो कदाचित आहारकरि तृप्तिता नाहीं होयगी क्षुधा तृषाकी वेदना तो असाता नाम कर्मके नाशतैं मिटैगी आहार करनेतैं नाहीं घटैगी आहारतैं तो अधिक गृद्धिता बधैगी जैसैं अग्नि ईंधन करि तृप्त नाहीं होय अर समुद्र नदीनिकरि तृप्ति नाहीं होय तैसैं आहारतैं तृप्तता नाहीं होयगी लालसा अधिक अधिक बधैगी लाभांतरायके अत्यंत क्षयोपशमतैं उपज्या अत्यंत बल वीर्य तेज कांतिके करने-वाला मानसिक आहार असंख्यातकालपर्यंत स्वर्गमैं इंद्र अहमिंद्रका सुख भोग्या तो हू क्षुधा वेदनाकी अभावरूप तृप्तता नाहीं भई तथा चक्रवर्ती नारायण बलभद्र प्रतिनारायण भोगभूमिके मनुष्यादि लाभांत-राय भोगांतरायका अत्यंत क्षयोपशमतैं प्राप्त भया दिव्य आहार ताकूं बहुतकाल भोग करके हू क्षुधा वेदना नाहीं दूर करी तो तुम्हारे किंचित मात्र अन्नादिक भक्षण करि कैसैं तृप्तता होयगी तातैं धैर्य धारण करि आहारकी वांछाके जीतनेमैं यत्न करो अब आहार केताक भक्षण करोगे अर याका स्वाद केतेक काल है जिह्वाका स्पर्श मात्र स्वाद है। गिल गयां पाछैं स्वाद नाहीं पहले स्वाद नाहीं केवल अधिक अधिक तृष्णा वधावै है समस्तप्रकारके आहार भक्षण तुम अनादितैं किये हैं तदि तृप्ति नाहीं भई तो अब अंतकालमैं कंठगतप्राणके समय किंचित् आहारतैं तृप्ति कैसैं होयगी तातैं दृढता धारण करि अपना आत्माहितकूं करो अर ऐसा कोऊ आहार भी लोकमैं अपूर्व नाहीं है जाकूं तुम नाहीं भोग्या जो समस्त समुद्रका जल पीये तृप्त नाहीं भया तो ओसकी बूंदकी चाटनेकरि कैसैं तृप्त होहुगे अर पूर्वकालमैं हू रात्रि दिन आहारके

निमित्त ही दुःखित हुवा पर्याय व्यतीत करी है देखो बहुतकाल तो आहारका स्वादकी बांछा रहै सो दुःख अर आहारकी विधि मिलावनेकूं सेवा वणिज इत्यादिक करि धन उपार्जन करनेमें दुःख, दीनता करतां पराधीन रहां हू दुःख, धन खरच होता दीखै तामैं हू दुःख, स्त्रीपुत्रादिक आहारका विधि मिलावै तिनकै आधीन होनेका दुःख, तथा आप बहुतकाल पर्यंत पचाना आरंभ करना अर भोजन तय्यार नाहीं होय तेतैं बांछासहित रहना सो हू दुःख, कोऊ रसादिक सामग्री नाहीं तो लावनेका दुःख, अपनी इच्छाप्रमाण नाहीं मिलै तो दुःख, अर मिष्टभोजन भक्षण करते खाटाकी लालसा फिर चिरपराकी लालसा फिर मीठाकी लालसा इत्यादिक बारंबार अनेक लालसा जहां नाहीं घटै तहां सुख कहां ? अर जिह्वाके स्पर्शमात्र हुआ अर निगलै है श्रेष्ठ मनवांछित हू आहार एक क्षणमें जिह्वाका मूलकूं उलंघन करै है एक जिह्वाको अग्र ही स्वादकूं जानै है जिह्वाके नाहीं भिडै तितनै स्वाद नाहीं अर जिह्वातैं पार उतर्‍या कि स्वाद नाहीं एक निषेकमात्र आहारका स्पर्शका स्वाद है तिसके निमित्त घोर दुर्ध्यान करै है महा संकट भोगै है अर भोजन करकै हू वांछारहित नाहीं होय है तातैं ऐसा दुःखका करनेवाला आहारके त्यागका अवसर आया इस अवसरकूं महा दुर्लभ अक्षय निधानका लाभ समान जान आहारके स्वादमैं अति विरक्त होहू यहां जो दृढ परिणामनितैं आहारमैं विरक्त होहुगे तो स्वर्गलोकमैं जाय उपजोगे जहां हजारां वर्षताईं क्षुधावेदना नाहीं उपजैगी जहां जितना सागर प्रमाण आयु तितनां हजार वर्ष पर्यंत तो भोजनकी इच्छा ही नाहीं उपजै अर पाछैं किंचित् इच्छा उपजै तदि कंठनिमैं अमृत परमाणु ऐसे द्रवैं सो एक क्षणमात्रमैं इच्छाको अभाव हो जाय सो यो समस्त प्रभाव असंख्यातवर्षपर्यंत क्षुधावेदना नष्ट होनेरूप पूर्वजन्ममैं आहारकी लालसा छांडि अनशनतप अवमोदर्यतप रसपरित्यागतपके करनेका है। ये तिर्यंच मनुष्यगतिमैं जो क्षुधा तृषा रोगादिकका घोर दुःख अनंतकालतैं भोगे हैं सो समस्त आहारकी लंपटताका प्रभाव है जिन जिन आहारकी लंपटता छांडी ते क्षुधादिवेदना रहित कवलाहार-

रहित दिव्य देव होय हैं जो अब इस वेदनातैं दुःखित हो तो आहारके त्यागमैं ही अचल प्रवर्तो। जो अल्पकालमैं वेदना रहित कल्पवासी देवनिमैं जाय उपजो अर आहार भक्षण करने करिकै तो वेदना रहित नाहीं होवोगे। बहुरि समस्त दुःखनिका मूलकारण इस जीवकै एक शरीरका ममत्व है याकी ममतातैं याकी रक्षाके निमित्ततैं ही अनंतानंतकालपर्यंत दुःख भोगे हैं जेते क्षुधा तृषा रोगादिक परीषहनिका दुःख है ते समस्त एक देहकी ममतातैं है जे महंत पुरुष देहमैं ममताका त्यागी भये हैं तिनकै हाडमांसचाममय महा दुर्गंध रोगनिका भर्या देह धारण नाहीं होय। जातै संसारका अभाव नाहीं होय तितने इंद्रादिकदेवनिका दिव्य देह प्राप्त होय है पाछै शीलसंयमादि सामग्री पाय निर्वाणकूं प्राप्त होय है जो देहकी वेदनातैं दुखी हो तो शीघ्र ही देहकी ममता लालसा छांडो जो देह नाहीं धारो अर आहारकी चाहतैं दुखी हो तो आहारहीका त्याग करो जो फेरि क्षुधा तृषादिक वेदनातैं आहार ग्रहण नाहीं करो क्रमतैं देहकूं ऐसैं कृष करो जैसैं वातपित्तकफका विकार मंद होता जाय परिणामनिकी विशुद्धिता बधती जाय ऐसैं आहारका त्यागका क्रम पूर्वै कह्या ही है पाछै अंतकालमैं जेती शक्ति होय तिस प्रमाण जलका हू त्याग करना अंतकालमैं जेती शक्ति रहै तेतै पंच नमस्कारमंत्रका तथा द्वादशभावनाका स्मरण करना अर शक्ति घट जाय तो अरहंत नामका ही सिद्धका ही ध्यान मात्र करना अर जब शक्ति नाहीं रहै तादि धर्मात्मा वात्सल्य अंगका धारक स्थितिकरणमैं सावधान ऐसे साधर्मी निरंतर चार आराधना पंचनस्कार मधुर स्वरनितैं बडी धीरतातैं श्रवण करावै जैसैं आराधकका निर्बल शरीरमैं मस्तकमैं वचनकरि खेद दुःख नाहीं उपजै अर श्रवण करनेमैं चित्त लगि जाय तैसैं श्रवण करावै। बहुत आदमी मिलि कोलाहल नाहीं करै एक एक साधर्मी अनुक्रमतैं धर्मश्रवण जिनेंद्रनाम स्मरण करावै अर आराधकके निकट बहुत जनांका वा संसारीक ममत्व मोहकी कथा करनेवालेनिका आगमन रोक देवै पंच नमस्कार वा च्यार शरणा इत्यादिक वीतराग कथा सिवाय नजीक नाहीं करै दोय चार धर्मके धारक सिवाय अन्यका

समागम नाहीं रहै अर आराधक हू सल्लेखनाका पांच अतीचार दूरहीतैं त्यागे, तिन पंच अतीचारनिके कहनेकूं सूत्र कहैं हैं–

जीवितमरणाशंसे भयमित्रस्मृतिनिदाननामानः । सल्लेखनातिचाराः पञ्च जिनेन्द्रः समादिष्टाः ॥ १२९ ॥

अर्थ–सल्लेखना करिके जो जीवनेकी वांछा करे जो दोय दिन जीऊं तो ठीक है सो अतीचार है ॥१॥ अर मरणकी वांछा करे जो अब मरण हो जाय तो ठीक है सो मरणाशंसा नाम अतीचार है ॥२॥ अर भय करना जो देखिये मरणमैं कैसा दुःख होयगा कैसे सहूंगा सो भय नाम अतीचार है ॥ ३ ॥ अर अपने स्वजन पुत्रपुत्रीमित्रनिकूं याद करना सो मित्रस्मृति नाम अतीचार है ॥ ४ ॥ आगामी पर्यायमैं विषयभोग स्वर्गादिककी वांछा करना सो निदान नामा अतीचार है ॥ ५ ॥ ऐसैं पंच अतीचार सल्लेखनाके जिनेंद्रने कहे हैं । भावार्थ–सल्लेखनामरणमैं समस्त त्याग करि केवल अपना शुद्ध ज्ञायकभावका अवलंबन करि समस्त देहादिकतैं ममत्व छांडि सन्यास धारचा फेर हू जीवनेकी मरनेकी वांछा करना भय करना मित्रनिमैं अनुराग करना आगैं सुखकी वांछा करना सो परिणामनिकी उज्ज्वलता नष्टकरि रागद्वेष मोह बधावनेवाले परिणाम हैं तातैं सल्लेखनाकूं मलीन करनेवाले अतीचार कहे निर्विघ्न आराधनाका धारणतैं गृहस्थके स्वर्गलोकमैं महर्द्धिक होना तो वर्णन किया पाछैं संयम धरि निःश्रेयस कहिये निर्वाणकूं प्राप्त होय है तिस निःश्रेयसका स्वरूप कहनेकूं सूत्र कहैं हैं–

निःश्रेयसमभ्युदयं निस्तीरं दुस्तरं सुखाम्बुनिधिम् । निःपिबति पीतधर्मा सर्वैर्दुःखैरनालीढः ॥ १३० ॥

अर्थ–ऐसैं सम्यग्दृष्टी अंतसल्लेखनासहित बारा व्रतकूं धारण करे है सो जिनेन्द्रका धर्मरूप अमृत पान करि तृप्त हुवा तिष्ठै है यातैं जो पीतधर्मा कहिये आचरण किया है धर्म जानै ऐसा धर्मात्मा श्रावक है सो अभ्युदय.जो स्वर्गका महर्द्धिकपना असंख्यातकालपर्यंत भोगि फिर मनुष्यनिमैं उत्तम राज्यादिक विभव पाय फिर संसार देह भोगनितैं विरक्त होय शुद्ध संयम अंगीकारकरि निःश्रेयस जो निर्वाण है

ताहि निःपिवति नाम आस्वादन करे है अनुभव करे है कैसाक है निःश्रेयस निस्तीर कहिये तीर जो पर्यंत ताकरि रहित है बहुरि दुस्तर है जाका पार नाहीं है बहुरि सुखका समुद्र है ऐसा निर्वाणमें समस्त दुःखनिकरि अस्पृष्ट हुवा संता भोगे है अब और हू निःश्रेयसका स्वरूप कहिये है—

जन्मजरामयमरणैः शोकदुःखैर्भयैश्च परिमुक्तं । निर्वाणं शुद्धसुखं निःश्रेयसमिष्यते नित्यं ॥ १३१ ॥

अर्थ—जो जन्म जरा रोग मरण करिके रहित अर शोक दुःख भय करि रहित अर नित्य अविनाशी समस्त परके संयोगरहित केवल शुद्ध सुखस्वरूप सो निर्वाण है ताहि निःश्रेयस इष्ट कहिये है बहुरि निःश्रेयसका स्वरूपकूं कहै हैं—

विद्यादर्शनशक्तिस्वास्थ्यप्रह्लादतृप्तिशुद्धियुजः । निरतिशया निरवधयो निःश्रेयसमावसन्ति सुखम् ॥ १३२ ॥

अर्थ—विद्या कहिये ज्ञान अर अनंतदर्शन अनंतवीर्य अर स्वास्थ्य कहिये परम वीतरागता अर प्रल्हाद कहिये अनंतसुख अर तृप्ति जो विषयनिकी निर्वांछकता शुद्धि जो द्रव्यकर्मरहितता इनकरि आत्मसंबंधकूं प्राप्त भये अर निरतिशया कहिये ज्ञानादिक पूर्वोक्त गुणनिकी हीनअधिकता रहित अर निरवधयः कहिये कालकी मर्यादारहित भये संते निःश्रेयस जो निर्वाण तामैं सुखरूप जैसें होय तैसें बसते हैं । भावार्थ—धर्मके प्रभावतैं आत्मा निःश्रेयसमैं बसै है केवलज्ञान केवलदर्शन अनन्तशक्ति परम-वीतरागतारूप निराकुलता अनंतसुख विषयनिकी निर्वांछकता कर्ममलरहितता इत्यादिक गुणरूप होय गुणनिकी हीनाधिकतारहित कालकी मर्यादारहित सुखरूप अनंतानंत काल बसै है अब और हू निःश्रेयसका स्वरूप कहै हैं—

काले कल्पशतेऽपि च गते शिवानां न विक्रिया लक्ष्या । उत्पातोऽपि यदि स्यात्त्रिलोकसंभ्रान्तिकरणपटुः ॥ १३३ ॥

अर्थ—अनंतानंत कल्पकाल व्यतीत हो जाय तो हू मुक्तजीवनिकै विकार जो स्वरूपको अन्यथा-भाव सो नाहीं लखिये है नाहीं प्रमाणकरि जानने योग्य है बहुरि त्रैलोक्यके संभ्रम करनेमें समर्थ

ऐसा कोऊ उत्पात हू होय तोहू सिद्धनिकै विकार नाहीं होय है। और हू सिद्धनिका स्वरूप कहैं हैं—

निःश्रेयसमधिपन्नास्त्रैलोक्यशिखामणिश्रियं दधते। निःकिट्टकालिकाच्छविचामीकरभासुरात्मानः ॥ १३४ ॥

अर्थ—निर्वाणकूं प्राप्त भये ऐसे मुक्तजीव हैं ते किट्ट अर कालिकारहित कांतिमान सुवर्णवत द्रव्यकर्म भावकर्म नोकर्मरूप मलरहित प्रकाशमानस्वरूप भए त्रैलोक्यका शिखामणिकी लक्ष्मीकूं धारण करैं हैं अर संन्यासके धारक पुरुष स्वर्गकूं प्राप्त होय हैं—

पूजार्थाज्ञैश्वर्यैर्बलपरिजनकामभोगभूयिष्ठैः। अतिशयितभुवनमद्भुतमभ्युदयं फलति सद्धर्मः ॥ १३५ ॥

अर्थ—बहुरि सम्यग्धर्म है सो अभ्युदयं फलति कहिये इंद्रादिकपदवीकूं फलै कैसाक अभ्युदयकूं फलै है जो पूजा अर अर्थ अर आज्ञा अर ऐश्वर्य करकैं अर बल अर परिकरका जन अर काम भोगनिकी प्रचुरताकरि तीन भुवनकूं उल्लंघन करै अर त्रैलोक्यमैं आश्चर्यरूप ऐसा अभ्युदयकूं यो सम्यग्धर्मही फलै है। भावार्थ—तीनलोकमैं जो देखनेमैं श्रवणमैं चिंतवनमैं नाहीं आवै ऐसा अद्भुत अभ्युदय सम्यग्धर्म हीका फल है धर्मका प्रभावहीतैं इंद्रपना अहमिंद्रपना पाइये है। अब श्रावकधर्मके ग्यारह पद हैं जैसा जाका सामर्थ्य होय सो ही पदग्रहण करो ऐसा कहैं हैं—

श्रावकपदानि देवैरेकादश देशितानि येषु खलु। स्वगुणाः पूर्वगुणैः सह संतिष्ठन्ते क्रमविवृद्धाः ॥ १३६ ॥

अर्थ—भगवान सर्वज्ञदेव श्रावकधर्मके एकादश स्थान कहैं हैं ते स्थान पूर्वके स्थाननिके गुणनिकरि सहित अनुक्रमतैं विवर्द्धित भये तिष्ठैं हैं श्रावकपदके ग्यारह पद हैं—दर्शन १, व्रत २, सामायिक ३, प्रोषधोपवास ४, सचित्तत्याग ५, रात्रिभोजनत्याग ६, ब्रह्मचर्य ७, आरंभत्याग ८, परिग्रहत्याग ९, अनुमतित्याग १०, उद्दिष्टआहारत्याग ११, ऐसैं ग्यारह पद हैं। जो ऊपरले पदका आचार करैगा ताकै पाछला पदका समस्त व्रत नियमादि आचरण धारण होयगा अर ऐसा नाहीं जो ऊपरला पदका तौ व्रत नियम धारया अर नीचला है ही नाहीं ऐसैं जो ब्रह्मचर्य धारैगा ताकै दर्शनादिक छह स्थानका आचरण नियमसूं

होय आठवां पदमें नीचले सप्त स्थानका आचरण होय ही। अब प्रथम दर्शन नाम स्थानका धारकका लक्षण कहैं हैं—

सम्यग्दर्शनशुद्धः संसारशरीरभोगनिर्विण्णः। पञ्चगुरुचरणशरणो दार्शनिकस्तत्त्वपथगृह्यः॥ १३७॥

अर्थ—जो सम्यग्दर्शनके पच्चीस मलदोषनिकरि रहित होय अर निरंतर संसारवासमैं अर देहका संगममैं अर इंद्रियनिके भोगनिमैं विरक्त होय अर पंच परमेष्ठी ही जाके शरण होय अर जीवादिकतत्त्व सर्वज्ञभाषित ताका श्रद्धान करनेवाला होय सो सत्यार्थमार्गमैं ग्रहण करने योग्य दार्शनिकश्रावक प्रथमपदका धारक होय। भावार्थ—जो स्याद्वादरूप परमागमके प्रसादतैं निश्चय व्यवहाररूप दोऊ नयनिकरि निर्णयपूर्वक स्वतत्त्व अर परतत्त्वकूं जानि श्रद्धान दृढ किया होय जाति कुलादि अष्टमदरहित होय अभिमान मंदताकरि आपकूं समस्त गुणवंतानिके गुण विचारि आपकूं तृणसमान लघु मानता होय अर यद्यपि अप्रत्याख्यानावरणके उदयकी जबरीतैं अपना विषयनिमैं राग नाहीं घट्या है अर समस्त गृहके आरंभनिमैं वर्तै है तो हू या जानै है ये हमारे समस्त मोहके प्रभावतैं अज्ञानभाव हैं त्यागने योग्य हैं कब यासूं छूटं मेरा हाल तीव्र रागभावपरिणामनिकूं चलायमान करै है। बहुरि धर्मात्मा जनानिके उत्तम गुण ग्रहण करनेमैं जाके अनुराग अर रत्नत्रयके धारकनिमैं जाके बडा विनय अर धर्मके धारकनिमैं बडा अनुराग धारै सो ही सम्यग्दृष्टि होय है जो देहादिक तथा रागद्वेष मोहादिकनितैं अनादिका मिल्या हू अपना ज्ञायकस्वभावकूं भेदविज्ञानका बलकरि भिन्न अनुभवै है अर जीवसूं मिल्या हुवा हू देहकूं वस्त्र समान न्यारा जानै है अर अष्टादशदोषरहित सर्वज्ञ वीतरागमैं ही देवबुद्धिकरि आराधना करै है अर दोषसहितमैं देवबुद्धि नाहीं करै अर दयारूप ही धर्म है हिंसामैं कदाचित तीनकालमैं धर्म नाहीं आरंभ परिग्रहरहित ही गुरु हैं अन्य गुरु नाहीं ऐसा दृढ श्रद्धान होय अर कोऊ जीव कोऊकूं मारै नाहीं जिवावै नाहीं दुःखी करै नाहीं सुखी करै नाहीं उपकार अपकार करै नाहीं दरिद्री धनाढ्य करै नाहीं केवल अपना भावनितैं

बंध किया कर्मनिका उदयतैं जीवे है मरे है सुखित दुखित होय है दरिद्री धनाढ्य होय है अपना कर्मके उदयतैं उपज्या संसारमैं भोग भोगै है। भक्तितैं पूजे व्यंतरादिक देव मंत्र जंत्रादिक समस्त पुण्य हीणके कुछ उपकार अपकार करनेकूं समर्थ नाहीं हैं पुण्य नष्ट हो जाय तदि समस्त मित्रादिक हू शत्रु होय हैं पुण्यपापके प्रबल उदयतैं माटी धूलि भस्म पाषाणादि देवताका रूप होय उपकार अपकार करैं हैं बहुरि सम्यग्दृष्टिकै ऐसा निश्चय है जिस जीवकै जिस देशमैं जिस कालमैं जिस विधान करकै जन्म वा मरण वा लाभ अलाभ सुख दुःख होना जिनेंद्र भगवान दिव्यज्ञानकरि जान्या है तिस जीवकै तिस देशमैं तिस कालमैं तिस विधान करकै जन्म मरण लाभ अलाभ नियमतैं होय ही ताहि दूर करनेकूं कोऊ इंद्र अहमिंद्र जिनेंद्र समर्थ नाहीं हैं ऐसैं समस्त द्रव्यानिकी समस्त पर्यायनिकूं जानै है श्रद्धान करै है सो सम्यग्दृष्टि दार्शनिक श्रावक प्रथमपदका धारक जानना। अब दूजा पदकूं कहैं हैं,—

निरतिक्रमणमणुव्रतपञ्चकमपि शीलसप्तकं चापि। धारयते निःशल्यो योऽसौ व्रतिनां मतो व्रतिकः ॥ १३८ ॥

अर्थ—जो अतीचाररहित पंच अणुव्रत अर सप्त शील इन बारहव्रतनिकूं माया मिथ्या निदान शल्यकरि रहित हुवा धारण करै सो व्रतीनिकै मध्य याकूं व्रतीश्रावक कहिये है ॥ २ ॥ अब तीसरा पदकूं कहैं हैं—

चतुरावर्त्तत्रितयश्चतुः प्रणामस्थितो यथाजातः। सामयिको द्विनिषद्यस्त्रियोगशुद्धस्त्रिसन्ध्यमभिवन्दी ॥ १३९ ॥

अर्थ—सामायिकमैं पंचनमस्कारकी आदिमैं अर अंतमैं अर थोस्सामिकी आदिमैं एक एक प्रणाम अर एक एक प्रणाममैं तीन तीन आवर्त अर कायोत्सर्ग अर बाह्य अभ्यंतर परिग्रहरहितता अर देवबंदनाका प्रारंभ समाप्तिमैं दोय बार बैठना ऐसैं तीन काल बंदना करै ताकै सामायिक नाम तीसरा स्थान जानना याकी विशेष विधि बहुज्ञानी गुरुनिकी परिपाटीतैं कहै सो प्रमाण है ॥३॥ अब चौथा प्रोषधस्थान कहैं हैं—

पर्वदिनेषु चतुर्ष्वपि मासे मासे स्वशक्तिमनिगुह्य। प्रोषधनियमविधायी प्रणाधिपरः प्रोषधानशनः ॥ १४० ॥

अर्थ—एक एक मासमैं दोय अष्टमी अर दोय चतुर्दशी ऐसैं चार जे पर्वदिन तिनमैं अपनी शक्ति-

कूं नाहीं छिपाय करके आहार पानादिकका त्याग वा नीरस आहार वा अल्प आहार वा कांजिका धारण करि अर शुभध्यानमैं लीन हुवा नियम धारण करके चार पर्वमैं रहै सो प्रोषधानशननाम चतुर्थ स्थान है ॥ ४ ॥ अब सचित्तत्याग नाम पंचम पद श्रावकका है ताहि कहैं हैं-

मूलफलशाकशाखाकरीरकन्दप्रसूनबीजानि । नामानि योऽत्ति सोऽयं सचित्तविरतो दयामूर्तिः ॥ १४१ ॥

अर्थ-जो श्रावक मूल फल पत्र डाहली करीर कहिये वंशकिरण (कैरिया) अर कंद अर फूल अर बीज ये अग्निकरि पके हुए नाहीं होय काचे होय तिनकूं निरमल हुआ भक्षण नाहीं करै सो श्रावक दयाकी मूर्ति सचित्तविरतनाम पंचमपदकूं अंगीकार करै है ॥५॥ अब रात्रिभुक्तिविरतिनाम छठा स्थानकूं कहैं हैं,-

अन्नं पानं खाद्यं लेह्यं नाश्नाति यो विभावर्यां । स च रात्रिभुक्तिविरतः सत्वेष्वनुकम्पमानमनाः ॥ १४२ ॥

अर्थ-जो प्राणीनिकी अनुकंपा दयारूपमनका धारक पुरुष रात्रिमैं अन्न कर किया भोजन अर पान कहिये जल दुग्ध शरबत इत्यादि पीवने योग्य अर खाद्य कहिये पेडा मोदक पाकादिक अर लेह्य आस्वादन करनेका तांबूल इलायची सुपारी लवंग अन्य औषधादिक ऐसैं चारप्रकार कहनेकरि समस्त भक्षण करने योग्य पीवने योग्यकूं रात्रिमैं भक्षण नाहीं करै सो रात्रिभुक्तिविरत नाम छठा पदका धारक श्रावक होय है ॥ ६ ॥ अब ब्रह्मचर्य नाम सप्तम स्थानकूं कहैं हैं-

मलबीजं मलयोनिं गलन्मलं पूतगन्धिबीभत्सं । पश्यन्नङ्गमनङ्गाद्विरमति यो ब्रह्मचारी सः ॥ १४३ ॥

अर्थ-यो अंग जो शरीर है सो माताको रुधिर पिताको वीर्यरूप मलतैं उपज्यो है यातैं याका मल ही बीज है अर यो मलकूं ही उत्पन्न करै है तातैं मलकी योनि है अर सासता नवद्वार मलहीकूं झारै है अर महादुर्गंध है अर घृणाका स्थान है ऐसा शरीरकूं देखता संता जो कामतैं विरक्त होय है सो ब्रह्मचारी है सप्तम पद है । यो ब्रह्मचारी है सो अपनी विवाही स्त्रीका संबंध अर निकट एक स्थानमैं शयन नाहीं करै है पूर्वैं भोग भोग्या ताकी कथा चिंतवन नाहीं करै है कामोद्दीपन करनेवाला पुष्ट आहारका

त्याग करे है राग उपजावनेवाला वस्त्र आभरण नाहीं पहरे है गीतनृत्य वादित्रनिका श्रवण अवलोकन त्यागे है पुष्पमाला सुगंध विलेपन अतर फुलेलादि त्यागे है शृंगारकथा हास्यकथारूप काव्य नाटकादिकनिका पठन श्रवणकूं त्यागे है तांबूलादिक रागकारी वस्तु दूरहीतैं त्यागे है ताके ब्रह्मचर्य नाम सप्तम पद श्रावकका है ॥ ७ ॥ अब फिर परिणाम बधे तो आरंभत्याग करे है—

सेवाकृषिबाणिज्यप्रमुखादारम्भतो व्युपारमति । प्राणातिपातहेतोर्योऽसायारम्भोविनिवृत्तः ॥ १४४ ॥

अर्थ—जो सेवा अर कृषि अर वाणिज्य इत्यादि असिकर्म लिखनकर्म शिल्पकर्म इत्यादि हिंसाका कारण जे आरंभ तिनतैं विरक्त होय सो आरंभविनिवृत्त नाम अष्टमपदधारी श्रावक है । भावार्थ—धन उपजावनेका कारण समस्त व्यापारादि पापके आरंभ त्यागे हैं अर जो स्त्रीपुत्रादिकनिकूं समस्त परिग्रहका विभाग करि अल्पधन निकट राखै नवीन उपार्जन नाहीं करै अर जो अल्पधन निकट राख्यो तामैंसूं दुःखितबुभुक्षितनिका उपकार करना तथा अपने शरीरका साधन औषधि भोजन वस्त्रादिकमैं लगावे तथा आपका हित ममत्ववाला तथा साधर्मीनिके दुःख निवारणके अर्थि देवै अन्य पापके आरंभमैं नाहीं लगावै अर कदाचित मर्यादारूप अल्पधन राख्या अर ताकूं चोर वा दाइयादार दुष्ट राजादिक हर ले तो क्लेश नाहीं करै तथा फेरि नाहीं उपजावनेमैं यत्न करै त्याग करि ऊंचा ही चढै जो अहो मैं रागी मोही होय एता परिग्रह राख्या था सो गया मेरा कर्म बडा उपकार किया ममता आरंभ रक्षा भयादिक समस्त क्लेशतैं छूट्या याका बडा दुर्ध्यान था सहज ही छूट्या । ऐसा भाव जाके होय ताके आरंभनिवृत्त नाम अष्टमस्थान है । अब नवमस्थान परिग्रहत्याग ताहि कहैं हैं—

बाह्येषु दशसु वस्तुषु ममत्वमुत्सृज्य निर्ममत्वरतः । स्वस्थ संतोषपरः परिचित्तपरिग्रहाद्विरतः ॥ १४५ ॥

अर्थ—बाह्य दशप्रकारका परिग्रहमैं ममत्व छांडि करके अर हमारा किंचित् कुछ हू नाहीं ऐसे निर्ममत्वपनामैं रत आसक्त रहै अर देहादिक रागादिक समस्त परद्रव्य पर पर्यायनिमैं आत्मबुद्धिरहित होय

अपना अविनाशी ज्ञायकभावमैं स्थिर रहै अर जो भोजन वस्त्र स्थान कर्म मिलाया तातैं अधिक नाहीं चाहता संतोषमैं तत्पर समस्त वांछा दीनतारहित तिष्ठै अर परिचयमैं जो परिग्रह है तातैं अति विरक्त रहै सो परिग्रहत्यागी नाम नवमा श्रावक होय है। भावार्थ—नवमा श्रावककै रुपैया मोहोर सुवर्ण रूपो गहणो आभरणादिक सकल परिग्रहका त्याग है कोऊ शीत उष्णताकी वेदना दूर करने मात्र अल्पमोलका प्रमाणीक वस्त्र रहै तथा हस्तपादादि धोवनेके अर्थि वा जलपीवनेका पात्र मात्र परिग्रह है सो परिग्रहत्याग नाम स्थान है। अर जो गृहमैं वा अन्य एकांत स्थानमैं शयन आसनादिक करै है अर भोजन वस्त्रादिक जो घरका देवै सो अंगीकार करै अर सिवाय औषध आहार पान वस्त्रादिकनिकी तथा शरीरका टहल करानेकी आपके इच्छा होय सो स्त्री पुत्रादिकनिकूं कहै अर घरका स्त्रीपुत्रादिक कर दे तो करो अर नाहीं करै तो वासूं उजर करै नाहीं जो हमारा मकान है धन है आजीविका है हमारा कह्या कैसैं नाहीं करो ऐसा उजर वा परिणाममैं संक्लेशादि चिंतवन नाहीं करै ताकै परिग्रहत्याग नाम नवमा स्थान है ॥ ९ ॥ अब अनुमतित्याग नाम दशमा स्थानकूं कहैं हैं—

अनुमतिरारम्भे वा परिग्रहेवैहिकेषु कर्मसु वा। नास्ति खलु यस्य समधीरनुमतिविरतः स मन्तव्यः ॥ १४६ ॥

अर्थ—जाकै आरंभमैं वा परिग्रहमैं वा इस लोकसंबंधीकर्म जे विवाहादिक तथा गृह बनावना विणज सेवा इत्यादिक क्रियामैं कुटंबका लोग पूछै तो हू अनुमोदना नाहीं देना तुम भला किया ऐसा मन वचन कायतैं नाहीं करना जाकै रागादिरहित समबुद्धि होय सो श्रावक अनुमतिविरत है। भावार्थ—जो भोजन खारा वा कडवा मीठा इत्यादिक स्वादसहित वा स्वादरहितमैं रागद्वेषरहित होय सुंदर असुंदर नाहीं कहै तथा बेटाका बेटीका लाभका अलाभका हानिका वृद्धिका दुःखका सुखका समस्त कार्यनिकै माहीं हर्षविषादरहित होय अनुमोदना नाहीं करै ताकै अनुमतिविरत नाम दशमा स्थान होय है ॥१०॥ अब उद्दिष्टत्याग नाम ग्यारमा स्थानकूं कहैं हैं—

गृहतो मुनिवनमित्वा गुरूपकंठे व्रतानि परिगृह्य । भैक्ष्याशनस्तपस्यन्नुत्कृष्टश्चेलखंडधरः ॥ १४७ ॥

अथ—जो समस्त गृहका त्याग करि अपना गृहतैं मुनीश्वरनिके तिष्ठनेका वनमैं प्राप्त होय गुरुनिके समीप व्रतनिकूं ग्रहण करके तपश्चरण करता वस्त्रका खंडकूं धारण करता भिक्षा भोजन करै सो उत्कृष्ट श्रावक होय है। भावार्थ—जो समस्त गृह कुटंबतैं विरक्त होय वनमैं जाय मुनीश्वरनिके निकट दीक्षा ग्रहण करै अर एक कोपीन मात्र वा कोपीन अर खंड वस्त्र जातैं समस्त अंग नाहीं ढकै मस्तक ढकै तो पग ढकै नाहीं अर पग ढकै तो मस्तक ढकै नाहीं केवल किंचित् डांस, मांछर, शीत, आताप, वर्षा, पवनका परीषहमैं सहारा रहै अर भिक्षाभोजन अजाचीकवृत्तिमैं मौनतैं ग्रहण करै आपके निमित्त भोजन किया हुवा ग्रहण करै नाहीं न्योतातैं बुलाया जाय नाहीं आपके निमित्त कुछ भी आरंभ जानै तो भोजनका त्याग करै वनमैं वा बाह्य वस्तिकामैं रहै उपसर्ग परीषह आजाय तो निर्भय हुवा सहै कायरता दीनता करै नाहीं ध्यानस्वाध्यायमैं सदाकाल लीन रहै गृहस्थके घर विना बुलायां जावै गृहस्थ आपके निमित्त भोजन किया तामैंतैं भक्तिपूर्वक दिया हुवा ग्रहण करै सो रससहित वा रसरहित कडवा खारा मीठा जो गृहस्थ दे सो समभावनितैं आहार ग्रहण करै एक दिनमैं एकवार आहारपान ग्रहण करै अंतराय हो जाय तो उपवास करै अनशनादिक तपमैं शक्तिप्रमाण उद्यमी रहै सो उद्दिष्टआहारत्यागी नाम ग्यारमा उत्कृष्टश्रावकका स्थान है। ऐसैं श्रावकधर्मके ग्यारह स्थान कहे तिनमैं अपनीं शक्तिप्रमाण अंगीकार करो। अब और कहै हैं—

पापमरातिर्धर्मो बंधुर्जीवस्य चेति निश्चिन्वन् । समयं यदि जानीते श्रेयो ज्ञाता ध्रुवं भवति ॥ १४८ ॥

अर्थ—इस जीवका पाप वैरी है अर धर्म है सो बंधु है ऐसा दृढ निश्चय करता जो आपकूं जानै तदि यो अपना कल्याणकूं जाननेवाला होय है। भावार्थ—संसारमैं दुःखका देनेवाला इस जीवका कोऊ वैरी है नाहीं एक अपना विषय कषायादि विपरीत अनुरागतैं पापकर्म उपजाया सो वैरी है अन्य तो

बाह्य निमित्तमात्र हैं अन्य जे दुर्वचन बोलनेवाला दोषानिकूं घोषणा करनेवाला धनका अर अजीवकाका अर स्थानका जबरीतैं हरनेवाला तथा ताडन मारन बंधन छेदन करनेवाला मेरा उपजाया पापका उदयतैं समस्त सम्बन्ध है अपना पापकर्म विना अन्य पुरुषनिकूं बैरी समझै सो मिथ्याज्ञानी जिनेंद्रका आगम जान्या नाहीं ऐसैं ही इस जीवका उपकारक बंधु है सो पुण्यकर्म है जो पुण्यकर्मका उदय विना अन्यकूं उपकारक जानै है सो भगवानका आगमका ज्ञानी नाहीं समझै मिथ्याज्ञानी है अब श्रावकाचारका उपदेशकूं समाप्त करता श्रीसमन्तभद्रस्वामी फल प्रतिपादन करता संता सूत्र कहैं हैं—

येन स्वयं वीतकलंकाविद्यादृष्टिक्रियारत्नकरण्डभावम् ।
नीतस्तमायाति पतीच्छयेव सर्वार्थसिद्धिस्त्रिषु विष्टपेषु ॥ १४९ ॥

अर्थ—जो पुरुष अपना आत्माकूं कलंक अतीचारनिकरि रहित ज्ञानदर्शनचारित्ररूप रत्ननिका करंड कहिये पिटारा पात्रपणानै प्राप्त करै है तिस पुरुषनै तीन भावनिमैं सर्व वांछित अर्थकी सिद्धि अपना पतिकी इच्छा करकै ही प्राप्त होय है। भावार्थ—जो पुरुष अपने आत्माकूं सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान सम्यक्चारित्ररूप रत्ननिका पात्र किया ताकूं तीनभवनकी सर्वोत्कृष्ट अर्थकी सिद्धि स्वयमेव प्राप्त होय है ऐसा नियम है अब प्रार्थना करैं हैं—

सुखयतु सुखभूमिः कामिनं कामिनीव सुतमिव जननी मां शुद्धशीला भुनक्तु ।
कुलमिव गुणभूषा कन्यका संपुनीताज्जिनपतिपदपद्मप्रेक्षिणी दृष्टिलक्ष्मीः ॥ १५० ॥

इति श्रीस्वामिसमंतभद्राचार्यविरचितोपासकाचारे पञ्चमः परिच्छेदः ॥ ५ ॥

अर्थ—जिनेंद्र भगवानका चरणकमलकूं अवलोकन करती ऐसी सम्यग्दर्शनलक्ष्मी है सो कामी पुरुषनै सुखकी भूमि ऐसी कामिनीकी ज्यों मोकूं सुखी करो अर शुद्धशीला शुद्धस्वभावका धारक माता

जैसैं पुत्रनै पालना करै तैसैं मनै पालना करो अर शीलादिक गुणही हैं आभूषण जाके ऐसी कन्या कुलनै पवित्र करै तैसैं मनै पवित्र करो उज्ज्वल करो। भावार्थ—जैसैं कामकी आतापका धारककूं कामिनी सुखी करै है अर जैसैं शुद्धस्वभावकी धारक माता पुत्रकी पालना करै है अर गुणवान कन्या कुलनै पवित्र करै है तैसैं जिनपति जो शुद्धात्म तानैं भावांतैं साक्षात् अवलोकन करावनेवाली सम्यग्दर्शनकी लक्ष्मी है सो मेरे मिथ्याज्ञानजनित आताप दूर करकैं मोकूं नित्य अनंतज्ञानादिरूप आत्मीकसुखकूं प्राप्त करो अर संसारके जन्मजरामरणादि दुःख निवारण करि मेरे अनंत चतुष्टयादिक स्वरूपकूं पुष्ट करो अर राग-द्वेष मोहरूप मलकूं दूरि करि मेरा आत्मस्वरूपकूं उज्ज्वल करो।

इति श्रीस्वामी समंतभद्राचार्यविरचित रत्नकरंडश्रावकाचारकी देशभाषामयवचनिका समाप्त भई ॥

वचनिका-कर्त्ताका वक्तव्य ।

दोहा ।

मंगल श्रीअरहंत जिन, मंगल श्रीजिनवानि ।
सिद्ध साधु जिनधर्म नित, करैं विघ्नकी हानि ॥ १ ॥

चौपाई ।

दशधर्मधरकू आधार । रत्नकरंड श्रावकाचार ॥
स्वामी समंतभद्र रवि सार । कीनों भव्यनिको उपगार ॥ २ ॥
याकी महिमा कहत न बणै । सुधि धारे कर्मनिकूं हणै ॥
याकी देशवचनिका होय । तो याकूं समझै सब कोय ॥ ३ ॥
यो विचारि उद्यम मैं कियो । तुच्छबुद्धि माफिक लिख दियो ॥
चूक भूल पर चित नहिं धरो । दोष टालि गुण संग्रह करो ॥ ४ ॥
राग द्वेष मद वश हम परे । चूकरहित गुण कैसैं धरे ॥
ज्ञानी ऐसा कर निरधार । दयासहित तिष्ठो अविकार ॥ ५ ॥
संवत उगणीसे उगणीस । मँगसिर वदि अष्टमि दिनईस ॥
लिखनेका आरंभ जु कियो । शुभ उपयोगमांहि चित दियो ॥ ६ ॥
संवत उगणीसे अरु बीस । चैत कृष्ण चउदश निज सीस ॥
पूरण कर स्थापन जब किया । शुभ उद्यमका निज फल लिया ॥ ७ ॥

दोहा।

जयपुर नगर मनोज्ञ अति, धनधाति धर्म विचार। वरणाश्रम आचारको, अति उज्जल आधार ॥ ८ ॥
यामैं राज करै निपुण, रामसिंह जनपाल। क्रोध लोभ मद टारिकैं, विघ्न हरणकूं ढाल ॥ ९ ॥
जैनी जन यहां बहु बसैं, दया धर्म निज धारि। स्याद्वादज्ञायक प्रबल, मत एकांत निवारि ॥ १० ॥
गोत काशलीवाल है, नाम सदासुख जास। सैली तेरापंथमैं, करै जु ज्ञानअभ्यास ॥ ११ ॥
जिनसिद्धांत प्रसादतैं लिखी वचनिका सार। पढि सुणि श्रद्धा भक्तितैं, करो धर्म निरधार ॥ १२ ॥
मेरे शुभ उपयोगतैं, बध्यो जु अति उत्साह। तातैं उद्यम करि लिखी, अन्य नहीं कछु चाह ॥ १३ ॥
समयसार गुन कहनकूं, शक्ति न सुरगुरु होय। ताको शरण सदा रहो रागादिक मल धोय ॥ १४ ॥
है जिनवाणी भगवती, भुक्तिमुक्ति दातार। तेरे सेवनतैं रहै, सुखमय नित अविकार ॥ १५ ॥
दुख दरिद्र जान्यो नहीं, चाह न रही लगार। उज्जल यश मम विसतर्यो, यो तेरो उपकार ॥ १६ ॥
अडसठ वरस जु आयुके, बीते तुझ आधार। शेषआयु तव शरणतैं, जाहु यही मम सार ॥ १७ ॥
जितने भव तितने रहो, जैनधर्म अमलान। जिनवरधर्म विना जु मम, अन्य नहीं कल्याण ॥ १८ ॥
जिनवाणीसूं वीनती, मरण वेदना रोक। आराधनके शरणतैं, देहु मुझे परलोक ॥ १९ ॥
बालमरण अज्ञानतैं, करे जु अपरंपार। अब आराधन शरणतैं, मरण होहु अविकार ॥ २० ॥
हरि अनीत कुमरण हरो, करो जु ज्ञान अखंड। मोकूं नित भूषित करो, शास्त्र जु रत्नकरंड ॥ २१ ॥

समाप्त

श्रीरत्नकरंडश्रावकाचार वचनिका

(समाप्त)

श्रीरत्नकरंडश्रावकाचार

वचनिका

गांधी हरीभाई देवकरण जैनग्रंथमाला ।

९

स्वर्गीय विद्वद्वर्य सदासुखजी काशलीवाल-द्वारा विरचित

श्रीरत्नकरंडश्रावकाचार वचनिका ।

जिसको

भारतीय जैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्थाके महामंत्री

पन्नालाल बाकलीवालने

शोलापुर-वासी गांधी हरीभाई देवकरण एण्ड सन्सकी प्रदत्त द्रव्यसे

अपने जैनसिद्धांतप्रकाशक पवित्र प्रेस

१ विश्वकोष लेन, बाघबाजार, कलकत्तामें

छपाकर प्रकाशित किया ।

श्रुतपंचमी, वी॰नि॰सं॰ २४५१]

[न्योछावर ५॥) रुपया

प्रकाशक—

पन्नालाल बाकलीवाल

महामंत्री-भारतीयजैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्था

६ विश्वकोष लेन, बाघबाजार, कलकत्ता।

मुद्रक—

श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ,

जैनसिद्धांतप्रकाशक पवित्र प्रेस

६ विश्वकोष लेन, बाघबाजार, कलकत्ता।

ॐ

स्वर्गीय पंडित सदासुखजीकृत देशभाषामयवचनिकासहित

श्रीरत्नकरंडश्रावकाचार।

इहां इस ग्रंथकी आदिमें स्याद्वादविद्याके परमेश्वर परमनिर्ग्रंथ वीतरागी श्रीसमंतभद्रस्वामी जगतके भव्यानिके परमोपकारकेअर्थि रत्नत्रयका रक्षणको उपायरूप श्रीरत्नकरंड नाम श्रावकाचारकूं प्रगट करनेके इच्छक विघ्नरहित शास्त्रकी समाप्तिरूप फलकूं इच्छाकरता इष्ट विशिष्ट देवताकूं नमस्कार करता सूत्र कहें हैं—

सूत्र—

नमः श्रीवर्द्धमानाय निर्द्धूतकलिलात्मने। सालोकानां त्रिलोकानां यद्विद्या दर्पणायते ॥ १ ॥

अर्थ—श्रीवर्धमान तीर्थंकरकेअर्थि हमारा नमस्कार होहु। श्रीकहियें अंतरंगस्वाधीन जो अनंतज्ञान अनंतदर्शन अनंतवीर्य अनंतसुखरूप अविनाशीक लक्ष्मी अर बाहिरंग इंद्रादिक देवनिकरि वंदनीक जो समवसरणादिक लक्ष्मी तिसकरि वृद्धिकूं प्राप्त होय सो श्रीवर्द्धमान कहिये है। अथवा अव—समंतात् कहिये समस्त प्रकारकरि ऋद्ध कहिये परमअतिशयकूं प्राप्त भया है केवलज्ञानादिक मान कहिये प्रमाण जाका सो वर्द्धमान कहिये। इहां "अवाप्योरल्लोपः" इस व्याकरण शास्त्रके सूत्रकरि अकारका लोप भया है। कैसाक है श्रीवर्द्धमान निर्द्धूतकलिल है आत्मा जाका, निर्द्धूत कहिये नष्ट किया है आत्मातें कलिल कहिये ज्ञानावरणादि पापमल जानें ऐसा है। बहुरि जाकी केवलज्ञानविद्या अलोकसहित समस्त तीनलोककूं दर्पणवत् आचरण करै है।

भावार्थ—जाके केवलज्ञानाविद्यारूप दर्पणविषै अलोकाकाशसहित षट्द्रव्यनिका समुदायरूप समस्त लोक अपना भूत भविष्यत् वर्तमान समस्त अनंतानंत पर्यायनिकरि सहित प्रतिबिंबित होय रहे हैं ऐसा अर जाका आत्मा समस्त कर्ममलरहित भया ऐसा श्रीवर्द्धमान देवाधिदेव अंतिमतीर्थंकर ताकूं अपने आवरणकषायादिमलरहित सम्यग्ज्ञानप्रकाशके अर्थि नमस्कार किया । अब आगैं धर्मके स्वरूपकूं कहनेकी प्रतिज्ञारूप सूत्र कहैं हैं:—

देशयामि समीचीनं धर्मं कर्मनिवर्हणं । संसारदुःखतः सत्त्वान् यो धरत्युत्तमे सुखे ॥ २ ॥

अर्थ—मैं जो ग्रंथकर्ता हूं सो इस ग्रंथविषै तिस धर्मकूं उपदेश करूं हूं जो प्राणीनिनै पंचपरिवर्तनरूप संसारके दुःखतैं निकाल स्वर्गमुक्तिके बाधारहित उत्तमसुखनिमैं धारण करै । बहुरि कैसेक धर्मकूं कहूं हूं जो समीचीन कहिये जामैं वादीप्रतिवादीकरि तथा प्रत्यक्ष अनुमानादिककरि बाधा नहीं आवै, अर जो कर्मबंधनकूं नष्ट करनेवाला है तिस धर्मकूं कहूं हूं ।

भावार्थ—संसारमें धर्म ऐसा नाम तो समस्त लोक कहैं हैं परन्तु शब्दका अर्थ तो ऐसा जो नरकतिरयंचादिक गतिमैं परिभ्रमणरूप दुःखतैं आत्माकूं छुडाय उत्तम आत्मीक अविनाशी अतींद्रिय मोक्षसुखमैं धारण करै सो धर्म है । सो ऐसा धर्म मोल नहीं आवै जो धन खरचि दानसन्मानादिकतैं ग्रहण करिये तथा किसीका दिया नहीं आवै, जो सेवा उपासनातैं राजी कर लिया जाय। तथा मंदिर, पर्वत, जल, अग्नि, देवमूर्ति, तीर्थादिकनमैं नहीं धरया है जो वहां जाय ल्याइये । तथा उपवास व्रत कायक्लेशादि तपमैं हू शरीरादि कृश करनेतैं हू नहीं मिलै । तथा देवाधिदेवके मंदिरनिमैं उपकरणदान मंडल पूजनादिकरि तथा गृह छोड वन श्मशानमें बसनेकरि तथा परमेश्वरके नामजाप्यादिककरि नहीं पाईये है । धर्म तो आत्माका स्वभाव है जो परमै आत्मबुद्धि छोड अपना ज्ञाता दृष्टारूप स्वभावका श्रद्धान अनुभव तथा ज्ञायकस्वभावमैं ही प्रवर्तनरूप जो आचरण सो धर्म है । तथा उत्तमक्षमादि दशलक्षणरूप